सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५७

(१६ जनवरी से १७ मई, १९३४)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमें १६ जनवरीसे १७ मई, १९३४ तक की सामग्री दी जा रही है। इस अवधिमें भी गांधीजी का वह दौरा जारी रहा जो उन्होंने ७ नवम्बर, १९३३ को आरम्भ किया था और जिसके क्रममें वे मध्य प्रान्त और आन्ध्रके अधिकांश भागोंमें अलख जगा चुके थे। प्रस्तुत खण्डमें मलाबार, तमिलनाडु, कर्नाटक और कुर्गका दौरा शामिल है, जिसके बाद भूकम्प-पीड़ित बिहारकी टेरपर गांधीजी को तुरन्त वहाँ पहुँच जाना पड़ा।

गांधीजी अब भी अगस्त मासतक राजनीतिक निष्क्रियताके अपने निश्चयपर अडिग रहे, क्योंकि यदि उन्हें अस्पृश्यता-निवारणके कार्यके लिए समयसे पूर्व मुक्त न किया गया होता तो उनके कारावासकी अवधि अगस्तमें ही समाप्त होती। इस बीच उन्होंने अपनी सारी शक्ति और अपना सारा श्रम भारत-भूमिसे अस्पृश्यताको मिटानेमें नियोजित कर दिया। इस आन्दोलनको "हिन्दू-धर्मके सुधारका और उसकी शुद्धिका आन्दोलन" बताते हुए (पृष्ठ ११) उन्होंने सवर्ण हिन्दुओंको "हरिजनोंके साथ भ्रातृत्व स्थापित करके . . . अपनी शुद्धि" करने (पृष्ठ ११७) और उन्हें उनकी तमाम सामाजिक, नैतिक तथा आर्थिक असुविधाओंसे मुक्ति दिलानेको आमंत्रित किया। उनका कार्यक्रम हरिजनोंके लिए "स्कूलों और छात्रावासोंकी व्यवस्था करने, डाक्टरी सहायता और जलकी सुविधाएँ उपलब्ध करानेका . . . आम तौर पर वह सब-कुछ करनेका" था "जो उनको दूसरोंकी बराबरीमें लानेके लिए जरूरी" था (पृष्ठ ४६)। यद्यपि वे "हिन्दू-धर्ममें क्रान्ति" लानेके लिए "एक हिन्दू क्रान्तिकारी" के रूपमें प्रकट हुए थे, लेकिन उन्होंने अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनका प्रवर्तन हिन्दुत्व की रक्षाके निमित्त नहीं, बल्कि विशुद्ध मानवतावादी प्रयोजनोंसे किया था। एलप्पीमें भाषण करते हुए उन्होंने कहा: ". . . मैं इस बातकी तरफसे बिलकुल ही उदासीन हूँ कि हिन्दू-धर्म सबल हो रहा है या निर्बल, अथवा नष्ट हो रहा है। . . . इस सम्बन्धमें मेरी जो अपनी स्थिति है, उसके सही होनेमें मेरा इतना अधिक विश्वास है कि अगर मेरी उस स्थितिसे हिन्दू-धर्म कमजोर हो रहा है तो भले हो, मुझे उसकी कोई परवाह नहीं" (पृष्ठ १८)।

आवश्यक विश्रामके लिए जितना अपेक्षित था, उसके अतिरिक्त और सारा समय गांधीजी जन-सम्पर्क स्थापित करने, जनताको अपनी बात समझानेमें लगाते रहे। वे एक-एक दिनमें पाँच-पाँच सभाओंमें बोलते, सैकड़ों मीलकी दूरी तय करते। फलतः आन्दोलन जोर पकड़ता गया और उसके साथ ही जनतामें जागृतिके स्पष्ट लक्षण दिखने लगे। हरिजन-कार्यके लिए समाज-सेवी जन आगे बढ़कर अपने नाम दर्ज कराने लगे और हरिजन-कोषमें दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि होने लगी। अकेले तमिलनाडुमें

एक लाखसे अधिककी राशि एकत्र हुई। अस्पृश्यताका दुर्ग चरमराता-सा प्रतीत हुआ। सवर्णोंके रुखमें "सचमुच काफी बड़ा, आशासे अधिक" परिवर्तन दिखाई देने लगा (पृष्ठ ९२)। स्वयं गांधीजी के शब्दोंमें, "हिन्दू लोग मेरे पश्चात्ताप करनेके आमंत्रण का उत्तर जिस उत्साहसे दे रहे हैं, उसे मैं संतोषजनक मानता हूँ" (पृष्ठ ३६९)।

कदाचित् आन्दोलनकी इस सफलतासे ही सनातनी लोग तिलमिला उठे। उन्होंने गांधीजी को शंकराचार्य तथा अन्य सनातनी धर्मध्वजियोंसे शास्त्रार्थ करनेकी चुनौती दी। उन्होंने काले झंडोंके प्रदर्शन किये, सभाओं और अन्य स्थलोंमें — जैसे बिहारमें, जसीडीह और बक्सरमें — उपद्रव मचाये, बल्कि इससे भी आगे जाकर गांधीजी तथा उनके साथियोंपर हिंसात्मक प्रहार किये। यह सब देखकर गांधीजी का मन "दुःख और ग्लानिसे भर गया" और उन्होंने व्यथित हृदयसे कहा, "तो लोग इस असभ्यता और हिंसा द्वारा सनातनधर्म का परिचय दे रहे हैं" (पृष्ठ ५०१)। जहाँ उन्होंने सनातनियोंसे "इस दुर्व्यवहारके लिए हृदयमें पश्चात्ताप" करने और "भविष्यमें ऐसे हिंसात्मक कार्य" न करनेका संकल्प लेनेका अनुरोध किया, वहीं अपने सहयोगियोंको परामर्श दिया कि वे "अपने विरोधियोंपर अपनी व्यक्तिगत पवित्रता, अपने सौजन्य तथा धैर्य द्वारा विजय प्राप्त करनेका यत्न करें" (पृष्ठ ४७५)।

सनातनियोंसे शास्त्रार्थ करने और विवाद बढ़ानेमें गांधीजी को कोई सार दिखाई नहीं दिया, लेकिन वे अपने इस विश्वासपर अडिग रहे कि जैसी अस्पृश्यता आज बरती जाती है वैसी अस्पृश्यताके पक्षमें शास्त्रोंका कोई विधान नहीं हो सकता। उन्होंने कहा: "अगर मुझे किसी दिन यह पता चले कि वेद, उपनिषद्, 'भगवद्-गीता', स्मृतियों आदिमें . . . ऐसे कोई वचन हैं जिनके आधारपर उसके (अस्पृश्यताके) सम्बन्धमें दैवी आज्ञाका दावा किया जा सकता हो तो दुनियाकी ऐसी कोई चीज नहीं है जो मुझे हिन्दू-धर्मसे बाँधकर रखे। . . . ऋषियोंने . . . आज हिन्दुओंमें अस्पृश्यता जिस रूपमें दिखाई देती है, उसकी भी कल्पना की होगी, यह बात किसी भी समझदार आदमीको अरुचिकर लगनी चाहिए। लेकिन पूर्वग्रह और अन्धविश्वास मुश्किलसे मिटते हैं। वे हमारे विवेकको ढँक लेते हैं, बुद्धिपर धुंधकी तरह छा जाते हैं और हृदयको कठोर बना देते हैं। . . . यही कारण है कि हम विद्वानोंको भी अस्पृश्यताका बचाव करते देखते हैं" (पृष्ठ ७)।

अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनोंमें एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न मन्दिर-प्रवेशका था। लेकिन गांधीजी की दृष्टिमें मन्दिर-प्रवेशका अपने-आपमें कोई महत्त्व नहीं था। सबसे बड़ी कसौटी "सवर्ण हिन्दुओंका हृदय-परिवर्तन" था (पृष्ठ २०४)। इसलिए इस सम्बन्धमें वे कोई शीघ्रता नहीं करना चाहते थे। उन्होंने कहा: "मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न ऐसा है जिसे केवल सवर्ण हिन्दुओंको ही हल करना है। यदि सवर्ण हिन्दू सामुदायिक रूपसे यह कहते हैं कि हरिजनोंको मन्दिरोंमें प्रवेश नहीं करने दिया जायेगा तो मैं कहूँगा, यह बात दुर्भाग्यपूर्ण होगी . . . किन्तु जबतक उनका ऐसा मत रहेगा, कोई भी हरिजन मन्दिरोंमें प्रवेश नहीं करेगा" (पृष्ठ १७४)। किन्तु यह स्थिति सदा कायम नहीं रह सकती थी। उन्होंने कहा: ". . . मैं जानता हूँ कि हरिजनोंके मन्दिर-

प्रवेशके पक्षमें लोकमत तेजीसे तैयार होता जा रहा है, और मैं चाहूँगा कि आप लोकमत तैयार करनेमें तबतक डटकर लगे रहिए जबतक कि वह इतना दुर्निवार न हो जाये कि पण्डितों और मन्दिरोंके न्यासियोंकी अनिच्छाके बावजूद मन्दिरोंके द्वार हरिजनोंके लिए खुल जायें" (पृष्ठ २०७)।

इस सम्बन्धमें कोई कानून आदि बनाये जानेके बारेमें भी गांधीजी के विचार उतने ही स्पष्ट थे। इसी समस्यासे जुड़े मन्दिर-प्रवेश प्रतिबन्ध निवारक (टेम्पल-एंट्री डिजैबिलिटीज) विधेयक पर उन दिनों केन्द्रीय विधान-सभामें विचार हो रहा था। विधेयकका उल्लेख करते हुए गांधीजी ने कहा: ". . . मैं तो यह नहीं चाहूँगा कि यह विधेयक विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायोंके सदस्योंके बहुमतसे पास कर दिया जाये। मेरा कहना तो सिर्फ इतना ही है कि जिन हिन्दुओंकी मन्दिरोंमें श्रद्धा है उन्हें यह अधिकार है और उनका यह कर्त्तव्य है कि जहाँ-कहीं काफी बड़ा बहुमत यह चाहता हो कि अमुक हिन्दू-मन्दिरके द्वार हरिजनोंके लिए खोल दिये जायें वहाँ वे अपने मतको स्वीकार करायें। . . . और अगर कोई कानूनी बाधा है . . . तो वह कानून बनाकर ही दूर की जा सकती है और इसलिए इसी तरहसे दूर की जानी चाहिए" (पृष्ठ ३६४)।

१५ जनवरीको बिहारमें भयंकर भूकम्प हुआ। सीताकी उस भूमिमें उसने कैसी विनाश-लीला मचा दी, इसका थोड़ा-सा अनुमान गांधीजी के ही इन शब्दोंसे लगाया जा सकता है: ". . . पलक झपकते ही लगभग २५,००० लोग मृत्युके ग्रास बन गये। दसियों हजार लोग बेघरबार और वस्त्रहीन हो गये। . . . राजमहल ढहकर खण्डहर हो गये और हजारों घर काठ-कबाड़के ढेर बनकर रह गये हैं" (पृष्ठ १२२)। गांधीजी पर इसकी जो प्रतिक्रिया हुई, उसे सबसे पहले एक सभामें स्वर देते हुए उन्होंने कहा: "भले ही आप मुझे अन्धविश्वासी कहें, मगर मुझ-जैसा आदमी यही मानेगा कि भगवान्ने हमें हमारे पापोंका दण्ड देनेके लिए इस भयंकर भूकम्पको भेजा है। ईश्वर और धर्मका उपहास करनेवाले व्यक्तिको भी यह स्पष्ट होना चाहिए कि ऐसी विपत्तियोंका कारण दैवी इच्छाके अतिरिक्त और क्या हो सकता है" (पृष्ठ ४८)। अन्यत्र उन्होंने कहा: "मैं तो बिहारकी इस विपत्ति और अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनके बीच एक तात्त्विक सम्बन्ध देख रहा हूँ। बिहारकी यह विपत्ति हमें आकस्मिक रूपसे इस बातकी याद दिलाती है कि हम क्या हैं और ईश्वर क्या है" (पृष्ठ ४९)। एकके-बाद-एक अनेक सभाओंमें बिहारके विपद्ग्रस्त लोगोंके लिए चन्दा देनेका अनुरोध करते हुए वे अपने इस विश्वासको भी दोहराते रहे। ईश्वरने दण्ड देनेका यही तरीका क्यों चुना, इसका उत्तर उनके पास नहीं था, लेकिन क्यों नहीं था, यह उन्होंने स्पष्ट कर दिया: "मैं ईश्वर तो नहीं हूँ। इसलिए मुझे ईश्वरीय प्रयोजन का किंचित् ही ज्ञान है। . . . ऐसा सोचना मेरे लिए उत्कर्षकारक है कि बिहारका यह प्राकृतिक प्रकोप अस्पृश्यताके पापका फल है। यह भाव मुझे विनम्र बनाता है, उसके निराकरणके लिए मुझे और अधिक प्रयत्न करनेकी प्रेरणा देता है" (पृष्ठ ९६)।

ऐसा प्रतीत होता है कि इस तरह "ब्रह्माण्डीय व्यापारके साथ नैतिक सिद्धान्तों को जोड़ना" कुछ लोगोंको अच्छा नहीं लगा और इसलिए इस बातके लिए गांधीजी की खुली आलोचना की जाने लगी। रवीन्द्रनाथ ठाकुरने एक वक्तव्यमें इसपर अपना "दुःख और आश्चर्य" व्यक्त करते हुए कहा कि गांधीजी के मुँहसे ऐसे शब्द निकलने से उनके देशभाइयोंके "मस्तिष्कमें तर्कहीनताके तत्त्वका समावेश" हो सकता है– "तर्कहीनता, जो उन तमाम अन्धी ताकतोंका बुनियादी स्रोत है जो हमें स्वतन्त्रता और आत्म-सम्मानके खिलाफ ला खड़ा करती है" (परिशिष्ट १)। लेकिन गांधीजी अविचलित रहे। कविगुरुको उत्तर देते हुए उन्होंने कहा: "मेरी विवशता है कि मैं अपने विचारोंपर आग्रह करनेके अतिरिक्त कुछ कर ही नहीं सकता। मेरा यह विश्वास अवश्य है कि भौतिक घटनाओंके अतिभौतिक परिणाम निकलते हैं। लेकिन कैसे निकलते हैं, यह मैं नहीं जानता" (पृष्ठ १०५)। किन्तु इससे उनका तात्पर्य यह नहीं था कि "हम निश्चयपूर्वक ऐसा कह सकते है कि अमुक विपत्ति अमुक मानवीय कृत्यका परिणाम है।" उनके कहनेका मतलब सिर्फ इतना ही था कि "प्रत्येक प्राकृतिक प्रकोपका अर्थ यह होता है या होना चाहिए कि प्रकृति हमसे आत्मालोचन, पश्चात्ताप और आत्मशुद्धि करनेको कह रही है" (पृष्ठ ३४४)। विज्ञानके एक विद्यार्थी को उत्तर देते हुए भी उन्होंने यही बात कही: "हमारे किन पापोंके कारण ऐसे संकट आते हैं, यह कोई नहीं कह सकता। इस सम्बन्धमें स्वर्णिम नियम यह है कि सभी लोग इसे अपने व्यक्तिगत और सामाजिक पापका दण्ड मानें। 'तुम्हारे पापके कारण यह संकट आया, ऐसा कहनेमें अभिमान है, किन्तु 'मेरे पापके कारण ऐसा हुआ', यह माननेमें विनम्रता है, ज्ञान है। . . . यदि मैं पाठकोंसे यह मनवा सकूँ कि हमारे पापके कारण भूकम्प आया था तो मेरा काम पूरा हो जाता है" (पृष्ठ ४२६)।

गांधीजी १२ मार्चसे ९ अप्रैल तक और फिर २२ अप्रैलसे ५ मई तक बिहारमें रहे। यहाँ अपने सहयोगियोंके उस छोटे-से दलके साथ जिसमें कुछ आश्रमवासी भी शामिल थे, वे उन हिस्सोंका दौरा करते रहे जहाँ भूकम्पका प्रकोप सबसे अधिक हुआ था। इस दौरान उन्होंने जो भाषण दिये, उनका मुख्य स्वर यह था कि सबसे पहले "लोगोंको दुःखसे उबारा" जाये (पृष्ठ ३१३)। केन्द्रीय राहत समितिकी बैठकमें उन्होंने कार्यकर्त्ताओंसे आकुल आग्रह किया कि वे अपने तमाम मतभेदोंको भूलकर राहत-कार्यमें लगे सभी लोगों और संस्थाओंके साथ––सरकारके भी साथ––सहयोग करें। उन्होंने कहा: "यों तो मैं असहयोगका जनक हूँ, लेकिन हमारे सामने जो काम है उसमें सहयोग करनेकी सिफारिश मैंने बेहिचक की है" (पृष्ठ ३११-१२)। कार्यकर्त्ताओंसे कुछ समयके लिए कांग्रेसका नाम भूल जानेका अनुरोध करते हुए उन्होंने कहा: "प्यासेको जिस हाथसे भी पानी मिलेगा, पियेगा ही; भूखेको जिस हाथसे भी खाना मिलेगा, खायेगा ही। तो उन्हें सबसे सहायता लेने दीजिए। हमें अपना राहतका काम करते हुए सरकारसे सहयोग करना चाहिए" (पृष्ठ ३६५)।

किन्तु राहत-कार्यकी व्यवस्था करते हुए भी उन्होंने अस्पृश्यताके विरुद्ध अपने धर्मयुद्धको विस्मृत नहीं किया था। विपद्ग्रस्त बिहारके नाम एक सन्देशमें उन्होंने कहा: "मैं चाहूँगा कि आप यह याद रखें कि अस्पृश्यता-रूपी भूचाल धरतीमाता के उस कम्पनसे कहीं अधिक बुरी चीज है" (पृष्ठ २८७)। ईश्वरने अपनी विनाश-लीलाके क्रममें ऊँच-नीचका कोई भेद-भाव नहीं किया, फिर मनुष्यके लिए वैसा करना कहाँतक उचित था? प्रकृतिकी ऐसी लीलाओंसे मनुष्यको शिक्षा लेनी चाहिए। "प्रकृति मेघ-गर्जनके समान उच्च स्वरमें हमें चेतावनी देती है। वह लपटोंके लेख के समान स्पष्ट अक्षरोंमें हमारी आँखोंके सामने अपनी चेतावनी कौंधा देती है। किन्तु हम उसे सुनकर भी अनसुना कर देते हैं, देखकर भी अनदेखा कर देते हैं" (पृष्ठ ३७१)।

इस खण्डसे सम्बन्धित अवधिमें गांधीजी ने दो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये। जब उन्होंने बिहारके दौरेके समय इन निर्णयोंकी घोषणा की तो राजनीतिक कार्य-कर्त्ताओंके बीच तीव्र सनसनी फैल गई। इन विशिष्ट निर्णयोंमें से एक तो यह था कि देशकी स्वतन्त्रतासे जुड़े किसी भी प्रश्नको लेकर केवल गांधीजी ही सविनय अवज्ञा कर सकते थे, और दूसरा यह था कि जिन कांग्रेसियोंका कौंसिल-प्रवेश कार्यक्रममें विश्वास हो वे उसको कार्यान्वित करें।

कांग्रेसी अभी सत्याग्रह नहीं कर रहे थे, इसका मतलब यह नहीं था कि कांग्रेसने सत्याग्रह कार्यक्रमको त्याग दिया। ऐसी बात तो कांग्रेसके लिए आत्महत्याके समान होती। वास्तवमें इस फैसलेका कारण, गांधीजी के ही शब्दोंमें, यह था: "आज कांग्रेसका बाहरी संगठन तो कुछ रह ही नहीं गया है। कुछ अराजकताकी-सी स्थिति है। इसलिए आज यदि कांग्रेसके तेजकी रक्षा करनी हो तो एक ही रास्ता है" (पृष्ठ ३३०)। उन्होंने इस सम्बन्धमें सिर्फ यही सलाह दी कि उनके जीवनकालमें जो भी सत्याग्रह करना चाहे, वह उन्हींके मार्गदर्शनमें करे। उन्होंने कहा: "मुझे लगता है कि सर्वसाधारणने सत्याग्रहके पूर्ण सन्देशको ग्रहण नहीं किया है, जिसका कारण यह है कि सम्प्रेषणकी प्रक्रियामें, एकसे दूसरेतक इसके पहुँचाये जानेके क्रममें इसका रूप दूषित हो गया। मेरे सामने यह बात स्पष्ट हो गई है कि जब आध्यात्मिक साधनों-के उपयोगका प्रशिक्षण अध्यात्मेतर माध्यमसे दिया जाता है तो उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है" (पृष्ठ ३७९)। उन्होंने आगे कहा: ". . . जैसे-तैसे किया गया सवि-नय प्रतिरोध एक वर्गके रूपमें न तो 'उग्रपंथियों' के हृदयका स्पर्श कर पाया है और न शासकोंके हृदयका . . ." (पृष्ठ ३८०)।

देशकी परिस्थितिने गांधीजी के शब्दोंको सही सिद्ध कर दिया। सितम्बर १९३३ में मिदनापुरमें एक जिला-मजिस्ट्रेटकी हत्या कर दी गई थी। सरकारने बदलेकी जो कार्रवाई आरम्भ की उसे देखकर गांधीजी 'स्तब्ध' रह गये। एक पत्रमें उन्होंने लिखा: "जनताका मनोबल कुचलनेके लिए सरकार द्वारा उठाये गये कदमोंका वर्णन करते नहीं बनता" (पृष्ठ ८५)। जवाहरलाल नेहरूके नाम अपने पत्रमें उन्होंने इस सबको "१९१९ में पंजाबमें की गई कार्यवाहियोंसे भी बदतर" बताया (पृष्ठ ३३)।

८ अप्रैलको बंगालके गवर्नर सर जॉन एंडरसन पर गोलियाँ चलाई गई। इसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप सरकारने दमनकी और भी कड़ी कारवाई शुरू कर दी। पशुबलके इस प्रयोगमें जनताकी मूक सहमति देखकर गांधीजी को जितनी वेदना हुई उतनी सरकारी कार्यवाहियोंसे भी नहीं हुई थी। रवीन्द्रनाथ ठाकुरको लिखे एक पत्रमें उन्होंने कहा: "हमारी कायरताका खयाल करके मेरा दम घुटने लगता है" (पृष्ठ ३२)।

जहाँतक परिषद-प्रवेश कार्यक्रम और स्वराज पार्टीके पुनरुज्जीवनका प्रश्न था, इन दोनों पर सहमति देनेके अलावा गांधीजी के सामने कोई चारा भी नहीं था। कांग्रेसमें बराबर "ऐसे लोगोंका एक समुदाय" बना रहा "जो परिषद्-प्रवेशमें विश्वास करते" थे और "जो उस कार्यक्रमके न रहनेपर और कुछ भी करनेको तैयार नहीं" थे (पृष्ठ ४२२)। "बौद्धिक वर्ग जिस जड़तासे ग्रस्त हो गया" था उसे गांधीजी ने लक्ष्य किया था (पृष्ठ ३६७)। उन्होंने लोगोंके स्वार्थ और व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओंको भी खुलकर खेलते देखा था। इसलिए उन्हें लगा कि उन लोगोंको "खिन्न, असन्तुष्ट और निष्क्रिय बनाकर रखनेके बजाय उन्हें अपनी राह चलने देना कहीं ज्यादा अच्छा होगा" (पृष्ठ ३६७)। किन्तु इसका मतलब यह नहीं था कि उन दिनोंके विधानमण्डलोंकी उपयोगिताके सम्बन्धमें गांधीजी के विचारोंमें कोई परिवर्तन आ गया था। जैसाकि उन्होंने स्वयं कहा, इस विषयमें कुल मिलाकर उनके विचार वही थे जो १९२० में थे। (पृष्ठ ३८३)। उनकी "कल्पनाका जनतंत्र कुछ और ही प्रकारका" था। वह बाहर गढ़ा जाना था, कौंसिलोंमें नहीं। उन्हें "लोकमतका अनुसरण करनेवाली कौंसिल चाहिए" थी (पृष्ठ ४३१)। इसलिए अभी तो वे लोगोंसे सिर्फ इस तथ्यको स्वीकार कर लेनेको कह रहे थे कि एक "संसदीय दलका अस्तित्व भी उतना ही अनिवार्य है जितना कि एक खद्दर-दल या मद्य-निषेध-दलका" (पृष्ठ ४२४)।

वैसे तो स्वराज्यवादियोंको ज्यादा अच्छा यह लगता कि गांधीजी कांग्रेसके सत्याग्रहका त्याग कर देनेपर सहमति दे दें या यदि व्यक्तिगत सत्याग्रहपर आग्रह छोड़नेको वे तैयार न हों तो कम-से-कम कांग्रेसके नामपर वैसा सत्याग्रह न करें। वे गांधीजी को त्यागना नहीं चाहते थे। वे इतना ही चाहते थे कि गांधीजी कांग्रेसको इस भारसे मुक्त कर दें, क्योंकि वह इसे "सँभालनेमें असमर्थ" थी (पृष्ठ ४९१)। लेकिन गांधीजी अपने संकल्पपर डटे रहे। उन्होंने कहा: "मैं व्यक्तिगत तौरपर सविनय अवज्ञा करना स्थगित नहीं कर सकता, न कांग्रेस ही कर सकती है। कांग्रेस उसे स्थगित करनेकी धृष्टता नहीं कर सकती, क्योंकि इस आन्दोलनमें हजारों लोग अपने-आपको बर्बाद कर चुके हैं" (पृष्ठ ४९२)।

अन्य खण्डोंकी तरह इस खण्डमें भी पत्रोंकी संख्या अच्छी-खासी है। पत्रोंकी यह संख्या अपने-आपमें इस बातका प्रमाण है कि गांधीजी चारों ओरसे कितने सजग रहते थे। यह उनकी घोर व्यस्तताकी अवधि थी, फिर भी वे पत्र लिखने

के लिए बीच-बीचमें कुछ समय निकाल ही लेते थे। यदि इससे भी काम नहीं चलता तो रातके दो-दो बजे, जब कि पत्रोंको पानेवाले सुखकी नींद सोते रहते होंगे, जगकर वे पत्र लिखा करते थे। इन पत्रोंमें कहीं सम्बन्धित लोगोंकी घरेलू अथवा कार्य-सम्बन्धी या सार्वजनिक महत्त्वकी समस्याओंपर सलाह अथवा मार्ग-दर्शन दिया गया है तो कहीं मसलेको साफ करनेके लिए उपयुक्त प्रश्न पूछे गये हैं। उदाहरणके लिए, उन्होंने कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशीको ज्योतिषियोंसे दूर रहनेकी सलाह दी (पृष्ठ २९०)। विट्ठलभाई पटेलके विवादग्रस्त वसीयतनामेके सम्बन्धमें उन्होंने वल्लभभाई पटेलको लिखा: "मेरा रुख तो यह है कि यदि बोसको रुपये मिलते हों तो वे भले मिल जायें" (पृष्ठ ३८८)। डाह्याभाई पटेलको भी उन्होंने ऐसा ही लिखा। एक सहयोगीके सम्बन्धमें वल्लभभाई पटेलको वे लिखते है: "भणसालीने अपना मुँह सिलवा लिया है। पानीमें आटा घोलकर नली द्वारा चूसता है। कहता है कि एक दर्जीसे ओठ सिलवा लिये थे" (पृष्ठ १६७)। पत्रोंमें उन्होंने खुद अपनेको भी नहीं बख्शा। भगवानजी पण्ड्याको वे लिखते हैं: "अपने पत्रके लिए मैं लज्जित हूँ। मुझे ही नहीं, बल्कि अन्य लोगों को भी वह सुश्रृंखलित नहीं लगता। इतने खराब अक्षरोंमें पत्र लिखना, यह भी हिंसा ही है। . . . यदि इस पत्रसे मैं सतर्क हो जाऊँ तो उससे तुम्हारा उद्देश्य पूरा हो जायेगा" (पृष्ठ ४६६)।

कस्तूरबा अब भी जेलमें ही थीं। गांधीजी प्रायः हर सप्ताह उन्हें एक पत्र लिखा करते थे। इन पत्रोंमें वे अपनी गति-विधिका तथा परिवारके विभिन्न सदस्यों और सहयोगियोंके कुशल-क्षेम और प्रवृत्तियोंका विशद विवरण दिया करते थे। कस्तूरबा पहले ही जेल जानेमें हिचक रही थीं और यदि उन्हें गांधीजी के दौरेमें उनके साथ रहकर उनकी देख-रेख करनेका अवसर मिलता तो वे बहुत प्रसन्न होतीं। किन्तु गांधीजी की दृष्टिमें प्रेम या व्यक्तिगत सम्बन्धोंकी अपेक्षाओंसे पहले धर्मकी अपेक्षाओंको पूरा करना आवश्यक था। सो इन पत्रों और इनमें से कुछके अन्तमें दिये गये गीता-प्रवचनों द्वारा वे उनके मनको कर्त्तव्य-पथपर स्थिर करनेके लिए प्रयत्नशील दीखते हैं। ऐसे ही एक प्रवचनमें धर्मिष्ठ जीवनके सारको प्रस्तुत करते हुए वे कहते हैं: "अतः हम प्रतिदिन खाते-पीते, उठते-बैठते, जेलमें और जेलके बाहर अखिल विश्वके कल्याणकी कामना करें और उसके लिए जो सेवा हमारे भागमें आये सो कर डालें" (पृष्ठ १३१)। हिन्दू-धर्मके मर्मको समझाते हुए गांधीजी ने एक पत्रमें उन्हें रामनामके अभ्यासको अचूक आध्यात्मिक संबलकी तरह अपनानेकी सलाह दी है। वे कहते हैं: "तुलसीदासने . . . कहा है कि रामकी अपेक्षा उनका नाम बड़ा है, अर्थात् राम नामक जो देहधारी हुआ है उसकी तो मर्यादा थी, उसकी देह नाशवान थी, किन्तु राम अमर है। . . . रामनाम-वाले ईश्वरकी कोई मर्यादा ही नहीं है" (पृष्ठ २१२) और गुमियाकी एक सभामें लोगोंको रामनामका अभ्यास करनेकी सलाह देते हुए तो उनके स्वरसे मानों गीत ही फूट पड़ता है: ". . . मैं आपको एक ऐसा नाम दे रहा हूँ . . . जो

हमारे यहाँके पशुओं, पक्षियों, वृक्षों और पाषाणोंतक के लिए हजारों-हजार वर्षोंसे परिचित रहा है। . . . रामका नाम आपको इतनी मधुरता और इतनी भक्ति के साथ लेना सीखना चाहिए कि उसे सुननेके लिए पक्षी अपना कलरव बन्द कर दें, उस नामके दिव्य संगीतपर मुग्ध होकर वृक्ष भी अपने पत्र आपकी ओर झुका दें" (पृष्ठ ४८६)।

इन उद्‌गारोंसे हिन्दू-धर्मके प्रति गांधीजी के जिस उत्कट प्रेमका परिचय मिलता है, उसके कारण उनके इस विश्वासमें कोई अन्तर नहीं पड़ा कि सभी धर्म सच्चे हैं। उन्होंने कहा: "धर्म एक विशाल वृक्षके समान है, जिसकी अगणित शाखाएँ हैं। शाखाओंकी दृष्टिसे तो आप कह सकते हैं कि धर्म अनेक हैं, लेकिन वृक्षके रूपमें धर्म एक है" (पृष्ठ १९)। उन्होंने अन्यत्र कहा है: "ईश्वरने प्रकृतिकी रचना इस तरह की है कि हम विविधताके साथ एक हैं।" लेकिन साथ ही वे यह भी कहते हैं: "जबतक अनेक धर्म हैं और हम उनमें से किसी एकके अनुयायी हैं तबतक उस धर्मके प्रति हमारे कुछ विशेष कर्त्तव्य रहेंगे" (पृष्ठ ११)। इस विषयमें गांधीजी के दृष्टिकोणका पूरा परिचय हिन्दू बननेको इच्छुक एक जर्मन महिलाको दिये गये उनके इस परामर्शसे मिलता है: "अगर तुम्हें यहूदी धर्म सन्तोष नहीं दे रहा है तो कोई भी अन्य धर्म तुम्हें अधिक दिनों तक सन्तोष नहीं दे सकता" (पृष्ठ २९९)।

सनातनियोंने गांधीजी के दौरेमें व्याघात डालनेके लिए बक्सर और जसीडीह में उनपर जो आक्रमण किये उनके कारण उन्होंने अपना शेष दौरा पदयात्रा करके ही पूरा करनेका निश्चय किया। ऐसा प्रतीत होता है कि पदयात्राके प्रति उनके मनमें गहरा आकर्षण था। इसका कारण अंशतः तो यह था कि इस तरह वे सनातनियोंको यह दिखा सकते थे कि "यह आन्दोलन अपनी परिकल्पना और अमल दोनों बातोंमें तत्त्वतः एक धार्मिक आन्दोलन है" और अंशतः उनका यह विश्वास था कि "यदि मेरा सन्देश सचमुच मेरे हृदयसे निकलता है तो वह . . . मेरे पदयात्रा करनेसे कहीं ज्यादा जल्दी" लोगोंतक पहुँचेगा (पृष्ठ ५०९)। मथुरादास त्रिकमजीको लिखे पत्रमें गांधीजी ने एक रूपक द्वारा अपनी इस आस्था को बड़े सुन्दर ढंगसे व्यक्त किया: "धर्म बैलगाड़ीमें भी नहीं बैठता। वह तो लड़खड़ाता हुआ चलता है, किन्तु मंजिल अवश्य काटता है" (पृष्ठ ५४१)। एक अन्य प्रसंगपर उन्होंने अपना यह 'निश्चित विश्वास' प्रकट किया कि "संसारका कोई भी धर्म शरीर-बलपर टिका नहीं रह सकता। . . . धर्म वह महावृक्ष है जो अपना सारा सत्व उन लोगोंकी नैतिक उच्चतासे प्राप्त करता है जो उसको मानते हैं" (पृष्ठ २३६)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं :

संस्थाएँ : साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय (साबरमती आश्रम प्रिजर्वेशन ऐण्ड मेमोरियल ट्रस्ट), नवजीवन ट्रस्ट तथा गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली; भारत कला-भवन, वाराणसी; सीक्रेट ऐबस्ट्रैक्ट्स, गृह-विभाग, महाराष्ट्र सरकार; इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन; गृह-विभाग, आन्ध्रप्रदेश सरकार; गृह-विभाग राजनीतिक; वुडब्रुक कॉलेज, बर्मिंघम।

व्यक्ति : श्रीमती अमीना गु० कुरैशी, अहमदाबाद; श्री आनन्द टी० हिंगोरानी, अहमदाबाद; श्री ए० के० सेन, कलकत्ता; श्रीमती एफ० मेरी बार, कोटगिरि; श्रीमती एस० अम्बुजम्माल, नई दिल्ली; श्री कनुभाई मशरूवाला, अकोला; श्री क० मा० मुंशी, बम्बई; श्रीमती गंगाबहन वैद्य, बोचासण; श्री गोविन्दभाई आर० पटेल, श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद; श्री जयरामदास दौलतराम, नई दिल्ली; श्री जीवणजी डा० देसाई, अहमदाबाद; श्रीमती जेसी हॉयलैंड, फोबे, कॉर्नवाल; श्री डाह्याभाई एम० पटेल, बम्बई; श्री नारणदास गांधी, राजकोट; श्री प्रभुदास गांधी, अलमोड़ा; श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड (पूना); श्री भगवानजी पु० पण्ड्या, सेवाग्राम; श्रीमती मनुबहन एस० मशरूवाला, अकोला; श्री माधवलाल पटेल; मेडेलिन रोलाँ; श्री रमणीकलाल मोदी, अहमदाबाद; श्री रवीन्द्र आर० पटेल; अहमदाबाद; श्रीमती राजकुमारी अमृतकौर, सूरत; श्री रामनारायण एन० पाठक, भावनगर; श्रीमती लक्ष्मीबहन ना० खरे, अहमदाबाद; श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई; श्रीमती वनमाला एम० देसाई, नई दिल्ली; श्रीमती वसुमती पण्डित, सूरत; श्री वालजी गो० देसाई, पूना; श्रीमती शशिलेखा मेहता, अहमदाबाद; श्री शान्तिकुमार मोरारजी, बम्बई; श्रीमती शारदाबहन गो० चोखावाला, अहमदाबाद और श्री सुरेन्द्र एन० मशरूवाला, अकोला।

पत्र-पत्रिकाएँ : 'अमृत बाजार पत्रिका', 'इंडियन नेशन', 'गुजराती', 'जीवन साहित्य', 'न्यू ओरिसा', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'सर्चलाइट', 'स्टेट्स-

मैन', 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हरिजन-सेवक', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

पुस्तकें: 'इन द शैडो ऑफ द महात्मा', खण्ड ३; 'जीवन साहित्य', 'नरसिंह रावनी रोजनिशी', 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो–२: सरदार वल्लभभाईने', 'बापुना पत्रो–४: मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो–७: श्री छगनलाल जोशीने', 'बापुना बाने पत्रो', 'बापुनी प्रसादी', 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष', 'बापूके पत्र–८: बीबी अम्तुस्सलामके नाम' और 'माई डियर चाइल्ड।'

अनुसन्धान व सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओंके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इण्डियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग (रिसर्च ऐण्ड रेफरेंस डिवीजन), राष्ट्रीय अभिलेखागार और श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र हैं। प्रलेखोंकी फोटो-नकल तैयार करनेमें मदद देने के लिए हम सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके आभारी हैं।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमें गांधीजी के स्वाक्षरोंमें मिली है उसे अविकल रूपमें दिया गया है। किन्तु दूसरों द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमें हिज्जोंकी स्पष्ट भूलोंको सुधारकर दिया गया है।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमें अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद अनुवाद किया गया है। और मूलमें प्रयुक्त शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। नामों को सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमें संशय था उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजी ने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अंश उन्होंने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजी के कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमें छापे गये हैं। भाषण और भेंटकी रिपोर्टोंके उन अंशोंमें, जो गांधीजी के नहीं हैं, कुछ परिवर्तन किया गया है और कहीं-कहीं कुछ छोड़ भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकों में की गई है, और आवश्यक होने पर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोंमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हें आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गांधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ़ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नहीं हुआ, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये हैं।

इस ग्रंथमालामें प्रकाशित प्रथम खंडका जहाँ-जहाँ उल्लेख किया गया है वह जून १९७० का संस्करण है।

साधन-सूत्रोंमें 'एस० एन०' संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका, 'एम० एम० यू०' मोबाइल माइक्रोफिल्म यूनिटका, 'एस० जी०' सेवाग्राममें सुरक्षित सामग्रीका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गांधी) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये हैं। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. सन्देश : मलाबारकी जनताको[1]

[१६ जनवरी, १९३४][2]

मलाबारका व्यापक दौरा करनेके बाद अब मुझे निश्चय हो गया है कि अस्पृश्यताका निवारण पूरी तरह कार्यकर्त्ताओंपर निर्भर है। यदि सर्वथा निर्दोष चरित्र और कितना भी बड़ा त्याग करनेको समुद्यत समर्पण-भावनाके द्वारा उन्होंने इस कार्यमें अपनी निष्ठाका प्रमाण दिया तो विरोधियोंका हृदय द्रवित हुए बिना नहीं रह सकता।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-१-१९३४

२. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१६ जनवरी, १९३४

बा,

देवदास तुझसे मिल गया, शायद इसीलिए तेरा पत्र नहीं मिला, किन्तु मैं आशा करता हूँ कि मेरा पत्र तो तुझे मिल गया होगा। मैंने नियमित रूपसे हर सप्ताह पत्र लिखा है और प्रवचन[3] भी भेजा है। देवदास आकर मुझसे मिल गया। वह कल आया और साथमें लक्ष्मी भी आई है। दोनों आनन्दपूर्वक हैं। हम आज जुदा हो जायेंगे। मैं समझता हूँ कि वे दोनों राजाजी से मिलकर दिल्ली चले जायेंगे। किन्तु अभी निश्चित नहीं हुआ है। देवदासने तेरे बारेमें मुझे सब-कुछ बताया। वे तुझे मालिशके लिए तेल बाहरसे नहीं मँगाने देते, यह आश्चर्यकी बात है। किन्तु देवदाससे यह जानकर मुझे प्रसन्नता हुई कि तेल मिले या न मिले, ठीक खानेको मिले या न मिले, तू प्रसन्न रहती है। 'गीता' तथा अन्य धार्मिक पुस्तकोंके अध्ययनका यदि इतना परिणाम भी न निकले तो समझना चाहिए कि वे पुस्तकें पढ़ी ही नहीं गईं, अतः इस बारका प्रवचन स्वाध्यायके बारेमें ही भेज रहा हूँ। बहुत-सी पुस्तकोंमें हम यह पढ़ते हैं कि धार्मिक ग्रन्थ पढ़नेमें भी पुण्य होता है। यह उत्साहवर्द्धक वचन है। यदि हम इसके शाब्दिक अर्थोंके अनुसार चलें तो हमें कोई लाभ नहीं होगा। हम जो पढ़ें उसपर बार-बार विचार करना चाहिए, अर्थात् यह देखना चाहिए

१. यह सन्देश प्रकाशनके लिए **मातृभूमि**को दिया गया था।
२. १६ जनवरी, १९३४को कालिकटसे कोचीनको रवाना होनेके पहले यह सन्देश दिया गया था।
३. प्रथम प्रवचन २५ दिसम्बर, १९३३के पत्रमें लिखा गया था; देखिए खण्ड ५६, पृष्ठ ४१६।

कि हम उन्हें अपने जीवनमें कैसे उतार सकते हैं। किन्तु आज बहुत लोग आ-जा रहे हैं इसलिए अधिक नहीं लिखता। आज हम कालिकटमें हैं। श्यामजीभाईकी तो तुझे याद होगी ही। बाली सेवा-कार्यमें लगी हुई है और नर्मदा भी उसीमें लगी हुई है। आज साँझको हम कालिकटसे रवाना हो जायेंगे। उर्मिलादेवी यहीं हैं। सभी तुझे याद करते हैं।

सभी को,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ९

३. पत्र : मणिबहन न० परीखको

१६ जनवरी, १९३४

चि० मणि,[1]

अपने बारेमें विस्तारपूर्वक लिखना। क्या किया, क्या पढ़ा, किसपर विचार किया? बच्चोंके बारेमें भी जो लिखना हो सो लिखना।

हरेकको अपनी इच्छाके अनुसार बरतना है। और अधिक लिखनेका समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९७५) से। सी० डब्ल्यू० ३२९२ से भी; सौजन्य : वनमाला देसाई

४. पत्र : गोविन्ददासको

१७ जनवरी, १९३४

भाई गोविन्ददास,

तुमारा खत मिला, बहुत आनंद हुआ। मैं भी मिलना चाहता हूं। कार्यक्रम तो इसीमें है। यू० पी० की तारीख निश्चित नहिं है। उत्कलके बाद बंगाल, आसाम और बिहार है।

मुझे ईश्वर निभा रहा है।

तुमारा शरीर अच्छा होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७०९) से; सौजन्य : भारत कला भवन, वाराणसी

१. नरहरि परीखकी पत्नी।

५. भाषण : त्रिचूरकी सार्वजनिक सभामें

१७ जनवरी, १९३४

मित्रो,

इतने वर्षोंके बाद आपसे अपना परिचय पुनः ताजा करते हुए मुझे बहुत सुखका अनुभव हो रहा है। किन्तु मेरा यह सुख दुःखसे अछूता नहीं है। दुःख यह देखकर होता है कि कोचीन-जैसी आपकी इस रियासतमें, जहाँ शिक्षाका इतना प्रसार है, अस्पृश्यता आज भी मजेमें चल रही है। आज सुबह जब मैं त्रिचूरकी सड़कोंसे मोटरमें कहीं भाषण देनेके लिए जा रहा था तब शायद मैंने पहली बार एक नायडी भाईको देखा। वह डरसे काँप रहा था। उसका यह डर आपके लिए, मेरे लिए और तमाम हिन्दुओंके लिए लज्जाकी बात है। समय आ गया है जब आपको अपनी इस लज्जाको धो डालना चाहिए। हमारे लिए यह भी शर्मकी बात है कि आज भी कुछ ऐसे पुरुष हैं — स्त्रियोंके बारेमें मैं नहीं जानता — जो यह मानते हैं कि कुछ लोगोंको छूना नहीं चाहिए, उन्हें अपने पास नहीं आने देना चाहिए, उन्हें देखनातक नहीं चाहिए और धर्मके नामपर इन बुराइयोंका बचाव करनेकी कोशिश करते हैं। मैं आपसे विनयपूर्वक यह कहना चाहता हूँ कि सभ्य दुनियामें कहीं भी धर्मके नामपर इस तरहके पापकी बातका संकेततक नहीं किया जा सकता।

महाराजा साहब स्वयं अपने बलपर आपके हृदय बदल दें, यह तो सम्भव नहीं है; और अगर मैं अपने मनमें यह विश्वास लेकर चला जाऊँ कि अस्पृश्यता कलमके द्वारा एक-दो आदेश-वाक्य लिखकर दूर की जा सकती है तो मेरा ऐसा सोचना बिलकुल गलत होगा। इसी तरह यह परिवर्तन किसी तरहके बलप्रयोग द्वारा भी नहीं लाया जा सकता। इसलिए मैं सनातनियोंसे या यों कहूँ कि जो अपनेको सनातनी कहते हैं उनसे यह कहूँगा कि वे मेरे इस प्रचार-अभियानसे भयभीत न हों। मुझे तो आपकी विवेक-बुद्धिको जगाना है, आपके हृदयको छूना है और आपसे अपनी शक्तिके अनुसार जितना बन पड़े उतना करनेके लिए कहना है। हिन्दू एक सहिष्णु जाति होनेका दावा करते हैं, इसे वे अपने स्वभावका एक विशेष लक्षण बताते हैं, लेकिन यदि हिन्दू-धर्म अस्पृश्यता-जैसी चीजको आश्रय देता है तो वह असहिष्णुतावाला धर्म बन जाता है।

इसलिए जो लोग अस्पृश्यताके खिलाफ इस प्रचारमें योग देना चाहते हैं उनसे मैं आदरपूर्वक कहता हूँ कि वे हिन्दू-धर्मपर लगे इस कलंकको धो डालें। इस सवालके बारेमें मेरे पास ढेरों पत्र आते हैं लेकिन इसके बारेमें सबसे तीखे पत्र मुझे त्रावणकोर और कोचीनसे ही मिले हैं।

एक-दो शब्द मैं सुधारकोंसे कहूँगा। यदि हमें अपनी बातका निश्चय हो गया है और हम सनातनियोंको भी समझ गये हैं तो फिर हमारे ये भाई हमारे बारेमें जो भी कहें, हमें उसे सह सकना चाहिए। आखिर तो सुधारक लोग जो सुधार करना चाह रहे हैं उसका स्वरूप उनके चरित्रपर ही निर्भर करेगा। अस्पृश्यता-निवारणके इस अभियानकी परिणति सुधारकोंके चरित्रकी पवित्रतापर आधारित है। यदि वे अपना आजका चरित्र अक्षुण्ण बनाये रखते हैं और अपने प्रयत्नमें निरन्तर जुटे रहते हैं तो अस्पृश्यताकी यह बुराई निश्चिह्न हो जायेगी। किन्तु इसके लिए सुधारकोंमें धीरजकी जरूरत होगी। आसपासके वातावरणमें उन्हें कोई सहारा नजर न आये तो भी उन्हें अपना विश्वास नहीं खोना चाहिए।

दो शब्द मैं हिन्दी-भाषी मित्रोंसे कहूँगा। मैंने यह आशाकी थी कि मलाबारमें मुझे इतना हिन्दीमय वातावरण मिलेगा और हिन्दीके इतने जानकार मिलेंगे कि मुझे जो-कुछ भी कहना है वह सब मैं हिन्दीमें ही कह सकूँगा। लेकिन मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि यहाँ एक भी अनुवादक ऐसा नहीं है जो मेरे हिन्दी-भाषणका अनुवाद कर सके और यह भी कि श्रोता हिन्दी-भाषण सुननेके लिए राजी नहीं हैं। यदि आपकी अनुमति हो तो मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि हिन्दीके प्रति यह अरुचि हमारे अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनकी प्रगतिमें भी बाधक है। इसे मैं एक ही वाक्यमें स्पष्ट कर देता हूँ। उत्तर और दक्षिणके कार्यकर्त्ताओंको एक-दूसरेके प्रान्तोंमें जाकर काम कर सकना चाहिए। हिन्दी-भाषी लोगोंमें हमारे पास बहुत सारे कार्यकर्त्ता हैं किन्तु यदि उत्तरके कार्यकर्त्ता यहाँ आकर यहाँके लोगोंको अपनी बात नहीं समझा सकते तो फिर उत्तर और दक्षिणके बीचमें एक अलंघनीय दीवार खड़ी हो जाती है। आप शायद इसका जवाब यह कहकर देना चाहेंगे कि जब आप वहाँ जाते हैं तो वे आपकी भाषा सीखने-समझनेकी कोशिश क्यों नहीं करते। लेकिन यदि इस विषयपर आप थोड़ी गहराईसे सोचें तो आप समझ जायेंगे कि आपकी यह माँग ठीक नहीं है। मलयालम, तेलगू, कन्नड़, तमिल — इनमें से उत्तरके लोग कौन-सी भाषा सीखें? मैं सारी भारतीय भाषाओंका प्रेमी हूँ और मैंने अपनी इस पैंसठ वर्षकी अवस्थामें इन सब भाषाओंको सीखना शुरू किया है। दक्षिणकी भाषाओंसे तो मुझे विशेष प्रेम है। लेकिन भाषाओंके क्षेत्रमें हमारी जो स्थिति है उसे मैंने समझा है और उसके आधारपर मैं कहता हूँ कि यदि हमें अस्पृश्यता-निवारण-जैसे सुधारके लिए काम करना है तो हिन्दीका सार्वत्रिक ज्ञान आवश्यक है; क्योंकि वह ऐसी भाषा है जिसे हमारे देशके तीस करोड़ लोगोंमें से बीस करोड़ लोग बोलते हैं और चूँकि हम सब अपनेको भारतीय कहते हैं इसलिए हमें यह आशा करनेका अधिकार है कि ये तीस करोड़ लोग बीस करोड़ लोगोंकी भाषा सीखनेका प्रयत्न सहर्ष करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-१-१९३४

६. भाषण : कुरुक्कनचेरीमें[1]

१७ जनवरी, १९३४

आपके साथ अपना परिचय नया करनेका यह अवसर पाकर मुझे बहुत आनन्द हो रहा है। एज़वा और थिय्या नाम मेरे लिए नये नहीं हैं। इसी तरह श्री नारायण गुरुका नाम भी मेरे लिए नया नहीं है। मुझे उनके जीवनकालमें उनसे मिलने और लम्बी चर्चाएँ करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। एज़वा और थिय्या भाइयोंसे मेरा परिचय तभी हुआ था। मैं उनके निकट सम्पर्कमें आया, उनके नेताओंसे मिला और उनसे अनेक बार बहुत सौहार्दपूर्ण चर्चाएँ हुईं। मैंने उनसे जो प्रेम सदा पाया उसकी बहुत सुखद स्मृतियाँ मेरे मनमें संचित हैं। उसके बाद उनके और मेरे बीच हमेशा पत्राचार होता रहा है। उनमें से कुछने मेरे विचारोंसे मतभेद प्रकट किया है किन्तु उसके कारण हम लोगोंके बीचमें जो प्रेम है उसमें कभी कोई कमी नहीं हुई। यह प्रेम मेरी एक बहुमूल्य निधि है। इसलिए आपके बीच उपस्थित होनेका मौका पाकर मैं बहुत खुश हूँ।

आपका अभिनन्दन-पत्र मैंने बहुत ध्यानसे पढ़ा है। जाति-प्रथाकी अपनी व्याख्याके अनुसार आपने इस प्रथाके सम्बन्धमें जो भी कहा है उससे मेरी पूरी सहानुभूति है। लेकिन आप अपने अनुभवसे यह तो जानते ही होंगे कि हमारी इस दुनियाके सवालोंके प्रायः दो पक्ष होते हैं। उनके अनुसार उनका न केवल रूप बदल जाता है, उनका अर्थ भी बदल जाता है। जहाँतक जाति-प्रथा अस्पृश्यताकी बुराईको आश्रय देती है वहाँतक वह निश्चय ही एक अधार्मिक प्रथा है और हमें उसका मूलोच्छेद कर देना चाहिए, फिर चाहे उसका कुछ भी मूल्य क्यों न चुकाना पड़े। लेकिन मैंने कई बार समझाया है कि वर्णधर्मके रूपमें जाति-प्रथा एक सनातन नियम है और हम उसे तोड़ नहीं सकते। यदि हम उसे तोड़नेकी कोशिश करेंगे तो हम अपना नुकसान करेंगे। प्रकृतिके ऐसे अनेक नियम हैं जिन्हें हम नहीं जानते। लेकिन इसका यह मतलब तो नहीं होता कि वे हैं ही नहीं या कि हमारे जीवनपर वे अपना प्रभाव नहीं डाल रहे हैं। वर्णका नियम हमारे पूर्वजोंने युगों पूर्व ढूँढ़ निकाला था और मैंने उसका जो अर्थ किया है, उसे जैसा समझा है उसके अनुसार वह मुझे एक सर्वथा कल्याणकारी नियम प्रतीत हुआ है। किन्तु प्रकृतिके अधिकांश नियमोंकी तरह वर्णका यह नियम भी विकृत हो गया है और आज हम उसे उसके कुत्सित रूपमें देख रहे हैं। उसे विकृत आदमीने, हिन्दू-समाजने किया है और उसमें अस्पृश्यताकी प्रथाका समावेश

१. थिय्या हरिजनों द्वारा दिये गये अभिनन्दन-पत्रके उत्तरमें। इस भाषणकी एक रिपोर्ट **हिन्दूके** १९-१-१९३४ के अंकमें भी छपी थी।

करके तो उसकी इस विकृतिको और भी वीभत्स बना दिया है। वर्णधर्म मूलतः एक आर्थिक नियम है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यदि सारी दुनिया इस नियमका अनुसरण करे तो हम अपने चारों ओर जो विग्रहका वातावरण देख रहे हैं वह एकदम समाप्त हो जायेगा। वर्णधर्म समाजमें संवादकी स्थापना करनेवाला नियम है, विग्रहका कदापि नहीं।

लेकिन मैं यहाँ आपको वर्णधर्म पर लम्बा व्याख्यान सुनानेके लिए नहीं आया हूँ। मैं तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि अस्पृश्यताके खिलाफ आपकी लड़ाईमें मैं आपके साथ हूँ। मैं आपके इस कथनसे पूरी तरह सहमत हूँ कि इस कुप्रथाने केवल हिन्दू-समाजको ही नहीं, अन्य समाजोंको भी भ्रष्ट कर दिया है। यह धारणा कि समाजका कोई वर्ग किसी दूसरे वर्गसे ऊँचा है, एक ऐसा विष है जो धीरे-धीरे हमें मृत्युकी ओर ले जा रहा है। जब नारायण गुरुने 'एक जाति, एक धर्म, एक ईश्वर' के सिद्धान्तका प्रतिपादन किया तो उनके मनमें यही बात थी। उन्होंने यही कहा कि 'कोई भी व्यक्ति अपनेको किसी दूसरेसे ऊँचा माने, इस बातको मैं सहन नहीं करूँगा।' इस विषयपर उनके साथ मेरी कई बार बातचीत हुई थी। और मुझे याद नहीं आता कि वर्णधर्मकी सबके लिए हितकारी व्याख्या जैसी मैं करता हूँ उसके खिलाफ उन्होंने कभी कुछ कहा हो।

इसलिए वृक्षकी रुग्ण या जहरीली शाखाओंके कारण हम उस वृक्षको ही काट कर न फेंक दें। यदि आप बागबानीके बारेमें कुछ भी जानते हैं तो आप यह भी जानते होंगे कि माली कहीं किसी शाखाको रुग्ण हुई देखता है तो वह उस शाखाको छाँट देता है। वृक्षको वह तभी काटता है जब वह देखता है कि उसकी जड़ोंमें ही खराबी आ गई है और वे सड़ने लगी हैं। जो माली केवल कुछ डालियोंको रोगग्रस्त देखकर झाड़की जड़पर ही कुल्हाड़ी चला देता है उसे तो ऐसा मूर्ख माना जायेगा, जिसे उसकी जगहसे तुरन्त हटा दिया जाये। अपने समाजमें हमें समझदार मालियोंकी तरह बरतना चाहिए। हमें उस बीमारीको समझनेकी कोशिश करनी चाहिए जो हिन्दू-धर्मको कमजोर बना रही है। हमें अस्पृश्यताको दूर करना चाहिए या दूसरे शब्दोंमें ऊँच-नीचकी भावनाको खत्म करना चाहिए। पहले हम इस बुराईको दूर करें और अपने हृदयोंको शुद्ध बनायें। इतना कर चुकनेके बाद ही हम इस योग्य होंगे कि वर्णधर्मके मेरे बताये हुए अर्थको ध्यानमें रखकर वर्णधर्मके सम्बन्धमें हम अपनी अनुकूल या प्रतिकूल राय दे सकें। अभी तो हम वर्णधर्मको मुख्यतः अस्पृश्यताकी इस बुराईके ही एक पहलूके रूपमें जानते हैं। अन्तमें, मैं अपना यह विश्वास दुहराता हूँ और चाहता हूँ कि आप भी अपने हृदयमें इस विश्वासको स्थान दें कि अस्पृश्यता तेजीसे जा रही है। और यदि इस विश्वासने आपके मनको भी छुआ हो, यदि आपको भी इस विश्वाससे मिलनेवाले बलका अनुभव हुआ हो तो मैं चाहता हूँ कि इस भयंकर बुराईको मार भगानेमें आप भी अपनी पूरी शक्तिसे जुट जायें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-२-१९३४

७. भाषण : यूनियन क्रिश्चियन कॉलेज, अलवायेमें

१७ जनवरी, १९३४

इस विद्यालयके विद्यार्थियों और अध्यापकोंसे अपने पुराने परिचयको ताजा करके मुझे बहुत खुशी हो रही है। अपनी पहली भेंटके अवसरपर इस विद्यालयके तत्कालीन विद्यार्थियोंके साथ मैंने जो समय बिताया था उसकी बहुत मधुर स्मृतियाँ मेरे मनमें हैं। आजकल मैं इस प्रदेशका दौरा कर रहा हूँ तो आपने मुझे याद किया, यह आपकी बड़ी कृपा है।

मेरा सन्देश बहुत सीधा और सरल है। यह कोई ऐसा नया सत्य नहीं जो मेरे समक्ष आज एकाएक उद्घाटित हुआ है। अपनी क्षमताके अनुसार मैं पिछले पचास वर्षोंसे उसपर पूरा-पूरा आचरण करता रहा हूँ। और उसे मैं अपने आचरणमें जितना अधिक उतार पाया हूँ मुझे उतने ही अधिक आन्तरिक आनन्दका अनुभव हुआ है। और यह सन्देश मैं भारतको पहली बार दे रहा हूँ, ऐसा भी नहीं है। किन्तु अभी हालमें हुई कुछ घटनाओंके कारण लोगोंको यह कुछ नई बात मालूम होती है। मैं इतना ही कहता हूँ कि सवर्ण हिन्दुओंको, जो अपनेको तथाकथित अस्पृश्यादि या अवर्ण हिन्दुओंसे बड़ा मानते आये हैं, अब यह समझ लेना चाहिए कि उनकी इस मान्यताके लिए शास्त्रोंमें कोई आधार नहीं है। अगर मुझे किसी दिन यह पता चले कि 'वेद', 'उपनिषद्', 'भगवद्गीता', 'स्मृतियाँ' आदि शास्त्रोंमें उस तरहकी अस्पृश्यताके लिए जिसकी चर्चा मैंने आपसे की है ऐसे कोई वचन हैं जिनके आधारपर उसके सम्बन्धमें दैवी आज्ञाका दावा किया जा सकता हो तो दुनियाकी ऐसी कोई चीज नहीं है जो मुझे हिन्दू-धर्मसे बाँधकर रख सके। तब तो मैं हिन्दू-धर्मको उसी तरह दूर ढकेल दूँगा जिस तरह मैं किसी सड़े सेवको फेंक दूँगा। जिस ईश्वरने सवर्ण और अवर्ण हिन्दुओं, दोनोंकी सृष्टि की है उसीने अपनी सन्तानके बीच भेदकी यह अशुभ दीवार भी बनाई है — इसके विचार-मात्रसे मेरी बुद्धिको आघात लगता है, मेरे हृदयको चोट पहुँचती है। जिन ऋषियोंने वेदोंकी और उपनिषदोंकी रचना की है, जिन्होंने अपने प्रत्येक मन्त्रमें ब्रह्मकी एकताका गान किया उन्होंने ही, आज हिन्दुओंमें अस्पृश्यता जिस रूपमें दिखाई देती है, उसकी भी कल्पना की होगी, यह बात किसी भी समझदार आदमीको अरुचिकर लगनी चाहिए। लेकिन ऐसे पूर्वग्रह और अन्धविश्वास मुश्किलसे मिटते हैं। वे हमारे विवेकको ढँक लेते हैं, बुद्धिपर धुंधकी तरह छा जाते हैं और हृदयको कठोर बना देते हैं। और यही कारण है कि हम विद्वानोंको भी इस अस्पृश्यताका बचाव करते हुए देखते हैं।

लेकिन आप विद्यार्थियोंको जानना चाहिए कि इस सन्देशके पीछे इससे भी बड़ा एक सन्देश छिपा हुआ है। अस्पृश्यताके इस रोगका आक्रमण भारतीय समाजके अन्यान्य

वर्गोंपर भी हुआ है। और इस सन्देशका एक बृहत्तर अर्थ यह भी है कि न केवल हिन्दुओं और हिन्दुओंके बीच कोई अस्पृश्यता नहीं होनी चाहिए, हिन्दुओं, ईसाइयों, मुसलमानों, पारसियों आदिके बीच भी अस्पृश्यता नहीं होनी चाहिए। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि करोड़ों सवर्ण हिन्दुओंके हृदयोंमें यह महान् परिवर्तन किया जा सका, यदि हम उनके हृदयोंको शुद्ध कर सके —— मैं मानता हूँ कि हम ऐसा अवश्य कर पायेंगे —— तो हम इस देशमें एक ऐसे समाजका निर्माण करेंगे जिसमें सब लोग एक-दूसरेपर विश्वास रखेंगे, कोई किसीको शंका या सन्देहकी दृष्टिसे नहीं देखेगा। अपने सूक्ष्म रूपोंमें यह अस्पृश्यता ही वह चीज है जो हमें एक-दूसरेसे अलग रख रही है और हमारे जीवनको ही कुरूप और दुर्वह बनाये दे रही है।

अब आप समझ गये होंगे कि क्यों मैं इस कार्यमें धर्म और सम्प्रदाय आदिके भेदका खयाल किये बिना सारे भारतीयोंकी सहानुभूति जुटानेकी कोशिश कर रहा हूँ। सच तो यह है कि मैंने इस प्रयत्नमें सारी दुनियाका समर्थन माँगनेमें भी संकोच नहीं किया है। अलबत्ता, यह समर्थन मैंने पैसेके रूपमें नहीं, उनकी सहानुभूति, प्रयत्नकी सफलताके लिए उनकी प्रार्थना आदिके रूपमें ही चाहा है। मैंने चाहा है कि लोग इस प्रश्नका, और उसके सारे गूढ़ार्थोंका अध्ययन करें। मैं उनकी हार्दिक सहानुभूति चाहता हूँ, जो धनकी सहायतासे अनन्त गुनी बड़ी चीज है। मैं पैसेके लिए उनके सामने अपना हाथ नहीं फैलाता क्योंकि उन्हें तो हरिजनोंको कुछ देना नहीं है। यह ऋण तो सवर्ण हिन्दुओंको ही चुकाना है।

सारांश यह कि यह प्रार्थनात्मक समर्थन और सहानुभूति केवल अहिन्दू ही दे सकते हैं बशर्ते कि इस आन्दोलनको वे सदेहकी दृष्टिसे न देखते हों और उन्हें यह प्रतीति हो गई हो कि यह आन्दोलन धार्मिक है और आन्तरिक शुद्धिके लिए है। आप याद रखिए कि यह सन्देश जो मैं आपको सुना रहा हूँ वह यों ही बेकारका प्रलाप नहीं है। वह सीधे मेरे हृदयसे निकला है। मैंने आपकी थैली, जो आपने मुझे सहज स्वेच्छाके भावसे दी है, स्वीकार कर ली है। लेकिन वह मैंने यह सोचकर ही स्वीकार की है कि वह मुझे और आपको जोड़नेवाला एक सम्बन्धसूत्र है और आपके इस संकल्पका प्रतीक है कि आप मुझे अपना पूरा-पूरा समर्थन प्रदान करेंगे। और चूँकि मैं एक कुशल हिसाबनवीस हूँ इसलिए मैं आपसे हिसाब भी पूछूँगा और समय-समयपर यह जानना चाहूँगा कि इस आन्दोलनमें आपने क्या हिस्सा लिया है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २६-१-१९३४

८. पत्र : कुप्पम्के हरिजन-सेवकोंको[1]

[१८ जनवरी, १९३४के पूर्व][2]

प्रिय मित्रो,

मेरे किसी जगह न जानेपर वहाँके लोगोंका उपवास करनेकी धमकी देना तो बिलकुल ही गलत और निन्दनीय है। आप यह आसानीसे समझ सकते हैं कि बहुत सारे लोग ऐसी धमकियाँ देने लगें तो मेरे लिए कहीं भी जाना असम्भव हो जायेगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप अपने किये के लिए क्षमा माँगेंगे और अपनी धमकी वापस ले लेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १८-१-१९३४

९. यह बूढ़ा सौ वर्ष जिये[3]

[१८ जनवरी, १९३४][4]

आप अब्बास साहबकी ८० वीं जयन्ती मनाकर गुजरात और गुजरातकी जनताका गौरव बढ़ायेंगे। अब्बास साहबके उत्साह, उनके त्याग और उनकी उदारताकी बराबरी कोई नहीं कर सकता। पंजाबमें मार्शल लॉ-सम्बन्धी जाँचके दौरान मैं उनके सम्पर्कमें आया था। यह जानकर कि वे तैयबजी-परिवारके हैं और एक लम्बे अरसेसे कांग्रेसमें काम कर रहे हैं, मैंने कमेटीके सदस्यके रूपमें उनका नाम प्रस्तावित किया। एक निष्ठावान मुसलमान होनेके बावजूद वे एक निष्ठावान हिन्दूके साथ सगे भाईकी तरह रहते हैं इसलिए मैं तो उनके कुटुम्बीके समान हूँ। उनकी निजी बातें मुझसे छिपी नहीं हैं। उनके सभी कुटुम्बी यथासाध्य देश-सेवा करते हैं। मैं कामना करता हूँ कि यह बूढ़ा सौ वर्ष जिये।

[गुजरातीसे]
गुजराती, २८-१-१९३४

१. सुन्दरय्या अय्यंगार और कुछ अन्य हरिजन-सेवकोंने एक पत्र लिखकर गांधीजी को सूचित किया था कि यदि गांधीजी तिरुप्पत्तूरकी अपनी यात्राके दरम्यान कुप्पम् नहीं आये तो अय्यंगार ८ फरवरीसे उपवास करेंगे।

२. अखबारी रिपोर्टकी तारीख १८ जनवरी है।

३. यह सन्देश २५-१-१९३४ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**में भी प्रकाशित हुआ था।

४. चन्दूलाल दलालकी **गांधीजीनी दिनवारी**के आधारपर।

१०. जीवणजी डा० देसाईको लिखे पत्रका अंश

१८ जनवरी, १९३४

पुनश्च :

एक बात तो मैं भूल ही गया था। प्रकाशन-मन्दिरको बन्द कर देना चाहिए या नहीं, इस बारेमें मैं सही निर्णय नहीं दे सकता। मेरी उपस्थितिमें इस बारेमें विचार-विमर्श हुआ था। मैंने अपना यह विचार व्यक्त किया था कि यदि गांधी-साहित्यके प्रचारका कार्य कोई अपने हाथमें ले ले तो यह काम हमें उसे सौंप देना चाहिए और जो लोग जेल जानेको तैयार हों उन्हें जाने देना चाहिए। किसीको जेल जानेसे रोककर हमें प्रकाशन-कार्य नहीं करना है। किन्तु इसका उलटा भी किया जा सकता है। इस बारेमें तो पूरी जानकारी प्राप्त करके ही विचार किया जा सकता है। यहाँ बैठकर मुझे पूरी जानकारी नहीं मिल सकती। अतः मेरी रायपर ध्यान न देकर तुम सब लोगोंको जो ठीक जान पड़े वही करना चाहिए। यदि आपसमें तीव्र मतभेद हो तो सबकी राय, हरेकको उसके समर्थनमें जो-कुछ कहना है उसके साथ, मुझे लिख भेजना, तो मैं अन्तिम निर्णय दे सकूँगा। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि उतावलीमें कुछ करनेकी जरूरत नहीं। अपनी जिम्मेवारीको छोड़कर बीचमें कोई जेल न जाये। जेलसे तो उसी तरहका विचार व्यक्त किया जा सकता है जो कि महादेवने किया है। अतः इसे एक तरफ रखकर सबको स्वतन्त्र ढंगसे विचार करना चाहिए। महादेवके पास सही निर्णय देने लायक सामग्री नहीं हो सकती।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९३४) से। सी० डब्ल्यू० ६९०९ से भी; सौजन्य : जीवणजी डाह्याभाई देसाई

११. भाषण : पल्लुरुथीमें[1]

१८ जनवरी, १९३४

मैं संयोजकोंका कृतज्ञ हूँ कि वे मुझे विद्यालयका भवन और मन्दिर दिखाते हुए यहाँ लाये। इस मानपत्रमें आपने अपना मत जिस स्पष्टताके साथ व्यक्त किया है, उसके लिए भी मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मुझे इस बातकी खुशी है कि आपके इस मानपत्रका रूप किसी और चीजके बजाय सलाहका ही अधिक है। मेरी ओर से इसका सबसे अच्छा उत्तर यही हो सकता है कि मैं आपके सामने अपने विचार साफ-साफ

१. श्री नारायण धर्म परिपालन योगम् द्वारा दिये गये मानपत्रके उत्तरमें। इस भाषणकी संक्षिप्त रिपोर्ट २०-१-१९३४ के **हिन्दू**में भी प्रकाशित हुई थी।

रख दूँ। आपने मुझे यह सलाह दी है कि मैं यह आन्दोलन हिन्दू-धर्मके नामपर न चलाऊँ। मुझे खेद है कि आपकी इस सलाहको मैं स्वीकार नहीं कर सकता। ऐसा कहना या ऐसा सोचना कि यह आन्दोलन हिन्दू-धर्मको या ऐसी ही किसी दूसरी चीजको सुदृढ़ता प्रदान करनेके लिए चलाया जा रहा है, बिलकुल गलत है। यदि मैं पाप करूँ और फिर उसका प्रायश्चित्त करना चाहूँ तो मैं उसे अपनी स्थिति सुदृढ़ बनानेके लिए नहीं, अपनी शुद्धिके लिए ही करता हूँ। मेरी दृष्टिमें, यह अस्पृश्यता हिन्दू-समाज द्वारा अस्पृश्योंके प्रति किया जा रहा पाप है। और पाप यह इसलिए है कि सवर्ण हिन्दू अस्पृश्योंको, जिन्हें मैं हरिजन कहता हूँ, अस्पृश्य हिन्दू मानते हैं। इसलिए मैं इस आन्दोलनको हिन्दू-धर्मके सुधारका और उसकी शुद्धिका आन्दोलन कहता हूँ। मैं उनका कर्जदार हूँ जो अपनेको हिन्दू कहते हैं। जिनका हिन्दू-धर्मसे कोई सम्बन्ध नहीं है उनका कर्जदार मुझे नहीं कहा जा सकता। आप मुझे अभी मन्दिरमें ले गये थे; वहाँ आपने मुझे सब-कुछ दिखाया, हिन्दू परिपाटीके अनुसार वहाँ जो पूजा होती है वह भी दिखाई। यदि पूजाकी आपकी पद्धति वही है जो मेरी है तो स्वभावतः मैं आपके साथ सहानुभूतिका अनुभव करता हूँ। लेकिन यदि आप यह कहें कि आप अब हिन्दू नहीं हैं और आपने कोई दूसरा धर्म स्वीकार कर लिया है तो आपके हिन्दू होनेके नाते आपके प्रति मेरा जो कर्त्तव्य होता है, वह फिर नहीं रह जाता। हाँ, आपके मानवबन्धु होनेके नाते मेरा आपके प्रति जो कर्त्तव्य है वह तब भी रहेगा।

यह जो एक सूक्ष्म और आवश्यक भेद है उसके अस्तित्वसे हम इनकार नहीं कर सकते। ईश्वरने प्रकृतिकी रचना इस तरह की है कि हम विविधताके साथ एक हैं। दुनियामें अनेक धर्म हैं। मैं उन सबको सच्चा मानता हूँ। लेकिन जबतक अनेक धर्म हैं और हम उनमें से किसी एकके अनुयायी हैं तबतक उस धर्मके प्रति हमारे कुछ विशेष कर्त्तव्य रहेंगे। इसका यह अर्थ नहीं है कि मैं मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी या किन्हीं भी दूसरे धर्मानुयायियोंकी सेवा नहीं करूँगा। लेकिन यह भी सही है कि जिस मंचपर मैं खड़ा हूँ यदि उससे मेरे पाँव उखड़ जाते हैं तो फिर मैं किसीके भी साथ एकताका अनुभव नहीं कर सकता। मैं और आप जीवित हैं या कि मैं इस समय आपसे बातचीत कर रहा हूँ, इन तथ्योंमें मेरा जितना विश्वास है उसकी अपेक्षा भगवान्‌की हस्तीमें मेरा कहीं अधिक विश्वास है। मैं आपको इसका एक उदाहरण दूँ। बाहरी रूपकी दृष्टिसे इस समय मैं आपसे बोल रहा हूँ और आप मुझे सुन रहे हैं। लेकिन भीतरी सचाईकी दृष्टिसे हो सकता है कि आपका हृदय और आपका मन कहीं और हो। मेरा हृदय और मेरा मन भी कहीं अन्यत्र हो सकता है। ऐसा हो तो मेरा बोलना और आपका सुनना, दोनों, वंचना होंगे। बाहरी रूपमें तो बोलने और सुननेकी क्रिया होगी किन्तु वह सच नहीं होगी। लेकिन मेरा हृदय, मेरी वाणी और मेरा कर्म — सब उस पारमार्थिक सत्ताको समर्पित है जिसे हम गॉड, अल्लाह, राम या कृष्ण कहते हैं। अब आप मेरे इस कथनकी सचाईको समझ जायेंगे कि ईश्वर मेरे लिए इस सभासे, इस श्रोतृ-समुदायसे जिसे मैं अपना भाषण सुना रहा हूँ, ज्यादा सच है।

किन्तु मैं आपको अधिक गहराइयोंमें नहीं ले जाना चाहता। मैं जो कहना चाहता हूँ उसका सारांश यह है: यदि मैं यहाँ आपके सामने हिन्दूकी तरह पेश हुआ हूँ तो उसका कारण यह है कि मैं आपके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करना चाहता हूँ। जैसा कि परम्पराकी दृष्टिसे कहा जायेगा, मेरा जन्म एक सवर्ण हिन्दू-परिवारमें हुआ है। सवर्ण हिन्दूके रूपमें जब मैं यह देखता हूँ कि कुछ ऐसे हिन्दू भी इस समाजमें हैं जिन्हें अवर्ण कहा जाता है तो इससे सत्य और न्यायकी मेरी भावनाको आघात लगता है और मुझे कष्ट होता है। जिस धर्ममें मेरा जन्म हुआ और मैं बड़ा हुआ उसमें कोई एक भी व्यक्ति ऐसा हो जो मुझसे नीचा माना जाये, यह विचार ही मुझे घृणाजनक मालूम होता है। इसलिए मैं तो अपनी इच्छासे अस्पृश्य बन गया हूँ और मुझे यदि यह पता चले कि हिन्दू-शास्त्र सचमुच अस्पृश्यताके वर्तमान रूपमें अस्पृश्यताका समर्थन करते हैं तो मैं हिन्दू-धर्मको छोड़ दूँगा और उसकी निन्दा करूँगा। मैंने हिन्दू-धर्मको और अन्यान्य धर्मोंको समझनेका प्रयत्न किया है और अपने अध्ययनके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि हिन्दू-शास्त्रोंमें इसके लिए कोई आधार नहीं है। किन्तु हिन्दू लोग आज अस्पृश्यता पालते तो हैं। इसलिए इस बुराईके खिलाफ उन्हें चेतावनी देना मेरा कर्त्तव्य हो जाता है। लेकिन यदि आप कोई दूसरा धर्म स्वीकार कर लेते हैं या आपका कोई धर्म ही नहीं है तो फिर मुझे आपसे कुछ नहीं माँगना है। तब तो आप अस्पृश्य हिन्दू नहीं रह जाते। यदि आप हिन्दू-समाजसे अलग हो जाना चाहते हैं तो ऐसा करनेके लिए आप बिलकुल स्वतन्त्र हैं। मैं आपको हिन्दू-धर्मसे बलपूर्वक बाँधकर नहीं रख सकता। मैं तो प्रेमके द्वारा ही ऐसा कर सकता हूँ। मैं अपनी सेवाके द्वारा आपका प्रेम इस हदतक जीत सकता हूँ कि आपको लगने लगे कि यद्यपि कुछ हिन्दू आपको अस्पृश्य मानते हैं तथापि हिन्दू-धर्ममें अस्पृश्यता नहीं है। यह हो सकता है कि आपके पास आनेमें मैंने बहुत ज्यादा देर कर दी हो लेकिन ईश्वर मुझे इसके लिए दण्ड नहीं देगा क्योंकि वह जानता है मैं पिछले पचास वर्षोंसे अस्पृश्यताके खिलाफ विद्रोह करता आया हूँ। मेरा खयाल है, अब आप मेरी भूमिका समझ गये होंगे। यह आन्दोलन मुसलमानों, ईसाइयों या यहूदियोंके खिलाफ नहीं है। यह केवल ढोंगके, झूठके खिलाफ है। मैं इसी उद्देश्यके लिए लड़ रहा हूँ।

एक बात 'हरिजन' शब्दके उपयोगके बारेमें: यह शब्द मेरा बनाया हुआ नहीं है। इसका सुझाव मुझे एक अस्पृश्य भाईने ही दिया था। अस्पृश्यता एक बहुत घृणित चीज है लेकिन जबतक हमें उन लोगोंके बारेमें बात करनी पड़ती है जिन्हें अस्पृश्य माना जाता है तबतक एक अप्रिय शब्दके बजाय किसी ऐसे शब्दका प्रयोग करना निश्चय ही बेहतर है जो मनको चोट पहुँचानेवाला न हो। अपने ही जीवनसे मैं आपको एक दृष्टान्त देता हूँ। दक्षिण आफ्रिकामें हिन्दुस्तानी हिन्दुस्तानी नहीं, बल्कि कुली कहे जाते थे। मुझे हिन्दुस्तानी वकील नहीं, बल्कि कुली वकील कहते थे। गोरोंके लिए हिन्दुस्तानी और कुली पर्यायवाची शब्द थे। जिस तरह उस अन्त्यज भाईने 'अस्पृश्य' शब्दका विरोध किया, उसी तरह मैंने वहाँ कुली शब्दका विरोध किया, और हिन्दुस्तानियोंके लिए 'कुली' के बजाय 'हिन्दुस्तानी' शब्दका प्रयोग करनेका

सुझाव दिया। जबतक लोग अपने-अपने मुल्कके नामसे पुकारे जाते रहेंगे, तबतक हिन्दुस्तानके निवासियोंकी पहचानके लिए भी एक-न-एक नामकी तो जरूरत रहेगी ही। हिन्दुस्तानी नाम कुलीकी तरह अपमानजनक नहीं था। ठीक इसी रूपमें 'हरिजन' शब्दका प्रयोग किया जा रहा है।

अन्तमें, मैं पूरी विनम्रताके साथ एक बात कहना चाहूँगा, वह यह कि मैं यहाँ उनकी मदद करने नहीं आया हूँ, जिन्हें अपनी शक्तिका भान हो गया है। मैं जानता हूँ कि सवर्ण हिन्दुओंके विरुद्ध कड़ेसे-कड़े शब्दका प्रयोग करना भी आपके लिए कोई जुर्म नहीं है। मैं यह भी जानता हूँ कि अगर आप अपने रोषको व्यक्त करनेके लिए कुछ कर बैठें तो सवर्ण हिन्दू उसके भी पात्र हैं। लेकिन हरिजनोंकी आज क्या स्थिति है, वे कहाँ रहते हैं, उनकी संख्या कितनी है और वे किस पतनावस्थाको पहुँचा दिये गये हैं, इन सब बातोंका ज्ञान मुझे आपकी अपेक्षा कई गुना अधिक है। आप तो इसी स्थानकी, सम्भवतः कोचीन या कोचीन-त्रावणकोर अथवा बहुत हुआ तो मलाबारके ही बारेमें कह सकते हैं लेकिन मैं तो उत्तरसे लेकर दक्षिणतक और पूर्वसे लेकर पश्चिमतक के हरिजनोंके बारेमें ज्ञानपूर्वक बोल सकनेकी स्थितिमें हूँ। मैं उन सबकी हीनावस्थाको जानता हूँ। मेरा काम तो अगर सम्भव हुआ तो, सिर्फ उन्हीं लोगोंको उठानेका है जो आज इस दलदलमें फँसे हुए हैं। मैं उन्हें इसलिए उठाना चाहता हूँ कि मुझे खुद अपना उद्धार करना है। उनकी पतनावस्थाके साथ-साथ मैं खुद अपनेको पतित अनुभव कर रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि अगर हिन्दू अस्पृश्यताके अभिशापसे मुक्त हो गये, तो आप देखेंगे कि ये तमाम विनाशकारी भेद-भाव — न केवल हिन्दू-हिन्दूके बीचके भेद-भाव बल्कि हिन्दुओं और अहिन्दुओंके बीचके भेद-भाव भी — पलक झपकते इस तरह दूर हो जायेंगे मानो कोई जादू हो गया हो। मेरे पास जो थोड़ा-सा समय था, उसमें मैंने आपको अपना पूरा सन्देश सुना दिया। अब क्या करना है, यह आपको खुद ही तय करना है। चाहें तो आप इस क्षतिपूर्तिके लिए राजी हो जायें या इसे अस्वीकार कर दें।

अगर आप अब भी मेरी बात न समझ पायें तो मैं ईश्वरसे प्रार्थना करते हुए अंग्रेजीके एक भजनकी इन पंक्तियोंको ही दोहरा सकता हूँ :

जब मोहकी कुहेलिका छँट जायेगी,

हम एक-दूसरेको अधिक अच्छी तरह जानने लगेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन २-२-१९३४

१२. भाषण : थुरवूरमें

१८ जनवरी, १९३४

[गांधीजी को जो मानपत्र और २२५ रु०की थैली भेंट की गई उनका] उत्तर देते हुए उन्होंने श्रोताओंसे पूछा कि अभी जो थैली भेंट की गई है, उसकी पूरी कहानी क्या आप जानते हैं? उन्होंने बताया कि चन्देकी कुल राशि वस्तुतः ४२० रुपये थी, किन्तु मुझे सूचित किया गया है कि उसमें से १९५ रु० मेरे स्वागतपर खर्च कर दिये गये। सो थैलीमें बची हुई राशि ही है। इसका मतलब यह हुआ कि चन्देकी राशिका ५० प्रतिशत मुझे खिलाने-पिलाने और दूसरी सुविधाएँ देनेपर खर्च कर दिया गया। इस खर्चका औचित्य न तो वे सिद्ध कर सकते हैं और न मैं। स्वागत-समितिको चन्देकी राशि कंजूस आदमीकी तरह खर्च करनी चाहिए थी। मैं चाहूँगा कि समिति मुझे अपने खर्चका हिसाब दे। अभी हालतक मेरे ऊपर कामका बहुत ज्यादा बोझ था, इसलिए मैं प्रत्येक जिलेके हिसाबकी जाँच नहीं कर पाया। लेकिन अब ज्यों ही मुझे समय मिला है, मैंने पूछताछ शुरू कर दी है। यहाँके खर्चका एक मोटा हिसाब मुझे दिया गया है। लोगोंने ४२० रुपये इकट्ठे किये, जिनमें से १९५ रुपये स्वागत-सत्कारपर खर्च कर दिये। अगर मेरे सत्कारपर इसी तरह खर्च होना हो तब तो मुझे, जैसा मैं कुछ दिन पहले तक करता था, अपना भोजन अपने थैलेमें रखकर चलना पड़ेगा। इस पंडालका खर्च ८० रुपये आया है। बेशक इस समारोहके बाद उसके सामानको बेचकर कुछ पैसा निकाला जा सकता है। लेकिन, पंडालपर हुआ खर्च ऐसा था जिससे बचा जा सकता था। पंडाल तथा स्वागत-सत्कारकी दूसरी अनावश्यक मदोंपर हरिजनोंके लिए एकत्र की गई थैलीमें से एक पाई भी खर्च करने का कोई औचित्य नहीं है। फिर २५ रुपये स्वयंसेवकोंपर खर्च किये गये और २० छपाईपर। खर्चकी सूचीमें आखिरी दो हैं — सवारी आदिपर ३५ रुपये और फुटकर कामोंपर हुआ इतनी ही राशिका खर्च। यह आखिरी मद तो उस आखिरी तिनकेके समान थी जिसके ऊँटपर रखे जाते ही उसकी कमर टूटने लगती है। हो सकता है कि ये सारी रकमें उचित ढंगसे खर्च की गई हों। मैं कार्यकर्त्ताओंकी ईमानदारीमें शक नहीं कर रहा हूँ, लेकिन इससे यह तो प्रकट होता ही है कि उनमें विवेकका अभाव है और उन्हें जिस महान् उद्देश्यके लिए यह धन इकट्ठा किया जा रहा है उसका पूरा खयाल नहीं है। उन्होंने इस कार्यक्रमके धार्मिक स्वरूपके बारेम नहीं सोचा; उन्होंने, हरिजनोंकी जो क्षतिपूर्ति करनी है, उसका खयाल नहीं किया। क्षतिपूर्तिका मतलब क्षतिपूर्ति ही है; और कुछ नहीं। सवर्ण हिन्दुओंको अपने-आपको हरिजनोंका कर्जदार मानना चाहिए। जो लोग ऐसा महसूस नहीं करते कि हम

कर्जदार हैं, उनके बारेमें यही मानना चाहिए कि इस कार्यसे उन्हें सहानुभूति नहीं है। जिनके मनमें इस उद्देश्यके प्रति सहानुभूति नहीं है, उनसे मैं कुछ नहीं लेना चाहता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१-१९३४

१३. भाषण : सार्वजनिक सभा, एर्नाकुलममें

१८ जनवरी, १९३४

महात्माजी ने [नगरपालिकाके] मानपत्रका[1] उत्तर देते हुए कहा कि मुझे तो अस्पृश्यतामें हिन्दू-धर्मका विनाश दिखाई देता है। अस्पृश्य हरिजनोंको अस्पृश्य स्वयं हिन्दुओंने बनाया और तब यह घोषणा कर दी कि उन्हें तो ईश्वरने ही अस्पृश्य बनाया है। शास्त्रोंमें जाति या अस्पृश्यताका समर्थन नहीं किया गया है। देशमें जितनी भी बुराइयाँ हैं उनका मूल कारण अस्पृश्यता ही है। मैं हिन्दुओंको अधिक अधिकार दिलानेके लिए ईसाइयों या मुसलमानोंके साथ नहीं लड़ना चाहता। यह तो हिन्दुओंका आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है। कोचीनको एक पुण्य-क्षेत्र बनाया जा सकता है। इसके एक ओर समुद्रका तट है और ऋषियोंने ऐसे क्षेत्रको पवित्र बताया है। सूर्यनारायण आकाशसे अपनी किरणें विकीर्ण कर रहे हैं और यह आपके लिए किसीको भी अपनेसे हीन न समझनेका संकल्प लेनेका सबसे अच्छा समय है। यह सोचकर मुझे बड़ा दुःख होता है कि त्रावणकोर और कोचीन-जैसे राज्योंमें, जो दूरदर्शी, प्रबुद्ध और अपने जीवनके आदर्शों तथा सादगीके लिए जाने-माने हिन्दू राजाओंके शासनाधीन रहे हैं, अस्पृश्यताके लिए स्थान हो। इस बुराईसे छुटकारा पाना केवल शासकोंका ही कर्त्तव्य नहीं है। जबतक आपके हृदयोंमें अस्पृश्यताकी भावना है, शासक क्या कर सकते हैं? मैं आपके मानपत्रों और उपहारोंको कोई विशेष महत्त्व नहीं देता। जरूरत इस बातकी है कि आप अस्पृश्यताके इस अभिशापको मिटानेमें पूरे मनसे सहयोग करें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-१-१९३४

१. यह मानपत्र नगरपालिका द्वारा भेंट किया गया था।

१४. भाषण: सार्वजनिक सभा, एलप्पीमें[1]

१८ जनवरी, १९३४

अपने उत्तरमें गांधीजी ने मन्दिरके अधिकारियोंको इस बातके लिए धन्यवाद दिया कि उन्होंने मन्दिर स्वागत-समितिके उपयोगके लिए दिया और इस बातपर अपना सन्तोष व्यक्त किया कि चूँकि वह मन्दिर उस इलाकेके थिय्यों या एज़वोंके हाथोंमें था, इसलिए उसके स्वागत-समितिको दिये जानेमें कोई कठिनाई नहीं हुई। उसके बाद उपस्थित जनताकी इस माँगके बारेमें कि गांधीजी अपना भाषण अंग्रेजीमें दें, उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि यह माँग केवल यहीं नहीं, अन्यत्र भी की जाती रही है। उन्होंने आगे कहा:

आप मेरी परीक्षा लेना चाहते हैं, जानना चाहते हैं कि मैं कितनी अच्छी या बुरी अंग्रेजी जानता हूँ। मैं अंग्रेजी भाषाका पण्डित होनेका दावा नहीं करता। अंग्रेजी और अंग्रेजोंसे मुझे बड़ा प्रेम है, फिर भी उस भाषापर अबतक अधिकार नहीं प्राप्त कर पाया हूँ। मुझसे अंग्रेजी शब्दोंके हिज्जोंमें भूलें हो जाती हैं। अंग्रेजी मुहावरोंका प्रयोग करनेमें मुझसे अकसर त्रुटि हो जाती है और मैं जिन अंग्रेजी शब्दोंका उपयोग करता हूँ वे हमेशा उपयुक्त ही नहीं होते। मेरे लिए यह बिलकुल स्वाभाविक है। अंग्रेजी भाषा मैंने उसका पण्डित बनने के लिए नहीं, बल्कि दूसरोंतक अपने विचार पहुँचा सकनेके लिए पढ़ी। मैं अपनेको व्यावहारिक आदमी मानता हूँ और अवसर आनेपर अपने उद्देश्यकी पूर्तिके लिए अंग्रेजी भाषाका भी प्रयोग करता हूँ। अगर मैं हिन्दुस्तानीमें बोलूँ तो श्रोतागण मेरे भाषणको ज्यादा अच्छी तरह समझेंगे। खैर, अंग्रेजी शिक्षा-प्राप्त लोगोंकी इच्छाओंके सामने मुझे अकसर झुकना पड़ता है, क्योंकि मैं चाहता हूँ कि वे मेरे लिए काम करें। अगर मैं श्रोताओंका मत जाननेके लिए मतसंग्रह करूँ तो मैं जानता हूँ कि उनकी बहुत बड़ी संख्या हिन्दीके पक्षमें मत देगी। मलयाली और हिन्दीके सैकड़ों शब्द एक-से हैं। अपने मलयाली अनुवादकोंका अनुवाद मैं काफी हदतक ठीक-ठीक समझ जाता हूँ और जहाँ वे गलती करते हैं, सुधार भी देता हूँ। आज भी मुझे दो से अधिक बार यह भूल-सुधार करना पड़ा, क्योंकि अनुवादक मेरे भाषणोंकी भावनाको नहीं समझ पाया। एक बात है जो आपको समझानी है — यह कि कृपा करके कमसे-कम हिन्दीका प्राथमिक ज्ञान आप अवश्य प्राप्त कीजिए

१. इस सभाकी कार्यवाहीका एक संक्षिप्त विवरण *हिन्दू*में भी छपा था। उस विवरणके अनुसार सभा किडंगमपराम्बु-मैदानमें हुई थी। एलिप्पी हिन्दी प्रेमी मण्डल तथा कुटुम्बी संघकी ओरसे गांधीजी को मानपत्र भेंट किये गये। गांधीजी ने भाषण हिन्दीमें शुरू किया था, लेकिन श्रोताओंके अनुरोधपर वे बादमें अंग्रेजीमें बोलने लगे।

ताकि आप भारतके अपने बीस करोड़ भाइयोंके हृदयोंमें झाँककर देख सकें। हो सकता है कि यह अंग्रेजी या मलयालीका कोई विकल्प न हो। मलयाली आपकी मातृभाषा है। उसे न जानना और अच्छी तरहसे न जानना अपराध है। मगर हिन्दी आप तभी सीख सकते हैं जब आपके हृदयमें सारे भारतके लिए स्थान हो या पूरे देशके लिए कुछ करनेकी इच्छा हो। अंग्रेजी हमें अन्तर्राष्ट्रीयतावादी होनेमें मदद पहुँचाती है, क्योंकि वह अन्तर्राष्ट्रीय कार्य-व्यापारकी भाषा है। इनमें से प्रत्येक भाषा अपनी-अपनी जगहपर ठीक है और तदनुसार वह अपना-अपना प्रयोजन सिद्ध करेगी। आप चाहें तो एक उदाहरण देकर यह बात स्पष्ट करूँ। मलयाली पंजाबमें बेकार है और उसी तरह किसी पंजाबी किसानके लिए अंग्रेजी। लेकिन अगर आप किसी पंजाबीसे हिन्दीमें बोलेंगे, उसे 'सलामआलेकुम' कहेंगे तो वह मुस्करा देगा और कहेगा 'मैं उसे जानता हूँ।'[१]

इस सभामें मुझे जो मानपत्र मिले हैं, उनके सम्बन्धमें मुझे कुछ नहीं कहना है। मैं तो यहाँ उन अनेक चिट्ठियों या मानपत्रोंके बारेमें कुछ चर्चा करूँगा, जो मुझे इस सभासे बाहरके लोगोंसे प्राप्त हुए हैं। उनमें से दो पत्र मेरे हाथमें हैं। एक तो छपा हुआ पत्र है, जो शेरतलाईसे आया है, और दूसरा यहीं एलप्पीमें मिला है। यह टाइप किया हुआ है। छपे हुए पत्रका आरम्भ इन शब्दोंसे होता है: "हम विनम्रतापूर्वक यह बतला देना चाहते हैं कि अस्पृश्यताको दूर करके हिन्दू-धर्मको मजबूत बनानेका आपका यह मौजूदा प्रयत्न बिलकुल ही व्यर्थ जायेगा।" इस प्रस्तावनाके पश्चात् इस पत्रमें मुझे कुछ सलाह दी गई है। दूसरे पत्रमें यह लिखा है: "इस बातको आप भली-भाँति जानते हैं कि एकीकृत भारतीय राष्ट्रके निर्माणके मार्गमें यह धर्म ही सबसे बड़ी बाधा है।" ऐसी सलाह मुझे कोई पहली ही बार नहीं दी गई है। जब मैं पूनामें बीमार था, उन दिनों भी कोचीन और त्रावणकोरसे मुझे ऐसे ही पत्र मिले थे। उन तमाम पत्रोंकी भाषा बड़ी सुन्दर और शिष्टतापूर्ण थी, किन्तु यह विश्वास उनमें काफी जोरदार शब्दोंमें प्रकट किया गया था कि मुल्ककी तरक्कीमें यह धर्म ही सबसे अधिक बाधक हो रहा है। जबसे मैंने कोचीन-त्रावणकोरकी भूमिपर पैर रखा, इस आशयके पत्रोंकी झड़ी लगी हुई है। यह तो नहीं हो सकता कि इन पत्रोंपर मैं ध्यान ही न दूँ। मैं देखता हूँ कि कोचीन और त्रावणकोरके कुछ नवयुवकोंके हृदयोंमें धर्मके खिलाफ यह विद्रोह नित्यप्रति बढ़ता जा रहा है। मैं जानता हूँ कि उसकी जिम्मेदारी मुख्यतया सवर्ण हिन्दुओंपर ही है। धर्मके स्थानपर उन्होंने अधर्मको प्रतिष्ठित कर रखा है। उन्होंने शास्त्रीय विधानकी दुहाई देकर पापका इस तरहसे पक्ष-पोषण किया है, मानों वह पुण्य हो। इन अधीर नौजवानोंको लगता है कि यदि धर्म वैसा ही है जैसाकि सवर्ण हिन्दू आज उसका वर्णन और आचरण करते हैं तो निश्चय ही धर्म एक बुराई है। अधीरता और रोषके वश होकर उन्होंने इस प्रश्नपर विचार नहीं किया और समूचे धर्मकी ही निन्दा कर डाली। पर अगर मेरे हृदयमें सच्चा धर्म मौजूद है, तो मुझे अपने

१. यहाँतक का अंश २१-१-१९३४ के हिन्दूसे लिया गया है।

इन भाइयोंके प्रति धैर्य और विनम्रतासे काम लेना चाहिए। मैंने चिट्ठी-पत्री द्वारा दलील देकर उन्हें समझाया है और आज पल्लुरुथीकी सभामें भी उन्हें समझानेकी कोशिश की है।[१]

इन भाइयोंको मैं यह अवश्य बतला देना चाहता हूँ कि वर्तमान आन्दोलनका हिन्दू-धर्मको सबल बनानेसे कोई सरोकार नहीं है। आपको मेरे इन शब्दोंपर विश्वास कर लेना चाहिए कि मैं इस बातकी तरफसे बिलकुल ही उदासीन हूँ कि हिन्दू-धर्म सबल हो रहा है या निर्बल, अथवा नष्ट हो रहा है। इसका यह अर्थ हुआ कि इस सम्बन्धमें मेरी जो अपनी स्थिति है उसके सही होनेमें मेरा इतना अधिक विश्वास है कि अगर मेरी उस स्थिति से हिन्दू-धर्म कमजोर हो रहा हो, तो भले हो, मुझे उसकी कोई परवाह नहीं। अब आपको बताता हूँ कि हिन्दू-धर्मके प्रति मेरा क्या कर्त्तव्य है। मैं हिन्दू-धर्मको अस्पृश्यताके पापसे मुक्त करके उसे शुद्ध कर देना चाहता हूँ। जिस छुआछूत-रूपी शैतानने हिन्दू-धर्मको आज विकृत और विरूप बना डाला है, उसे मैं निकाल बाहर करना चाहता हूँ। मैं जानता हूँ कि अगर यह बुराई जड़मूलसे उखाड़कर फेंक दी गई तो वही भाई, जो आज धर्मको मुल्ककी तरक्कीमें सबसे अधिक बाधक समझते हैं, फौरन अपनी राय बदल देंगे। अगर उन भाइयोंको यह जानकर कुछ सन्तोष हो सके तो मैं उन्हें बताता हूँ कि यदि मैं इस निष्कर्षपर पहुँचूँ कि हिन्दू-धर्ममें अस्पृश्यताके लिए स्थान है, तो मैं उसी वक्त उस धर्मका त्याग कर दूँ। मगर तब भी मैं उनकी तरह यह तो कभी न कहूँगा कि धर्म खुद एक निकम्मी चीज है और ईश्वर ईश्वर नहीं, बल्कि शैतान है। उस दशामें हिन्दुओं और हिन्दू-धर्ममें मेरा विश्वास न रहेगा, पर ईश्वरमें तो मेरी श्रद्धा और भी दृढ़ हो जायेगी। और यह मैं आपको बतला देना चाहता हूँ कि ईश्वरमें मेरी श्रद्धा क्यों अधिक दृढ़ हो जायेगी। श्रद्धा कोई सुकोमल कली नहीं है, जो हलके से तूफानी मौसममें कुम्हला जाये। श्रद्धा तो हिमालय पहाड़के समान है, जो कभी डिग नहीं सकती। कैसा ही जोरदार तूफान क्यों न आये, हिमालयकी नींवको वह नहीं हिला सकता। मैं नित्य ही ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि जब हिन्दुओंकी ओरसे मैं निराश हो जाऊँ, तब वह मुझे यह कह सकनेकी शक्ति दे कि 'यद्यपि आज तेरी ही सृष्टिने मुझे निराश कर दिया है, तो भी जिस तरह अबोध बच्चा अपनी माँकी छातीसे चिपटा रहता है उसी तरह मैं भी तुझसे चिपटा हुआ हूँ।' और मैं चाहता हूँ कि आप लोगोंमें से हरेक भाई ईश्वर और धर्ममें इसी तरहका अटल विश्वास पोषित करें। मेरा विश्वास है कि संसारके तमाम महान् धर्म सच्चे हैं, ईश्वर-निर्दिष्ट हैं, और वे ईश्वरका प्रयोजन सिद्ध करते हैं और इसी तरह उनका भी प्रयोजन सिद्ध करते हैं जो उन धर्मों और उनके वातावरणमें पले-बढ़े हैं। मैं नहीं मानता कि कभी ऐसा समय भी आयेगा, जब हम यह कह सकेंगे कि दुनिया-भरमें एक ही धर्म है। वैसे तात्त्विक दृष्टिसे देखा जाये तो आज भी संसार में एक ही मौलिक धर्म दिखाई देगा किन्तु प्रकृतिमें

१. देखिए "भाषण: पल्लुरुथीमें", १८-१-१९३४।

बिलकुल सरल-सीधी रेखा-जैसी कोई चीज नहीं है। धर्म एक विशाल वृक्षके समान है, जिसकी अगणित शाखाएँ हैं। शाखाओंकी दृष्टिसे तो आप कह सकते हैं कि धर्म अनेक हैं; लेकिन वृक्षके रूपमें धर्म एक है।

हिन्दू-धर्मके शुद्धीकरणके इस आन्दोलनके मूलमें क्या है? इस आन्दोलनका किसी भी धर्मके प्रति कोई विरोध-भाव नहीं है। इसका उद्देश्य तो यह है कि तमाम धर्मों में अधिकसे-अधिक ऐक्य स्थापित हो सके। यदि मेरे कहे मुताबिक सवर्ण हिन्दुओंने ठीक-ठीक प्रायश्चित्त किया और ऊँच-नीचका भेद-भाव भुला दिया, तो क्या आप क्षण-भरको भी ऐसा सोचते हैं कि वे इस भेद-भावको सिर्फ हरिजनोंके ही सम्बन्धमें भुलायेंगे और दूसरोंके सम्बन्धमें कायम रखेंगे? आज तो यह हालत है कि अस्पृश्यताका विष भारतीय समाजकी नस-नसमें पैठ गया है। सिर्फ हरिजन ही यहाँ अछूत नहीं हैं। हाँ, उनके सम्बन्धमें अस्पृश्यता पराकाष्ठापर जरूर पहुँच गई है। सभी हिन्दू एक-दूसरेके लिए अछूत हैं और हिन्दू अहिन्दुओंके लिए अछूत हैं। अहिन्दुओंको यह बात महसूस हुई है। इसीलिए मैं आपसे कहता हूँ कि हमारे तमाम वैमनस्य और लड़ाई-झगड़ेकी जड़ यह अस्पृश्यता ही है। आप मेरी इस बातपर आँख मूँदकर विश्वास कर लें कि जिस दिन अस्पृश्यता दूर हो जायेगी, निश्चय ही उस दिन तमाम भारतवासी एक हो जायेंगे, और यदि इसमें धृष्टता न मानी जाये तो कहूँगा कि समस्त मानव-जातिके बीच अत्यधिक प्रेम-भाव स्थापित हो जायेगा। यह कोई छोटा-मोटा आन्दोलन नहीं है। यह तो बड़े-बड़े परिणामोंकी संभावनासे पूरित एक महान् आन्दोलन है। क्या आपकी समझमें मैं इतना मूर्ख हूँ कि मुझे यह विश्वास न होता, तब भी अपनी जीवन-संध्याकी घड़ियोंमें मैं लगातार जगह-जगह जाकर लोगोंको एक ऐसा सन्देश सुनाता फिरता जिसका परिणाम हिन्दुओंको मुसलमानों, ईसाइयों, यहूदियों और पारसियोंसे लड़नेके लिए सशक्त बनाना होगा — उन मुसलमानों, ईसाइयों आदिसे जिनमें मेरे कुछ सगे भाइयों-जैसे प्यारे मित्र हैं? मेरा यह पक्का विश्वास है कि अगर मेरा यह आन्दोलन सफल हुआ — और वह सफल होगा, और निश्चय ही सफल होगा — तो इतिहास बतायेगा कि यह आन्दोलन संसार-भरकी जातियोंको एक प्रेम-सूत्रमें बाँधनेके लिए ही चलाया गया था, न कि आपसमें दुश्मनी बढ़ानेके लिए।

मेरा खयाल है कि जिन सज्जनोंने मेरे पास ये पत्र भेजे हैं, उन्हें मैंने काफी सन्तोषजनक जवाब दे दिया है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २६-१-१९३४ और **हिन्दू**, २१-१-१९३४

१५. कौमुदीका त्याग

विविध प्रकारके बहुमूल्य अनुभवोंसे पूर्ण अपने व्यस्त जीवनमें मुझे हृदयको द्रवित कर देनेवाले और आत्माको झकझोर देनेवाले अनेक दृश्य देखनेको मिले हैं। किन्तु, यह लेख लिखते समय मुझे इस हरिजन-आन्दोलनके सिलसिलेमें देखे गये एक दृश्यसे अधिक अभिभूत करनेवाला कोई दृश्य याद नहीं आ रहा है। मैंने बडगरामें अपना भाषण समाप्त किया ही था कि यह दृश्य घटित हुआ। इस भाषणमें मैंने तर्कपूर्ण ढंगसे महिलाओंसे अपने आभूषण देनेका अनुरोध किया था। मैं भाषण समाप्त करके, जो उपहार प्राप्त हुए थे, उन्हें नीलाम कर रहा था कि कौमुदी नामकी एक १६ वर्षकी बालिका मंचपर आ गई। उसने अपना एक कंगन उतारकर मुझसे पूछा कि क्या आप मुझे अपने हस्ताक्षर देंगे? अभी मैं हस्ताक्षर देने ही जा रहा था कि उसने दूसरा कंगन भी उतार लिया। उसके दोनों हाथोंमें एक-एक कंगन ही था। मैंने कहा, "दोनों देनेकी जरूरत नहीं है। मैं तुम्हें एक ही कंगनके लिए हस्ताक्षर दूंगा।" इसके जवाबमें उसने अपना सोनेका हार भी उतार दिया। यह कोई आसान काम नहीं था। हारको उसे अपने लम्बे जूड़ेमें से निकालना था। लेकिन आखिर तो वह मलाबारी लड़की ठहरी, सो आश्चर्यसे ताकते हजारों स्त्री-पुरुषोंके सामने यह सब करनेमें उसने कोई झूठा संकोच नहीं दिखाया। मैंने पूछा कि "लेकिन क्या तुमने माता-पिताकी अनुमति ले ली है?" उसने कोई उत्तर नहीं दिया। अभी उसका त्याग पूरा नहीं हुआ था। उसके हाथ सहज ही उसके कानोंपर चले गये। अब उसने अपने जड़ाऊ झुमके भी उतार लिये थे। श्रोताओंका हर्ष दबाये नहीं दब पा रहा था, सो जब उसने झुमके उतारे तो सभा-स्थल तुमुल हर्ष-ध्वनिसे गूँज उठा। मैंने उससे फिर पूछा कि क्या तुम्हें इस त्यागके लिए माता-पिताकी अनुमति प्राप्त है। उस शर्मीली लड़कीसे कोई उत्तर मिलता, इसके पूर्व ही किसीने मुझे बताया कि उसका पिता सभामें उपस्थित था और जब मैं मानपत्रोंकी नीलामी कर रहा था, उस समय बोलियाँ बोल-बोलकर वह मुझे उन्हें ऊँचे दामोंपर बेचनेमें मदद दे रहा था। उसके अनुसार, अच्छे कार्योंके लिए दान देनेमें वह अपनी लड़कीकी तरह ही उदार है। मैंने कौमुदीको याद दिलाया कि वैसे आभूषण उसे फिर मिलनेवाले नहीं हैं। मगर वह अडिग रही और उसने वह शर्त भी मान ली। उसे अपने हस्ताक्षर देते हुए मैंने सहज ही उसके ऊपर लिख दिया "तुमने जो आभूषण दिये हैं, तुम्हारा त्याग उनसे कहीं अधिक सच्चा आभूषण है।" ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि उसका यह त्याग उसकी सच्ची हरिजन-सेविका बननेकी इच्छाका प्रतीक सिद्ध हो।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १९-१-१९३४

१६. पत्र : प्रभावतीको

१९ जनवरी, १९३४

चि० प्रभावती,

तुझे मेरे पत्र मिलते ही नहीं, इसका क्या मतलब ? मेरे तीन पत्रोंकी प्राप्ति-सूचना नहीं मिली। जयप्रकाशको भी मैंने लिखा है। अब तो कुछ ही दिनोंमें मैं वहाँ पहुँच जाऊँगा। तब मिलेंगे। मैं अच्छा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४४१) से।

१७. भाषण : सार्वजनिक सभा, कोट्टायम्‌में[1]

१९ जनवरी, १९३४

उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा कि मानपत्रमें कही गई बातोंका मैं विश्वास कर सकूँ, इसके लिए संयोजकोंको मुझे हरिजनोंका ऐसा प्रमाणपत्र दिखाना चाहिए जिसमें उन्होंने उन बातोंकी पुष्टि की हो। मानपत्रमें यह बतानेकी कोशिश की गई है कि हरिजन लोग बिलकुल अच्छी तरह रह रहे हैं। लेकिन वास्तवमें बात ऐसी नहीं है। मैं सवर्णोंको आगाह करता हूँ कि वे अपने मनमें कोई भ्रम न पालें। स्थिति वैसी अच्छी नहीं है जैसी चित्रित की गई है। एज्ञवों और थिय्योंसे मुझे कड़ी शिकायतें सुननेको मिली हैं। उनमें से कुछ तो अपने तथा दूसरोंके धर्मोंमें से ईश्वरको मिटा देना चाहते हैं। ऐसी भ्रामक धारणा रखनेके लिए मैं उनको कोई दोष नहीं दूँगा। हरिजनोंकी आर्थिक अवस्था सुधारनेपर जोर देते हुए गांधीजी ने बताया कि मन्दिर-प्रवेशसे उनकी सभी समस्याएँ सुलझ नहीं जायेंगी। उनकी आर्थिक अवस्थाके सुधरनेसे ही उनमें अपनी हीनावस्थाका बोध जागेगा। मुझे तो लगता है कि इस मानपत्रमें यहाँ उपस्थित लोगोंकी भावनाकी सच्ची अभिव्यक्ति नहीं हुई है।

गांधीजी ने आगे कहा कि अस्पृश्यताके विरुद्ध लड़ाई चलाना कोई आसान काम नहीं है। अस्पृश्यताके जहरने पूरे समाजको उलट-पलट दिया है। ईसाई हरिजनोंने बड़े करुण स्वरमें मुझसे अपना दुखड़ा रोया है। यदि अस्पृश्यता ईसाइयोंतक में घुस गई है तो उसके लिए भी सवर्ण हिन्दू ही जिम्मेदार हैं। मुझे यह याद दिलानेकी

१. नगरपालिकाके मैदानमें हुई इस सभामें लगभग २,५०० लोग उपस्थित थे। ३० रुपयेकी एक थैलीके साथ गांधीजी को एक मानपत्र भी भेंट किया गया था।

जरूरत नहीं है कि कोट्टायम्में एक ही जगह पास-पास एक गिरजाघर, एक मसजिद और एक मन्दिर भी है। ऐसा तो भारतके कई हिस्सोंमें, बल्कि भारतसे बाहर भी है। उन्होंने धर्म-राज्यकी इस भूमिसे अस्पृश्यताको मिटा देनेके लिए आकुल अनुरोध किया और कहा, मैंने बड़े दुःखके साथ सुना है कि इस राज्यमें एक ईसाई दल और एक नायर दल है। ये दोनों किसी उद्देश्यके लिए मिल-जुलकर प्रयत्न नहीं करते। यह बात बार-बार मेरे कानोंमें आई है कि दोनोंमें पारस्परिक विद्वेष और प्रतिद्वन्द्विता है। महाराजा और उनके अधिकारी इन बुराइयोंको दूर नहीं कर पायेंगे। उन्हें तो जनताको ही समूल नष्ट करना है। यदि दिलसे छुआछूतका विचार निकल जाये तो दूसरी सभी बुराइयाँ अपने-आप दूर हो जायेंगी। यदि हरिजनोंके उपयोगके लिए सड़कों और मन्दिरोंके द्वारोंका खुलना आप सब लोगोंके बीच हार्दिक एकताका एक प्रतीक नहीं होगा तो मैं यहाँसे सन्तुष्ट होकर नहीं जाऊँगा।

मुझे त्रावणकोरसे अस्पृश्यताके बारेमें बड़े ही वितंडावादी पत्र मिले हैं। एज़वोंकी धार्मिक आस्था डिग रही है, इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। मैं नहीं चाहता कि आप लोग अपनी बुद्धिसे काम लेना छोड़ दें और दूसरोंकी की हुई व्याख्याको आँख मूँदकर स्वीकार कर लें। सवर्ण लोगोंको दूसरोंको धर्मका उपदेश देनेका अधिकार तभी होगा जब वे प्राचीन वैदिक जीवनको अपने जीवनमें आचरित करके दिखायेंगे। मैं आप सबसे ईश्वरसे यह प्रार्थना करनेको कहता हूँ कि वह हमें अपना दोष स्वीकार करने, अपने हृदयको शुद्ध बनाने और हरिजनोंके प्रति अपना कर्त्तव्य निभानेकी शक्ति प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-१-१९३४

१८. पत्र : शान्तिकुमार मोरारजीको

२० जनवरी, १९३४

चि० शान्तिकुमार,

तुम्हारा पत्र मिला। अब तो अस्पतालसे छुट्टी मिल गई होगी और तुम चलने-फिरने लगे होगे। मैं तो इतनी दूर आ गया हूँ कि यहाँ डाक भी चार दिनमें पहुँचती है।

मैंने डॉ० मुलगाँवकरका नाम सुना है, किन्तु मैं उन्हें व्यक्तिगत रूपसे अधिक नहीं जानता। वे खादी पहनते हैं, तदर्थ धन्यवाद। गोकीबहनसे मुझे पत्र लिखनेको कहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७२२)से; सौजन्य : शान्तिकुमार मोरारजी, बम्बई

१९. भाषण : सार्वजनिक सभा, पोनमानामें[1]

२० जनवरी, १९३४

हिन्दीमें बोलते हुए गांधीजी ने इस बातपर प्रसन्नता व्यक्त की कि उन्हें हिन्दीमें मानपत्र दिया गया। उन्होंने कहा कि यह रेगिस्तानमें नखलिस्तानके समान लगा। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि इस राज्यमें पाँच निजी मन्दिरोंके द्वार हरिजनोंके लिए खोल दिये गये हैं। हम जिस मन्दिर और आश्रमकी छायामें अभी बैठे हुए हैं, वह भी सभी जातियोंके लिए खुला हुआ है। मानपत्रमें बताया गया है कि बहुत-से लोगोंने खद्दर अपना लिया है। मुझे तो इस बातमें सन्देह है कि जब मैं पिछली बार त्रावणकोर आया था उस समय यहाँके लोगोंने खद्दरका नाम भी सुना था! हरिजन सेवा संघ हिन्दू-धर्मको विनाशसे बचानेकी आशा करता है। इसके लिए सिर्फ हृदयको शुद्ध करनेकी जरूरत है। सवर्ण हिन्दू अन्य सभी मामलोंमें तो हरिजनोंकी सहायता करनेको तैयार हैं, किन्तु उन्हें मन्दिर-प्रवेशका अधिकार देनेमें वे एकमत नहीं हैं। इससे पता चलता है कि वे ऊँच-नीचका भेद-भाव हटाना नहीं चाहते। किन्तु यदि हरिजन लोग हिन्दू हैं, और आप सब मानते हैं कि वे हिन्दू हैं, तो उन्हें मन्दिर-प्रवेशका अधिकार देना आवश्यक है।

मंचपर रखे चरखेका जिक्र करते हुए गांधीजी ने कहा कि चरखेमें अब भी सुधारकी गुंजाइश है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने घरमें चरखेको स्थान देकर उसे लोकप्रिय बनाये तो उससे भारतकी समस्याएँ बहुत हदतक हल हो सकती हैं। हरिजनोंके उद्धारके लिए हर सम्भव कोशिश की जा रही है। इस कोशिशमें हरिजनोंको भी सहयोग करना है। हरिजनोंको मद्यपान और मरे पशुओंका मांस खानेकी आदतें छोड़नी हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-१-१९३४

१. यह सभा प्रातःकाल चटम्बी स्वामी आश्रममें हुई थी।

२०. भाषण : क्विलोनमें

२० जनवरी, १९३४

उन्होंने [गांधीजी ने] इस बातके लिए सरकारके प्रति कृतज्ञता व्यक्त की कि उसने सभी सार्वजनिक सड़कें, तालाब आदि [हरिजनोंके उपयोगके लिए] खोल दिये हैं। [उन्होंने कहा] यह कार्य महाविभव महाराजाके सर्वथा योग्य है। लेकिन अभी खुद लोगोंके करनेके लिए बहुत-कुछ पड़ा हुआ है। किन्तु यदि लोगोंके हृदय शुद्ध नहीं हैं तो राजाओंके आदेश किसी काम न आयेंगे।

उन्होंने कहा, सभाके संयोजकोंने ईमानदारीके साथ यह स्पष्ट कह दिया है कि उन्होंने अस्पृश्यता-निवारणके कार्यमें अधिक प्रगति नहीं की है; उनके इस स्पष्ट कथन के लिए मैं उनका आभारी हूँ। इसका कारण पैसेका अभाव बताया गया है। हृदयको शुद्ध बनाकर ही अस्पृश्यताको मिटाया जा सकता है। और हृदयको शुद्ध बनानेके लिए पैसेकी आवश्यकता नहीं होती। यह सच है कि जितना पैसा सुलभ है, वह इस बड़े कार्यके अनुपातमें कम है। सवर्णोंका कर्त्तव्य हरिजनोंको पढ़ाना-लिखाना और उन्हें निःशुल्क शिक्षा देना है। हरिजन-सेवाका मतलब आत्म-शुद्धि है। अस्पृश्यताको मिटाना सबका अन्तिम लक्ष्य होना चाहिए। शास्त्रोंमें अस्पृश्यताका समर्थन नहीं किया गया है। हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार खोलना आवश्यक है। लेकिन इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात अस्पृश्यताको मिटाना है।

[अंग्रेज़ीसे]

हिन्दू, २२-१-१९३४

२१. भाषण : सार्वजनिक सभा, त्रिवेन्द्रम्में[1]

२० जनवरी, १९३४

त्रावणकोर या त्रिवेन्द्रम्के लिए मैं कोई परदेशी आदमी नहीं हूँ। आप मुझे इजाजत दें तो मैं कहूँगा कि मैं आपकी ही तरह एक त्रावणकोर-निवासी हूँ। मैं आपको बतलाता हूँ कि त्रावणकोरका नागरिक होना मैं क्यों पसन्द करता हूँ। मैंने हिम्मतके साथ, आप भले उसे ढिठाई कहें, यह कहा था कि भारतके अस्पृश्यताके नक्शेमें यह मलाबार देश, जिसमें त्रावणकोर और कोचीन राज्य भी शामिल हैं, सबसे अधिक

१. नगरपालिकाके मैदानमें हुई इस सभामें दस हजारसे ज्यादा आदमी उपस्थित थे। गांधीजी को नगरकी जनता और हिन्दी प्रचार सभाकी ओरसे मानपत्र और १,००१ रुपयेकी थैली भेंट की गई थी। भाषणकी रिपोर्ट **हिन्दू**में भी प्रकाशित हुई थी।

कलुषित है। मलाबारमें ही अस्पृश्यता जघन्य रूपमें पाई जाती है। और अद्वैत वेदान्तके प्रतिपादक श्री शंकराचार्य महाराजकी जन्मभूमि भी यही मलाबार देश है। यह बात मेरी समझमें नहीं आती कि आचार्य शंकरकी शिक्षाके साथ-साथ इस निकृष्ट अस्पृश्यताने कैसे मेल खाया। लेकिन चूँकि मैं स्वेच्छासे हरिजन हो गया हूँ, इसलिए यहाँ उन हरिजनोंके साथ कष्ट भोगना मैं पसन्द करूँगा जो हरिजनोंमें भी निम्नतम श्रेणीके समझे जाते हैं। पर ऐसा मैं तबतक नहीं कर सकता, जबतक मुझे त्रावणकोर-निवासीका हक हासिल न हो जाये, जबतक मैं बाकायदा त्रावणकोर राज्यका नागरिक न हो जाऊँ। आपको मालूम है कि आज सवेरे जब मैं एक हरिजन-पाठशाला देखने गया तो वहाँ मैंने क्या देखा? वहाँ मैंने दो हरिजन लड़कोंको देखा। वे वीट जातिके लड़के थे। इस दुनिया में मनुष्यको नये-नये अनुभव होते ही रहते हैं। वहीं मुझे पहली बार यह मालूम हुआ कि वे वीट लोग नायाडियोंकी ही तरह अदर्शनीय हैं। मुझे बतलाया गया कि इन लोगोंको पीनेके पानीकी बड़ी तकलीफ है, साफ पानी इन बेचारोंको नसीब नहीं। आपको मैं अपना एक अनुभव सुनाता हूँ। बात बोअर युद्धकी है। यह तो आप जानते ही होंगे कि उस युद्धमें घायलोंकी सेवा-शुश्रूषा करनेवाली पलटनका एक सिपाही मैं भी था। एक दिन मेरी खुद वीटों-जैसी हालत हुई। यह बात नहीं कि सिपाहियोंको या घायलोंकी सेवा-शुश्रूषा करनेवालों को साफ पानी पीनेकी मुमानियत थी, पर उस दिन हम लोग एक ऐसे रेगिस्तानसे होकर गुजर रहे थे, जहाँ पानीका कहीं नाम भी नहीं था। यानी, मुमानियत विधाताकी ओरसे थी। और धूप चिलचिलाती हुई थी। सारा बदन झुलसा जा रहा था। हम सभी लोग — गोरे सिपाही तथा घायलोंको ढोनेवाली पलटनके आदमी — मारे प्यासके तड़प रहे थे और गले बिलकुल सूख गये थे। उस समय गँदले पानीका एक छोटा-सा पोखर हमें दिखाई दिया। और उसी मटमैले गन्दे पानीसे हमें अपनी प्यास बुझानी पड़ी। आज सवेरे उस दिनका वह दृश्य तुरन्त मेरी आँखोंके सामने आ गया और मैंने अपने दिलमें कहा कि इन बेचारे वीट लोगोंको कितना कष्ट होता होगा, जब हमेशा उन्हें गन्दे पोखरोंका ही पानी पीना पड़ता है, और किसी रेगिस्तानमें नहीं, बल्कि एक ऐसे हरे-भरे देशमें, जहाँ डग-डगपर स्वच्छ पानी भरा दिखाई देता है। अब अगर मैं वीट बनकर उन्हींके साथ रहने और कष्ट भोगनेकी अभिलाषा करूँ, तो इसमें आपको क्या कुछ अचरज होगा? उनके साथ रहकर मैं स्वानुभवसे यह जानना चाहूँगा कि जब आपके सामने खूब लबालब साफ पानी भरा हो और प्याससे तड़पते हुए भी आप उससे एक बूँदतक न ले सकें तब किसीको कैसा लगता है। ईश्वरने चाहा तो वह मुझे इस आगके साथ खेलनेकी शक्ति और दृढ़ता देगा। इस सन्ध्याको जो सन्देश मैं आपको यहाँ देने आया हूँ, उसका मर्म तो आप समझ ही गये होंगे।

लेकिन अन्धकारमें भी प्रकाशकी एक रुपहली रेखा तो सदा रहती ही है। आज सवेरे त्रावणकोर सरकारकी अस्पृश्यता-निवारण-सम्बन्धी एक विज्ञप्ति मुझे दी गई। वह आज्ञा-पत्र देखकर श्रीमान् महाराजा साहब और उनकी सरकारको मैंने

उसी सभामें बधाई भी दे डाली। पढ़नेके बाद उस विज्ञप्तिका सार मुझे यह मालूम पड़ा कि जो सार्वजनिक संस्थाएँ अस्पृश्योंको अपना उपयोग नहीं करने देतीं उन्हें राज्यकी मान्यता नहीं मिलेगी, उनपर राज्य पैसा खर्च न करेगा। बधाई तो मैं दे सकता था और मैंने दे दी, पर आप विश्वास रखें कि यह मामूली-सा सुधार मुझे सन्तोष तो नहीं दे सकता। रोम-रोममें जिस रोगने घर कर लिया हो, उसे कोई मामूली नुस्खा थोड़े ही निर्मूल कर सकेगा। उसके लिए तो तेजसे-तेज दवा चाहिए। अगर हिन्दू मरीजको जीवित रहना है, तो इस रोगकी जड़पर ही कुठाराघात करना होगा। मैं चाहता हूँ कि तरुण महाराजा और उनके मन्त्री हिम्मतके साथ इस भयानक रोगपर तो अब उस एकमात्र औषधका प्रयोग करें जो कि इस बुराईको मिटा सकती है। यह औषध बिलकुल आसान है। उन्हें सिर्फ यह घोषणा कर देनी है कि राज्य किसी भी प्रकारकी अस्पृश्यता, दूरता या अदर्शनीयता माननेके लिए तैयार नहीं है। एक भूतपूर्व वकीलकी हैसियतसे, जिसे अब भी कुछ कानूनी ज्ञान है, मैं यह साहसके साथ कह सकता हूँ कि ऐसे कानून या राजकीय घोषणासे किसी भी प्रजाजनके व्यक्तिगत धार्मिक विश्वास या आचरणमें किसी प्रकारका कोई हस्तक्षेप न होगा। जिस राज्यमें विभिन्न धर्मोंको माननेवाली प्रजा हो, वहाँ धार्मिक मामलोंके प्रति पक्षपात-शून्य तटस्थताका बरताव रखना ही उस राज्यका आवश्यक कर्त्तव्य है। प्रजाके एक वर्गमें प्रचलित कुछ प्रथाओंको कानूनी संरक्षण देकर निश्चय ही वह राज्य सुधारकी प्रगतिमें दखल देता है, साथ ही प्रजाके विचार-स्वातन्त्र्यमें भी हस्तक्षेप करता है। राज्यको अपने प्रजाजनोंसे सिर्फ इतना ही कह देना है कि — 'तुम्हारे धार्मिक विश्वासों और रिवाजोंसे राज्यका कोई सरोकार नहीं। राज्य तो तभी तुम्हारे बीचमें पड़ेगा, जब वह देखेगा कि तुम्हारी धार्मिक प्रथाओंके कारण राज्यके सामान्य कानून या अमनमें कोई खलल पहुँच रहा है।' लेकिन आज तो यह हालत है कि अस्पृश्यताको खुद राज्यकी कानूनी स्वीकृति मिली हुई है और इसलिए वह बेरोकटोक चल रही है।

मैं महसूस हूँ कि यदि यह अस्पृश्यताका कलंक हिन्दू-समाजसे दूर नहीं किया गया, तो हिन्दू-धर्मके नष्ट हो जानेका पूरा-पूरा खतरा है। और इस दृष्टि से मुझे लगता है कि हिन्दू राजा-महाराजाओंपर आज एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ गई है। जबतक हरिजनोंको दूसरे हिन्दुओंकी ही तरह तमाम मनुष्योचित अधिकार हासिल नहीं हो जाते, तबतक उन लोगोंको चैनकी साँस नहीं लेनी चाहिए, जो इस प्रश्नको उतनी ही गम्भीरतासे महसूस करते हैं, जितना कि मैं।

अब मैं एक-दो शब्द इस सभामें उपस्थित प्रत्येक भाई या बहनके व्यक्तिगत कर्त्तव्यके बारेमें कहूँगा। यह आन्दोलन सवर्ण हिन्दुओंके लिए विशुद्ध प्रायश्चित्तका आन्दोलन है। हरिजनोंका जो ऋण सवर्णोंके सिरपर चढ़ा हुआ है, वह उन्हें साफ-साफ कबूल कर लेना चाहिए, और उस ऋणकी पाई-पाई उन्हें चुका देनी चाहिए। ऐसा पूरा-पूरा ऋण-परिशोध तो हमारे सम्पूर्ण हृदय-परिवर्तनसे ही हो सकता है। यह तो मैं आपको बता ही चुका हूँ कि राज्यकी सहायता तो सिर्फ इतनी ही मिल

सकती है कि अस्पृश्यताको उसने जो कानूनी स्वीकृति दे रखी है, उसे वह रद कर दे। पर किसी व्यक्तिका हृदय तो राज्य पलट नहीं सकता। यह हृदय-परिवर्तन तो भगवत्प्रार्थनासे ही शक्य है। यह किसी मनुष्यके बूतेका नहीं कि वह दूसरोंका हृदय पलट सके। मैं जानता हूँ कि यह काम मेरी शक्तिके बाहर है। मैं तो सिर्फ आपकी बुद्धि और आपके हृदयसे अनुरोध ही कर सकता हूँ। लेकिन यह तो उस प्रभुके ही हाथमें है कि मेरे शब्दमें वह ऐसी शक्ति भर दे कि वह बाणकी तरह आपके हृदयों में सीधा बिंध जाये। अगर आप एक ऐसे आदमीके शब्दोंपर विश्वास करनेको तैयार हैं जो सदा सत्यकी शोधमें ही व्याकुल रहता है, तो आप मेरी इस बातपर विश्वास करें कि मैं अपनी जाग्रत अवस्थाके प्रत्येक क्षणमें ही नहीं, बल्कि सुप्तावस्थामें भी परमात्मासे अविराम यही प्रार्थना करता रहता हूँ कि वह मेरी वाणीमें ऐसी बेधक शक्ति भर दे, जिससे कि हिन्दुओंके हृदयमें वह गहरी उतर जाये — उनका हृदय अस्पृश्यताके इस विषसे मुक्त हो जाये और हिन्दू-धर्मपर आसन्न विनाशका जो संकट मँडरा रहा है, उससे उसकी रक्षा हो जाये।

कृपया, यह स्मरण रखिए कि आपका और मेरा कर्त्तव्य हरिजनोंको अपने भाई-बहन मान लेनेसे ही समाप्त नहीं हो जाता है। यह तो हमारे असली लक्ष्यका आरम्भ-मात्र है। इस लक्ष्यकी समाप्ति तो तब होगी, जब हिन्दू-धर्मका प्राण चूसने वाली इस अस्पृश्यता-राक्षसीसे हम सर्वथा अपना पिंड छुड़ा लेंगे। आज सवेरे एक मानपत्रने मुझे ठीक ही याद दिलाया था कि सिर्फ पुलाया, नायाडि और दूसरे हरिजनों के साथ ही भाईचारेका बरताव करना काफी नहीं है; क्योंकि अस्पृश्यता तो आज सवर्ण हिन्दुओंकी विविध जातियोंके अन्दर भी मौजूद है। एक जाति दूसरी जातिकी दृष्टिमें अछूत है। यह बिलकुल सच है कि यह विष इतना गहरा पैठ गया है कि उसने हमारे सारे समाजको ही विकृत कर डाला है। इस जहरका घातक असर तो हमारे देशके मुसलमानों, ईसाइयों आदि दूसरे भाइयोंपर भी पड़ा है। इसलिए आपका और मेरा कर्त्तव्य तो यह है कि हमें ऊँच-नीचका भाव बिलकुल ही भुला देना चाहिए। भूलकर भी यह भाव दिलमें न लाना चाहिए कि इस पृथ्वीपर कोई मनुष्य ऊँचा है और कोई नीचा। जब हम सब एक ही सिरजनहारकी सन्तान हैं — भले हमारा कोई भी धर्म-मजहब हो, कोई रूप-रंग हो — तो हम अपने करतारकी नजरमें तो एक समान ही हैं। क्या यह बात आप लोगोंकी समझमें नहीं आ रही है कि जिस दिन हम इस घृणित ऊँच-नीचके भावको अपने हृदयसे निकाल बाहर कर देंगे, उस दिन दुनियामें आपसमें हम हिन्दू-हिन्दू ही नहीं, बल्कि हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी आदि सभी सुख और शान्तिसे रहने लगेंगे।

अब आप समझ गये होंगे कि जो थैली आपने मुझे कृपा करके दी है, उसे मैं क्यों एक मामूली-सी थैली समझ रहा हूँ। त्रावणकोरकी राजधानी त्रिवेन्द्रम्‌को यह इतनी छोटी थैली शोभा नहीं देती। आपको मालूम है कि हरिजन-कार्यके लिए बंगलोर और कालिकटने छः-छः, सात-सात हजारसे कम की थैलियाँ नहीं दी हैं? अगर आप मुझसे यह कहें कि त्रावणकोर बंगलोर या कालिकटसे अधिक गरीब है,

तो इसपर मैं कभी विश्वास न करूँगा। कमसे-कम बंगलोरमें त्रावणकोरकी तरह दूध और शहदकी नदियाँ नहीं बह रही हैं। मुझसे किसी भाईने कहा था कि केरल देशमें कोई भूखा नहीं पड़ा रह सकता। आपके देशमें नारियलके दूधका तो मानो समुद्र भरा पड़ा है, और मिश्री-से मीठे केले भी यहाँ प्रचुरतासे प्राप्त हैं। केले आपके यहाँ काफी सस्ते हैं। सन् १९१५ के अपने दक्षिण भारतके भ्रमणमें कई दिनोंतक तो मैं केवल केले और नारियल खाकर ही रहा था। और एक कुशल आहार-सुधारककी हैसियतसे मैं आपको बता सकता हूँ कि कई वर्षोंतक केवल नारियल और केले खाकर काफी स्वस्थ रहा जा सकता है। इसलिए अगर आप हरिजन-कार्यके सम्बन्धमें निर्धनताकी दलील पेश करेंगे, तो यह बिलकुल नहीं टिक सकेगी। अतः जबतक मैं त्रिवेन्द्रम्‌में हूँ, मैं उम्मीद करता हूँ कि आप सब लोग, जिन्होंने मेरा सन्देश सुना है, अपनी थैलीकी इस बहुत बड़ी कमीको पूरा कर देंगे। बहनें चाहें तो उस छोटी लड़की कौमुदीके त्यागका[1] अनुकरण कर सकती हैं, और अपने तमाम जेवर उतारकर हरिजन-कार्यके निमित्त दे सकती हैं। आप त्रावणकोरवासियोंकी थैली तो सबसे बड़ी होनी चाहिए, क्योंकि आप लोग उस स्थानका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, जिसे मैंने भारतके अस्पृश्यताके काले मानचित्रमें सबसे ज्यादा काला बतलाया है।

आप मुझे इजाजत दें तो एक और बड़ा दोष मैं आपको दिखाऊँ। जिस दिनसे मैं त्रावणकोरमें प्रवास कर रहा हूँ, मुझे यह मालूम हुआ है कि यहाँकी जनताने पैसा दिया तो कंजूसोंकी तरह है, मगर हमारे व्यवस्थापकोंने उसे खर्च उड़ाऊ लोगोंकी तरह किया है। इसलिए मेरी तरह आपको भी यह जानकर आश्चर्य होगा कि दूसरे कई खर्चोंके सिवा मेरे दलका भोजन-खर्चतक हरिजन-थैलियोंपर डाला गया है। इसमें सन्देह नहीं कि मेरा यह दल लोगोंको टिड्डी-दल-जैसा लगता होगा, फिर भी इन सार्वजनिक थैलियोंके मत्थे खाना-खर्च थोपना बहुत बेजा है। आपको आश्चर्य होगा कि कई जगहोंपर तो यह खर्च ५० फी सदीतक पहुँचा है! ईश्वर मुझे क्या कहेगा, जब उसके आगे मैं इजहार करूँगा कि इतने हजार रुपयोंकी रकम हरिजनोंके नाम पर जमा की गई थी, और उसका आधा हिस्सा मेरे खिलाने-पिलाने और स्वागत-सत्कारमें ही फूँक दिया गया था? मैं देखता हूँ कि अगर ऐसी फिजूलखर्चीके विरुद्ध मैंने आवाज न उठाई, तो मेरा हरिजनोंके प्रतिनिधित्वका दावा ईश्वरके न्यायालयमें खारिज कर दिया जायेगा। असल बात तो यह है कि हरिजनोंके इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न को जिस गम्भीरतासे आपको हाथमें लेना चाहिए था, उस गम्भीरतासे आपने अभी लिया नहीं। यह तो असलमें एक शुद्ध धार्मिक वस्तु है। यह तो अपने देशके गरीबसे-गरीब और तिरस्कृत प्राणियोंके हितका प्रश्न है।

हरिजनोंके नामपर जो धन जमा किया जा रहा है, अगर उसमें से एक भी पाईका दुरुपयोग करनेके आप या हम दोषी साबित हुए, तो हमारे लिए यह शर्मसे सिर नीचा कर लेनेकी बात होगी। मैं आपको यह विश्वास दिलाता हूँ कि मुझे ऐसी कोई सुविधा या आराम नहीं चाहिए, जिसपर जरूरतसे ज्यादा पैसा खर्च

१. देखिए "कौमुदीका त्याग", पृ० २०।

किया जाये। मेरे लिए टिमटिमाती हुई बत्तीकी रोशनी ही काफी होगी। मुझे अपने और अपने साथियोंके लिए तोरण-पताकाओंकी आवश्यकता नहीं है। अगर आप मुझे लेटने-सोनेके लिए खुले आकाशके नीचे त्रावणकोरकी यह मखमली रेत ही दे दें, तो भी आप कभी मेरे मुँहसे शिकायतका एक शब्द नहीं सुनेंगे। लेकिन उस आदमीकी तो मैं जरूर टीका करूँगा, जिसका सम्बन्ध इस आन्दोलनसे हो और जो हरिजन-निधिकी एक पाई भी अनुचित रीतिसे खर्च करता हो। मैं चाहता हूँ कि आप सब लोग इस पवित्र कार्यकी गम्भीरताको जरूर महसूस कर लें। मैं चाहता हूँ कि आप लोग सच्चे हृदयसे अपनी सारी शक्ति लगाकर इस महान् आन्दोलनमें जुट जायें, ताकि हमारा समाज और हमारा यह सनातनधर्म उस विनाशसे बच जाये जो हमारे सामने मुँह बाये खड़ा है। मेरी इस टीकाका यह अर्थ न निकाला जाये कि सिर्फ त्रावणकोरकी स्वागत-समितियोंने ही पानीकी तरह पैसा बहानेका गुनाह किया है। यह तो ईश्वर ही जाने कि कितनी समितियोंने यह अपराध किया होगा। मगर मैं यह आपको बता सकता हूँ कि जबसे यह प्रवास आरम्भ हुआ है, मैं हर जगहकी स्वागत-समितिसे जिरह करता आ रहा हूँ, और हर कमेटीसे मैंने रसीदें और हिसाबके कागजात मँगवाये हैं। आप लोगोंमें से जो वकील हैं या कानून पढ़ रहे हैं, वे मेरी इस बातको फौरन समझ जायेंगे कि ट्रस्टीकी जरा-सी भी लापरवाही जुर्ममें शुमार हो जाती है। और यह तो स्पष्ट ही है कि हममें से प्रत्येक आदमी हरिजन-निधिका ट्रस्टी ही है। ट्रस्टीसे तो यह आशा की जाती है कि उसे अपने निजी धनका जितना खयाल रहता है, उससे भी अधिक उसे अपने ट्रस्टकी सम्पत्तिका खयाल रखना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-२-१९३४

२२. भेंट : त्रावणकोर-सरकारकी विज्ञप्तिके[1] सम्बन्धमें

त्रिवेन्द्रम्

२० जनवरी, १९३४

सभी जातियोंको सार्वजनिक तालाबों और कुओंके उपयोगका अधिकार देते हुए त्रावणकोर सरकार द्वारा जारी की गई विज्ञप्तिके सम्बन्धमें जब गांधीजी से मुलाकात की गई तो उन्होंने कहा :

१. विज्ञप्तिमें कहा गया था : "मन्दिर-प्रवेश जाँच समितिने अपनी रिपोर्टमें अन्य सिफारिशोंके साथ-साथ निम्नलिखित ढंगकी कार्यवाही तुरन्त करनेकी सिफारिश की है :

'अमुक सीमातक निकट आ जानेसे दूषित होनेकी मान्यता अथवा थीनडल-प्रथाको उपयुक्त कानून बनाकर समाप्त कर देना चाहिए, लेकिन एक ओर तो कानूनोंकी परिधिमें मन्दिर और मन्दिरोंसे जुड़े हुए स्थान, जैसे मन्दिरके तालाब, कुएँ, होमपुर, अणकेट्टिल आदि नहीं आयेंगे और दूसरी ओर उनकी व्याप्ति निम्नलिखित उपबन्धोंसे मर्यादित होगी :

इस विज्ञप्तिपर मैं महाविभव महाराजा साहब और सरकार दोनोंको बधाइयाँ दे चुका हूँ, लेकिन मैंने यह भी कहा है कि इससे मैं सन्तुष्ट नहीं हो सकता और हरिजन लोग तो और भी नहीं। हम तबतक न सन्तुष्ट होंगे और न चैन लेंगे जबतक ये राज्य अस्पृश्यताको हर रूपमें मान्यता देनेसे इनकार नहीं कर देते। हाँ, यह जरूरी है कि राज्यकी ओरसे मान्यता देनेसे इनकार करनेके परिणामस्वरूप किसीकी व्यक्तिगत या धार्मिक स्वतन्त्रतामें बाधा नहीं पड़नी चाहिए। लेकिन आज अस्पृश्यताको राज्यकी ओरसे संरक्षण प्राप्त है। इसलिए मैं यह आशा करनेकी धृष्टता करता हूँ कि महाराजा साहब और उनके सलाहकार अस्पृश्यताको दी गई राजकीय स्वीकृति वापस लेकर इस सम्बन्धमें कमसे-कम निष्पक्ष रुख तो अपनायेंगे।

त्रावणकोर मन्दिर-प्रवेश जाँच-समितिकी एक सिफारिशके बारेमें, जिसका सम्बन्ध इस सवालको निर्णय के लिए विद्वानोंकी एक परिषद्के सामने रखनेसे है, गांधीजी ने कहा :

मेरे विचारसे यह केवल विद्वानोंकी किसी परिषद् द्वारा निबटाये जानेवाला सवाल नहीं है। ऐसी परिषद्में अगर केवल विद्वान् ही नहीं, बल्कि पुण्यात्मा और समझदार लोग भी होंगे तो वह जनताका मार्ग-दर्शन तो अवश्य कर सकती है, किन्तु राज्यका नहीं, क्योंकि हमारे-जैसे सामासिक समाजमें राज्यको पूर्ण रूपसे निष्पक्ष रवैया अपना कर चलना पड़ता है। मान लीजिए, परिषद् यह राय देती है कि आज हम अस्पृश्यता को जिस रूपमें जानते हैं, उस रूपमें उसका पालन हिन्दुओंका एक धार्मिक कर्त्तव्य है। मगर उसकी इस रायको राज्य कानूनी जामा नहीं पहना सकता। जो लोग ऐसा मानते होंगे वे इसका पालन करेंगे, लेकिन न माननेवालों को वे उसका पालन करनेके

'(क) नहानेके काम आनेवाले सार्वजनिक तालाबोंके उपयोगकी छूट सबको दी जानी चाहिए, किन्तु यह छूट देनेसे पूर्व तालाबोंके पास ही या तो कुछ कुंड बना दिये जायें या तालाबोंके कुछ हिस्सोंको दीवारोंसे घेर दिया जाये, जहाँ लोग नहानेसे पूर्व अपने कपड़े वगैरह धो लें।

'(ख) सार्वजनिक कुओंके उपयोगका अधिकार सबको दिया जाना चाहिए, किन्तु इसके लिए यह जरूरी है कि उन कुओंके पास कुंडोंकी व्यवस्था कर दी जाये, जहाँ नगरपालिका या स्वास्थ्य विभागके कर्मचारी जल एकत्र करें और उस जलको लोग नलोंके जरिये लें।

'(ग) सरकार द्वारा संचालित लंगरोंमें अलगअलग रसोईघरोंकी व्यवस्था करके उनके उपयोगकी छूट भी सबको दी जानी चाहिए।'

"सरकार इस बातसे सहमत है कि अमुक सीमातक निकट आ जानेसे दूषित होनेकी मान्यता या थीनडल समाप्त होना चाहिए और उसका विचार है कि सरकारको ऐसे सार्वजनिक तालाबों, सार्वजनिक कुओं, लंगरों आदिके परिरक्षण-संचालनपर सार्वजनिक कोषका एक भी पैसा खर्च नहीं करना चाहिए जिनका उपयोग किसी भी व्यक्तिके लिए इस कारणसे निषिद्ध हो कि वह थीनडल जातिका है। इसलिए सरकारने यह निश्चय किया है कि जिन सार्वजनिक सड़कों, सार्वजनिक तालाबों और सार्वजनिक कुओंका परिरक्षण वह सार्वजनिक कोषसे करती है, उनके उपयोगका अधिकार जात-पाँतका भेद-भाव बरते बिना सबको होगा। इन लक्ष्योंको जल्दी पूरा करनेके लिए क्या कार्यवाही की जानी चाहिए, इसपर विचार किया जा रहा है।

"२. समितिकी दूसरी सिफारिशें सरकारके विचाराधीन हैं।"

लिए बाध्य नहीं कर सकते। किन्तु आज कानूनकी स्थिति ऐसी है कि जो लोग अस्पृश्यतामें विश्वास नहीं करते वे भी उसके आगे झुकनेको बाध्य हैं।

इस सवालके उत्तरमें कि क्या त्रावणकोरके मन्दिरोंकी स्थिति ब्रिटिश भारतके अधिकांश मन्दिरोंकी स्थितिसे भिन्न नहीं है और क्या वे वास्तवमें सरकारके हाथमें न्यास-सम्पत्ति नहीं हैं, गांधीजी ने कहा :

न्यासी जबतक न्यासी हैं तबतक वे न्यासकी शर्तोंका पूरी तरह पालन करनेको बाध्य हैं। इसलिए यदि वे अस्पृश्यताको पाप समझते हैं तो उन्हें इतना ही करना है कि वे न्यासी-पदका त्याग कर दें।

इसपर जब गांधीजी से पूछा गया कि तब क्या सरकारको मन्दिरोंका संरक्षक-पद छोड़ देना चाहिए तो उन्होंने कहा :

निश्चय ही। सरकारको बेशक मन्दिरोंका संरक्षक-पद छोड़ देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २२-१-१९३४

२३. टिप्पणी

क्या बलसाड़ नगरपालिका अपने कर्त्तव्य-पालनमें चूक रही है?[1]

आजकल तो 'हरिजनबन्धु' मुझे मुश्किलसे ही देखनेको मिलता है। किन्तु अनायास ही यह अंक मेरे हाथ लग गया है। यदि बलसाड़ नगरपालिकाने अपनी प्रतिज्ञा भंग की हो तो यह दुःखद घटना मानी जायेगी। यदि वह अपने बचावमें कुछ कहना चाहे तो मैं उसे इन पृष्ठोंमें छाप दूंगा। मुझे आशा है कि एक सार्वजनिक संस्था मूक भंगी भाइयोंकी अवहेलना नहीं करेगी।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २१-१-१९३४

१. एक पत्र-लेखकने लिखा था : "हालाँकि बलसाड़ नगरपालिका रात्रि-पाठशालाके निर्माणके बारेमें प्रस्ताव पास कर चुकी है किन्तु इस दिशामें उसने कुछ नहीं किया। इसके अतिरिक्त हरिजनोंके लिए चालें बनवानेके एक अन्य प्रस्तावके कार्यान्वयनमें भी वह देर लगा रही है।"

२४. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

२१ जनवरी, १९३४

प्रिय गुरुदेव,

मिदनापुरके सम्बन्धमें सरकारी अध्यादेशोंका[1] समाचार पढ़कर मैं स्तब्ध रह गया। वे तो मुझे १९१९ में पंजाबमें मार्शल लॉ के अधीन जारी किये गये आदेशोंसे भी बुरे लगते हैं। मुझे यहाँ सिर्फ 'हिन्दू' मिल पाता है। क्या आप इस सम्बन्धमें कुछ कर रहे हैं? क्या बंगाल कुछ कर रहा है? हमारी कायरताका खयाल करके मेरा दम घुटने लगता है। या कि जहाँ कायरता है ही नहीं, वहाँ मुझे कायरता होनेका भ्रम हो रहा है? क्या आप मुझे किसी प्रकारकी सांत्वना दे सकते हैं?

आशा है, आप स्वस्थ-प्रसन्न होंगे।

हार्दिक स्नेह-सहित,

सदा आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

२९ जनवरीसे ५ फरवरीतक मैं कुनूरमें रहूँगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६४१) से।

२५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

कन्याकुमारी
२१ जनवरी, १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारे तीन पत्र मेरे सामने हैं। पैसा तो, मैंने समझा था, तुम्हें मिल चुका होगा। मैंने निर्देश दे दिये थे। अब याद-दिहानीकी चिट्ठी लिख रहा हूँ।

आशा है, कलकत्तामें डाक्टरोंसे परामर्श करनेके फलस्वरूप कमलाको कुछ लाभ हुआ होगा।

तुम्हारी ओरसे सफाई देनेका मेरा कोई मंशा नहीं था। भेंटके विवरणमें[2] भेंट-कर्त्ताके मनपर जो छाप पड़ी, वही लिखी हुई है। लेकिन उसमें कोई सफाई जैसा-

१. २ सितम्बर, १९३३ को तीन बंगाली युवकोंने मिदनापुरके जिला मजिस्ट्रेट बी० ई० जी० बर्गकी हत्या कर दी थी और जवाबमें सरकारने अध्यादेश जारी किये थे।

२. देखिए खण्ड ५६, "भेंट: 'मद्रास मेल' के प्रतिनिधिको", पृ० ३९९-४०२।

कुछ नहीं है। मैंने तुम्हारे सोचने और काम करनेके तरीकेकी अपनी पूरी व्याख्या दी है। मैं वास्तवमें ऐसा मानता हूँ कि तुम्हारा ठोस कार्यक्रम अब भी कोई ठोस और निश्चित रूप लेनेकी प्रक्रियासे ही गुजर रहा है। तुम-जैसा ईमानदार आदमी यह तो कह नहीं सकता कि "मैं अपना सारा कार्यक्रम आज भी पूरी तरह जानता हूँ।" समाजवादके शास्त्रके बारेमें तुम्हारे मनमें कोई दुबिधा नहीं है, किन्तु यह बात तुम पूरी तरह नहीं जानते कि जब तुम्हें सत्ता मिल जायेगी तब तुम उस शास्त्रका प्रयोग किस प्रकार करोगे।

कांग्रेसमें अपने स्थानका प्रश्न तो तुमने व्यर्थ ही उठाया है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मुझे तो तुमसे कोई परेशानी नहीं होती। तुम्हारे कांग्रेसमें न होनेपर तो मुझे खुद ऐसा लगने लगेगा कि मैं जाने कहाँ आ पहुँचा हूँ।

इससे ज्यादा कहनेकी जरूरत नहीं है। और ज्यादा लम्बा पत्र देनेका मेरे पास समय भी नहीं है।

२६ तारीखके बारेमें जारी किया गया तुम्हारा नोटिस मैंने देखा। मैं तो जबतक निश्चयपूर्वक यह कह सकनेकी स्थितिमें न होता कि क्या करना है तबतक ऐसा नोटिस जारी नहीं करता। खैर, इसपर मुझे कोई एतराज भी नहीं है।

लेकिन, मिदनापुरमें सरकार द्वारा जारी किये गये अध्यादेशोंके बारेमें 'हिन्दू' में छपे छोटे-से तार-सन्देशको देखकर मैं स्तब्ध रह गया। ये कार्यवाहियाँ तो १९१९में पंजाबमें की गई कार्यवाहियोंसे भी बदतर लगती हैं। इससे मेरे मनको जो आघात पहुँचा है, वह लगभग असह्य है। हमारी कायरताका ध्यान करके मैं व्याकुल हो उठता हूँ। मुझे नहीं मालूम कि इस सम्बन्धमें अखबारोंमें अगर कुछ छपता है तो क्या छपता है। इसलिए हो सकता है, मेरा विश्लेषण गलत हो। जैसी विवशता मैं अभी महसूस करता हूँ वैसी मैंने पहले कभी अनुभव नहीं की।

डॉ० विधान और गुरुदेवको[1] पत्र लिखे हैं।

आशा है, माताजी अब बेहतर होंगी। रफीका क्या हाल है?

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

जयप्रकाशने अपनी समस्याओंके बारेमें मुझे लिखा था। मैंने उसे विस्तारपूर्वक उत्तर भेज दिया। उसके भाईको छात्रवृत्ति मिल जायेगी। उसपर जो बोझ है, उसकी दृष्टिसे उसे उपार्जन करने लग जाना चाहिए। लेकिन वह करेगा नहीं। मैं उससे सम्पर्क बनाये हुए हूँ।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३४; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२६. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

२१ जनवरी, १९३४

चि० रुक्मिणी,

तेरा पत्र मिला। तुम सब लोगोंकी याद आती ही रहती है, इतना ही जतानेके लिए यह पोस्टकार्ड लिख रहा हूँ।

आशा है, बुखारका असर पूरी तरहसे चला गया होगा।

यहाँ तो गर्मी-सी है, किन्तु वहाँ तो तुम लोग सरदीसे काँप रहे होगे। क्या वहाँ भूकम्पके[1] झटके महसूस हुए थे?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या तुझे 'हरिजनबन्धु' या [हरिजन] 'सेवक' मिलता है?

श्री बनारसीलाल बजाज
ठठेरी बाजार
बनारस सिटी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१५७) से।

२७. पत्र : जीवणजी डा० देसाईको

२१ जनवरी, १९३४

भाई जीवणजी,

वे १५० रुपये झटपट खर्च कर डालनेका लोभ मत करना। कुमारी अगाथा हैरिसन, २ कैनबॉर्न कोर्ट, अलबर्ट ब्रिज रोड, एस० डब्ल्यू० लन्दन से पूछो कि क्या उन्हें पुस्तकें मुफ्त बाँटनेके लिए चाहिए और यदि चाहिए तो कितनी। तब उतनी प्रतियाँ उन्हें भेज देना। ऐसा लगता है कि शायद बेलगाँव जाना हो ही नहीं सकेगा। किसी गुजरातीको नियुक्त कर लेनेके बारेमें अधिकारियोंको लिखनेकी इच्छा ही नहीं होती। यरवडा मन्दिरसे लिखे गये अस्पृश्यता और सर्वधर्म समानता-सम्बन्धी लेखोंको जाँच लेनेके लिए ही तुमने लिखा है न?

१. यह भूकम्प १५ जनवरीको हुआ था, जिसके कारण बिहारमें जान-माल की भारी क्षति हुई थी।

हमीदका भली-भाँति ध्यान रखना। यह भी देखना कि उसकी छूत औरोंको न लगे।

मैं तो आनन्दपूर्वक ही हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत जीवणजी
नवजीवन कार्यालय
अहमदाबाद
बी० बी० ऐंड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९३५) से। सी० डब्ल्यू० ६९१० से भी; सौजन्य: जीवणजी डाह्याभाई देसाई

२८. पत्र : गोविन्दभाई रा० पटेलको

२१ जनवरी, १९३४

भाई गोविन्दभाई,

लगता है, पांडीचेरीमें मेरा रहना तो नामको ही होगा। लेकिन यदि 'माँ' से मिल सकूँ और आश्रमको देख सकूँ तो देखनेकी उत्कट इच्छा तो अवश्य रहेगी। श्री अरविंदका पत्र घूमता-फिरता कल मिला। आपके पत्रको मैं ठीक-ठीक समझ नहीं पाया। मैं अपने बारेमें इतना अवश्य कहता हूँ कि इस दुनियामें सत्यकी खोजके सिवा मुझे अन्य कुछ भी प्रिय नहीं लगता।

मोहनदास

श्री गोविन्दभाई
आश्रम
पांडीचेरी

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०७४१) से; सौजन्य: गोविन्दभाई रामभाई पटेल

२९. तार : राजेन्द्रप्रसादको

[२२ जनवरी, १९३४ या उसके पूर्व][१]

आपका तार पढ़कर दिल बैठ गया। काश, आपके साथ रहकर उन पीड़ित जनोंकी सेवा कर पाता! आशा है, जनतासे आपको यथेष्ट सहायता मिलेगी। मुझे स्थितिसे अवगत रखें। आशा है, अब आप बेहतर होंगे।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, २४-१-१९३४

३०. पत्र : श्रीप्रकाशको

दुबारा नहीं पढ़ा

२२ जनवरी, १९३४

प्रिय श्रीप्रकाश,

आभूषणोंपर लिखा मेरा लेख[२] तुम नहीं पढ़ पाये, इससे मुझे खुशी हुई। उसके कारण मुझे तुम्हारा एक पत्र भी मिला और इस बातकी स्वीकृति भी कि तुम 'हरिजन' नहीं पढ़ते। मैंने तो सोचा था कि मेरा लिखा एक आम ढंगका साप्ताहिक पत्र मानकर तुम इसको पढ़नेका आग्रह रखोगे। मगर भूल-सुधार जब भी कर लिया जाये, इसे बहुत देरसे किया गया न माना जायेगा। मेरी सलाह है कि तुम इसे नियमित रूपसे मँगवाकर पढ़ो।

अब तुम्हारी दलीलके बारेमें। मैंने यह कभी नहीं कहा कि विदेशी वस्त्र अपने-आपमें बुरी चीज है। हाँ, यह अवश्य कहा था और आज भी कहता हूँ कि भारतमें भारतीयों द्वारा विदेशी कपड़ेका उपयोग बुरी बात है।

आभूषणोंके उपयोगको मैं इस कोटिमें नहीं रखता। लेकिन उनका उपयोग बन्द करनेकी सीख अवश्य देता हूँ। आभूषणोंके उपयोगपर मेरी कोई वैसी बुनियादी आपत्ति नहीं है जैसीकि विदेशी कपड़ोंके उपयोगपर। इसलिए जो पहनना चाहें उनके हाथों आभूषणोंको बेचना मैं बुरा नहीं मानता। यदि मैं एक भी स्त्रीको आभूषण-त्यागके लिए तैयार कर लेता हूँ तो वही मेरे लिए काफी है। तुम्हें शायद मालूम न हो कि उनका सौवाँ हिस्सा ही आभूषणोंके रूपमें बेचा जाता है और

१. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", २२-१-१९३४।

२. देखिए खण्ड ५६, पृ० ३८३-४।

९९ प्रतिशत गलाकर सोना बना लिये जाते हैं और वे सिक्केकी तरह बेचे जाते हैं। तुम्हारी दलील के दूसरे हिस्सोंका सम्बन्ध एक व्यापकतर क्षेत्रसे है; उनमें पूँजी और श्रम, गरीबी और अमीरी आदिकी चर्चा करनी पड़ेगी। समयाभावके कारण इस चर्चाको नहीं छेड़ रहा हूँ।

क्या मैं तुम्हारे पत्रसे ऐसा मानूँ कि अब तुम पहलेकी ही तरह स्वस्थ हो गये हो और निराशाके दलदलसे निकल आये हो? आशा है, बापूजी[1] प्रसन्न होंगे।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

श्रीप्रकाश पेपर्स, फाइल नं० जी-२; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३१. पत्र : जमनालाल बजाजको

२२ जनवरी, १९३४

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

मैंने देवीप्रसादको तार दिया है और पत्र भी लिखा है। लेस्टरको मिलनेके लिए ही बुलाया है।

सतीश बाबूको पुरी जानेके बारेमें लिख दिया है। तुम्हारा शरीर स्वस्थ हो जाना चाहिए।

मिदनापुरमें जो-कुछ हो रहा है उससे मैं व्याकुल हो उठा हूँ।

ओम[2] और किशन[3] की अच्छी जोड़ी मिली है। ओम हमेशा खुश रहती है और उदासी क्या होती है, यह तो वह जानती ही नहीं। वह बारह घंटे तो सो सकती है, किन्तु इसमें मुझे कोई बुराई नजर नहीं आती। ऐसा नहीं लगता कि उसे किसी तरहका कोई खास शौक है। उसे खानेको जो मिल जाये सो ठीक है। देखें, आगे चलकर वह कैसी निकलती है।

मैं तो आनन्दपूर्वक हूँ।

१. डॉ० भगवानदास; श्रीप्रकाशके पिताजी।
२. ओम उर्फ उमा; जमनालाल बजाजकी सबसे छोटी कन्या।
३. किशन घुमतकर।

यदि तुमने जवाहरलालको सहयोगी कार्यकर्त्ताओंके भरण-पोषणके लिए ४,००० रुपये न भेजे हों तो भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२९) से।

३२. पत्र: मदालसा बजाजको

२२ जनवरी, १९३४

चि० मदालसा,

जबतक मैं न लिखूँ तबतक मुझे बिलकुल न लिखनेका तूने नियम बना लिया है क्या? ऐसा करके तू मेरी परीक्षा ले रही है या मुझपर दया कर रही है?

अपनी शारीरिक और मानसिक अवस्था मुझे जताना। वत्सलासे लिखनेको कहना। क्या पढ़ाई-लिखाई चल रही है? समयपर खाती-पीती है न?

ओम आनन्दपूर्वक है। वह मुटाती जा रही है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३१५

३३. पत्र: कस्तूरबा गांधीको

कुमारिका, त्रावणकोर
२२ जनवरी, १९३४

बा,

आज हम कुमारिकामें हैं। तेरा पत्र मिल गया है। तू यहाँ आ चुकी है। तब उर्मिलादेवी तेरे साथ थी। यह हिन्दुस्तानका आखिरी छोर है। हिमालय मस्तक है। इसीलिए इसे हम भारतमाता के चरण कहते हैं, जिन्हें प्रतिदिन समुद्र पखारता रहता है। यहाँ बस्ती न होनेके कारण खूब शान्ति है। मैंने समुद्रमें ही स्नान किया है। ओम, किशन, चन्द्रशंकरने[1] भी समुद्रमें स्नान किया। सर्दी तो होने ही क्यों लगी। बहुत करके देवदास और लक्ष्मी अबतक दिल्ली चले गये होंगे। वे जाकर राजाजी से मिल आये। मेरी खुराक वही है और शरीर स्वस्थ रहता है। मैंने मद्राससे एक

१. मूलमें 'चन्द्रशेखर' है।

टाइप करनेवाला खोज लिया है। उसे अण्णाने[1] मुझे दिया है। वह अच्छा है। ठक्कर बापा अब यहाँ आ गये हैं, इसलिए मलकानी दिल्ली चले गये। रामदास और नीमूके पत्र अभी-अभी मिले। लगता है, फिलहाल सभी अच्छे हैं। सुमित्राकी आँखोंकी देखभाल रामदास करता है। अभीतक रामदासका मन स्थिर नहीं हुआ है किन्तु अब हो जायेगा। चिन्ता करनेका कोई कारण नहीं है। डाहीबहनके स्वास्थ्यके बारेमें मैं समझता हूँ। सबको इतना याद रखना चाहिए कि शरीरपर मनका बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। जेलमें मनुष्यके मनमें बहुत विचार आते हैं। उन्हें रोकना सीखना चाहिए। हर स्थितिमें यदि मनुष्य समभावका पालन करे तो वह सुखसे रह सकता है। शान्ताको तो अबतक बहुत समझदार हो जाना चाहिए। उससे कहना कि वह ८० वर्ष और जीये तथा सेवा करे। आशा है, ललिता भी मौज करती होगी। तेरे स्वास्थ्यको देखते हुए जो खुराक आवश्यक हो वह प्रेमलीलाबहनके[2] यहाँसे मँगानेमें संकोच मत करना। कान्ति अब अच्छा है और प्रसन्न रहता है, हालाँकि उसका वजन कुछ घट गया है। मैं जमनाबहनको लिखूँगा। माधवदासकी[3] फिलहाल कोई खबर नहीं है। इस बीच उनका एक पत्र आया था। अब तूने विशेष रूपसे उसके बारेमें लिखा है, इसलिए मैं उन्हें तेरी ओरसे लिखूँगा। मणिलाल और सुशीलाके पत्र मिले हैं। उनमें कोई विशेष बात नहीं है। दोनोंका स्वास्थ्य अच्छा रहता है। अब मणिलाल सर्वथा शान्त है। सुरेन्द्र वर्धामें ही है। वह जमनालालजी की सहायता करता है। आज सभी बहनोंको जेलसे छूट जाना चाहिए। मैंने सभी बहनोंको दो-चार शब्द लिखे हैं। और अब प्रवचन :

'भगवद्गीता' कहती है कि ईश्वरके भक्तको एकान्तका सेवन करना चाहिए। इस कथनको अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। हम इस जगत्‌में अकेले आये थे और अकेले ही जायेंगे तो फिर जन्म और मरणके बीच जो अनिश्चित काल है, उसमें हम किसीके संगके लिए क्यों छटपटायें? हालाँकि हम अकेले जनमे थे, किन्तु हम यह भी देखते हैं कि हम अकेले नहीं हैं। हमें माता-पिताका संग मिलता है। यदि यह संग न मिले तो हम एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकते। जब हम बड़े हो जाते हैं तो सामान्यत: हमारा विवाह होता है। उससे भी हमें संग मिलता है। फिर हमें मित्रोंका भी संग मिलता है। आत्मोन्नतिके लिए भी कुछ हदतक हमें संगकी आवश्यकता होती है। इसके बावजूद एकान्त-सेवनका उपदेश क्यों दिया जाता है? हमें इस बातको समझ लेना चाहिए। हम साथियोंके साथके बारेमें जितना विचार करेंगे तो हम देखेंगे कि वह हमारी पराधीनताका सूचक है। माता-पिता, पति-पत्नी, मित्र, — सभी कुछ सीमातक हमें परावलम्बी बनाते हैं। किन्तु जो ईश्वरका भक्त है वह तो दयालु है। उसे केवल ईश्वरका अवलम्ब होता है। ईश्वर ही एकमात्र सच्चा साथी है और सारथी भी है। ईश्वर जिसके साथ है उसे और क्या चाहिए? इसीलिए गीतामाता

१. हरिहर शर्मा।
२. प्रेमलीलाबहन ठाकरसी।
३. कस्तूरबा गांधीके भाई।

कहती है कि हमें एकान्त खोजना चाहिए। इसका यह अर्थ नहीं है कि हमें मनुष्यका साथ छोड़कर भाग जाना चाहिए। इसका अर्थ इतना ही है कि हमें संगकी आशा नहीं रखनी चाहिए। जब यह न मिले तो हमें घबराना नहीं चाहिए तथा यदि हम करोड़ों लोगोंके बीच पड़े हों तो भी मानसिक एकान्तका उपयोग करें और ईश्वरके सामीप्यका अनुभव करें। 'देहीनां स्नेही सकल स्वारथीयां, अन्ते अलगा रहेशे,'[1] यह भजन याद है न? एकान्तका सेवन करनेवाला कहीं भी दु:खी नहीं होता, क्योंकि वह तो सर्वत्र विष्णुके ही दर्शन करता है। भक्त प्रह्लादने दहकते हुए स्तम्भमें भी विष्णुके दर्शन किये थे। एकान्त-सेवनकी इस भावनाको थोड़े-से प्रयत्नसे सभी सिद्ध कर सकते हैं। इसे शीघ्र सिद्ध करनेका उपयुक्त अवसर तुम सबको अनायास ही मिल गया है। उसे सिद्ध करना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ९-११

३४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

कन्याकुमारिका
२२ जनवरी, १९३४

भाई वल्लभभाई,

इस बार तुम्हारा पत्र अभीतक नहीं आया। परन्तु मैं तो अपने नियमके अनुसार यह लिख देता हूँ। आज हम कन्याकुमारिकामें हैं। यहाँ आबादी तो है नहीं, इसलिए परम शान्ति है। जो रुपये गिने जा रहे हैं सिर्फ उन्हींकी खनखनाहट है। समुद्र सामने ही है, परन्तु गरजता बिलकुल नहीं।

देवदास और लक्ष्मी अब दिल्ली पहुँच गये होंगे। वे राजासे[2] मिल लिये। उसके बाद उनका पत्र नहीं आया।

डॉ० विधान अब अच्छे हैं, हालाँकि हड्डी अभी बिलकुल अच्छी नहीं हो पाई है। बिस्तरपर लेटे-लेटे काम कर रहे थे।

लगता है कि बिहारके भूकम्पने मोतीहारीका नाश ही कर दिया है। राजेन्द्र बाबू निकलते ही इसमें जुट गये दीखते हैं। उनका हृदयद्रावक तार मिला था। मैंने आश्वासनका तार[3] भेजा है। सतीश बाबू वहाँ पहुँच गये हैं। पन्द्रह हजार मनुष्य घायल हुए जान पड़ते हैं। बहुत-से मर गये हैं, जिनकी संख्याका पता नहीं चला। अनेक बड़े-बड़े मकान भी रहने लायक नहीं रहे हैं।

१. इस शरीरसे स्नेह करनेवाले सभी स्वार्थी हैं; अन्तमें वे अलग ही रहेंगे।
२. च० राजगोपालाचारी।
३. देखिए "तार : राजेन्द्रप्रसादको", २२-१-१९३४।

म्युरियल लेस्टर फरवरीमें आ रही हैं। बहुत करके मुझसे कुनूरमें मिलेंगी। २९ जनवरीसे ५ फरवरीतक मैं वहाँ रहूँगा। वे हांगकांग से आ रही हैं।

पृथुराज थोड़े दिनके लिए मेरे साथ घूम रहा है। वह कालिकटसे साथ हुआ है। अब वह बेलाबहनसे मिलने जायेगा। वैसे उसका स्वास्थ्य सुधरा है। वह चन्द्र शंकरको मदद दे रहा है। उन्हें अधिकसे-अधिक मददकी जरूरत है।

त्रावणकोरमें कोई विरोध देखनेमें नहीं आया। लोगोंकी भीड़ उतनी ही बड़ी होती थी। राजाने खूब उदासीनता दिखाई। सी० पी०[1] मिले ही नहीं। देवधर त्रिवेन्द्रम्में है। वहाँ वह कोऑपरेटिव सोसाइटी-सम्बन्धी जाँच कर रहा है। शरीर दुबला तो जरूर हो गया है, परन्तु काम दे रहा है, इसका उसे सन्तोष है।

केलप्पन बहुत करके एक ईसाई महिलासे शादी करेगा। इसलिए हरिजन सेवक संघके साथ उसका सम्बन्ध खतम हो जायेगा। महिला अच्छी हैं। यह सम्बन्ध करनेका विचार छ: वर्ष पुराना लगता है। इसमें कोई बुराई नहीं है, परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि उसके विचारोंका संघके साथ मेल नहीं बैठ सकेगा।

बा का पत्र मिला है। उसमें कोई खास बात तो नहीं है, फिर भी नकल करा सका तो भेज दूँगा। मैंने मणिका जो पत्र भेजा था सो तो मिला ही होगा।

आज सब बहनें छूट गई होंगी। मैंने सबको पत्र लिखे हैं। किशोरलाल[2] अभी तक बिस्तरपर ही पड़े हैं। जमनालाल अपना काम जोरोंसे चला रहे हैं। सुरेन्द्रको अभी तो उसमें लगा दिया है।

जर्मनीका खुरो नामक एक नवयुवक दक्षिण आफ्रिकासे आया है। वह आजकल मेरे साथ दौरा कर रहा है। उसे 'हिन्दू' का संवाददाता बताया जाता है। उस बेचारेके १,००० रु० लुट गये। ठक्कर बापा उसपर मुग्ध हो गये हैं। वह चौकीदार और कुलीका काम खुशीसे करता है। खूब तगड़ा है, थकता ही नहीं। फुर्तीला है और अच्छा पढ़ा-लिखा है। वह ब्रिटिश नागरिक बन गया है।

सि०को[3] पुलिस ले गई है। शायद ना०[4] अब रवाना हो गई होगी।

दोनोंको —

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो - २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ६५-७

१. सर सी० पी० रामस्वामी अय्यर, त्रावणकोर रियासतके तत्कालीन दीवान।
२. किशोरलाल मशरूवाला।
३ और ४. नाम नहीं दिये जा रहे हैं।

३५. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२२ जनवरी, १९३४

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा २३ डिसेंबरका खत यहां अब मिला। दूसरे भी मिल गये। अब तो दा[१] जैसे कहे ऐसे ही किया जाय, देखें क्या परिणाम आता है। घरका किराया तो बहुत है लेकिन न्यू दिल्लीमें और भी क्या आशा रखो। कृष्ण नायरकी प्रकृति तो अच्छी है? उसके साथ कोई है? मेरा तो अच्छा ही चल रहा है और जहाँतक ईश्वर मुझसे कुछ कार्य लेना चाहता है तो अच्छा ही रखेगा जब उसीका . . .[२] कर दिया है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४०७) से।

३६. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२२ जनवरी, १९३४

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला है।

असह्यको सहन करना धर्म है। कठिन धर्म है। मैं कठिनताका प्रत्यक्ष अनुभव आज कर रहा हूं। उस तीक्ष्ण परीक्षामें उत्तीर्ण होनेसे ही गीता-पारायण सच्ची हो सकती है। देखें क्या होता है, भगवान कहां हमको ले जाता है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

कुमारिकासे यह पत्र लिख रहा हूँ।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०७) से।

१. अर्थात् डॉक्टर।

२. यहाँ एक शब्द डाककी मुहरसे ढँक गया है।

३७. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२३ जनवरी, १९३४

चि० अमला,

मैं तुम्हें इससे पहले लिखना चाहता था, लेकिन समय नहीं मिला। मगर तुमने मुझे नहीं लिखा, यह बात मुझे अजीब लगी। यह तो तुम्हारे लिए अस्वाभाविक था। जब तुम मेरा खयाल करके नहीं, बल्कि कामका ही खयाल करके उसमें गर्क हो जाओगी तब बेशक वैसा कर सकती हो।

तुम्हें जितनी जल्दी हो सके, साबरमती भेजनेकी कोशिश कर रहा हूँ। लेकिन मुझे जिम्मेदार अधिकारियोंकी अनुमति लेनी है।[1] वहाँ मेरी वैसी नहीं चलती जैसी वर्धामें चलती है। यह अधिकार-त्याग मैंने खुशीसे किया है। अब अगर मैं वहाँ अपनी बात चलानेकी कोशिश करूँ तो असत्याचरणका दोषी बनूंगा।

लेकिन ऐसा मत सोचो कि वहाँ तुम हरिजन-सेवा नहीं कर रही हो।

पत्र अवश्य लिखो और अपने अध्ययन, कार्य और अध्यापनका हाल बताओ। अब तुम्हारा स्वास्थ्य तो बिलकुल ठीक है न?

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३८. पत्र : रमाबहन जोशीको

कन्याकुमारिका
२३ जनवरी, १९३४

चि० रमा,

तुम्हारा पत्र मिला था। यह पत्र मैं पृथुराजको बोलकर लिखवा रहा हूँ। सिलाईके काममें यदि अन्य लड़कियोंको तैयारकर उनकी मदद लो तो तुम पार पा सकती हो। हिन्दीकी पढ़ाई शुरू करके अच्छा किया। सीखनेको तो बहुत-कुछ है और सब ही सीखने लायक होता है। इनमें से सबसे आवश्यक चीजको खोजकर उस पर अपना ध्यान केन्द्रित कर देना चाहिए और अन्य चीजोंको छोड़ ही देना चाहिए।

१. देखिए "पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको", २३-१-१९३४।

यदि हम ऐसा न करें तो कुछ हो ही नहीं सकता। इस बातका ध्यान रखना कि बहुत-सी चीजें सीखनेकी कोशिशमें ऐसा न हो कि तुम्हारी तबीयत, जो अभी सुधर रही है, वह फिर बिगड़ जाये। वीमूको[१] वह जगह अनुकूल आ गई, यह बहुत अच्छा हुआ। तुम्हें धीरूका[२] पत्र कितने दिनसे नहीं मिला? मैंने उसे कल ही लिखा है। कुसुमके पत्रमें धीरूका समाचार था। ऐसा लगता है कि अब वह अच्छी तरह है। जोशीको[३] मैंने फिर पत्र लिखा था किन्तु मुझे पता नहीं कि उक्त पत्र उसे मिला या नहीं। मैं आनन्दपूर्वक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३६२) से।

३९. पत्र: परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

२३ जनवरी, १९३४

भाई परीक्षितलाल,

अमलाबहन[४] नामक जर्मन महिलाको तो तुम जानते होगे। हरिजन-सेवामें प्रत्यक्ष भाग लेनेकी उसे तीव्र इच्छा है। बहुत ही निर्मल स्वभावकी है। उसका भाषाज्ञान बहुत अच्छा है, पश्चिमकी ग्यारह भाषाएँ जानती है। उससे अंग्रेजी-शिक्षिकाका काम लिया जा सकता है। वैसे खुद वह तो हर प्रकारका काम करनेको उत्सुक है। वेतन तो कुछ देना नहीं है। क्या तुम उसे वहाँ अपने बीच सम्मिलित कर लोगे? वह काम करनेके लिए छटपटा रही है। आजमाकर देखो, कामकी सिद्ध हो तो रखना अन्यथा वर्धा वापस भेज देना। उसका भोजन तो सादा ही होता है। वहाँ रही भी है। अलबत्ता तुम्हें भय लगता हो तो मत रखना। इनकार करनेमें तनिक भी संकोच मत करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०००) से।

१. विमला; रमाबहन जोशीकी कन्या।
२. रमाबहन जोशीका पुत्र।
३. छगनलाल जोशी; रमाबहनके पति।
४. मार्गरेट स्पीगल।

४०. पत्र : भगवानजी पु० पण्डयाको

२३ जनवरी, १९३४

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मिला। क्या वाड़जमें भी किरायेका मकान नहीं मिल सकता? क्या भंगियोंकी बस्तीके आसपास जमीन नहीं मिल सकती? वहाँ झोंपड़ी बनाकर रहा जा सकता है। मुझे लगता है कि वाड़जमें जो प्रयोग चल रहा है उसे छोड़ा नहीं जा सकता। किन्तु इस सम्बन्धमें चिन्ता मत करना। मेरे कहनेका तात्पर्य इतना ही है कि यथासाध्य प्रयत्न करना चाहिए। अन्य प्रकारसे तो तुम अपना समय अच्छी तरह बिता रहे हो। अपने खानेका क्या करते हो?

मुझे नियमित रूपसे पत्र तो लिखते ही रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३६५) से; सौजन्य: भगवानजी पुरुषोत्तम पण्डया

४१. पत्र : मूलचन्द पारेखको

कन्याकुमारी
२३ जनवरी, १९३४

भाईश्री मूलचन्द,

गुजरातमें घटनेवाली घटनाओंके समाचार मुझे भाग्यसे ही मिल पाते हैं मानों कि मैं देशमें रहता ही न होऊँ। तुम्हें बुखार आनेकी खबर मुझे तभी मिली जब तुमने लिखा। अभी-अभी तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला, और यह अच्छा ही है कि आज मंगलवार अर्थात् चुपचाप बैठनेका दिन है, इसलिए तुम्हें तुरन्त उत्तर लिख पा रहा हूँ। किसी और कारण नहीं तो हरिजनोंके कारण ही झटपट खटिया छोड़कर उठ बैठना। बाकी तो शरीरके भोग शरीरको भोगने ही होंगे, तभी निस्तार होगा। आशा है, यह पोस्टकार्ड जब तुम्हें मिलेगा तबतक तुम अच्छे हो चुके होगे, क्योंकि मैं तो भारतमाता के चरणोंमें हूँ किन्तु तुम तो उसकी गोदमें हो।

बापूके आशीर्वाद

श्री मूलचन्द पारेख
वरतेज

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७) से।

४२. भेंट : सेल्फ-रेस्पेक्ट पार्टीके सदस्योंसे[1]

[२३ जनवरी, १९३४][2]

प्रश्न : हरिजन-कार्यके सम्बन्धमें आपका क्या कार्यक्रम है ?

उत्तर : मेरा कार्यक्रम तो उनके लिए स्कूलों और छात्रावासोंकी व्यवस्था करने, डाक्टरी सहायता और जलकी सुविधाएँ उपलब्ध करानेका है — आम तौरपर वह सब-कुछ करने का है जो उनको दूसरोंकी बराबरीमें लानेके लिए जरूरी है।

प्र० : मगर ईसाई और मुसलमान अस्पृश्योंके बारेमें ? हम ऐसा कार्यक्रम चाहते हैं जो उनकी स्थिति भी सुधार सके।

उ० : मेरे पास ऐसा कोई बृहत् कार्यक्रम नहीं है जो सबके लिए लागू किया जा सके। ऐसा नहीं है कि मुझे वह पसन्द नहीं है; बात यह है कि उसका संचालन करना मेरी सामर्थ्यके बाहर है। वह स्वराज्य-आन्दोलनके अन्तर्गत आता है। जब स्वराज्य आयेगा तो वह सबपर लागू होगा, भारतके सभी दीन जनोंपर। स्वराज्यका एक मतलव उनके साथ किये गये अन्यायोंका निराकरण भी है।

प्र० : हम जानते हैं कि दक्षिण भारतमें उन्हें मजदूरी जिन्सोंमें दी जाती है और कामके कोई निश्चित घंटे नहीं हैं। लोगोंको उन्हें मन्दिर-प्रवेशका अधिकार देनेके लिए समझानेके बजाय आप इस बातके लिए कोशिश क्यों नहीं करते कि उन्हें अधिक मजदूरी मिले और उनके कामके घंटे नियत कर दिये जायें ?

उ० : इन बातोंका कारण अस्पृश्यता नहीं है। इनके कारण तो कुछ और हैं।

प्र० : मगर दोनों प्रश्न एक-दूसरेसे जुड़े हुए हैं।

उ० : मैं जानता हूँ कि एकका असर दूसरेपर पड़ता है। अगर मैं इस समस्याको हल कर पाया तो बाकी अपने-आप हल हो जायेंगी। एक वैद्यकी तरह मैं जानता हूँ कि मुझे क्या करना है। वैद्य रोगकी जड़का पता लगाकर उसीका इलाज करता है। इसी प्रकार मैं भी इस रोगकी जड़का ही इलाज कर रहा हूँ।

प्र० : बेशक, आप हम सबसे अधिक अनुभवी हैं। लेकिन हमें लगता है कि हरिजन पेट भरने के लिए आहार और समाजमें प्रतिष्ठा चाहते हैं। आप तो केवल मन्दिर-प्रवेशका ही राग अलाप रहे हैं।

उ० : आप बिलकुल गलत सोचते हैं। इस दौरेमें मैंने जो भाषण दिये हैं उनमें इस बातका आप मामूली उल्लेख ही पायेंगे। लेकिन, उतना किये बिना मैं रह नहीं सकता।

१. चन्द्रशंकर शुक्लके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. तिथि २-२-१९३४ के **हरिजन**से ली गई है।

प्र० : लेकिन क्या आप ऐसा नहीं कहते कि यह आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है?

उ० : बेशक, कहता हूँ, इसमें तो कोई शक ही नहीं है। यह बात मैंने पल्लुरुथीमें[1] स्पष्टतम शब्दोंमें कही थी। वहाँ हरिजनोंने मुझपर यह आरोप लगाया था कि मैं हिन्दूकी हैसियतसे सुधारकी वकालत कर रहा हूँ। मैंने आरोप स्वीकार कर लिया। मैं क्या हूँ, यह मैं किसीसे छिपाता नहीं। उन्होंने कहा कि अगर हमें सारी आर्थिक सुविधाएँ मिल जायें तो बादमें सब-कुछ अपने-आप मिल जायेगा। मैंने कहा, नहीं, नहीं मिलेगा। और मैं अपनी बातकी पुष्टि उदाहरण देकर कर सकता हूँ। आप मन्दिरोंकी निन्दा शौकसे करें। आप चाहें तो वहाँ न जायें। लेकिन आपको वहाँ जाकर पूजा करनेका अधिकार तो होना ही चाहिए। आप उसका उपयोग करें या न करें, यह आपकी मर्जी है। सभी थिय्योंकी भावना वैसी ही नहीं है जैसी आपकी है। वही थिय्या लोग पल्लुरुथीमें मुझे एक मन्दिरमें ले गये और वह एक हिन्दू-मन्दिर ही था। वे सब नौजवान थे। और क्या नारायण गुरु स्वामीने मन्दिरोंकी स्थापना नहीं की? मैं ऐसे हजारों हरिजनोंको जानता हूँ जिनकी आँखोंमें यह सुनते ही चमक आ जाती है कि किसी मन्दिरके द्वार उनके लिए खुल गये हैं। वे नहीं जानते कि ऐसा क्यों होता है, लेकिन उन्हें अपनी स्थिति बदली हुई-सी जान पड़ती है। किसी मन्दिरमें प्रवेश करते समय मैंने उन्हें हर्ष-मग्न होते देखा है। उन्हें ऐसा लगा मानों उन्हें ईश्वरके साक्षात् दर्शन हो गये।

प्र० : हम तो आपका सम्मान एक क्रान्तिकारी जनसमुदायके एक क्रान्तिकारी नेताके ही रूपमें करते हैं।

उ० : तब यह कह लीजिए कि दृश्य-पटलपर एक हिन्दू क्रान्तिकारी प्रगट हुआ है और वह हिन्दू-धर्ममें क्रांति ला रहा है। लेकिन यदि मैंने किसीका कुछ बिगाड़ा है तो उसका हर्जाना मेरे अलावा और कौन देगा! हरिजनोंसे मेरा कहना है कि वे चाहें तो उस हर्जानेको स्वीकार करें या अस्वीकार कर दें।

प्र० : आपने हमें हरिजन-नामसे अभिहित किया। इससे तो हमें ऐसा लगता है मानों हम एक अलग समाजके लोग हों जिसे लोग एक भिन्न नामसे जानते हैं। हमें यह नाम देकर क्या आप हमारी भावनाओंको चोट नहीं पहुँचा रहे हैं?

उ० : हो सकता है, चार-छः लोगोंकी भावनाओंको चोट पहुँचा रहा होऊँ, लेकिन बाकी लोगोंको नहीं। इस नामको लोगोंने सर्वत्र जिस तत्परतासे स्वीकार किया है वैसे किसी दूसरे नामको नहीं। आपको याद रखना चाहिए कि यह शब्द मेरा गढ़ा हुआ नहीं है। जबतक उन्हें कोई दूसरा नाम देनेकी जरूरत बनी हुई है तबतक किसी एक नामकी जरूरत तो रहेगी ही। तो फिर एक ऐसा नाम क्यों नहीं जिसमें आपत्तिका कोई कारण नहीं हो सकता। मेरे कई बुद्धिवादी मित्र हैं। उनमें से एकने मुझे बधाई देते हुए कहा कि "आप तो बुद्धिवादियोंकी भाषा बोलते

१. देखिए "भाषण : पल्लुरुथीमें", १८-१-१९३४।

हैं।" मैंने कहा, "तो आपने मुझे क्या समझा था?" आप लोग तो कोरे नामके बुद्धिवादी हैं। मैं सच्चा बुद्धिवादी हूँ। लेकिन मैं आपसे यह कह देता हूँ कि मन्दिर-प्रवेशके बारेमें हम लोगोंमें जो मतभेद है उसे हम रहने दें और जहाँ हममें मतभेद नहीं है वहाँ मिलकर काम करें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-२-१९३४

४३. भाषण : तिन्नवल्लीकी सार्वजनिक सभामें[1]

२४ जनवरी, १९३४

आजके कार्यक्रमके सिलसिलेमें कुछ कहनेके पूर्व मैं भारतपर आये उस घोर संकटके सम्बन्धमें दो शब्द अवश्य कहूँगा, जिसके उल्लेखका यह पहला अवसर मेरे सामने आया है। मेरा मतलब उस भीषण भूकम्पसे है, जिसने सुन्दर बिहार-प्रान्तको तबाह कर दिया है। कल मैंने इस सम्बन्धमें वाइसरायका पत्र पढ़ा, अखबारोंमें प्रकाशित बिहार-सरकारकी रिपोर्टोंको भी मैंने पढ़ा; और जेलसे छूटते ही बाबू राजेन्द्रप्रसादने मेरे पास जो एक अत्यन्त हृदय-विदारक तार भेजा उसे भी पढ़ा। इन सबको पढ़नेसे मैं इस परिणामपर पहुँचा हूँ कि हम मर्त्य प्राणी कितने तुच्छ हैं। हम लोग, जिनकी ईश्वरपर श्रद्धा है, निश्चय ही यही मानेंगे कि इस अवर्णनीय विपत्तिके पीछे भी अवश्य ही मनुष्यके कल्याणका कोई दैवी उद्देश्य छिपा हुआ है। भले ही आप मुझे अन्धविश्वासी ही कहें, मगर मुझ-जैसा आदमी यही मानेगा कि भगवान्ने हमें हमारे पापोंका दण्ड देनेके लिए इस भयंकर भूकम्पको भेजा है। ईश्वर और धर्मका उपहास करनेवाले व्यक्तिको भी यह स्पष्ट होना चाहिए कि ऐसी विपत्तियोंका कारण दैवी इच्छाके अतिरिक्त और क्या हो सकता है। मेरा यह अटल विश्वास है कि बिना ईश्वरकी मर्जीके एक तिनका भी नहीं हिलता।

अब प्रश्न यह है कि ऐसे महान् संकटके समय मेरा और आपका क्या कर्त्तव्य है। मैं आप लोगोंसे इस सम्बन्धमें इतना ही कह सकता हूँ कि हम सबको इस घोर विपदाको कम करनेके लिए जितना बन सके उतना अवश्य करना चाहिए। खुद मैं तो उस कार्यसे विमुख नहीं हो सकता जिसके प्रति मैंने स्वयंको — मेरे खयाल से, ईश्वरके निर्देशपर — अपने पास बचे इन चन्द महीनोंके लिए अर्पित कर दिया है। इस समय आप लोगोंसे मैं जो धन इकट्ठा कर रहा हूँ, उसे किसी दूसरे कार्यमें लगानेका मुझे कोई अधिकार नहीं है। मगर मैं अपने पूर्ण आग्रहके साथ और मुझपर लोगोंका मेरे जानते जो स्नेह है, उसके नामपर आपसे अवश्य ही यह अनुरोध करूँगा कि यद्यपि आप इस थैलीमें हरिजन-कार्यके लिए पैसा दे चुके

१. यह सभा सुबह नगरपालिकाके बाजारमें हुई थी। इसमें लगभग २०,००० लोग उपस्थित थे। इस भाषणकी रिपोर्ट २४-१-१९३४ के **हिन्दू** और **हिन्दुस्तान टाइम्स**में भी प्रकाशित हुई थी।

हैं, तो भी आप जो-कुछ बचा सकते हैं वह सब सीताकी भूमिके उन दुःखी जनोंके लिए दे डालिए, जिनका न कहीं आश्रय है, न जिनके पास दो दाने अन्नके हैं और न जिनके तनपर एक वस्त्र है। इस समय आपका यह धर्म है कि आप अपने बिहारी भाइयों और बहनोंको, अपने भोजन और वस्त्रमें उन्हें भी हिस्सेदार बनाकर, यह दिखा दें कि वही रक्त आपकी धमनियोंमें भी बहता है, जो बिहारियोंकी धमनियोंमें बह रहा है। अपनी सहायताकी रकम आप बाबू राजेन्द्रप्रसाद अथवा मेरे पास भेज दीजिए। मैं इस बातका पूरा ध्यान रखूँगा कि आपकी भेजी हुई रकमकी एक-एक पाई उन्हीं लोगोंके पास जाये जिनके पास उसे जाना चाहिए।

सरकारने जो कारण बताये हैं तथा दूसरे कारणोंसे, जो उसीको मालूम होंगे, बहुत-से सरकारी कर्मचारियोंको हरिजन-कार्यमें मदद करने से रोका जाता है, या कि वे समझते हैं कि उन्हें इस कार्यमें मदद देनेकी मनाही है। और सनातनी यह समझते हैं कि मैं इस कार्य को करके उनके तथा सर्वशक्तिमान् ईश्वरके विरुद्ध अपराध कर रहा हूँ। इससे वे भी इस कार्यमें सहायता नहीं दे रहे हैं। अहिन्दुओंसे भी इस थैलीके लिए मैं आशा नहीं करता। इसलिए पीड़ित बिहारके लिए मेरी अपील सिर्फ सीमित जनताके प्रति ही नहीं है, जैसीकि हरिजन-कार्यसे सम्बन्धित अपील हुआ करती है, बल्कि मेरी यह अपील तो व्यापक रूपमें सबके प्रति है। आज हमारे सामने जो घोर संकट उपस्थित हुआ है और जिसके ऊपर हम लोगोंका कोई बस नहीं है, उसको देखते हुए हमें यह भूल जाना चाहिए कि हम कांग्रेसी हैं और दूसरे गैर-कांग्रेसी हैं, हम हिन्दू हैं और वे लोग अहिन्दू हैं, हम सरकारके कर्मचारियोंके वर्गके हैं और दूसरे लोग उससे भिन्न वर्गके, हम अंग्रेज हैं और दूसरे कुछ और हैं। हमें यह याद रखना चाहिए कि हम सब भारतीय हैं, भारतका अन्न और भारतका नमक खाते हैं तथा भारतकी मूक जनताकी कमाईपर ही हम जी रहे हैं। और ऐसे भारतीयोंके नाते हम सबको मिलकर पूरी एकताके साथ यह कार्य करना चाहिए। सरकारी अधिकारियों द्वारा सहायताके जो उपाय किये जायें, उनमें हमें भी पूर्ण विनम्रताके साथ हमसे जितना बने उतना योग देना चाहिए। याद रहे कि इस अवसरपर समयकी ओर सबसे अधिक ध्यान देने की जरूरत है। यह जानकर मुझे प्रसन्नता होगी कि मेरी यह अपील अनसुनी नहीं की गई। मैं आपको उस दैवी दुर्घटनाकी याद दिलाना चाहता हूँ, जिसे घटित हुए अभी बहुत बरस नहीं बीते। जब आपकी इस उपजाऊ भूमिपर बाढ़का प्रकोप हुआ था, तब सारा भारत आपकी मददके लिए दौड़ पड़ा था। अब आपकी बारी है। इस समय विपद्ग्रस्त बिहारकी रक्षाके लिए आप तत्परतासे जुट जायें।

मैं तो बिहारकी इस विपत्ति और अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनके बीचमें एक तात्त्विक सम्बन्ध देख रहा हूँ। बिहारकी यह विपत्ति हमें आकस्मिक रूपसे इस बात की याद दिलाती है कि हम क्या हैं और ईश्वर क्या है। किन्तु अस्पृश्यता वह विपत्ति है जो सदियोंसे हमारे समाजमें चली आ रही है। यह वह अभिशाप है, जिसे हम लोगोंने खुद ही हिन्दू-समाजके एक अंगकी उपेक्षा करके अपने सिरपर चढ़ा

लिया है। बिहारका यह संकट तो केवल शरीरका नाश करनेवाला है, मगर अस्पृश्यता-जनित संकट तो हमारी आत्माको नष्ट कर रहा है। इसलिए बिहारकी इस विपत्तिसे हमें यह सीख लेनी चाहिए कि अपनी चन्द शेष साँसोंके रहते हुए हम अस्पृश्यताके इस कलंकसे मुक्ति पाकर अपने-आपको अपने सिरजनहारके समक्ष स्वच्छ हृदय लेकर उपस्थित होने योग्य बना लें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-२-१९३४

४४. भाषण : सार्वजनिक सभा, तूतीकोरिनमें[1]

२४ जनवरी, १९३४

आपसे मैं पूर्वोत्तर भारतके उस प्रान्तको स्मरण करनेको कहता हूँ। यह वही प्रान्त है जहाँ सीताका लालन-पालन हुआ था, जहाँ राजा जनक राज्य करते थे। यह वही भूमि है जहाँ गौतमको दिव्य ज्ञानकी प्राप्ति हुई थी। इसके साथ अनेक अन्य पावन स्मृतियाँ भी जुड़ी हुई हैं और आप और मैं, बल्कि भारतका बच्चा-बच्चा उसे बिहारके नामसे जानता है और बिहारका मतलब है 'सुरम्य भूमि'। आज वह सुरम्य भूमि भूकम्पके कारण बर्बाद हो गई है। खबर है कि हजारों लोग काल-कवलित हो गये हैं। इससे कहीं अधिक लोगोंको चोट आई है, जिसकी दु:सह पीड़ासे वे आज भी छुटकारा नहीं पा सके हैं। अनेक सुन्दर नगर ध्वंसावशेषोंके ढूह बनकर रह गये हैं। उनको दुनियाके हर हिस्सेसे सहायता मिल रही है। सम्राटने सहानुभूतिका एक तार भेजा है। इस दैवी विपत्तिने हमें अचानक इस बातकी याद दिला दी है कि सम्पूर्ण मानवता एक है; और जैसाकि उचित ही है, इस विपत्तिको सामने पाकर सरकार और जनता एक हो गई हैं। कुछ समयके लिए कांग्रेसी और गैर-कांग्रेसियोंका भेद मिट गया है और सभी पक्ष एक-दूसरेके प्रयत्नोंमें सहयोग कर रहे हैं। मैं चाहता हूँ, आप भी अपने अन्दर इतना अन्धविश्वास आने दें कि मेरी तरह आप भी मान सकें कि जिन्हें हम अस्पृश्य या पंचम कहते हैं और जिनको मैं हरिजन कहता हूँ, उनके प्रति हमने जो घोर अपराध किया है और आज भी कर रहे हैं, यह भूकम्प उसीका एक दैवी दण्ड है। इस विपत्तिसे हम यह शिक्षा लें कि हमारा पार्थिव जीवन, हम हर रातको प्रकाशके इर्द-गिर्द नाच-नाचकर कुछ क्षणोंमें नष्ट होते जिन पतंगोंको देखते हैं, उन्हीं के जीवनके समान क्षणभंगुर है। हमारा यह पार्थिव जीवन काँचकी चूड़ियोंसे भी कहीं कमटिकाऊ है। काँचकी चूड़ियोंको अगर आप किसी मंजूषामें सँभालकर रखें और उन्हें स्पर्श न करें तो उन्हें आप हजारों वर्षोंतक रख सकते हैं। किन्तु यह पार्थिव जीवन तो इतना क्षणभंगुर है कि पलक झपकते नष्ट हो सकता है।

१. इस सभामें लगभग २५,००० लोग उपस्थित थे और गांधीजी को कई मानपत्र और थैलियाँ भेंट की गई थीं। सभाके अन्तमें मानपत्र नीलाम किये गये।

इसलिए हमारी जो साँसें शेष हैं, उनके रहते हुए ही हमें चाहिए कि हम ऊँच-नीचका भेद भुला दें और अपने हृदयको स्वच्छ बनाकर अपने-आपको उस समय अपने स्रष्टा के सामने उपस्थित होने योग्य बना लें जब ऐसा ही कोई भूकम्प अथवा कोई दूसरी प्राकृतिक विपत्ति या किसी साधारण कारणसे होनेवाली मृत्यु हमें अपने पंजेमें दबोच लेगी।

इस शहरकी बिजली कम्पनीने बड़ी उदारतासे यहाँ प्रकाशकी व्यवस्था की है और इसके लिए मैं उसे बधाई देता हूँ। कम्पनीसे मेरा अनुरोध है कि कुछ पैसा बचाकर वह संकटग्रस्त बिहारको भेजे। मैं जानता हूँ कि तूतीकोरिनमें ऐसे व्यापारी और अन्य धनाढ्य लोग हैं, जो उससे बहुत ज्यादा दे सकते हैं जितना कि उन्होंने अभी दिया है। मैं यह भी जानता हूँ कि कई कारणोंसे समाजका एक सीमित हिस्सा ही हरिजन-कार्यके लिए धन देगा। किन्तु, बिहारके पीड़ितोंके लिए दान देनेके लिए मैं आबाल-वृद्ध सबको, सभी जातियों और धर्मोंके लोगों तथा सरकारी नौकरोंको भी आमन्त्रित करता हूँ।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-२-१९३४ और **हिन्दू**, २६-१-१९३४

४५. पत्र : एफ० मेरी बारको

२५ जनवरी, १९३४

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। यह जानकर खुशी हुई कि तुम और तुम्हारी कक्षा ठीक-ठीक चल रही है। यदि वहाँ[2] रहने से तुम्हें अपनी सम्पूर्ण क्षमताओंकी अभिव्यक्तिका अवसर मिल रहा हो और आंतरिक प्रसन्नताकी प्राप्ति हो रही हो तो खुद मुझे तुम्हारे वहाँ रहने, स्थायी रूपसे भी रहनेपर कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन, मैं जानता हूँ कि इस सम्बन्धमें जमनालालजी से सलाह-मशविरा करके निर्णय लेना अधिक अच्छा होगा।

हाँ, तकलीपर कताई और अंग्रेजीका संयोग सुन्दर है।

बिहारमें प्रकृतिने और मिदनापुरमें मनुष्यकी धन और सत्ताकी लोलुपताने जो तबाही मचाई है, उसका समाचार तुम पढ़ती तो रही होगी? आजकल मेरे मनपर यही दोनों बातें छाई रहती हैं और मैं ईश्वरसे राह दिखानेके लिए निरन्तर प्रार्थना कर रहा हूँ।

लगता है, तुम स्वस्थ-प्रसन्न हो।

१. २६-१-१९३४ के **हिन्दू**में इस भाषणकी दो रिपोर्टें छपी थीं। एकपर २४ जनवरी और दूसरी पर २५ जनवरी की तिथि दी हुई है। इन्हें **हरिजन**की रिपोर्टसे मिला लिया गया है।

२. बैतूल, म० प्रा०; देखिए खण्ड ५६, पृ० ४५३।

मुझे नी०का बड़े निश्चयात्मक स्वरमें लिखा एक पत्र मिला था। उसमें भी पहले पत्रोंकी तरह ही ऊँची-ऊँची बातें कही गई हैं, लेकिन वैसे वह स्नेहसे सराबोर है। सि०को पुलिस ले गई है। उन्हें अमेरिका भेजा जा रहा है।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

साथमें कार्यक्रम भेज रहा हूँ।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१८) से। सी० डब्ल्यू० ३३४७ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

४६. पत्र : प्रभावतीको

२५ जनवरी, १९३४

चि० प्रभावती,

इधर हालमें तेरा पत्र नहीं मिला। भयंकर भूकम्प होनेके कारण चिन्ता तो होती है। जयप्रकाश कहाँ है? तुम दोनों कैसे हो? भूकम्पके बाद तेरे विस्तृत पत्रकी आशा कर रहा था। इस समय तो तुम दोनों इसी काममें जुटे होगे। क्या राजेश्वर[1] काशीमें ही है? मैंने तुझसे उसका पता-ठिकाना आदि पूछा था। मैंने यह भी पूछा था कि किस महीनेसे उसे पैसे भेजने चाहिए। तेरा उत्तर मिलनेपर मैं व्यवस्था करूँगा।

अन्य खर्चोंके बारेमें तूने क्या किया, मैंने यह भी जानना चाहा था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४४२) से।

१. जयप्रकाश नारायणके छोटे भाई।

४७. भाषण : सार्वजनिक सभा, राजापालयम्में[1]

२५ जनवरी, १९३४

आपके मानपत्रों और थैलियोंके लिए आप सबको धन्यवाद। लेकिन जबतक आप अपने मनमें यह संकल्प न कर लें कि आपके हृदयमें अस्पृश्यताकी भावनाको कोई स्थान नहीं होगा तबतक न तो आपके मानपत्रोंसे और न थैलियोंसे ही मुझे कोई सन्तोष मिलनेवाला है। अस्पृश्यताकी भावना छोड़नेका मतलब यह है कि हम यह भुला दें कि हमारे बीच कुछ लोग उच्च हैं और कुछ नीच। आज हम जैसी अस्पृश्यता बरतते हैं उसके पीछे कोई दैवी आधार नहीं हो सकता। आप जानते हैं कि आज बिहारमें क्या हो रहा है, और क्या हुआ है। आपमें से बहुतोंने बिहारका नाम भी शायद न सुना हो। लेकिन जिस तरह यह प्रान्त भारतका अंग है, उसी तरह वह भी है। वहाँ रहनेवाले लोग उसी तरह आपके देशभाई हैं जिस तरह भारत के इस हिस्सेमें रहनेवाले। खबर है कि वहाँ भूकम्पमें लगभग २०,००० लोगोंकी जानें चली गईं। इससे अधिक लोग घायल होकर पड़े हुए हैं और इससे भी ज्यादा लोग बेघर हो गये हैं। यह विपत्ति हमपर क्यों आई? मेरा अनुरोध है कि मेरे साथ आप भी इसपर विचार करें। क्या यह भारी विपत्ति हमारे पापका दण्ड है? वह कौन-सा महापाप है जो हमने किया है और कर रहे हैं? इसे हम अपने लिए एक चेतावनी क्यों न मानें? हमने जो अन्याय किया है, वह हमारे सामने है। धर्म के नामपर हम यह मानते हैं कि हमारे अपने ही देशभाइयोंमें से हजारों हमारे लिए 'अस्पृश्य' हैं। क्या यह उचित है? यह ऐसा अहंकार है जिससे हमें जैसे भी हो, छुटकारा पाना है। मैं चाहूँगा कि जिस प्रकार आपने हरिजन-कार्यके लिए दिया है, उसी प्रकार बिहारके बेचारे दुःखी नागरिकोंके लिए भी अपनी शक्ति-भर दान दें। ऐसा न सोचें कि आपने हरिजनोंके लिए दिया है, इसलिए और नहीं दे सकते। आपके पड़ोसियोंके पास खाना-कपड़ा न हो तो उनकी रक्षा करना आपका कर्त्तव्य है। इसलिए मुझे आशा है कि आप लोग, उनके लिए जो-कुछ करना सम्भव है, अवश्य करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-१-१९३४

1. इस सभामें लगभग दस हजार लोग उपस्थित थे। गांधी-स्वागत-समिति तथा अन्य अनेक संस्थाओंकी ओरसे भी गांधीजी को मानपत्र और थैलियाँ भेंट की गई थीं। एक स्वर्णपदक भी, जिसपर गांधीजी की आकृति खुदी हुई थी, उन्हें भेंट किया गया था। सभाके अन्तमें मानपत्र नीलाम किये गये।

४८. पत्र : लक्ष्मीनारायण अग्रवालको

२६ जनवरी, १९३४

भाई लक्ष्मीबाबु[१],

तुमारे सबके सब चले जानेकी खबर राजेन्द्रबाबुने दी है।[२] आश्वासन क्या दूं? हजारों चले गये वहां आश्वासन देनेका स्थान ही नहीं है। यह मौका है जब हम रिश्तेदार हैं ऐसा समझ लें। तब कोई किसीका मरता ही नहिं है। ऐसी हार्दिक भावना पैदा कर सके तो मृत्यु ही मीट जाता है। क्योंकि जीव-मात्रका मृत्यु तो असंभव है। अिसलिए जन्म और मृत्यु आभास-मात्र है। अिस शुद्ध सत्य जानकर दु:ख-मात्रको भूल कर्तव्यपरायण रहो।

बापुके आशीर्वाद

जीवन साहित्य, पृ० २५६-५७

४९. भाषण : मदुरामें व्यापारियों द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें[३]

२६ जनवरी, १९३४

गांधीजी ने उपस्थित जनोंको 'बनिया भाइयो' कहकर सम्बोधित करते हुए कहा कि यद्यपि मैं यह भाषण मुस्कराकर शुरू कर रहा हूँ, लेकिन मैं जानता हूँ कि आपके हृदय बिहारकी विपत्तिसे व्यथित हैं। उन्होंने कहा कि व्यापारियोंको कंजूसीसे नहीं, बल्कि खुले हाथों चन्दा देना चाहिए।

मैं मानता हूँ कि गरीब हरिजनोंके निमित्त दिया गया एक-एक पैसा हमारी आत्मशुद्धि और उनकी क्षतिपूर्तिके लिए दिया गया है। मैं इस दिलचस्प मानपत्रके दूसरे हिस्सोंका जिक्र नहीं करूँगा। आपने हिन्दीकी चर्चा की है और चरखेके सन्देश-की भी। यदि राष्ट्रीय सम्पत्तिके रक्षक व्यापारी नहीं होंगे तो और कौन होगा?

१. अखिल भारतीय चरखा संघके मन्त्री।

२. बिहारके भूकम्पमें जिला मुजफ्फरपुरमें उनका मकान गिर जानेके कारण उनके सभी घरवाले दबकर मर गये थे।

३. विक्टोरिया एडवर्ड हॉलमें प्रात:काल हुए इस स्वागत-समारोहका आयोजन मदुरा रामनाड व्यापारिक संघ तथा मदुराके बम्बईवासी हिन्दू व्यापारियोंने किया था। गांधीजी को मानपत्र और थैलियाँ भेंट की गई थीं। समारोहकी एक छोटी-सी रिपोर्ट २-२-१९३४ के **हरिजन**में भी प्रकाशित हुई थी।

और यह चरखा ही तो हमारी राष्ट्रीय समृद्धिका प्रतीक है। फिर आपने जो बात कही है वह यदि ईमानदारीके साथ कही है तो मुझे आशा करनी चाहिए कि आपने जिसे राष्ट्रभाषा कहा है, उसे आप बोल और समझ सकेंगे।

और अगर आप चरखेमें सच्ची आस्था रखते हों तो मैं यह आशा करूँगा कि आप हाथ-कती और हाथ-बुनी खादी ही पहनें। अगर आप ऐसा करेंगे तो गरीबसे-गरीब लोगोंके साथ आपका जो व्यापार चलता है उसके लिए आप उन्हें थोड़ा-सा प्रतिदान-भर ही देंगे। इसलिए आपसे मेरा अनुरोध है कि आप अपने मानपत्रमें कही बातोंपर अमल करें।

अब मैं सीधे बिहारके बारेमें कुछ कहूँगा। मुझे अभी-अभी बाबू राजेन्द्रप्रसादका लिखा पत्र मिला है। उन्हें जेलके अस्पतालसे छुट्टी दे दी गई है। वे जिस अस्पतालमें पड़े हुए थे, वहाँ भी भूकम्पके झटके लगे थे। वह अस्पताल मद्रासके जनरल अस्पताल-जितना बड़ा है। आप सोच सकते हैं कि जिसके कारण एक बड़े अस्पतालको भी खाली कर देना पड़े, वह भूकम्प कैसा रहा होगा। और आज वह अस्पताल वीरान हो गया है। ईश्वर ही जाने कि उस अस्पतालके सारे बीमार लोगोंको कहाँ रखा गया है। यह तो एक ही अस्पतालकी बात हुई। जमालपुर[1] शहर, मुजफ्फरपुर और मोतीहारीके अस्पताल तो लगभग मटियामेट ही हो गये हैं। ऐसा समझा जाता है कि कमसे-कम पचीस हजार लोग मृत्युके ग्रास बन गये है। इसका मतलब यह हुआ कि इतने लोग जीते-जी जमीनमें दफन हो गये। इससे अधिक लोग घायल होकर पड़े हुए हैं। इससे भी कहीं अधिक लोग बेघर-बार हो गये हैं। उनके पास खानेको कुछ नहीं रह गया है और वे दोबारा भूकम्प होनेके भयसे आतंकित हैं। वे सब बिलकुल खुलेमें रह रहे हैं, और सो भी ऐसी ठिठुरानेवाली ठंडमें जिसका आप मदुराके लोगोंको कोई अन्दाजा नहीं हो सकता। आप और मैं तो ऐसे आरामदेह सभाकक्ष में बैठ सकते हैं और आपके आनन्दोपभोगमें कोई बाधा नहीं पड़नेवाली है। मैं समझता हूँ कि आपमें से बहुत-से लोग आज रात सिनेमा-थियेटर देखने भी जायेंगे। तो मैं यह चाहता हूँ कि बिहारमें जो-कुछ हुआ है, आप उसपर तनिक विचार करें और तब अपने मनसे पूछें कि आप उन पीड़ित जनोंके लिए कम या ज्यादा क्या कर सकते हैं। मैं चाहता हूँ कि मेरे यहाँ रहते ही आप कंजूसीसे नहीं बल्कि अपनी बड़ी आमदनीका कुछ हिस्सा बिहारके विपद्ग्रस्त लोगोंके साथ बँटानेके खयालसे एक बड़ी थैलीके लिए पैसा इकट्ठा कीजिए। मैं जानता हूँ कि आप सब आस्तिक हैं। हमारे पूर्वजोंने हमें यह मानना सिखाया है कि जब-कभी किसी जातिपर कोई दैवी विपत्ति आती है तो वह हमारे व्यक्तिगत पापोंके ही फलस्वरूप आती है। आप जानते हैं कि जब समयपर वर्षा नहीं होती तो हम यज्ञ करते हैं, देवताओंसे वर्षा देनेकी प्रार्थना करते हैं और उन पापोंको क्षमा करनेके लिए कहते हैं जिनके कारण वर्षा में विलम्ब हुआ हो। और ऐसा केवल यहीं नहीं किया जाता। मैंने इंग्लैंड और दक्षिण आफ्रिकामें भी लोगोंको ऐसा करते देखा है। जब-कभी टिड्डी दलोंका आक्रमण

१. मूलमें यहाँ जबलपुर है जो स्पष्ट ही भूल है।

होता है या नदियोंमें बाढ़ आ जाती है तो वे पश्चात्ताप और उपवासके लिए कुछ दिन तय कर लेते हैं और ईश्वरसे अपनी विपत्ति दूर करने के लिए प्रार्थना करते हैं। और तब मैं यह चाहता हूँ कि मेरी तरह आप भी ऐसा मानें कि बिहारपर आई यह सर्वथा कल्पनातीत विपत्ति मेरे और आपके पापोंका फल है और तब मैं अपने मनसे पूछता हूँ कि हमने वह कौन-सा भीषण पाप किया है जिससे हम ऐसी विपत्तिमें पड़ गये हैं, जिसने हमें और शायद सारी दुनियाको आज स्तम्भित कर दिया है। जहाँतक मानव-स्मृति जाती है, भारतमें पहले कभी इतना भयानक भूकम्प होनेका कोई उदाहरण नहीं मिलता। और मैं आपसे सच कहता हूँ कि मुझे तो यह विश्वास होता जा रहा है कि हमपर यह विपत्ति अस्पृश्यताके इस महापापके फल-स्वरूप ही आई है। मैं आपसे विनती करता हूँ कि आप मेरी बातपर मन-ही-मन हँसकर ऐसा न सोचें कि मैं तो आपके अन्धविश्वासकी वृत्तिको जगा रहा हूँ। मैं ऐसा कुछ नहीं कर रहा हूँ। मैं लोगोंकी अन्धविश्वास-जनित भयकी भावनाओंको जगाऊँ, ऐसा मुझसे हो ही नहीं सकता। मैं भले ही अन्धविश्वासी कहा जाऊँ, लेकिन जिस बातको मैं अपने हृदयकी गहराईमें महसूस कर रहा हूँ, उसे आपसे कहे बिना रह नहीं सकता। इस विषयका विस्तार करनेमें मैं आपका और अपना समय लगाना नहीं चाहता। आप इसे मानें या न मानें, आपकी मर्जी है। यदि आप भी मेरी ही तरह इस बातमें विश्वास करते हों तो आप निर्णय करनेमें तत्परता बरतेंगे और यह मानेंगे कि आज हम जैसी अस्पृश्यता बरतते हैं वैसी अस्पृश्यताका विधान हिन्दू-शास्त्रोंमें नहीं है। आप मेरे इस विचारसे सहमत होंगे कि किसी भी मनुष्यको अस्पृश्य मानना एक भयंकर पाप है। मनुष्यका अहंकार ही उससे ऐसा कहता है कि वह अन्य लोगोंसे श्रेष्ठ है। मैं सच कहता हूँ, इस विषयपर मैं जितना अधिक सोचता हूँ उतना ही अधिक मुझे यह प्रतीत होता जाता है कि कोई आदमी अपनेको किसीसे भी उच्चतर माने, इससे बड़ा पाप कुछ नहीं हो सकता। मुझे संसारके जितने भी नेक और ज्ञानी लोगोंके बारेमें कोई जानकारी है — और मुझे उनके बारेमें काफी जानकारी है — उन सबने यही कहा है कि मैं तो तुच्छातितुच्छ हूँ। लेकिन हमारा दुर्भाग्य है कि यहाँ तो हमारा जीवन ऊँच-नीचके विचारसे जकड़ा हुआ है। आप सब तो समझदार-सयाने व्यापारी हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप इस सत्यको महसूस कीजिए। यदि आप इस सत्यको महसूस करेंगे और यह भुला देंगे कि ऐसा एक भी व्यक्ति है जिसे 'अस्पृश्य' और अपनेसे नीच माना जा सकता हो तथा यदि आपको यह लगे कि आपको कमसे-कम इतना प्रायश्चित्त तो करना ही चाहिए, तो निश्चय ही आप बिहारको सहायता भेजने के लिए जल्दीसे-जल्दी कदम उठायेंगे। मैं चाहूँगा कि व्यापारी संघके सदस्य तथा आप गुजराती भाई इस बातको याद रखें और इस दिशामें आज कुछ ठोस कार्य करके मुझे सूचित करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २७-१-१९३४

५०. भाषण : नागरिक अभिनन्दनके उत्तरमें[1]

२६ जनवरी, १९३४

नगरपालिका परिषद्के सदस्यो और मित्रो,

सबसे पहले तो मैं आप लोगोंसे अपनी इस त्रुटिके लिए क्षमा माँग लेता हूँ कि आपने मुझे मानपत्र देनेके लिए अपने कार्यक्रममें जो समय निर्धारित किया था, मैं उसका पालन नहीं कर सका। बात यह है कि यह सारा विश्व-व्यापार जिसकी इच्छाके अनुसार हो रहा है, वह अपनी बलीयसी इच्छामें किसी प्रकारका हस्तक्षेप नहीं होने देता। इसलिए कल अपने सारे प्रयत्नोंके बावजूद हम लोग मदुरामें रातके सवा ग्यारहके पहले नहीं आ सके। आपने मुझे जो मानपत्र दिया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। आपने उसमें हाथ-कताई, हिन्दी, और मुझे प्रिय अन्य कुछ प्रवृत्तियोंका उल्लेख किया है, इससे मैं बहुत खुश हूँ। और चूँकि आप मानते हैं कि हाथ-कताई एक ऐसा गृह-उद्योग है जो भारतके सात लाख गाँवोंके लिए आवश्यक है इसलिए मैं यह आशा करूँगा कि इस परिषद्के सदस्य अपने घरोंमें तथा और जिस तरह हो सकता है उस तरह हाथ कती और हाथबुनी खादीके उपयोगका आग्रह करेंगे।

मुझे यह देखकर खुशी हुई है कि आप लोग राष्ट्रभाषाके रूपमें हिन्दीका महत्त्व स्वीकार करते हैं। मेरा असंदिग्ध विश्वास है कि जिस तरह अन्तर्राष्ट्रीय और व्यापारिक प्रयोजनोंके लिए अंग्रेजीका ज्ञान बहुत महत्त्वपूर्ण है उसी प्रकार अन्तर्प्रान्तीय व्यवहारके लिए हिन्दीका ज्ञान भी महत्त्वपूर्ण है। फिर भी अभी वह स्थिति नहीं आ पाई है कि मुझ-जैसे यायावर आपके सामने राष्ट्रभाषामें बोलें। कितना अच्छा हो, यदि आप इसे सम्भव बना दें!

यहाँ हिन्दू-मुस्लिम समस्या नहीं है, इस बातपर मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूँ। कितना अच्छा हो यदि आपका यह उदाहरण संक्रामक सिद्ध हो और हम सारे देशमें हिन्दू-मुस्लिम मतभेदोंकी याद ही भूल जायें!

आपने मुझे बताया है कि जहाँतक हरिजनोंका सम्बन्ध है, शिक्षा तथा अन्य नागरिक सुविधाओं और अधिकारोंके मामलोंमें आप उन्हें समान अवसर देते हैं। मुझे विश्वास है या कमसे-कम मैं ऐसी ही आशा रखता हूँ कि इस अनुच्छेदमें आपने जो-कुछ कहा है, वही सब आपका आशय नहीं है। कारण, आपने जैसा कहा है वैसा ही अगर आप मानते भी हों तब तो उसका मतलब यह हुआ कि हरिजन लोग अभीतक जिन भारी कठिनाइयोंमें जी रहे हैं, उन्हीं कठिनाइयोंमें उन्हें सदा जीना

१. यह भाषण मदुरा नगरपालिकाके अध्यक्ष द्वारा मानपत्र पढ़े जानेके बाद दिया गया था।

पड़ेगा, क्योंकि उन्हें समान अवसरोंसे अधिक कुछ नहीं मिलनेवाला है। आप उन्हें समान अवसर तभी दे पायेंगे जब उनके मार्गकी बाधाओंको हटा देंगे। मैं अपना आशय स्पष्ट कर दूँ। अभी मैं अपने मित्र, मेरे भाषणका अनुवाद करनेवाले इन भाई श्री ए० वैद्यनाथ अय्यरके मार्गदर्शनमें तीन 'चेरियों' को देखकर आया हूँ। और जैसा कि मेरा दावा है, मैं सफाईकी स्थितिको तुरन्त सही-सही परख लेता हूँ, सो मुझे यह जानते देर नहीं लगी कि नगरपालिकाने — क्षमा करें तो कहूँ — इन अत्यन्त उपयोगी सेवकोंके लिए बहुत कम काम किया है। आप यह तो स्वीकार करेंगे कि ऐसा कहना उपहासास्पद होगा कि इन 'चेरियों' में रहनेवालों को अपने मनके मुताबिक रहने-सहनेके वैसे ही अवसर प्राप्त हैं जैसेकि मदुराके उन नागरिकोंको, जो बड़ी-बड़ी इमारतोंमें रहते हों, प्राप्त हैं। उक्त 'चेरियों' में से एक चारों ओरसे पानी और नालोंसे घिरी हुई है। बरसातमें वह निश्चय ही आदमीके रहने लायक जगह नहीं रह जाती होगी। दूसरी बात यह है कि वह सड़ककी सतहसे नीची जगहमें बसी हुई है और सारी जगह बरसातमें पानीसे भर जाती है। तीनों चेरियोंमें झोंपड़ियाँ जैसे-तैसे ही बनी हुई हैं। सड़कें और गलियाँ किसी तरतीबसे नहीं बनी हुई हैं और कई जगहोंकी झोंपड़ियोंमें, जिन्हें वास्तवमें निकास कहा जा सके, ऐसे निकास बिलकुल नहीं हैं। सभी झोंपड़ियाँ निरपवाद रूपसे इतनी कम ऊँची हैं कि अपनेको झुकाकर दोहरा किये बिना आप उनमें आ-जा ही नहीं सकते। और उस जगहकी देख-भाल और रख-रखावकी जो व्यवस्था है वह तो निश्चय ही कहीं भी सफाईके न्यूनतम स्तरतक भी नहीं पहुँच पाती। इस बातसे मेरे मनको सन्तोष मिला है कि आपने प्रकाश और पानीकी सुविधाओंसे युक्त आदर्श 'चेरियाँ' बनानेका संकल्प किया है। और क्या मैं आपसे कह सकता हूँ कि ऐसे सभी मामलोंमें समयका बड़ा महत्त्व होता है? मेरी इच्छा है कि इस संकल्पको पूरा करनेके लिए आपकी एक कड़ी समय-सीमा हो, जिसके अन्दर आप मौजूदा झोंपड़ियोंको तोड़कर इन गरीब लोगोंके लिए किसी हदतक उस तरह रहनेकी व्यवस्था कर दें जिस तरह मैं और आप रहते हैं। और मैं आपको यह स्मरण दिला दूँ कि आप एक बातमें बड़े भाग्यशाली हैं। वह यह है कि आपके यहाँ ऐसी बहनोंका एक दल है जो अपना पूरा ध्यान हमारे इन सह-नागरिकोंकी अवस्था सुधारनेमें ही लगा रही हैं। आप उनकी शक्ति और प्रयत्नोंका उपयोग बिना कोई दाम चुकाये कर सकते हैं। आपके मानपत्रके लिए मैं आपको एक बार फिर धन्यवाद देता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २७-१-१९३४

५१. भाषण : महिलाओंकी सभा, मदुरामें[1]

२६ जनवरी, १९३४

महिलाओंको सम्बोधित करते हुए गांधीजी ने कहा कि महिलाओंकी ऐसी बड़ी सभा देखकर मुझे बड़ी खुशी हो रही है। आप इतनी बड़ी संख्यामें आईं, इससे मेरे प्रति आपका प्रेम तो प्रकट होता ही है, साथ ही यह भी प्रकट होता है कि मैं जिस कामसे खास तौरसे आया हूँ उसका भी आप अनुमोदन करती हैं। आपको अपना यह प्रेम अस्पृश्यताको मिटाकर प्रकट करना चाहिए। अस्पृश्यता एक सबसे बड़ा पाप है। किसीको भी यह नहीं कहना चाहिए कि मैं अमुक आदमीसे बड़ा हूँ। चाहे यह बात एक सवर्ण हिन्दू दूसरे सवर्ण हिन्दूके सन्दर्भमें कहे या यह किसी हरिजनके सन्दर्भमें कहे, दोनों ही प्रसंगोंमें बात बुरी है। उन्होंने कहा कि पैसेसे सहायता करके भी आपको अपना प्रेम प्रकट करना चाहिए, हालाँकि पैसा देना तो, आपको जो-कुछ करना चाहिए, उसमें से कमसे-कम है। वह तो आपको जो करना है वह करने की इच्छाका एक प्रतीक-मात्र होगा। अन्तमें उन्होंने उनसे अनुरोध किया कि चूँकि मैं अब सभासे चला जा रहा हूँ इसलिए आप जो भी पैसा या आभूषण आदि देना चाहें, मीराबहनके हाथोंमें दे दें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-१-१९३४

५२. भाषण : सार्वजनिक सभा, मदुरामें[2]

२६ जनवरी, १९३४

इन तमाम मानपत्रों, थैलियों और उपहारोंके लिए मैं आपका बड़ा आभारी हूँ। मैं मदुरा कोई पहली ही बार नहीं आया हूँ, लेकिन आज अपने सामने जितना बड़ा जनसमुदाय देख रहा हूँ उतना बड़ा यहाँ पिछली बार देखनेको नहीं मिला था।

१. यह सभा वेस्ट मसी थियेटरमें तीन बजे दिनमें हुई थी और इसमें पाँच हजारसे अधिक स्त्रियाँ उपस्थित थीं। अनेक महिला-संस्थाओंने गांधीजी को मानपत्र और थैलियाँ भेंट की थीं। कुछ महिलाओंने अपने आभूषण भी दानमें दिये थे।

२. यह सभा मानाल रोडके मैदानमें पौने छः बजे शामको हुई थी। सभामें काफी लोग इकट्ठे हुए थे। गांधीजी को मानपत्र और थैलियाँ भेंट की गई थीं। जनताकी ओरसे भेंट की गई एक थैली ४,९४४ रुपये की थी।

आशा करता हूँ कि यह आपके अस्पृश्यतासे छुटकारा पानेके संकल्पका निश्चित संकेत है। अब मुझे आपके सामने यह बात दोहराने की जरूरत नहीं है कि सवर्ण हिन्दू ऐसा मानकर कि अस्पृश्यता एक दैवी नियम है, मानवताके विरुद्ध एक बहुत बड़ा पाप कर रहे हैं। मैंने यहाँतक कह डालनेमें भी संकोच नहीं किया है कि बिहारके भूकम्पके रूपमें भारतपर जो विपत्ति आई है वह हमारे अस्पृश्यताके महापापके लिए हमें ईश्वरके द्वारा दिया गया समुचित दण्ड है। लेकिन, यह चाहे सच हो या नहीं, आपको बिहारके लोगोंके कष्टोंको दूर करने के लिए कदम उठाना ही चाहिए। मेरा यह कहना शायद गलत न होगा कि जब हमपर ऐसे प्राकृतिक प्रकोप होते हैं तो उनका केवल भौतिक कारण ही नहीं होता, उनके कुछ आध्यात्मिक परिणाम भी होते हैं। अगर यह मेरा अन्धविश्वास हो तो ऐसा अन्धविश्वास है जो लगभग सारी मानवतापर हावी है। आप चाहें तो मेरे इस विश्वासको अस्वीकार कर सकते हैं। लेकिन हमें जिस अकर्मण्यताने आज अभिभूत कर रखा है और हमारी विचारशक्तिको कुण्ठित कर दिया है, यदि हम उससे ऊपर उठ सकें तो शीघ्र ही हमें यह बात दिनके प्रकाशके समान स्पष्ट दिखाई देने लगेगी कि आज जैसी अस्पृश्यता बरती जाती है उसका औचित्य तो किसी भी तरहसे सिद्ध किया ही नहीं जा सकता। इसलिए यह एक ऐसी बुराई है जो हमारे हृदयमें प्रवेश कर गई है और जिसका हममें से प्रत्येकसे सम्बन्ध है। यह रोग ऐसा नहीं है जिसका कोई कानूनी इलाज किया जा सके या जिसे संसद्के निर्णयसे दूर किया जा सके। इसका उपचार तो पूरी तरह इसी बातपर निर्भर है कि हम अपने हृदयको बदलें। जैसाकि मैं बराबर कहता आया हूँ, यह आत्मशुद्धि और [जिनके प्रति हमने अन्याय किया है उनकी] क्षतिपूर्त्तिका अनुष्ठान है। आपने जो भेंटें दी हैं वे तो आप जो क्षतिपूर्त्ति करनेको तैयार हैं उसकी पेशगी-भर है। वह क्षतिपूर्त्ति इस बातमें निहित है कि प्रत्येक सवर्ण हिन्दू माने कि ऐसा कोई भी आदमी नहीं है जिसे जन्मतः अस्पृश्य कहा जा सके। इसका मतलब है कि हमें अपने अन्दरसे इस अदृश्य और अहंकारपूर्ण धारणाको निकाल देना चाहिए कि हम अन्य लोगोंसे श्रेष्ठ हैं। इस धरतीपर कोई भी छोटा या बड़ा नहीं है। हम सब एक ही ईश्वरकी सन्तान हैं और इसलिए हम सब ईश्वरकी दृष्टिमें निस्सन्देह समान हैं। और मेरा विश्वास है कि अगर आप ऊँच-नीचकी मान्यतासे छुटकारा पा सकें तो सभी विभिन्न समुदाय और वर्ग एकता और मेलजोलके साथ रह सकते हैं।

आगे गांधीजी ने मदुराकी एक विशेष समस्याकी चर्चा की। उन्होंने कहा कि यह समस्या मदुरामें बहुत उग्र रूप लेती जा रही है। इसका सम्बन्ध हरिजनोंके कल्याणसे है। जैसाकि मैं पहले ही तथ्य-आँकड़े देकर समझा चुका हूँ, हरिजन वर्गकी कई हजार स्त्रियाँ चरखेसे प्रतिदिन पैसा-दो पैसा कमा लेती हैं। लेकिन कुछ व्यापारी मिलका कपड़ा खादीके नामपर बेचते हैं। इससे हरिजन लोग, उनके हाथों जो चन्द पैसे जाते थे, उनसे भी वंचित रह जाते हैं। ऐसा कहकर मैं मिलके कपड़ेकी निन्दा नहीं कर रहा हूँ। मैं तो सिर्फ यह चाहता हूँ कि मिलके कपड़ेको

खादी बताकर नहीं बेचना चाहिए। साथ ही खरीदारोंको भी जाँच-परखकर पता कर लेना चाहिए कि जो कपड़ा वे खरीद रहे हैं वह खादी है या नहीं।[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-१-१९३४

५३. भाषण : हिन्दी प्रचार सभा, मदुरामें[2]

२६ जनवरी, १९३४

गांधीजी ने . . . प्रमाणपत्र पानेवालों तथा पुरस्कार-विजेताओंको बधाई देने के बाद हिन्दी भाषाकी अच्छाइयोंके बारेमें बोलना शुरू किया। उन्होंने बतलाया कि हिन्दी भाषा सभी भारतीय भाषाओंकी सजातीय होनेके कारण भारतीय जनतामें विचारोंके आदान-प्रदानका सर्वाधिक सरल माध्यम है। फिर, अंग्रेजी भाषासे भिन्न, हिन्दी भाषाका अपना वातावरण पूरी तौरपर भारतीय ही है। भारतीय जीवनके सभी क्षेत्रोंमें हिन्दी भाषा विचारों तथा भावनाओंके आदान-प्रदानके सामान्य माध्यमकी तरह काम करती रही है। व्यवसाय तथा वाणिज्यमें लगे लोगोंके लिए यह विशेष उपयोगी है। कोई भी रोजाना एक घंटा समय देकर छः महीनेमें हिन्दीकी काम-चलाऊ जानकारी हासिल कर सकता है, परन्तु ज्यादा जरूरी तो यह है कि उसे इसके बाद हिन्दीसे लगातार सम्पर्क बनाये रखना चाहिए, जिससे कि पढ़ा-लिखा भी कहीं भूल न जाये। हाँ, हिन्दी साहित्यमें दक्षता प्राप्त करने के लिए इससे कहीं अधिक समय दरकार है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-१-१९३४

१. सभाके अन्तमें गांधीजी ने मानपत्रों और भेंटकी गई वस्तुओंको नीलाम किया।

२. गांधीजी को भेंट किया गया मानपत्र हिन्दीमें था। उसके बाद गांधीजी ने सुयोग्य विद्यार्थियोंको पुरस्कार तथा प्रमाणपत्र वितरित किये। सभाकी समाप्तिपर गांधीजी ने मानपत्र तथा भेंटमें मिली अन्य वस्तुओंकी नीलामी की।

५४. भाषण : मजदूरोंकी सभा, मदुरामें[1]

२६ जनवरी, १९३४

साथी मजदूरो,

अपने-आपको आप लोगोंके बीच पाकर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है। मैं जान-बूझकर ही आप लोगोंको 'साथी मजदूर' कह रहा हूँ। जब मेरी अवस्था २३ या २४ वर्षकी रही होगी, तभी मैं बालसुन्दरम्के[2] सम्पर्कमें आया था। बालसुन्दरम् एक गिरमिटिया मजदूर था। मुझे उसका मुकदमा लड़नेका सौभाग्य मिला था। तभी मैंने मजदूरोंके कष्टोंकी काफी-कुछ जानकारी हासिल की थी। फिर मजदूरों और मेरे बीचके सम्बन्ध दिन-दिन अधिक प्रगाढ़ होते गये; और मैंने अपना भाग्य पूरी तरहसे उनके साथ जोड़ दिया। मैं स्वयं तो गिरमिटिया मजदूर नहीं बन गया, लेकिन उन लोगोंने महसूस कर लिया कि मैं स्वयं उन्हींमें से एक हूँ। यही कारण है कि मैं अपने-आपको मजदूर कहता हूँ। अब मैं आपको बतलाता हूँ कि आत्म-शुद्धिका यह आन्दोलन असलमें है क्या ?

मैंने अभी-अभी सुना है कि जिन दिनों मैं यरवडा जेलमें उपवास कर रहा था, सबसे पहले आप लोगोंने ही अपनी सहानुभूति प्रकट करने के लिए एक सभा की थी। उस दौरान आप लोगोंने काफी काम किया। पर मुझे भरोसा नहीं कि आप उस सबका ठीक-ठीक अर्थ भी समझते हैं। आप जानते ही हैं कि मजदूर भी कई बड़े-बड़े तबकोंमें बँटे हैं और हर तबका अपने-आपको दूसरोंके मुकाबले ऊँचा मानता है। और जबतक आपके अन्दर यह भावना रहेगी कि कुछ लोग आपसे नीचे और कुछ आपसे ऊँचे हैं, तबतक यही मानिए कि आप अपने अन्दर इस आन्दोलनकी भावना पैदा नहीं कर पाये हैं। इसलिए आपको हृदयमें महसूस करना चाहिए कि इस भेदभावमें कोई सार नहीं और आपको इसे मिटा देना चाहिए। मैं जानता हूँ कि आप लोगोंके बीच ही अनेक सवर्ण हिन्दू और अनेक हरिजन मजदूर भी हैं। यदि आपने इस आन्दोलनको भली-भाँति समझ लिया है तो आपको बिलकुल भूल जाना चाहिए कि कोई अस्पृश्य भी है। और आपको प्रत्येक मजदूरको अपने बराबर, अपने और अपने सगे भाईके बराबर ही समझना चाहिए। यदि आप इस अवस्था तक पहुँच सकें तो आप तुरन्त समझ लेंगे कि वह स्थिति आपके अपने और समूचे देशके हितकी दृष्टिसे कितनी सुखद है। मित्रो, इसलिए मैं आपको बतलाना चाहता हूँ कि इस आत्म-शुद्धिके आन्दोलनका तकाजा है कि आप नशीले पेयोंका सर्वथा

१. मदुरा मिल मजदूर संघ द्वारा यह सभा मिलके स्कूलके अहातेमें आयोजित की गई थी। पाँच हजारसे अधिक मजदूर उसमें उपस्थित थे। २-२-१९३४ के **हरिजन**में भी इसका विवरण दिया गया था।

२. देखिए खण्ड ३९, पृ० १२१-२२।

परित्याग कर दें। यदि आपमें से कुछ लोग मांस और गोमांस खाते हैं तो उनको उसका परित्याग कर देना चाहिए। आपको जूआ खेलना बिलकुल छोड़ देना चाहिए। कर्ज मत लीजिए। और अगर आपके बीच कुछ मुसलमान मजदूर भी हों, तो आपको उनके साथ ठीक व्यवहार करके स्नेहपूर्वक रहना चाहिए। वे जो भी काम करते हों, उसमें आपको निजी तौरपर दिलचस्पी लेनी चाहिए।

अपने मालिकोंसे उचित व्यवहार, पर्याप्त मजूरी और समुचित आवासकी माँग करने का आपको पूर्ण अधिकार है, लेकिन आपसे यह भी अपेक्षित है कि आप उस मजूरीके एवजमें पूरी ईमानदारीसे समुचित सेवा करें। आप यदि थोड़ा विचार करें, तो देखेंगे कि किसी संस्थान-विशेषमें मजदूरोंकी हैसियतसे काम करने के कारण ही आप आंशिक रूपसे उस संस्थानके मालिक भी हो जाते हैं — ठीक उसी तरह जिस तरह उसमें धन लगानेवाले उसके मालिक होते हैं। श्रम भी वास्तवमें रुपये-पैसेकी तरह एक प्रकारका धन ही है। संस्थान-विशेषमें धनकी भाँति श्रम भी विनियोजित किया जाता है। जिस प्रकार धनके बिना आपका श्रम बेकार रह जायेगा, उसी प्रकार श्रमके अभावमें संसारकी सारी पूँजी बेकार हो जायेगी। इसलिए आप जिस संस्थानमें अपना श्रम लगा रहे हैं, उसपर आपको गर्व होना चाहिए। आपको एक ओर तो आंशिक स्वामीकी हैसियतसे अपने अधिकारोंपर आग्रह करना चाहिए और दूसरी ओर संस्थानको अपना ही समझकर उसके लिए ईमानदारीसे अपनी सेवाएँ अर्पित करनी चाहिए।

और अन्तमें, मुझे बड़ी खुशी है कि आपने हरिजन-कार्यके लिए एक छोटी-सी थैली भेंट की है और फोटोफ्रेमोंकी आपकी भेंटके लिए भी मैं आपका आभारी हूँ। हरिजन-कार्यके लिए उनकी भी नीलामी की जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-२-१९३४

५५. तार: जमनालाल बजाजको

मदुरा दक्षिण
२७ जनवरी, १९३४

जमनालाल बजाज
गोंदिया

तार अभी-अभी मिला। कार्यक्रममें रद्दोबदल तभी करना जब पटनामें तुम्हारा रहना सचमुच जरूरी लगे। अन्यथा नहीं।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १२२

५६. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२७ जनवरी, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला; मैं तुम्हें पहले ही लिख चुका था। उससे तुम्हें पता चला होगा कि मैं सचमुच तुमको साबरमती भेजनेकी बात कर रहा था, चाहे आजमाइशके तौरपर ही सही।[1]

आशा है, तुम स्वस्थ होगी। मैंने तुमको बतलाया था या नहीं कि जर्मन मित्र कुछ दिनोंके लिए हमारे पास रहे थे। उन्होंने अपने-आपको काफी उपयोगी बना लिया है।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

५७. भाषण : नगर-परिषद्की सभा, कराईकुडीमें

२७ जनवरी, १९३४

सभापति महोदय तथा नगर-परिषद्के सदस्यगण,

आपने जो मानपत्र भेंट किया है, उसके लिए और उसके अनुवादकी एक प्रति मुझे देनेके लिए भी मैं आपका आभारी हूँ। आपने मुझे जो थैली भेंट की है उसके लिए भी मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मेरा खयाल है कि इसमें केवल नगरनिगमका नहीं, बल्कि हरिजनोंकी ओरसे आया चन्दा भी शामिल होगा।

आपने कहा है कि परिषद्में विभिन्न महती योजनाएँ विचाराधीन हैं और मन्दी का वर्तमान दौर समाप्त होते ही उनको तुरन्त क्रियान्वित करनेका प्रयास किया जायेगा। मैं तो कहूँगा कि इतना काफी नहीं है। इस बातको अगर हम न लेखें कि यह कथन बड़ा अस्पष्ट है, तो भी यह नहीं दिखाई पड़ता कि इसके पीछे उद्देश्यकी एक निश्चित, स्पष्ट प्रतीति है और फिर हरिजनोद्धारका काम अच्छे दिन फिरनेकी घड़ीतक टाला भी नहीं जा सकता। अच्छे दिन तो तभी फिरेंगे जब हम हरिजनोंके साथ समुचित व्यवहार करना शुरू कर देंगे।

१. देखिए "पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको", पृ० ४४।

मेरे समूचे अस्तित्वको, मेरी आत्माको एक निश्चित साँचेमें ढालनेवाले सिद्धान्तको मैं यहाँ अधिक विशद रूपमें प्रस्तुत करना जरूरी नहीं समझता। परिषद्के सदस्यगण यदि उन बातोंपर थोड़ा भी ध्यान देते रहे हैं जो मैं विभिन्न स्थानोंपर कहता आया हूँ या उन बातोंपर ध्यान देंगे, जो अब चेट्टिनाडके अपने दौरेमें विभिन्न स्थानोंपर कहूँगा, तो मेरा खयाल है कि आप समझ लेंगे कि मैं सचमुच क्या चाहता हूँ और नगरपालिकाओंके साधनोंको देखते हुए उनके लिए कहाँतक कितना कर पाना सम्भव है। मैंने जो सुझाव रखे हैं वे इतने भारी नहीं हैं कि नगरपालिकाओंके लिए अशक्य हों। यहाँ आपने नागरिकोंकी भलाईके लिए जो काम किये हैं और इसके लिए जितनी उद्यमशीलताका परिचय दिया है, मुझे उस सबकी पूरी जानकारी है। हरिजनोद्धारके कामके लिए दस हजार रुपये देनेवाले सज्जनको मैं धन्यवाद देता हूँ। मैं मानपत्रके लिए एक बार फिर अपना आभार प्रकट करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-१-१९३४

५८. भाषण : सार्वजनिक सभा, कराईकुडीमें[1]

२७ जनवरी, १९३४

आप लोगोंके साथ अपनी पहचान फिर ताजा करके मुझे बड़ी खुशी हुई है। आपके मानपत्रों और हरिजन-कार्यके लिए भेंट की गई थैलियोंके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आनन्द-भवनके मालिकने आज शाम मुझे हरिजन-कार्यके लिए १५१ रुपये और बिहारके पीड़ितोंके लिए १५१ रुपयेके दान दिये हैं। मैं चाहता हूँ कि आप सभी उनका अनुकरण करें। आपने आज बाबू राजेन्द्रप्रसाद द्वारा निकाली गई एक सूचना देखी होगी; उसकी ताईद पण्डित मदनमोहन मालवीयने की है। सूचनामें समूचे भारतको आनेवाले कलका दिन बिहार-पीड़ितोंको राहत पहुँचानेके दिनकी तरह मनानेको आमन्त्रित किया गया है। इसका मतलब है कि सभी भारतवासियोंको बिहारके अपने देश-भाइयोंके भौतिक कष्ट कम करनेके लिए अपनी-अपनी सामर्थ्य-भर योग देनेका आमन्त्रण दिया गया है। आप जानते ही हैं कि इस विपत्तिने कई बड़ी-बड़ी जगहोंको बिलकुल उजाड़ बना दिया है। इसलिए मुझे आशा है कि चेट्टिनाडके आप लोग कलका दिन यों ही नहीं गुजरने देंगे, सुन्दर बिहार-प्रदेशमें इतने अधिक कष्ट पानेवाले अपने भाइयोंके प्रति ठोस ढंगसे सहानुभूति प्रकट किये बिना नहीं रहेंगे। हमें अपने-आपको इस भ्रमका शिकार नहीं बनने देना चाहिए कि उनके कष्ट कम करनेके लिए चन्द रुपये या कुछ कंगन वगैरह दे देनेसे ही हमारा कर्त्तव्य पूरा हो जायेगा। मैं चाहता हूँ कि आप कलका दिन अपना हृदय टटोलनेमें लगायें और

१. सभामें लगभग १५,००० लोग उपस्थित थे। गांधीजी को अनेक मानपत्र तथा थैलियाँ भेंट की गई थीं। सभाकी समाप्तिपर उनकी नीलामी की गई थी।

सोचें कि इस विपत्तिके कारण क्या हैं। भू-भौतिकविद और अन्य वैज्ञानिक लोग निस्सन्देह आपको बतायेंगे कि ऐसी विपत्तियोंके प्राकृतिक और भौतिक कारण क्या हैं। परन्तु संसार-भरके धर्मपरायण लोगों, विशेषकर हिन्दुओंका विश्वास रहा है कि ऐसी विपत्तियोंके पीछे कुछ आध्यात्मिक कारण होते हैं। मेरा सच्चा और गहरा विश्वास है कि ऐसी विपत्तियोंके आनेका कारण मानवता और ईश्वरके प्रति हमारा कोई बड़ा पाप है। एक लम्बे अर्सेसे, एक जमानेसे, हम अपने भाइयोंके साथ भाइयों-जैसा उचित व्यवहार नहीं करते रहे हैं। अब क्या इस विपत्तिसे हमें चेत नहीं जाना चाहिए, इसके बाद भी क्या हमें अपने जीवनके तौर-तरीकोंमें सुधार नहीं कर लेना चाहिए? इस भूकम्पने बड़े-बड़े स्थान धराशायी कर दिये और हजारों लोगोंको बहुत ज्यादा नुकसान पहुँचाया है, परन्तु मनुष्यने अपनी मदान्धताके कारण अपने ही भाइयों को जो हानि पहुँचाई है उसने हरिजनोंको शारीरिक रूपसे ही बर्बाद नहीं किया है, उनकी आत्माको भी बुरी तरह क्षतविक्षत कर दिया है। इसीलिए जब आप लोग बिहारकी विपद्ग्रस्त जनताके प्रति अपने कर्त्तव्यपर विचार कर रहे होंगे — और मैं चाहता हूँ कि आप उनके प्रति अपने कर्त्तव्यपर विचार करें — तो मुझे आशा है कि आप यह भी समझ जायेंगे कि इस विपत्ति और मनुष्य द्वारा आरोपित इस अस्पृश्यताके बीच एक निश्चित सम्बन्ध मौजूद है। यह ईश्वरीय विधान कभी हो ही नहीं सकता कि मानव-समाजका एक वर्ग दूसरे वर्गका उत्पीड़न करे। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप कल इस संकल्पके साथ बिहारके पीड़ितोंके लिए अपने चन्दे भेजें कि अब आगेसे आप अस्पृश्यताको कायम नहीं रखेंगे और किसी भी मनुष्यको अपनेसे नीचा नहीं मानेंगे। अन्य पक्ष चाहे कुछ कहे, मैं तो यही मानता हूँ कि हिन्दू-शास्त्रोंमें ऐसा कुछ भी नहीं कहा गया है जिसके आधारपर हम, आज हमारे बीच जैसी अस्पृश्यता बरती जाती है, उसका कोई भी औचित्य सिद्ध कर सकें। यहाँ चेटिट्नाडमें ईश्वरने आपको समृद्धि दी है, इतनी समझदारी भी दी है कि आप समझ सकते हैं आज इन हरिजनोंकी दशा कितनी बुरी है। मेरी इच्छा है कि यहाँ मेरे चारों ओर उपस्थित आप सभी युवक और साथ ही युवतियाँ भी इन हरिजनोंकी दशाकी जानकारी हासिल करें और उसे सुधारनेमें अपनी बुद्धि तथा भौतिक साधन दोनों ही लगायें। मैंने इस आन्दोलनको आत्म-शुद्धि और प्रायश्चित्तका आन्दोलन कहा है। इन महिलाओं और पुरुषोंको मैं इस आन्दोलनमें पूरा-पूरा हाथ बँटानेके लिए आमन्त्रित करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २९-१-१९३४

५९. भाषण : सार्वजनिक सभा, देवकोट्टामें[1]

२७ जनवरी, १९३४

उन्होंने मानपत्रका उत्तर देते हुए कहा कि भेंटमें थैली पाकर उनको जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ, क्योंकि उनको उम्मीद थी कि देवकोट्टासे एक बड़ी राशि मिलेगी। पुरानी पहचानको फिरसे ताजा करनेके लिए अपने-आपको उनके बीच पानेपर गांधीजी ने खुशीका इजहार किया। इसके बाद उन्होंने बिहारके भूकम्प-पीड़ितोंके लिए खुले हाथों चन्दा देनेकी अपील की। वहाँ हजारों लोग जमीनमें जिन्दा दफन हो गये और घायलोंकी तादाद तो कहीं ज्यादा है। इससे भी अधिक लोग बेघरबार होकर कपड़े-लत्तों और खाने-पीनेकी चीजोंके बिना खुले आसमानके नीचे पड़े सर्दीसे काँप रहे हैं। उनको राहत दरकार है। गांधीजी ने अपील की कि अगला दिन अखिल भारतीय बिहार-दिवसकी तरह मनाया जाये और बिहारमें पीड़ितोंके कष्ट कम करनेके लिए उदारतापूर्वक चन्दे दिये जायें। उन्होंने आशा प्रकट की कि देवकोट्टाके युवक मान-पत्रमें दिया गया वचन पूरा करेंगे और बिहारके पीड़ितोंके लिए घर-घर जाकर एक बड़ी राशि जमा कर लेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-१-१९३४

६०. तार : राजेन्द्रप्रसादको

मदुरा
[२८ जनवरी, १९३४ या उसके पूर्व]

हर सम्भव प्रयास कर रहा हूँ। मगनलाल प्राणजीवनको चन्देके लिए १४ मुगल स्ट्रीटपर रंगून तार करें। तार द्वारा स्थिति सूचित करें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१-१९३४

१. इस सभामें १६,००० से अधिक लोग मौजूद थे। गांधीजी को मानपत्रके साथ एक थैली भेंट की गई थी। सभाको समाप्तिपर मानपत्र तथा भेंटोंकी, जिनमें सोने तथा चाँदीकी चीजें भी थीं, नीलामी की गई थी।

६१. पत्र : प्रेमी जयरामदासको

२८ जनवरी, १९३४

प्रिय प्रेमा,

तुम्हारा कार्ड मिल गया। पिताजी को बता देना कि मैं लगभग २३ फरवरी तक तमिलनाडुका दौरा करूँगा, उसके बाद दस दिनतक कर्नाटकमें रहूँगा। उसके बादका कार्यक्रम अभी निश्चित नहीं हुआ है।

सप्रेम,

तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च :]

आशा है, डॉ० चोइथराम भले-चंगे होंगे।

श्री प्रेमाबहन
प्रेमभवन, मार्केट रोड
हैदराबाद
सिंध

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२४८) से; सौजन्य : जयरादास दौलतराम

६२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२८ जनवरी, १९३४

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र अभी-अभी पूरा पढ़ सका। तीन बार पढ़ना पड़ा।

मैं तो यह जानता ही था कि तू मुझसे मिलने आनेका विचार नहीं करेगी। परन्तु जब मैंने सुना कि तेरी आनेकी इच्छा हुई है तब मैंने संयमकी आवश्यकता बताई, परन्तु आनेसे रोका नहीं। तुझे और प्रतिज्ञा लेनेवाले अन्य लोगोंको तत्काल जेल-मन्दिरमें पहुँच जानेका विचार ही शोभा देता है। परन्तु जिनका मन विचलित हो गया हो उनसे जबरदस्ती थोड़े ही की जा सकती है?

तेरे पत्रसे लगता है कि यह पत्र तुझे मिलेगा या नहीं, इसमें सन्देह है।

तेरी पूनियोंका सूत बहुत प्रेमसे सँभालकर तो रखा ही था। उसपर महादेवके सुन्दर अक्षरोंमें लिखी हुई चिटें भी हैं। परन्तु उपवासके दौरान उसका क्या हुआ, इसका मुझे खयाल नहीं। सम्भव है, महादेवने सँभालकर कहीं रख दिया हो। इस समय महादेवको पत्र लिखनेकी सख्त मुमानियत है, इसलिए उससे पूछना भी जरा मुश्किल है।

तेरे काते हुए सूतको तो बुनवा डालना चाहिए। रामजी बुन देगा।

मैं देखता हूँ कि तू काफी पढ़ रही है। यदि इच्छा हो तो तुलसीकृत रामायण, बाइबिल और कुरान ध्यानपूर्वक पढ़ जाना। तूने उर्दू पढ़ना शुरू किया है; उसे पूरा किया जा सके तो कर लेना। तूने समयका सुन्दर उपयोग किया है।

तेरे पत्रमें अभी बहुत-कुछ छूट गया है। मुझे आशा है कि तूने दूसरा पत्र लिखा होगा।

लीलावतीका तो वैसा ही हाल है जैसा तूने लिखा है। उसके भविष्यके बारेमें कुछ नहीं कहा जा सकता।

'हरिजन' के अंक पढ़ लेनेका सुझाव[1] मैंने इसलिए दिया था कि इन महीनोंमें उस प्रश्नके बारेमें जो-कुछ हुआ है उसे तू जान ले। परन्तु फुरसत न मिली हो तो पढ़नेका प्रश्न ही नहीं उठता।

इस बार शायद तुझे 'सी' क्लास मिल जायेगी।[2] अगर मिली तो मुझे अच्छा लगेगा।

किसनका शरीर और मन ठीक हो गया दीखता है। अभी कमजोर तो है ही। उसपर कामका बोझ डाला जा सके, ऐसा मुझे नहीं लगता। उससे जितना हो सकता है उतना काम कर लेती है। परन्तु वह जल्दी ही थक जाती है। उसे खूब सोनेकी जरूरत है। यहाँ उसे जो संग-साथ मिलता है वह उसके अनुकूल आ गया लगता है। ओमसे उम्र लगभग दूनी होनेपर भी किसन उसके साथ खूब घुल-मिल गई है। इसमें मुख्य भाग किसका है, यह कहना कठिन है। दोनों बहुत मिलनसार दीखती हैं। किसन मुझे २८ वर्षकी लगती ही नहीं।

तेरा जेलसे लिखा हुआ पत्र मिला ही नहीं। अपने बारेमें तो मैं क्या लिखूँ? मेरा शरीर अच्छा है और कामका काफी बोझ उठा सकता है। लिखनेका समय मुश्किलसे ही मिलता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३५४) से। सी० डब्ल्यू० ६७९३ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

१. देखिए खण्ड ५६, "पत्र : प्रेमाबहन कंटकको", १५-१-१९३४।

२. प्रेमाबहनको दोनों बार 'बी' क्लास मिली थी।

६३. भाषण : देवकोट्टामें हरिजन पाठशालाके शिलान्यासके अवसरपर

२८ जनवरी, १९३४

इस मानपत्रके लिए और गरीबोंकी सहायता करने, उनको सभी सम्भव सुविधाएँ तथा स्वतन्त्रता देनेके आपके संकल्पके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आपने एक ऐसा निःशुल्क पुस्तकालय खोला है जिसमें सभी जातिगत भेदभावके बिना प्रवेश पा सकते हैं। ऐसी एक पाठशालाकी आधारशिला रखते हुए भी मुझे बड़ी खुशी हो रही है जो बिना किसी भेदभावके सभीके, हरिजनोंके उपयोगके लिए भी, सुलभ रहेगी। मैं आशा करता हूँ कि पाठशाला खूब फूले-फलेगी, इस अर्थमें कि इसमें सभी वर्गोंके विद्यार्थी पढ़ेंगे, और आप इसका ध्यान रखेंगे कि इसमें ऐसे ही अध्यापक रखे जायें जो बालक-बालिकाओंको हृदय और मस्तिष्क, भावना और बुद्धि, दोनोंकी ही वास्तविक शिक्षा दें।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३०-१-१९३४

६४. भाषण : हरिजन चेरी, चित्तनूरमें

२८ जनवरी, १९३४

गांधीजी ने एक प्रगतिशील ढंगकी पाठशाला चलानेके लिए लोगोंको बधाई दी और हरिजन-नाटार समस्याका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा :

मुझे हरिजनों और नाटारोंके बीच चलनेवाले झगड़ोंकी जानकारी है। निस्सन्देह, यह बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि खुद हिन्दुओंमें आपसमें ही ऐसे झगड़े चलते हैं। बेशक यह बड़ी शर्मनाक बात है कि अपनी मर्जीके कपड़े पहनने और अपनी पसन्दके स्थानोंपर आने-जानेकी आपकी स्वतन्त्रतामें भी दखल दिया जाता है। मुझे इसके बारेमें किंचित् भी शंका नहीं कि मन्दिरों और सड़कोंके उपयोगका और अपनी पसन्द की पोशाक पहनने तथा अपनी मर्जीके मुताबिक रहने-सहनेका आप लोगोंको उतना ही अधिकार है जितना कि सवर्ण हिन्दुओंको है; और मैं चाहूँगा कि आप लोग अपने मनमें ऐसी कोई आशंका न रहने दें कि अपनी इस स्वतन्त्रताका उपभोग करने पर आपको तंग किया जायेगा। मैं चाहूँगा कि आप वीर तथा साहसी बनें और

१. सभाकी समाप्तिपर सभी उपहारोंकी नीलामी की गई थी।

अपनी स्वतन्त्रताके उपभोगके लिए कष्ट सहनेको तैयार रहें। आपको यह भी याद रखना चाहिए और जानना चाहिए कि आजकल ऐसे सुधारकोंकी संख्या दिन-दिन बढ़ती जा रही है जो आपके सच्चे मित्र और सेवक हैं, और मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि आपके कष्टोंमें वे आपका साथ देंगे। परन्तु यह मत भूलिए कि कष्ट-सहन करनेके दौरान आपको मनमें घृणाको स्थान नहीं बनाने देना है।

गांधीजी ने अपना भाषण जारी रखते हुए उनसे अपील की कि वे शराबखोरी और मरे हुए पशुओंका मांस खाना त्याग दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३०-१-१९३४

६५. भेंट : देवकोट्टाके नाटारोंको

२८ जनवरी, १९३४

गांधीजी पहले पन्द्रह मिनटतक बोले। उन्होंने कहा कि पूनामें ही मेरा ध्यान नाटार-हरिजन समस्याकी ओर आकर्षित किया गया था। मुझे मालूम है कि यहाँ क्या चल रहा है। नाटार और हरिजन लोग आपसमें झगड़ते रहे हैं और मुझे इसकी जानकारी है। पर एक हिन्दूके नाते मैं आपको बताना चाहता हूँ कि हरिजनोंने ऐसी कोई माँग नहीं रखी है जिसका, हिन्दू और मनुष्य होनेके नाते, उनको अधिकार नहीं है। हरिजनोंको अपनी पसन्दके वस्त्र और आभूषण धारण करनेका पूरा अधिकार है। और क्यों न हो? नाटारोंको इसपर नाराज क्यों होना चाहिए? आपको समझना चाहिए कि आजकी दुनिया कहाँ जा रही है। वे सुधारोंकी प्रगति रोक नहीं सकते। हरिजन आपके सगे भाई हैं और उनके प्रति आपको दयालु होना चाहिए। हरिजन भी उसी परमेश्वरके पुत्र हैं जिसकी कृपा सभी प्राणियोंको समान रूपसे सुलभ है। नाटार तथा हरिजन एक ही परिवारके सदस्य हैं।

पण्डितोंकी यह राय हो सकती है कि हिन्दू-शास्त्रोंमें अस्पृश्यताका विधान किया गया है। परन्तु मैं आपको भरोसा दिलाता हूँ कि मैंने बहुत ध्यानपूर्वक उस समस्याका अध्ययन किया है और मैं आपको विश्वास दिलाना चाहूँगा कि ऐसे भी अनेक हिन्दू पण्डित तथा हिन्दू सन्त मौजूद हैं जो अस्पृश्यताके प्रचलित स्वरूपको बिलकुल भी शास्त्र-सम्मत नहीं मानते। क्या शास्त्रोंमें असत्यके लिए भी स्थान हो सकता है? अस्पृश्यता सत्य नहीं, असत्य है। इसलिए हमें इस समस्याको लेकर लम्बी-चौड़ी बहस करनेके बजाय अपना आचरण सत्यके अनुरूप बनाना चाहिए।

नाटारोंमें से एक वयोवृद्ध व्यक्तिने खड़े होकर कहा कि उन हरिजनोंसे हमारा कोई झगड़ा नहीं जो हिन्दू-समाजकी पुरातन व्यवस्थाका पालन करते हैं। परन्तु अब हरिजन लोग मान्य परम्पराओं और प्रथाओंका उल्लंघन कर रहे हैं। नाटार

लोग हरिजन महिलाओंके अपने मन-पसन्द पहनावेपर कभी कोई एतराज नहीं करते और हरिजन पुरुषोंके मामलेमें भी हमारा यही आग्रह रहा है कि सार्वजनिक अवसरों और मन्दिरोत्सवोंपर तो हरिजन लोग पुरातन प्रथाओंका पालन करते रहें।

गांधीजी ने उत्तर दिया कि आपको इस प्रश्नपर गौर करना चाहिए और हर परम्पराके बारेमें यह फैसला करना चाहिए कि वह अच्छी है या बुरी और तब उसके मुताबिक चलना चाहिए। परन्तु नाटार नेताका यही आग्रह बना रहा कि प्रतिष्ठित परम्पराका उल्लंघन नहीं किया जा सकता।

गांधीजी ने उत्तर दिया कि कुछ नियम हैं जो मानव-समाजमें हर कहीं समान रूपसे स्वीकृत हैं और उनमें से एक नियम यह है कि कोई भी मानव-समुदाय वेष-भूषा और आभूषणों आदिके मामलेमें कोई एक खास तौर-तरीका किसी दूसरे समुदाय पर नहीं थोप सकता। यदि हरिजन लोग इन मामलोंमें अपनेतईं कोई परिवर्तन करना चाहते हों तो उनको रोकना क्यों चाहिए? यदि इस सिलसिलेमें नाटार लोग हरिजनोंको तंग करते हैं और मामला न्यायालयमें ले जाया जाता है तो फैसला तुरन्त ही नाटारोंके खिलाफ दे दिया जायेगा। धर्म और मान्य कानून दोनोंमें समान रूपसे ऐसे हस्तक्षेपका निषेध है।

फिर उन्होंने नाटारोंसे आखिरी बार अपील करते हुए कहा कि आपको स्थितिमें यों बिगाड़ नहीं आने देना चाहिए, बल्कि यह संकल्प करना चाहिए कि आप हरि-जनोंके साथ न्याय करेंगे तथा उनके साथ भाइयोंकी तरह दया और स्नेहका बरताव करेंगे। इस तरह चलनेसे नाटारों और हरिजनों दोनोंको लाभ होगा। यदि मुझे ऐसी कोई शंका होती कि ऐसी सलाहसे केवल हरिजनोंको लाभ होगा, नाटारोंको नहीं, तो आपको यह सलाह देनेमें मुझे संकोच होता। लेकिन मुझे पूरा-पूरा विश्वास है कि इस सलाहसे हरिजनोंको ही नहीं, नाटारोंको भी लाभ पहुँचेगा और स्थायी रूपसे दोनोंका भला होगा।

नाटार नेता द्वारा गांधीजी को माला पहनाई जानेके बाद, समारोह दोपहर एक बजकर चालीस मिनटपर समाप्त हुआ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-१-१९३४

६६. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको[1]

२८ जनवरी, १९३४

मैंने नाटारोंके एक काफी बड़े समुदायके साथ घण्टा-भर बातचीत की थी।[2] उनके नेताओंने निस्संकोच होकर अपनी बात कही। नाटारोंके वहाँ उपस्थित प्रतिनिधियोंसे मैंने कहा कि पहनावा या आभूषण धारण करने के मामलेमें पुराने रीति-रिवाजकी दुहाई देकर अपने कुछ भाइयोंको इच्छानुसार बरतनेकी स्वतन्त्रतासे वंचित करके वे गलत कर रहे थे। मुझे आशा है कि मेरी बातचीतका उनपर जैसा चाहिए वैसा असर पड़ेगा।

नाटारोंसे मैंने जो-सब कहा, वह उन्होंने बड़े ध्यानपूर्वक सुना था। लेकिन मुझे कुछ अधिक आशा इस तथ्यको देखकर बँधी है कि कुछ नाटार लोग बड़ी ईमानदारीसे सुधारोंकी आवश्यकता महसूस करते हैं। इसके अलावा, स्वयं हरिजनोंमें भी उनके अपने प्राथमिक अधिकारोंके बारेमें जागृति बढ़ती जा रही है। बहुत ही स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि अस्पृश्यताके प्रश्नको लेकर जो भारी जागृति इधर आई है वह अब धीरे-धीरे गाँवोंके लोगोंपर भी असर करने लगी है, जबकि वे पहले अपने गाँवसे बाहरकी किसी भी बातसे जरा भी प्रभावित नहीं होते थे।

यह पूछे जानेपर कि क्या पुरीके परमपावन शंकराचारियरने देवकोट्टामें उनसे भेंट करनेकी कोशिश की थी, गांधीजी ने उत्तर दिया :

उनका प्रतिनिधि मुझसे मिला जरूर था और मैंने उससे कह भी दिया था कि समय निश्चित करके मैं उनके साथ मैत्रीपूर्ण वार्त्ता करनेको सहर्ष तैयार हूँ, लेकिन फिर देवकोट्टामें इसका समय ही नहीं मिला। उनका पत्र मुझे कल दोपहर एक बजेसे कुछ ही मिनट पहले मिला था। मेरा वह समय नाटारोंके प्रतिनिधियोंके साथ बातचीतके लिए निश्चित हो चुका था। पर जैसा मैंने कहा है, मैं कुनूरमें उनके साथ बातचीतके लिए बड़ी खुशीसे घण्टा-भर दे सकता हूँ, यदि उसमें परमपावन को कोई असुविधा न हो। सच तो यह है कि अपनेको सनातनी कहनेवाले सज्जनोंके साथ मैत्रीपूर्ण वार्त्ता करनेके लिए मैंने अपनी ओरसे काफी पहल की है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-१-१९३४

१. **हिन्दूके** प्रतिनिधिने गांधीजी से नाटार-हरिजन समस्याके बारेमें अपने अनुभव बतलानेको कहा था।
२. देखिए पिछला शीर्षक और "नाटारोंके बीच", ९-२-१९३४ भी।

६७. तार : जमनालाल बजाजको

पोदनूर
२९ जनवरी, १९३४

सेठ जमनालालजी
वर्धा

उत्तर वर्धा भेज दिया। हाथका काम छोड़ना तभी आवश्यक होगा जब राजेन्द्रप्रसाद आपकी उपस्थिति जरूरी समझें। रिहा हुए साबरमतीके लोगोंको खास तौरपर पटना भेज रहा हूँ। राजेन्द्रप्रसादने उनको बुलाया है।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १२२

६८. पत्र : रावजीभाई ना० पटेलको

२८/२९ जनवरी, १९३४

चि० रावजीभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। ऐसा लगता है कि इस बार तुम सब लोगोंको अमूल्य अनुभव हुए हैं। यदि मुझसे मिलनेकी आवश्यकता हो ही तो अवश्य आ जाना। किन्तु पत्रसे काम चल जाये तो न आनेके संयमका पालन करना। मैं इतनी दूर पड़ गया हूँ कि काफी खर्च किये बिना मुझसे मिलना हो ही नहीं सकता। अभी तो तमिल-नाडुमें ही तीन-एक सप्ताह निकल जायेंगे। फरवरीके अन्तिम सप्ताहमें ही कर्नाटककी ओर जा पाऊँगा। इसलिए मुझे यही उचित जान पड़ता है कि जो बिना आये काम चला सकते हों उन्हें तो चला ही लेना चाहिए। किन्तु यदि तुम्हें लगे कि बिना आये काम चलेगा ही नहीं तो निस्संकोच चले आना। मैं किस तारीखको कहाँ रहूँगा, यह अभी निश्चित नहीं हुआ है।

(यहाँतक मैंने खाते-खाते लिखवाया और रुक जाना पड़ा। अब कुनूर जानेवाली गाड़ीमें यह लिख रहा हूँ।)

मद्रास पहुँचनेपर तुम्हें मेरे कार्यक्रमका पता चल जायेगा। मुझसे कहीं भी मिलनेके लिए तुम्हें मद्रास तो आना ही पड़ेगा। कल मैंने चिमनलालको जो तार[1]

१. यह उपलब्ध नहीं है।

दिया था वह तुमने देखा होगा। राजेन्द्रबाबूको एक अनुभवी व्यक्तिकी जरूरत है, अतः यदि तुम जा सको तो चले जाना। फिलहाल जेल जाना स्थगित करके वहाँ जाना हमारा कर्त्तव्य है।

मैं आनन्दपूर्वक हूँ। यदि तुम 'हरिजन' के पिछले अंकोंको देख जाओ तो तुम्हें विस्तृत समाचार मिल जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मैंने विस्तारपूर्वक चिमनलालको लिखा है,[1] वह पत्र पढ़ लेना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९००१) से।

६९. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

कुनूर जाते हुए
२९ जनवरी, १९३४

बिहार और मिदनापुर मेरे हृदयको मथे दे रहे हैं। इस सम्बन्धमें मैंने स्वामीको लिखा है। यदि वह तूने न पढ़ा हो तो पढ़ लेना। जो आश्रमवासी छूटकर आ गये हैं, राजेन्द्रबाबू उनकी मदद माँगते हैं। मैंने अहमदाबाद और स्वामीको भी तार दिया है। यदि तेरा स्वास्थ्य ठीक होता तो तुझे भी जानेका सुझाव देता। किन्तु यदि जानेकी ऐसी जरूरत आ पड़े कि शरीरको साफ-साफ खतरेमें डालकर भी जाना उचित मालूम हो तो वैसा भी किया जा सकता है। किन्तु फिलहाल मुझे ऐसी हालत नजर नहीं आती। मैंने राजेन्द्रबाबूको लिखा है कि यदि बिहारमें मेरी उपस्थिति आवश्यक जान पड़े तो मुझे सूचित करें।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १४२

१. यह उपलब्ध नहीं है।

७०. तार : राजेन्द्रप्रसादको[1]

[३० जनवरी, १९३४ या उसके पूर्व][2]

आपका तार मिला। आवश्यक कर्यवाही कर रहा हूँ।[3]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-१-१९३४

७१. अपील : सारी दुनियासे

[३० जनवरी, १९३४ या उसके पूर्व][4]

बाबू राजेन्द्रप्रसादने मुझे निम्नलिखित तार भेजा है:

कृपया विदेशोंसे और विशेष तौरपर विदेशोंमें रहनेवाले भारतीयोंसे अपील करनेके औचित्यपर विचार कीजिए। प्रान्तके पुनर्निर्माणके लिए करोड़ों रुपये दरकार हैं। कई हजार मौतके मुँहमें समा चुके हैं और इससे कई गुना अधिक लोग घायल, बेघरबार और बेसहारा बन गये हैं।

मुँगेर, मुजफ्फरपुर, दरभंगा, मोतीहारी, समस्तीपुर, सीतामढ़ी और मधुबनीके फूलते-फलते नगर अब ईंटोंके ढेर-भर रह गये हैं। पटना, छपरा और भागलपुर-जैसे अन्य शहर इनके मुकाबले अच्छे रहे, लेकिन इनमें भी सैकड़ों मकान गिरे और कई सौ को भीषण क्षति पहुँची है।

ग्रामीण क्षेत्रके बहुत बड़े हिस्सेकी फसलें जगह-जगह धरती फटनेसे ऊपर निकली रेत और पानीकी बाढ़से या तो बिलकुल नष्ट हो गई हैं या उनको भारी नुकसान पहुँचा है। रेतकी मोटी-मोटी परतोंने बड़े-बड़े क्षेत्रोंको रेगिस्तानमें बदल दिया है और दूसरे बड़े-बड़े क्षेत्र नीचेसे निकले जलमें डूब गये हैं।

कुएँ रेत-मिट्टीसे भर गये हैं और इससे पीनेके पानीका अभाव हो गया है। गन्ना पेरनेकी कई फैक्टरियाँ ठप हो गई हैं और इससे एक लाख

१. यह राजेन्द्रप्रसादके इस सुझावके उत्तरमें भेजा गया था कि बिहारके भूकम्प-पीड़ितोंकी सहायताके लिए विदेशोंके नाम अपील निकाली जाये।

२. साधन-सूत्रमें रिपोर्टपर ३० जनवरीकी तिथि दी गई है।

३. देखिए अगला शीर्षक।

४. **बॉम्बे क्रॉनिकलने** दिनांक १-२-१९३४ के अंकमें ३० जनवरीकी तिथि देकर और **सर्चलाइटने** दिनांक २-२-१९३४ के अंकमें ३१ जनवरीकी तिथि देकर इसे प्रकाशित किया था।

एकड़की फसलको जो खतरा पैदा हो गया है उसके लिए तुरन्त कार्यवाही करना जरूरी हो गया है।

मैं पूरे दिलसे इसकी ताईद करता हूँ और उम्मीद करता हूँ कि संसारके विभिन्न देशोंमें रहनेवाले भारतीय यथाशक्ति अधिकसे-अधिक सहायता भेजेंगे। आफ्रिकाके पुराने मित्रों-सहयोगियोंका ध्यान यहाँ मुझे विशेष तौरपर आ रहा है। और इंग्लैंड, यूरोप, जापान तथा अमेरिकामें रहनेवाले व्यवसायियों तथा अन्य लोगोंसे भी अनुरोध है कि वे उदारतापूर्वक चन्दे भेजें।

कमसे-कम जीवित लोगोंकी याददाश्तमें तो भारतपर बिहारकी-जैसी भीषण कष्टकर विपत्ति शायद इससे पहले कभी नहीं पड़ी थी। गैर-भारतीयोंसे रुपये-पैसेकी मदद माँगनेमें मुझे हमेशा संकोच रहा है — ऐसा कोई मिथ्या विनयके कारण नहीं, बल्कि कुछ बातोंका खयाल करके जरा अटपटापन महसूस होनेके कारण है। फिर भी, मैं बड़ी खुशीसे बाबू राजेन्द्रप्रसादके इस सुझावको स्वीकार कर रहा हूँ और यूरोप, अमेरिका तथा आफ्रिका और संसारके अन्य देशोंके अपने अनेकानेक गैर-भारतीय मित्रोंको आमन्त्रित करता हूँ कि वे इसमें यथाशक्ति सहायता दें।

चन्देकी राशियाँ सीधे बाबू राजेन्द्रप्रसाद, पटनाके या मेरे पतेपर वर्धा, मध्य प्रान्तको भेजी जा सकती हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३-२-१९३४

७२. तार: हीरालाल शर्माको[1]

कुनूर
३० जनवरी, १९३४

डॉ० शर्मा
खुर्जा

कोई अड़चन नहीं दिखती लेकिन मेरे पत्रका इन्तजार कीजिए।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ५४

१. हीरालाल शर्माने अपना दवाखाना बन्द कर दिया था और गांधीजीसे वर्धा आश्रममें रहनेकी अनुमति चाही थी।

७३. पत्र : रेहाना तैयबजीको

३० जनवरी, १९३४

प्यारी बेटी रेहाना[1],

सिस्टर शिल और बोअरीके जरिये तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया है। हाँ, तुमने जो वादा किया था, उससे तुम्हें बरी करता हूँ। मैंने तो आम इंसानी तजुर्बेकी बात कही थी। तुम्हारी ईमानदारीपर शक करनेका तो कोई सवाल ही नहीं था। पर मैं समझता हूँ कि तुम्हारे दिमागपर क्या बोझ है। वह बोझ हटाया जाना चाहिए। मैं जानता हूँ कि किसी भी परिस्थितिमें दिन-दिन तुम्हारा विकास होता ही जायेगा।

बहुत चाहता हूँ कि तुम्हारी प्रार्थना-सभामें शरीक हो सकूँ। मैं जितना-जैसा कर पाया हूँ, तुम उससे और अच्छा कर रही हो।

गोपीकी डायरीके बारेमें तुमने सचमुच काफी अच्छी खबर दी है।

अब्बाजानने बतलाया है कि कोई योगी तुम्हारा इलाज कर रहा है; उससे फायदा भी हो रहा है और बेहतरीकी उम्मीद है। योगी कौन है?

अब्बाजानसे कहना कि उनका लम्बा खत मुझे मिल गया है। हमारी पहली मुलाकातके बारेमें जितना उनको याद है, मैं उसमें कुछ जोड़ नहीं पाऊँगा। गोधरामें हुई हमारी मुलाकातोंसे पहलेकी मुलाकातोंकी मुझे कुछ हल्की-सी याद ही है। उसके बादकी मुलाकातोंकी मुझे काफी ठीक याद है। और बड़ौदा स्टेशनपर जब तुम और हमीदा मेरी गोदमें बैठी थीं उस समयकी छोटी-सी मुलाकातको तो मैं कभी भूलूँगा ही नहीं। बिलकुल ऐसा लगा था जैसे अपने ही परिवारके लोगोंसे मिल रहा हूँ। तुम सबको प्यार। मैं समझता हूँ कि तुम बिहारके लिए चन्दा जमा कर ही रही होगी।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६५४) से।

१. यह सम्बोधन उर्दूमें है।

७४. पत्र : जमनालाल बजाजको

कुनूर
३० जनवरी, १९३४

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने गोंदिया तार[1] दिया था और वर्धा भी दिया[2] है। जबतक राजेन्द्रबाबू खास तौरसे तुम्हें न बुलायें तबतक अंगीकृत कार्यको हरगिज नहीं छोड़ना। राजेन्द्रबाबू बिना विचारे नहीं बुलायेंगे। मैंने अपने बारेमें भी यही मनोवृत्ति रखी है। मुझे इस विषयमें कोई सन्देह नहीं कि तुमने जो काम हाथमें लिया है वह तुमसे जल्दी नहीं छूटेगा। तुम्हारे गये बिना जहाँ काम ही न चले वहीं तुम जा सकते हो। मुझे अभी ऐसी हालत दिखाई नहीं देती। राजेन्द्रबाबूके बुलानेपर जेलसे छूटे हुए आश्रमके लोगोंको भेजा है। कुछ लोगोंके रवाना हो जानेका तार आज मिल गया है। उनमें भी सुरेन्द्रको नहीं भेज रहा हूँ क्योंकि वह तुम्हारे पास काम कर रहा है। यदि उसकी जरूरत न हो तो उसे भेज सकते हो। यदि वह जाये तो गर्म कपड़े साथ ले जाये। परन्तु उसकी वहाँ जरूरत न हो तो अभी उसके जानेकी जरूरत नहीं। स्वामीको जानेके बारेमें तार दिया है। ओमका ठीक चल रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३१) से।

७५. पत्र : जानकीदेवी बजाजको

३० जनवरी, १९३४

चि० जानकीबहन,

यदि दिमागकी कमजोरीके कारण जमनालालको गुस्सा आता हो तो उसमें शिकायतकी क्या बात है? बीमारके गुस्सेपर भला कोई ध्यान देता है? बीमारकी चिढ़को तो हमेशा पी लिया जाता है। या केवल तुमने परिहासके लिए मुझे पत्र लिखा है? मदालसासे कहना कि वह तो, लगता है, मुझे भूल ही गई। यह नहीं चल सकता। ओम मजेमें है।

१. देखिए पृ० ६३।
२. देखिए पृ० ७४।

रामकृष्ण कैसा है? तुम्हारी तबीयत कैसी है? वालीका ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३०)से।

७६. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

कुनूर
३० जनवरी, १९३४

बा,

तेरा पत्र मुझे अभीतक नहीं मिला। आज हम मद्रासके एक पहाड़पर हैं। यह पहाड़ अल्मोड़ाके पहाड़के बराबर ऊँचा है। हरियाली सम्भवतः ज्यादा सुन्दर है, किन्तु बर्फसे ढकी चोटियाँ यहाँसे नजर नहीं आतीं। हिमालय तो बहुत दूर है। हम लोगोंको यहाँ ५ तारीखतक रहना है। अम्तुस्सलाम यहाँ पहुँच गई है। वह आज ही जाना चाहती थी किन्तु उसे ५ तारीखतक रोक लिया है। सामान्यतः उसका स्वास्थ्य ठीक ही कहा जायेगा। कुसुम (रामीकी लड़की) को रामके चरण मिल गये। मुझे कल ही पत्र मिला है। बली बहुत दुःखी हुई। मंजु वहीं थी, अतः उसने सांत्वना दी। इधर हालमें हरिलालकी कोई खबर नहीं मिली। रामदासके पत्र मिलते रहते हैं। देवदास-लक्ष्मी दिल्ली चले गये। कहा जा सकता है कि देवदास ठीक जम गया है। ब्रजकृष्ण अच्छा हो गया है। बिहारमें भूकम्प आनेके कारण बीस-पच्चीस हजार लोग मारे गये। लाखों लोग बेघरबार हो गये हैं। करोड़ोंका नुकसान हुआ है। राजेन्द्रबाबू अभी हालमें छूटे हैं और सहायता-कार्यमें जुट गये हैं। पूरे देशमें चन्दा इकट्ठा किया जा रहा है। मैं भी थोड़ा-बहुत इकट्ठा कर रहा हूँ। मुझे तारपर-तार मिलते हैं। उन्होंने [राजेन्द्रबाबूने] आश्रमवासियों (पुरुषों) को बिहार बुलाया है, अतः मैंने तार दिया है। अभी मैं यह नहीं कह सकता कि कौन-कौन जायेगा। लीलावती काफी बीमार है। वेलाबहनने २५ पौण्ड वजन खोया है। वह आनन्दी और मणिको लेकर बड़ौदा गई है। दुर्गा[1] बाबला[2] और बचुको[3] लेकर बलसाड़ गई है। प्रेमाबहन (जेल) पहुँच गई है। उसका स्वास्थ्य अच्छा है। आज मैं प्रवचन नहीं भेज रहा हूँ। तेरे पास एक बाकी होना चाहिए। मैं स्वस्थ हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ११-२

१. महादेव देसाईकी पत्नी।
२. नारायण देसाई, महादेव देसाईके पुत्र।
३. निर्मला देसाई, महादेव देसाईकी बहन।

७७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

कुनूर
३० जनवरी, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आपका पत्र इस बार अभीतक नहीं मिला। मिल जायेगा। इस समय कुनूरमें धूपमें बैठकर दो बजे यह लिख रहा हूँ। 'हरिजन' के लेख पूरे किये, फिर भोजन किया। तमिलनाडुका कार्यक्रम पूरा किया और फिर नींद ली। अब लिखने बैठा हूँ।

अभी तो बिहार मेरा काफी समय ले रहा है। बिहारमें कैसा कहर टूटा, यह तो आपने देख लिया। राजेन्द्रबाबूके तार लगभग रोज मिलते हैं। उनकी इच्छानुसार काम किये जा रहा हूँ। मेरे वहाँ जानेकी अभी जरूरत नहीं। आश्रमके जो लोग छूट गये हैं, उन्हें बुलाया है। मैंने तार दे दिया है। जितने जा सकेंगे जायेंगे। मुझे जवाब नहीं मिला कि कौन-कौन जा सकेंगे। हरेक सभामें बिहारकी बात तो कहता ही रहता हूँ। कुछ जेवर और नकद पाया भी है। इस वक्त मदद तो काफी मिलती दिखती है। यह देखना है कि उसका उपयोग किस तरह होता है।

अमतुस्सलाम यहाँ आ पहुँची है। वह तो आज ही लौट जानेको तैयार थी। परन्तु अभी मैंने कुनूरसे रवाना होनेके दिनतक उसे रोक लिया है। ६ तारीखको मेरे साथ उतरेगी और गुजरात जाकर अपने काममें जुट जायेगी। गंगाबहन वगैरह आराम ले रही हैं।

बेलगाँव अगले महीनेके आखिरमें या मार्चके आरम्भमें जाना होगा। बीचमें बिहारका बुलावा आ जाये, तो मुलतवी भी करना पड़ सकता है। बेलगाँव जाना हुआ ही तो महादेव और मणिसे मिलनेकी इजाजत मँगा लूँगा।

कानजीभाईको आज-कलमें आना चाहिए। शान्तिकुमारने[1] हर्नियाका ऑपरेशन कराया था। वह अब ठीक है। शंकरलाल खादीके बारेमें मिल गये। अब बम्बईमें इनफ्लुएन्जामें पड़े हैं। यहाँ डॉ० राजन् और नागेश्वरराव साथ हैं।

नागेश्वररावके बँगलेमें हम ठहरे हैं। किशोरलालने अभी बिस्तर नहीं छोड़ा है। स्वामीको बिहार जानेके लिए तार दे दिया है।

पृथुराज चन्द्रशंकरको मदद दे रहा है। वेलाबहन आनन्दी और मणिको लेकर लक्ष्मीदासके पास बड़ौदा गई हैं। उसने (जेलमें) २५ पौण्ड वजन खो दिया। बाबला और दुर्गा बलसाड़ गये हैं। अमीना बच्चोंको लेकर प्यार अलीके पास जायेगी। मणि परीख बच्चोंको लेकर अभी तो कठलाल गई हुई है। बादमें नरहरिसे मिलने

१. शान्तिकुमार एन० मोरारजी।

जायेगी। फिर जो हो जाये सो ठीक। प्रेमा पहुँच गई है। लीलावती बीमार है लेकिन हठ करके गई मालूम होती है।

दोनों को —

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ६८-९

७८. पत्र : राजेन्द्रप्रसादको[1]

[३१ जनवरी, १९३४के पूर्व][2]

भाई राजेन्द्रप्रसाद,

लिखूँ तो लिखूँ क्या? मैं क्या सांत्वना दे सकता हूँ? मैं तो स्वयं ही विचलित हो गया हूँ। जो काम हाथमें है उसे छोड़ना अधर्म-जैसा लगता है, लेकिन यदि उसे छोड़ भी दूँ तो मैं कर क्या पाऊँगा? मैं कलसे ही अपने हर भाषणमें बिहारका किस्सा लोगोंको सुना रहा हूँ। लोग ध्यानसे सुनते हैं। कुछ तो सभास्थल पर ही चन्दा दे देते हैं। मैं सभीसे यही कहता हूँ कि चन्दे आपको सीधे भेज दें या ठीक समझें तो मुझे दे दें। पत्र और तार द्वारा सूचित करते रहिएगा। मैं रोज अखबार नहीं देखता। बिहारके मेरे दौरेके बारेमें आपकी क्या सलाह है? क्या अस्पृश्यताके सिलसिलेमें मेरा वहाँ आना उचित रहेगा? क्या मुझे वहाँ जनताको राहत पहुँचानेके सिलसिलेमें आना चाहिए? मेरा वहाँ न आना क्या ज्यादा ठीक नहीं रहेगा? मैं आपकी सलाहके मुताबिक चलूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १-२-१९३४

७९. मार्गरेट स्पीगलको लिखे पत्रका अंश[3]

३१ जनवरी, १९३४

. . . तुरन्त वहाँ भेजा।

मेरा स्वास्थ्य बिलकुल ठीक है। वजन ११०, रक्तचाप १५५-१००, भोजन पूर्ववत्। मीरा भी बिलकुल चंगी है। उससे फिलहाल बहुत अधिक या बिलकुल भी पत्र लिखनेकी उम्मीद मत रखना। उसने पत्र लिखना बन्द कर रखा है। इतनी भाग-दौड़में किसीको भी लिखनेका समय नहीं मिल पाता। यह पत्र भी मैं सुबह ३ और ४ बजेके बीच लिख रहा हूँ।

१. साधन-सूत्रके अनुसार मूल पत्र हिन्दीमें था, परन्तु वह उपलब्ध नहीं है।
२. साधन-सूत्रमें रिपोर्टपर ३१ जनवरीकी तिथि दी गई है।
३. इसके पहले दो पन्ने नहीं मिले।

तुमको अपना शरीर चंगा रखना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

८०. पत्र : जीवणजी डा० देसाईको

३१ जनवरी, १९३४

भाई जीवणजी,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि काकासाहब वहाँ हों तो साथका पत्र उन्हें दे देना।

दुर्गाके बारेमें तुम जो कहते हो वह मैं समझ गया। मेरे बेलगाँव जाने या न जानेकी बात एक-दो दिनमें तय हो जायेगी। यदि वहाँ जाना हुआ भी तो २५-२६ फरवरीके आसपास या इसके बाद ही आ सकूँगा। क्या दुर्गा तबतक इन्तजार करेगी? यदि बेलगाँव जाना हुआ तो मैं अनुमति लेनेकी कोशिश अवश्य करूँगा। किन्तु हो सकता है, अनुमति न भी मिले। ऐसे खतरे तो उठाने ही पड़ेंगे। यदि मुझे अनुमति दी गई तो सम्भव है कि दुर्गाके मिल लेनेपर भी वे मुझे मिलने देंगे। किन्तु निश्चित रूपसे कुछ नहीं कहा जा सकता। अब लोग मिलने आ रहे हैं, अतः लिखना बन्द करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९३६) से। सी० डब्ल्यू० ६९११ से भी; सौजन्य : जीवणजी डाह्याभाई देसाई

८१. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

३१ जनवरी, १९३४

भाई घनश्यामदास,

तुमारा खत मिला है। भूकंप और हरिजन प्रश्नका मुकाबला मुझे बहुत प्रिय लगा है, क्योंकि वह सत्य है। बिलकुल गरीबोंको कम भुगतना पड़ा है। यह तो स्वयंसिद्ध है। लेकिन जिसके पास दो कौडी थी वह आज भीखारी बन गये हैं, वह भी इतना ही सत्य है न? मैं यहां बैठा हुआ जितना संभवित है कर रहा हूँ।

बंगालके दौरेने मुझे कर्त्तव्यमूढ बना दिया है। अच्छा है तुम वहीं हो। आज डा० विधानको लंबा खत लिखा है। उसे देखो और वही निश्चय करो। मुझे लगता है मेरेसे तो एक ही निश्चय हो सकता है — अगर आप लोग न रोकें तो जाना।

गोपीके खत आते रहते है। लेकिन उसका तुमारे देखना चाहिये। . . . [1]को आज . . .[2] पूरी तृप्ती नहिं दे सकती है। उस बिचारीका शरीर इतना बोज नहि उठा सकेगा। यदि . . . संयम न कर सके तो क्या किया जाय? जटील प्रश्न है। मैं . . .को लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९४४) से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

८२. पत्र : अगाथा हैरिसनको

१ फरवरी, १९३४

प्रिय अगाथा,

मैं यह सुबहके ३ और ४ बजेके बीच लिख रहा हूँ। अभी-अभी हेनरीको कुछ पंक्तियाँ लिखी हैं। एन्ड्रयूजका कहना है कि तुम भी कोई बहुत चंगी नहीं रही हो। जाहिर है कि यहाँ हम लोगोंकी तुलनामें इंग्लैंडमें तुम लोगोंको अधिक परिवर्तन और विश्राम दरकार है। और यदि तुम अपने शरीरसे अधिकसे-अधिक काम लेना चाहती हो तो तुम्हें शरीरको परिवर्तन और विश्राम देना ही पड़ेगा। आशा है कि इस पत्रके पहुँचनेतक तुम पूरा स्वास्थ्य-लाभ कर चुकी होगी।

चन्द्रशंकर तुमको जो पत्र भेजता रहा है, उनको मैं देखतातक नहीं हूँ। आशा है, वह तुमको यहाँके समाचारोंसे पूर्णतः अवगत कराता रहा है।

बिहारकी बर्बादीके बारेमें तुम्हारी जितनी जानकारी है उतनी ही मेरी भी है। राजेन्द्रप्रसाद पीड़ितोंको राहत पहुँचानेके लिए भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं। उन्होंने सरकारको पूरा सहयोग दिया है। उनके कहनेपर मैंने संसार-भरके गैर-भारतीय मित्रोंसे अपील जारी की है। रायटरका तार तुमने देखा ही होगा। चन्द्रशंकर तुमको उसकी प्रति भेजेगा। आश्रमके जो पुरुष सदस्य अभी जेलसे रिहा हुए हैं, उन्होंने अपना सविनय-प्रतिरोध स्थगित करके बिहारको प्रस्थान कर दिया है। विपदा इतनी भारी और इतनी व्यापक है कि संसार-भरसे मिल सकनेवाली सारी सहायता समुद्रमें एक बूँदकी तरह ही होगी। परन्तु मैं समझता हूँ कि ऐसी भौतिक सहायताका एक प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष भावात्मक परिणाम भी होता है। पीड़ित लोगोंको यह सोचकर बड़ी सान्त्वना मिलेगी कि समस्त संसारको उनका ध्यान है और वह उनकी सहायताको आगे आ रहा है। मैं इसी समय एन्ड्रयूज और होम्स[3] और रोलाँको लिख रहा हूँ।

अस्पृश्यताके धीरे-धीरे पर निश्चित रूपसे मिटते जानेके बारेमें तुमको 'हरिजन'की प्रतियोंके अलावा चन्द्रशंकर द्वारा भेजी गई कतरनोंसे सब-कुछ पता चल ही गया होगा।

१ और २. नाम निकाल दिये गये हैं।
३. जॉन हेन्ज होम्स।

जनताका मनोबल कुचलनेके लिए सरकार द्वारा उठाये गये कदमोंका वर्णन करते नहीं बनता। समाचारपत्रोंपर कड़े प्रतिबन्ध लगा दिये जानेके कारण सही-सही, यथातथ्य समाचारोंकी जानकारी हासिल करना और सेंसरकी सख्तीके बावजूद जो थोड़ी-बहुत खबरें सुलभ होतीं उन्हें प्रकाशित करना लगभग असम्भव हो रहा है। मूल दस्तावेजोंकी जो नकलें मैं तुमको भेज रहा हूँ उनसे यहाँकी स्थितिका थोड़ा आभास तुमको मिल जायेगा। मैं नहीं चाहता कि सार्वजनिक रूपसे कोई प्रचार किया जाये, लेकिन तुम वहाँके मित्रों और अधिकारी-वर्गके बीच उनका जो भी उपयोग ठीक समझो, कर सकती हो। तुमको मालूम ही है कि मैंने अधिकारियोंतक अपनी बात पहुँचानेके जो दो प्रयास किये थे, वे सफल नहीं रहे। यह सच है कि उनके उत्तर शिष्टतापूर्ण थे, लेकिन उन्होंने गलती स्वीकार नहीं की। इसके विपरीत, बंगाल और बम्बई दोनों ही सरकारोंने आरोपोंसे एकदम इनकार कर दिया, साथ ही मीराके आँखों-देखे साक्ष्यको भी माननेसे इनकार कर दिया। मैं सम्मानपूर्ण शान्ति स्थापित करनेका उपाय खोजनेकी भरसक चेष्टा कर रहा हूँ। परन्तु वह तबतक नहीं हो सकती जबतक सरकार दमनसे हाथ नहीं खींच लेती। मुझे आशंका यह है कि बंगाल से कहीं अधिक बुरी हालत सीमा प्रान्तमें रही है। लेकिन वहाँसे समाचार प्राप्त करनेका काम तो बंगालकी अपेक्षा भी अधिक दुष्कर है। पर इस सबका यह अर्थ नहीं है कि मुझे अब कोई आशा नहीं रही है। कारण, प्रार्थनापर से मेरी आस्था डिग नहीं सकती, और प्रार्थना अहिंसाका ही दूसरा नाम है, चाहे वह प्रार्थना पत्र-लेखनके जरिये की जाये या सविनय-प्रतिरोधके द्वारा या केवल मूक रहकर मन-ही-मन की जाये। मैं सिर्फ यह बतला रहा हूँ कि मार्गमें कितनी कठिनाइयाँ हैं। इंग्लैंडके मेरे मित्रोंको उतने यथातथ्य समाचार मिलते रहने चाहिए जितने मैं किसी तरह हासिल कर सकता हूँ या जो मेरी किसी भी कोशिशके बिना मुझको मिलते रहते हैं। अभी तो मैं एक ही बड़े काम, अस्पृश्यताके विरुद्ध संघर्ष करनेमें लगा हुआ हूँ। पता नहीं, तुम यह महसूस करती हो या नहीं कि मेरे दौरेमें डाकके जो भारी-भरकम पुलिन्दे आते रहते हैं, उनको पढ़नेका मुझे समय ही नहीं मिल पाता। मैं केवल उन अंशोंको पढ़ता हूँ जो चन्द्रशंकरकी समझमें मुझे पढ़ने ही चाहिए। यहाँ हालत उससे भी बदतर है, जो तुमने नाइट्स ब्रिजमें देखी थी। लगातार यात्राओंके बाद अब यहाँ कुनूरमें ही मैं थोड़ा विश्राम कर पाया हूँ और इसीलिए तुमको एक लम्बा पत्र लिख पाया हूँ।

भारतसे बाहर एक भारतीय ब्यूरो बनानेके बारेमें भी कुछ कहूँ। मैं उसके पक्षमें नहीं हूँ। मैं तर्क नहीं दूगा। विट्ठलभाई पटेल द्वारा दी गई राशि उसके लिए काममें नहीं लाई जा सकती। वह तो भारतमें रचनात्मक कार्य, जैसे अस्पृश्यता, खादी, राष्ट्रीय सेवाके लिए प्रयुक्त की जा सकती है। इस मामलेमें सिद्धान्तका निरपवाद और सम्पूर्ण पालन करनेका आग्रह रखनेवाला शायद अकेला मैं ही हूँ, लेकिन हूँ, इससे तो इनकार नहीं किया जा सकता न! लेकिन मेरे अपने विचार हैं। मेरा पक्का विश्वास है कि समूचा भारत जब एक बार जाग्रत हो चुकेगा तो फिर स्वतन्त्रताकी

ओर बढ़ते उसके चरणको कोई भी नहीं रोक सकेगा। भारतको जगाया जा रहा है। वर्तमान निश्चलताका उसके बढ़ते हुए चरणपर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। यह वास्तव में पूर्ण जागृतिकी पूर्वभूमिका है। विदेशोंमें प्रचारका काम तो वहींके लोगोंको करना चाहिए। सभी जगह मित्र लोग अपनी सामर्थ्यके अनुसार इसे शुरू कर रहे हैं।

तुम इसे अपने मित्रोंको दिखा देना।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४७७)से।

८३. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रयूजको

कुनूर
१ फरवरी, १९३४

प्रिय चार्ली,

तुम्हारे पत्र मुझे मिले। चन्द्रशंकर नियमित रूपसे अगाथाको एक साप्ताहिक पत्र भेजता रहा है। सारे पत्र-व्यवहारके लिए समय निकालना मेरे लिए बड़ा मुश्किल पड़ रहा है। दौरेके समयमें से हर सप्ताह तीन दिन अलग रखकर चन्द्रशंकर इसे और 'हरिजन' के कामको निबटा देता है। मैं अब पहलेकी अपेक्षा अधिक तेजीसे दौरा कर रहा हूँ और चंगा भी हूँ।

मैंने अगाथाको एक लम्बा पत्र[1] लिखा है। तुम इसे देख ही लोगे। इसलिए इस पत्रमें सार्वजनिक मामलोंके बारेमें मुझे कुछ लिखनेकी जरूरत नहीं।

तुमने अपने पत्रमें जितनी भी बुरी खबरें सुनाई हैं, उन सबकी काट एक ही अच्छी खबर सुनाकर कर दी है — यह कि एस्थरकी सारी मुश्किलें हल हो गई हैं और मेननने आखिर भारत आनेका फैसला कर ही लिया है। मुझे पूरा यकीन है कि फैसला बहुत ही ठीक है; हाँ, अगर पक्का हो। मुझे खुशी हुई कि तुमने नेली बॉल को वह सन्देश पहुँचा दिया। वह एक वीर महिला है और ईश्वरपर उसकी आस्था अगाध है। उससे एक बार फिर मेरा स्नेह कहना। उसे या अलेक्जैंडर-परिवार या हॉयलैंड-परिवारको अलग-अलग पत्र लिखनेकी कोशिश मैं नहीं करूँगा। उन सबसे इतना कह देना कि मुझे उनका ध्यान बराबर रहता है। न्यूजीलैंडमें तुम्हारे भाई और तुम्हारी बहनके बारेमें मैं क्या कह सकता हूँ? मैं जानता हूँ कि अपने स्वभावके मुताबिक तो तुमको खुशी इसीमें होगी कि तुम खुद उनके पास पहुँच जाओ। लेकिन तुमने इतने काम अपने हाथमें ले रखे हैं कि वैसा संभव नहीं होगा। मुझे आशा है

१. देखिए पिछला शीर्षक।

कि तुमको अपनी पुस्तकोंकी बिक्रीसे इतना पैसा मिल जाता होगा कि तुम रुपये-पैसेसे उनकी जितनी सहायता कर सकते हो करते होगे।

शान्तिनिकेतनके लिए सर प्रभाशंकरके दानके बारेमें मैं तुमको बतला चुका हूँ।

डॉ० अम्बेडकर कुछ दिनों पहले भारत लौट आये हैं। उन्होंने मुझको पत्र नहीं लिखा है। यदि पृथक् निर्वाचक-मण्डलोंकी बात फिर न उखाड़ी जाये, तो मैं ऐसे किसी भी हलपर आपत्ति नहीं करूँगा जो हरिजनों और तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंको पसन्द आ जाये। मैं जिसे इन पिछले तीन महीनोंका सबसे उपयोगी काम मानता हूँ वह सम्भव ही न होता, यदि राजनीतिक तौरपर हरिजनोंको बिलकुल अलग-थलग कर दिया गया होता।

जिन-जिनसे भी तुम्हारी मुलाकात हो, उन सभीसे मेरा स्नेह कहना।

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९८४)से।

८४. पत्र : आत्मा एस० कमलानीको[1]

कुनूर
१ फरवरी, १९३४

प्रिय कमलानी,

मैं पत्र-व्यवहारमें बहुत पिछड़ गया हूँ। आपके २९ दिसम्बरके पत्रका उत्तर देनेकी बारी आज आई है।

मैं समितिके सुझावकी कद्र करता हूँ। इससे पता चलता है कि और अच्छा काम कर दिखानेकी फिक्र उनको है। कृपया उनको भरोसा दिलायें कि मैं जानता हूँ कि वे अपने बस-भर सब-कुछ कर रहे हैं। मेरा अपना विश्वास है कि कोई वैतनिक भारतीय मिशन इससे अच्छा काम नहीं कर सकता और उनको कोई कारआमद मदद नहीं पहुँचा सकता। भूलाभाई देसाई-जैसे एक व्यक्ति द्वारा किये गये किसी अच्छे कामको देखकर यह निष्कर्ष निकाल लेना गलत होगा कि इसके लिए स्थायी रूपसे एक भारतीय संस्था स्थापित करना जरूरी है। ऐसे व्यक्ति आजकी अपेक्षा और जल्दी-जल्दी भी इंग्लैंड जा सकते हैं। परन्तु वहाँ स्थायी संस्था बना देनेसे तो कोई फायदा नहीं होगा, नुकसान जरूर हो सकता है। जनताको अपनी मुक्ति यहीं, अपने देशमें ही हासिल करनी है, उसके लिए यहीं प्रयत्न करने हैं और जब जनता सामूहिक रूपसे अपनी शक्तिको एक बार पहचान लेगी तब बाहर कोई उसके बारेमें कितनी ही गलतबयानी क्यों न करें, उसकी गतिविधियोंके समाचारोंको कोई कितना ही क्यों न दबाये, पर उसकी प्रगतिको रोक नहीं सकेगा। जो चीज वहाँ कारगर सिद्ध होगी, वह यही है कि वहाँकी जनताको भी इस बातकी आम प्रतीति हो कि

१. लन्दनकी फ्रेंड्स ऑफ इंडिया नामक संस्थाके संयुक्त अवैतनिक मन्त्री।

भारतके साथ हर तरहसे अन्याय किया जा रहा है। और उसमें ऐसी चेतना पैदा करनेका एक यही तरीका है कि आपकी संस्थाके ढंगकी संस्थाएँ इस कोशिशमें निरन्तर जुटी रहें, ठीक उसी तरह जैसेकि यहाँ देशमें हम अपने प्रयत्नोंमें जितने जुट कर लगे रहेंगे उतना ही अच्छा नतीजा निकलेगा। विट्ठलभाईने मुझे जो राशि भेजी थी, वह यहाँके रचनात्मक कार्यके लिए थी। मेरा इरादा है कि सभी कागजात सिलसिलेवार जमाते ही मैं पूरा पत्र-व्यवहार प्रकाशित कर दूँ। और किसी कामके लिए तो मैं थैली स्वीकार ही नहीं कर सकता था। मैं जानता हूँ कि इसमें जो विचार व्यक्त किये हैं, वे अल्पमतके विचार हैं। लेकिन १९२० में मेरा जो एक विश्वास बन गया था वह दिन-दिन पक्का ही होता गया है। संघर्ष जिन दिनों अपने पूरे जोरपर था, उन दिनों भी मैंने विदेशोंमें कोई भारतीय संस्था कायम करनेकी जरूरत नहीं समझी। यदि वैसी कोई संस्था होती, तो शायद न तो इंग्लैंडमें सच्चे अंग्रेज पुरुषों और स्त्रियोंका वह दल तैयार हो पाता जो आज वहाँ काम कर रहा है और न ऐसे अमेरिकियोंकी ही वह मण्डली बन पाती जो अमेरिकामें यह काम कर रहे हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५३०) से।

८५. पत्र : रामी और मनु गांधीको

१ फरवरी, १९३४

चि० रामी और मनु,[१]

तेरा पत्र मिला। कुसुम[२] मुरझा गई, चली गई, इससे तुम सबके मनको चोट पहुँचेगी ही। हालाँकि मेरा हृदय पत्थर-जैसा है, किन्तु क्षण-भरको मैं भी मर्माहत हो गया। जब यह पत्र तुम दोनों बहनोंको मिलेगा, आशा है, तबतक तो तुम्हारा मन शान्त हो चुका होगा। आखिर, मृत्यु तो सबके भाग्यमें लिखी है, फिर शोक किस बातका? मुझे समय-समयपर पत्र लिखती रहना। रामीके पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा। इस खबरसे बा को बहुत दुःख होगा। तुम तो जानती ही होगी कि बा को हर हफ्ते सिर्फ मेरा ही पत्र मिलता है और वह सिर्फ मुझे ही लिखती है। अतः अन्य पत्र उसतक नहीं पहुँच सकेंगे। अतः उसे जो लिखना चाहो सो मुझे ही लिख भेजना।

१. हरिलाल गांधीकी कन्याएँ।
२. रामीकी कन्या।

मनुकी पढ़ाई-लिखाई कैसी चल रही है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५२८) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला

८६. पत्र : पद्माको

[१ फरवरी, १९३४][1]

चि० पद्मा,

तेरा पत्र मिला। तेरा नववर्षका पत्र मिलने की मुझे याद नहीं पड़ती। उलटे मैं तो तुझे मन-ही-मन उलाहना दिया करता था कि तेरा पत्र क्यों नहीं आया। वहाँ चलनेवाले कामके बारेमें जानकारी मिली। यदि तू निरन्तर शान्तिपूर्वक काम करे तो बहुत अच्छा हो। तू अपने वजन आदिके बारेमें कुछ लिखती ही नहीं और न सरोजिनीको[2] ही पत्र लिखती है। अब भविष्यमें नियमपूर्वक पत्र लिखती रहना। बिहार का . . .।[3]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१४७) से। सी० डब्ल्यू० ३५०२ से भी; सौजन्य: प्रभुदास गांधी

८७. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

[१ फरवरी, १९३४][4]

चि० गंगाबहन,

तुम्हारा तार मिला। राजेन्द्रबाबूने केवल पुरुष-कार्यकर्त्ताओंकी माँगकी है। इसीलिए मैंने पुरुषोंको भेजनेके लिए अहमदाबाद तार दिया था। महिला-कार्यकर्त्ताओंको भेजनेकी माँग आनेकी सम्भावना कम ही है। इसलिए तुम्हें जितना काम निबटाना हो उतना निबटाकर अपने ठिकानेपर पहुँच जाना। जो लोग बिहार गये हैं उन्हें भी दो-तीन महीनेमें तो लौट आना चाहिए।

तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया था। मुझे दुर्गा, महावीर आदिके समाचार देना। इनमें से कोई मुझे पत्र नहीं लिखता किन्तु मेरे सुनने में आया है कि . . .[5] ठीक

१. डाककी मुहरसे।
२. पद्माकी माता।
३. इसके आगेका अंश पढ़ा नहीं जा सका।
४. साधन-सूत्रमें यही तारीख दी गई है।
५. साधन-सूत्रमें नाम निकाल दिया गया है।

नहीं रहता। ध्यान रखना कि वह हमारे हाथों बिगड़े नहीं। चन्द्रशंकरका विचार है कि बच्चू[1] स्वभावका नमनीय है इसलिए बह जाता है।

सभी बहनोंमें किसने सबसे अधिक अध्ययन किया? सबसे अच्छा स्वास्थ्य किसका रहा? मैत्रीके विवाहके बारेमें क्या हुआ? रामीबाई कैसी है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ : गं० स्व० गंगाबहेनने, पृ० ८२। सी० डब्ल्यू० ८८१५ से भी; सौजन्य : गंगाबहन वैद्य

८८. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

१ फरवरी, १९३४

चि० बली,[2]

यहाँ इतनी दूर बैठे हुए मैं तेरे दुःखको समझ सकता हूँ। रामी दुःखको भूल जायेगी किन्तु तू नहीं भूलेगी। तेरे प्रेमको मैं भली-भाँति पहचान गया हूँ और इस प्रेमके कारण मैं तुझे पूजता हूँ। चंचीके[3] बच्चोंके लिए तूने अपना जीवन निछावर कर दिया है। तू उनकी सच्ची माँ बन बैठी है। तेरा जी दुखाते हुए मैं स्वयं दुःखी हुआ हूँ। किन्तु यदि मैंने तेरा जी दुखाया है तो उन बच्चोंकी खातिर ही दुखाया है। इस समय मैं तुझे कौन-सा आश्वासन दूँ? मैंने यदि कुसुमकी सेवा की होती तो ही मैं तुझे आश्वासन दे सकता था। तेरे सामने ज्ञानकी बातें भी कैसे बघार सकता हूँ? इसलिए मैं तुझे ईश्वरकी शरणमें छोड़ता हूँ। वही तुझे शान्ति देगा। मैं मानता हूँ कि तेरा प्रेम व्यर्थ नहीं जायेगा। ईश्वर तेरा कल्याण करे और तेरे प्रेममें ज्ञानकी जोत जलाये। तेरे प्रेममें मोहका जितना अंश है उसे निकाल देना।

मुझे पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५२९)से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला

८९. पत्र : अमीना कुरैशीको

१ फरवरी, १९३४

चि० अमीना,

तेरा पत्र मिला। तू आकर मिल जाये तो बात अलग है, नहीं तो जब मैं उस ओर आऊँ तभी मिलना सम्भव हो सकता है। ऐसा नहीं लगता कि यह छः महीनेमें भी सम्भव हो सकेगा।

कुरैशीने कहा है इसलिए उसका इन्तजार करना। बच्चोंको बम्बई ले जाना मुझे पसन्द तो नहीं है। उनकी पढ़ाई ठीक चल रही है। खुजलीका इलाज चल रहा है। प्यार अलीको भारमुक्त किया है, अतः फिरसे उसपर जिम्मेदारी लादना मुझे अच्छा नहीं लगता। लेकिन इस प्रकार सोचनेमें मुझसे भूल हो रही हो तो मैं नहीं जानता। इसलिए मेरा अभिप्राय जाननेके बाद तुझे जो ठीक लगे वही करना।

मेरे सामने अपना हृदय खोलकर रख देनेका तुझे अधिकार है। और यह तेरा धर्म भी है। इसलिए तू जो मिलनेपर कहना चाहती है उसे निडर होकर लिख भेज।

अपना स्वास्थ्य सुधार लेना। तुझे गरिष्ठ भोजनसे परहेज करना चाहिए।

मुझे लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गजराती (सी० डब्ल्यू १०६२३)से; सौजन्य : अमीना जी० कुरैशी

९०. भेंट : आदि-द्रविड़ जनसभा, कुनूरके शिष्टमण्डलको[1]

१ फरवरी, १९३४

चर्चाका सबसे पहला विषय था हरिजनोंकी बेरोजगारीकी समस्या, जो देशके इन भागोंमें बड़ी विकट है। शिष्ट-मण्डलने सुझाया कि हरिजनोंको रोजगार देनेके लिए चमड़ेका एक कारखाना खोला जाये। महात्माजी ने उत्तर दिया कि कुनूरमें ऐसे एक कारखानेसे कुछ थोड़े-से हरिजनोंको ही रोजगार मिल पायेगा, और वह भी पेशेवर चर्मकारोंके हाथोंमें चला जायेगा। केन्द्रीय बोर्ड आर्थिक सर्वेक्षण और राहतकी एक व्यापक योजना तैयार करनेमें लगा हुआ है। शिष्ट-मण्डलके सुझाव केन्द्रीय

१. शिष्ट-मण्डलमें १२ व्यक्ति थे और उनका नेतृत्व आर० टी० केशवलु तथा आर० टी० माणिकम् कर रहे थे।

बोर्डको भेज दिये जायेंगे। उन्होंने शिष्ट-मण्डलसे विभिन्न पेशोंसे सम्बन्धित हरिजनोंकी बेरोजगारीके बारेमें आँकड़े इकट्ठे करनेको कहा।

चर्चाका दूसरा विषय एक ऐसा विशेष अखबार निकालनेकी आवश्यकता था जिसमें हरिजनोंकी सभी शिकायतोंको उचित ढंगसे पेश किया जाये। शिष्ट-मण्डलका आग्रह था कि केन्द्रीय बोर्डको ऐसे पत्रके लिए धन जुटानेमें सहायता करनी चाहिए। महात्माजी का विचार था कि अभी ऐसे काममें धन नहीं खपाना चाहिए। राहतकी दूसरी मदोंके लिए धनकी कहीं अधिक आवश्यकता है। और उन्होंने बतलाया कि तमिल तथा अंग्रेजीके ऐसे कई अच्छी ग्राहक-संख्यावाले समाचारपत्र मौजूद हैं जो हरिजनोंकी शिकायतोंकी उपेक्षा नहीं करेंगे। शिष्ट-मण्डलको ऐसे समाचारपत्रोंका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना चाहिए।

फिर इस प्रश्नपर चर्चा हुई कि गांधीजी की रायमें सवर्ण हिन्दू लोग अस्पृश्यताके बारेमें अपने विचार कहाँतक बदल रहे थे। श्री माणिकम्ने पूछा: "क्या आपने इस दौरेमें सवर्ण हिन्दुओंमें पर्याप्त हृदय-परिवर्तन पाया है?" गांधीजी ने इसका अपना वही सहज-स्वाभाविक उत्तर दिया:

मैं निःशंक होकर कह सकता हूँ कि हृदय-परिवर्तन हो रहा है। मैं सवर्ण कार्यकर्त्ताओंकी पीठ ठोकनेके लिए उनको कोई प्रमाणपत्र नहीं देना चाहता, पर परिवर्तन सचमुच काफी बड़ा, आशासे भी अधिक हुआ है। हिन्दुओंमें अब दो दल बनते जा रहे हैं — एकमें तो वे सुधारक हैं जो अपने-आपको हरिजनोंके संरक्षक-मात्र नहीं बल्कि हरिजन ही मानते हैं, और दूसरेमें वे लोग हैं जो हरिजन-आन्दोलनसे कोई वास्ता नहीं रखना चाहते। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि पहले प्रकारके लोगोंकी संख्या दिन-दिन बढ़ती जायेगी और वे लोग शीघ्र ही दूसरे प्रकारके लोगोंको अपनेमें समो लेंगे।

तब श्री माणिकम्ने पूछा: "लेकिन महात्माजी, हमने तो समाचारपत्रोंमें पढ़ा है कि आपके समझाने-बुझानेके बाद भी नाटार लोग अपनी बातपर अड़े हैं और पुरानी परम्पराओंका ही राग अलाप रहे है।" महात्माजी इसपर मुस्करा पड़े और बोले:

अच्छा! मुझे यह तो पता नहीं कि समाचारपत्रोंने क्या छापा है, पर नाटारोंके प्रतिनिधिके रूपमें जो वृद्ध सज्जन मुझसे बात कर रहे थे, लगता था, जैसे उनको सिखा-पढ़ाकर भेजा गया था, परन्तु महत्त्वकी बात तो यह है कि लगभग एक सौ नाटारोंने सद्भावके साथ मेरा परामर्श सुना था और मैं आपको बतला दूँ कि कुछ ऐसे जाने-माने नाटार हैं जो मेरी बातसे सहमत हैं और वे हमारे कार्यकर्त्ताओंकी सहायता कर रहे हैं।

गांधीजी ने शिष्ट-मण्डलके सदस्योंको आश्वस्त किया कि उनको डरनेकी कोई जरूरत नहीं, वांछित परिवर्तन शीघ्र ही होगा।

शिष्ट-मण्डलकी ओरसे बताया गया : "हमारी सभा आरम्भसे ही इस पक्षमें रही है कि कुछ सीटें सुरक्षित रखने की व्यवस्थाके साथ संयुक्त निर्वाचक-मण्डलकी प्रणाली रखी जाये। हम अपनी जातिके लोगोंको आश्वस्त करते आ रहे हैं कि सुधारकोंके हाथोंमें हमारा भविष्य निरापद है। हम जबतक अपने जातभाइयोंमें ऐसा विश्वास पैदा नहीं कर पायेंगे, तबतक संयुक्त रूपसे काम करना सम्भव नहीं होगा। इसलिए हम आपसे आगामी परिवर्तनके बारेमें आश्वासन चाह रहे हैं।" गांधीजी ने उत्तर दिया :

हाथ-कंगनको आरसी क्या? आपके अन्दर जो चीज विश्वास पैदा कर सकती है, वह है आपकी आँखोंके सामने चल रहा कार्य। यहाँ कुनूरमें भी उत्सुक लोगोंकी भीड़ विश्रामके समय भी मुझे घेरे रहती है और मैं उनसे हरिजन-कोषके लिए रुपये-पैसे माँगता हूँ। वे मुझे अपनी-अपनी सामर्थ्य-भर आने दो-आने और कभी-कभी रुपये भी देते हैं। यह एक धार्मिक आन्दोलन है, और अब सभी जगहके लोग यह महसूस करते जा रहे हैं। इसीलिए मुझे चन्दा देनेवालों की भीड़ यहाँ भी अब दिन-दिन बढ़ती जा रही है।

चर्चाके लिए अगला प्रश्न मद्रास विधान परिषद्में यरवडा समझौतेके अनुसार हरिजनोंके लिए निश्चित किये जानेवाले स्थानोंकी संख्याके सम्बन्धमें था। गांधीजी ने शिष्ट-मण्डलको आश्वस्त किया कि उनके पास जो तीस मत हैं, उनसे वे परिषद्में उठनेवाली उनकी अपनी समस्याओंके बारेमें परिषद्का बहुमत अपने पक्षमें करानेमें सदा सफल हो सकते हैं।

आप यदि परिषद्में तीस मत रखनेका महत्त्व पूरी तरह समझ लें, जैसाकि मैं समझता हूँ, तो फिर आपके मनमें कोई आशंका नहीं रह जायेगी। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके पास इससे कहीं कम मतोंकी शक्ति थी, फिर भी वे कठिन अवसरोंपर विधान-मण्डलका बहुमत अपने पक्षमें करनेमें सफल हो जाते थे। यदि परिषद्में एकदम सभी सदस्य विरोध न करने लगें, तो आपकी स्थिति बिलकुल सुदृढ़ है, और वैसा विरोध सम्भव नहीं है। इसलिए मेरी बात मानिए : भविष्यके बारेमें कोई आशंका मत कीजिए।

अन्तिम प्रश्न आम भंगी हरिजनोंके बारेमें था। "चूँकि हरिजन लोग मेहतर और भंगी हैं, इसलिए सवर्ण हिन्दू उनको समाजमें बराबरीका दर्जा देनेसे इनकार करते हैं।" गांधीजी ने उत्तर दिया :

बिलकुल गलत। प्रश्न ही मूर्खतापूर्ण है। हमें यह अज्ञान दूर करना चाहिए। मेरे आश्रममें, मैं स्वयं और अन्य सभी आश्रमवासी मेहतर और भंगी हैं। मेरे लिए यह कोई नया प्रश्न नहीं है। मेहतरों और भंगियोंका काम सचमुच एक उत्तम सामाजिक सेवा है। ज्ञानका प्रकाश मिलनेपर यह अन्धविश्वास मिट जायेगा।

शिष्ट-मण्डलके सदस्योंने आग्रहपूर्ण अनुरोध किया कि गांधीजी उनके इलाकेमें जल्दी ही फिर पधारें।

अच्छा, आप चाहते हैं कि मैं फिर आऊँ। आऊँगा। हाँ, आप मुझे ९९ वर्ष तक जीवित रहनेका आशीर्वाद दीजिए। मैं अपने ९९वें वर्षमें कुनूर आऊँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ३-२-१९३४

९१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

[२ फरवरी, १९३४ के पूर्व][1]

चि० अमला,

धीरज रखो। किसी तरह हो सका तो मैं जरूर आऊँगा। आशा है, तुमने अपनी ऐनक बदल दी होगी। आवश्यकताओंकी पूर्त्तिके मामलेमें धनकी चिन्ता मत किया करो।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

९२. बिहार और अस्पृश्यता

एक मैत्रीपूर्ण तार है : "क्या आप अस्पृश्यताके प्रश्नको एक तरफ हटाकर बिहार नहीं जायेंगे?" और दूसरा गुस्सेसे भरा तार है : "बिहार जब धू-धू कर जल रहा है तब क्या महात्माको अपनी ही बंसी बजानेमें मस्त रहना चाहिए?" इन दोनों ही तारोंमें मुझे जितनेका श्रेय दिया गया है, मैं उसके योग्य नहीं हूँ। इन दोनोंमें सेवा करनेकी मेरी क्षमताके बारेमें अतिरंजना की गई है, क्योंकि इनका खयाल है कि मैं अपने साथियोंसे अधिक सेवा-कार्य कर सकता हूँ। अपनी क्षमताके बारेमें मुझे स्वयं ऐसा कोई भ्रम नहीं है। राजेन्द्र प्रसादकी गिनती मेरे सर्वश्रेष्ठ सह-कर्मियोंमें है। वे जब भी चाहें मुझे सेवाके लिए बुला सकते हैं। हरिजन-कार्य उनका भी उतना ही है जितना कि मेरा — उसी तरह जिस तरह बिहारका कार्य मेरा भी उतना ही है जितना कि उनका। परन्तु ईश्वरने जिस प्रकार मुझे हरिजन-कार्य सौंपा है उसी प्रकार उसने उनको बिहारका राहतका कार्य सौंपा है। बिहारसे बुलावा आनेपर मुझे आशा है कि मैं पीछे नहीं रहूँगा। चम्पारनने मुझे तब बुलावा भेजा

१. साधन-सूत्रमें इस पत्रको ३१ जनवरी और २ फरवरीके पत्रोंके बीच रखा गया है।

था जब मैं यहाँ-वहाँ बस भटक ही रहा था। बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद और उनके सहकर्मियोंकी टोलीने उस समय मुझमें अपनी पूर्ण आस्था दिखाई जब भारतके लोग यह सोच ही रहे थे कि अपने सार्वजनिक जीवनमें वे मुझे कौन-सा स्थान दें। मैं बिहारके साथ ऐसे पवित्र सूत्रसे बँधा हुआ हूँ जो टूट नहीं सकता। इसलिए मुझे बिहार जानेके लिए किसी विशेष प्रेरणाकी आवश्यकता नहीं। फिलहाल मैं अपने स्थानपर रहकर ही शायद उसकी सबसे अच्छे ढंगसे सेवा कर रहा होऊँ। सारे संसारका ध्यान उसकी विपत्तिकी ओर खिंचता जा रहा है। जब सभी लोग बिहारकी सहायताके लिए आगे बढ़नेको तैयार हैं, तब मेरा वहाँ जा धमकना धृष्टता ही होगी। सहायता वे लोग भी करते हैं जो जानते हैं कि कैसे और कबतक प्रतीक्षा करनी चाहिए।

लेकिन, दूसरे तारमें कहा गया है कि हरिजन-कोषकी राशि मुझे बिहार-राहतके लिए इस्तेमाल करनी चाहिए। मेरा खयाल है कि मेरा इस सलाहके मुताबिक काम करना स्पष्ट ही विश्वासघात करना होगा। बड़ी-बड़ी विपत्तियोंमें भी हमें अपने औसान गुम नहीं होने देने चाहिए। दुनियाकी सारी दौलत भी बिहारको उसकी पहलेवाली हालतमें वापस नहीं ला सकती। पुनर्निर्माण और सब चीजें सामान्य दशामें लानेमें समय लगेगा ही। जरूरत इस बातकी है कि जो लोग कुछ दे सकते हैं उनको कमसे-कम नहीं, ज्यादासे-ज्यादा देनेके लिए प्रेरित किया जाये।

परन्तु मैं यह सुझानेकी धृष्टता कर रहा हूँ कि जो सहायता भेजी जा रही है उसका अधिकसे-अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करनेके लिए यह जरूरी है कि बिहारके पुनर्निर्माणके दौरान संगठनकर्त्ताओंको बुरी प्रथाओं तथा आदतोंको फिरसे न पनपने देनेका संकल्प कर लेना चाहिए। उनको अस्पृश्यता या परोक्ष रूपसे अस्पृश्यतापर आधारित जाति-भेदको बढ़ावा नहीं देना चाहिए। प्रकृतिने इनका कोई लिहाज नहीं किया, सबको समान रूपसे अपनी विनाश-लीलाकी लपेटमें लिया है। तब क्या पुनर्निर्माणके सिलसिलेमें हम अपने भेदभावको, जाति-जातिके बीचके भेदभावको, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदीके बीचके भेदभावको कायम रखेंगे या हम प्रकृतिसे यह सीख लेंगे कि हमारे यहाँ जैसी अस्पृश्यता प्रचलित है उसका प्रकृतिके विधानमें कहीं कोई स्थान नहीं?

सरकार और गैर-सरकारी संस्थाओं, दोनोंपर एक यह भारी दायित्व है कि पुनर्निर्माणका कार्य किस ढंगसे किया जाये। और चूँकि दोनों इस काममें परस्पर सहयोग कर रहे हैं, इसलिए मानवीय तथा स्वच्छताकी दृष्टिसें बिहारको नये सिरेसे खड़ा करना कोई कठिन काम नहीं होना चाहिए।

सभ्य और असभ्य संसारके अन्य बहुत-से लोगोंकी तरह मैं भी यह मानता हूँ कि मानव-जातिपर बिहारकी तरहकी विपत्तियाँ उसके पापोंके दण्डस्वरूप उसे चेतानेके लिए ही आती हैं। हृदयसे ऐसी आवाज उठनेपर लोग प्रार्थना करते हैं, अपनी गलतियों का अफसोस करते हैं और अपने-आपको शुद्ध बनानेके प्रयत्न करते हैं। अस्पृश्यता को मैं एक ऐसा ही घोर पाप मानता हूँ, जिसके लिए ईश्वरीय दण्ड अपेक्षित है।

मैं इस प्रकारके प्रश्नोंको कोई महत्त्व नहीं देता कि 'युग-युगसे चले आ रहे पापके लिए दण्ड क्यों' या 'बिहारको ही क्यों दण्डित किया गया, दक्षिणको क्यों नहीं', या यह कि 'दण्ड भूकम्पके रूपमें ही क्यों दिया गया, अन्य किसी रूपमें क्यों नहीं'। मेरा उत्तर यह है: मैं ईश्वर तो नहीं हूँ। इसलिए मुझे ईश्वरीय प्रयोजनका किंचित् ही ज्ञान है। ऐसी विपत्तियाँ किसी देवता या प्रकृतिकी सनक-भर नहीं हैं। वह कुछ निश्चित नियमोंका उसी तरह पालन करती है जैसेकि ग्रहोंकी गति निश्चित नियमोंके अनुसार ही निर्धारित होती है। हाँ, हम इन घटनाओंके पीछे काम करनेवाले नियमोंको नहीं जानते और इसीलिए हम उनको विपत्तियाँ या विक्षोभ कहते हैं। इसलिए हम उनके बारेमें जो भी कहते हैं, वह हमारी अटकलबाजी ही मानी जानी चाहिए। परन्तु अटकलबाजी या अनुमानका भी मानव-जीवनमें अपना एक निश्चित स्थान है। ऐसा अनुमान लगाना मेरे लिए उत्कर्षकारक है कि बिहारका यह प्राकृतिक विक्षोभ अस्पृश्यताके पापका फल है। यह भाव मुझे विनम्र बनाता है; उसके निराकरणके लिए मुझे और अधिक प्रयत्न करनेकी प्रेरणा देता है; यह मुझे अपने-आपको शुद्धतर बनाने की प्रेरणा देता है; यह भाव मुझे अपने सिरजनहारके अधिक निकट पहुँचाता है। हो सकता है कि मेरा यह अनुमान गलत हो, लेकिन इसके गलत होनेपर भी, मेरे गिनाये हुए इसके सुपरिणाम नहीं बदलते। कारण, कि आलोचक या शंकालु लोग जिसे मेरा मात्र अनुमान मानते हैं, वह मेरे अपने लिए एक जीवन्त विश्वास है और मैं उसीको अपनी भावी गति-विधियोंका आधार बनाता हूँ। ऐसी अटकलें जब आत्मिक शुद्धीकरणकी ओर नहीं ले जायें, बल्कि उलटे शायद फसादके कारण बन जायें, तब वे मात्र अन्धविश्वास बनकर रह जाती हैं। परन्तु आस्थावान लोग दैवी घटनाओंका ऐसा दुरुपयोग देखकर भी ऐसी विपत्तियोंका यह अर्थ लगानेसे बाज नहीं आ सकते कि वे उनको पापोंका प्रायश्चित्त करनेकी पूर्वसूचना देनेके लिए ही घटित हुई हैं। मैं यह नहीं कहता कि हमें यह दण्ड केवल अस्पृश्यताके पापके बदले ही दिया गया है। दूसरे लोग चाहें तो इसे अन्य अनेक पापोंके प्रति एक दैवी आक्रोशके रूपमें भी रख सकते हैं।

अस्पृश्यताका विरोध करनेवाले सुधारक तो यही मानें कि यह भूकम्प अस्पृश्यता के पापके दण्डस्वरूप ही आया था। यदि उनकी आस्था भी मेरी आस्था-जितनी ही जीवन्त होगी तो वे गलतीपर नहीं होंगे। उस आस्थाके कारण वे बिहारकी कम नहीं, कुछ अधिक ही सहायता करेंगे; और वे एक ऐसा वातावरण पैदा करनेका प्रयत्न करेंगे जिससे पुनर्निर्माणके कार्यमें अस्पृश्यताकी भावना न उभरने पाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-२-१९३४

९३. कुछ प्रश्न और उत्तर[1]

मेरे सामने प्रश्नोंका एक खासा ढेर पड़ा हुआ है। इन प्रश्नोंके उत्तर मैं केरलके दौरेमें दे चुका हूँ। किन्तु कुछ प्रश्नोंके सामान्यतः सर्वोपयोगी होनेके कारण उन्हें उत्तरोंके सहित नीचे देता हूँ:

प्रश्न: हरिजन-कार्यके लिए स्थानीय लोगोंकी सहायता बहुत ही कम मिलती है। जब आप यहाँ आते हैं, तो लोग बड़े उत्साहसे पैसा दे देते हैं। क्या आप ऐसी अपील निकाल देंगे कि लोग मेरे कार्यमें सहायता दें?

उत्तर: जनताका दोष निकालने में कोई सार नहीं। अगर जनता नहीं देती, तो यह आपका ही दोष है। आपने जनतामें अपने तथा अपने कार्यके विषयमें यथेष्ट विश्वास पैदा न किया होगा। आपको धीरज रखना चाहिए और एकाग्रतापूर्वक स्वयं उत्तम कार्य करके लोगोंको वताना चाहिए। इतना अगर आपने कर लिया, तो आप देखेंगे कि जनतासे सहायता मिल रही है। मुझे ऐसा एक भी प्रसंग याद नहीं पड़ता जब आर्थिक सहायताके अभावमें कोई भी सेवा-कार्य पड़ा रहा हो। पर जनता तो जनार्दनके समान है। जनता कार्यकर्त्ताओंके धीरजकी कड़ी परीक्षा लेती है और जब कार्यकर्त्ता अपनी प्रामाणिकता और योग्यताको जनता-जनार्दनके आगे साबित कर देते हैं, तभी उन्हें अपनी प्रार्थनाओंका उत्तर मिलता है।

प्र०: हरिजन सेवक संघकी ओरसे जो लोग सेवा-कार्य करते हैं, उन कार्यकर्त्ताओंका वेतन हरिजन-सेवाके खातेमें जायेगा या प्रबन्ध-व्ययके खातेमें?

उ०: यह तो इसपर निर्भर करेगा कि कार्यकर्त्ता किस किस्मका काम करता है। यदि वह रचनात्मक कार्य करता है — जैसे हरिजन-पाठशालामें अध्यापनका काम — तो उसका वेतन हरिजन-सेवाके खातेमें जायेगा। और अगर वह कार्यालयमें हिसाब-किताब रखने या ऐसा ही कोई अन्य लिखा-पढ़ीका काम करता है, तो उसका वेतन प्रबन्ध-खर्चके खातेमें डाला जायेगा।

प्र०: आपने कहा है कि जो समाज अपने सेवकोंकी अवहेलना करता है वह दुःखका भागी होता है। तो आपके कहनेका क्या यह अभिप्राय है कि हरिजन समाजके सेवक हैं?

उ०: हाँ, मैंने तो जो सच बात है, उसीका उल्लेख किया है। हरिजन आज वर्गके रूपमें समाजके सेवक हैं; और समाज-सेवकके रूपमें उनके साथ अपमानजनक बरताव किया जाता है। समाज अपने अत्यन्त उपयोगी सेवकोंकी भयंकर उपेक्षा करके हजारों तरहसे विपदा भोग रहा है, यह बात तो कोई भी दिनके उजालेके समान

१. गुजरातीमें यह प्रश्नोत्तर २८-१-१९३४ के **हरिजनबन्धु**में छपा था।

साफ-साफ देख सकता है। आज जो भयानक आर्थिक, सामाजिक, आरोग्य-विषयक और नैतिक पतन हो रहा है, उसका कारण हमारी यह उपेक्षा ही तो है। जो बात वास्तविक है, उसीका मैंने यहाँ वर्णन किया है। पर इससे यह अर्थ नहीं निकलता कि हरिजनोंको हमेशा ही समाजके सेवक बने रहनेके लिए बाध्य किया जाना चाहिए।

प्र० : खादी-सेवाके क्षेत्रमें हरिजनोंको स्थान न देनेसे मालूम होता है कि खादी-सेवकोंकी हरिजन-कार्यके प्रति सहानुभूति नहीं है।

उ० : जहाँतक मुझे मालूम है, यह दोषारोपण ठीक नहीं है। खादी-कार्यमें बहुत-से हरिजन लगे हुए हैं। और हरिजनोंके लिये खादी-क्षेत्रमें जानेपर निश्चय ही कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

प्र० : हरिजनोंमें आज अपने नामके साथ सवर्ण हिन्दुओंके जाति-पद लगानेका रिवाज पड़ता जाता है, जैसे नंबूद्री, नंबियार आदि। इसके सम्बन्धमें आप क्या कहते हैं?

उ० : यह रिवाज मुझे मालूम है। यह कोई नई बात नहीं है। पर यह रिवाज मुझे पसन्द नहीं। हरिजन लुक-छिपकर सवर्ण समाजमें प्रवेश नहीं करना चाहते। सवर्णोंको उन्हें अपने सगे भाई-बहनोंकी नाईं प्रेमसे अपनाना है। यह आन्दोलन तो सवर्णोंकी आत्म-शुद्धि और प्रायश्चित्तका आन्दोलन है।

प्र० : आप चाहते हैं कि स्त्रियाँ अपने आभूषणोंका त्याग कर दें। तो फिर आप इसी तरह सवर्णोंसे क्यों नहीं कहते कि वे भी जनेऊ उतारकर अपने अभिमानका त्याग कर दें?

उ० : इन दो वस्तुओंमें कोई तुलना नहीं। जिन लोगोंकी जनेऊमें श्रद्धा है, उनके लिए तो वह नवजन्मका एक चिह्न है। मैं यज्ञोपवीत नहीं पहनता, कारण कि मेरे लिए उसका कोई अर्थ नहीं रहा; और मैं जानता हूँ कि करोड़ों आदमियोंका काम बिना जनेऊके चल रहा है। जहाँतक उपवीतका उपयोग उच्चताके चिह्नके रूपमें किया जाता हो, उतने अंशमें तो वह आभूषणोंसे भी बुरा है। और उपवीत जिस अभिमानका चिह्न है, यदि उस अभिमानका त्याग न किया गया तो उपवीत-परित्यागका कोई अर्थ ही नहीं होगा। हरिजनोंको उपवीत धारण करना हो, तो वे करें, उन्हें कौन रोकता है? लेकिन मेरी तो यह दृढ़ मान्यता है कि इस प्रथाको प्रोत्साहन न दिया जाये, क्योंकि इस प्रथाके पीछे जो अर्थ था, वह तो आज रहा नहीं; इससे वह अब निरा अनुकरण ही होगा।

प्र० : मैं जिस संघका प्रतिनिधि हूँ, उस संघका उद्देश्य है जात-पाँत तोड़ना और तमाम धर्म-मजहबोंमें सामंजस्य स्थापित करना। श्री नारायण गुरु एक ईश्वर, एक धर्म और एक जातिका उपदेश किया करते थे। अब आप मुझे क्या सन्देश देते हैं?

उ० : मैं चाहता हूँ कि आपको पूरी सफलता मिले। मैं यह अवश्य मानता हूँ कि विभिन्न धर्मोंमें मेलजोल होना चाहिए। इस सम्बन्धमें यथाशक्ति प्रयत्न भी

मैंने किया है। जहाँतक जाति-भेदका अर्थ ऊँच-नीचके भावका सूचक है, वहाँतक तो उसका मैं सर्वथा नाश चाहता हूँ। वह अस्पृश्यताकी ही एक अवस्था या विभाग है। पर जहाँतक वह जाति-भेद 'वर्ण'के अर्थमें प्राकृतिक नियम एवं सच्चे अर्थशास्त्रके अनुसार मनुष्यकी शक्तिका संचय करता है, वहाँतक उसे मानने और उसके अनुसार चलने में ही लाभ है। आप कह सकते हैं कि ऐसे किसी प्राकृतिक नियमका अस्तित्व ही नहीं है, तो इसके समर्थनमें तो मैं इतना ही कह सकता हूँ कि 'हरिजन'में इसके जो-कुछ प्रमाण मैंने दिये हैं, वे आप देख लें। स्व० श्री नारायण गुरुसे मिलने और उनके साथ इस विषयकी चर्चा करनेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ था। एक ईश्वरमें विश्वास तो तमाम धर्मोंका मूलाधार है। पर मैं ऐसे किसी कालकी कल्पना नहीं कर सकता, जब संसार-भरमें व्यावहारिक रीतिसे एक ही धर्म देखनेमें आयेगा। सैद्धान्तिक दृष्टिसे तो चूँकि एक ही ईश्वर है, इसलिए धर्म भी एक ही हो सकता है। मगर व्यवहारमें तो मैं जानता नहीं कि किन्हीं भी दो मनुष्योंकी ईश्वर-विषयक कल्पना बिलकुल एक-सी हो। इसलिए शायद विविध स्वभाव तथा विविध जलवायुके अनुसार यह धर्मोंकी विविधता भी रहेगी ही। पर मेरी दृष्टिमें ऐसा समय तो जरूर आ रहा है, जब विभिन्न धर्मावलम्बी लोग दूसरोंके धर्मोंके प्रति उतना ही आदर-भाव रखने लगेंगे, जितना कि वे अपने धर्मके प्रति रखते हैं। मेरी मान्यता है कि हमें भेदमें **अभेदका दर्शन** करना है। जाति-भेदके सम्बन्धमें तो मैं इतना ही कहूँगा कि जहाँतक ऊँच-नीचके भावको मिटानेका प्रश्न है, सबकी जाति एक ही है। हम चूँकि एक ही ईश्वरकी, एक ही परमपिताकी सन्तान हैं, इसलिए निश्चय ही हम सब सर्वथा समान हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-२-१९३४

९४. टिप्पणियाँ

सस्तेसे-सस्ता मंच

कार्यकर्त्ताओंने सार्वजनिक दौरोंपर होनेवाले खर्चकी चर्चाके दौरान कहा है कि उनमें शरीक होनेवाले विशाल जन-समूहको देखते हुए सभाके लिए बनाये जानेवाले मंचपर ही कमसे-कम पचास रुपयेका खर्च बैठता है। इतने खर्चकी जरूरत नहीं पड़नी चाहिए। विशाल जन-समूहके शामिल होनेका मतलब यही होता है कि सभाका उद्देश्य काफी लोकप्रिय है और इसीलिए स्वैच्छिक सहायता मिल ही जायेगी। ऐसे अनुकूल वातावरणमें ईंटें उधार लेने में कठिनाई नहीं पड़नी चाहिए। उसपर लगनेवाला श्रम भी स्वैच्छिक और निःशुल्क होना चाहिए। चिनाईके लिए चूने आदिकी जगह गारा इस्तेमाल करना चाहिए। इस तरह करीब एक रुपयेमें एक मंच तैयार किया जा सकता है। ऐसा मंच बनाने के लिए कुशल कारीगरकी जरूरत नहीं। खर्च तो सिर्फ

ईंटें ढोनेकी गाड़ीपर करना होगा। पर इस तरहका मंच भी कोई बिलकुल जरूरी नहीं है। यदि श्रोताओंके बीचमें एक दायरेनुमा जगह खाली छोड़ दी जाये और वह इतनी बड़ी रखी जाये कि उसमें एक मोटरगाड़ी आसानीसे मोड़ ले सके और साथ ही उस दायरेसे निकलने और उसतक पहुँचनेके लिए मोटरगाड़ीके लायक चौड़ा रास्ता रखा जाये, तो मोटरगाड़ीको ही ठोस मंचकी तरह काममें लिया जा सकता है। शिवगंगा और मनमदुरामें इसका प्रयोग सफलताके साथ किया गया था। यदि और ऊँचा मंच दरकार हो तो मोटरलॉरीकी छतको मंचकी तरह इस्तेमाल किया जा सकता है। वह तो विशालसे-विशाल श्रोतृ-समूहके लिए भी ठीक रहेगा। पिछले दौरोंमें मैंने इसकी भी आजमाइश कर ली है। हाँ, ऐसी दायरेनुमा जगहको काफी मजबूत बाड़से घेर देना चाहिए। इसके लिए लकड़ीके मजबूत खम्भे और अच्छे मोटे रस्से उधार लिये जा सकते हैं और यदि निःशुल्क और स्वैच्छिक श्रम करनेवाले लोगोंकी संख्या पर्याप्त हो तो ऐसा एक घेरा दो घण्टेसे कम ही समयमें तैयार किया जा सकता है। जिन्हें सचमुच स्वयंसेवक कहा जा सकता हो, ऐसे लोगोंको बिना किसी परेशानी और शोर-गुलके ये चीजें तैयार करनेमें समर्थ होना चाहिए।

गीतावाचक

'हरिजन'के पाठक जानते हैं कि मेरे लिए 'गीता'का क्या महत्त्व है। मैं 'गीता'-जैसे ग्रन्थोंको कंठस्थ करना सदासे अत्यन्त वांछनीय मानता आया हूँ। पर मैं स्वयं अनेक बारके प्रयत्नोंके बाद भी 'गीता'के सभी अध्यायोंको कंठस्थ नहीं कर पाया हूँ। मैं जानता हूँ कि रटकर याद करने के मामलेमें मैं बहुत ही कच्चा हूँ। इसलिए मुझे जब भी कोई ऐसा व्यक्ति मिलता है जिसे 'गीता' कंठस्थ हो तो उसके लिए मेरे मनमें सम्मान जाग उठता है। तमिलनाडुके दौरेमें ऐसे दो व्यक्तियोंसे मेरी मुलाकात हो चुकी है — मदुरामें एक सज्जन थे और देवकोट्टामें एक महिला। मदुराके सज्जन एक व्यापारी हैं और उनकी कोई ख्याति नहीं है; और महिलाका नाम है पार्वतीबाई, जो न्यायमूर्त्ति सदाशिव अय्यरकी पुत्री हैं। श्री अय्यरने अपने जीवन-कालमें ही 'गीता' कंठस्थ करनेवाले सर्वश्रेष्ठ गीतावाचक को प्रतिवर्ष एक पुरस्कार देने की व्यवस्था की थी। पर मैं चाहूँगा कि ऐसे वाचक लोगोंको यह प्रतीति भी होनी चाहिए कि मात्र वाचन अपने-आपमें ही उद्देश्य नहीं है। वाचन तो 'गीता'के सन्देश और उसके अर्थका मनन करने और उसे हृदयंगम करने के एक साधनके रूपमें ही लिया जाना चाहिए। लगातार अभ्यास कराया जाये तो एक तोता भी 'गीता'को रटकर सुना सकता है। परन्तु ऐसा पाठ करनेसे तोता तो तोता ही रहेगा, उसमें कुछ अधिक ज्ञान तो नहीं उपजेगा। गीतावाचक को, गीताकारकी अपेक्षाके अनुसार, व्यापक अर्थमें एक योगी होना चाहिए। गीताकी अपेक्षा है कि उसके अनुयायी अपने मन, वचन और कर्मसे संतुलित रहें और इन तीनोंके बीच पूर्ण सामंजस्य हो। जिसके वचन और कर्म उसके विचारोंके अनुरूप नहीं, वह व्यक्ति या तो वंचक होगा या पाखंडी। ऐसी चेतावनी देना इसलिए जरूरी हो गया है क्योंकि

मुझे शंका है कि मेरी प्रार्थना-सभाओंमें सम्मिलित होनेवाले अनेकानेक लोग ऐसा समझ लेते हैं कि प्रार्थनाओंमें शामिल होने-भरसे ही वे पुण्य अर्जित कर लेते हैं। और चूंकि उनमें से अधिकांश लोग निस्सन्देह ही अस्पृश्यताके विरुद्ध चल रहे आन्दोलनसे सहानुभूति रखते हैं, इसलिए उनको यह चेतावनी दे देना जरूरी हो गया है कि उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे अपने विश्वास और आस्थाके अनुरूप आचरण करें और अपने व्यवहारसे सिद्ध करें कि अस्पृश्यताका भाव उनको छू भी नहीं गया है, और वे किसीको भी अपने से नीचा नहीं मानते।

सनातनियोंके लिए

मेरे इस दौरेमें ऐसी कोशिशें चलती रहती हैं कि मेरे और शंकराचार्यों तथा अन्य पण्डितोंके बीच एक खुली बहस करा दी जाये। ऐसी बहसोंके आयोजनके प्रस्तावों के बारेमें मैंने जो उत्तर दिये उनको बड़े गलत-सलत ढंगसे पेश किया गया है। इसलिए मैं इन स्तम्भोंमें यहाँ फिर वही दोहरा रहा हूँ जो अपने पत्रों और मौखिक सन्देशोंमें कहता रहा हूँ। अस्पृश्यता पैदा कैसे हुई — इस विषयपर मैं सार्वजनिक रूपसे किसी बहसमें नहीं पड़ना चाहता। न तो ऐसी बहसोंपर मुझे विश्वास है और न मैं संस्कृतका कोई पण्डित होनेका दावा ही करता हूँ। हाँ, मैं एक-दूसरेको समझने, पारस्परिक सहमतिकी सम्भावनाएँ खोजने और सामान्यतः सत्यके निरूपणके प्रयोजनसे मित्रोंकी तरह बैठकर किसी भी सनातनीके साथ बातचीत करने के लिए तैयार ही नहीं, लालायित हूँ। उदाहरणके तौरपर, मेरे एक कथनके सिलसिलेमें अकसर मुझे चुनौतियाँ दी जाती हैं। वह कथन, जिसे मैं बार-बार दोहराता रहा हूँ, यह है कि अस्पृश्यताका आज जो प्रचलित स्वरूप है, उसकी स्वीकृति किसी भी शास्त्रमें नहीं दी गई है और सार्वजनिक मन्दिरोंके उपयोगपर किसी भी शास्त्रमें ऐसा प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया है कि आज जो अस्पृश्य माने जाते हैं वे उनका उपयोग न करें। मैं इन स्तम्भोंमें कई बार इसका खुलासा कर चुका हूँ कि शास्त्रोंसे मेरा मतलब क्या है और अस्पृश्यताके समर्थनमें आम तौरपर तथा मन्दिर-प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगाने के समर्थनमें खास तौरपर जिन श्लोकोंको हर कहीं उद्धृत किया जाता है, मैं उनका क्या अर्थ लगाता हूँ। मैं यह अपेक्षा नहीं रखता कि मेरे सभी आलोचक 'हरिजन' पढ़ेंगे ही। इसलिए मैं सनातनी भाइयोंको अपना अर्थ समझाने और उनकी आपत्तियोंको स्वयं समझनेके लिए सहर्ष तैयार हूँ। और निश्चय ही ऐसे बहुत-से काम हो सकते हैं जिनको हम दोनों ही पारस्परिक सहमतिसे कर सकें, भले कुछ विषयोंके बारेमें हमारा मतभेद बना रहे। पाठकोंको मैं यह भी बतला दूं कि इस दौरेमें इस प्रकारकी मैत्रीपूर्ण चर्चाएँ बहुधा होती भी रही हैं। लेकिन कुछ लोगोंने तो किसी भी तरह हो, मेरी बदनामी करना जैसे अपना ध्येय ही बना लिया है। इसीलिए वे या तो ऐसी खुली बहसोंके सुझाव रखते हैं जिन्हें, जैसाकि उन्हें मालूम है, मैंने अस्वीकार कर दिया है, या मुलाकातके लिए ऐसा समय माँगते हैं जिसे मंजूर करना मेरे लिए तबतक असम्भव है जबतक कि मैं सारे दिनका अपना कार्यक्रम रद करके हजारों नर-नारियों को निराश करने के लिए तैयार न हो जाऊँ। मैं कुछ भी कहूँ या करूँ, ऐसे लोग

तो सन्तुष्ट होनेवाले ही नहीं हैं। मैं अपने किसी भी कार्यसे जो नहीं कर सकता, उसे समय कर दिखायगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-२-१९३४

९५. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२ फरवरी, १९३४

प्रिय सतीशबाबू,

आपके पत्र मिले और तार भी। डॉ० विधानके नाम मेरा विस्तृत पत्र आपने देखा होगा। अब मैं चाहता हूँ कि आप पुनर्विचारके बाद अपनी राय मुझे लिखें। मेरी बात आपने जिस तरह स्वीकार कर ली, वह मुझे कतई अच्छा नहीं लगा। परन्तु मैं उसपर फिरसे तर्क नहीं करूँगा। यदि हम 'गीता'की भावनाको आत्मसात् कर सकें, तो हमें धू-धू करती अग्निके बीच भी निर्लिप्त रहना चाहिए। कौन जानता है कि जो चीजें हमारी बुद्धिको चक्करमें डाल देती हैं, उनके पीछे ईश्वरका हेतु क्या है?

यदि 'हरिजन'की[1] स्वाभाविक माँग नहीं है तो उससे आपको छुटकारा मिलना ठीक ही रहेगा। आप जब-तब पर्चे निकाल सकते हैं। बन्द करते समय आपको बिना किसी लाग-लपेटके कहना चाहिए कि आप उसे क्यों बन्द कर रहे हैं।

हेमप्रभाको लिखे मेरे पत्रोंको आप गौरसे पढ़िए। मैं उतनी गम्भीरतापूर्वक नहीं लिखना चाहता था, फिर भी वह पत्र गम्भीर बन गया है। इससे पता चलता है कि फिलहाल मुझे इस प्रकारकी चीजोंकी कितनी अधिक चिन्ता है।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२५) से।

१. बंगला **हरिजन**, जिसका सम्पादन सतीशचन्द्र दासगुप्त करते थे।

९६. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

कुनूर
२ फरवरी, १९३४

चि० विद्या,

तुम्हारे खत मिले हैं। तुम्हारे कराची नहीं जाना ऐसा कहनेका मतलब नहीं था। जाना या नहीं जाना इसका निश्चय तुम्हारे पर रखा था। इसलिये लिखा कि 'यदि जाना है तो आनन्दके छुटनेपर जाना चाहिए' उसमें तो कोई सन्देह ही नहीं है, लेकिन उसके पहले भी अगर सास और ससुर बुलावे तो थोड़े अरसेके लिए जाना दुरुस्त ही है। ये सब बात तू ही ज्यादा जान सकती है। आनंदकी बात सुनकर मैं बहुत खुश होता हूँ। चोइथरामको कितनी जेल मिली है? महादेवकी देखभाल जितनी हो सके इतनी तुम्हारे ही करना अच्छा है। महादेवको नारंगी या मोसंबी मिलती है? मुसंबीका, द्राक्षका रस पिलाना ही चाहिए। दूधीबेनका ठिकाना :

दूधीबेन देसाई, दक्षिणामूर्ति, भावनगर (काठियावाड)।

पिताजी का खत आया है। उनको मैं उत्तर लिखता हूं।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्म से; राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

९७. पत्र : के० बी० केवलरामानीको

प्रतिलिपि

२ फरवरी, १९३४

प्रिय केवलराम,

आपका पत्र पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। विद्या बड़ी अच्छी लड़की है, जिसपर आप हर तरहसे गर्व कर सकते हैं। लेकिन उसके पिता होनेके आपके सम्मानका अब मैं भी साझीदार बन गया हूँ। और अकसर ऐसा देखा गया है कि गोद लेनेवाला पिता जन्म देनेवाले पितासे कहीं अधिक करता है, क्योंकि उसे गोद लेनेका कारण ही उसमें उसकी (पिताकी) विशेष रुचि होती है। लेकिन मैं उसके लिए अधिक करूँ, इसका मेरे पास ऊपर बताये गये कारणसे कहीं ज्यादा ऊँचा कारण मौजूद है। विद्या अपनी इच्छासे आपकी बेटी होकर पैदा नहीं हुई थी। लेकिन मुझे तो

उसने अपनी इच्छासे, सोच-समझकर अपना पिता बनाया है, और इसलिए वह बड़ी खुशीसे मेरी आज्ञाका पालन करती है। तो अगर हमारे बीच स्वस्थ स्पर्धा चलती है तो उससे उसे लाभ ही होगा।

आपने चूँकि शुरुआत कर दी है, इसलिए आपको जब भी पत्र लिखनेकी जरूरत महसूस हो, बेझिझक लिखिएगा।

आपका,

श्री के० बी० केवलरामानी
एस० डी० ओ०, वनीवल्ला
डाकघर – मैलसी (पंजाब)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

९८. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२ फरवरी, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारा असन्तुलित पत्र मुझे मिल गया है। तुम्हारे मनको रोग लग गया है। तुम लगातार अपने ही बारेमें क्यों सोचती रहती हो, और दूसरे लोगों द्वारा अपने प्रति किये गये अन्यायोंके बारेमें मन-ही-मन क्यों घुनती रहती हो? तुम उन अन्यायोंके बारेमें क्यों नहीं सोच पातीं जिनसे दूसरे लोग पीड़ित हैं? अपने ऊपर होनेवाले अन्यायोंको लेकर मन-ही-मन घुनते रहनेसे हम असन्तुलित हो जाते हैं। दूसरों पर होनेवाले अन्यायोंके साथ अपने-आपको जोड़नेसे हम सबल बनते जाते हैं। पर अब चूँकि मुझे तुमको साबरमती भेजनेकी अनुमति मिल गई है, इसलिए मुझे आशा है कि तुम्हारा दुःख दूर हो जायेगा। मैंने अभी-अभी तुमको साबरमती भेजनेके लिए तार दिया है। इसलिए मुमकिन है कि यह पत्र तुमको वहींके पतेपर भेजा जाये। तुम अपने सभी विचार मुझे निस्संकोच बतलाती रहना और मुझे लिखना कि तुमको नये वातावरणमें कैसा लग रहा है। तुम अपने लिए स्वयं ही काम चुन सकती हो। सामर्थ्यसे ज्यादा मेहनत मत करना और वही आहार लेना जो तुमको माफिक पड़े।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

९९. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

२ फरवरी, १९३४

प्रिय गुरुदेव,

आपका पत्र अभी-अभी मिला है। मुझको बदनाम करनेका एक आन्दोलन-सा चल रहा है। बिहारकी विपत्तिके बारेमें की गई मेरी टिप्पणियोंके रूपमें उनको मुझपर चोट करनेका एक अच्छा साधन हाथ लग गया है। इस विषयपर मैं कई सभाओंमें बोल चुका हूँ। मेरा सुविचारित मत संलग्न है।[1] आपके वक्तव्यको[2] देखकर मैंने समझा है कि शायद हमारे बीच अब एक बुनियादी मतभेद पैदा हो गया है। पर मेरी विवशता कि मैं अपने विचारोंपर आग्रह करनेके अतिरिक्त कुछ कर ही नहीं सकता। मेरा यह विश्वास अवश्य है कि भौतिक घटनाओंके अतिभौतिक परिणाम निकलते हैं। लेकिन कैसे निकलते हैं, यह मैं नहीं जानता।

आप यदि मेरा लेख पढ़नेके बाद भी अपने वक्तव्यका प्रकाशन आवश्यक मानें, तो उसे आपकी इच्छानुसार यहीं या वहाँ तुरन्त प्रकाशित किया जा सकता है। आशा है, आप स्वस्थ होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

अन्तिम पंक्तियोंकी लिखावट बहुत ही भौंडी हो गई है, पर मैं बेहद थका हुआ और उनींदा था। कृपया क्षमा करें। इसे इसी डाकसे रवाना करना चाहता हूँ, इसलिए इसकी साफ नकल करनेमें मुझे समय नहीं लगाना चाहिए।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २२८९ और ४६४२) से।

१. देखिए "बिहार और अस्पृश्यता", ९४-६।
२. वक्तव्यके पाठके लिए देखिए परिशिष्ट-१।

१००. पत्र : जमनालाल बजाजको

२ फरवरी, १९३४

चि० जमनालाल,

कमलनयनके सम्बन्धमें लिखा पत्र और उसका नोट पढ़ा। वह यहाँका पाठ्यक्रम और हिन्दीकी मध्यमा पूरी करना चाहता है। मैं उसमें इतना सुधार करना चाहता हूँ। वह हिन्दीका सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पूरा करके अन्तिम परीक्षा दे। अंग्रेजी और ज्यादा पक्की करे, संस्कृत सीख ले और फिर इंग्लैंड नहीं बल्कि अमेरिका जाये। वहाँ पढ़ने की सुन्दर व्यवस्था तो की ही जा सकती है। अमेरिकामें थोड़ा समय बिताकर सारी दुनियाकी यात्रा कर ले। इस तरह प्राप्त अनुभव उसके लिए बड़ा उपयोगी होगा। उसकी बुद्धि अधिक परिपक्व हो जानेपर वह अधिक सीख सकेगा। यह अच्छा है कि उसे परीक्षाका मोह नहीं है। मतलब यह कि पाश्चात्य देशोंको देखनेकी उसकी इच्छाको मैं दबाना नहीं चाहता। [लेकिन] यह जरूरी मानता हूँ कि वह यहाँसे ज्यादा पाथेय लेकर जाये।

सुरेन्द्रको किस काममें लगाया है?

मैंने अमलाबहनको साबरमती भेजनेका निश्चय कर लिया है। यदि वह जगह अनुकूल नहीं आई तो देखा जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३२) से।

१०१. पत्र : जीवणजी डा० देसाईको

२ फरवरी, १९३४

भाई जीवणजी,

तुम्हारा पत्र मिला।

पुस्तकोंके बारेमें तुमने ठीक खबर दी। मुझे फुरसत ही नहीं मिलती। मैं कुनूर आ गया हूँ किन्तु यहाँ भी वही हाल है। यहाँ भी कुछ कार्यक्रम होता ही है। बहुत दिनोंकी अपनी नींदकी भूख कुछ हदतक मिटा रहा हूँ और अनुत्तरित पड़े हुए पत्रोंको निबटा रहा हूँ। इसीमें बहुत-सा समय चला जाता है। प्रस्तावना और यरवडा मन्दिरके लेखोंको जाँचनेको मैं बहुत उत्सुक हूँ। देखूँ, जाँच पाता हूँ या नहीं। यदि मैं थक गया तो इनकार कर दूँगा। किन्तु कोशिश करूँगा, ऐसा न हो।

आज पुस्तकालयके बारेमें मैंने बालूभाईको लिखा है।

कर्नाटकके कार्यक्रममें परिवर्तन हुआ है। अब हम लोग बेलगाँव जायेंगे, किन्तु इस महीनेके अन्तमें जाना है। कल मैं अनुमति देनेके लिए तार[1] करनेवाला हूँ। यदि अनुमति मिल गई तो मैं तुम्हें तारसे खबर दूंगा। मैं २१ तारीखतक तो मद्रासमें हूँ। उसके बाद कुर्ग और फिर मंगलोर। इसके बाद कारवार और फिर बेलगाँव आता है। क्या दुर्गा तबतक इन्तजार कर सकेगी?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९३७) से। सी० डब्ल्यू० ६९१२ से भी; सौजन्य : जीवणजी डाह्याभाई देसाई

१०२. पत्र : ड्राइवरको

२ फरवरी, १९३४

भाई ड्राइवर,

तुम्हारा पत्र सही-सलामत मुझे मिल गया है। तुम्हारे मनकी निर्मलता मुझे भाती है। जो अनुभव तुम्हें हुआ है वैसा अनुभव बहुत-से नवयुवकोंको हुआ है। इसमें दुःख माननेका कोई कारण ही नहीं है।

तुम्हारे पत्रसे मेरे मनपर यह छाप पड़ी है कि फिलहाल तुम्हारा कर्त्तव्य न तो मेरे पास आना है और न फादर एल्विनके पास जाना। फिलहाल तो तुम जहाँ हो वहीं रहकर गरीबीसे रहना सीखो। जितना बचा सको उतना बचाकर उसका उपयोग सेवाके लिए करो और विद्यार्थियोंमें जिन नीतिपूर्ण तत्त्वोंका प्रचार कर सको उनका प्रचार करो। जबतक तुम्हारे मनमें पूर्ण वैराग्य उत्पन्न न हो जाये तबतक इसी मार्गपर चलते रहना तुम्हारा कर्त्तव्य है। जबतक वर्तमान स्थितिके बारेमें उत्कट अरुचि उत्पन्न न हो तबतक उसका त्याग करना न तो शोभा देगा और न वह टिकेगा ही। जब तुम्हारे मनमें उत्कट वैराग्य आ जायेगा तब तुम्हें कोई रोक नहीं सकेगा। मुझे पत्र लिखनेकी जब भी इच्छा हो जाये तब अवश्य लिखना। आशा है, मेरी गुजराती पढ़ने-समझने में तुम्हें कोई कठिनाई नहीं होती होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८०४५) से।

१. देखिए "तार : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको", ३-२-१९३४।

१०३. पत्र : रमाबहन जोशीको

२ फरवरी, १९३४

चि० रमा,

मैंने आज तुम्हारे बारेमें तार दिया है कि यदि तुम्हारी आश्रम[1] छोड़नेकी इच्छा हो तो भले छोड़ दो। किन्तु मेरी आन्तरिक इच्छा तो यही है कि वहाँ तुम दोनोंका स्वास्थ्य ठीक रहता है और वह जगह तुम्हें रास आ गई है तो तुम्हारा वहाँसे न हटना ही अच्छा होगा। छगनलाल छूटनेवाला है, इसकी कोई चिन्ता नहीं। वह तुमसे वहाँ आकर मिल जायेगा। सगे तो हमेशा सगे ही रहते हैं किन्तु वह सम्बन्ध स्वयं हमने ही तोड़ दिया है।[2] इसके बावजूद फिलहाल मेरा विचार यह है कि जो जैसा करना चाहे उसे वैसा करने दिया जाये और ऐसा करते हुए सबको यथासम्भव आगे बढ़ने दिया जाये। अतः तुम्हें जैसा ठीक लगे वैसा करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३२) से।

१०४. पत्र : कपिलराय और शशिलेखा मेहताको

२ फरवरी, १९३४

चि० कपिल और शशिलेखा,

तुम्हारा पत्र तो मुझे मिला ही नहीं। हाँ, तार मिला था, सो भी परसों। आज तुम्हारा पत्र मिला। पहले तो तार समझ ही नहीं सका। यदि तुमने शशिलेखाका नाम मुझे बताया था तो मैं उसे भूल गया था। आज दोपहरको इस बारेमें पूछताछ करनेपर पृथुराजने बताया कि यह तार देनेवाला कपिलराय कौन है। तुम दोनोंको मेरा आशीर्वाद तो है ही। तुम दीर्घायु होओ और दोनों देशकी खूब सेवा करो। संयमका पालन करनेमें एक-दूसरेकी सहायता करना।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत कपिलराय मेहता
स्वदेशी म्यूजियम, वलन्दाकी हवेली
अहमदाबाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९७०) से। सी० डब्ल्यू० १६०० से भी; सौजन्य : शशिलेखा मेहता

१. कन्या आश्रम, वर्धा।

२. छगनलाल जोशीने जेलसे छूटनेके बाद कुछ दिन अपनी बहनके साथ रहनेकी इच्छा व्यक्त की थी।

१०५. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको[1]

२ फरवरी, १९३४

चि० अम्बुजम,

तुमारे दोनों खत मिले हैं। समयके अभावके कारण मैं शीघ्र उत्तर नहिं दे सका। तुमारा ख्याल तो नित्य रहता है।

रामायण पढती है सो बहूत अच्छी बात है।

हरिजन-सेवा भी कर रही है वह ठीक है।

बिहार-संकटके लिये कुछ पैसे इकट्ठे किये? पिताजी ने कुछ दिया?

मुझे लिखा करो, मैं अक्षर स्पष्ट लिखनेकी कोशीश तो करता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५९५)से; सौजन्य: एस० अम्बुजम्माल

१०६. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२ फरवरी, १९३४

चि० हेमप्रभा,

तुमारे खत मिलते रहते हैं। भूकंपने मुझे हिला दिया है। लेकिन मैंने तो यह सीख लिया कि हम पागलमें[2] अपने को दूसरोंसे भिन्न मानते हैं। यदि एक ही समझें तो न कोई मरता है, न कोई जीता है। यथा पिंडे तथा ब्रह्मांडे। इस शरीर नित्य मरता है तो भी जीता है। इसी तरह जगतरूपी विराट स्वरूप भी नित्य मरता है तो भी जीता है। उसमें हम जो बिंदु रूप हैं उनका मरना मृत्यु ही नहिं है। शरीर-का रूपांतर होता रहेगा, उसमें शोक क्या करना था? तो क्या हम कठोर बनें? नहिं, लेकिन यदि हम सब जीव भिन्न दीखते हुए भी एक हैं तो दूसरों के लिये हम मरें अर्थात् यथासंभव त्याग करते रहें। यही वस्तु चमत्कारी भाषामें 'ईषोपनिषद्'के पहले मंत्रमें कही है। यह यदि नहिं जानती है तो मुझे लिखो मैं भेजुंगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०८) से।

१. एस० श्रीनिवास अय्यंगारकी पुत्री।

२. 'पागलपनमें' होना चाहिए।

१०७. भाषण : सार्वजनिक सभा, कोटगिरिमें[1]

२ फरवरी, १९३४

मित्रो,

आजके इस तीसरे पहर आपसे मिलकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। मैं इस सुन्दर पहाड़ी क्षेत्रमें आनेको बड़ा उत्सुक था। मैं जानता हूँ कि मेरे कुछ सहयोगी पहाड़ी लोगोंके बीच बड़े उत्साहसे काम कर रहे हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि जैसी उग्र अस्पृश्यता हम मैदानी क्षेत्रोंके लोगोंके बीच प्रचलित है वैसी आपके बीच नहीं है। फिर भी, भारतमें कोई भी व्यक्ति इस जहरसे बिलकुल अछूता नहीं रह सकता। आपके बीच भी ऊँच-नीचका भेदभाव तो है ही। और जबतक हममें अपने-आपको कुछ अन्य लोगोंसे ऊँचा माननेकी आदत बनी हुई है तबतक यही माना जायेगा कि हमने अस्पृश्यतासे मुक्ति नहीं पाई है, और जबतक हमारे बीच वह भेद-भाव है, याद रखिए, हमने अस्पृश्यतासे छुटकारा नहीं पाया है। इसलिए मैं चाहूँगा कि आप सब मनमें तनिक विचार कीजिए, यह जानिए और महसूस कीजिए कि हम सब एक ही ईश्वरकी सन्तान हैं, और इसलिए हमारे बीच, उस परम पिताकी सन्तानोंके बीच, ऊँच-नीच-जैसी तो कोई चीज हो ही नहीं सकती और उन सबको समान अधिकार होना चाहिए।

और अब मैं आपका ध्यान एक बातकी ओर, जिसके बारेमें मैंने अभी-अभी सुना है, खींचना चाहता हूँ। वह बात यह है कि पहाड़ी लोगोंको मद्यपानकी कुटेव है। जिन्हें इसकी आदत है, उनको यह महसूस करना चाहिए कि मद्य तो मनुष्यको बिलकुल पागल बना देता है। हमारे जीनेके लिए मद्य बिलकुल जरूरी नहीं है। यही नहीं, जो आदमी अकसर मद्यपान करता है वह अपनी माँ और पत्नीतक का भेद भूल जाता है। शराब पीकर पुरुष और स्त्रियाँ सारी दुनियामें ऐसे काम करते देखे-सुने गये हैं जिनपर, यदि वे नशेमें न हों तो, वे स्वयं ही लज्जित होंगे। अभी कल ही जब मैं मोटरगाड़ीमें यात्रा कर रहा था, मैंने सुना कि दो व्यक्ति पीकर आपसमें झगड़ रहे थे। उस झगड़ेमें एक तो घटना-स्थलपर ही मर गया और दूसरा अस्पतालमें है। इस आन्दोलनका उद्देश्य आत्म-शुद्धि है, इसलिए मैं चाहूँगा कि जिन लोगोंको यह बुरी आदत है वे ऐसा संकल्प ले लें कि भविष्यमें शराबको कभी स्पर्श

१. इस सभामें लगभग ६,००० लोग उपस्थित थे, जिनमें से अधिकांश बडगा नामक पर्वतीय जनजातिके थे। उन्होंने गांधीजी को एक थैली और मानपत्र भेंट किया था। इस भाषणका एक अंश ९-२-१९३४के **हरिजन**में भी छपा था।

नहीं करेंगे। यदि मेरे साथी कार्यकर्त्ता मुझे यह सूचना दे पाये कि आपमें से बहुत-से लोगोंने मद्यपान छोड़ दिया है तो यह मेरे लिए बड़े हर्षकी बात होगी।

अब मैं आपको हरिजन-कार्यके निमित्त ये रुपये-पैसे देनेपर धन्यवाद देता हूँ; लेकिन साथ ही आपसे मेरा यह अनुरोध है कि आप एक अन्य कार्यके लिए, जो हरिजन-कार्यकी तरह ही एक पुनीत कार्य है, कुछ और रुपये-पैसे दें। उत्तर भारतमें एक अत्यन्त सुन्दर प्रान्त है। उसका नाम है बिहार, जहाँ सीताका जन्म हुआ था। अभी कुछ ही दिन पहले वहाँ एक भयंकर भूकम्प आया था। हजारों लोगोंको प्राणोंसे हाथ धोना पड़ा। और उससे भी अधिक पुरुष और स्त्रियाँ अस्पतालोंमें पड़े हुए हैं। बिहारके विपद्‌ग्रस्त लोगोंकी ओर सारी दुनियाका ध्यान गया है। हजारों स्त्री-पुरुष बेघरबार, निराश्रय और वस्त्रहीन हो गये हैं। महलों-जैसी बहुत-सी इमारतें अब केवल ईंट-पत्थरोंके ढेर रह गई हैं। इन्हीं लोगोंके लिए मैं आपसे देनेको कहता हूँ, लेकिन कमसे-कम नहीं, बल्कि अपनी सामर्थ्य-भर अधिकसे-अधिक देनेको कहता हूँ। यदि अभी आपके पास पर्याप्त पैसे न हों तो मेरे जानेके बाद चन्दा इकट्ठा कीजिए। आप कल चन्दा इकट्ठा करके सारी रकम या तो पटनाके पतेपर बाबू राजेन्द्रप्रसाद-को, जो राहत-कार्यके प्रधान संचालक हैं, भेज सकते हैं या मेरे कुनूरमें रहते हुए मेरे पास भी ला सकते हैं। याद रखिए कि बहुत-से स्थानोंमें पुरुषों और स्त्रियोंने अपने भोजन, अपने कपड़ोंमें कटौती करके बचतको उन भारी विपत्तिके मारे लोगोंके पास भेजा है।

खुद मेरे लिए तो इस भूकम्पका अर्थ सिर्फ इतना ही नहीं है कि उससे हजारों घरोंकी भौतिक बर्बादी हुई है। मेरे लिए उसका मर्म इससे कहीं अधिक गहरा है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि मनुष्य-जातिपर यदा-कदा ऐसी विपत्तियाँ उसके पापोंके उचित दण्डस्वरूप ही आती हैं। मुझे तो यही सोचना अच्छा लगता है कि यह सजा हमें अस्पृश्यताके घोर अपराधके परिणामस्वरूप दी गई है। यदि आपको भी ऐसा विश्वास हो तो आप अपने बीचसे अस्पृश्यताका नामोनिशान मिटा देनेका प्रयत्न करेंगे। ईश्वर आपको और मुझे अपना यह सपना साकार करने में सहायता दे कि भारत एक बार पुनः सारे कलुषोंसे मुक्त हो जाये।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ४-२-१९३४

१०८. तार : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

कुनूर
[३ फरवरी, १९३४]

सचिव
गृह-विभाग
बम्बई

छः मार्चको बेलगाँवमें होनेकी उम्मीद करता हूँ। क्या मैं हिंडलगाके सदर जेलकी कैदी मणिबहन पटेल और महादेव देसाईसे मिल सकता हूँ? दोनोंसे मेरे निकट-सम्बन्धकी जानकारी सरकारको है।[1]

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल नं० ८०० (४०) (१६) सी, पृ० ११

१०९. पत्र : कमलनयन बजाजको

[३][2] फरवरी, १९३४

चि० कमलनयन,

पिताजी का भेजा हुआ अंग्रेजी पत्र कल मिला और उसका जवाब भी भेज दिया।[3] तेरा पत्र आज मिला।

मैंने यह सलाह दी है कि तुझे हिन्दीकी उत्तमा परीक्षा देनी चाहिए और अंग्रेजीपर अच्छा अधिकार प्राप्त कर लेना चाहिए। इस प्रकार तू परिपक्व हो जाये और अच्छा विद्यार्थी बन जाये, उसके बाद यदि पश्चिमकी तरफ जाये तो पूरा लाभ उठा सकेगा। जब जानेका समय आये तो मैं पहले अमेरिका जानेका सुझाव दूंगा। उसके बाद इंग्लैंड और फिर यूरोपके दूसरे देशोंमें। अन्तमें जापान और चीन।

१. गृह-सचिवने उत्तरमें सूचित किया था कि मिलनेकी अनुमति नहीं दी जा सकती।
२ और ३. देखिए "पत्र : जमनालाल बजाजको", पृ० १०६।

यह बात मुझे अच्छी लगती है कि तुझे परीक्षाका लोभ नहीं है। अमेरिकामें एक साल रहकर सूक्ष्म अनुभव प्राप्त करना, अपना अंग्रेजीका अभ्यास बढ़ाना और फिर इच्छानुसार अन्य स्थानोंपर रहना। कुल मिलाकर दो वर्ष बाहर रहना। इस प्रकार तुझे खूब अनुभव हो जायेगा और तू अपना भविष्य बना सकेगा। अनुभवके आधारपर इस कार्यक्रममें जो परिवर्तन करना पड़े सो किया जा सकता है। मुख्य बात यह है कि तुरन्त पश्चिमकी ओर जानेका विचार छोड़ देना चाहिए। हिन्दी पूर्ण करने और अंग्रेजी पक्की करनेके लिए मैं चार वर्ष जरूरी मानता हूँ। हिन्दीके लिए ही संस्कृतके अभ्यासकी आवश्यकता भी जरूरी समझता हूँ। चार वर्षतक प्रतीक्षा करनेको मैं अधिक नहीं मानता। रामकृष्णको आशीर्वाद। आशा है, तू उसकी देखभाल करता होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २७८

११०. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

कुनूर
३ फरवरी, १९३४

चि० दूधीबहन,

मुझे याद नहीं पड़ता कि मैंने तुम्हारे किसी पत्रका उत्तर न दिया हो। किन्तु यदि इस भटकनमें कोई पत्र रह गया हो तो कोई आश्चर्य नहीं। अपनी फाइलमें तो मुझे तुम्हारा कोई पत्र नजर नहीं आया। सामान्यतः उत्तर दिये बिना कोई पत्र फाड़कर नहीं फेंका जाता।

मोतीबहनसे पत्र लिखनेको कहना।

वालजी को तो मैंने यहाँ बुलाया ही है। जब वह यहाँ आ जायेगा तो मैं उसके स्वास्थ्यके बारेमें देख लूँगा। आशा तो यही है कि उसका स्वास्थ्य सुधर जायेगा।

मैं तुम्हें पत्र लिख पाऊँ या न लिख पाऊँ किन्तु तुम तो मुझे समय-समय पर लिखती ही रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४६३) से; सौजन्य: वा० गो० देसाई

१११. पत्र : वालजी गो० देसाईको

३ फरवरी, १९३४

चि० वालजी,

मैंने तुम्हें तार दिया है, इसीसे पत्र नहीं लिखा। किन्तु तुम्हारा पत्र पढ़कर लगा कि तुम्हारे आनेमें देर भी हो सकती है; फिर भी यह मानकर कि देर नहीं होगी, मैंने तुम्हें 'हरिजन' का अंक नहीं भेजा है। अपना कार्यक्रम इसके साथ भेज रहा हूँ। तुम जितनी जल्दी आओगे उतनी जल्दी तुम्हारी बीमारीपर काबू पाया जा सकेगा। काम तो तुम्हारे लिए तैयार ही मिलेगा। मैंने तुम्हें बिहार भेजनेकी व्यवस्था की थी, किन्तु अब तुम्हें वहाँ नहीं भेजूँगा। तुम्हारा जैसा स्वास्थ्य है उसे देखते हुए वहाँ काम करना मुश्किल है।

शेष मिलनेपर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४६२) से; सौजन्य: वालजी गो० देसाई

११२. पत्र : गोविन्दभाई रा० पटेलको

३ फरवरी, १९३४

भाई गोविन्दभाई,

आपका पत्र मिला। नया कार्यक्रम बनाया गया है। उसके अनुसार पांडीचेरी जाना स्थगित कर दिया गया है। मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि जो जिज्ञासा आपको है वह मुझे नहीं है। मैं सभी लोगोंका आदर करता हूँ। श्री अरविन्दका नाम मैं बहुत पहलेसे सुनता आ रहा हूँ। वहाँ बहुत-से गुजराती और अन्य लोग हैं। जो आश्रम इतने लोगोंको अपनाये हुए है उसे देखने-जाननेकी इच्छा होती है। इस इच्छाको पूरी करनेके लिए ही मैंने प्रयत्न किया था; परन्तु अब तो इसका प्रश्न ही नहीं उठता। आप सब लोगोंसे मिल लेता तो भी कुछ सन्तोष मिलता।

मोहनदास

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०७४२) से; सौजन्य: गोविन्दभाई रामभाई पटेल

११३. पत्र : मीठूबहन पेटिटको

३ फरवरी, १९३४

चि० मीठूबहन,

तुम्हारा पत्र आज ही हाथमें ले पाया हूँ। आजकल मैं इतनी दूर हूँ कि डाक देरसे मिलती है। और प्राप्त पत्रोंको मैं तुरन्त नहीं निबटा पाता। अतः उत्तर देनेमें काफी समय चला जाता है। तुमने जो प्रश्न पूछा है उसके बारेमें मुझे कुछ नहीं सूझता। तुम्हारे वर्णनसे ही मैं डर जाता हूँ। बम्बईमें फिलहाल जो काम है वह, और इस नये कामकी जिम्मेदारी तुम कैसे निभा सकोगी? फिर भी यदि तुम्हें सूझता हो और आत्मविश्वास हो तो मैं तुम्हें क्योंकर रोक सकता हूँ? अतः मैं तो इतना ही कहता हूँ कि तुम्हें जो उचित जान पड़े सो करो। भगवान् तुम्हें इसमें सफलता दे। तुमने जो प्रश्न पूछा है वही प्रश्न चुन्नीलालने मुझसे पूछा था। मैंने उससे कहा था कि मैं तुम्हारा मार्ग-दर्शन नहीं कर सकता, तुम्हें जो उचित जान पड़े सो करो; तुम जो करोगे उसके लिए मैं तुम्हें दोष नहीं दूँगा। और अब भी वही कहता हूँ। ऐसे मामलोंमें तुम मुझसे दो टूक निर्णयकी आशा मत रखना। आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर गया होगा?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७०२) से।

११४. पत्र : मानशंकर जे० त्रिवेदीको

३ फरवरी, १९३४

चि० मनु,

तेरा पत्र मिला। तेरे मनकी सरलता बनी हुई है, इसलिए मुझे डर नहीं है। मेरा आशीर्वाद पाये बिना सम्बन्ध न करनेका तेरा अभयदान तेरी रक्षा ही करेगा। तेरा जरा भी जी न दुखाने के लिए मैंने भाईको लिखा है। उन्हें लिखे जानेवाले अपने पत्रोंमें तू विनम्रताका त्याग कदापि न करना। भले ही आज तुझे उनके पत्रोंमें कठोर भाषाका प्रयोग दिखाई देता हो किन्तु उसके पीछे तेरे प्रति प्रेम और उससे उत्पन्न होनेवाली तेरे भविष्यकी चिन्ताके सिवा और कुछ है ही नहीं।

तेरी एक मान्यतामें कुछ भूल है। प्रिन्सेसको लिखे पत्रकी नकल मेरे सामने नहीं है। दफ्तरमें भी नहीं होगी। तूने लिखा है कि मैं यह मानता हूँ, यदि सन्तति

सांस्कृतिक दृष्टिसे हिन्दू रहे तो फिर धर्म चाहे जो हो मुझे उसकी चिन्ता नहीं। ऐसा मैं नहीं लिख सकता। क्योंकि हिन्दूके लिए संस्कृति और धर्म तो एक ही होगा। क्या हिन्दू संस्कृति 'उपनिषद्,' 'गीता,' 'महाभारत' और 'रामायण' से बाहरकी चीज है? मैंने अपने पत्रमें यह लिखा होगा कि यदि एलिजाबेथ हिन्दू संस्कृतिके अनुसार रह सके तो धर्मके लिहाजसे वह भले रोमन कैथोलिक बनी रहे, इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। इस बातमें और सन्ततिको रोमन कैथोलिक माननेमें बहुत अन्तर है। मैं चाहता हूँ कि तू इस अन्तरको समझ ले। मेरा तुझसे कोई झगड़ा नहीं है। मेरा तुझपर या एलिजाबेथ पर लेश-मात्र अविश्वास नहीं है। किन्तु तुझे यदि कोई गलतफहमी हो तो उसे दूर करना चाहता हूँ। मेरे लिए तो सभी धर्म एक समान हैं। किन्तु धर्म तो अनेक हैं अतः एक होते हुए भी विविध हैं। जीव-मात्र एक होनेके बावजूद दैहिक रूपमें अगणित और विविध हैं। देह जुदा होनेके बावजूद सभी प्राणियोंकी एकताको साधना ही पुरुषार्थ है। यदि जुदा-जुदा देह न होती तो ऐक्य साधनेकी जरूरत ही न होती। तू यदि हिन्दू है और अन्य लोग मुसलमान या ईसाई हैं तो इसका निश्चय ही कोई अर्थ है। तेरी सन्तानके मामलेमें इस अर्थकी रक्षा होनी चाहिए। और मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यदि तुझे विवाह करके सुख-शान्तिपूर्वक रहना हो तो तेरी सन्तानका पालन-पोषण हिन्दू-धर्ममें ही होना चाहिए और एलिजाबेथ या विमला — मैं उसका नया नाम भूल गया था — को हिन्दू संस्कृतिको स्वीकार कर लेना चाहिए। यदि वह यूरोपको नहीं भूल सकती तो तेरे सामने यूरोपमें बस जानेके सिवा और कोई चारा नहीं है और यदि उसे हिन्दुस्तानकी सेवा करनी हो तो उसका हृदय हिन्दुस्तानी होना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता तो वह सरपरस्तकी हैसियतसे हमारा थोड़ा-बहुत भला अवश्य कर सकती है, किन्तु तू तो उसे सेविका मानता है। जिस प्रकार उसने अपना नाम बदल लिया है उसी प्रकार उसे अपना हृदय भी बदलना चाहिए। किन्तु वह बलात् ऐसा नहीं कर सकती। यदि एलिजाबेथ के पूर्व संस्कार ऐसे होंगे तभी वह हृदयसे हिन्दुस्तानी बन सकेगी। तुझे अपने मनमें भी भविष्यके स्पष्ट चित्रकी कल्पना करनी चाहिए। यदि तू अपना सर्वस्व भारतमाता को अर्पित करना चाहता हो तो जो-कुछ मैंने लिखा है उसे तुझे अपने जीवनमें उतारना चाहिए। इसलिए यदि तेरे मनमें शंका हो तो मुझसे बार-बार पूछना। मुझे लिखने में संकोच मत करना। मैं निश्चित रूपसे नहीं कह सकता कि जुलाईके बाद मैं तुझे लिख सकूँगा या नहीं। अतः इन महीनोंमें मुझसे जो जानना या मदद लेना चाहता हो सो जान लेना या ले लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल, (जी० एन० १०१०) से।

११५. भाषण: ओत्तुपतरायमें[1]

३ फरवरी, १९३४

मित्रो,

यहाँ आकर और आपसे मिलकर मुझे बड़ी खुशी हुई। आप जानते ही हैं कि जो आन्दोलन चल रहा है वह आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है। जो लोग अपनेको सवर्ण हिन्दू कहते हैं, उन्हें हरिजनोंके साथ भ्रातृत्व स्थापित करके और उन्हें अस्पृश्य या अपनेसे निम्नतर मानना छोड़कर अपनी शुद्धि करनी है। हरिजनोंको भी कुछ करना है, लेकिन बदलेके तौरपर नहीं, बल्कि इसलिए कि उन्हें भी अपने-आपको शुद्ध बनाना है। उन्हें स्वच्छ जीवन और स्वच्छताके — आन्तरिक और बाह्य दोनों तरहकी स्वच्छताके — नियमोंका पालन करना है। इसके लिए उन्हें मरे ढोरोंके मांस, गोमांस, शराब तथा मादक द्रव्योंके सेवनका त्याग करना है। मुझे मालूम हुआ है कि यहाँ आप लोग कालिको सन्तुष्ट करनेके लिए भैंसों या अन्य पशुओंकी बलि चढ़ाते हैं। आपको क्षण-भरको भी ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि पशु-बलिसे ईश्वरको प्रसन्न किया जा सकता है। कुछ तथाकथित सवर्ण हिन्दू भी हैं जो इस बर्बर प्रथाका अनुसरण करते हैं। लेकिन अब तो सारी दुनियामें यह स्वीकार किया जा रहा है कि जानवरोंकी बलिमें कोई धर्म नहीं है। इसलिए मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी, यदि आप यह मानने लगें कि कालि अथवा किसी भी देवी या देवताको पशु-बलि चढ़ानेमें कोई पुण्य नहीं हो सकता। आप ईश्वरकी पूजा चाहे जिस नामसे करें, कालिके नामसे करें अथवा विष्णु या ब्रह्माके नामसे, ईश्वर तो एक ही है और वह ईश्वर प्रतिहिंसाका नहीं, बल्कि सत्य और प्रेमका ईश्वर है। इसलिए, मैं आशा करता हूँ कि आजसे आपके बीच दो दल, दो पक्ष नहीं होंगे, बल्कि आप सब मिलकर ईश्वरके नामपर की जानेवाली पशु-बलिको बन्द करायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-२-१९३४

१. गांधीजी उस दिन जिन हरिजन 'चेरियों' को देखने गये थे, उनमें एक यह भी थी। वहां रहनेवाले लगभग २०० लोगोंने गांधीजी का हार्दिक स्वागत किया था।

११६. भाषण : थण्डकरनचेरीमें[१]

३ फरवरी, १९३४

मित्रो,

आपके बीच आकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। आपको मालूम होना चाहिए कि मैं स्वयं ही स्वेच्छासे बना हुआ भंगी हूँ और आप मेरे इस कथनको अक्षरशः यथार्थ मानें कि अपने जीवनमें मैंने सैकड़ों 'कमोड' साफ किये हैं। मैं जिस आश्रम का संचालन करता हूँ, उसमें रहनेवाले सौ से अधिक स्त्री-पुरुषोंमें से प्रत्येकको प्रतिदिन यह काम करना पड़ता है। मनुष्य-जाति जो काम करती है, भंगीके कामको मैं उनमें से सबसे अधिक सम्मान्य कामोंमें गिनता हूँ। इसे मैं किसी भी तरहसे गन्दा काम नहीं मानता। यह सच है कि सफाईका काम करते समय आपको गन्दगी छूनी पड़ती है। लेकिन यह काम तो हर माँ, हर डॉक्टर करता है। लेकिन ऐसा तो कोई नहीं कहता कि जब माँ अपने बच्चेको धो-पोंछ रही होती है या डॉक्टर मरीजोंके घाव वगैरहकी सफाई कर रहा होता है तो वह कोई गन्दा काम करता है। और इसलिए मैं मानता हूँ कि अपनेको उच्चतर वर्गके हिन्दू कहनेवाले लोग भंगियोंको अस्पृश्य मानकर एक बहुत बड़ा पाप करते हैं। मैं इन्हीं तथाकथित उच्चतर हिन्दुओंको यह समझाने के लिए दौरा कर रहा हूँ कि किसी भी मनुष्यको अस्पृश्य मानना पाप है। लेकिन साथ ही मेरी यात्राका उद्देश्य अपने भंगी भाइयोंको यह बताना भी है कि हम गन्दगी भले साफ करें, लेकिन स्वयं आन्तरिक और बाह्य, दोनों तरहसे स्वच्छ रहें। सफाईका काम कर चुकनेके बाद हमें अपने-आपको साफ और स्वच्छ बनाकर साफ कपड़े पहनने चाहिए। मैं जानता हूँ कि बहुत-से भंगी मरे ढोरोंका मांस या गोमांस खाते हैं। जो ऐसा करते हों उन्हें इसका त्याग करना चाहिए। फिर, मुझे यह भी मालूम हुआ है कि उनमें से बहुतोंको मद्यपानकी आदत है। मद्यपान बुरी, घिनौनी, गन्दी और मनुष्यको गिरानेवाली आदत है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-२-१९३४

१. यह एक अन्य 'चेरी' थी, जिसे गांधीजी देखने गये थे। यहाँके अधिकांश वाशिन्दे नगरपालिकाके भंगी थे और उनमें से लगभग ३०० लोग गांधीजी की बात सुनने उपस्थित हुए थे।

११७. भाषण : सार्वजनिक सभा, कुनूरमें[1]

३ फरवरी, १९३४

मित्रो,

आपके इस सुन्दर जलवायुवाले क्षेत्रमें मैं ये कुछ दिन रह सका, इसकी मुझे बड़ी प्रसन्नता है और आजकी तीसरे पहरकी यह सभा उस प्रसन्नताको और भी बढ़ा रही है। हरिजनोंकी ओरसे मुझे भेंट किये गये मानपत्रमें कहा गया है कि तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंकी अन्तरात्माको जगाकर मैं एक बहुत बड़ी सेवा कर रहा हूँ। मैं नहीं मानता कि मैं स्वयं अपने अलावा और किसीकी सेवा कर रहा हूँ। मैंने इस आन्दोलनको आत्म-शुद्धि और प्रायश्चित्तका आन्दोलन कहा है और निस्सन्देह यह वैसा ही आन्दोलन है। और मैं प्रतिदिन जो-कुछ करनेकी कोशिश कर रहा हूँ, उसका वर्णन यही कहकर किया जा सकता है कि मैं आत्म-शुद्धिकी प्रक्रियासे गुजर रहा हूँ। अस्पृश्यताके सम्बन्धमें मैं सत्यको जिस रूपमें देख रहा हूँ, यदि उसी रूपमें मैं उसे दुनियाके सामने न रखता तो मेरे मनको शान्ति नहीं मिल सकती थी। मुझे इस बातमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि यदि तथाकथित सवर्ण हिन्दू अपने-आपको अस्पृश्यताके पापसे मुक्त नहीं करते तो हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति मिट जायेगी। हम गर्वके साथ अपनेको ईश्वरकी सन्तान कहते हैं और फिर भी ईश्वर और धर्मके नामपर अपने भाइयोंसे, जो ईश्वरकी ही सन्तान हैं, वे अधिकार और सुविधाएँ छीने बैठे हैं जिनका उपभोग हम स्वयं कर रहे हैं। मेरे मनमें इस सम्बन्धमें तनिक भी शंका नहीं है कि ऐसी मान्यता घोर पाप है। अस्पृश्यताका यह पाप हम केवल हरिजन, या आदि-द्रविड़ अथवा अस्पृश्य कहे जानेवाले लोगोंके सम्बन्धमें ही नहीं करते, बल्कि इस पापने तो अपनी कुंडलीमें भारतके सारे समुदायोंको जकड़ लिया है। और इसलिए ईसाई, मुसलमान, पारसी, यहूदी और हिन्दू, सभी एक प्रकारसे एक-दूसरेके लिए अस्पृश्य बन गये हैं। इसलिए मैं मनमें यह बड़ी आशा सँजोये बैठा हूँ कि जब हम अपने-आपको अस्पृश्यतासे मुक्त कर लेंगे तो उससे उत्पन्न ये सारी बुराइयाँ अपने-आप दूर हो जायेंगी।

इसके बाद गांधीजी ने भूकम्प-पीड़ित बिहारकी ओरसे एक जोरदार अपील की।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-२-१९३४

१. इस सभामें गांधीजी को एक थैली और तीन मानपत्र भेंट किये गये थे। मानपत्रोंमें से एक आदि-द्रविड़ जनसभाकी ओरसे भेंट किया गया था और एकमें गांधीजी के सम्मानमें विशेष रूपसे रची एक तमिल कविता भी थी। सभाका संक्षिप्त विवरण १६-२-१९३४ के **हरिजन**में भी छपा था।

११८. पत्र : प्रभावतीको[1]

४ फरवरी, १९३४

तुमने भूकंपके सब हाल मुझे क्यों नहिं दिये हैं। राजेंद्र बाबूके मार्फत तुमको खत भेजा सो मिला? अब सब हाल देगी। जयप्रकाशका खत पढ़ेगी उससे पता चलेगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४४०) से।

११९. भाषण : सार्वजनिक सभा, ऊटकमंडमें[2]

४ फरवरी, १९३४

मित्रो,

इस सुरम्य स्थानमें आ पाना मेरे लिए बड़ी प्रसन्नताकी बात है। आपने जो मानपत्र भेंट किये हैं और हरिजनोंके लिए जो थैलियाँ दी हैं, उनके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। अपने सर्वसामान्य मानपत्रमें आपने इस बातके लिए क्षमा-याचना की है कि आपकी थैलीमें इतनी कम राशि है, यद्यपि यहाँ बहुत धनी लोग रहते हैं। आपको क्षमा-याचनाकी कोई जरूरत नहीं थी, क्योंकि यह आन्दोलन तो प्रमुख रूपसे ऐसा है कि इसमें चन्द धनवानोंकी नहीं, बल्कि लाखों, करोड़ों निर्धनोंका सहयोग माँगा और आमन्त्रित किया जा रहा है। जैसाकि मैंने दावा किया है, यह आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है, यह कोई व्यापारकी वस्तु नहीं है, जिसे बाजारमें खरीदा और बेचा जा सकता हो। इसलिए मैं हजारों धनवानों द्वारा दिये पैसेका स्वागत करता तो हूँ, किन्तु लाखों-करोड़ों निर्धनों द्वारा दिये पैसेका और अधिक स्वागत करता हूँ। यदि ये दानदाताओंके हृदयोंमें हुए परिवर्तनके प्रतीक न हों तो ये भी बेकार ही होंगे। यदि कुछ लोग एक करोड़ या इससे भी अधिक रुपये दे दें तब भी हमारे बीच अस्पृश्यता नहीं मिट सकती। यह तो अपनेको सवर्ण हिन्दू कहनेवाले

१. उमा बजाज द्वारा प्रभावतीको लिखे पत्रके अन्तमें गांधीजी द्वारा जोड़ी हुई पंक्तियाँ।

२. नगरपालिका मैदानमें हुई इस सभामें दस हजारसे अधिक लोग उपस्थित थे। सभाके अन्तमें गांधीजी ने जनतासे प्राप्त भेंटोंकी नीलामी की। भाषणकी संक्षिप्त रिपोर्ट १६-२-१९३४ के **हरिजन** में भी छपी थी।

करोड़ों लोगों द्वारा व्यक्तिगत रूपसे किये गये प्रयत्नोंसे ही मिटाई जा सकती है। यही लोग हैं जिन्हें अपने हृदयोंसे अस्पृश्यताके शैतानको निकाल बाहर करना है। उन्हींको हरिजनोंकी, अस्पृश्योंकी क्षति-पूर्त्ति करनी है, क्योंकि उन्हीं लोगोंने सदियोंसे योजनाबद्ध ढंगसे धर्मके नामपर उनको दलित बना रखा है। आवश्यकता सतही ढंगके कामचलाऊ परिवर्तनकी नहीं, बल्कि हर प्रकारकी अस्पृश्यतासे छुटकारा पानेके निश्चित संकल्पकी है। यह महान् परिवर्तन करोड़ों सवर्ण हिन्दुओंके हृदयोंको प्रभावित करके ही सम्पादित किया जा सकता है। उनको इस बातकी प्रतीति करानी है कि हिन्दू-समाजके एक हिस्सेको अबतक अस्पृश्य मानकर हमने ईश्वर तथा मानवताके प्रति एक बहुत बड़ा अपराध किया है, क्योंकि हिन्दुओंने अस्पृश्यताके सम्बन्धमें जो मर्यादा तय की थी, उसे तोड़कर इस दोषने बहुत व्यापक रूप ग्रहण कर लिया है। जहाँ तक अस्पृश्योंका सम्बन्ध है, हमें पहले तो अपने-आपमें ही ऐसा सुधार लाना है जिससे हम मनुष्य-जातिके बीच ऊँच-नीचका सारा भेद-भाव भूल जायें। इसलिए यह बड़े हर्ष और कृतज्ञताका विषय है कि मैं जहाँ भी जाता हूँ, लोगोंके समुदाय आ-आकर अपना अंश-दान करते हैं और इस प्रकार अपने इस संकल्पको प्रकट करते हैं कि अब अस्पृश्यता नामकी चीज उनके मनमें नहीं रह जायेगी।

हरिजनों द्वारा भेंट किये गये मानपत्रमें इस बातपर जोर दिया गया है कि तमिलनाडु तथा अन्यत्र हरिजनोंके निमित्त एकत्र की गई राशियोंको हरिजनोद्धारपर ही खर्च करना वांछनीय होगा। यह बात उचित ही है। यह बात तो एकाधिक मंचोंसे कही जा चुकी है कि जिलों या प्रान्तोंमें एकत्र की गई राशियोंका उपयोग अधिकांशत: तो उन्हीं जिलों या प्रान्तोंमें किया ही जायेगा, साथ ही उनमें से ज्यादातर पैसे रचनात्मक कार्योंमें लगाये जायेंगे। और यह तो स्वाभाविक ही है कि सभी जगहोंके कार्यकर्त्ताओंसे यह अपेक्षा रखी जायेगी कि हरिजन-सेवाके लिए पैसेका सबसे अच्छा उपयोग किस तरह किया जा सकता है, इसके सम्बन्धमें वे अपने-आपको हरिजनोंके विचारों तथा भावनाओंसे अवगत रखेंगे।

जैनों द्वारा भेंट किये गये मानपत्रमें कहा गया है कि अपनी वाणी और कर्म, दोनोंमें मैं जैन धर्मके उत्तम तत्त्वोंको मूर्त्त करता हूँ। इस प्रशस्तिको मैं सम्पूर्ण विनयके साथ स्वीकार करता हूँ। मैं तो संसारके सभी धर्मोंके सत्तत्त्वमें विश्वास करता हूँ। और अपनी युवावस्थासे ही मैं विनयपूर्वक किन्तु निरन्तर ऐसा प्रयत्न करता आया हूँ कि दुनियाके सभी धर्मोंके सत्तत्त्वको समझूँ और उन धर्मोंमें मुझे जो उत्तम लगे उसे मन, वचन और कर्मसे अपनाऊँ और ग्रहण करूँ। मैं जिस धर्मको मानता हूँ, वह मुझे न केवल प्रत्येक स्रोतसे उसके सभी श्रेष्ठ तत्त्वोंको ग्रहण करने की सुविधा देता है, बल्कि ग्रहण करना मेरा कर्त्तव्य बना देता है। अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनकी परिकल्पना उसी भावनासे की गई है। कारण, यह 'मुझे मत छुओ' वाली भावना हरिजनोंतक ही सीमित नहीं रही है, बल्कि इसने एक जातिके विरुद्ध दूसरी जातिको और एक धर्मके खिलाफ दूसरे धर्मको खड़ा कर दिया है। मैं तो तबतक चैनकी साँस नहीं लूँगा जबतक इस आन्दोलनके परिणामस्वरूप इस देशमें रहनेवाली

विभिन्न जातियों और समुदायोंके बीच हार्दिक एकता स्थापित नहीं हो जाती। यही कारण है कि मैंने भारतमें रहनेवाले सभी लोगोंसे, बल्कि बाहरके लोगोंसे भी सहयोगकी माँग की है।

अब दो शब्द सीताकी जन्म-भूमिके बारेमें कहूँगा। आप जानते हैं कि उस भयंकर भूकम्पमें किस प्रकार पलक झपकते ही लगभग २५,००० लोग मृत्युके ग्रास बन गये। दसियों हजार लोग बेघरबार और वस्त्रहीन हो गये हैं। बड़े-बड़े धनी-मानी लोग बात-की-बातमें दरिद्र हो गये। राजमहल ढहकर खण्डहर हो गये हैं और हजारों घर काठ-कबाड़के ढेर बनकर रह गये हैं। इसलिए मैं चाहूँगा कि आप बिहारके उन विपद्ग्रस्त लोगोंके प्रति अपनी सहानुभूतिका कुछ ठोस प्रमाण दें। जब मैं इन मानपत्रोंको नीलाम करूँगा, उस समय स्वयंसेवकोंसे आपके बीच घूमकर, आप बिहारके विपद्ग्रस्त भाइयोंके लिए जो-कुछ दे सकते हैं, उसे प्राप्त करनेको कहूँगा। आशा है, आप अपनी सामर्थ्यके अनुसार कमसे-कम नहीं, बल्कि अधिकसे-अधिक देंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-२-१९३४

१२०. भाषण : ओम्प्रकाश मठ, ऊटकमंडमें[1]

४ फरवरी, १९३४

आपने मुझे इस मठको देखनेका अवसर दिया, इसके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ। यहाँकी असाधारण स्वच्छताने तो मुझे निश्चय ही बहुत प्रभावित किया है। इस मठके लिए मैं आध्यात्मिक दृष्टिसे हर तरहकी समृद्धिकी कामना करता हूँ और आशा करता हूँ कि जो लोग इस मठमें रहते हैं उनके लिए यह प्रेरणाके स्रोतका काम करेगा। अब इसे देख लेनेके बाद स्वभावतः मुझे इसके भविष्यके बारेमें उत्सुकता रहेगी और यह जानकर बड़ी प्रसन्नता होगी कि यह धीरे-धीरे निरन्तर प्रगति कर रहा है और यह उन लोगोंके लिए शरणस्थलका काम कर रहा है जो आध्यात्मिक शान्ति और मार्गदर्शन प्राप्त करनेके इच्छुक हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-२-१९३४

१. गांधीजी को हरिजनोंके लिए चलाया जा रहा यह मठ दिखाया गया और उन्हें मठके संचालनकी रिपोर्ट तथा मद्रासके हिन्दू-धर्म बोर्डके अध्यक्षने मठका निरीक्षण करके जो विवरण लिखा था, वह भी पढ़कर सुनाया गया।

१२१. बातचीत : आदि-हिन्दू शिष्ट-मण्डलके साथ[1]

४ फरवरी, १९३४

शिष्ट-मण्डलको उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा कि आपने जो ज्ञापन मुझे दिया है, वह बड़े सुयोग्य ढंगसे तैयार किया हुआ है। लेकिन, इसमें कुछ नया नहीं है। आपने जिन निर्योग्यताओंका इसमें उल्लेख किया है, उन्हें मैंने अपनी आँखों देखा है और जहाँ नहीं देखा है वहाँ भी उनकी जानकारी तो मुझे है ही। मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि बहुत ही सुनियोजित ढंगसे प्रयत्न करनेपर ही ये निर्योग्यताएँ दूर हो सकती हैं। मैं तो खुद हरिजन हूँ। यह बात मैंने आजसे पचीस वर्ष पूर्व कही थी। मैंने बार-बार कहा है कि अगर मेरा पुनर्जन्म होना हो तो मैं हरिजन बनकर जन्म लेना चाहूँगा।

'हरिजन' संज्ञाकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि कुछ लोग तो इसपर आपत्ति करते हैं, किन्तु कुछ दूसरे हरिजन इसपर प्रसन्न भी होते हैं। मेरा इसपर कोई आग्रह नहीं है और मैं तो उन्हें उसी नामसे सम्बोधित करना चाहूँगा जो उन्हें अच्छा लगे। मैं यह महसूस करता हूँ कि हरिजनोंके सहयोगके बिना यह आन्दोलन तेजीसे नहीं चल सकता। यही कारण है कि मैं उनसे सहयोग माँगता हूँ और जहाँ-कहीं सम्भव होता है, आप-जैसे मित्रोंसे मिलकर बातचीत करना पसन्द करता हूँ।

चुनावोंके प्रश्नका उल्लेख करते हुए गांधीजी ने कहा कि आप लोगोंके भयको तो मैं तभी सही मानूँगा जब हरिजन लोग सवर्ण हिन्दुओंकी दयापर निर्भर हों या हरिजन उम्मीदवार अपने-आपको सवर्ण हिन्दुओंके हाथ बेच दें, लेकिन ऐसी किसी परिस्थितिका निराकरण नई योजनाके अधीन अवश्य किया जा सकता है। 'पैनल'-प्रणालीके अधीन पहला चुनाव करनेका अधिकार तो केवल हरिजनोंको ही है। वे लोग जिन्हें चुन देंगे, आखिर तो चुनावमें वे ही लोग खड़े होंगे। ऐसी किसी आशंकाका कोई कारण नहीं है कि हरिजन लोग प्रारम्भिक नाम-निर्देशन करेंगे, इसलिए सवर्ण हिन्दू उम्मीदवारोंके जीतनेकी अधिक सम्भावना रहेगी। उन्होंने आगे कहा कि मेरा सारा प्रयत्न इस बातके लिए है कि सवर्ण हिन्दुओंमें से अधिकांश हरिजनोंके पक्षका समर्थन करें। जब ऐसा होगा, और मुझे विश्वास है कि होगा, तब हरिजनोंकी स्थिति सुदृढ़ और निरापद हो जायेगी। मैं तो कहूँगा कि आपको भी ऐसा ही मानना चाहिए।

१. यह शिष्ट-मण्डल तमिल-भाषी क्षेत्रोंके हरिजनोंका प्रतिनिधि था। उसने गांधीजी को एक मुद्रित ज्ञापनपत्र दिया, जिसमें हरिजनोंकी विभिन्न कठिनाइयोंका वर्णन था। देखिए "हमारा कलंक", ९-३-१९३४।

आप यरवडा समझौतेकी शर्तें पूरी करानेके लिए मुझे एक बन्धक व्यक्ति मानिए। उसी हैसियतसे मैं, यरवडाके अपेक्षाकृत शान्त जीवनका त्याग करके, भारतके एक छोरसे दूसरे छोरतक का दौरा कर रहा हूँ।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-२-१९३४ और **हरिजन**, १६-२-१९३४

१२२. तार : के० श्रीनिवासन्‌को

५ फरवरी, १९३४

अभी-अभी श्री रंगस्वामीके[2] निधनका समाचार मिला। उनके परिवार तथा 'हिन्दू' के कर्मचारियोंके प्रति हार्दिक संवेदना प्रकट करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-२-१९३४

१२३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

कुनूर
५ फरवरी, १९३४

भाई वल्लभभाई,

यह पत्र सुबह दातुन करनेके बाद शुरू कर रहा हूँ। . . . के[3] पतेके बारेमें तो तुम्हें लिखा है। ओमकी मार्फत वह तुम्हें मिल गया होगा। कानजीभाई आनेवाले थे, लेकिन बिहारके कारण रुक गये हैं। परन्तु मिलने आनेकी उनकी इच्छा तो है ही। ऐसा ही भूलाभाईके बारेमें है।

श्री अरविन्दसे मिलनेका प्रयत्न करना (वहाँ रहनेवाले) गुजरातियोंकी खातिर आवश्यक था। उनका इनकार शिष्टतापूर्ण था। उन्होंने लिखा है कि वे किसीसे नहीं मिलते। श्रीमाँ का कोई जवाब ही नहीं मिला। अब तो मेरा उस शहरमें जाना ही स्थगित हो गया है। मुझे यह एक तरहसे अच्छा लगा। फिर भी चन्द्रशंकर और बापाको[4] वहाँ भेजनेका विचार है। वे जितना देख सकें उतना देख आयें। 'मदर' को 'मदर' कहनेमें हमारा क्या बिगड़ता है? जिसे जो पदवी मिली हो, उसे उसी नामसे बुलानेकी शिष्टता तो गोलमेज [परिषद्] में भी बरती जाती थी।

१. यह अनुच्छेद चन्द्रशंकर शुक्लके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत किया गया है।

२. रंगस्वामी अय्यगार, **हिन्दू**के सम्पादक। ५ फरवरीकी सुबह उनकी मृत्यु हो गई थी।

३. मूलमें नाम छोड़ दिया गया है।

४. ठक्कर बापा।

तुम शायद कहोगे कि यदि गोलमेजका अनुकरण करें, तब तो हमारी मुश्किल हो जायेगी। मेरे कहनेका मतलब यह है कि वहाँ भी लोगोंको इस शिष्टाचारका पालन करना पड़ा था।

रावजीभाईके . . .[1] जानेका जो कारण तुम लिखते हो वही था। तो अब . . .[2] वहाँ पहुँच गया है और अपना हरिलाल भी हो आया, ऐसा रामदास बता रहा है। जिसके कई लड़के-बच्चे हों, उसे माँ भी तो चाहिए न?

मैं समझता हूँ जमोरिनके बारेमें तो मैं लिख चुका हूँ। वे अत्यन्त सादगीसे रहते हैं। किसी तरहका आडम्बर नहीं है। महल नामका ही है। साज-सामान कुछ नहीं। वे बहुत विनयसे पेश आये। अपने लड़केसे मुलाकात कराई। नारियलका पानी पिलाया। आते वक्त साथमें फल रखवा दिये। बातें केवल शिष्टाचारकी ही कीं, इसलिए बहुत खुश हुए। वृद्धावस्था है। कहते थे, अब बहुत याद नहीं रहता। भले आदमी हैं। मैं मिल आया, यह अच्छा हुआ।

कुनूर बड़ा रमणीक स्थान है। अगर मकान मिल जाये तो खाना-पीना सस्ता है। इस ऋतुमें ठंड अच्छी पड़ती है किन्तु अत्यधिक नहीं। यहाँके पहाड़ी लोगोंमें हमारे कार्यकर्त्ता अच्छा काम कर रहे हैं। उनका निमन्त्रण था। इसलिए मैंने सुझाया है कि अगर मुझे आठ दिनका आराम दो तो कुनूरमें दो, जिससे पहाड़ी लोगोंमें कुछ काम भी हो जाये और जिन पत्रोंका जवाब नहीं दे पाया हूँ, वे निबट जायें। यहाँ नागेश्वररावके बँगलेमें टिका हुआ हूँ। मेरा डेरा गैरजके ऊपर है। छोटा-सा परन्तु बढ़िया कमरा है। गैरेज रहने लायक है। कमरा साफ है। मैं यहाँ आया, यह अच्छा हुआ। रोज पहाड़ी लोग आते हैं। ऊटीमें, यहाँ और पास ही कोटगिरिके पहाड़पर इतनी जबरदस्त सभाएँ हुई, जैसी पहले कभी नहीं हुई थीं। हरिजनोंके शिष्ट-मण्डल मुझसे मिले। हरिजनोंका ही एक सुन्दर मठ देखा। पहाड़ी लोग शराब बहुत पीते हैं। हमारे कार्यकर्त्ता अच्छा काम कर रहे हैं। राजा कल मिलेंगे।

बिहारको अच्छी सहायता मिल रही है। हर जगहसे लोग रुपये और कपड़े भेजते रहते हैं। आश्रमसे पंडितजी,[3] पारनेकर,[4] रावजीभाई,[5] बाल[6] वगैरह गये हैं। स्वामी[7] और धोत्रे भी गये हैं। मथुरादास जाऊँ-जाऊँ कर रहा है। अन्य लोग तैयार हैं। मैंने उन्हें रोक लिया है। जैसा राजेन्द्रबाबू कहेंगे वैसा करेंगे। मैंने अपने जानेकी बात भी उन्हींपर छोड़ दी है। जब जी में आये बुला लें। मेरी अपनी इच्छा कर्नाटक और उड़ीसाकी यात्रा पूरी करके वहाँ जानेकी है। इसका अर्थ यह है कि २० मार्चके आसपास वहाँ पहुँचूँगा। सभी जगह चन्दा उगाह रहा हूँ। इस बार

१ और २. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिये गये हैं।

३. पण्डित नारायण मोरेश्वर खरे।

४. य० म० पारनेकर, जो उस समय आश्रममें गोशाला चलाते थे।

५. रावजीभाई नाथाभाई पटेल।

६. बाल कालेलकर।

७. स्वामी आनन्द।

मेरा परिचय केवल ताँबेके पैसे देनेवालों के साथ हो रहा है। कुछ लोग मध्यम वर्गके भी हैं। ये बेचारे यथाशक्ति देते हैं। मगर गरीब लोगोंकी उदारताकी कोई सीमा नहीं है। रोज पहाड़ी बहनें आकर, उनके पास जो-कुछ होता है, सो दे जाती हैं। आश्रमका रामचन्द्रन् फिलहाल मेरे साथ है। तुम उसे पहचानते हो न? विद्वान् है। सज्जन है। जीवराजका स्वास्थ्य काफी गिर गया है। मगर स्वयं वीर पुरुष हैं, इसलिए अस्पतालका काम सँभाल रखा है। बीच-बीचमें माथेरान जाकर आराम ले लेते हैं।

पेरीन[1] और जमनाबहनका हाल तो सुना ही होगा। प्रेमा और लीलावती (आसर) छूटते ही फिर [जेल] चली गईं। लीलावती तो हठीली है। शायद वह वहीं मरेगी। अमतुस्सलाम यहाँ है। बीमार पड़ी है। इसकी वफादारी अनोखी है। अमलाको अभी तो हरिजन-सेवाके लिए साबरमती भेज रहा हूँ। देखूँगा, वहाँ वह क्या करती है।

बीडज भी हरिजन सेवक संघको दे दिया है। गोशाला पुनः हरिजन आश्रममें ले जानेका विचार है। इससे हरिजनोंको तालीम मिलेगी और गोशाला अधिक सुरक्षित रहेगी।

बा के पत्रकी नकल साथमें है। इसमें से मणिको मेरी तरफसे जो लिखा जा सके लिख देना। उससे और महादेवसे मिलनेकी इजाजत माँगी है। तार दिया है। जवाब आज-कलमें आना चाहिए। वहाँ ६ मार्चको जाऊँगा। . . . के[2] बारेमें मुझे भी समाचार मिले हैं। मणिसे कहो कि मृदुने लम्बा सन्देश भेजा है। उसे दर्द अभीतक सता रहा है। वह रोज उसे याद करती है। मार्चमें छूट जानेकी आशा रखती है। यदि उसे कुछ अन्य पुस्तकें चाहिए तो मँगवानेको लिखती है। दुर्गा, मणि परीख, वेलाबहन वगैरहके पत्रोंके जवाब आ गये हैं। थोड़ी थकावट मिटानेके बाद ठिकाने लग जाने [जेल जाने]की आशा रखती है। अब्बास साहबकी ८१वीं सालगिरह अच्छी तरह मनाई गई दीखती है। काकाने अच्छा परिश्रम किया। वृद्ध बहुत खुश हुए हैं। कल्याणजी[3] उनका संक्षिप्त जीवन-चरित लिख रहे हैं। उस सिलसिलेमें हमारे सब विद्वान् उनके यहाँ गये और बिसरी हुई यादोंको ताजा किया-कराया।

नेतीका प्रयोग तुम कर रहे हो, यह मुझे बहुत पसन्द आया है। शायद पुराने कपड़ेकी हाथसे बनाई हुई बत्ती ज्यादा उपयोगी हो। उसमें खराबी चूस लेनेकी शक्ति होती है। वह तुम्हारी फटी-पुरानी धोतीसे बन सकती है। उसीके साथ प्राणायामकी भी जरूरत है। नेती और प्राणायाम नाकको साफ रखते ही हैं। तुम्हारा कब्ज मिट गया, यह बहुत अच्छा हुआ। खुराकमें जो हेर-फेर किया है, वह अवश्य लाभदायक सिद्ध होगा।

१. स्व० दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

२. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

३. कल्याणजी वि० मेहता, एक प्रसिद्ध कांग्रेसी कार्यकर्ता।

केलप्पनने जान-बूझकर अपने सम्बन्धकी बात नहीं छिपाई। और इसमें उसे कुछ अनुचित लगा ही नहीं। 'सेल्फ-रेस्पेक्ट'[1] और 'जात-पाँत तोड़'[2] की छूत तो उसे भी लगी ही थी। स्त्रीमें कोई दोष निकालने लायक बात भी नहीं है। केलप्पन दुष्ट नहीं, भोला है और जिद्दी तो है ही। मलाबारका कारोबार राजाजी को सौंपनेकी इच्छा है। अभी पूरी तरह निश्चय नहीं किया है। कदाचित् रामचन्द्रन्को सौंपा जाये।

बूआजीके लिए तुमने अच्छी युक्ति सोची दीखती है। वे जहाँ हैं भले वहीं रहें। क्या तुम समझते हो कि बिगाड़नेके लिए कुछ बाकी रहा है? परन्तु ऐसी कोई बात नहीं है। सर चिमनलालकी दावतमें[3] बहुत लोग आते नहीं दीखते। उनका खाना बहुतोंको पसन्द नहीं आता, इसमें वे बेचारे क्या करें?

बंगाल जानेकी बात अभी अधरमें लटक रही है। अन्तमें जो हो जाये सो सही।

म्यूरियल [लेस्टर]का मेरे नाम तार आया था। उसे कोयम्बतूरके पास मिलने आनेके लिए कहा है। थोड़े दिन साथ सफर करनेका सुझाव दिया है। अमृतलाल सेठने[4] मुझे इन दिनों कोई पत्र नहीं लिखा। मुझे भी अल्टीमेटम दिया था। भले ही पृथ्वीके गर्भमें जो हो वह बाहर निकल आये। मनुष्यका शरीर भी तो पृथ्वीका टुकड़ा ही है न?

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

पालेने तो इस बार सभी जगह भारी नुकसान किया है। कहीं पाला तो कहीं बेमौसमकी बरसात। भूकम्पके साथ इन सब बातोंका सीधा सम्बन्ध मालूम होता है।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ७०-५

१. इस नामकी संस्था।
२. जातपाँत-तोड़क मंडल।
३. यानी, उनके लेख।
४. **जन्मभूमि**के भूतपूर्व सम्पादक।

१२४. सन्देश : एसोसिएटेड प्रेसको

५ फरवरी, १९३४

श्री रंगस्वामीकी मृत्युका समाचार सुनकर मेरा मन उदासीसे भर गया। मुझे उनसे बहुत निकटका सम्बन्ध रखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। वे पण्डित मोतीलालजी के दाहिने हाथ थे। कांग्रेसी हलकोंमें उनकी सलाहकी बड़ी कद्र थी। वे सबसे सुलझे हुए और गम्भीर पत्रकारोंमें से थे। वे श्री कस्तूरीरंग अय्यंगारकी परम्पराओंका निर्वाह कर रहे थे, उन परम्पराओंका जिन्होंने 'हिन्दू'को ऐसा प्रभाव प्रदान किया है। अभी हालमें जब मैं मद्रास गया था, उनसे मेरी अन्तरंग बातचीत हुई थी। उनका निधन 'हिन्दू', कांग्रेस और देशकी भारी क्षति है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-२-१९३४

१२५. पत्र : एफ० मेरी बारको

५ फरवरी, १९३४

चि० मेरी,

आशा है, तुम्हारे बैतूलके[1] पतेपर लिखा मेरा पत्र[2] तुम्हें मिल गया होगा।

हैदराबादकी यात्रा तो लगभग २० दिनोंके लिए टल गई है। मैं समझता हूँ, १० से पहले वहाँ नहीं जा पाऊँगा। १० को भी जाना निश्चित नहीं है। और फिर वहाँ मेरे चार घंटेसे अधिक रुकनेकी भी बात नहीं है।

हम सब मजेमें हैं। ज्यादा लिखनेका समय नहीं है।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०१९) से। सी० डब्ल्यू० ३३४८ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

१. साधन-सूत्रमें '**बेथल**' है।

२. देखिए "पत्र : एफ० मेरी बारको", पृ० ५१।

१२६. पत्र : माधवदास और कृष्णा कापड़ियाको

५ फरवरी, १९३४

चि० माधवदास और कृष्णा,

यह क्या बात है कि तुम दोनोंमें से किसीका पत्र नहीं मिला। बा अपने पत्रोंमें जब-तब तुम्हें याद करती रहती है। बा को सीधे तो कोई पत्र लिख ही नहीं सकता। वह सप्ताहमें एक ही पत्र लिख सकती है, एक ही पा सकती है और यदि उस सप्ताहमें कोई मुलाकात करने चला जाये तो उसे पत्र नहीं मिलता। इसलिए जो समाचार भेजा जाता है वह मेरी मारफत ही भेजा जाता है। अतः मुझे सविस्तार पत्र लिखना। वर्धाके पतेपर लिखोगे तो वह मुझे अवश्य मिल जायेगा। कृष्णा कैसी है? व्यापार कैसा चल रहा है? मुझे मणिलालके पत्र मिलते रहते हैं। दोनों आनन्दपूर्वक हैं। मेरे समाचार तो तुम 'हरिजनबन्धु' में देखते ही होगे।

बापूके आशीर्वाद

श्री माधवदास गोकुलदास
शामजी शिवजी बिल्डिंग
मनोहरदास स्ट्रीट
फोर्ट, बम्बई

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

१२७. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

कुनूर
५ फरवरी, १९३४

बा,

तेरा पत्र मिला। बिहारके बारेमें तूने जो लिखा है वह सही है। बहुत-से लोग मारे गये हैं और इस ठंडमें हजारों बेघरबार हो गये हैं। चारों ओर से खूब मदद भेजी जा रही है। आश्रमके लोगोंमें से पण्डितजी, पारनेकर, रावजीभाई, सोमण, बाल, स्वामी और धोत्रे गये हैं। धोत्रे वर्धावाले। यदि और लोगोंकी जरूरत पड़ी तो मैं भेज दूँगा। सभी बहनोंके पत्र मुझे मिले हैं। वेलाबहनके अतिरिक्त और सब ठीक हैं। वेलाबहन

आनन्दी और मणिको लेकर बड़ौदा गई है। यदि आवश्यकता हुई तो बम्बईमें किसी डॉक्टरसे मिलेगी। उसका वजन काफी कम हो गया है। उसे स्वस्थ होनेमें कुछ महीने लगेंगे। दुर्गा बलसाड़ गई है। वहाँसे बेलगाँव जायेगी। ६ मार्च को मैं भी वहाँ होऊँगा। लीलावतीको बुखार था किन्तु वह तो प्रेमाबहनके साथ ही अपने ठिकाने [जेलमें] पर पहुँच गई है। देवदास पटना नहीं गया। और उसे वहाँ जानेकी जरूरत भी नहीं। तारा काकी बीमार है और वह आजकल अहमदाबादमें है। मणि परीख अपनी ननसालमें है। बादमें कठलाल जायेगी। मैं कल राजाजी से मिलूँगा। अमतुस्सलाम यहीं है। बीमार पड़ी है, लेकिन आज अच्छी है। लगता है कि वह कृष्णाकुमारीके पास काशी जायेगी। इंग्लैंडमें जिनके आश्रममें मैं ठहरा था वे म्यूरिअल लेस्टर कल मुझसे मिलेंगी। गंगाबहन सुरेन्द्रसे मिलने वर्धा गई है। सुरेन्द्र जमनालालजी के साथ काम करते हैं। महालक्ष्मी अपने बच्चोंके साथ बम्बईमें है। मणिलाल और सुशीलाके पत्र मिले हैं। दोनों लिखते हैं कि उनके बारेमें तू चिन्ता मत करना। सीता आनन्दपूर्वक है। कैलेनबैक दो दिन फीनिक्समें रह आये। गुजरात और अन्य स्थानोंपर पाला पड़नेके कारण काफी फसल बिलकुल जल गई है। बहुत सख्त पाला पड़ा था और कई दिनतक पड़ता रहा था। भगवान् जैसे रखना चाहेगा वैसे रहना पड़ेगा। वल्लभभाई स्वस्थ हैं। मृदुलाका पत्र मिला है। वह भी अच्छी है। मैं माधवदासके समाचार पानेकी कोशिश कर रहा हूँ।[1] मैं तुझे अवश्य समाचार दूँगा। यह बात मैं भूला नहीं हूँ। रामदासका लम्बा पत्र मिला है। वह और नीमू तथा बच्चे स्वस्थ हैं। केशू और कृष्णा वर्धामें ही हैं और आनन्दपूर्वक हैं। इधर हालमें राधाका कोई पत्र नहीं मिला। ब्रजकृष्ण स्वस्थ है। धीरे-धीरे ताकत आती जा रही है। 'हिन्दू' नामक एक प्रसिद्ध पत्र मद्राससे निकलता है। उसके सम्पादकके स्वर्गवासका समाचार आज तारसे मिला है। मैंने शोक-संवेदनाका तार[2] दिया है। प्रभावती अच्छी है। वह पटनामें ही है। आशा है, तू और अन्य बहनें स्वस्थ होंगी। मैं कल सुबह यहाँसे निकलूँगा और राजाजी से मिलूँगा। अब प्रवचन :

हम लोगोंमें एक कहावत प्रचलित है: 'एक पंथ, दो काज।' आखिर वह कौन-सा पंथ है जिसपर चलने से 'दो काज सरते' हैं। दो काजका अर्थ सिर्फ दो ही काम नहीं समझना चाहिए। यहाँ दो का अर्थ है एकसे अधिक अर्थात् 'एक पंथ, सौ काज' भी कहा जा सकता है। बिहारमें हजारों व्यक्ति एक मिनटके भीतर धरतीमें समा गये। इससे सहज ही हमारे मनमें यह विचार उठता है कि हमें एक मिनट भी बेकार नहीं खोना चाहिए। मीराने गाया है: "आजनो लावो लीजिये रे काल कोणे दीठीती।"[3] हमें तो एक पल या क्षणकी भी खबर नहीं। जम्हाई लेते-लेते चल पड़ेंगे। तो फिर वह स्वर्णिम पंथ कौन-सा है कि जिसपर चलनेसे सभी उद्देश्य सिद्ध हो जायें। ऐसा मार्ग केवल परोपकारका है। अर्थात् अपने

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. देखिए "तार: के० श्रीनिवासन्को", पृ० १२४।

३. अर्थात् आजका लाभ ले लो; कल किसने देखा है?।

पड़ोसियोंकी सेवा। इसीका दूसरा नाम परमार्थ है। परमार्थका तात्पर्य है उत्तम अर्थ। इसीका तीसरा नाम हरिभक्ति है। हम लोग नरसिंह मेहताकी प्रभातीमें गाते हैं कि हरिभक्ति माला फेरने, तिलक करने या गंगास्नान करनेसे नहीं होती। भक्त हमें बताते हैं कि यह तो सिरका सौदा है। अतः हम प्रतिदिन खाते-पीते, उठते-बैठते, जेलमें और जेलके बाहर अखिल विश्वके कल्याणकी कामना करें और उसके लिए जो सेवा हमारे भागमें आये सो कर डालें। आज इतना पर्याप्त है न?

सबको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० १२-३

१२८. पत्र : मथुरी ना० खरेको

५ फरवरी, १९३४

चि० मथुरी,

बहुत दिन बाद तेरी लिखावट देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। तेरी लिखावटमें भी सुधार हुआ है। मेरे लिए भी यह सन्तोषकी बात है कि तुझे वहाँ सब-कुछ अनुकूल आ गया है। तू भजन तो गाती है न? मुझे समय-समयपर लिखती रहना। तू रामभाऊको लिखती रहती है, यह अच्छी बात है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७०)से; सौजन्य: लक्ष्मीबहन ना० खरे

१२९. पत्र : मणिबहन न० परीखको

५ फरवरी, १९३४

चि० मणि,

तुम्हारा पत्र मिला। ऐसा कहा जा सकता है कि तुम बहनोंने जेलमें रहते हुए अपने समयका सदुपयोग किया। अमतुस्सलामने मुझे सब-कुछ बताया है। मुझे इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि इससे बच्चोंको भी लाभ ही हुआ है। डॉ० हरिभाई को अपनी आँखें दिखा लेना अच्छा होगा। वे विशेष रूपसे आँखोंका ही इलाज करते हैं।

और अधिक लिखनेका समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मणिबहन परीख
भाईश्री रमणभाई लल्लूभाई शाह
कटकीया पोल, कालूपुर
अहमदाबाद, बी० बी० ऐंड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९७६)। सी० डब्ल्यू० ३२९३ से भी; सौजन्य: वनमाला एम० देसाई

१३०. पत्र: विद्या रा० पटेलको

५ फरवरी, १९३४

चि० विद्या,[1]

तेरा पत्र मिला। मेरे ऐसा सुननेमें आया है कि तेरी विवाह करनेकी इच्छा है। यदि तेरी ऐसी इच्छा हो तो बिना किसी संकोच या शर्मके कहना चाहिए। यदि तेरा ऐसा विचार हो तो लिखना, कि तेरी कब विवाह करनेकी इच्छा है। तेरे लिए पाटीदारोंमें से ही पति खोजना होगा या कोई भी योग्य-गुणी नवयुवक हो तो उसे पसन्द कर लेगी? तेरा जैसा विचार हो, साफ-साफ लिखना। मुझे तेरा क्या कहना पसन्द आयेगा, इस बातका विचार मत करना। ऐसे मामलोंमें विवाहके इच्छुकको पूरी-पूरी छूट अवश्य मिलनी चाहिए। बुजुर्ग तो उनका सिर्फ पथ-प्रदर्शन कर सकते हैं।

तू वाली की सहायता करती है, यह बहुत अच्छी बात है। यह तो तूने सुना ही होगा कि कुसुम जाती रही। आशा है, तूने मनुको पत्र लिख दिया होगा। मनुको इससे बहुत सदमा पहुँचा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५८४) से; सौजन्य: रवीन्द्र रा० पटेल

1. रावजीभाई मणिभाई पटेलकी कन्या।

१३१. भाषण : सार्वजनिक सभा, चोक्कमपालयम्में[1]

६ फरवरी, १९३४

आपने जो मानपत्र और हरिजन-कार्यके निमित्त थैली भेंट की है, उसके लिए आप सबको धन्यवाद। मुझे मालूम हुआ है कि यहाँ और आसपासके इलाकोंमें आपने खादी-प्रचार, अस्पृश्यता-निवारण और मद्य-त्यागके लिए काफी काम किया है। आपके इन कार्योंके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ, क्योंकि ये सभी कार्य एक-दूसरेसे जुड़े हुए हैं। यदि हम अस्पृश्यताको सर्वथा मिटा देंगे तो हम सब भाई-भाईकी तरह रहने लगेंगे। अस्पृश्यता-निवारणका सन्देश सच्चे भ्रातृ-संघकी स्थापनाके सन्देशसे कम नहीं है। यह केवल हिन्दुओंका भ्रातृ-संघ नहीं, बल्कि मुसलमानों, ईसाइयों और अन्य सभी लोगोंका भ्रातृ-संघ है। यही अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनका पूरा सन्देश है। मेरा कार्यक्रम बहुत व्यस्त है। इसलिए अब ज्यादा देर यहाँ रुक नहीं सकता। आशा है, आपने बिहारके विपद्ग्रस्त लोगोंके लिए चन्दा एकत्र किया होगा। अगर न किया हो तो जल्दी एकत्र करके चन्देकी राशि श्री राजेन्द्रप्रसादको या मेरे पास भेज दें। दो-तीन मिनटमें आपको मुझे इन चीजोंकी नीलामीमें मदद करनी है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-२-१९३४

१३२. भाषण : सार्वजनिक सभा, तिरुपुरमें[2]

६ फरवरी, १९३४

मित्रो,

इन तमाम मानपत्रों और अलग-अलग दी गई इन थैलियोंके लिए मैं आपका आभारी हूँ। मैं पहले ही काफी लम्बा कार्यक्रम पूरा कर चुका हूँ और इस सभामें मुझे एक बार फिर अपने दिमागपर जोर डालना पड़ रहा है और मैं जानता हूँ कि आप कुछ देर यहाँ धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करते रहे हैं। इसलिए मैं अपनी बात संक्षेपमें

१. यह सभा सुबहके साढ़े आठ बजे हुई थी। इसमें लगभग ४,००० स्त्री-पुरुष उपस्थित थे। गाँव और अवनाशी ताल्लुका बोर्डकी ओरसे गांधीजी को मानपत्र भेंट किये गये थे। सभाके अन्तमें मानपत्रों और आभूषणोंकी नीलामी की गई थी।

२. इस सभामें तिरुपुर नगर परिषद् तथा खादी-कार्यकर्त्ताओंकी ओरसे गांधीजी को मानपत्र और थैलियाँ भेंट की गई थीं। सभाके अन्तमें गांधीजी ने मानपत्रोंकी नीलामी की। भाषणका एक अंश १६-२-१९३४ के **हरिजन**में भी छपा था।

ही कहूँगा। आपने मुझे जो मानपत्र भेंट किये हैं, उनका अंग्रेजी अनुवाद मैं पढ़ गया हूँ। नगर परिषद्ने हरिजनोंके लिए जो-कुछ किया है, उसपर मैं उसे बधाई देता हूँ। किन्तु, जबतक हर प्रकारकी अस्पृश्यता बिलकुल मिट नहीं जाती तबतक न तो पार्षदोंको और न जनताको ही चैन लेना चाहिए। मैं जानता हूँ कि हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार खोलना नगर-परिषद्के अधिकार-क्षेत्रमें नहीं है। लेकिन यह काम तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंका है कि वे ऐसा जनमत तैयार करें जिससे तिरुपुर के एक-एक मन्दिरके द्वार हरिजनोंके लिए खोल दिये जायें। मेरा तो निश्चित मत है कि जबतक सारे सार्वजनिक मन्दिरोंके द्वार हरिजनोंके लिए बिलकुल उन्हीं शर्तों पर नहीं खोल दिये जाते जिन शर्तोंपर सवर्ण हिन्दुओंके लिए खुले हुए हैं, तबतक ऐसा नहीं कहा जा सकता कि हमने अस्पृश्यतासे छुटकारा पा लिया। तथाकथित अस्पृश्योंको भी सर्वथा वही अधिकार और सुविधाएँ होनी चाहिए जो तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंको प्राप्त हैं। खादीके व्यापारियों द्वारा भेंट किया गया मानपत्र मैं पढ़ गया हूँ। मैं जानता हूँ कि हरिजनोंके लिए खादीका क्या मतलब है। भारत-भरमें दसियों हजार नर-नारियोंको, जो हरिजन-वर्गके हैं और जिनके पास और कोई काम नहीं है, खादीके बलपर कुछ पैसे आज मिल जाते हैं। इसलिए यह बड़ी लज्जा-जनक बात है कि हमारे बीच नकली खादी चल पड़े, और चूँकि खादीको कोई कानूनी संरक्षण प्राप्त नहीं है, इसलिए हम बस यही कर सकते हैं कि जनमतको सबल बनानेकी कोशिश करें। यही शिकायत मुझसे मदुरामें भी की गई थी और फिलहाल मैं केवल यही एक बात सुझा सकता हूँ कि जिस खादीको अखिल भारतीय चरखा संघका प्रमाणपत्र प्राप्त न हो उसे कोई न खरीदे। मैंने ऐसी अफवाह भी सुनी है कि अब मैंने खादीकी अनिवार्यताके विषयमें अपनी राय बदल दी है। मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि मेरी राय बिलकुल नहीं बदली है। इसके विपरीत, जो राय मैंने १९१९ में[1] जाहिर की थी, अनुभवसे वह और भी पक्की हो गई है। और मैं हृदयसे मानता हूँ कि अस्पृश्योंके गहरे दुःखका, जो दिन-दिन अधिकाधिक गहरा होता जा रहा है, खादी ही एकमात्र उपचार है। खादी किसी भी कीमतपर सस्ती ही है, क्योंकि खादी खरीदनेमें खर्च की गई आपकी एक-एक पाई सीधे गरीबोंके हाथों में जाती है। किन्तु, इस तरहकी बातें तो मैं अनेक मंचोंसे कई बार कह चुका हूँ, इसलिए अब वही बातें दोहराकर मैं आपको उबाना नहीं चाहता। मैं बस यही आशा कर रहा हूँ कि आत्म-शुद्धिके इस महान् आन्दोलनमें हम न केवल अस्पृश्यता से छुटकारा पायेंगे, बल्कि हमारे समाजमें जो अन्य अनेक दोष हैं, उनसे भी मुक्ति पा लेंगे। और मैं आशा करता हूँ कि जो हरिजन इस सभामें उपस्थित हैं वे इस बातको अपने मनमें भली-भाँति बैठा लेंगे कि इस आन्दोलनमें उन्हें भी अपना अंश-दान देना है।

और अन्तमें मैं पूर्वोत्तर भारतमें स्थित सीताकी भूमिके बारेमें अपनी भावना व्यक्त किये बिना नहीं रह सकता। भूखी धरतीमाता ने अनेक नगरोंको उदरस्थ कर

१. देखिए खण्ड १५, पृ० २०६-७।

लिया है। राजमहल ईंट-पत्थरके ढेर बनकर रह गये हैं। लगभग २५,००० लोगोंके काल-कवलित हो जानेका समाचार है। लगभग पलक झपकते ही हजारों लोग बेघरबार हो गये। और उत्तर भारतकी कड़कड़ाती और तेज सर्दीमें ये लोग बिना किसी आश्रयके निराहार रह रहे हैं। इसलिए आपसे मेरा अनुरोध है कि उनके इस कष्टमें हर तरहसे आप हाथ बँटायें। और अब मैं आज ही किसी समय यह समाचार सुननेको उत्सुक रहूँगा कि आपने श्री राजेन्द्रप्रसादके पास भेजनेके लिए कोष एकत्र कर लिया है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ७-२-१९३४

१३३. भाषण : सार्वजनिक सभा, कोयम्बटूरमें[1]

६ फरवरी, १९३४

आपके नगरमें दूसरी बार आकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। आपने आज रातको तो मेरे लिए बहुत व्यस्ततापूर्ण कार्यक्रम तैयार कर दिया है। आपने मुझे इतने मानपत्र और थैलियाँ भेंट की हैं कि उन सबको निबटानेमें मुझे कुछ समय लग जायेगा। इसलिए मैं आपसे कहूँगा कि कुछ समय मेरे प्रति तनिक धैर्य दिखाइए। और जो लोग थक गये हों वे बिना कोई आवाज किये चुपचाप चले जायें। और जो लोग बेचैन-से हो गये हैं उनसे मैं जरा शान्त रहनेको कहूँगा, ताकि मैं कार्यवाही पूरी कर सकूँ। आपने मुझे बहुत-से मानपत्र भेंट किये हैं, इसलिए आप मुझसे यह अपेक्षा तो नहीं रखते होंगे कि मैं उन सबके अलग-अलग उत्तर दूँ। अतएव आशा है, उन सभी मानपत्रों और थैलियोंके लिए मेरी ओरसे एक ही साथ दिया गया धन्यवाद आप स्वीकार करेंगे। आपको मेरे यहाँ आनेका उद्देश्य तो मालूम ही है — आपके मानपत्रोंमें ही उसका उल्लेख है। यदि हमें अपना अस्तित्व कायम रखना है तो हमें अस्पृश्यताके इस विषकीटसे छुटकारा पाना ही होगा। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि यदि सवर्ण हिन्दू अपने हृदयोंको अस्पृश्यताके इस कलुषसे मुक्त नहीं करते तो हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति अवश्य ही मिट जायेगी। हिन्दू-समाजमें एक जागृति आ गई है, यह तो मैं जहाँ कहीं गया हूँ, वहाँ होनेवाली इस तरहकी सभाओंसे ही स्पष्ट है। मैंने पहले भी जब कभी भारतका दौरा किया है, लोग बड़ी संख्यामें मेरी बात सुनने आये हैं। लेकिन जहाँतक मैं समझता हूँ, इस बार सब जगह उनकी संख्या पहलेसे भी अधिक बड़ी रही है। इन जन-समुदायोंके समक्ष मेरे इस दौरेका उद्देश्य स्पष्ट करनेकी हर सम्भव कोशिश की गई है। इसलिए लोगोंका इतनी बड़ी

१. गांधी-इर्विन स्टेडियममें हुई इस सभामें लगभग ३०-४० हजार लोग उपस्थित थे। नगरपालिकाकी ओरसे भेंट किये गये मानपत्रके अलावा कई और मानपत्र भी गांधीजीको भेंट किये गये थे। सभाके अन्तमें इन सबकी नीलामी की गई थी। भाषणका तमिल अनुवाद भी पेश किया गया था।

संख्यामें आना और मेरी झोलीमें अपनी शक्ति-भर रुपये-पैसे डालना मेरी समझसे तो इस बातका स्पष्ट संकेत है कि मैंने उनके सामने जो महान् सुधार प्रस्तुत किया है, उसके लिए वे तैयार हैं। और यदि अस्पृश्यता समूल नष्ट नहीं हो जाती तो मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इसका दोष जनसाधारणपर नहीं, बल्कि पूरी तरहसे कार्यकर्त्ताओं तथा इस आन्दोलनका नेतृत्व करनेवाले आजके नेताओंपर ही होगा। इसलिए मैं सभी सहयोगी कार्यकर्त्ताओं तथा नेताओंसे इस आन्दोलनके मर्म को समझनेको कहूँगा। मैं चाहूँगा कि वे इस बातको साफ-साफ देखें कि यह आत्म-शुद्धि, आत्म-बलिदान और उन लोगोंकी क्षतिपूर्त्ति करनेका आन्दोलन है, जिन्हें तथा-कथित सवर्ण हिन्दू सदियोंसे दलित करते आ रहे हैं। इसलिए कोयम्बटूर आनेपर जब मैंने कुछ हरिजन भाइयोंसे यह शिकायत सुनी कि यहाँसे सिर्फ तीन-चार मील दूरके एक गाँवमें उनके साथ कैसा दुर्व्यवहार किया जाता है तो मैं बहुत अशान्त हो उठा। उन्होंने मुझे बताया है कि वहाँ सवर्ण हिन्दुओंने उनके विरुद्ध एक मोर्चा बना रखा है। उनके कथनानुसार उनके श्रमतक का बहिष्कार किया जाता है। मैंने उन्हें आश्वासन दिया है कि यहाँ मैं जो चन्द घंटे बिताऊँगा उनके दौरान जहाँतक सम्भव है, वहाँतक मैं परिस्थितिको समझनेकी कोशिश करूँगा। लेकिन मुझे लगता है कि जब कोयम्बटूर में जीवन इतना जाग्रत है, जब यहाँ हरिजनोंके हितोंके प्रति इतनी सहानुभूति प्रकट की जा रही है तब यह तो बहुत आसान बात होनी चाहिए कि यहाँके कुछ नेता उस गाँवमें जाकर परिस्थितिको समझें और तथाकथित सवर्ण हिन्दुओं तथा हरिजनोंके बीचके झगड़ेको मिटा दें। हरिजन भाइयोंकी यह शिकायत चाहे उचित हो या अतिरंजित अथवा सर्वथा सच हो, मैं जो बात कह रहा था, उससे उसका कोई सरोकार नहीं है। यह शिकायत मैं आपके ध्यानमें सिर्फ इसलिए नहीं ला रहा हूँ कि इससे आप अपने एक कर्त्तव्यके प्रति सचेष्ट हो जायें और आप इस शिकायतको दूर करायें, बल्कि इसमें मेरा उद्देश्य, मैं जो बात कह रहा था, उसे अधिक स्पष्ट और जोरदार ढंगसे आपको समझाना भी है। यदि हममें ऊँच-नीचकी भावनाका यह घुन न लग गया होता तो ऐसे झगड़ों और उपद्रवोंका कोई प्रसंग ही न आता। इसलिए मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ और आपसे भी इस प्रार्थनामें शरीक होनेको कहता हूँ कि वह हमें अस्पृश्यताके विरुद्ध चल रहे इस आन्दोलनके मर्मको समझने तथा इस बुराईको अपने बीचसे मिटा देनेके लिए यथेष्ट विवेक बुद्धि और शक्ति प्रदान करे।

अब, आपने मुझे जो चीजें भेंट की हैं उन्हें नीलाम करनेसे पूर्व, मैं आपसे बिहारके अपने कष्ट-पीड़ित भाइयों और बहनोंके सम्बन्धमें दो शब्द कहना चाहूँगा। और उस सुन्दर प्रदेशमें हुई तबाहीकी याद दिलाते हुए मैं रंगस्वामी अय्यंगारका स्मरण करना नहीं भूल सकता, जो अब हमारे बीच नहीं रहे। 'हिन्दू' के स्तम्भ बताते हैं कि कष्ट-पीड़ित बिहारके प्रति उनकी कितनी अधिक सहानुभूति थी और 'हिन्दू' के बहु-संख्यक ग्राहकोंने बिहारकी सहायताके लिए उनकी अपीलका उत्तर देनेमें कितना अधिक उत्साह दिखाया है। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि चाहे

पत्रकारके रूपमें हो या राष्ट्र-सेवकके रूपमें, उनके स्थानकी पूर्त्ति हो पाना सहज नहीं है। जैसाकि मैं जानता हूँ, उनमें आश्चर्यजनक श्रमशीलता और समझदारी थी और कठिन प्रसंगोंपर उनके उन गुणोंसे कांग्रेसको बड़ा सहारा मिला। तो अब मैं आपसे मेरे साथ मिलकर उनके शोक-संतप्त परिवारके प्रति संवेदना और सम्मान प्रकट करने को कहता हूँ और ऐसा करते हुए मैं आपसे उस अपीलका यथेष्ट उत्तर देनेका अनुरोध करूँगा जो उन्होंने विहार के दुःखी जनोंकी ओरसे जारी की थी। इधर मैं ऐसी सभाओंके अन्तमें बिहारके लिए सबसे चन्दा इकट्ठा करता रहा हूँ। इस विशाल जन-समुदायको देखते हुए मेरा यह कहनेका साहस नहीं होता कि स्वयंसेवक लोग श्रोताओंके बीच जाकर बिहारके लिए चन्दा इकट्ठा करें। लेकिन अगर आप लोगोंकी अनुमति हो और स्वयंसेवकोंमें साहस हो तो मैं उनसे कहूँगा कि इन चीजोंकी नीलामीसे पहले वे आपके बीच जाकर बिहारके लिए चन्दा इकट्ठा करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ८-२-१९३४

१३४. तार : अमतुस्सलामको

पोलाचि जंकशन

७ फरवरी, [१९३४][१]

अमतुस्सलाम
मार्फत – आसर मर्चेंट
तिरुपुर

आशा है, तुम स्वस्थ-प्रसन्न होगी। सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१) से।

१३५. पत्र : कुसुमबहन देसाईको

७ फरवरी, १९३४

चि० कुसुम,

तेरे किसी सम्बन्धी[२]—भाई ? —के जंजीबारमें गुजर जानेकी बात वल्लभभाई लिखते हैं। यह कौन हो सकता है? ब्योरा भेजना और इसके अतिरिक्त जो भी मेरे जानने लायक हो सो बताना। यदि तू जेलसे छूटी हुई बहनोंसे न मिली हो

१. गांधीजी १९३४ की ७ फरवरीको पोलाचिमें थे।

२. कुसुमबहनका छोटा भाई हरिश्चंन्द्र दक्षिण आफ्रिकामें काले बुखारसे गुजर गया था।

तो मिलने का प्रयत्न करना। तू 'हरिजनबन्धु' पढ़ती है न? तू मेरे बारेमें उससे सब-कुछ जान सकती है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती कुसुमबहन देसाई
डॉ० चन्दूलालका दवाखाना
भडौंच, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १८५०) से।

१३६. भाषण: सार्वजनिक सभा, पोलाचिमें[1]

७ फरवरी, १९३४

मैं चाहता हूँ, आप सब पूरी शान्ति रखें। आपने तो मुझे इतनी सामग्री दे दी है कि उसके विषयमें मैं घंटे-भर बोलता रह सकता हूँ, किन्तु स्वागत-समितिने मुझे केवल २० मिनट दिये हैं। २० मिनट पहले ही बीत चुके हैं। ट्रेन देरसे आई और मैं जानता हूँ कि आप सब बहुत देरसे प्रतीक्षा करते रहे हैं। अगर आप सहयोग करेंगे तो मैं कार्यक्रम जल्दी पूरा कर दूँगा। आप सब जानते हैं कि मैं किस उद्देश्य से यहाँ आया हूँ। आपने मुझे मानपत्र भेंट किये हैं और उनमें अस्पृश्यताको मिटाने की आवश्यकता और महत्त्व बताया है। जिन्हें आप अस्पृश्य समझते हैं वे आपके भाई-बहन हैं। जाति-जातिके बीच अस्पृश्यता है, हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच है, ईसाइयों और यहूदियोंके बीच है। ये दोष हमारे देशसे मिट जाने चाहिए। हमें ऊँच-नीचका भेद-भाव भूलकर यह मानना चाहिए कि हम सब एक ही ईश्वरकी सन्तान हैं। आपको बिहार भूकम्प राहत-कोषमें दान देनेकी आवश्यकता समझानेकी जरूरत मैं नहीं समझता और न एक ही विषयपर बार-बार बोलनेकी ही जरूरत है। मेरे सामने जो चरखा पड़ा हुआ है वह बड़ा आकर्षक है और उसमें जिस कौशलका उपयोग किया गया है, वह बहुत ही प्रशंसनीय है। मैं नहीं समझता कि उसपर हम अधिक सूत कात सकते हैं, लेकिन मूल्यकी दृष्टिसे तो यह चाँदीका ही बना हुआ है। इसका वजन ४० तोले है और इसे मैं एक अच्छी-खासी रकमपर नीलाम करना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ९-२-१९३३

१. सभामें नगर परिषद्, ताल्लुका बोर्ड और हरिजन सेवा संघकी ओरसे गांधीजी को मानपत्र भेंट किये गये थे।

१३७. भाषण : सार्वजनिक सभा, पलनीमें[1]

७ फरवरी, १९३४

आपके भेंट किये मानपत्रों और अनेक उपहारोंके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं क्या कहना चाहता हूँ, आप जानते हैं। आप [मन्दिरके] ईश्वरके निकट हैं और इसलिए आपको ऊँच-नीचका भेद-भाव भुला देना चाहिए। हम सब एक ही ईश्वरकी सन्तान हैं। किसीको भी अस्पृश्य नहीं समझना चाहिए। आपने मुझे बहुत-सी चीजें दी हैं और आपकी दी हुई भेंटोंकी बहुलता इस बातकी सूचक है कि आत्म-शुद्धिके हेतु चलाये गये इस आन्दोलनसे आपकी पूरी सहानुभूति है। हम सब अभी पलनीकी पवित्र पहाड़ीकी छायामें हैं। और हम यह लज्जाजनक बात जानते हैं कि उस पवित्र पहाड़ीपर स्थित मन्दिरके द्वार हरिजनोंके लिए उसी प्रकार नहीं खुले हुए हैं जिस प्रकार अन्य हिन्दुओंके लिए खुले हुए हैं। ऐसा क्यों होना चाहिए? इस पवित्र मन्दिरमें निवास करनेवाले ईश्वरने क्या आपसे यह कहा है कि कुछ ऐसे लोग हैं जिन्हें उसके मन्दिरमें प्रवेश नहीं करना चाहिए और वे लोग अस्पृश्य हैं? मेरे विचारसे तो जिस मन्दिरमें ईश्वरकी सृष्टिके तुच्छतम प्राणियोंके भी प्रवेश करने पर रोक लगी हो, उसमें वह निवास नहीं कर सकता। जब आप और मैं सब जानते हैं कि वह दयाका सागर है तो वह ऐसा निर्दय कैसे हो सकता है?

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ९-२-१९३४

१३८. भाषण : सार्वजनिक सभा, डिंडीगलमें[2]

७ फरवरी, १९३४

मित्रो,

मुझे अफसोस है कि आप सबको बड़ी परेशानी हुई। हमने समयसे पहुँचनेकी भरसक कोशिश की, फिर भी हमारी मोटरगाड़ी हमें इससे पहले नहीं ला पाई। आजका दिन बहुत व्यस्ततापूर्ण था, और उसपर हमारे रास्ता भूल जानेसे हमारी और आपकी थकान तथा परेशानी और बढ़ गई।

१. पहाड़ीपर स्थित मन्दिरके निकट हुई इस सभामें लोग अच्छी-खासी तादादमें इकट्ठे हुए थे। अनेक मानपत्रों और थैलीके अलावा लोगोंने व्यक्तिगत रूपसे भी गांधीजी को भेंट दीं। इनमें एक चाँदीका चरखा, कप और पैसे भी थे। भेंटमें दी गई चीजें सभाके अन्तमें नीलाम कर दी गईं।

२. रॉक फोर्ट मैदानमें हुई इस सभामें २०,००० से अधिक लोग उपस्थित थे। गांधीजी को बहुत-से मानपत्र और भेंटें दी गई थीं। सभाके अन्तमें उन चीजोंको नीलाम कर दिया गया था।

आपने जो मानपत्र और थैलियाँ भेंट की हैं, उनके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ, और बिहारके कष्ट-पीड़ित लोगोंके लिए थैली भेंट करनेवालों को भी धन्यवाद देता हूँ। आशा है, जब कल सुबह आप मुझे डिंडीगलसे विदा करेंगे उस समय बिहारके लिए कुछ और पैसे इकट्ठे करेंगे। अगर आप जानते हों कि सीताकी उस भूमिपर कैसी विपत्ति आई है तो यह मानेंगे कि बिहारको जितनी भी सहायता दी जाये, अधिक नहीं होगी। मुझे विश्वास है कि आप मेरे यहाँ आनेके उद्देश्यसे अवगत हैं और मैं आशा करता हूँ कि आप सबने इन मानपत्रोंमें जो उद्गार व्यक्त किये हैं उनके अनुसार आचरण भी कर रहे होंगे। मेरी समझसे तो मनुष्य-मनुष्यमें भेद करना और कुछ लोगोंको जन्मतः अस्पृश्य मानना और उन्हें सुधरनेका अवसर न देना अनैतिक, घोरतम अनैतिक बातोंमें से है। यदि ईश्वरने कुछ लोगोंको अस्पृश्य बनाना चाहा होता तो निश्चय ही उसने उन्हें आँखोंसे देखा जा सकनेवाला कोई ऐसा निशान दे दिया होता जिससे हम उन्हें अपनेसे अलग करके पहचान सकते। लेकिन ऐसा कोई निशान तो हमें दिखाई नहीं देता। हमारे अपने ही भाई-बन्धुओंमें से कुछके साथ कतिपय पशुओंसे भी बदतर व्यवहार क्यों किया जाना चाहिए, उनके जन्मके कारण उन्हें आजीवन कष्ट सहनेको क्यों मजबूर करना चाहिए? इसलिए हम अस्पृश्यताके इस कलंकसे जितनी जल्दी छुटकारा पा लेंगे, हमारे लिए उतना ही अच्छा होगा। हमें ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमें अपना यह पाप धो डालनेकी शक्ति दे। अब मुझे आपका ज्यादा — जितना बिलकुल जरूरी है उससे ज्यादा — समय नहीं लेना चाहिए। इसलिए मुझे आपकी दी हुई इन अनेक वस्तुओंकी नीलामी शुरू कर देनी चाहिए। तो मैं इस चाँदीकी प्रतिमासे शुरू करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ९-२-१९३४

१३९. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

८ फरवरी, १९३४

चि० नर्मदा,

तेरा पत्र मिला, पढ़कर प्रसन्नता हुई। तेरे बारेमें समाचार तो मुझे मिल ही गया था किन्तु तेरी पढ़ाई-लिखाईके बारेमें मुझे जानकारी नहीं मिली थी।

अमतुस्सलामके मेरे साथ होनेके कारण सभी बहनोंके समाचार मिल गये थे।

तेरी लिखावटमें पहलेकी अपेक्षा तो निश्चित रूपसे सुधार हुआ है। किन्तु मैं तो मोतीके दानों-जैसे अक्षर चाहता हूँ। सो तू अपनी अगली [जेल-] यात्रामें कर लेना।

तेरे पत्रके अन्तमें कस्तूर के शब्द पढ़कर प्रसन्नता हुई।

यह तो बहुत अच्छी बात है कि इस बार वह तेरे साथ रहेगी। उसे अलगसे पत्र लिखनेका समय मेरे पास नहीं है।

क्या तू नियमित रूपसे 'हरिजनबन्धु' पढ़ती है?

बापूके आशीर्वाद

कुमारी नर्मदा अभेसिंह राणा
जीजीनुं वालुकड
बरास्ता भावनगर
काठियावाड़

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७७८)से; सौजन्य : रामनारायण एन० पाठक

१४०. ग्राहकोंसे

इस अंकके साथ 'हरिजन'ने अपना एक वर्ष पूर्ण कर लिया है। यह जिन मर्यादाओंके अन्तर्गत चलाया जा रहा है, उससे ग्राहक और पाठक अवगत हैं। यह सिर्फ हरिजन-कार्यको ही लेकर चलता है। और इसमें भी इस बातका खयाल रखा जाता है कि कोई ऐसी सामग्री न छापी जाये जिससे सरकारके साथ इसका झगड़ा खड़ा हो जाये। इसमें राजनीति-विषयक सामग्री बिलकुल नहीं दी जाती। यदि इस अखबारको एक कैदीके नियन्त्रणमें चलना था तो ये मर्यादाएँ आवश्यक थीं। वैसे कानूनन देखिए तो मैं कैदी नहीं हूँ, लेकिन किन्हीं कारणोंसे, जिन्हें यहाँ दोहराने की जरूरत नहीं है, इस पत्रका संचालन मैं इस प्रकार कर रहा हूँ, मानों सचमुच कैदी होऊँ। इसलिए स्वभावतः यह पत्र उन्हीं स्त्रियों और पुरुषोंको आकर्षित कर सकता है जिनकी अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनमें रुचि है और जो इस कार्यमें सहायता देना चाहते हों — भले ही उनकी यह सहायता इस पत्रके ग्राहक बनने और इस प्रकार सम्पूर्ण रूपसे केवल अस्पृश्यता-विरोधी कार्यमें लगे इस एकमात्र पत्र और हरिजन सेवक संघके इस मुखपत्रकी मददतक ही सीमित हो। ग्राहक जानते हैं कि इसे घाटेमें चालू नहीं रखा जायेगा। मैं मानता हूँ कि किसी भी अखबारका अस्तित्व तभी उचित है जब लोग उसकी जरूरत महसूस करें और इसलिए एक न्यूनतम संख्यामें उसके ग्राहक होना भी जरूरी है ताकि वह अपना खर्च निकाल सके। पाठक यह भी जानते हैं कि इसमें विज्ञापन नहीं लिये जाते और इसलिए इसकी आयका कोई और जरिया नहीं है। इसलिए जिन ग्राहकोंके चन्दे बाकी हों वे अपना-अपना चन्दा शीघ्र ही प्रबन्धक, 'हरिजन', ट्रिप्लिकेन, मद्रासके पतेपर भेज दें। भारतमें रहनेवाले जो ग्राहक इससे आगेके दो अंकोंकी प्राप्तिके बाद अपने चन्दे नहीं भेजेंगे उनको पत्र भेजना स्वतः बन्द कर दिया जायेगा। जो लोग कुछ लिये बिना सेवा-भावसे इसके एजेंट बन गये थे उन्हें अगर यह सन्तोष हो कि इस पत्रने अपने अस्तित्वका औचित्य सिद्ध कर दिया है तो वे अगले साल भी इस दायित्वको निभानेकी कृपा करें।

चन्देकी दर इस प्रकार है: देशमें ४ रु०; विदेशोंमें ५ रु० ८ आने।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-२-१९३४

१४१. क्या यह अपराध नहीं है?

स्वागतपर जितनी फिजूलखर्ची त्रावणकोरमें की गई है उतनी अन्यत्र किसी भी स्वागत-समितिने नहीं की होगी। ऐसा लगता है कि कहीं-कहीं थैलियोंके लिए जितनी रकम इकट्ठी की गई, उसमें से लगभग आधी तो स्वागत-समारोहमें ही खर्च कर दी गई। मुझे तो दो जगहोंसे खर्चके विवरण मिले हैं। पहली जगहवाले हिसाबमें मोटरगाड़ीका किराया, छपाई तथा खिलाने-पिलाने का खर्च शामिल था। अपने नियम के मुताबिक मैंने खर्चोंका तफसीलवार और जाँचा हुआ विवरण माँगा है। मुझे तो ऐसी आशंका है कि मानपत्र छपवानेका खर्च भी थैलीके हिसाबमें ही शामिल कर लिया गया है। यदि ऐसा हुआ हो तो मेरे विचारसे यह थैलियोंके निमित्त एकत्र की गई राशियोंके अपराधपूर्ण दुरुपयोगके बराबर है। थैलियाँ हरिजनोंकी हैं। जहाँ की समितियोंके सदस्य गरीब हों वहाँ चन्दा इकट्ठा करनेका खर्च थैलीमें से निकालना उचित हो सकता है। लेकिन सभी मामलोंमें थैलियाँ तो ज्यों-की-त्यों सौंप दी जानी चाहिए। बादमें जो खर्च मंजूर किये जायें उनके बराबरकी रकम सम्बन्धित समितिको वापस दे दी जायेगी। आन्ध्रमें ऐसा ही किया गया था। और जहाँतक मुझे मालूम है, मध्य प्रान्तमें सब जगह स्वागत आदिका खर्च लोगोंने निजी तौरपर उठाया था। समितियाँ भविष्यमें निम्नलिखित नियमोंको याद रखें:

१. यथासम्भव कमसे-कम स्वयंसेवक रखे जायें।

२. स्थानीय उपयोगके लिए किरायेपर मोटरें लेनेमें ज्यादासे-ज्यादा कमी की जाये।

३. पूरे दलपर जितना मोटर-किराया बैठे उसे अलग दिखाया जाये, ताकि जो लोग अपने खर्चसे यात्रा कर रहे हों, उनसे उनपर हुए किरायेकी रकम ली जा सके।

४. छपाईका खर्च तो तभी उठाना चाहिए जब उसके बिना काम ही न चले।

५. सजावटपर हुए खर्चकी रकम थैलीमें से नहीं निकालने दी जा सकती।

६. मानपत्रका खर्च किसी भी हालतमें थैलीके लिए इकट्ठी की गई राशिमें से नहीं दिया जा सकता। मैंने बार-बार कहा है कि मानपत्र भेंट करनेकी कोई जरूरत ही नहीं है। मैं जानता हूँ कि मानपत्र जब सहज भावनासे प्रेरित होकर दिये जाते हैं तब उनसे प्रचारमें सही ढंगकी सहायता मिलती है। लेकिन अगर मानपत्र विवेकशून्य ढंगसे भेंट किये जाते रहे तो प्रचारकी दृष्टिसे उनके महत्त्वका मोह भी त्यागना पड़ सकता है। इसलिए यह काम स्वागत-समितियोंका है कि वे केवल ऐसे ही मानपत्र भेंट करने दें जो सहजस्फूर्त हों और जो हरिजन-कार्यमें प्रचारकी दृष्टिसे सहायक हो सकें।

७. मेरे दलको खिलानेका खर्च भी अगर थैलीके ही खाते डाला जाना हो तो उस खर्चका अलग हिसाब रखना चाहिए। स्वागत-समितियोंके साथ न्याय करनेके लिए

यहाँ यह बता देना जरूरी है कि त्रावणकोरसे बाहर कहीं यह खर्च समितियोंको नहीं उठाना पड़ा है। और यह देखते हुए कि मेरा दल खासा बड़ा है — इसमें १५ व्यक्ति शामिल हैं — उसे एक वक्तका भोजन कराना भी भारत-जैसे गरीब देशमें कोई आसान बात नहीं है। त्रावणकोर हमारे लिए अब भी अपेक्षाकृत एक नया क्षेत्र है, और चूँकि यह सनातनियोंका गढ़ है, इसलिए मैं और मेरे दलके लोग स्वभावत: उनके बीच अस्पृश्य बन गये, जब कि पहले उन्होंने अपने घरोंमें मेरा सहर्ष स्वागत किया था। और फिर इसमें एक कारण और जुड़ गया कि सरकारने अपने कर्मचारियोंको मुझे या मेरे आन्दोलनको किसी प्रकारका समर्थन देनेके खिलाफ आगाह करते हुए परिपत्र जारी करवा दिये और शायद ऐसे ही निर्देश त्रावणकोरके प्राधिकारियोंकी ओरसे भी दिये गये। इस कारण पैसेवाले दूसरे लोगोंको भी मुझसे कोई सरोकार रखनेमें डर लगा। मुझे आश्चर्य तो इस बातपर है कि ऊँची स्थितिवालोंके इस अकारण या उचित भयके बावजूद, आम लोग तो त्रावणकोरकी सभाओंमें भी इतनी बड़ी तादादमें इकट्ठे हुए जितनी बड़ी तादादमें पहले कभी नहीं हुए थे। इसलिए मुझे इस बातपर कोई आश्चर्य नहीं हो रहा है कि त्रावणकोरमें कुछ जगहोंकी स्वागत-समितियोंके गरीब सदस्योंको मेरे दलको खिलानेका खर्च थैलीमें से निकालना पड़ा। लेकिन जहाँ भी ऐसा हो, वहाँ मुझे भोज्य वस्तुओंकी सूची और उसपर होनेवाले खर्चको उसी तरह जाँचना होगा जिस तरह मैं किसी होटल मालिक द्वारा दिये गये खर्चके हिसाब को जाचूँगा। समितियाँ अबतक यह तो जान गई होंगी कि हम सादेसे-सादे भोजनकी ही अपेक्षा रखते हैं। मिठाई-पकवान या मिर्च-मसालोंकी कोई जरूरत नहीं होती। मुझे लगता है कि खर्चकी सबसे बड़ी मद बकरीका दूध और फल ही हैं। इनकी व्यवस्था हर जगह करनेकी जरूरत नहीं है। आम तौरपर ऐसा होता है कि तीन बारका भोजन हम तीन अलग-अलग जगहोंमें करते हैं। तो दूध और फलोंकी व्यवस्था बस दिनमें एक ही जगह सुबहके भोजनके समय कर दी जाये। फलोंमें स्थानीय तौरपर मिलने-वाले मौसमी फल और सन्तरे होने चाहिए। दुर्भाग्यवश दलके कई लोगोंके लिए डॉक्टरी सलाहके अनुसार फल आवश्यक हैं। स्वागत-समितियोंसे यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वे लोगोंसे निजी तौरपर इसकी व्यवस्था करायें लेकिन उन्हें इस मदमें थैलीकी रकममें से मनमाना खर्च करने की छूट भी नहीं दी जा सकती। अत: भोज्य वस्तुएँ क्या होंगी, यह तय करनेका काम दलके प्रबन्धकर्त्ता ठक्कर बापा पर छोड़ दिया जाना चाहिए। स्थानीय समितियोंसे इस बातका खयाल रखनेकी अपेक्षा की जायेगी कि ईमानदार दूकानदार जरूरतकी चीजें बाजार भावपर दें।

याद रखनेकी बात यह है कि इस काममें लगे हम सब इकट्ठी की गई राशियों के न्यासी हैं और इसलिए उन्हें कंजूसकी तरह खर्च करना है — जिस तरह हम अपना पैसा खर्च करेंगे, उससे भी अधिक सावधानी बरतते हुए खर्च करना है। अब इसके विरुद्ध अगर यह कहा जाये कि प्रदर्शनात्मक धूमधामके बिना पैसा मिल ही नहीं सकता तो मैं निस्संकोच उत्तर दूँगा कि तब हमें उसके बिना ही काम चलाना चाहिए। जो पैसे दिये जाते हैं वे या तो दाताओंकी इस इच्छाके द्योतक

हैं कि वे अस्पृश्योंके प्रति किये गये अन्यायोंकी क्षतिपूर्त्ति करना चाहते हैं या फिर ऐसा नहीं है। अगर वे पैसे उनके इस संकल्पका बयाना हैं तो लोगोंको जब अपने कर्त्तव्यकी प्रतीति करा दी जायेगी तो वे सहज ही पैसे देंगे। सार्वजनिक कार्योंके लिए दान माँगनेका मुझे अब ४० वर्षोंसे अधिकका अनुभव प्राप्त हो चुका है। मुझे ऐसा एक भी प्रसंग याद नहीं आता जब मुझको आकर्षक प्रदर्शनोंका सहारा लेना पड़ा हो। यह काम कठोर परिश्रम, धैर्य, एकाग्रता तथा विनम्रताके साथ दिये गये तर्कों और अपने उद्देश्यमें अडिग आस्थाके बलपर ही किया गया था। और मुझे जितने कार्योंके लिए चन्दा करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, हरिजन-कार्य निस्सन्देह उन सबमें उदात्ततम है, क्योंकि इसका सम्बन्ध दुनियाके सबसे अधिक दलित-शोषित मानव-समुदायसे है। अगर इस काममें सच्ची लगनवाले स्त्री-पुरुष लगे हुए होंगे तो यह अवश्य ही आगे बढ़ेगा। जरूरतका पैसा भी बिना किसी खास कोशिशके मिल जायेगा। ईमानदारीके साथ किया गया निःस्वार्थ कार्य ही सबसे बड़ी प्रार्थना है। और ऐसी प्रार्थना निष्फल गई हो, ऐसा कभी नहीं हुआ।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-२-१९३४

१४२. खादी और हरिजन

अस्पृश्यता-निवारणके सम्पूर्ण कार्यक्रमसे अलग, स्वतन्त्र रीतिसे हरिजनोंकी आर्थिक अवस्था सुधारने में जिनकी रुचि हो, उन्हें जानना चाहिए कि जिन हजारों हरिजन स्त्रियों, पुरुषों और बच्चोंके पास कोई और काम नहीं था, उन्हें खादीने काम दिया है। कुछ हरिजन-कुटुम्बोंकी तो खादीसे पूरी परवरिश होती है, और इससे भी अधिक परिवारोंकी छोटी आमदनीमें थोड़ी वृद्धि करके खादी उन्हें भूखों मरनेसे बचाती है। भूखसे तड़पते हुए करोड़ों गरीबोंको रोजी देनेकी जो शक्ति खादीमें है, उसके विषयमें अब गम्भीरतापूर्वक कोई शंका नहीं की जाती। जो खादी गरीबोंका आधार है, उसीको कुछ व्यापारी बेईमानी करके हानि पहुँचा रहे हैं। मैंने मदुरामें सुना कि कुछ कपड़ेके व्यापारी वहाँ मिलके कते सूतसे बने कपड़ोंको हाथकी कती-बुनी खादीके रूपमें खपा रहे हैं। मुझे उस नकली खादीके कुछ नमूने दिखाये गये थे। वे खादीकी खास-खास किस्मोंकी हूबहू नकलें थीं। खादी-प्रेमियोंसे और जिन हरिजन-सेवकोंको यह विश्वास हो कि खादीमें हरिजनोंकी सेवा करनेकी शक्ति है, उनसे मेरी यह प्रार्थना है कि जिस खादीपर अखिल भारतीय चरखा संघकी छाप न लगी हो, उसे वे हरगिज न खरीदें। मैंने यह भी सुना है कि विदेशी तथा देशी मिलोंका कपड़ा भी बतौर खादीके बाजारमें काफी बिक रहा है। पर मानों मेरे दुःखके प्यालेको भरने के लिए ही अब यह बात फैलाई गई है कि मैंने खादीके सम्बन्धमें अपना विचार बदल दिया है और अब मैं देशी मिलोंके कपड़ेको खादीकी बराबरीका दर्जा देने लगा हूँ। खादी-सम्बन्धी

मेरे विचारोंका यह अनर्थ है। नैतिक, आर्थिक और व्यापकतम अर्थमें राष्ट्रीय दृष्टिसे खादीके प्रति मेरी श्रद्धा पहलेसे आज अधिक दृढ़ हो गई है। खादी और मिलके कपड़ेके बीच — देशी मिलके कपड़ेके बीच भी — कोई तुलना नहीं हो सकती। जिस तरह मिलके कपड़े या मिलके सूत द्वारा किया जाता है, उस तरह खादीके द्वारा गरीबोंका रक्त-शोषण नहीं हो सकता। मिलका कपड़ा या मिलका सूत किसी-न-किसी रूपमें — भले ही कितना ही कम क्यों न हो — गरीबोंका रक्त-शोषण तो अवश्य करता है। धनी लोग गरीबोंका जो निरन्तर शोषण करते रहते हैं, शुद्ध खादीका उपयोग करनेसे गरीबोंको स्वतः उस शोषणका कुछ (चाहे वह कितना भी कम क्यों न हो) मुआवजा मिल जाता है। और इन सभी मुआवजोंको मिलाकर देखें तो पता चलेगा कि खादीके द्वारा गाँवोंमें रहनेवाले आम लोगोंको उस शोषणका भारी मुआवजा मिलता है, हालाँकि पूरा मुआवजा तो कभी नहीं मिलता। देशकी तमाम मिलें राष्ट्रके हाथमें आ जायें, तो भी खादीके द्वारा गरीबोंकी जो सेवा हो रही है, वह मिलों के द्वारा नहीं होनेकी। मिल-उद्योग केवल राष्ट्रीय न्यासके रूपमें चलाया जाये और उसका प्रबन्ध भी योग्यतापूर्वक किया जाये, तब भी उसके द्वारा धनका समुचित बँटवारा अपने-आप कभी हो ही नहीं सकता; और उससे बहुत सारे श्रमिकोंकी रोजी तो छिन ही जायेगी। प्रत्येक झोंपड़ेमें चरखेके जरिये जो खादी तैयार होगी, उससे किसीका रोजगार-धन्धा तो मारा नहीं जायेगा और श्रमसे जो उत्पादन होगा, उसका भी सहज ही ठीक बँटवारा होता रहेगा। इसलिए मेरी दृष्टिमें तो खादी और मिलके कपड़ेकी कोई बराबरी या तुलना हो ही नहीं सकती। कारण यह है कि वे दोनों एक कोटिमें आते ही नहीं। मिलके कपड़ेकी सफाई, उसकी विविधता और बाजार-दरसे देखें तो उसके सस्तेपनको खादी कभी किसी हालतमें नहीं पहुँच सकती। दोनोंके महत्त्वकी माप जुदा-जुदा है। जहाँ खादीका मूल्य मानव-सेवाकी दृष्टिसे लगाया जाता है, वहाँ मिलके बने कपड़ेकी कीमत सिर्फ सोने-चाँदीकी दृष्टिसे लगाई जाती है। खादी चार आने गज मिले, तो भी मैं उसे सस्ती समझूंगा। और उतने ही अंकके सूतका और उसी बुनावटका मिलका कपड़ा अगर दो आने गज मिले, तो भी मेरे लिए वह महँगा ही पड़ेगा। इसलिए मेरी यह प्रार्थना है कि खादी और मिलके कपड़ेके बीच जो भेद है वह हमें स्पष्ट रीतिसे समझ लेना चाहिए, और अपने विचारोंमें किसी तरहकी उलझन नहीं आने देनी चाहिए। दोनों अपने-अपने क्षेत्रमें रहें। खादीको जो स्थान मिला है, उससे मिल-मालिकोंको ईर्ष्या नहीं करनी चाहिए। नकली खादी बना-बनाकर लोगोंको ठगना मिल-मालिकोंको शोभा नहीं देता।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-२-१९३४

१४३. नाटारोंके बीच

चेट्टिनाडकी दो बातें खास तौरसे उल्लेखनीय हैं। एक तो है देवकोट्टाके पास चित्तनूर नामके एक हरिजन-ग्राममें मेरा जाना। इस गाँवमें एक सवर्ण सज्जन शिक्षक का काम करते हैं और अपने परिवारके साथ रहते हैं। पति-पत्नी दोनों बड़ी लगनसे हरिजन-सेवा कर रहे हैं। ये लोग एक पाठशाला चला रहे हैं और दवा-दारू आदिकी जो सहायता वे दे सकते हैं, हरिजनोंको देते हैं। स्थानीय संघकी ओरसे यह हरिजन-पाठशाला चल रही है। चित्तनूरके हरिजनोंसे मैंने बड़ी देरतक बातें कीं। उनके प्रवक्ताने अपना एक वक्तव्य मुझे पढ़कर सुनाया, जिसमें उन सब अत्याचारोंका वर्णन था, जो उनपर उनके पड़ोसी नाटार लोग किया करते हैं। 'हरिजन' के पाठक नाटारोंसे तो परिचित ही हैं। वहाँसे लौटते समय रास्तेमें नाटारोंके एक प्रतिनिधि-मण्डलसे मैं मिला। उन लोगोंने रास्तेमें ही मुझे रोककर हार पहनाये और भेंटमें नारियल दिया। उनके मुखियासे मैंने हरिजनोंकी शिकायतोंकी बात कही तो उसने मुझे चतुराईसे कुछ यों ही उड़ते हुए जवाब दिये। देवकोट्टामें नाटारोंसे मुझे क्या उत्तर मिलेगा, यह मानो उसकी बानगी थी। देवकोट्टामें कुछ नाटारोंसे मिलनेका समय मैं नियत कर चुका था। वे लोग सौ से ऊपर थे। पूरे एक घंटेतक उनसे बातचीत हुई। बातचीत विस्तारसे हुई और वह दिलचस्प तथा ज्ञानवर्द्धक थी। हरिजनों पर वे लोग जो अमानुषिक अत्याचार किया करते हैं—यद्यपि पहलेसे अब अत्याचार कुछ कम हो गये हैं—उसके बचावमें उन्होंने बार-बार अपनी पुरानी 'रूढ़ि' की ही दुहाई दी। "अब आजकल यों उनके कपड़े वगैरह पहननेके बारेमें हम कभी कोई दखल नहीं देते हैं—हाँ, कुछ त्योहारोंके दिनोंकी बात अलग है", उनके मुखियाने बहुत शिष्टतासे, पर उतनी ही दृढ़तासे जवाब दिया।

"पर किसी भी दिन वे अमुक पोशाक ही पहनें, उनसे यह कहनेका आपको क्या अधिकार है?"

"अधिकार! यह रिवाज हमारे पुरखोंके समयसे चला आ रहा है", उस वृद्धने जवाब दिया।"

मैंने बीचमें ही उससे पूछा—"मान लीजिए कि आपसे ही कोई कहे कि आप अमुक प्रकारके ही कपड़े पहनें तो?"

"क्यों नहीं? हमसे उच्च वर्णवालोंने हमारे लिए जो नियम बाँध रखे हैं, उनका पालन हमें करना पड़ता है। इसी तरह हरिजनोंको भी हमारा कहना मानना ही चाहिए।"

"आपको किसीका भी हुक्म माननेकी जरूरत नहीं। न कोई ऊँचा है, न कोई नीचा", मैंने जवाब दिया। पर बूढ़ा मुखिया अपनी ही बातपर डटा रहा।

"यह कैसे हो सकता है? रूढ़िसे जो मर्यादा बँधी-चली आ रही है, उसका उल्लंघन हरिजनोंको नहीं करने दिया जा सकता।"

"मगर जो रूढ़ि स्पष्ट रूपसे बुरी दिखाई देती हो, उसे तो आपको छोड़ ही देना चाहिए न?" मैंने नम्रतापूर्वक उससे पूछा।

तुरन्त ही जवाब मिला — "मेरे लिए क्या चीज बुरी है, इसका निश्चय कौन करेगा? जो रूढ़ियाँ हमारे बाप-दादोंसे चली आ रही हैं, वे सब अच्छी ही होनी चाहिए।"

इस गजबके रूढ़िवादके विरुद्ध मेरे पास कोई दलील नहीं थी। मैंने अपनी हार मान ली। लेकिन मैंने उस वृद्धको तथा दूसरे सुननेवालोंको सचेत तो कर ही दिया कि कितनी ही ऐसी रूढ़ियोंका आज नाम-निशान नहीं रहा। जो बात आज आप स्वेच्छासे और शिष्टतापूर्वक करनेको तैयार नहीं हैं, कल वही बात आपको परिस्थितियोंसे मजबूर होकर करनी पड़ेगी। यद्यपि वह वृद्ध मुखिया अन्ततक अपनी ही जिदपर अड़ा रहा, तो भी हमारी बातचीत खासी हँसी-खुशीके बीच हुई और अन्तमें बिहारके भूकम्प-पीड़ितोंके लिए उन लोगोंसे मैंने चन्दा भी ले लिया।

तरुण हरिजन-सेवकोंके लिए यहाँ सेवा-कार्यका विशाल और सुन्दर क्षेत्र पड़ा हुआ है। वृद्ध मुखिया यह जानता था कि उसकी बातमें कोई दम नहीं है। लेकिन स्पष्ट ही उसने सोच रखा था कि जिस बातका बचाव हो ही नहीं सकता, उसका भी बचाव उसे जरूर करना है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-२-१९३४

१४४. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

९ फरवरी, १९३४

चि० रुक्मिणी,

तेरा पोस्टकार्ड मिला। मैं यह पत्र प्रातःकालकी प्रार्थनाके पहले लिख रहा हूँ। मैं रोज तीन बजे उठ जाता हूँ।

"जेणे राम राखे रे तेने कुण चाखी शके",[1] यह पद सदा ही याद आता रहता है। फिर कभी-कभी ऐसा भी लगता है कि कौन रहा है और कौन गया है? सभी जाते ही हैं न? अन्तर सिर्फ आज और कलका है। तो फिर इसके लिए परिताप या हर्ष क्यों मनाया जाये? कुल मिलाकर रात-दिन बराबर ही होते हैं न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१५८) से।

१. अर्थात् जिसका राम रखवाला हो उसका कौन क्या बिगाड़ सकता है?

१४५. पत्र : एस० आर० नारायण अय्यरको

९ फरवरी, १९३४

सभी बड़गा भाइयों और बहनोंको बता दीजिएगा कि अपने कुनूर-निवासके दौरान श्वेत वस्त्रधारी पुरुषों और स्त्रियोंका दृश्य मुझे रोज कितना अच्छा लगता रहा। कितना अच्छा हो, अगर वे मद्यपानका त्याग कर दें और अपनी पोशाकोंको बराबर सफेद ही रखनेके लिए वे खादी और हाथ-कताई को अपना लें। हाथ-कताई उनको व्यस्त रखेगी, उनके चित्तको स्थिरता प्रदान करेगी और मद्यप लोगोंको मद्यपानसे विमुख करेगी। इससे उनकी सामान्य आयमें भी कुछ वृद्धि होगी या वे अपने काते सूतकी बुनी खादी पहन सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १३-२-१९३४

१४६. पत्र : छगनलाल जोशीको

कुम्बम्
८/९ फरवरी, १९३४

चि० छगनलाल,

मैं डिंडीगलमें हूँ। अब सात बजते-बजते हम लोग प्रातःभ्रमणके लिए निकल जायेंगे। इस समय ६-४० हुए हैं। जितना लिखा जाये उतना लिखनेकी कोशिश करूँगा। हम लोग सुबह, दोपहर और साँझका भोजन अलग-अलग स्थानोंपर करते हैं। भगवान्ने अभीतक तो मेरा स्वास्थ्य ठीक बनाये रखा है। जब उसकी इच्छा होगी तब वह जीवनकी डोरको खींच लेगा। "काचेरे तांतणे मने हरजीए बाँधी जेम ताणे तेम तेमनी।"[१]

रतुभाई देसाईका पत्र कल मिला। उसने पूरे समाचार दिये हैं। यह कहा जा सकता है कि तुमने अच्छा अध्ययन किया है। मैं इसे ईश्वरका अनुग्रह मानता हूँ कि कैदियोंको रातमें पढ़नेको नहीं मिलता। यदि छूटनेके बाद तुम मुझसे मिलना आवश्यक समझो तो आकर अवश्य मिल जाना। तुम्हारे छूटनेकी तारीखके आसपास शायद मैं उत्कलमें हूँगा।

१. हरिजी ने मुझे कच्चे सूतसे बाँध रखा है; वह उसे जैसे-जैसे खींचता है, वैसे-वैसे मैं उसकी होती जाती हूँ।

म्यूरियल लेस्टर आजकल मेरे साथ दौरा कर रही है। तुम्हें यह याद होगा कि मैं उसीके यहाँ ठहरा था। वह चीन, जापान हो आई है। बहुत करके २१ तारीखतक मेरे साथ रहेगी। (यहाँतक लिखनेके बाद हमें चल देना पड़ा)।

अब हम कुम्बम् नामक स्थानपर हैं, जो पूर्वी और पश्चिमी घाटके मध्यवर्ती प्रदेशमें स्थित है। पूरे दिन घूमनेके बाद हमने वहाँ एक सभा की, और खाना खानेके बाद जिन लोगोंसे मिलना था उनसे मिलकर यह लिख रहा हूँ। साढ़े सात बज गये हैं। ठक्कर बापा आदि भोजन कर रहे हैं। उन लोगोंके खाना खा लेनेके बाद प्रार्थना होगी। प्रार्थनामें आजकल श्लोक और रामधुन ही होती है। श्लोकोंका पाठ मैं करता हूँ और रामधुन मीराबहन कराती है। मीराबहन कुछ भजन गा लेती है, किन्तु इस भीड़-भाड़में मैंने ही उसे गानेसे रोक दिया है। और प्रातःकाल 'गीता'का साप्ताहिक पारायण चल रहा है, जिससे पर्याप्त श्लोकोंका पाठ करना पड़ता है। इसीलिए मैंने भजन निकाल दिये हैं। पृथुराज कालिकटसे मेरे साथ है। वह चन्द्रशंकरकी अच्छी मदद कर रहा है। और अब एक अन्य भाई आनेवाले हैं, जिन्हें स्वामीने चुना है। शायद वालजी भी आये। स्वास्थ्य खराब होनेके कारण उसने ऐसी माँग की है। अन्य लोग तो जो थे वही हैं।

मेरा शरीर अब अच्छा काम दे रहा है। मैं सुबह जो गरम पानी और शहद लिया करता था वह भी अब तो मैंने बन्द कर दिया है। दूध, फल और उबली हुई अलोनी सब्जीपर रह रहा हूँ। और किसी चीजकी जरूरत महसूस नहीं होती।

तुमने यह तो सुना ही होगा कि भूकम्पके कारण बिहारके कुछ नगर उजड़ गये। इस कारण जेलसे छूटे हुए आश्रमवासियोंको मैंने राजेन्द्रबाबूकी सहायताके लिए भेजा है। अभी तो पण्डितजी, पारनेकर, बाल, सोमण, मगनभाई और रावजीभाई गये हैं। स्वामी और धोत्रे बम्बईसे गये हैं। बहुत करके लक्ष्मीदास भी जायेगा। वेलाबहनकी बीमारीके कारण वह रुका हुआ है। उसे कोई योनिसे सम्बन्धित तकलीफ है। क्या मैं तुम्हें यह लिख चुका हूँ कि दूधाभाईकी लक्ष्मी गर्भवती हो गई है? राधा ठीक-सी ही है। वह अभी देवलालीमें ही है। यह कहा जा सकता है कि केशू बिलकुल ठीक जम गया है। रामदास है तो ठीक-ठिकानेपर किन्तु अपने स्वभावके अनुसार वह बेचैन है। प्रभुदास सम्भवतः अपनी ससुरालके पासके गाँवमें बस जायेगा। वह और उसकी अम्बा बहुत सुखी हैं। देवदास २५० रु० पर 'हिन्दुस्तान टाइम्स'में लग गया है। लक्ष्मी गर्भवती है। वह उसके साथ दिल्लीमें है। प्रसव वहीं होगा।

प्यारेलालके छूटनेका समय हो आया है। महादेवकी अच्छी परीक्षा हो रही है, और उसी प्रकार मणिबहनकी भी।

(इतना लिख चुकनेके बाद फिर विघ्न पड़ा।) अब मैं इसे प्रातः तीन बजे दातुन करके पूरा कर रहा हूँ।

रमाने आश्रम छोड़कर अपने सम्बन्धियोंके साथ रहनेकी इच्छा प्रकट की है। मैंने उसे इतना बता दिया है कि मुझे यह बात पसन्द नहीं आई। किन्तु फिर भी

मैंने अनुमति दे दी है। मुझे यह बात इसलिए पसन्द नहीं आई क्योंकि माँ-बेटीको वर्धा अनुकूल आ गया है और दोनों अच्छी रहती हैं। तुम्हारे छूट जानेपर उसे तुम्हारे पास रहनेकी जरूरत नहीं। किन्तु तुम जाकर उनसे मिल आ सकते हो और इस बहाने वर्धामें कैसा चल रहा है, यह भी देख आ सकते हो। अपने सम्बन्धियोंसे मिलनेके लिए तुम्हें तो यात्रा करनी नहीं है किन्तु सम्बन्धी तुमसे यात्रा करायें, यह एक अलग बात है। आजकल मेरा रुख यह है कि सब लोग अपनी इच्छानुसार चलकर आगे बढ़ें। कोई एक-दूसरेका या मुझ अकेलेका अनुकरण न करे। इस बार मामला कुछ अलग तरहका है। भले ऐसा हो। यदि हम अपनी इच्छाके महल खड़े करते जायें तो इस धरतीकी बड़ी दुर्गति हो।

अमीना प्यारे अलीके पास गई होगी। उनके बच्चे अनसूयाबहनके वसतिगृहमें बहुत प्रसन्न रहते जान पड़ते हैं। किन्तु मेरे सुननेमें आया है कि कुरैशीके विचार कुछ और हैं। यदि ऐसा हो तो भी अच्छा ही है। गंगाबहन वर्धाकी यात्रापर गई है। सभी यह लिखते हैं कि कुछ ही समयमें सब लोग ठीक जम जायेंगे।

सरदार मौज कर रहे हैं। चन्द्रशंकर और मीरा आनन्दपूर्वक हैं। चन्द्रशंकर अब महादेवकी जगहकी प्रतिष्ठाकी रक्षा कर रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५१५) से।

१४७. पत्र : क० मा० मुंशीको

९ फरवरी, १९३४

भाईश्री मुंशी,

तुम्हारा पत्र और 'नरसैंयो — भक्त हरिनो' की प्रति मिली। मथुरादास या इस ओर आनेवाले किसी अन्य व्यक्तिकी मार्फत मैं तुम्हारे और लीलावतीके पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा। आशा है, तुम सभी सकुशल होगे। जगदीश[1] अब तो सर्वथा रोग-मुक्त हो गया होगा।

मलकानी तुम्हारे लिए उन बिलोंसे सम्बन्धित टिप्पणी तैयार कर रहे हैं।

मुझे जब भी दो-चार मिनटका समय मिल जाता है तभी 'नरसैंयो' पढ़ने लगता हूँ और उसके रसका उपभोग करता हूँ।

मुझे यह पुस्तक अच्छी लगी है। यदि मेरे पास समय होता तो मैं वल्लभभाई की तरह तुम्हारी पुस्तकें पढ़ जाता।

यदि कोई आनेवाला न हो तो अपना पत्र रजिस्ट्रीसे अवश्य भेज देना।

१. क० मा० मुंशीकी पहली पत्नीका पुत्र।

बिहारके लिए तो देशमें सभी जगह सहायता-कार्य चल रहा है। यदि वहाँ भी यह काम चल रहा हो तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। हाँ, यदि न हो रहा हो तो यह अवश्य आश्चर्यकी बात होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५३१) से; सौजन्य: कन्हैयालाल मा० मुंशी

१४८. भाषण : सार्वजनिक सभा, थेवरम्में

९ फरवरी, १९३४

श्रोताओंको सम्बोधित करते हुए गांधीजी ने कहा कि मेरे कार्यक्रममें थेवरम्का दौरा कुछ कठिनाईके बाद ही शामिल हो पाया। एक समय तो ऐसा लगा कि मैं यहाँ न आ पाऊँगा, लेकिन जिन कार्यकर्त्ताओंने मुझे मदुरा आनेको निमन्त्रित किया था, वे 'न' सुनने को तैयार ही नहीं थे।

पहाड़ीकी तलहटीमें बसे इस स्थानपर आकर मुझे सचमुच बड़ी प्रसन्नता हो रही है और बम्बईसे थेवरम् तक बहुत सारे उत्साही स्वयंसेवकोंको देखकर मेरा हृदय प्रफुल्लित हो गया। ऐसा लगता था, मानों वे सड़कके दोनों ओर अविच्छिन्न पंक्तियाँ बनाकर खड़े हों। मैं चाहता हूँ कि उस सारी जनशक्ति और सारी स्फूर्तिका उपयोग इस घाटीकी सुन्दरताको बढ़ाने के लिए नहीं तो कमसे-कम उसे सुरक्षित रखनेके लिए किया जाये। कोई यह न कहे कि जिसे सुन्दर बनानेमें प्रकृतिने इतनी उदारतासे काम लिया था, उसे मनुष्यने गन्दा कर दिया। मैंने देखा कि सारी सड़क टूटी-फूटी थी और स्वयंसेवकोंने उसकी मरम्मत करके उसे ऐसा बना दिया था कि उसपर से मोटरगाड़ियाँ गुजर सकें। लेकिन मैं चाहूँगा कि स्वयंसेवक उन हरिजनोंका अनुकरण करें जिन्होंने वन्निवालसिमें अच्छी सड़क बनानेके लिए दो महीनेतक काम किया।[1] ये हरिजन मुट्ठी-भर ही तो थे। आपकी संख्या उनसे कमसे-कम सौ गुनी ज्यादा है। इसलिए मैं आपसे कहूँगा कि बम्बईसे थेवरम् तक आप एक ठीक ढंगकी सड़क बनायें। हम अपने लिए सड़कें बनानेके लिए बराबर ताल्लुका बोर्डों या जिला बोर्डोंका मुँह जोहें, यह जरूरी नहीं है। और आप क्षण-भरको भी इस भ्रममें न रहें कि ताल्लुका बोर्ड या जिला बोर्ड आपके लिए मुफ्त ही सड़कें बना देते हैं। जो भी सड़क बनवाई जाती है, खुद आपके पैसेसे बनवाई जाती है, इसलिए अगर आप स्वयं ही अपने पैसेसे नहीं, बल्कि अपने श्रमसे, जो पैसेसे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है, अपने लिए सड़कें बनवा लें तो यह कितनी बेहतर बात हो।

और फिर शहरकी छोटी-छोटी गलियोंसे गुजरते हुए मुझे इस बातके लिए दुःखी होना पड़ा कि शहरको पूरी तरह साफ-स्वच्छ और स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अनुकूल

१. देखिए "डायरीके पन्ने", २५-२-१९३४।

स्थितिमें नहीं रखा गया है। मोटरगाड़ीपर बैठे इस घाटीमें से गुजरते हुए मैंने तुरन्त देख लिया कि मनोरम होते हुए भी यह निश्चय ही मलेरियाग्रस्त होगी। लेकिन मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि अगर आप समझदारीके साथ ठीक-ठीक श्रम करें तो इस घाटीको मलेरियासे मुक्त किया जा सकता है। जिन स्वयंसेवकोंको मैंने आज सुबह देखा वे, यदि प्रतिदिन अपना थोड़ा समय इस घाटी को मलेरिया-मुक्त बनाने में लगायें तो बिना किसी खास कठिनाईके — और निश्चय ही बिना अधिक खर्चके — इसे मलेरियासे छुटकारा दिला सकते हैं। मैंने देखा कि आपने अपने यहाँकी नालियोंकी गन्दगीको सूखी मिट्टीसे ढक दिया है। आपने मेरा जो खयाल किया है, उसकी मैं दिलसे कद्र करता हूँ, लेकिन अगर आप अपने यहाँकी नालियों को सदा साफ-सूखी रखें तो उसकी मैं और अधिक कद्र करूँगा। और आपको मैं गाँवोंकी सफाईके एक ऐसे विशेषज्ञकी हैसियतसे, जिसने इस क्षेत्रमें खुद कुछ काम करके व्यावहारिक अनुभव प्राप्त किया है, बता सकता हूँ कि यदि सेवा-भावसे श्रम किया जाये तो यह काम लगभग बिना किसी खर्चके किया जा सकता है। लेकिन, जबतक हमारे बीच अस्पृश्यताका अभिशाप कायम है और यह समाजकी जीवनी शक्तिको खाये जा रहा है तबतक तो यह काम नहीं किया जा सकता, नहीं किया जा सकेगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दु, १२-२-१९३४

१४९. पत्र : एफ० मेरी बारको

१० फरवरी, १९३४

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। अब तुम खादीका काम अधिक कर रही हो और शीघ्र ही नर्मदा भी तुम्हारे साथ होगी, यह शायद अच्छा ही है।

चन्द्राको प्यार और चुम्बन।

८ या ९ मार्चको मेरा हैदराबाद जाना निश्चित-सा लगता है। कुछ घंटेके लिए ही जाऊँगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०२०) से। सी० डब्ल्यू० ३३४९ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

१. इस सभाके बाद गांधीजी जमोरिनके राजमहलमें गये, जहाँ स्त्रियोंकी एक सभा हुई। वहाँ उन्हें एक मानपत्र भेंट किया गया और कई स्त्रियोंने अपने आभूषण उतारकर भी दिये। गांधीजी ने उनसे अस्पृश्यताको मिटा देनेका अनुरोध किया।

१५०. भाषण: सार्वजनिक सभा, श्रीरंगम्‌में[1]

१० फरवरी, १९३४

इस पुनीत नगरमें मैं पहले-पहल नहीं आया हूँ।[2] मुझे वह अवसर भली-भाँति याद है जब कुछ शास्त्रियोंके साथ मन्दिरके सम्बन्धमें मेरी मैत्रीपूर्ण और हार्दिक बातचीत हुई थी। मुझे याद है कि उस समय हमारे बीच अस्पृश्यताके विषयमें आम ढंगकी बातचीत हुई थी, और यद्यपि पूरी बातचीतके दौरान शास्त्री लोग अपनी बातपर अड़े रहे थे, लेकिन उन्होंने ऐसा सौजन्य और मैत्रीका भाव प्रदर्शित किया था जो मुझे बड़ा सुखद लगा था। आज यहाँ आते समय मुझे स्वागत-समिति तथा काले झंडोंके प्रदर्शनका आयोजन करनेवालों, दोनोंको बधाइयाँ देनेका अवसर मिला। स्वागत-समितिको तो मैं इसलिए बधाई देता हूँ कि सजावट वगैरहपर पैसा बर्बाद करनेके बजाय उसने एक-एक पैसा हरिजन-कार्यके लिए बचानेकी समझदारी दिखाई और काले झंडोंका प्रदर्शन करनेवालों को इसलिए कि उन्होंने काले झण्डोंकी सजावटके अलावा और कोई ऐसी-वैसी बात नहीं की; उन्होंने न किस तरहका शोर-गुल और नारेबाजी की और न कोई अन्य ऐसी हरकत की जिसे अशिष्टतापूर्ण कहा जा सके। सच तो यह है कि मुझे इस बातसे एक तरहका आश्चर्य हुआ कि जिन लड़कोंके हाथोंमें काले झण्डे थे वे सब मुस्करा रहे थे, यहाँतक कि उन्होंने हर्षध्वनियोंमें भी अपनी आवाजें मिलाईं।

अस्पृश्यताके विषयमें मुझे यहाँ जो-कुछ कहना है उसे मैं अन्य स्थानोंकी अपेक्षा कुछ अधिक विस्तारसे कहूँगा। लेकिन उससे पूर्व मैं अपनी एक निजी क्षतिका उल्लेख कर देना चाहूँगा — इस समय मेरी बगलमें श्री रंगस्वामी नहीं हैं, यह मेरी निजी क्षति है। अपने अन्तिम दिनोंतक वे अपने मनमें मेरे प्रति जैसा उत्कट प्रेम बनाये रहे, उसे मैं कभी भूल नहीं सकता।

मैं तो पहले ही, जब पहला अवसर आया तभी, 'हिन्दू' के श्री रंगस्वामी अय्यंगारका उल्लेख कर चुका हूँ।[3] इसीलिए मैंने अभी उनके नामके साथ 'अय्यंगार' शब्द नहीं जोड़ा। मेरे लिए ये दोनों ही क्षतियाँ बहुत बड़ी हैं, लेकिन यहाँ श्रीरंगम्‌में मुझे स्वभावतः श्री रंगस्वामी अय्यंगारकी याद आ रही है, क्योंकि वे यहींके रहनेवाले थे। तो मैंने आपको बताया कि पिछली बार जब मैं यहाँ आया था, उस समय कुछ शास्त्रियोंके साथ अस्पृश्यताके सम्बन्धमें मैंने चर्चा की थी।

१. उच्च विद्यालयके खेल-मैदानमें हुई इस सभामें काफी लोग एकत्र थे। २३-२-१९३४ के **हरिजन**में भी इस भाषणका सार-संक्षेप छपा था।

२. गांधीजी ने २० सितम्बर, १९२१ को श्रीरंगम्‌का दौरा किया था; देखिए खण्ड २१।

३. श्रोताओंमें से किसीने पूछा था कि गांधीजी का तात्पर्य ए० रंगस्वामी अय्यंगारसे था अथवा के० वी० रंगस्वामी अय्यंगारसे।

प्रश्न यह नहीं है कि हरिजन मन्दिर-प्रवेशके अपने अधिकारकी माँग कर रहे हैं या उसका दावा कर रहे हैं। इस मन्दिरके द्वार जब उनके लिए खुले घोषित कर दिये जायेंगे तब भी वे इसमें प्रवेश करना चाहेंगे या नहीं, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। लेकिन इसके द्वार उनके लिए खुलवाना प्रत्येक सवर्ण हिन्दूका अनिवार्य कर्त्तव्य है। मगर सिर्फ मुझ-जैसे एक तुच्छ व्यक्तिके यह माननेसे कि मन्दिरके द्वार उनके लिए खुलने चाहिए, वे खोले नहीं जा सकते। यह तो तभी हो सकता है जब सवर्ण हिन्दुओंका बहुमत इसके पक्षमें हो। इसलिए हमारे रास्तेमें कठिनाई तब आयेगी जब कोई एक ही हिन्दू कहे कि 'जबतक मैं श्रीरंगम् मन्दिरको हरिजनोंके लिए खोले जानेके विरुद्ध हूँ तबतक ऐसा नहीं होना चाहिए।' अगर ऐसे सर्वथा विचारहीन सिद्धान्तको स्वीकार कर लिया जाये तब तो हम हिन्दू-धर्ममें किसी तरहकी प्रगतिकी कोई बात ही नहीं सोच सकते। इस शर्तपर तो हम इन तमाम सामाजिक कुरीतियोंको कभी मिटा ही नहीं पायेंगे, और मुझे तो ऐसे किसी भी मन्दिरकी, और मन्दिर ही क्यों, मसजिद या गिरजाघरकी भी जानकारी नहीं है जिसमें एक वर्गके लोगोंका प्रवेश केवल इसलिए निषिद्ध हो क्योंकि कोई एक व्यक्ति विरोध कर रहा है।

तो मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें अपनी स्थितिको इतना अधिक स्पष्ट कर देनेके बाद मैं चाहूँगा कि जो लोग इस आन्दोलनके विरुद्ध हों वे सब मनमें तनिक सोच कर देखें कि क्या वे समयके रुखको नहीं पहचानेंगे और इस बातको स्वीकार नहीं करेंगे कि जो निर्योग्यताएँ हरिजनोंपर थोप दी गई हैं उन्हें अब जबरदस्ती कदापि लागू नहीं किया जा सकता।

मैं आपके सामने अपनी ओरसे इस बातकी साक्षी भरना चाहता हूँ कि इस पूरे दौरेमें मुझे तीन प्रान्तोंमें, जहाँ मैं गया, अर्थात् मध्य प्रान्त, आन्ध्र देश और तमिलनाडुमें, और अगर आप ऐसा कह सकें तो कहिए कि मलाबारमें भी, दसियों हजार सवर्ण हिन्दुओंसे मिलनेका अवसर मिला। मुझे इस बातमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि सीधे-सादे सवर्ण हिन्दुओंका मन आज हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके अधिकारको, और सवर्ण हिन्दू जिन अन्य सुविधाओंका उपभोग करते हैं, उनका उपभोग करनेके उनके हकको स्वीकार करनेको तैयार है। इसलिए जो लोग इस आन्दोलनके विरुद्ध हैं उनको मेरा सुझाव है कि वे इस प्रश्नको उलझायें नहीं। यदि मन्दिर-प्रवेशकी बात उन्हें पसन्द नहीं हो तो वे उससे अलग रहें, लेकिन देशमें जो दूसरे बहुत-से काम आज किये जा रहे हैं, उनमें सहयोग करें। आज शामको मैं सनातनियोंके एक शिष्ट-मण्डलसे मिलनेवाला हूँ। मैं उग्रतम सनातनीको भी उस चर्चामें शामिल होनेको आमन्त्रित करता हूँ। वह विशुद्ध मैत्रीपूर्ण चर्चा होगी और मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिनके विषयमें उनमें और सुधारक कहे जानेवाले लोगोंमें सहमति हो सकती है। तो इस प्रश्नको अब मैं यहीं छोड़ना चाहूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-२-१९३४

१५१. भेंट: श्रीरंगम्‌के हरिजनोंको

१० फरवरी, १९३४

यदि यह सच है कि संघके ९८ प्रतिशत कर्मचारी ब्राह्मण हैं,[१] तो यह बड़े श्रेयकी बात है। इससे प्रकट होता है कि सभी ब्राह्मण बुरे नहीं होते और जो लोग संघमें काम करते हैं उन्हें अपने अतीतपर पश्चात्ताप है और वे इस सुधारके लिए बहुत उत्सुक हैं। खुद मेरा विश्वास यह है कि सच्चे ब्राह्मणोंका अस्पृश्यतासे कोई सरोकार नहीं है।

प्रश्न: क्या आप ऐसा नियम नहीं बना सकते कि आधे सदस्य हरिजन हों?

उत्तर: यह सम्भव नहीं है कि संघके आधे सदस्य हरिजन हों। इसका सीधा-सा कारण यह है कि हरिजन कर्जदार नहीं, बल्कि महाजन हैं। यह तो कर्जदारोंका संगठन है। आपके प्रश्नके पीछे जो आशंका छिपी हुई है, उसका कोई कारण नहीं है; क्योंकि स्थानीय संघके सदस्योंको केन्द्रीय बोर्डकी अनुमतिके बिना पैसा खर्च करनेका अधिकार नहीं है। आप देखें तो आपको पता चलेगा कि अधिकांश पैसा हरिजनोंके बीच खर्च किया जाता है। इरादा यह रखा गया है कि व्यवस्था-कार्य पर यथासम्भव कमसे-कम पैसा खर्च किया जाये और आपको मालूम होना चाहिए कि इसके सदस्य स्वयंसेवक हैं, जिन्हें कुछ दिया नहीं जाता।

प्र०: क्या आपके कार्यकर्त्ता हमारे विश्वासके योग्य हैं?

उ०: हाँ, संघमें काम करनेवाले लोग, निश्चय ही आपके विश्वासके योग्य हैं। वे कोषकी जैसी व्यवस्था करते हैं, उसपर गौर करें तो आप पायेंगे कि व्यवस्था सर्वथा सन्तोषजनक है। आपने कुछ ब्राह्मणोंको बुरा, स्वार्थपूर्ण आचरण करते देखा है, इसलिए आप सोचते हैं कि सभी ब्राह्मण बुरे होंगे। हो सकता है कि वर्गत: ब्राह्मण बुरे हों, हालाँकि मेरे पास इस बातको सिद्ध करनेवाला कोई प्रमाण नहीं है। लेकिन मेरे पास इस बातका प्रमाण अवश्य है कि इस आन्दोलनसे सम्बन्धित ब्राह्मणोंमें से अधिकांश ईमानदार लोग हैं और वे इस संघमें इसलिए शामिल हुए हैं कि उनके मनमें अतीतके लिए पश्चात्ताप है और वे मानते हैं कि अस्पृश्यता एक घोर अन्याय है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-२-१९३४

१. गांधीजी से पूछा गया था कि हरिजन सेवा संघके ९८ प्रतिशत कर्मचारी ब्राह्मण क्यों हैं?

१५२. भाषण : नेशनल कॉलेज, त्रिचिनापल्लीमें

१० फरवरी, १९३४

आपने मुझे जो मानपत्र और थैली भेंट की है, उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। अपने सामने जितने विद्यार्थियोंको देख रहा हूँ, उनको ध्यानमें रखते ए मैं आपकी थैलीको पर्याप्त नहीं मानता। इसी दौरेमें भारतके दूसरे हिस्सोंके विद्य ने चन्दा देनेमें आपकी अपेक्षा बहुत अधिक उदारताका परिचय दिया है, लेकिन मैं यहाँ आपकी थैलीकी न्यूनताकी आलोचना करने नहीं आया हूँ। आपने जितना-कुछ दिया है, वह कम है या ज्यादा, यह तो आपके हृदयकी स्थितिपर निर्भर है। आपने जो-कुछ दिया है वह यदि पूरे हृदयसे दिया है तो निश्चय ही वह काफी होना चाहिए। जो भी हो, मैं तो यह मानता हूँ कि यह आपके अस्पृश्यतासे छुटकारा पानेके संकल्प का प्रतीक है। जैसाकि मैंने बहुधा कहा है, विद्यार्थियोंके लिए इतना ही काफी नहीं है कि वे मुझे थैलियाँ भेंट करके सन्तोष मानकर बैठ जायें। हरिजनोंकी सेवा करनेके लिए उन्हें अवकाशका अपना समय देना है, और पूर्ण रूपसे प्रभावकारी ढंगसे उनकी सेवा करनेके अनेक रास्ते हैं। मैं आपको यह भी बता दूँ कि भारतके प्रत्येक हिस्सेमें विद्यार्थी सेवा-कार्य कर रहे हैं। मेरा सुझाव है कि आप आपसमें ही ऐसी मण्डलियाँ बना लें जो अपनी-अपनी सुविधाके अनुसार किसी सप्ताह-विशेषमें अथवा किसी खास दिन सेवाका यह कार्य करें। आप हरिजन-बस्तियोंमें जाकर उनके बच्चों की देख-भाल कर सकते हैं, उनके साथ अपने सगे भाइयों और बहनोंकी तरह व्यवहार करते हुए उन्हें शिक्षा दे सकते हैं, जिसकी उन्हें सख्त जरूरत है। आप उन्हें विभिन्न मनोरम स्थल दिखाने ले जा सकते हैं, आरोग्यके नियमोंका प्रारम्भिक ज्ञान दे सकते हैं, उनके घर-द्वार साफ कर सकते हैं और इस काममें उनका सहयोग प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन ये तो आप जिन अनेक तरीकोंसे उनकी सेवा कर सकते हैं उनके कुछ उदाहरण-मात्र हैं। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि उत्साही विद्यार्थियोंको सेवाके अनेक तरीके दिखाई देंगे। आशा है, अब आप यह सेवा-कार्य अविलम्ब प्रारम्भ कर देंगे। ईश्वर आपको उसके लिए शक्ति प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू १२-२-१९३४

१५३. भाषण : सार्वजनिक सभा, त्रिचिनापल्लीमें[1]

[१० फरवरी, १९३४][2]

यह त्रिचिनापल्ली मैं कोई पहली बार नहीं आया हूँ। मैं यहाँ पहले भी कई सभाओंमें बोल चुका हूँ, जिनकी सुखद स्मृति मेरे मनमें बनी हुई है। लेकिन आजकी सभामें जितने लोग उपस्थित हैं उतने पहलेकी किसी भी सभामें उपस्थित नहीं हुए थे। और आत्म-शुद्धिके इस आन्दोलनके प्रति आकृष्ट होकर सभामें इतने अधिक लोगोंका आना मेरे लिए बड़े हर्षका विषय है। लेकिन मैं आशा करता हूँ कि आप लोग जो इतनी बड़ी संख्यामें यहाँ उपस्थित हुए हैं वह कोई तमाशा देखने के भावसे नहीं। मैंने तो स्पष्ट रूपसे सभी सवर्ण हिन्दुओंको अपने-आपको अस्पृश्यताके कलंकसे मुक्त करनेके लिए आमन्त्रित किया है। इसी उद्देश्यसे मैं आपको पैसे देनेके लिए भी आमन्त्रित करता हूँ, और आप लोगोंके पास पैसे या रुपये अथवा आभूषण आदि जो-कुछ भी होते हैं, दिल खोलकर दान देते हैं। यह मानना तो मुश्किल है कि इस आन्दोलनमें हृदयसे शरीक न रहते हुए भी आप लोग यह सब करते हैं। और सच तो यह है कि अगर भारत-भरमें लोग इसी तरह बड़ी संख्यामें आन्दोलनका समर्थन करते हैं तो मैं समझता हूँ कि यह बात हिन्दू-धर्ममें एक महान् सुधारका संकेत देती है।

लेकिन यहाँ मुझे जो मानपत्र भेंट किये गये हैं, देखता हूँ, इनमें से एक मुसलमान भाइयोंकी ओरसे भेंट किया गया है। मेरी प्रशंसामें बहुत-सी बातें कहनेके बाद अन्तमें मानपत्रमें कहा गया है:

> **लोक-हितके कार्यमें इतना सन्नद्ध और दूसरोंके कल्याणको सदा अपने कल्याणसे बढ़कर समझनेवाला व्यक्ति आपके अतिरिक्त और कौन हो सकता है। आज आप ही एकमात्र नेता हैं, अन्य कोई नहीं है। इसलिए हमारा निवेदन है कि इस अवसरपर आप हमें ऐसा आश्वासन दें कि हम अपनी चिरपोषित आशाएँ पूरी कर सकेंगे; यह भरोसा दिलाइए कि आप केवल हिन्दुओं और ईसाइयोंके ही नहीं, बल्कि मुसलमानोंके भी उद्धारका कार्य अपने हाथमें लेंगे। थोड़ेमें कहें तो हमें यह आश्वासन दीजिए कि आपके कार्य समस्त जनोंके हितके लिए, हमारे देशभाइयोंको नागरिकताके अधिकार प्राप्त कराने और उन्हें आर्थिक दासतासे मुक्ति दिलानेके लिए होंगे।**

१. पुठूर मैदानमें हुई इस सभामें १२-२-१९३४ के *हिन्दू* के अनुसार ३०,००० लोग उपस्थित थे। सभाके अन्तमें बिहारके भूकम्प-पीड़ित लोगोंके सहायता-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा किया गया था।

२. *हरिजन*के २३-२-१९३४ के अंक में प्रकाशित गांधीजी के दौरेके कार्यक्रम से।

इसके उत्तरमें मैं अपने मुसलमान भाइयोंको ही नहीं, बल्कि सभी सम्बन्धित लोगोंको इस बातके लिए पूर्ण आश्वासन दे सकता हूँ कि अपने जीवनके इस सान्ध्य-कालमें मैं सार्वजनिक हितको हानि पहुँचाकर वर्ग-विशेषके हितके लिए कार्य करूँ, इसकी कोई सम्भावना नहीं है। अगर इस समय ऐसा लगता है कि मैं एक वर्गगत हितका पक्षपोषण कर रहा हूँ तो आप यह भी सच मानिए कि उस वर्गगत हितके पीछे यह इच्छा छिपी हुई है कि उससे सम्पूर्ण मानव-समाजका कल्याण हो। कारण, मैं नहीं मानता कि जीवन कोई इस तरह अलग-अलग खण्डोंमें विभक्त है ताकि एक की हवा दूसरेतक न पहुँच पाये। वह एक अविभाजित और अविभाज्य समग्र वस्तु है, और इसलिए जो चीज एकके लिए लाभदायक है या हो सकती है वह सबके लिए भी वैसी ही होगी। जो प्रवृत्ति इस कसौटीपर खरी न उतरे, उसे हृदयमें लोक-कल्याणकी भावना रखनेवाले सभी व्यक्तियोंको त्याग देना चाहिए।

चूँकि मैं सदा इस सार्वभौमिक कल्याणके सिद्धान्तमें विश्वास करता रहा हूँ, इसलिए मैंने कभी ऐसी कोई प्रवृत्ति — चाहे वह वर्गगत हो या राष्ट्रीय — प्रारम्भ नहीं की है जो समग्र मानवताके कल्याणके मार्गमें बाधक हो। और उस सार्वभौमिक लक्ष्यको प्राप्त करनेकी कोशिश करते हुए वर्षों पूर्व मैंने यह पाया कि हिन्दुओंके बीच जैसी अस्पृश्यता आज बरती जाती है, वह न केवल हिन्दुओंके अपने कल्याणके मार्गपर अग्रसर होनेमें बाधक है, बल्कि सभी के सामान्य कल्याणके मार्गमें भी विघ्न-रूप है। इस बातको देख पानेके लिए कोशिश करनेकी जरूरत नहीं है कि अस्पृश्यताने अपनी सर्प-कुण्डलीमें न केवल सवर्ण हिन्दुओंको बल्कि भारतके सभी धर्मोंके अनुयायियों अर्थात्, मुसलमानों, ईसाइयों तथा अन्य लोगोंको भी दबोच रखा है। इस अस्पृश्यताके दानवके विरुद्ध जूझनेमें मेरी आन्तरिक इच्छा यह नहीं है कि केवल हिन्दुओंके बीच भ्रातृत्व स्थापित हो जाये, बल्कि मैं तो इस इच्छासे प्रेरित हूँ कि मानव-भ्रातृत्व अर्थात् हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों, पारसियों या यहूदियोंके बीच भी भाईचारा कायम हो। कारण, मैं तो दुनियाके सभी महान् धर्मोंके मौलिक सत्यमें विश्वास करता हूँ। मैं मानता हूँ कि वे सब ईश्वर-प्रदत्त हैं और मेरा विश्वास है कि जिन लोगोंके लिए जिस धर्मका उदय हुआ, उनके लिए वह आवश्यक था। और फिर मेरी यह मान्यता है कि यदि हम विभिन्न धर्मोंके पवित्र ग्रन्थोंको उसी दृष्टिकोणसे पढ़ें जिस दृष्टिकोणसे उनके अनुयायी पढ़ते हैं तो हम पायेंगे कि मूलतः सभी धर्म एक ही हैं और वे एक-दूसरेके सहायक और पूरक हैं।

यही कारण है कि सभी गैर-हिन्दुओंसे अपने इस उद्देश्यकी सफलताके लिए प्रभुसे प्रार्थना करनेको कहनेमें मुझे कोई संकोच नहीं हुआ है। और चूँकि अपने कार्यमें मुझे जीवन्त आस्था है और वह आस्था एक व्यापक अनुभवपर आधारित है, इसीलिए मैंने अत्यन्त विचारपूर्वक यह कहनेमें संकोच नहीं किया है कि यदि हम अस्पृश्यताके इस दानवको खत्म नहीं करेंगे तो वह हिन्दू-जाति और धर्म दोनोंको निगल जायेगा। और जब मैं आपसे अपने हृदयसे अस्पृश्यताकी भावनाको निकाल कर उसे शुद्ध बनानेको कहता हूँ तो उसका मतलब इससे कम कुछ नहीं होता कि मैं आपसे मानव-जातिकी मौलिक एकता और समानतामें विश्वास करनेको कह रहा

हूँ। आप सबसे मेरा अनुरोध है कि एक ही ईश्वरकी सन्तानोंके बीच ऊँच-नीचका भेद-भाव करना आप छोड़ दें।

यही कारण है कि अपनेको सनातनी कहनेवाले सवर्ण हिन्दुओंसे घुटने टेककर यह प्रार्थना करनेमें मुझे कोई संकोच नहीं हुआ है कि आत्म-शुद्धिके इस आन्दोलनमें वे मेरा साथ दें। अगर वे सिर्फ धैर्यपूर्वक इस आन्दोलनको तथा इसके फलितार्थोंका अध्ययन करें तो उन्हें पता लगेगा कि उनके और सुधारकोंके बीच जितनी बातों पर मतभेद हो सकता है उनसे कहीं अधिक बातोंपर सहमति हो सकती है। यदि वे इस आन्दोलनके विषयमें गम्भीरतापूर्वक विचार करके देखें तो वे अस्पृश्य माने जानेवाले लोगोंका जैसा अपमान करते हैं वैसे अपमानको उचित नहीं मान सकते। त्रिचिनापल्लीके निकट ही मेल-अरासुर नामक एक स्थान है। वहाँ हरिजनोंने सार्वजनिक तालाबोंका सबकी तरह उपयोग करनेके अधिकारकी माँग की है। कानूनमें हरिजनोंको इन तालाबोंके उपयोगकी अनुमति है। तथापि सवर्ण हिन्दुओंने कानूनको अपने हाथमें ले लिया है और मुझे मालूम हुआ है कि उन्होंने अनेक तरहसे हमारे इन भाइयों पर अत्याचार किया है। हरिजनोंके साथ दुर्व्यवहार किये जानेके ऐसे बहुत-से उदाहरण मैं आपको दे सकता हूँ। ऐसे व्यवहारको किस धार्मिक कुतर्कके सहारे उचित ठहराया जा सकता है?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-२-१९३४

१५४. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

११ फरवरी, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारे तीन पत्र एक ही साथ मिले। तुम प्रसन्न हो, यह जानकर खुशी हुई। बेशक, तुम गुजराती सीखो। अपने शरीरके साथ तुम्हें खिलवाड़ नहीं करना चाहिए। उपयुक्त आहार लेते हुए उसे ठीक रखो और अपने स्वास्थ्यकी उपेक्षा किसी भी कारणसे मत करो। अनिष्टकी तरह-तरहकी आशंकाओंका खयाल मनमें मत लाओ। मुझसे डरना गलत है।

सस्नेह,

बापू

श्री अमलाबहन
हरिजन आश्रम
साबरमती
बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे

[अंग्रेजीसे]
स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१५५. भाषण : सार्वजनिक सभा, करूरमें[1]

[११ फरवरी, १९३४][2]

मुझे ज्यादा समय नहीं लेना चाहिए। आप कुछ घंटोंसे धूपमें बैठे हुए हैं और अब ज्यादा देर इस तरह बैठे रहना आपको मुश्किल पड़ रहा होगा। इसके अलावा मुझे अभी ७६ मीलकी दूरी तय करनी है और यह भी जरूरी नहीं है कि मैं ज्यादा-कुछ कहूँ, क्योंकि आपकी थैलियों और मानपत्रोंसे जाहिर है कि आप मेरे यहाँ आनेके उद्देश्यसे भली-भाँति अवगत हैं। स्वागत-समितिके सदस्यों द्वारा कुछ सनातनियोंके भेजे सन्देशकी मैं कद्र करता हूँ। आपके मानपत्रसे मालूम होता है कि उनमें से कुछ ने तो हरिजनोद्धारमें अपना अंश-दान भी किया है। लेकिन उन्होंने मुझे यह सलाह दी है कि मैं हरिजनोंके लिए मन्दिर-प्रवेशके अधिकारकी माँग करना छोड़ दूँ। जिस प्रकार वे लोग सनातनी हैं, उसी प्रकार मैं भी सनातनी होनेका दावा करता हूँ, और इसलिए मैं इस माँगको नहीं छोड़ सकता कि जिस प्रकार सनातनी लोग मन्दिरोंमें प्रवेश कर सकते हैं, उसी प्रकार हरिजनोंको भी यह अधिकार दिया जाये। किन्तु, मैं अपनी और हरिजन सेवक संघकी ओरसे उन्हें पूर्ण रूपसे आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि जबतक किसी भी मन्दिरमें जानेवालोंके बीच इस बातपर स्पष्ट, बल्कि अधिकसे-अधिक स्पष्ट सहमति नहीं होगी कि उस मन्दिरमें हरिजन लोग प्रवेश करें तबतक कोई भी हरिजन उस हिन्दू-मन्दिरमें प्रवेश नहीं करेगा। इसलिए हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशकी माँग स्वीकार करानेके मेरे प्रयत्नोंका उसके किसी भी विरोधीपर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए; क्योंकि मन्दिर-प्रवेश तो उनके मेरे विचारसे सहमत होनेपर निर्भर करेगा। मैंने आपसे जो-कुछ कहा है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि जबतक वे मन्दिर-प्रवेशके विरुद्ध हैं तबतक कोई भी हरिजन मन्दिरमें प्रवेश नहीं करेगा। लेकिन मैं यह चेतावनी अवश्य दे देना चाहता हूँ कि दिन-प्रतिदिन एक ऐसा लोकमत तैयार होता जा रहा है कि यदि सवर्ण लोग हरिजनोंको ठीक उसी प्रकार मन्दिरोंका उपयोग करनेसे रोकेंगे जिस प्रकार वे स्वयं करते हैं तो वे हरिजनोंके प्रति अपने प्रारम्भिक कर्त्तव्यका निर्वाह करनेमें चूकेंगे। याद रखिए कि सुधारक तथा सनातनी दोनों सवर्ण हिन्दुओंके कर्त्तव्यकी अपनी-अपनी व्याख्याएँ समान शास्त्रोंके आधारपर करते हैं। निस्सन्देह, उनकी

१. इस विशाल सभामें करूर नगरपालिका तथा जनताकी ओरसे मानपत्र भेंट किये गये थे।

२. २३-२-१९३४ के **हरिजन**में छपे गांधीजी के यात्रा-कार्यक्रमसे।

व्याख्याएँ भिन्न-भिन्न हैं। समाजका हित इसीमें है कि दोनों पक्ष शिष्टता, विनम्रता तथा ईमानदारीके साथ अपनी-अपनी व्याख्याएँ जनताके सामने रखें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-२-१९३४

१५६. भाषण: सार्वजनिक सभा, इरोडमें[१]

११ फरवरी, १९३४

गांधीजी ने मानपत्रों तथा थैलियोंके लिए उन्हें धन्यवाद देते हुए कहा कि आप लोग आजकी शाम मुझसे देरतक बोलनेकी अपेक्षा तो नहीं ही करेंगे, क्योंकि आप जानते हैं कि आज बहुत सुबह ही मैं त्रिचिनापल्लीसे रवाना हुआ था और अभी मोटरमें बैठकर यहाँसे ४२ मील और आगे जाना है, जहाँ मैं रातमें ठहरूँगा। मुझे इस बातकी खुशी है कि आपने मुझे सभी मानपत्रोंके बारेमें ऐसा मान लेनेकी इजाजत दी कि वे पढ़े जा चुके हैं, क्योंकि मुझे उन सबकी प्रतियाँ तो पहले ही दे दी गई थीं। स्थानीय नगर परिषद् द्वारा किये गये हरिजन-कार्यकी जानकारी प्राप्त करके मुझे खुशी हुई, लेकिन मैं कहूँगा कि जितना काम पहले किया जा चुका है, उतनेसे ही आप सन्तुष्ट न हो जायें, बल्कि जबतक अस्पश्यता आपके हृदयोंसे समूल न मिट जाये तबतक आप काम करते रहें। ईश्वरकी नजरमें मनुष्य-मनुष्यमें कोई अन्तर नहीं है और ऐसा कोई अन्तर मानना पाप है। हिन्दू-धर्म खतरेमें है और अस्पृश्यता-निवारण इस खतरेको निश्चय ही टाल देगा। मैं जानता हूँ कि सनातनी लोग मुझसे सहमत नहीं हैं, लेकिन अगर उन्होंने हरिजन-आन्दोलन, उसके सिद्धान्तों और कार्यको ठीक-ठीक समझा होता तो उन्हें मेरे खिलाफ कोई शिकायत न होती। इस दौरेमें जहाँ-कहीं सम्भव होता है, सनातनियोंसे मिलकर मैं उनका हृदय-परिवर्तन करनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १३-२-१९३४

१. इस सभामें लगभग दस हजार लोग उपस्थित थे। नागरिक अभिनन्दनके अतिरिक्त कई अन्य संस्थाओंने भी थैलियोंके साथ मानपत्र भेंट किये। सभाके अन्तमें मानपत्रोंको नीलाम कर दिया गया और बिहारके भूकम्प-पीड़ितोंके लिए चन्दा किया गया।

१५७. भाषण : सार्वजनिक सभा, तिरुचेनगोडुमें[1]

११ फरवरी, १९३४

मित्रो,

इन मानपत्रों और थैलियोंके लिए मैं आपका आभारी हूँ। काफी रात बीत चुकी है, इसलिए आप मुझसे लम्बे भाषणकी अपेक्षा तो नहीं ही करेंगे। मुझे यह भी स्वीकार करना चाहिए कि मैं काफी थक गया हूँ; और न शायद यही जरूरी है कि आपसे मैं बहुत-सी बातें कहूँ। आप मेरे सन्देशके आशयसे परिचित हैं और वह सिर्फ चन्द वाक्योंका ही है। अब यह बहुत जरूरी हो गया है कि हम अपना हृदय-परिवर्तन करें और अस्पृश्यताकी भावनासे छुटकारा पायें। और इसका मतलब यह है कि हम ऊँच-नीचके सारे भेद-भावोंको मिटा दें। हम सब एक ही परमपिताकी सन्तान हैं और [यदि अस्पृश्यता उसकी कृति है तो कहना होगा कि] वह अपनी सृष्टिके साथ इससे ज्यादा बुरा कुछ नहीं कर सकता था। माता-पिताकी हैसियतसे आपको भी तो इस बातका अनुभव है कि आप अपने बच्चोंके बीच कोई भेद नहीं करते। इसीलिए मैं हमेशा कहता रहा हूँ कि हमारे बीच अस्पृश्यता का होना एक बहुत बड़ा पाप है। यह कोई ईश्वरीय विधान नहीं है। यह मनुष्यकी बनाई हुई चीज है और अगर हिन्दू-धर्म तथा हिन्दू-जातिको जीवित रहना है तो इस प्रथाको समाप्त करना होगा। सवर्ण हिन्दुओंको ईश्वरसे यह प्रार्थना करनी चाहिए कि अस्पृश्यताका यह अभिशाप उनके हृदयोंसे दूर हो। तो हम एक स्वरसे कहें कि जिन सुविधाओं और अधिकारोंका उपभोग सवर्ण हिन्दू करते हैं, उनके उपभोगका अधिकार हरिजनोंको भी है।

आशा है, आपने बिहारके पीड़ित जनोंको नहीं भुलाया होगा। यद्यपि अब काफी देर हो गई है, फिर भी मैं बिहारके लिए चन्दा उगाहनेके लिए कुछ मिनट सहर्ष दूँगा। और जबकि स्वयंसेवक लोग पैसे इकट्ठे करेंगे, मैं इन मानपत्रोंको नीलाम करना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १३-२-१९३४

१. इस सभामें लगभग ५,००० लोग उपस्थित थे। सभाके अन्तमें मानपत्र नीलाम किये गये और बिहारके भूकम्प-पीड़ितोंके लिए चन्दा इकट्ठा किया गया।

१५८. पत्र : अमतुस्सलामको

[११ फरवरी, १९३४ या उसके पश्चात्][1]

प्यारी बेटी,

तुम नासमझ हो। किसने कहा कि मैं तुमसे नाखुश हूँ? क्या तुम नहीं देख रही हो कि मैंने अपनेको तुम्हारे सामने हाजिर कर रखा है? मैं तुम्हारे पास दो बार गया किन्तु तुम सोई हुई थीं। मैं तुम्हारे पास ज्यादा इसलिए नहीं आता क्योंकि मैं बहुत व्यस्त रहता हूँ। लेकिन यहाँसे मैं हर चीजका खयाल रख रहा हूँ। मगर तुम नासमझ, जिद्दी और तुनकमिजाज हो। न तो आज और न कल ही मौन रखना है। तुम्हें खुशी-खुशी आज्ञाका पालन करना सीखना चाहिए। तुम्हारी शान्ति हठपूर्वक मौन रखने या कुछ और करनेमें नहीं, बल्कि आज्ञापालनमें निहित है। अनुशासन और आस्थाका यही मतलब है।

क्या तुम समझ गई?

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२)से। **बापूके पत्र-८ : बीबी अमतुस्सलामके नाम,** पृ० ४४से भी।

१५९. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१२ फरवरी, १९३४

भाई घनश्यामदास,

मिस लेस्टरसे मैंने मिदनापुरकी बात की और कहा गवर्नरसे मिले। उसने गवर्नरको खत लिखा और गवर्नरने तार भेजा। अब वह जा रही है। मैंने जो खत उसको दिया है उसे पढ़ो। मैंने उनसे कहा कि तुमसे मिले और सब जान लेवे। सब हाल बतलाइये। आवश्यकता समझ जाये तो डाक्टर विधानसे और सतीश बाबूसे भी मिला दे। शुक्रको वहांसे मेरे पास चली आयेगी। उसको खर्चके लिए यहांसे पैसे दिये हैं। टिकट यहींसे कटवा दी है। उसका खर्च तुम्हारेसे लूं? जमनालालसे तो है ही। क्या उचित है, वह नहीं जानता हूं।

पत्र बहुत जल्दीसे लिखा है। तुम्हारे पत्र मिले हैं उसका उत्तर दूंगा। समय ही नहीं मिलता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९४५) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१. अमतुस्सलामके अनुसार गांधीजी ने यह पत्र राजाजी के आश्रममें, जहा वे बीमार पड़ी हुई थीं, पहुँचनेपर लिखा था। गांधीजी उस आश्रममें ११ फरवरीकी शामको पहुँचे थे।

१६०. भाषण : सार्वजनिक सभा, पुदुपालयम्‌में

१२ फरवरी, १९३४

मित्रो,

आप जानते हैं कि स्थिति यह है कि यहाँ मैं वास्तवमें गाँव नहीं, बल्कि आश्रम[1] देखने आया हूँ। यदि पुदुपालयम्‌में यह आश्रम न होता तो मेरा यहाँ आना बहुत ही असम्भाव्य था। इसका मतलब यह नहीं कि मैं सभी सवर्ण हिन्दुओंसे जैसा हृदय-परिवर्तन करनेको कह रहा हूँ, वैसा यहाँ नहीं चाहता। इसका मतलब इतना ही है कि मैं यहाँ यह देखने आया हूँ कि आश्रम आपकी क्या सेवा करता रहा है। सच तो यह है कि जब आपके यहाँ यह आश्रम है ही तो मेरा यहाँ आना अनावश्यक होना चाहिए। अगर मुझे यह पता चले कि यद्यपि यह आश्रम यहाँ वर्षोंसे है तथापि अभीतक आपने अस्पृश्यताके दोषसे मुक्ति नहीं पाई है तो मैं लगभग हताश हो जाऊँगा। सच तो यह है कि पुदुपालयम्-जैसे स्थानोंको इस बातको परखनेकी सही कसौटी होना चाहिए कि अस्पृश्यताके प्रश्नपर सवर्ण हिन्दुओंका मानस हमारे इस आन्दोलनसे कितना प्रभावित हुआ है। कारण, आपके बीच ऐसे जनसेवकोंका एक दल काम कर रहा है, जिन्होंने अपने जीवनसे अस्पृश्यताके कलंकको एकबारगी ही मिटा दिया है। वे हरिजनोंको अपने सगे भाई-बहन माननेको प्रतिज्ञा-बद्ध हैं। निश्चय ही मैं तो यही मानना चाहूँगा कि आप भी हरिजनोंके साथ वैसा ही व्यवहार कर रहे हैं। लेकिन मैं जानता हूँ कि आज आपकी स्थिति ऐसी नहीं है। यद्यपि आपने इस दिशामें काफी प्रगति की है, फिर भी आपके मनमें अस्पृश्यताको बिलकुल मिटा देनेकी आवश्यकताके बारेमें शंका है। ऊँच-नीचका भेद-भाव आपके मनको अब भी रुचता है। आप, कमसे-कम आपमें से कुछ लोग, अब भी यह मानते हैं कि अगर हरिजनोंको वह स्थिति प्राप्त हो गई जिसके वे हकदार हैं तो आज वे आपकी जो सेवा कर रहे हैं, वह सेवा फिर नहीं करेंगे। मैं मानता हूँ कि ऐसा सोचना गलत है। लोगोंको सिर्फ इसलिए दलित करके रखना पाप है कि यदि उन्हें मुक्त कर दिया गया तो वे शायद हमारी वह सेवा न करें जो अबतक करते रहे हैं।

अपने मानव-बन्धुओंसे जबरदस्ती कोई सेवा करानेका हमें कोई अधिकार नहीं है। इसलिए मैं यही आशा कर सकता हूँ और ईश्वरसे यही प्रार्थना कर सकता हूँ कि आपमें अब भी अस्पृश्यताकी जितनी भावना शेष रह गई है उससे आप छुटकारा पा लेंगे। आप सच मानिए कि अस्पृश्यता कोई दैवी विधान नहीं है,

१. यह आश्रम चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने १९२६ में ग्रामवासियोंके बीच रचनात्मक कार्य करनेके लिए प्रारम्भ किया था। इसके द्वारा हाथमें लिये गये कार्योंमें से एक अस्पृश्यता-निवारण भी था।

बल्कि यह तो सरासर पाप है। आपने मुझे जो थैली भेंट की है उसकी आशा मैंने नहीं की थी। आपकी थैलीको मैं खासी बड़ी थैली मानता हूँ। मुझे विश्वास है कि आपने बिहार प्रान्तका नाम सुना होगा और उस भूकम्पके बारेमें भी सुना होगा जिसने उसके अनेक सुन्दर और समृद्ध नगरोंको मटियामेट कर दिया है।

मुझे मालूम है कि आपने इस थैलीकी पूरी राशि अभी यहीं इकट्ठी की है और वह बिलकुल सहज उत्साहसे दी गई भेंट है। इसलिए मैं यह तो नहीं कह सकता कि आप बिहारके लिए अभी यहीं चन्दा दीजिए; लेकिन मैं चाहूँगा कि आप अपने बिहारवासी देशभाइयोंके दुःखको समझें और जितना पैसा इकट्ठा कर सकें, इकट्ठा करके राजेन्द्रबाबूको भेज दें। आपको मालूम होना चाहिए कि उस भूकम्पमें लगभग २५,००० लोग अपने प्राण गँवा बैठे हैं और आज इससे बहुत अधिक लोग बेघरबार हो गये हैं। उनके पास तन ढकनेको कपड़े नहीं हैं और उन्हें कृपा करके मुट्ठी-भर जो-कुछ दे दिया जाता है, उसीपर वे गुजारा करते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १४-२-१९३४

१६१. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

पुदुपालयम्
१३ फरवरी, १९३४

बा,

आज हम राजाजी के आश्रममें हैं। लगभग २५० व्यक्तियोंने यहाँके भोजनालयमें भोजन किया होगा। इतने ही लोग कल यहाँ सोये थे। उनमें मथुरादास भी था। 'हरिजन' शास्त्री और उनकी पत्नी भी आई हैं। वालजीभाई भी हैं। उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं कहा जा सकता। तेरा पत्र मिल गया है। तुझे तिरुपुरवाले आसरभाईकी याद है न? वे और उनकी पत्नी पद्मावती जेलसे छूटनेके बाद बीमार पड़ गये थे किन्तु अब तो ठीक हैं। बालका लम्बा पत्र आज ही मिला है। वह और रावजीभाई एक साथ काम करते हैं और भण्डारका काम सँभालते हैं। सोमण और पारनेरकर पटनामें हैं। मगनभाई पत्रिकाओंका काम देखते हैं। भणसाली थानाके पास एक गाँवमें गुफामें रहते हैं। उन्होंने अपने ओठ सिलवा लिये हैं किन्तु मुँहमें एक नली चली जाये, इतनी गुंजाइश रखी है। पानीमें आटा घोलकर नली द्वारा पीते हैं। और कुछ नहीं खाते। वल्कलकी लँगोटी पहनते हैं। छगनलाल जोशीका पत्र मिला है। वह आनन्दपूर्वक है। अब उसे खानेमें दूध आदि मिलता है, अतः उसका स्वास्थ्य ठीक रहता है। खूब पढ़ता है। प्यारेलालका पत्र आया है, जिसमें उसने 'गीता'के अध्ययनका विवरण दिया है। उसका स्वास्थ्य ठीक ही कहा जायेगा। गंगाबहन वर्धासे फिर बोरीवली लौट आई है। वहाँसे वह आश्रम जायेगी।

देवदासका पत्र आया है, वह आनन्दपूर्वक है। अमतुस्सलाम मेरे सामने खटियापर पड़ी है, उसे बुखार आता है। आज अच्छी है, ठीक होनेपर साबरमती चली जायेगी। कृष्णाकुमारी काशीमें अपने काकाके यहाँ बीमार पड़ी है। वेलावहनकी तीमारदारी हो रही है। मैंने माधवदासको पत्र लिखा है। किन्तु उत्तर नहीं मिला है। उत्तर मिलनेपर तुझे खबर दूँगा। तेरे पत्रकी नकल मैं रामदास, देवदास आदिको भेज रहा हूँ।

सभी बहनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आज मैं प्रवचन छोड़ देता हूँ। यदि मैं किसी बार प्रवचन न भेज पाऊँ तो तुझे कोई आपत्ति तो नहीं होगी? मेरे पास समय बिलकुल नहीं है इसलिए अच्छा नहीं लिख सकूँगा। मैं तुझे पूनियाँ भेज दूँगा।

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० १३-४

१६२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

पुदुपालयम्
१३ फरवरी, १९३४

भाई वल्लभभाई,

यह राजाका आश्रम है। मंगलवारकी सुबह है। इसमें लगभग ५० आदमी होंगे, परन्तु वे सबको निभा लेते हैं। मौसम ऐसा है कि अड़चन नहीं मालूम होती।

म्यूरियल लेस्टर और उसकी सहेली कोयम्बटूरसे साथ हो गई हैं। वे कल बंगालके गवर्नरसे मिलने गई हैं। इसमें प्रेरणा मेरी थी। बातचीतका विषय केवल मिदनापुर होगा। मैं यह नहीं मानता कि इससे कोई नतीजा निकलेगा, परन्तु इतना करना हमारा कर्त्तव्य था। वे बहनें रविवारको लौटेंगी।

अमतुस्सलाम खटियापर पड़ी है। मेरे सामने ही लेटी है। उसका हृदय सोना और शरीर पीतल है।

कविवर द्वारा लिखा आक्रमणात्मक लेख[1] तो तुमने देखा ही होगा। उसका उत्तर[2] 'हरिजन' की मारफत दे रहा हूँ। उन्होंने बादमें सुधार तो किया ही है। वे उत्तेजित होकर लिख डालते हैं और फिर उसे सुधारते हैं। ऐसा ही हर बार होता है।

भणसालीने आपना मुँह सिलवा लिया है। पानीमें आटा घोलकर नली द्वारा चूसता है। कहता है कि एक दर्जीसे ओठ सिलवा लिये थे। यह भी लिखता है

१. देखिए परिशिष्ट १।
२. देखिए "अंधविश्वास बनाम श्रद्धा", पृ० १७७-७९।

कि उसका मन बहुत शान्त है। उसका लँगोटी या कफनी पहनने का विचार है। वह काठियावाड़ में थानके पास है।

छगनलाल [जोशी] का एक सुन्दर पत्र आया है। उसने अच्छा अध्ययन किया है। उसकी मानसिक स्थिति भी अच्छी है। स्वास्थ्य ठीक है। लगता है कि दूध वगैरह भी ठीक मिलते रहते हैं। उसके छूटनेका समय निकट आता जा रहा है।

मैंने अमलाको साबरमती जाने दिया है। अभी तो वह खुश है।

वालजी यहाँ आ गये हैं। उनका स्वास्थ्य ठीक ही है। स्वामीके मित्र हिम्मतलाल खीरा आये हैं। उनकी तबीयत अच्छी नहीं हो पाई है। इसलिए ऐसा नहीं लगता कि वे यहाँ रह सकेंगे। मथुरादास थोड़े दिनके लिए आया है। कोई खास बात नहीं है।

राजेन्द्रबाबूकी तरफसे मुझे बुलावा आया है। इसलिए कहीं-न-कहींसे अधूरा काम छोड़कर जाना पड़ेगा। मैंने तार दिया है। उनके तारकी बाट देख रहा हूँ। मैंने सूचित किया है कि २४ तारीखसे पहले तो हरगिज रवाना नहीं हो सकता।

बा का पत्र साथमें है।

देवदास दिल्लीमें सानन्द है। पृथुराजका काम ठीक चल रहा है। उसका काम सन्तोषजनक है।

लक्ष्मीदास तो अब पटना चले गये होंगे। औरोंको भेजनेका अभी इरादा नहीं है।

अभी-अभी बाल का पत्र मिला। आश्रमकी टोली काममें जुट गई है। ऐसा लगता है कि उक्त टोली अपनेको उपयोगी सिद्ध कर रही है। बाल और रावजीभाई दोनों स्टोर सँभालते हैं। पारनेकर और सोमण[1] पटनामें हैं। मगनभाई[2] प्रकाशन-विभागमें हैं।

बा के पत्रकी नकल इसके साथ है।

आज इतनेसे ही सन्तोष करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

भड़ौंचसे कुसुमका पत्र आया है। वह अपने भाईके कारण आफ्रिका हो आई। उसके नाम प्यारेलालका लम्बा पत्र आया है। परन्तु उसमें जो जानकारी दी गई है वह सब मेरे ही लिए है। इसमें उसने 'गीता' इत्यादि और अपने अध्ययनकी बातें लिखी हैं। जरूरी बात तो भूला ही जा रहा था। अभी सरकारी जवाब आया है कि मणि और महादेवसे मिलना नहीं हो सकता।

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ७६-८

१. रामचन्द्र जे० सोमण।

२. मगनभाई प्रभुदास देसाई, **हरिजनबन्धुके** संयुक्त सम्पादक।

१६३. भाषण: सार्वजनिक सभा, नामक्कलमें[1]

१४ फरवरी, १९३४

मित्रो,

आप मुझे एक ऐसे स्थानमें ले आये हैं जो भारतके सबसे सुरम्य स्थानोंमें से है। ऐसी सभाओंके आयोजनके लिए यह एक आदर्श स्थान है। आपने मुझे अनेक मानपत्र और थैलियाँ भेंट की हैं तथा और भी बहुत-से उपहार दिये हैं। जो आन्दोलन चल रहा है वह धार्मिक आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है। इसके माध्यमसे हमें उन हरिजनोंको समानताका दर्जा दिलानेकी कोशिश करनी चाहिए जिन्हें सवर्ण हिन्दुओंने सदियोंसे दलित करके रखा है। आपके द्रव्य-दानको मैं इस बातका प्रतीक मानता हूँ कि आप इस आन्दोलनका पूरे मनसे समर्थन करते हैं। ताल्लुका बोर्डके मानपत्रसे ज्ञात होता है कि आपसे जैसे भी बनता है, आप हरिजन-कार्यमें सहायता देनेकी कोशिश कर रहे हैं। लेकिन मैं आशा करता हूँ कि जबतक हरिजनोंको पूरी तरहसे सवर्ण हिन्दुओंकी बराबरीका दर्जा, जिसका उल्लेख मैंने अभी किया है, नहीं मिल जाता तबतक आप अपनी कोशिशें बन्द नहीं करेंगे। यहाँ हरिजनोंकी ओरसे भी एक मानपत्र दिया गया है। उन्होंने बताया है कि लोकोपकारी जनोंसे इकट्ठा किये गये सार्वजनिक चन्देसे उन्होंने एक मन्दिर बनवाया है। लेकिन स्पष्ट ही अभी वह पूरा नहीं हो पाया है और उसके लिए उन्हें आर्थिक सहायताकी आवश्यकता है। आशा है, यहाँके नेता इस बातपर गौर करेंगे और जो जरूरी होगा, करेंगे। हरिजन लोग चाहते हैं कि मैं 'चेरियों' और मन्दिरके स्थलको जाकर देखूँ। वहाँ जाने और उन्हें देखनेमें मुझे बड़ी खुशी होती। लेकिन अब यह सम्भव नहीं है, क्योंकि मेरे सामने आजके लिए अभी बहुत लम्बा-चौड़ा कार्यक्रम पड़ा हुआ है। अब मुझे आपके द्वारा दिये गये इन मानपत्रों और अन्य चीजोंको निबटाना चाहिए।

देखता हूँ, अबतक आपने बिहारके पीड़ित जनोंके लिए कोई चन्दा नहीं किया है। इसलिए मैं चाहूँगा कि स्वयंसेवक लोगोंके बीच जाकर जितना पैसा उगाह सकें, उगाहें। मैं मानता हूँ, आप इस बातको जानते हैं कि वहाँ २५,००० लोग क्षण-भरमें धरतीमाता के ग्रास बन गये। और जबकि यहाँ हम कमोबेश चैनसे जी रहे हैं, बिहारमें हमारे हजारों देशभाई ठंडसे काँप रहे हैं और वे बेघरबार हो गये हैं। इसलिए मैं चाहूँगा कि आप बिहार सहायता-कोषके लिए दिल खोलकर दान दें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-२-१९३४

१. सभा सुबह ७-५० पर हुई थी और उसमें १५ हजारसे अधिक लोग उपस्थित थे। गांधीजी को ताल्लुका बोर्ड, स्थानीय हरिजनों तथा अन्य लोगोंकी ओरसे मानपत्र भेंट किये गये थे।

१६४. भाषण: सार्वजनिक सभा, सलेममें[1]

१४ फरवरी, १९३४

आजका व्यस्ततापूर्ण कार्यक्रम निबटानेमें मुझे बहुत अधिक श्रम पड़ा है, और अब आपने मेरे सामने बहुत लम्बी कार्य-सूची रख दी है, जिससे फुरसत पाकर बोलनेके लिए समय ही नहीं रह जायेगा। मुझे तंजौरके लिए शामको ७-२० की गाड़ी पकड़नी है, इसलिए मैं यह काम जल्दी निबटा देना चाहता हूँ। इसके सिवा अब अपने दौरेके उद्देश्यके बारेमें आपसे कुछ कहना आवश्यक भी नहीं है। एक वाक्यमें मैं यह कहूँगा कि सभी जातियोंको समान अधिकार होने चाहिए। जब हम यह अनुभव करते हैं कि हम सब एक ही ईश्वरकी सन्तान हैं तो हमारे बीच अस्पृश्यता हो ही नहीं सकती। हम सब हरिजन हैं। मुझे तो ऐसा भी लगता है कि ईश्वरके निकट सवर्ण हिन्दुओंका कोई स्थान नहीं है, क्योंकि हमने हरिजनोंके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं किया है। यदि हमें ईश्वरकी कृपा प्राप्त करनी है तो हमें हरिजनोंको ऊपर उठाना होगा। उन्हें वही सुविधाएँ मिलनी चाहिए जिनका उपभोग सवर्ण हिन्दू करते हैं। इस भारी भीड़के कारण मैं और आगे नहीं बोल सकता। मैं आपको बिहार प्रान्तका और भूकम्पके कारण वहाँकी जनताके कष्टोंका स्मरण दिलाना चाहूँगा। अगर आप उसके बारेमें बोलनेका मौका देंगे तो मैं बोलूँगा। अगर आपने अपने बिहारवासी भाइयोंकी मदद अबतक नहीं की है तो मैं चाहूँगा कि अब कीजिए। अब आप मुझे बोलने नहीं दे रहे हैं।[2] अब मैं इन चीजोंको नीलाम करके कार्यक्रम समाप्त करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-२-१९३४

१. इस सभामें ५०,००० से अधिक लोग एकत्र थे। गांधीजी को बारह मानपत्र और इतनी ही थैलियाँ भेंट की गई थीं। इसके अलावा सोने और चाँदीकी भी बहुत-सी चीजें भेंट-स्वरूप दी गई थीं।

२. श्रोतागण बहुत शोर मचाने लगे थे।

१६५. पत्र : हीरालाल शर्माको

१५ फरवरी, १९३४

भाई शर्मा,

तुमारा तार मिला था। चलती ट्रेनसे यह लिख रहा हूँ।

वर्धा जानेमें कोई दिक्कत अबी नहिं है।

अमतुलसलाम ठीक बीमार हो गई है। मैं उनको सोमवारके रोज मिलुंगा। तब अच्छी नहिं होगी तो वर्धा जाने के पहले तुम मद्रास आ सकोगे क्या? अगर आ सके तो मुझे तार दीजीये। मैं ऐसे तकलीफ नहिं दूंगा। तुमारे पर उनका विश्वास आश्चर्यजनक है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्षमें प्रकाशित पत्रकी प्रतिकृति से, पृ० ५४-५

१६६. पत्र : अमतुस्सलामको

१५ फरवरी, १९३४

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारी सेहत अब तो अच्छी होगी। डॉक्टर शर्माको मैंने खत भेजा है। मद्रासमें मिले तब बिलकुल अच्छी हो जाने की मैं उम्मीद करता हूँ।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २९३) से।

१६७. पत्र : जीवणजी डा० देसाईको

नेगापट्टम्
[१५][1] फरवरी, १९३४

भाई जीवणजी,

तुम्हारा पत्र मिला था। चन्द्रशंकरके पत्रसे तुम्हें यह तो पता चल ही गया होगा कि मुझे अनुमति नहीं मिली।[2] मैं बेलगाँवमें बहुत करके ५-६ को रहूँगा, उस समय यदि तुम और दुर्गा मिल सको तो अच्छा हो। भले ही महादेवसे तुम पहले मिल लेना। महादेवके पत्रके उत्तरमें मैं कुछ लिखना तो अवश्य चाहता हूँ किन्तु अब तो हम मिलेंगे ही इसलिए कुछ नहीं लिख रहा हूँ। मेरी कुशलताका समाचार दे देना। मैं उससे मिल नहीं सकता, इसकी वह तनिक भी चिन्ता न करे। उससे गिरधारीका हालचाल पूछना। मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा है। राजा मेरे साथ है। किन्तु यह निश्चित नहीं है कि वह कबतक रहेगा। मैं जिस समय बिहार जाना चाहता था, कदाचित् उससे पहले ही चला जाऊँ। इस बारेमें २० तारीखको और अधिक मालूम हो सकेगा। महादेव किसी बातकी कदापि चिन्ता न करे।

साथके कागज-पत्र काकासाहबको दे देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९३८) से। सी० डब्ल्यू० ६९१३ से भी; सौजन्य : जीवणजी डा० देसाई

१६८. भाषण : सार्वजनिक सभा, तंजौरमें[3]

१५ फरवरी, १९३४

पता नहीं, आप इस दृश्यका आनन्द ले रहे हैं या नहीं, लेकिन मैं तो यह कहूँगा कि इस समय मेरे सामने जो दृश्य उपस्थित है, वह बड़ा भव्य है। मेरा मतलब चारों ओर एकत्र लोगोंकी भीड़से नहीं, बल्कि उगते सूर्यसे है। अपना सन्देश सुनानेके लिए मैं प्रातःकालसे अधिक शुभ घड़ीकी कल्पना नहीं कर सकता। कैसे

१. गांधीजी १५ फरवरीको नेगापट्टम् में थे।

२. बेलगाँव जेलमें मणिबहन पटेल और महादेव देसाईसे मिलनेकी अनुमति; देखिए "तार : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको", पृ० ११२।

३. इस भाषणका सारांश २३-२-१९३४ के **हरिजन**में 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) शीर्षकके अन्तर्गत छपा था।

बताऊँ, मेरी यह इच्छा कितनी तीव्र है कि मेरा सन्देश सीधे आपके हृदयमें प्रवेश कर जाये और आपको भी इस बातके लिए मेरी ही तरह पश्चात्ताप होने लगे कि हमने और हमारे पूर्वजोंने हिन्दू-समाजके एक बहुत बड़े भागको दलित करके रखा और सो भी धर्मके नामपर। एक नहीं, अनेक बार मुझसे कहा गया है कि यदि मैं हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके अधिकारकी माँग छोड़ दूँ तो अस्पृश्यताके सन्दर्भमें सुधारके और जितने भी क्षेत्र हैं, सबमें हमारे सनातनी भाई हमारे साथ होंगे। उन्हें क्या पता कि ऐसा कहकर वे मुझसे उसी शक्तिका त्याग करनेको कह रहे हैं जिसकी बदौलत मैं खड़ा हूँ।

मैंने तंजौरके मन्दिरकी ओर देखा और फिर मन्दिरके पाससे गुजरनेके कुछ ही सेकेंड या मिनट बाद मैंने क्षितिजपर सूर्यको उदित होते हुए देखा। मेरे मनमें यह सवाल उठा कि सूर्य क्या केवल सवर्ण हिन्दुओंके लिए ही अथवा हरिजनोंके लिए भी उदित हो रहा है। तत्क्षण मेरे मनसे मुझे उत्तर मिला कि वह तो सर्वथा निष्पक्ष है और शायद सवर्ण हिन्दुओंकी अपेक्षा हरिजनोंका ही खयाल करके उसे उदित होना पड़ता है, क्योंकि धनधान्यसे सवर्ण हिन्दुओंने तो अपने-आपको महलोंमें इस तरह बन्द कर रखा है कि उन महलोंमें उगते सूर्यकी किरणोंका प्रवेश भी नहीं हो पाता। और बेचारे हरिजन! सूर्योदयके बाद वे सो नहीं सकते; बल्कि इसके विपरीत श्रमिक होनेके नाते उन्हें सूर्योदयसे पहले ही जागना पड़ता है। और इसलिए जब हममें से बहुत-से लोग अपने पलँगों और गद्दोंपर सोये पड़े रहते हैं, हरिजन लोग सूर्यस्नान करते हैं। यदि ईश्वर-निर्मित उस [आकाश] मन्दिरके द्वार सारे संसारके लिए खुल जाते हैं तो मनुष्यके बनाये मन्दिरके द्वार हरिजनोंके लिए कुछ कम क्यों खुलने चाहिए? जो लोग इन मन्दिरोंमें जानेके अभ्यस्त हैं या जिन्हें मन्दिरोंमें विश्वास है उनकी स्वेच्छासे दी गई सहमतिके बिना इनमें से एकका भी द्वार हरिजनोंके लिए नहीं खोला जायेगा। जब मन्दिर-प्रवेशका सवाल सर्वथा स्वेच्छापर निर्भर है तब सनातनियों या अन्य लोगोंको इस विषयमें मेरी मान्यताको लेकर परेशानी क्यों होनी चाहिए? लेकिन मुझे दुःख इस बातका है कि जिन अन्य अनेक बातोंमें सनातनी हमसे सम्पूर्ण सहमति प्रकट करते हैं, मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नकी आड़ लेकर वे उनके सम्बन्धमें भी कुछ नहीं कर रहे हैं। वे अन्य सभी बातोंमें हरिजनोंके साथ पूर्ण समाधानका तो व्यवहार करें। तब माना जायेगा कि उन्होंने अपनी भारी भूलका कुछ हदतक निराकरण किया है। तो मैं अपनी बात अब यहीं खत्म करता हूँ। मैं तो यही आशा रख सकता हूँ और प्रभुसे यही प्रार्थना कर सकता हूँ कि आप सब इस सीधे-सरल सत्यको समझेंगे और आपमें तदनुसार आचरण करनेकी पर्याप्त शक्ति होगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-२-१९३४

१६९. भाषण : सार्वजनिक सभा, कुम्भकोणम्‌में[1]

१५ फरवरी, १९३४[2]

आपने मुझे अपने यहाँ आमन्त्रित करके और यह मानपत्र देकर मेरा जो सम्मान किया है उसकी मैं दिलसे कद्र करता हूँ। इसकी कद्र मैं इस कारण और अधिक करता हूँ कि आपने अपना विचार साफ-साफ और साहसपूर्ण ढंगसे व्यक्त किया है। मुझे कहना पड़ेगा कि आपने जो एक बात कही है वही मेरे लिए अपना यह कार्य जारी रखनेका पर्याप्त कारण प्रस्तुत करती है। आपने कहा है कि मुझे प्रबल लोकमत तैयार करनेपर ही अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। हरिजनोंके साथ न्याय किये जानेके पक्षमें लोकमत तैयार करनेके अलावा मैं वास्तवमें कुछ कर भी नहीं रहा हूँ। मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नपर जो मतभेद है, उससे मैं अवगत हूँ। सनातनियोंसे मेरा सिर्फ इसी बातपर मतभेद है। जहाँतक मेरा या हरिजन सेवक संघके केन्द्रीय बोर्डका बस चल सकता है, हरिजनोंको मन्दिरों में प्रवेश दिलाने के लिए जोर-जबरदस्ती-जैसा कुछ नहीं किया जायेगा। मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न ऐसा है जिसे केवल सवर्ण हिन्दुओंको ही हल करना है। यदि सवर्ण हिन्दू सामुदायिक रूपसे यह कहते हैं कि हरिजनोंको मन्दिरोंमें प्रवेश नहीं करने दिया जायेगा तो मैं कहूँगा कि यह बात दुर्भाग्यपूर्ण होगी, यह समयके प्रवाहके विरुद्ध चलना होगा; किन्तु जबतक उनका ऐसा मत रहेगा, कोई भी हरिजन मन्दिरोंमें प्रवेश नहीं करेगा। मेरा कर्त्तव्य तो सिर्फ उस दिशामें लोकमत तैयार करनेतक ही सीमित है। जहाँ मुझसे यह कहा जाता है कि इस विषयमें मुझे दबी जबानसे भी कुछ नहीं कहना चाहिए, वहीं मेरा रास्ता औरोंसे अलग हो जाता है। यह नहीं हो सकता कि मैं ऐसा-कुछ कहूँ ही नहीं। कारण, अपने धर्मसे सच्चा प्रेम रखनेवाले व्यक्तिके नाते मुझे यही कहना ठीक लगता है कि जबतक सवर्ण हिन्दुओंने हरिजनोंका मन्दिर-प्रवेश निषिद्ध कर रखा है तबतक वे अपने एक प्रारम्भिक कर्त्तव्यमें चूक रहे हैं। मनमें कोई पूर्वग्रह रखे बिना जिस-किसीने हिन्दू-शास्त्रोंका अध्ययन किया है, उसका विचार इससे भिन्न हो, यह मैं असम्भव मानता हूँ। जब बहुत बड़ा बहुमत किसी मन्दिरमें हरिजनोंके प्रवेशके पक्षमें हो तब तो उसके द्वार उन लोगोंके लिए खोल देना ही उचित होगा। मैंने जहाँ-कहीं भी जाकर हरिजनोंको मन्दिरोंमें प्रवेश दिलाया है, हजारों सवर्ण हिन्दुओंकी

१. यह सभा नगर परिषद्के सभाकक्षमें आयोजित की गई थी। भाषणका यह पाठ १६-२-१९३४ के **हिन्दू**में प्रकाशित पाठसे मिला लिया गया है।

२. **हरिजन**में तिथि १६ फरवरी दी गई है, जो स्पष्ट ही भूल है। गांधीजी कुंभकोणम्‌में १५ फरवरीको थे।

उपस्थितिमें उनकी सहमतिसे ही दिलाया है, ऐसा तभी किया है जब मन्दिरसे सबसे अधिक सरोकार रखनेवाले उन हजारों सवर्ण हिन्दुओंने कहा है : "हम चाहते हैं कि मन्दिर हरिजनोंके लिए खोल दिया जाये।"

लेकिन यदि आप कहें कि जबतक ऐसा कहनेवाला एक भी सवर्ण हिन्दू है कि 'नहीं, मन्दिर हरिजनोंके लिए नहीं खोला जाना चाहिए' तबतक किसी भी मन्दिर का द्वार उनके लिए न खोला जाये तो इसे मैं सरासर दबाव डालनेकी कार्यवाही मानूँगा। अगर कोई यह कहता है कि '९९९९की नहीं, बल्कि एक मेरी ही बात चलनी चाहिए', तो इसे मैं बल-प्रयोग कहूँगा। और कहनेकी जरूरत नहीं कि बहुमतसे तात्पर्य धर्म-निन्दकोंके बहुमतसे नहीं, बल्कि उन हिन्दुओंके बहुमतसे है जिनका मन्दिरोंमें विश्वास है।[1] इसलिए मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें सवर्ण हिन्दुओंके प्रबल बहुमतके बिना यह बात असम्भव है। लेकिन जहाँ ऐसा बहुमत है, वहाँ भी मैं शेष लोगोंको अपने दृष्टिकोणसे सहमत करानेका प्रयत्न नहीं छोड़ूँगा। मेरा यह सुचिन्तित विचार है कि मन्दिर-प्रवेशके निमित्त सवर्ण हिन्दुओंके लिए जो नियम बने हुए हैं, उनका पालन करनेवाले हरिजनोंको मन्दिरमें जानेसे रोकना बहुत अपमानजनक बात है। न्यायका तकाजा है कि आपको यह तरीका नहीं अपनाना चाहिए। इतने वर्षोंमें मैं हिन्दू-धर्मका जो अध्ययन कर पाया हूँ, उसके अनुसार मैं यह कहता हूँ कि हिन्दू-धर्ममें हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशसे रोकने का कोई विधान नहीं है। फिर भी, आपने जिस प्रकार स्पष्ट रूपसे अपना विचार व्यक्त किया है, उसकी मैं दिलसे कद्र करता हूँ। मैं इस बातको ठीक नहीं मानता कि चूँकि किसी व्यक्तिमें कोई खूबी है या उसके मनमें अपने स्वीकृत ध्येयके प्रति उत्साह है, इसीलिए कोई उसके विचारको स्वीकार कर ले। इसलिए मैं आपकी रायकी और ज्यादा कद्र करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-२-१९३४ और **हिन्दू**, १६-२-१९३४

१७०. भाषण : सार्वजनिक सभा, कुम्भकोणम्‌में[2]

१५ फरवरी, १९३४

आपके भेंट किये मानपत्रोंके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। एक मानपत्रमें, जिसे स्वागत-समितिकी ओरसे भेंट किया गया बताया गया है, मुझसे कोरंतुकरुप्पुमें हरिजनोंकी एक दिवा-पाठशालाका उद्‌घाटन करनेको कहा गया है, किन्तु खेद है कि मैं वैसा नहीं कर सकूँगा। मेरे पास वहाँ जानेका समय नहीं है। इसलिए मेरे सहयोगियों-

१. आगेका अंश १६-२-१९३४ के **हिन्दू**से लिया गया है।

२. **हिन्दू**के अनुसार गांधीजीको स्वागत-समिति और स्थानीय हरिजन सेवा संगमकी ओरसे दो मानपत्र और थैलियाँ भेंट की गई थीं। इस भाषणको १६-२-१९३४ के **हिन्दू**में छपी रिपोर्टसे मिला लिया गया है।

को जो काम खुद करना चाहिए, उसका भार उन्हें मुझपर नहीं डालना चाहिए। वे चाहें तो मुझे 'चेरियों' में ले जाकर, उन्होंने जो काम वहाँ किया हो, दिखायें। चेरियों को साफ रखना और स्कूल खोलना तथा उनका संचालन करना उन लोगोंका कर्त्तव्य है। मुझे तूफानी गतिसे और भारतके कोन-कोनेका दौरा करना है। इसलिए मुझे अपने समय और अपनी शक्तिको, मैं जिस मुख्य उद्देश्यसे निकला हूँ, उसीके लिए सुरक्षित रखना चाहिए। और इसलिए जब मुझे प्रेषकके नाम-पतेके बिना इस आशयका तार मिला कि जिन लोगोंको इस समारोहके आयोजनका कार्य सौंपा गया है उनका स्वागत मुझे स्वीकार नहीं करना चाहिए तो मुझे बहुत दुःख हुआ।[1]

वैसे तो मैं एक पक्का कांग्रेसी हूँ, किन्तु इस हरिजन-सेवाके सिलसिलेमें मेरे लिए न कोई कांग्रेसी है और न गैर-कांग्रेसी। और अगर कोई गैर-कांग्रेसी व्यक्ति भी हरिजनोंसे प्रेम रखता है, अपने धर्मसे प्रेम रखता है और उसमें काम करनेकी क्षमता है तो उसके अधीन काम करना और उससे दिशा-निर्देश प्राप्त करना कांग्रेसियोंका कर्त्तव्य है। यदि कांग्रेसी लोग हरिजन-सेवाका क्षेत्र केवल अपने लिए ही सुरक्षित रखेंगे तो यह बात आसानीसे देखी जा सकती है कि हिन्दू-धर्म अपने-आपको अस्पृश्यताके कलंकसे मुक्त नहीं कर पायेगा, क्योंकि अपनेको कांग्रेसी न माननेवाले हजारों लोग उस सेवा-क्षेत्रसे बाहर ही रह जायेंगे। इसलिए जो लोग हृदयसे इस कार्यकी सफलता चाहते हैं उन्हें यह याद रखना चाहिए कि इस अत्यन्त धार्मिक आन्दोलनमें, आत्म-शुद्धिके इस आन्दोलनमें किसी प्रकारके भेद-भावकी गुंजाइश नहीं है। इस आन्दोलनके पीछे कोई भी राजनीतिक मतलब नहीं है, और इस बातको साबित करनेका सबसे अच्छा तरीका यह है कि हम अपनी शक्ति सुरक्षित रखें और जो लोग हिन्दू-धर्मको अस्पृश्यताके पापसे मुक्त करना आवश्यक समझते हैं उन सबको एक ही मंचपर इकट्ठा करें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-२-१९३४ और **हिन्दू**, १६-२-१९३४

१७१. भाषण: सार्वजनिक सभा, नेगापटम्‌में[2]

१५ फरवरी, १९३४

आपने तो मुझे मानपत्र लगे इन फ्रेमोंसे लाद दिया है। मैं बार-बार निवेदन करता रहा हूँ कि मानपत्र न दिये जायें, ये फ्रेम न दिये जायें। मैं हँस रहा हूँ, लेकिन महत्त्वकी बात तो हँसीके पीछे अन्तर्हित मेरी यह सच्ची मान्यता है कि विशुद्ध रूपसे आत्म-शुद्धिके ऐसे आन्दोलनमें ये मानपत्र और फ्रेम बिलकुल अनावश्यक हैं।

१. इससे आगेका अंश २३-२-१९३४ के **हरिजन**से लिया गया है।

२. गांधीजी शामके साढ़े सात बजे नेगापटम् पहुँचे थे। नगरपालिका, चरखा संघ, हरिजन सेवा संगम और नेगापटम् ताल्लुका बोर्डने उन्हें मानपत्र और थैलियाँ भेंट की थीं। अन्तमें बिहारके भूकम्प-पीड़ित लोगोंके लिए चन्दा इकट्ठा किया गया था।

लेकिन चूँकि आप लोग इतने-सारे मानपत्र भेंट करनेका आग्रह रखेंगे ही तो मैं भी उनको नीलाम करके उनसे हरिजनोंका कार्य साधनेका प्रयत्न करूँगा। और जो लोग ऐसे मानपत्र देना चाहें, उन्हें हरिजन-सेवाको भी अपनानेका खयाल रखना चाहिए और मैं चाहता हूँ कि जो लोग इस सत्कार्यके निमित्त पैसा देते या श्रम करते हैं या खुद उसमें लग जाते हैं वे मेरी तरह यह विश्वास करें कि वे न केवल अपनी शुद्धि कर रहे हैं, बल्कि अपनी शुद्धिके द्वारा पूरे भारतको ऊपर उठा रहे हैं; क्योंकि यद्यपि देखने में ऐसा लगता है कि मेरा यह सन्देश हिन्दुओंके लिए, तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंके लिए ही है, किन्तु मैं यह कहनेकी धृष्टता करूँगा कि वास्तवमें यह सन्देश समस्त मानव-जातिके लिए है। यदि मैं केवल सवर्ण हिन्दुओंको अस्पृश्यताका यह अभिशाप मिटा डालनेके लिए राजी कर सका तो मेरा खयाल है, यह कहा जा सकेगा कि हिन्दू-जातिने उस भ्रातृत्वकी भावनाको ठोस रूप देनेकी दिशामें एक बड़ा कदम उठाया है जिसके लिए सारा विश्व जाने-अनजाने लालायित है। आप मेरी इस बातको सच मानिए कि आज हम जैसी अस्पृश्यता बरतते हैं उसका शास्त्रोंमें कहीं भी समर्थन नहीं किया गया है और मैं शास्त्रोंका अध्ययन करनेकी इच्छा रखनेवाले सभी लोगोंको उनका अर्थ लगानेके सम्बन्धमें एक सुनहला नियम सुझाना चाहता हूँ। अगर आप शास्त्रोंमें से यहाँ-वहाँसे एक-दो अंश ले लें तो उनके आधारपर आप चाहे जो सिद्ध कर सकते हैं। इसलिए अपने-आपको इस मृत्यु-पाशमें फँसनेसे बचानेके लिए यह जरूरी है कि हम शास्त्रोंके रुझानको समझें और मैं साहसपूर्वक कहता हूँ कि शास्त्रोंका रुझान मनुष्य-मनुष्यके बीच भेदकी दीवार खड़ी करनेकी ओर नहीं बल्कि मानव-मात्रके भ्रातृत्वकी ओर ही पाया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-२-१९३४

१७२. अन्धविश्वास बनाम श्रद्धा

शान्तिनिकेतनके महाकवि जिस प्रकार उस महान् आश्रमके अन्तेवासियोंके लिए गुरुदेव हैं, उसी प्रकार मेरे लिए भी हैं। मैं और मेरे साथी जब दक्षिण आफ्रिकामें अपना स्वेच्छा-स्वीकृत, सुदीर्घ निर्वासन पूरा करके स्वदेश वापस आये थे तब हमें वहीं आश्रय मिला था। किन्तु गुरुदेवको और मुझे प्रारम्भमें ही पता चल गया कि हमारी दृष्टियोंमें कुछ भेद है। लेकिन भेदके कारण हमारे पारस्परिक स्नेहमें कोई अन्तर नहीं आया है, और मेरे इस मन्तव्यपर कि बिहारके संकटका सम्बन्ध अस्पृश्यताके पापसे है, गुरुदेवने अभी-अभी जो-कुछ कहा है, उससे भी हमारे इस पारस्परिक स्नेहमें कोई अन्तर नहीं आ सकता। उन्हें लगा कि मैं गलतीपर हूँ तो उनका विरोध करना बिलकुल ठीक था। उनके प्रति मेरे मनमें जो अगाध सम्मान है, उसके कारण यह स्वाभाविक है कि मैं अन्य आलोचकोंकी अपेक्षा उनकी आलोचनाकी

ओर ज्यादा तत्परतापूर्वक ध्यान दूँगा। किन्तु उनके वक्तव्यको तीन बार पढ़ जानेके बावजूद मैं इन स्तम्भोंमें लिखी अपनी बातोंपर कायम हूँ।

जब तिन्नवल्लीमें मैंने पहले-पहल इस दुर्घटनाका सम्बन्ध अस्पृश्यतासे[1] बताया था, उस समय मैंने यह बात बहुत सोच-समझकर और हृदयकी सच्ची प्रेरणाके अनुसार ही कही थी। मैं वही बोला था जो विश्वास करता था। मैं बहुत दिनोंसे ऐसा मानता आ रहा हूँ कि भौतिक व्यापारोंके भौतिक और आध्यात्मिक दोनों तरहके परिणाम निकलते हैं। इसके विलोमको भी मैं उतना ही सच मानता हूँ।

मेरे लिए यह भूकम्प ईश्वरकी किसी सनकका नतीजा नहीं था और न किन्हीं जड़ शक्तियोंके टकरावका परिणाम था। न तो हम ईश्वरके सभी नियम जानते हैं और न उनकी कार्य-प्रणाली ही। बड़ेसे-बड़े वैज्ञानिक या दार्शनिकका ज्ञान भी धूलके कण-जितना ही है। ईश्वर मेरे लिए अपने लौकिक पिताके समान कोई पार्थिव पुरुष नहीं है, लेकिन वह उससे अनन्त गुना बढ़कर अवश्य है। मेरे जीवनकी छोटीसे-छोटी बातोंमें भी वह मेरा नियामक है। इस बातपर मैं अक्षरशः विश्वास करता हूँ कि उसकी इच्छाके बिना पत्ता भी नहीं हिलता। मेरी हर साँस उसीकी कृपापर निर्भर है।

ईश्वर और उसका विधान एक ही है। यह विधान ही ईश्वर है। उसमें आरोपित कोई गुण मात्र गुण ही नहीं है। ईश्वर स्वयं गुण-रूप है। वह सत्य है, प्रेम है, ऋत है, और मानव-मस्तिष्क उसके लिए अन्य जितने भी नामोंकी कल्पना कर सकता है, ईश्वर वह सब-कुछ है। गुरुदेवकी तरह मैं भी यह मानता हूँ कि "अटल विधानको कोई बदल नहीं सकता। वह जिस रीतिसे काम करता है उसमें स्वयं ईश्वर भी कभी हस्तक्षेप नहीं करता।" कारण, ईश्वर और उसका विधान एक ही है। किन्तु मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि उस नियमको या उन नियमोंको हम पूरी तरहसे नहीं जानते, और जो चीज हमें विपत्ति-सी लगती है वह वैसी इसीलिए लगती है कि हम विश्व-नियमोंको भली-भाँति नहीं जानते।

यद्यपि जान यही पड़ता है कि अनावृष्टि, बाढ़, भूकम्प आदि प्राकृतिक प्रकोपोंके कारण भौतिक ही होते हैं, किन्तु मेरे लिए उनका कोई-न-कोई सम्बन्ध मनुष्यके नैतिक पक्षसे भी है। इसलिए मुझे सहज ही ऐसा अनुभव हुआ कि यह भूकम्प अस्पृश्यताके पापका ईश्वरीय दण्ड है। बेशक, सनातनियोंको भी यह कहनेका पूरा अधिकार है कि यह अस्पृश्यताके विरुद्ध मेरे प्रचार करनेके अपराधका दण्ड था। मेरा यह विश्वास मुझे पश्चात्ताप और आत्म-शुद्धिका आमन्त्रण देता है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि प्रकृतिके नियम किस प्रकार काम करते हैं, इसका मुझे कोई ज्ञान नहीं है, लेकिन जिस प्रकार शंकालु लोगोंके सामने ईश्वरका अस्तित्व सिद्ध करनेमें असमर्थ होनेके बावजूद मैं उसमें विश्वास किये बिना नहीं रह सकता, उसी प्रकार यद्यपि मैं अस्पृश्यता तथा बिहारपर आई प्राकृतिक विपत्तिके पारस्परिक सम्बन्धका अनुभव

१. देखिए "भाषण : तिन्नवल्लीकी सार्वजनिक सभामें," २४-१-१९३४।

बरबस कर रहा हूँ, किन्तु उस सम्बन्धको मैं किसीके सामने सिद्ध नहीं कर सकता। यदि मेरा विश्वास निराधार साबित होता है तब भी उससे मेरा और मेरी तरह विश्वास रखनेवाले दूसरे लोगोंका हित ही होगा। कारण, उस हालतमें, बेशक यह मानते हुए कि अस्पृश्यता एक महापाप है, हम आत्म-शुद्धिके लिए ज्यादा जोरदार प्रयत्न करनेमें प्रवृत्त हो चुके होंगे। इस प्रकारके अनुमानमें जो खतरा निहित है, उससे मैं भली-भाँति अवगत हूँ। किन्तु, जब मेरे अपने ही प्रिय लोग कष्टमें पड़े हुए हों तब यदि मैं उपहासके भयसे अपने विश्वासकी स्पष्ट घोषणा करनेसे मुँह मोड़ लूँ तो मेरा यह आचरण असत्यमय और कायरतापूर्ण होगा। भूकम्पके भौतिक प्रभावको लोग शीघ्र ही भुला देंगे और किसी हदतक उस प्रभावका परिमार्जन भी हो जायेगा। किन्तु, यदि यह वास्तवमें अस्पृश्यताके पापके प्रति दैवी प्रकोप ही हो और उससे नैतिक शिक्षा ग्रहण करके हमने अपने पापका प्रायश्चित्त न किया तो यह बहुत भयंकर बात होगी। मैं गुरुदेवकी तरह यह नहीं मानता कि "हमारे अपने पाप और भूलें चाहे जितनी बड़ी हों, उनमें इतनी शक्ति नहीं है कि वे सृष्टिके ढाँचेको नष्ट-भ्रष्ट कर दें।" इसके विपरीत, मेरा विश्वास यह है कि हमारे पापोंमें उस ढाँचेको नष्ट कर देनेकी इतनी शक्ति है जितनी किसी निरे प्राकृतिक व्यापारमें नहीं है। जड़ तत्त्व और आत्मामें एक अटूट सम्बन्ध है। उस सम्बन्धके परिणाम हम नहीं जानते और हमारे इस अज्ञानके कारण वह एक महान् रहस्य बनकर रह जाता है और उसके प्रति हममें भयमिश्रित श्रद्धाकी भावना उत्पन्न होती है। किन्तु, इस अज्ञानके कारण वह सम्बन्ध नहीं रह जाता, ऐसी बात नहीं है। इसके विपरीत उस सम्बन्धको स्वीकार करके तदनुरूप आचरण करनेवाले बहुत-से लोगोंने प्रत्येक प्राकृतिक संकटका उपयोग अपने नैतिक अभ्युत्थानके लिए किया है।

ब्रह्माण्डमें हो रही प्राकृतिक घटनाओं और मानवीय व्यवहारके पारस्परिक सम्बन्धमें मेरा जीवन्त विश्वास है और उस विश्वासके कारण मैं ईश्वरके अधिकाधिक निकट आता गया हूँ, मुझमें विनम्रता आई है और मैं अपनेको ईश्वरके सम्मुख उपस्थित करनेके लिए अधिकाधिक तैयार होता गया हूँ। यदि मैं अपने घोर अज्ञानके कारण उस विश्वासका उपयोग अपने विरोधियोंकी निन्दा करनेके लिए करूँ तो निश्चय ही ऐसा विश्वास पतनकारी अन्धविश्वास बन जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-२-१९३४

१७३. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

कडलूर
१६ फरवरी, १९३४

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र मिले। मैं यह पत्र पाण्डीचेरीके पास स्थित कडलूरमें प्रातः-कालकी प्रार्थनाके पहले लिख रहा हूँ। सोराबजी से जो व्यक्तिगत बैर है, यदि तुम उसे रोक सको तो रोकना। तुम इस बातकी चिन्ता मत करना कि उन्होंने विज्ञापन वापस ले लिया। किन्तु आपसमें कड़वाहट न बढ़े तो अच्छा हो। इस सम्बन्धमें अव मेरे पास पत्र आने शुरू हो गये हैं। भवानीदयालने तो तुम्हारे विरुद्ध खुली चिट्ठी प्रकाशित की है। 'टाइम्स' [ऑफ इंडिया] में एक पत्र इसके विरोधमें भी प्रकाशित हुआ है। यदि हाथ लग गई तो उसकी कतरन इसके साथ रखवा दूँगा। जो खबरें यहाँ पहुँच रही हैं वही मैं लिख रहा हूँ। इनमें कोई तथ्य है या नहीं है, यह तो तुम दोनों जानो। बहुत-कुछ तो स्वार्थके कारण भी लिखा जा रहा होगा। मेरे पास जो खबरें आती हैं उन्हें मैं तुम्हें भेज रहा हूँ। इनका असर बिहारके लिए चन्दा उगाहनेपर भी पड़ता होगा। आजकल 'इं० ओ०' के कितने ग्राहक हैं?

देवदास और लक्ष्मी दिल्लीमें हैं। २५० रुपये वेतनपर उसकी नियुक्ति हुई है। अब राजाजी मेरे साथ हैं। मेरा स्वास्थ्य ठीक चल रहा है। बा के कुछ पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ।

मैंने महादेव और मणिसे मिलनेकी अनुमति माँगी थी, किन्तु मिली नहीं। मुझे क्योंकि बेलगाँव जाना था इसलिए मैंने अनुमति माँगी थी।

किशोरलाल देवलाली गये हैं। वे स्वस्थ हैं। जो आश्रमवासी जेलसे छूट चुके हैं, उनमें से अधिकांश बिहार गये हैं। आखिरकार काकासाहबको अब जेलकी सजा होगी। वे लोग उन्हें बार-बार पकड़कर छोड़ देते थे। इस बार उन्हें पकड़ लिया गया है और वे छोड़ेंगे नहीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१५) से।

१७४. भाषण: सार्वजनिक सभा, कराइकलमें[1]

१६ फरवरी, १९३४

इस दौरेमें मेरे लिए बड़े हर्षका विषय यह है कि मैंने दूसरी बार फ्रांसीसी प्रदेशमें प्रवेश किया है। भारतमें फ्रांसीसी प्रदेशमें पहले-पहल प्रवेश करनेका शुभ अवसर मुझे माही, मलाबारमें मिला था। वहाँके अधिकारियों और आम लोगों, दोनोंसे मिलकर मुझे बड़ी खुशी हुई थी। सो आज यह देखकर मुझे आश्चर्य नहीं होता कि आपने यह थैली मुझे भेंट की है। कहा जा सकता है कि संसारको ये तीन महत्त्वपूर्ण शब्द — "स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व" — पहले-पहल फ्रांसने ही दिये। लेकिन इन तीनों चीजोंपर अमल करना सबके बसकी बात नहीं है और मुझे इस बातपर बहुत लज्जाका अनुभव हो रहा है कि इस मानीमें सबसे बड़े अपराधी हिन्दू ही रहे हैं। अस्पृश्यताके इस पापके समर्थनमें ईश्वरके नामकी दुहाई देना उन्हींके भाग्यमें लिखा हुआ था। लेकिन, किसी सामान्य व्यक्तिके लिए जहाँतक सम्भव है, वर्षोंतक हिन्दू-शास्त्रोंका अध्ययन करनेके बाद मैं इस निश्चित निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि हिन्दू-शास्त्रोंमें अस्पृश्यताका समर्थन कहीं नहीं किया गया है। इतिहासकारोंने प्रमाणपूर्वक यह सिद्ध किया है कि मानव-बुद्धिके उदय-कालसे ही मानव-जातिको इस सत्यका ज्ञान रहा है कि ईश्वर एक है; और ईश्वरकी एकताके आधारपर ही जीव-मात्रकी एकताकी शिक्षा विश्व-विदित प्राचीनतम ऋचाओंमें-ऋग्वेदमें — दी गई है। उनमें पहले-पहल यह शिक्षा दी गई है कि ईश्वर एक है और वही सब-कुछ है; जीवनकी सृष्टि उसीने की और उसका उद्भव उसीसे हुआ था। आज हम जो अस्पृश्यता बरतते हैं वह उस परम सत्यको अस्वीकार करना है। इसलिए आज यहाँ इतने सारे स्त्री-पुरुषोंको देखकर मुझे बड़ी खुशी हो रही है और उन्होंने जो थैली तथा भेंटें दी हैं वे इस बातके सबूत हैं कि कमसे-कम वे तो अस्पृश्यतामें विश्वास नहीं करते। किन्तु, आप यह तो नहीं ही समझेंगे कि थैलीके लिए चन्दा-भर देकर आपने हरिजन भाइयों और बहनोंके प्रति अपने कर्त्तव्यको पूरा कर दिया। मैं तो अपने मनमें यह सुखद आशा पाल रहा हूँ कि आपका दिया पैसा और आपकी उपस्थिति आपके इस संकल्प का प्रतीक है कि आप हरिजनोंके साथ सगे भाइयों और बहनोंके समान बरताव करेंगे। आशा है, बिहार भूकम्प-सहायता-कोषके लिए आप लोग चन्दा दे चुके होंगे और न दिया होगा तो अब दे देंगे। वह दैवी प्रकोप, जिसने पलक झपकते २५,००० से

१. गांधीजी फ्रांसीसी इलाके कराइकलमें सुबहके पौने नौ बजे पहुँचे। सभा-स्थलपर विशाल जन-समुदाय एकत्र था। जनता और हरिजन सेवा संगमकी ओरसे गांधीजीको मानपत्र भेंट किये गये। इसके अलावा महावाणिज्य-दूतावासके उपाध्यक्ष की ओरसे एक थैली भी उन्हें भेंट की गई थी। सभाके अन्तमें गांधीजी ने भेंटमें मिली वस्तुएँ नीलाम कीं।

अधिक लोगोंकी जीवन-लीला समाप्त कर दी, बहुत ही स्पष्ट रूपसे यह प्रकट करता है कि हम सब एक हैं। तो जिस प्रकार उस भयंकर घड़ीमें मृत्युके जालमें फँसकर वे लोग एक हो गये थे उसी प्रकार हम लोग जीवनमें एक बनकर दिखायें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-२-१९३४

१७५. भाषण : सार्वजनिक सभा, सियालीमें[1]

१६ फरवरी, १९३४

देख रहा हूँ कि श्रोतृ-समुदायके उस छोरपर कुछ लोग काले झंडे दिखला रहे हैं। काले झंडे दिखाते हुए वे लोग जैसा शिष्टतापूर्ण व्यवहार कर रहे हैं उसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ। वे जिस तरह अपनी भावना व्यक्त कर रहे हैं उस तरह उसे व्यक्त करनेका उन्हें पूरा अधिकार है। मैं जानता हूँ कि उनके मनमें कहीं यह शंका छिपी हुई है कि जो पैसा इकट्ठा किया जा रहा है वह उस तरहसे खर्च नहीं किया जायेगा जिस तरहसे खर्च करनेकी घोषणा की गई है। इन काले झंडोंके पीछे जिन लोगोंकी प्रेरणा है वे भी इस भ्रममें पड़े हुए हैं कि मैं तो पूँजीपतियों और धनी-मानी लोगोंके हाथोंकी कठपुतली-मात्र हूँ। मैं उनके हाथोंकी कठपुतली हूँ या नहीं, यह प्रश्न यहाँ प्रासंगिक नहीं है। मैं उनकी कठपुतली हूँ, यह मान्यता ही पर्याप्त है। लेकिन मैं उनको यह भरोसा दिला सकता हूँ कि मैं सिवा सर्वशक्तिमान् ईश्वरके और किसीके हाथोंकी कठपुतली नहीं हूँ।

जैसाकि मैंने कल कहा, अपने-आपको 'सेल्फ-रेस्पेक्टर्स' (आत्म-सम्मानी) कहनेवालोंके और मेरे बीच बहुत-सी बातें एक-जैसी हैं। उनका कहना है कि इस धरतीपर न्यायका पक्ष लेनेवाला कोई ईश्वर नहीं है और इसलिए यदि उन्हें किसी ईश्वरमें विश्वास करना ही है तो वह ईश्वर मानवता ही है। मैं स्वीकार करता हूँ कि मैं इतना अन्धविश्वासी हूँ कि ईश्वरमें विश्वास करता हूँ। लेकिन मैं शब्दोंके प्रयोगको लेकर उनसे झगड़ना नहीं चाहता। अगर उन्हें मानवता शब्दका प्रयोग ज्यादा अच्छा लगता है तो मैं अपने ईश्वरको यही संज्ञा दूँगा। उनका कहना है कि उनका नीति-मन्त्र प्रेम और सहानुभूति है। उनके इस नीति-मन्त्रपर मैंने उन्हें बधाई दी और कहा कि उसे मैं पूरी तरह मान सकता हूँ। इसपर उन्होंने कहा कि वे संसारकी सम्पत्तिका समान वितरण चाहते हैं। एक आदर्शके रूपमें उनके इस सिद्धान्तको स्वीकार करनेमें मुझे कोई कठिनाई नहीं थी। मैंने उनसे नम्रतापूर्वक कहा कि जहाँ आप लोग एक आदर्शकी मात्र चर्चा कर रहे हैं, मैं भारतके धनाढ्य लोगोंको, वे जितना दे सकते हैं, उतनी सम्पत्ति मुझे — चाहे हरिजन-कार्यके लिए हो या बिहारके

१. चन्द्रशंकर शुक्लके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

भूकम्प-पीड़ितोंके लिए या ऐसे ही किसी दीन-हितकारी कार्यके लिए — देनेके लिए उन्हें प्रेमपूर्वक राजी करके उस आदर्शको प्राप्त करनेके लिए प्रयत्नशील हूँ। काले झंडे दिखानेवालों या इन काले झंडोंके पीछे जिनकी प्रेरणा है उन लोगोंको तथा आप श्रोताओंको यह सूचित करते हुए मुझे बड़े हर्षका अनुभव हो रहा है कि काफी अच्छी आर्थिक स्थितिवाले कई हजार स्त्रियों और पुरुषोंने गरीबोंके लिए अपनी सम्पत्ति खुशी-खुशी दी है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-२-१९३४

१७६. भाषण : अन्नामलाई विश्वविद्यालय, चिदम्बरम्में[1]

१६ फरवरी, १९३४[2]

अपने मानपत्रमें आपने मुझे बताया है कि आप एक रात्रि-पाठशाला चलाते हैं और आपमें से कुछ लोग हरिजनोंको शिक्षा देनेमें रुचि ले रहे हैं और उनकी अन्य प्रकारकी सेवा भी कर रहे हैं। जो भी अच्छा और उपयोगी काम शुरू करना हो, पुराने लोगोंकी अपेक्षा नौजवान लोग उसे ज्यादा तत्परता और ज्यादा आसानीसे शुरू कर सकते हैं। मैंने कहा है कि यह आत्म-शुद्धि और [अपने किये अन्यायोंपर] अनुतापका आन्दोलन है। आपको यह बतानेकी जरूरत नहीं है कि अस्पृश्यता हमारे लिए एक विनाशकारी अभिशाप बनकर आई है। और यह सचमुच बड़े दुःखकी बात है कि यह हमारे बीच धर्मके नामपर आई। फिर भी वास्तविकता तो यही है कि अस्पृश्यता हिन्दू-धर्ममें प्रविष्ट हो गई है।[3]

ऐसा कब हुआ, यह मैं नहीं कह सकता। किन्तु, हिन्दू-शास्त्रों या यों कहिए कि जिन ग्रन्थोंको हिन्दू-शास्त्र माना जाता है, उनका अध्ययन मैंने एक ऐसे सामान्य व्यक्तिकी हैसियतसे, जिसको अपना कोई स्वार्थ नहीं साधना है और जिसने मनमें पहलेसे कोई धारणा नहीं बना रखी हैं, अधिकसे-अधिक सावधानीके साथ किया है; और इस अध्ययनके बाद मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि कुल मिलाकर देखें तो शास्त्रोंमें वैसी अस्पृश्यताका कहीं समर्थन नहीं किया गया है जैसी अस्पृश्यता हम आज बरतते हैं। वेदोंमें ऐसे वचन बिलकुल नहीं हैं, लेकिन स्मृतियोंमें ऐसे कुछ अनुच्छेद, सन्दिग्ध प्रामाणिकतावाले अनुच्छेद, अवश्य मिलते हैं जिनकी ऐसी व्याख्या की जा सकती है कि वे अमुक प्रकारकी अस्पृश्यताकी अनुमति देती हैं। किन्तु उन अनुच्छेदोंमें भी ऐसा तो कुछ नहीं है जिससे यह विश्वास उचित माना जा सके कि वर्तमान अस्पृश्यता एक दैवी प्रथा है। उनमें ऐसा कुछ नहीं है जिसके आधारपर

१. **हिन्दू**के विवरणके अनुसार विद्याविद्यालयके उपकुलपतिने गांधीजी की अगवानी की थी। उन्हें एक मानपत्र और एक थैलीके अलावा कुछ और उपहार भी दिये गये थे।

२. **हरिजन**में तिथि १७ फरवरी दी गई है, जो स्पष्ट ही भूल है।

३. इसके पहलेकी पंक्तियाँ **हिन्दू**से ली गई हैं। आगेका अंश **हरिजन**से लिया गया है।

आज अस्पृश्य कहे जानेवाले जन-समाजके बारेमें हम यह कह सकें कि हाँ, उन अनुच्छेदोंमें जिनका उल्लेख अस्पृश्योंके रूपमें हुआ है, वे यही लोग हैं। अस्पृश्यतामें दृढ़ विश्वास रखनेवाले विद्वान् शास्त्रियोंसे भी मैंने बातचीत की है। जब उनसे मैंने कहा है कि जरा मुझे वे अनुच्छेद तो दिखाइए जिनके अनुसार आप आजके हरिजनों को उनमें उल्लिखित अस्पृश्य-जन मानते हैं तो उन्होंने उत्तरमें यह कहा कि वे तो जनगणनाकी रिपोर्टोंपर भरोसा करते हैं। आप जानते हैं कि ये रिपोर्टें कैसे तैयार की जाती हैं। इतिहासका कोई भी अध्येता जनगणना-रिपोर्टोंपर पूरी तरहसे भरोसा करके नहीं चल सकता। कौन अस्पृश्य माने जायें, यह तय करना जनगणना करनेवालों का काम नहीं है। वे तो हमें मोटे तौरपर विभिन्न स्थानोंके निवासियोंकी संख्या-भर बता देते हैं। वे और भी बहुत-से तथ्य और आँकड़े देते हैं, किन्तु उन्हें निर्णीत रूपसे सही नहीं माना जा सकता। अगर आप जनगणनाकी विभिन्न रिपोर्टोंका अध्ययन करें तो आप यह देखकर चकित रह जायेंगे कि जिन लोगोंको एक रिपोर्टमें स्पृश्य बताया गया है उन्हींको दूसरीमें अस्पृश्य बताया गया है और इसी तरह अस्पृश्यको स्पृश्य। क्या आप यह मान सकते हैं कि ऐसे कमजोर सबूतके आधारपर मनुष्यको अपने बुनियादी अधिकारोंसे वंचित कर दिया जाये? यदि हममें मानव-भ्रातृत्वकी भावनाका अभाव न होता तो हम इस चीजको एक क्षणके लिए भी बर्दाश्त न करते। आपमें से प्रत्येक इस समस्याका अध्ययन कर सकता है और उस अध्ययनके बाद अगर आप इस नतीजेपर पहुँचें कि यह हमारे भाइयोंके साथ किया जानेवाला क्रूरतापूर्ण अन्याय है तो आप इस बुराईको मिटाने के लिए अपना पूरा जोर लगा दें। कारण, यदि अस्पृश्यता कायम रहती है तो हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति मिट जायेगी। तो हरिजन-सेवकके लिए कौन-सी योग्यताएँ अपेक्षित हैं? ऐसा चरित्र जिस पर कोई अँगुली न उठा सके, असीम धैर्य और ऐसी आस्था जो बड़ेसे-बड़ा आघात सहकर भी अविचल रहे — ये हैं वे गुण जो हरिजनोंकी सेवा करने के इच्छुक व्यक्तियों के लिए अनिवार्य हैं। यह हमारे प्राचीन धर्मको छिन्न-भिन्न होनेसे बचानेका प्रयत्न है। अगर आप इस काममें लग जायें तो यह आपकी सच्ची शिक्षा होगी। आप पुस्तकें पढ़ सकते हैं, लेकिन उनसे आपको बहुत लाभ होनेवाला नहीं है। सच्ची शिक्षाका उद्देश्य यह है कि आपमें जो अच्छेसे-अच्छे गुण हों वे निखरें। मानवतासे अच्छी पुस्तक और क्या हो सकती है? दिन-रात हरिजन-बस्तियोंमें जा-जाकर, उनके साथ एक ही मानव-परिवारका सदस्य मानकर व्यवहार करनेसे अच्छी शिक्षा और क्या हो सकती है? यह ऐसा अध्ययन होगा जो आपको ऊपर उठायेगा। मेरा धर्म संकुचित नहीं है। मेरे धर्मका उद्देश्य मानव-जातिमें तत्त्वतः जो भ्रातृत्वका सम्बन्ध है उसीको साकार करना है। मेरी समझसे वेदोंका सन्देश यही है कि ईश्वर एक है और जहाँ जो-कुछ भी है उसका आश्रय वही है इसलिए जीव-मात्र एक है। फिर उस एकताकी परिधिसे हरिजन ही कैसे बाहर रखे जा सकते हैं?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-३-१९३४ और **हिन्दू,** १८-२-१९३४

१७७. भाषण : सार्वजनिक सभा, कडलूरमें[1]

१६ फरवरी, १९३४

मुझे दुःख है कि मैं किसी बेहतर समयमें न आकर अभी, जिसे अबेला कहा जा सकता है, आ पाया हूँ। लेकिन, निश्चित तिथिको तमिलनाडुका दौरा पूरा करके और पांडीचेरीके मित्रोंको भी अन्तमें थोड़ा समय दे देनेके खयालसे मैं इसके अलावा और किसी समय आ नहीं सकता था। मुझे भरोसा है कि अपने पड़ोसियोंके लिए इस तरह गुंजाइश निकालनेका आप बुरा नहीं मानेंगे और वास्तवमें जब मुझे आश्वस्त कर दिया गया कि आप इस समय मेरे आनेका बुरा नहीं मानेंगे तभी मैंने कल पांडीचेरी जानेकी सहमति दी। आपकी थैलीके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ, किन्तु आप मुझे यह कहनेकी इजाजत भी दें कि आपने जितना किया, उससे बहुत अधिक कर सकते थे। हरिजन-कार्यसे बढ़कर हमारे लिए और कोई काम नहीं है। हरिजन-कार्यके निमित्त हम पैसा या रुपया जो भी दें वह तो हमपर सदियोंसे जो एक ऋण चढ़ा हुआ है, उसके मात्र कुछ हिस्सेकी ही अदायगी होगी। और इसके सिवा हम यह भी याद रखें कि जबतक हम उनपर थोपी जबरदस्त निर्योग्यता को नहीं हटाते तबतक हम चाहे जितना आर्थिक मुआवजा देते रहें, वह हमारे द्वारा उनके प्रति किये गये और किये जा रहे अन्यायका प्रतिकार नहीं कर सकता। इसलिए हरिजन-कार्यके लिए प्राप्त एक पैसे या रुपयेका मतलब मैं यही लगाता हूँ कि वह दाताके इस संकल्पका प्रतीक है कि उसने अपने हृदयसे ऊँच-नीचकी भावना बिलकुल निकाल दी है। इसलिए, मैं आशा करता हूँ कि इस श्रोतृ-समुदायमें उपस्थित सभी स्त्री-पुरुष अपने आजके जीवन-व्यवहारमें हरिजन भाइयों और बहनोंको यह दिखा रहे हैं कि जहाँतक उनका सम्बन्ध है, हरिजन भाई-बहन हर तरहसे उनके बराबर हैं और किसी भी रूपमें उनसे छोटे नहीं हैं। मुझे उम्मीद है कि आपने बिहारके विस्थापितोंके लिए चन्दा कर लिया है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १८-२-१९३४

१. यह सभा मंजकुप्पम्के मैदानमें काफी रात गये हुई थी। गांधीजी को एक मानपत्र तथा एक थैली भेंट की गई थी।

१७८. अपील : कडलूरके संयोजकों और सहयोगियोंसे

[१६ फरवरी, १९३४][1]

आपको मेरी मर्यादाएँ समझनी चाहिए। मैं जिस उद्देश्यको लेकर निकला हूँ उसे भी समझना चाहिए। मेरी मर्यादाएँ मेरी शारीरिक क्षमता-अक्षमता की हैं। इसके सिवा वे सर्वनियन्ता कालकी भी हैं। हर जगह संयोजकगण मेरे लिए ऐसा कार्यक्रम तैयार करते हैं जिसे दिन-प्रतिदिन पूरा करनेमें मुझे अपनी सारी शक्ति और सारे साधन लगा देने पड़ते हैं। आज मैं मुख्यतः इस उद्देश्यको लेकर निकला हूँ कि सवर्ण हिन्दुओंसे अपील करूँ और सदियोंसे हरिजनोंके साथ वे जो अन्याय करते आये हैं उसके लिए उन्हें पश्चात्ताप करनेको प्रेरित करूँ, यथाशक्ति अधिकसे-अधिक सही और साफ शब्दोंमें उन्हें बताऊँ कि जहाँतक मैंने हिन्दू-शास्त्रोंका अध्ययन किया है, हरिजनोंको भी उन्हीं अधिकारों और सुविधाओंके उपभोगका हक है जिनका उपभोग गैर-हरिजन हिन्दू करते हैं। मैं उन्हें जितना जोर देकर बता सकता हूँ, उतना जोर देकर यह बताना चाहता हूँ कि यदि हरिजनोंके साथ यह बुनियादी न्याय नहीं किया गया तो हिन्दू-धर्म नष्ट हो जायेगा। इसलिए सहयोगियोंको मुझपर ऐसे कार्योंका भार नहीं डालना चाहिए जिन्हें करना खुद उनका मुख्य कर्त्तव्य है। वे चाहें तो जब मेरे पास समय हो, मुझे चेरियाँ दिखाने ले जायें ताकि मैं उनके किये कार्योंकी सराहना कर सकूँ, लेकिन उन्हें साफ करना उनका काम है; वहाँ स्कूल खोलना और चलाना उनका कर्त्तव्य है। दिन-प्रतिदिन हरिजनोंकी कुटियोंमें आशाका सन्देश ले जाना उनका काम है। अभी मैं दूर-दूरके क्षेत्रोंके जिस तूफानी दौरेमें लगा हुआ हूँ उसमें मेरी शक्ति और समयको तो उसी कामके लिए सुरक्षित रखना चाहिए जिस कामके लिए मैं दौरेपर निकला हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-२-१९३४

१. गांधीजी १६ फरवरी, १९३४ को कडलूरमें थे।

१७९. पत्र : गोविन्दभाई रा० पटेलको

१७ फरवरी, १९३४

भाई गोविन्दभाई,

आपका पत्र मिला। मैं आपसे कहाँ मिलूँ? आपकी इच्छा पूर्ण करना मुश्किल है। आप मेरे साथ कारमें बैठ सकें तो मिलना हो सकता है या फिर चन्द्रशंकर पांडीचेरीमें रहते हैं, उनसे कहें। मैं अपनी सामर्थ्य-भर ही प्रयत्न कर सकता हूँ।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०७४३) से; सौजन्य : गोविन्दभाई रामभाई पटेल

१८०. भाषण : सार्वजनिक सभा, पांडीचेरीमें[1]

१७ फरवरी, १९३४

मित्रो,

आपके नगरमें आकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। आप मुझसे लम्बे भाषणकी अपेक्षा न करते होंगे। मेरे सामने बहुत भारी कार्यक्रम पड़ा हुआ है। अस्पृश्यता-विषयक सन्देश ऐसा है जिसे सफल बनाने में सभी लोग हाथ बँटा सकते हैं। सवर्ण हिन्दू-धर्मके नामपर शोषण और दमनको कायम रखे हुए हैं। अस्पृश्यताके अभिशापका निराकरण इस दमन और शोषणके स्थानपर मानव-बन्धुत्वकी स्थापना करनेका एक प्रमुख उपाय है। इस मानव-बन्धुत्वका मतलब क्या है, इसे समझनेमें प्रत्यक्ष फ्रांसीसी प्रभावमें रहनेवाले आप लोगोंको कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। जब लोगोंको इसका बोध होना आरम्भ हुआ कि मानव-बन्धुत्व-जैसी भी कोई चीज है, उससे सैकड़ों वर्ष पूर्व फ्रांसमें समानता और बन्धुत्वका उदय हो चुका था। उन विचारोंको कार्य-रूप देनेके लिए फ्रांस के बहादुरसे-बहादुर व्यक्तियोंने संघर्ष किया और अपना खून बहाया। जिस आकांक्षाके लिए इतने बहादुरोंने लड़ाई की और खून बहाया, वह आकांक्षा निश्चय ही ऐसी है जिसे सारी दुनियाके लोगोंको एक मूल्यवान निधि समझना चाहिए। हमारा वर्तमान प्रयत्न मुख्यतः कठोर हृदयोंको द्रवित करनेका प्रयत्न है और यहाँ उपस्थित लोग यह समझ लें कि देवत्वकी प्राप्ति दमनके द्वारा नहीं, बल्कि अबाध अभिव्यक्तिके द्वारा ही सम्भव है। इसलिए मुझे पूरी आशा है कि

१. उदयांचलई मैदानमें हुई इस सभामें लगभग दस हजार लोग उपस्थित थे। भाषणका एक अंश २-३-१९३४ के **हरिजन**में भी प्रकाशित हुआ था।

आपके यहाँ पांडीचेरीमें किसी प्रकारकी अस्पृश्यता नहीं होगी। और अगर हो तो मैं आशा करता हूँ कि आप उस कलंकको अपने बीचसे मिटा देंगे। आपने बिहारके पीड़ित लोगोंके लिए भी मुझे एक थैली दी है। मेरे विचारसे आपको उन दुःखी जनोंके लिए और अधिक संग्रह करना चाहिए था। आपको मालूम होना चाहिए कि लगभग पचीस हजार लोग पलक झपकते भूगर्भमें विलीन हो गये। दसियों हजार लोग बिलकुल बेघरबार हो गये हैं। बड़े-बड़े महल धूलमें मिल गये हैं। मुझे वास्तवमें ऐसा लगता है कि इस भयंकर विपत्तिको देखते हुए ५७ रु० की यह छोटी-सी रकम कुछ भी नहीं है। इसलिए आपसे मेरा अनुरोध है कि आप एक बार पूरी कोशिश करके बाबू राजेन्द्रप्रसादको एक ऐसी अच्छी रकम भेजिए, जो आपकी गरिमाके अनुकूल हो। और अब मुझे जल्दी ही विदा लेनी चाहिए, सो आपसे अनुरोध है कि आप इन चन्द चीजोंकी नीलामीमें मेरी मदद करें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १८-२-१९३४

१८१. पत्र : प्रभाशंकर हरखचन्द पारेखको

१८ फरवरी, १९३४

भाईश्री प्रभाशंकर,[1]

आपका पत्र मिला। उसके साथ भेजा हुआ पत्र वापस लौटा रहा हूँ। आपकी माताजी का उल्लेख न करनेका सही कारण आपकी समझमें ठीक आया नहीं। मैं आपसे नाराज क्यों होऊँगा? और फिर आपके प्रति अपनी नाराजगीको बीमारपर उतारना तो मेरे स्वभावके विरुद्ध है। आपके साथ मेरा जो सम्बन्ध है उसमें उतार-चढ़ावका प्रश्न ही नहीं उठता। बात यह है कि निजी पत्रोंमें भी मैं छोटों या बड़ोंका औपचारिक रूपसे उल्लेख नहीं करता। आपको मैंने सिर्फ कामके बारेमें पत्र लिखा था और, दूसरे, आपके पत्रमें माताजी आदिका जो उल्लेख होता है वह तो आपका स्वभाव है। अतः इसका क्या उत्तर दिया जाये, यह सोचकर मैंने उनका उल्लेख नहीं किया। यों मैं उनके और बहन (पत्नी) के लिए अच्छे स्वास्थ्यकी ही कामना करता हूँ। इसका उल्लेख-भर करनेसे मेरी शुभकामनाका प्रभाव बढ़ नहीं जायेगा। सम्पूर्ण जगत्‌की स्वास्थ्य-कामना करनेवाले श्लोकका मैं प्रतिदिन हृदयसे गान करता हूँ और पूरी तरह तदनुसार चलनेका सतत प्रयत्न करता रहता हूँ। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि मैं बा या दूर बैठे हुए मणिलालको जो पत्र लिखता हूँ उनमें भी इस तरहका उल्लेख कम ही होता है। अपनी माताजी को यह सब बतायें। मैं नहीं कह सकता कि मेरा राजकोट आना हो सकेगा या नहीं। मुझे बिहार जाना होगा इसलिए शायद वहाँ आनेका समय न मिले।

१. डॉ० प्राणजीवन महेताके पुत्र, रतिलालके ससुर।

हालाँकि आपने भाई भगवानजी का प्रमाणपत्र भेजा है किन्तु मैं अपने निजी अनुभवको किस तरह भूलूँ या बदलूँ? यदि छगनलाल[1] अपना कर्त्तव्य न निभाये तो आपको अपना कर्त्तव्य क्यों नहीं निभाना चाहिए? यदि यह स्पष्ट हो कि डॉक्टरने बहनों (लड़कियों)को उनका हिस्सा देनेकी बात सोची थी तो इतना आपके लिए काफी है। बहनोंको उनका हिस्सा देनेसे रतिलालका कोई नुकसान नहीं होगा। वह स्वयं अपने मामलोंकी देख-भाल करने में असमर्थ है। मैं ऐसा मानता हूँ कि उसके संरक्षकके नाते आपको उस-जैसे असमर्थ व्यक्तिका पैसा बरबाद करनेमें कभी हिस्सा नहीं लेना चाहिए। इस मामलेमें मैं रतिलालसे कुछ कहना नहीं चाहता; क्योंकि वह विचार करनेमें असमर्थ है। चम्पा[2] तो स्वभावतः आपके ही प्रभावमें होगी। अतः पूरी जवाबदारी आपपर ही है और उसका आप सदुपयोग नहीं करते, यह मुझे साफ नजर आ रहा है। ऐसी स्थितिमें भाई भगवानजी या अन्य अनेक लोगोंके प्रमाणपत्र भी आप मुझे भेजें तो वे किस कामके? मणिबहन[3] पैसेवाली हैं — वे अपना हिस्सा छोड़ सकती हैं और जेकीबहन[4] मनसे बिलकुल ही दीन हो गई है। मुझे इसमें न्याय दिखाई नहीं देता कि रतिलालकी ओरसे उसकी सगी बहनोंका हिस्सा न दिया जाये, अतः मैं लाचार हूँ।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[पुनश्च :]

भाई भगवानजी का पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७६७) से।

१८२. भाषण : सार्वजनिक सभा, वेल्लूरमें[5]

१८ फरवरी, १९३४

मित्रो,

समय बहुत कम है और आपने मुझे बहुत-से काम सौंप दिये हैं। इसलिए मैं चाहूँगा कि आप इस कार्यवाहीको थोड़ेमें निबटाने में मेरी सहायता करें। आपसे मैं दो बातें कहना चाहता हूँ। नगर-परिषद् तथा जिला बोर्डके मानपत्रोंके लिए उनका और सदस्यों द्वारा भेंट की गई थैलियोंके लिए उन सदस्योंका भी मैं हृदयसे आभारी हूँ, लेकिन इन दोनों संस्थाओंके माध्यमसे मैं दूसरी संस्थाओंसे एक प्रार्थना करना

१. डॉ० प्राणजीवन मेहताके ज्येष्ठ पुत्र।

२. रतिलालकी पत्नी।

३ और ४. डॉ० प्राणजीवन मेहताकी लड़कियाँ।

५. गांधी मैदानमें हुई इस सभामें लोग खासी बड़ी संख्यामें एकत्र हुए थे। गांधीजी ने अंग्रेजीमें भाषण दिया और उसका तमिल-अनुवाद डॉ० राजन्ने किया था।

चाहता हूँ कि फिलहाल वे मेरी शक्ति और समयको बचाने में सहयोग करें, क्योंकि इन दिनों मैं तूफानी दौरेपर हूँ। मेरा समय वे इस तरह बचा सकती हैं कि जो भी संस्थाएँ मानपत्र देना चाहें, एक ही मंचपर दें। अधिकांश संस्थाओंने तो मिले-जुले मंचपर ही मानपत्र भेंट करनेकी कृपा और उदारता दिखाई है। स्थानीय संस्थाओंकी इस स्वाभाविक इच्छाको कि वे अपने मानपत्र अपने-अपने कार्यालयोंमें ही भेंट करें, मैं समझता हूँ, बल्कि उसको ठीक भी मानता हूँ। किन्तु जब उनका सरोकार अपने जीवनके प्रत्येक क्षणका उपयोग राष्ट्र-सेवामें करनेके लिए प्रयत्नशील मुझ-जैसे तुच्छ राष्ट्र-सेवकसे पड़े तो अच्छा हो कि वे मुझे अपने-अपने कार्यालयोंमें ले जानेका असंदिग्ध अधिकार छोड़कर मानपत्र भेंट करनेको इच्छुक अन्य संस्थाओंके साथ मिलकर एक ही स्थानपर मानपत्रादि भेंट करें। इस शोरके बीच[1] मैं उस दूसरी बातका जिक्र नहीं करना चाहता जो कल रात स्टेशनपर घटित हुई थी। जहाँतक मेरे यहाँ आनेके तात्कालिक उद्देश्यका सम्बन्ध है, मैं इन तमाम मानपत्रों, थैलियों और उपहारोंकी दिलसे कद्र करता हूँ। क्योंकि मेरे लिए ये सब हरिजन-कार्यमें सहायता देने और अस्पृश्यताकी बुराईसे छुटकारा पानेकी आपकी इच्छाके प्रतीक हैं। मुझे आशा है कि आप तबतक सन्तोषसे न बैठेंगे जबतक कि अस्पृश्यताका यह रोग हमारे बीचसे समूल नष्ट नहीं हो जाता, क्योंकि इस आन्दोलनके पीछे मानव-बन्धुत्वके स्वप्नको साकार करनेकी इच्छा छिपी हुई है। अब मैं आपसे यह अनुरोध करूँगा कि मोटी-मोटी कीमतें चुकाकर आप ये चीजें मुझसे ले लें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १९-२-१९३४

१८३. भाषण : क्राइस्टकुल आश्रम, तिरुपत्तूरमें[2]

१८ फ़रवरी, १९३४

मित्रो,

यहाँ आकर तो मुझे लगता है जैसे मैं अपने ही एक घरमें आ गया हूँ। यहाँ आनेकी मेरी इच्छा — कह सकता हूँ — कई वर्षोंसे रही है, और जब डॉ० राजन् इस दक्षिणी प्रान्तके दौरेका कार्यक्रम तय कर रहे थे तब मैंने उनसे कहा था कि यदि तनिक भी सम्भव हो तो वे इस आश्रमको कार्यक्रममें अवश्य शामिल कर दें। लेकिन, आज इस सम्बन्धमें मैं ज्यादा नहीं कहना चाहता।

मेरे सभी साथी बिलकुल थके हुए हैं। इसलिए मैं आपको अपने सन्देशका सार ही बताऊँगा, जो इस प्रकार है: अस्पृश्यता हिन्दुओं, सवर्ण हिन्दुओं द्वारा ईश्वर और मनुष्यके प्रति किया गया सबसे बड़ा पाप है, और इस अपराधकी भीषणताको

१. इस बीच श्रोताओंमें कुछ शोर होने लगा था।

२. इस भाषणका संक्षिप्त सार २-३-१९३४ के **हरिजन**में भी प्रकाशित हुआ था।

मैंने इतनी तीव्रतासे अनुभव किया है कि मैंने कई मंचोंसे कहा है कि या तो अस्पृश्यताको मिटना है या फिर हिन्दू-जाति और हिन्दू-धर्म मिट जायेगा। और इससे मेरा क्या तात्पर्य है, यह बताता हूँ। सवर्ण हिन्दू हरिजनोंका स्पर्श करने लगें, इतना ही काफी नहीं है। सिर्फ स्पर्शसे मुझे कोई सन्तोष नहीं मिल सकता। जरूरी यह है कि सवर्ण हिन्दुओंका हृदय बदले और वे आवश्यक रूपसे यह मानने लगें कि किसी भी मनुष्यको अपनेसे नीचा समझनेमें खुद उन्हींकी गरिमाको बट्टा लगता है। और आप आसानीसे समझ सकते हैं कि इस अर्थमें यह आन्दोलन मानव बन्धुत्वको, केवल हिन्दू-धर्मको माननेवालोंके बन्धुत्वको नहीं, बल्कि समस्त मानवोंके बन्धुत्वको — चाहे वे दुनियाके किसी भी हिस्सेके रहनेवाले हों, या किसी भी जातिके हों अथवा किसी भी धर्मको मानते हों — साकार करनेका एक प्रयत्न है। और सवर्ण हिन्दू जिन्हें जन्मतः अस्पृश्य मानते हैं उनके सम्बन्धमें वे अपना हृदय-परिवर्तन करें, यह उस महान् आदर्शको साकार करनेका प्रथम सोपान-मात्र है। इसलिए सभी सवर्ण हिन्दू तो स्वभावतः इस आन्दोलनमें भाग ले सकते हैं। ऐसा करना उनका कर्त्तव्य है। प्रारम्भ उन्हींको करना है। लेकिन, मैंने सारी दुनियाको इस आन्दोलनमें भाग लेनेके लिए आमन्त्रित किया है, और इस आन्दोलनके प्रति सहानुभूति रखकर तथा इसके मर्मको समझनेकी कोशिश करके और ईश्वरसे इसकी सफलताके लिए प्रार्थना करके सारी दुनिया इसमें भाग ले सकती है। हाँ, प्रायश्चित्त और क्षतिपूर्ति तो केवल सवर्ण हिन्दुओंको ही करनी है।

और हरिजनोंका कर्त्तव्य क्या है? चूँकि यह आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है, इसलिए उन्हें भी अपनी भूमिका निभानी है। उनकी भूमिका यह है कि वे अपने गरेबानमें झाँककर देखें और उनमें जो बुराइयाँ हैं, जो बुरी लतें हैं — ऐसी बुरी लतें जिनके लिए, निस्सन्देह, मूलतः वे स्वयं दोषी नहीं हैं — उनसे छुटकारा पायें। उनकी बुरी लतोंके लिए कौन जिम्मेवार था, यह सवाल कोई मतलब नहीं रखता। चाहे जैसे भी हो, इन बुरी लतों या दोषोंसे छुटकारा पाना है। उदाहरणके लिए, उन्हें आरोग्य और शारीरिक सफाईके नियमोंको समझना और उनका पालन करना चाहिए। अगर उन्हें मरे ढोरोंका मांस खानेकी आदत हो तो वह छोड़ देनी चाहिए। सभ्य संसारके किसी भी हिस्सेमें मरे ढोरोंका मांस नहीं खाया जाता, और जहाँतक दुनियाकी अन्य जातियोंके बारेमें मुझे जानकारी है, भारतके बाहर ऐसी बहुत कम जातियाँ हैं जो मरे ढोरोंका मांस खाती हैं। और चूँकि हरिजन अपनेको हिन्दू कहते हैं, इसलिए यदि उन्हें गोमांस खानेकी आदत हो तो वह भी छोड़ देनी चाहिए। भारतमें करोड़ों लोग रहते हैं और जहाँ उन्हें दूध मिलता है, वहाँ उसके लिए गायोंपर ही निर्भर रहना पड़ता है। इसलिए खुद मेरा तो यह विचार है कि भारत-जैसे देशमें सबके लिए गोमांस से परहेज रखना उचित है। तीसरी बात है, मद्यपानका त्याग। मैं जानता हूँ कि बहुत-से हरिजन मद्यपान करते हैं। उनमें से कुछने मुझसे कहा है कि उनसे मद्यपान छोड़नेको तबतक नहीं कहना चाहिए, जबतक सवर्ण हिन्दुओंसे भी ऐसा करनेको नहीं कहा जाता। उनका ऐसा कहना सही है, क्योंकि बहुत सारे सवर्ण

हिन्दू भी मद्यपान करते हैं। लेकिन ऐसा कहनेका तो कोई औचित्य नहीं है कि चूँकि एक आदमी बुरा काम करता है, इसलिए दूसरोंको भी करना चाहिए या दूसरे भी कर सकते हैं। मेरे हजारों पड़ोसी झूठ बोलते हों, इसलिए मुझे भी झूठ क्यों बोलना चाहिए? अगर हजारों लोग आत्महत्या करते हैं तो क्या मुझे भी आत्महत्या कर लेनी चाहिए? और मेरा कहना है कि मद्यपान लगभग आत्महत्याके ही समान है, क्योंकि जो शराब पीकर मदमत्त हो उठता है वह कुछ समयके लिए वास्तवमें अपनी आत्माका हनन ही तो कर डालता है। निश्चय ही आत्माकी मृत्यु शरीरकी मृत्युसे कहीं अधिक बुरी चीज है। तो जिन हरिजनोंको भी मद्यपानकी आदत है, उन सबसे मैं उसे छोड़ देनेको कहता हूँ।

और अन्तमें, मुझे नहीं मालूम कि आपको बिहारके विपद्ग्रस्त लोगोंके बारेमें बताया गया है या नहीं। बिहार वह प्रदेश है जहाँ सीताका जन्म हुआ था। वह भारतके सुरम्यतम प्रदेशोंमें से है। पलक झपकते ही धरतीमाता लगभग बीस हजार लोगोंको लील गई। दसियों हजार लोग बेघरबार हो गये हैं और उनके लिए न केवल सारे भारतमें, बल्कि सारी दुनियामें चन्दा इकट्ठा किया जा रहा है। आप चाहे जितने गरीब हों, मैं चाहता हूँ कि आप अपनी-अपनी सामर्थ्यके मुताबिक बिहारके पीड़ित जनोंके लिए पैसा या रुपया अथवा जो भी दे सकें, दें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-२-१९३४

१८४. तार : जमनालाल बजाजको

मद्रास
१९ फरवरी, १९३४

जमनालालजी
वर्धा

आशा है, तुम बिलकुल स्वस्थ होगे। मेरे बिहार पहुँचनेकी तिथि अनिश्चित है। लेकिन चौदह मार्चसे पहले तो पहुँचनेकी सम्भावना नहीं है।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १२४

१८५. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१९ फरवरी, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारे दो पत्र एक ही दिन मिले। यह जानकर खुशी हुई कि तुम्हें वह जगह और वहाँके लोग अच्छे लगे। तुम्हें व्यवस्थापकसे बातचीत करके जैसी तुम्हें ठीक लगे, वैसी दिनचर्या बनानी चाहिए। लड़कियोंके बारेमें, व्यवस्थापक जैसी सलाह दें, वैसा करना। जब तुम्हारा उनपर अच्छा अधिकार हो जाये तब बड़े परिवर्तन कर सकती हो। जूँओंके लिए तुम बालोंकी जड़ोंमें स्पिरिट मला करो और फिर उन्हें कार्बोलिक साबुनसे धो डालो। इस तरह वे अपने-आप खत्म हो जायेंगी। बालोंको प्रतिदिन साफ कंघीसे झाड़ना चाहिए। लड़कियोंको फिलहाल वही खाना खाने दो जो उनके लिए पकाया जाता है।

प्राकृतिक दृश्यावलियों और इस्लामी वास्तुकलामें तुम्हारे रुचि रखने में कोई हर्ज नहीं हो सकता।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल-पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

१८६. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

मद्रास
सोमवार, १९ फरवरी, १९३४

मैं सब-कुछ समझ गया। तुम अपना प्रयत्न जारी रखना। तात्कालिक सफलता अवश्य मिलेगी। किन्तु मैंने स्वतन्त्र रूपसे जो विचार किया है उसके आधारपर मैं इन निर्णयोंपर पहुँचा हूँ। अधिक अनुभव होनेपर इनमें कुछ हेर-फेर भले करना पड़े, किन्तु फिलहाल तुम इनपर विचार करना।

१. हमें बिना धुली खादी ही बेचनी चाहिए। जो विशेष रूपसे माँग करे उसे धुलवाकर देना एक अलग बात है।

२. अब गाँवोंमें खादीका प्रचार होना ही चाहिए। हमें यह मानकर चलना चाहिए कि शहरका युग अब समाप्त हो गया है।

३. जबतक हम खादीको उसी जगह नहीं बेच पाते जहाँ उसका उत्पादन होता है तबतक हमें यह मानना ही नहीं चाहिए कि खादीका चलन हो गया है।

४. शहरोंपर ही पूरा ध्यान केन्द्रित कर देनेसे खादीको स्थायी बनानेके हमारे प्रयासको गहरा धक्का पहुँचा है।

५. इसके आधारपर इतना तो दिनके प्रकाशकी भाँति स्पष्ट हो जाना चाहिए कि सामान्यत: एक प्रान्तकी खादी दूसरे प्रान्तमें भेजी ही नहीं जानी चाहिए। यदि हम हिन्दुस्तानमें जगह-जगह मैंचेस्टर खड़े करेंगे तो स्वयं अपने हाथों खादीकी हत्या करेंगे।

६. उक्त नियम हमें बिहारपर आजसे ही लागू कर देना चाहिए और यह निर्णय कर लेना चाहिए कि बिहार जितनी खादीका उत्पादन करे वह वहीं खप जाये। ऐसा करनेसे ही निधिका सर्वोत्तम ढंगसे उपयोग किया जा सकेगा।

७. यदि यह विचार-सरणि सही है तो हमें खादीकी मजबूती, समानता और रूप-रंगपर उत्पादनके समयसे ही ज्यादा या पूरी तरह ध्यान देना चाहिए।

इस सबका उपयोग तुम्हें अपने प्रयत्नमें ढिलाई देने में कदापि नहीं करना चाहिए। बिक्री करना तुम्हारा क्षेत्र है और सो भी शहरोंमें। किन्तु यदि मूल उद्देश्य तुम्हारे ध्यानमें हो तो उक्त उद्देश्यके अनुसार अपनी योजना बनाना उचित होगा।

(इसकी एक नकल शंकरलालको भेज देना और उसका अंग्रेजी-अनुवाद करा कर राजाजी को दे देना। अंग्रेजी-अनुवाद वालजीभाईसे करा लेना।)[१]

लक्ष्मी कैसी है? अब भला वह मुझे क्यों लिखेगी?

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९८०८) से।

१८७. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

१९ फरवरी, १९३४

भाई परीक्षितलाल,

रामजी का पत्र इसके साथ है। उससे अत्यन्त विनम्रतापूर्वक और पूर्ण निश्चयसे ही काम लिया जा सकता है। मेरे पत्र पढ़कर उसे दे देना।

यदि अमलाबहनकी ओरसे किसी तरहकी दिक्कत महसूस हो तो मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०२१) से।

१. यह अनुच्छेद स्पष्ट ही ऐसे व्यक्तिके लिए था, जो गांधीजी के पत्र-व्यवहारका काम सँभालता था।

१८८. पत्र : ताराबहन र० मोदीको

१९ फरवरी, १९३४

चि० तारा,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे मनमें यह प्रश्न बहुत बार उठता है कि लोग बार-बार बीमार क्यों पड़ते हैं। अन्तमें मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि यह भी एक प्रकारकी मृत्यु है। मृत्यु प्राकृतिक नियमोंको भंग करनेका परिणाम है और इसलिए वह सुखदायी है। इसी प्रकार बीमारी भी उन नियमोंको भंग करनेका परिणाम है, अतः उसे भी सुखदायी मानना चाहिए। मृत्यु और बीमारी दोनों हमें दुःखदायी मालूम होती हैं; क्योंकि हम उन्हें प्रकृतिकी कृपाके रूपमें नहीं देखते। यदि हम इतना समझ लें तो बीमारीको दूर करनेके हम नाना प्रकारके जो उपाय करते हैं उनसे उबर जायें। इन उपायोंसे बीमारीको दूर करना भले सम्भव हो किन्तु इसके कारण मन कष्टके प्रति अधिक संवेदनशील और निर्बल हो जाता जान पड़ता है। इसका यह अर्थ मत लगाना कि तुम जो उपचार कर रही हो उसे छोड़ देना चाहिए। इसका अर्थ इतना ही है कि तटस्थ भावसे उपचार किया जाये और फिर बीमारी दूर होने या न होनेके बारेमें तटस्थ रहा जाये। मैंने 'गीता' की इस शिक्षाको अलग ढंगसे यहाँ रखनेका प्रयत्न किया है।

ऊपर जो लिखा है उसके अतिरिक्त रमणीकलालको[1] यह लिख देना: तुम्हारा पत्र पढ़ा। तुम अपने समयका सदुपयोग कर रहे हो। यदि तुम समयका सदुपयोग नहीं करोगे तो और कौन करेगा? जब तुम छूटकर आओगे तो तुम्हें बहुत परिवर्तन दिखाई देगा। किन्तु इन परिवर्तनोंके पीछे जो निश्चय था वह तो बना ही हुआ है। यदि हम उसे पहचान लें तो हम सब-कुछ पा गये और न पहचान पाये तो सब-कुछ गँवा देंगे। नाम-रूपका नाश तो अनिवार्य है किन्तु उसके गर्भमें छिपी वस्तुका नाश नहीं होता। यही बात हमारे ध्येयके बारेमें लागू होती है। यह चीज मुझे दिन-दिन अधिकाधिक स्पष्ट होती जा रही है। जेलसे छूटनेके बाद मुझे विस्तृत समाचार देना। और भी बहुत-कुछ लिखनेकी इच्छा होती है किन्तु मैं लोगोंकी एक बड़ी भीड़से घिरा हुआ हूँ। अब सायंकालकी प्रार्थनाका समय हो चला है, अतः इस पत्रको यहीं समाप्त करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

१. रमणीकलाल मोदी, ताराबहनके पति।

[पुनश्च :]

यदि नानीबहन लिखनेकी स्थितिमें हो तो उससे पत्र लिखनेको कहना; अन्यथा उसके समाचार देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१७९) से। सी० डब्ल्यू० १६७८ से भी; सौजन्य : रमणीकलाल मोदी

१८९. पत्र : वसुमती पण्डितको

वेल्लूर
१९ फरवरी, १९३४

चि० वसुमती,

तेरा पोस्टकार्ड मिला। यह पत्र मैं इस आशासे लिखवा रहा हूँ कि यह तुझे मिल जायेगा। दौरा कष्टसाध्य होनेके बावजूद मेरा स्वास्थ्य ठीक रहा है। अब वालजीभाई भी मेरे पास पहुँच गये हैं। उनकी तबीयत अच्छी नहीं रहती, इसलिए मेरे साथ घूमते-घूमते तबीयत सुधर जानेके लोभमें वे यहाँ आये हैं। आजकल हर-जीवन भी मेरे साथ हैं। वे २४ तारीखको काश्मीर रवाना हो जायेंगे। तमिलनाडुका दौरा २१ तारीखको पूरा हो जायेगा। उसके बाद दो दिन रोहिणी और पूवैयाके कुर्गमें घूमना है। फिर दस दिन कर्नाटकमें और उसके बाद बहुत करके बिहार जाना पड़ेगा। राजेन्द्रबाबूका कहना है कि मुझे वहाँ पहुँचना चाहिए। रामदास और नीमू वर्धामें हैं। अभी यह नहीं कहा जा सकता कि रामदासका चित्त स्थिर हो गया है। नीमूको फिर गर्भ रह गया है। देवदास और लक्ष्मी दिल्लीमें हैं। लक्ष्मीके भी सात महीने पूरे हो गये हैं। मारुति की लक्ष्मीके भी इतने ही महीने पूरे हो रहे हैं। राधा अच्छी है। अभी वह देवलालीमें ही है। केशू वर्धामें है; और ऐसा लगता है कि वह वहाँ जम गया है। किशोरलालकी तबीयत बुरी तरह बिगड़ गई थी। वे बहुत दिन खटियामें पड़े रहे। अब वे देवलाली गये हैं। अब वे शायद वहाँ ठीक रहें। ब्रजकृष्ण अच्छा है। एक तरहसे वह मृत्यु-शय्यासे उठा है।

अंग्रेजी सीखनेकी तेरी इच्छाकी मैंने आलोचना नहीं की थी बल्कि उसे और दृढ़ बनानेके लिए लिखा था। मैं चाहता हूँ कि तुम सभी बहनें अंग्रेजी सीख लो। आज (१९को) माधवजी और महालक्ष्मी यहाँ पहुँच गये हैं। वे अपने बच्चोंकी समस्याको हल करना चाहते हैं।

काका दो वर्षके लिए कृष्ण मन्दिरके वासी हो गये हैं; इसी प्रकार जवाहर-लाल भी। बाल पटनामें है। बा अच्छी है। शान्ता और ललिता भी वहीं हैं। तू गुजरातीमें जो चाहे सो पढ़, इस सम्बन्धमें मैं कुछ नहीं कहना चाहता। मैं यह समझता हूँ कि मात्र 'अनासक्तियोग' से तेरा मन नहीं भरेगा। मेरा मन भी नहीं

भरेगा। मैं कुछ पुस्तकें सुझाता हूँ। तेरे ससुरकी[1] लिखी सभी पुस्तकें, रमणभाईका[2] पूरा साहित्य, दलपतरामके[3] काव्य-ग्रन्थ, 'काव्यदोहन' के[4] चारों भाग, 'वनराज चावडो'[5], फार्ब्स की 'रासमाला'[6], मणिभाईकी[7] कुछ पुस्तकें, 'चन्द्रकान्त'[8], 'मणिरत्नमाला', 'महाभारत' का अनुवाद, आनंदशंकरभाईका[9] पूरा साहित्य। इतनी पुस्तकें तो काफी होंगी न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३८२)से। सी० डब्ल्यू० ६२७ से भी; सौजन्य: वसुमती पण्डित

१९०. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

१९ फरवरी, १९३४

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मिला। वे जैसे भी हैं हरिजन हैं, और हमारे प्रतिबिम्ब हैं, यह मानकर उन्हें सहन करते हुए निर्लिप्त भावसे एकान्त निष्ठापूर्वक उनकी सेवा करते रहना। हम जिन्हें अपशब्द मानते हैं उनका उन्हें भान भी नहीं होता।

बीडज-सम्बन्धी दस्तावेज मुझे मिल गया है।

छोटूभाईके पिताका पत्र भी मिल गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३६६)से; सौजन्य: भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या

१. नवलराम लक्ष्मीराम पण्ड्या।
२. रमणभाई नीलकण्ठ।
३. दलपतराम डाह्याभाई त्रिवेदी (१८२०-९८)।
४. कवि दलपतराम द्वारा सम्पादित काव्य-संग्रह।
५. महीपतराम रूपराम नीलकण्ठ, रमणभाई नीलकण्ठके पिता।
६. सर किनलॉक फार्ब्स-कृत।
७. मणिभाई नभूभाई द्विवेदी।
८. इच्छाराम सूर्यराम देसाई-कृत।
९. आनन्दशंकर बापूभाई ध्रुव।

१९१. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

कोदम्बकम्, मद्रास
१९ फरवरी, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आज मेरा मौनवार है। शामकी प्रार्थनाकी तैयारी हो रही है। लोगोंकी मण्डली मुझे घेरकर बैठी है। उसमें म्यूरियल लेस्टर भी है। आज हम मद्रासके एक गरीब उपनगरमें हैं। गणेशनको एक नई जगह मिली है। यहाँ चर्मालय वगैरह बनेंगे। दवाखाना तो है ही। यह स्थान चारदीवारीसे घिरे महाजनके मकान या धर्मशाला-जैसा है, लेकिन अभी तो खण्डहर है। चारों तरफ वरामदा है और बीचमें चौक है, जिसमें दो-चार पेड़ हैं। वे लोग पानी भी अभी तो दूर से भरकर लाये हैं।

लेस्टर बंगाल हो आई, गवर्नरने तीन घंटेका समय दिया। खाना भी खिलाया। बड़ी शिष्टता दिखाई। अनुचित व्यवहार सहन न करनेका निश्चय प्रकट किया, परन्तु नतीजा कुछ नहीं निकला।

मुझे अब बिहारकी तैयारी करनी है। कर्नाटकका काम निबटाकर तुरन्त जाना पड़ेगा, ऐसा लगता है। जो हो सो ठीक है।

कल हम क्राइस्टकुल आश्रममें रहे। वहाँ हमारे डॉ० पेटन रहते हैं। उनके ऊपरके अधिकारी जेसुदासन हिन्दुस्तानी हैं। वे भले आदमी हैं। कुमारप्पाके[१] मित्र हैं। जगह अच्छी है। उन्होंने वहाँ गिरजाघर बनाया है, जिसपर खूब खर्च किया है। यह कहा सकता है कि ईसाई सम्प्रदायको भारतीय जामा पहनाया है।

दुर्गा और मणि परीख महादेव से मिल आईं। किन्तु मुझे अभी उनका पत्र नहीं मिला है।

नानीबहन झवेरीका अहमदाबादमें रक्तस्रावके कारण ऑपरेशन कराया है। ताराबहन मोदी भी अहमदाबादमें ही है। रोगसे पीड़ित है।

बिहारके बारेमें तुम्हारा पत्र मिल गया। तुम्हारा लिखना ठीक ही है। मैं जाऊँगा तब प्रयत्न तो जरूर करूँगा। कल कृपलानीके आनेकी सम्भावना है।

अपने भाईके सम्बन्धमें कुसुमका पत्र इसके साथ है। पत्र हृदयद्रावक है। कुसुम अपनी मर्यादा खूब जानती है और उसके बाहर कभी नहीं जाती। काकाके विषयमें तो तुमने जान लिया होगा। उनकी मेहनत सफल जरूर हुई। अब वे दो वर्ष आराम लेंगे। जवाहरलालके बारेमें भी तुमने पढ़ा ही होगा।[२]

१. जे० सी० कुमारप्पा।

२. १६ फरवरीको जवाहरलाल नेहरूको राजद्रोहके अपराधमें दो वर्षकी कैदकी सजा दी गई थी।

श्रीनिवास शास्त्रीकी पत्नी बीमार हैं और अस्पतालमें हैं। मैंने मथुरादासको उनके पास भेजा था। कल देखूँगा कि मैं क्या कर सकूँगा। कागज-पत्रोंका ढेर लगा पड़ा है। अभीतक 'हरिजन' के लिए मैंने एक लकीर भी नहीं लिखी। ईश्वर जो करायेगा सो करूँगा। लगता है, गुजरातके पाले ने, जितना मैं सोचता था, उससे कहीं अधिक नुकसान किया है। परन्तु इस समय किसानकी सुननेवाला कौन है?

मैं पांडीचेरी हो आया। वहाँ कोई नहीं मिला। माताजी का तो जवाब ही नहीं आया। परन्तु गोविन्दभाई दूसरे मुकामपर आ गये थे।[1] उन्होंने सारा इतिहास बताया। आश्रमपर निगाह रखी जाती है, इसलिए मुझे वहाँ जाने देनेमें भी खतरा था। वहाँ पचास प्रतिशत गुजराती हैं। गोविन्दभाई भी पहले आश्रममें थे। वहाँका कार्यक्रम यह है: सवेरे पाँच बजे उठते हैं। प्रत्येक साधककी अलग कोठरी होती है। लगभग १५० साधक हैं। देशके सभी स्थानोंके हैं। उनमें दिलीप[2] और कमलादेवीके पति हरीन[3] चट्टोपाध्याय भी हैं। आश्रमने लगभग चालीस मकान किरायेपर ले रखे हैं। भोजन हमारे आश्रम-जैसा है। श्री अरविन्द वर्षमें तीन बार ही बाहर आते हैं। श्री अरविन्द और माताजी बिलकुल नहीं सोते। सुबह ३।। से ४।। बजेतक आराम कुर्सीपर लेटे जरूर रहते हैं, परन्तु नींद बिलकुल नहीं लेते। साधकोंको रोज उनके पास डायरी भेजनी पड़ती है। वे प्रश्न पूछ सकते हैं। उन्हें रोज चार बार श्री और माताजी की तरफसे खास डाक मिलती है। इनमें वे रोज २०० पत्र लिखते हैं। कोई पत्र अनुत्तरित नहीं रहता। श्री अनगिनत भाषाएँ जानते हैं। वे साधकोंको अन्तःप्रेरणासे सुधारते हैं। हरीन चट्टोपाध्यायने शराब वगैरह छोड़ दी है। आश्रममें शराब-मांस त्याज्य हैं। यह सब विवरण गोविन्दभाईने दिया है। मुझे आश्रममें सम्मिलित होनेको गोविन्दभाई आमन्त्रित करते हैं। इतना तो काफी है न?

दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तुलसी मेहरका कार्ड आया है। वह कुशलपूर्वक है। उसने अधिक विवरण नहीं दिया।

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ७८-८०

१. देखिए "पत्र: गोविन्दभाई रा० पटेलको", पृ० १८७।

२. संगीतज्ञ दिलीपकुमार राय।

३. मूलमें 'हिरेन' है, जो स्पष्टतः चूक है।

१९२. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१९ फरवरी, १९३४

भाई घनश्यामदास,

तुमारा खत मिला है।

मैं देखता हूं गवरनरसे कुछ लिखुं या नहिं। मिदनापुरकी सलामी तो बंध हुई लेकिन अपने दोषका स्वीकार नहिं किया। मिस लेस्टरने अब वाइसरायसे मिलने का समय मांगा है। इन सब चीजसे आज कुछ परिणाम नहिं मिल सकता है। लेकिन समझोतेका एक भी मौका हम छोड़ना नहिं चाहते हैं।

विधान रायको मिलने का प्रयत्न पूरा करना चाहिये। भले कांग्रेसवादी कुछ भी कहें।

मेरा वहां आने का कमसे-कम बिहार तक तो मौकुफ कर दिया है। पीछे देखेंगे।

जवाहरलालसे मिलने की कोशीष करोगे ना?

गजानन और गोपीके पत्र भेजता हूं। कल ही मिले। मुझे अब लगता है गजाननको दूसरी शादीकी सम्मति देनी चाहिये। अबकी बार गजाननकी नीजी पसंदगी होना आवश्यक समझता हूं। अंतमें तो उसके भाग्यमें होगा वही होनेवाला है। गोपीका अब गजाननके साथ रहना व्यर्थ है। गोपीको अलग रखकर ज्यादा पढ़ने का प्रबंध कर देना चाहिये और वह दूसरी शादी करने के लिए तैयार हो जाय तो होने देना। वर्धा महिला आश्रममें भेजने से शायद अच्छा होगा अथवा किसी और जगह। मैं जानता हूं इन सब बातोंमें मुसीबतें हैं। लेकिन धर्म तो वही है इसमें मुझे संदेह नहिं है।

मिस हैरीसन २ मार्चको विलायतसे छुटेगी, उसका आना अच्छा हि है। मैंने इस बारेमें पहले भी लिखा हि था ना?

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९४६ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

१९३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१९ फरवरी, १९३४

चि० ब्रिजकृष्ण,

तुमको मैं आजकल नहिं लिख सका हूं। अब मौनवारको प्रात:कालमें मद्रास आया हूँ। तुमारा पो० का० मिला। तुमारा धीरे-धीरे अच्छा चल रहा लगता है। जो डा० अनसारी कहें वही किया करो। मेरा बहुत अच्छा चल रहा है। अब कर्णाटकका दौरा होगा। बादमें शायद बिहार।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४०८) से।

१९४. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदीको

१९ फरवरी, १९३४

भाई बनारसीदास,

तुमारा खत मुझे मिला है। नियम भी पढ़ गया। अब तो कलकत्ता कब जाना होगा पता नहिं। यदि आया तो थोड़ा-बहुत समय अवश्य निकाल दूंगा।

बापुके आशीर्वाद

श्री बनारसीदास चतुर्वेदी[1]
विशाल भारत कार्यालय
१२०/२, अपर सर्कुलर रोड
कलकत्ता

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५६९) से।

१. पता अंग्रेजीमें है।

१९५. तार : राजेन्द्रप्रसादको

[२० फरवरी, १९३४ के पूर्व][1]

प्रोफेसरसे[2] मिला। ९ की शामको हैदराबादसे रवाना हो रहा हूँ। पटना ११ मार्चको पहुँचूँगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-२-१९३४

१९६. तार : हीरालाल शर्माको[3]

मद्रास

२० फरवरी, १९३४

डॉ० शर्मा

खुर्जा

आशा है, उपवास सकुशल सम्पन्न हो जायेगा। अमतुल अब स्वस्थ है। कुछ दिन और यहाँ रहेगी। चिन्ताका कोई कारण नहीं। उपवासके बाद तुरन्त वर्धा चल देना।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ५५

१. साधन-सूत्रमें रिपोर्टपर २० फरवरी, १९३४ की तिथि दी गई है।

२. जी० भ० कृपलानी।

३. गांधीजी ने अपने १५-२-१९३४ के पत्रमें हीरालाल शर्मासे पूछा था कि क्या वे वर्धा जानेके पहले रुग्ण अमतुसमलामको देखने मद्रास जा सकेंगे। उत्तरमें हीरालाल शर्माने सूचित किया था कि उपवासकी कमजोरी दूर होते ही वे वहाँ पहुँच जायेंगे।

१९७. पत्र : एस्थर मेननको

२० फरवरी, १९३४

रानी बिटिया,

आशा है, अब तंगईका बुखार बिलकुल चला गया होगा। तो तुम्हें पांडीचेरीमें शहद नहीं ही मिल पाया। एक टोकरी फल और शहद कल ही भेजा गया है। कुमारी लेस्टर अब मेरे साथ हैं। अगाथा हैरिसन २ मार्चको प्रस्थान करेगी।

तुम सबको प्यार।

बापू

श्री एस्थर मेनन
एनी मेरिया स्कूल
पोर्टो नोवो

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० १२४) से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड,** पृ० १०२ से भी

१९८. पत्र : तुलसी मेहरको

२० फरवरी, १९३४

चि० तुलसी मेहर,

यह कैसी बात। दो शब्दका पो० कार्ड ही क्यों? सब हाल क्यों नहिं दिये हैं? वहां कितना नुकसान हुआ? स्टेट क्या कर रहा है? सब हाल दो। थोडे दिनोंमें पटना जाना होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५४५) से।

१९९. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको

२० फरवरी, १९३४

तमिलनाडुके दौरेकी दो उपलब्धियाँ प्रमुख हैं। कठिन समयके बावजूद लोगोंने मुक्त हस्तसे चन्दा दिया, और यद्यपि ऐसी आशंका व्यक्त की गई थी कि जाने लोग हमारी इन सभाओंमें आयेंगे या नहीं, तथापि हमारी सभाओंमें, यह जानते हुए भी कि उनका उद्देश्य क्या है, दसियों हजार लोग, जिनमें काफी अच्छी संख्यामें स्त्रियाँ भी शामिल रही हैं, आते रहे हैं।

प्रश्न : आपने अपने इस दौरेमें लोगोंमें जो उत्साह पैदा किया है उसका उपयोग रचनात्मक प्रयत्नोंके लिए किस प्रकार करनेका विचार है?

उत्तर : काम निश्चित तौरपर जारी रहे, इस खयालसे केन्द्रीय बोर्ड प्रत्येक प्रान्त को (उस प्रदेशमें) एकत्र की गई राशिका ७५ प्रतिशत उसके द्वारा तैयार की गई रचनात्मक योजनाओंपर खर्च करनेकी अनुमति दे रहा है। अगर प्रान्त ऐसा करनेमें सफल हो जाते हैं तो अभी जो काम किया गया है उसकी ठीक-ठीक रक्षा हो जायेगी। रचनात्मक कार्योंमें पाठशालाएँ और छात्रावास चलाना, जहाँ-कहीं जरूरी हो, कुएँ खुदवाना और ऐसे अन्य काम शामिल होंगे जिनसे दलित वर्गोंका सामाजिक, नैतिक तथा आर्थिक उत्थान हो सके।

गांधीजी ने बताया कि आभूषणादिके मूल्यको मिलाकर गत रविवारतक उन्हें तमिलनाडुसे कुल रु० १,०६,४९१-१-५ की राशि प्राप्त हुई है।

इसके बाद उनसे मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनके बारेमें दो-तीन प्रश्न पूछे गये। गांधीजी ने उत्तरमें कहा :

मैंने तो मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नको जान-बूझकर पृष्ठभूमिमें रखा है, किन्तु उधर सनातनी लोग बराबर इसीको जनताके सामने पेश करते रहे हैं। मेरी अपनी धारणा तो यह है कि बहुत भारी लोकमत इस पक्षमें है कि हरिजनोंको भी उसी प्रकार मन्दिरोंमें प्रवेश करने दिया जाये जिस प्रकार अन्य हिन्दू करते हैं। लेकिन मुझे इस मामलेको लेकर संघर्षकी स्थिति उत्पन्न करनेकी कोई इच्छा नहीं है। मेरे लिए तो इस आन्दोलनकी सफलताकी सबसे कड़ी कसौटी सवर्ण हिन्दुओंका हृदय-परिवर्तन है और हृदय-परिवर्तनके बिना मन्दिर-प्रवेशके अधिकारकी प्राप्तिका मेरे लिए कोई मूल्य नहीं है। इसलिए मैं इस प्रश्नपर लोकमत तैयार करनेका ही प्रयत्न कर रहा हूँ।

प्र० : क्या आप सनातनियोंके रवैयेमें कोई परिवर्तन लानेमें सफल हुए हैं?

उ० : मेरा निश्चित मत है कि इस प्रश्नपर लोक-मानसकी अभिव्यक्ति जिस रूपमें हुई है, उसे देखकर आम सनातनियोंके रुखमें स्पष्ट ही कुछ परिवर्तन आया

है। हमारी सभाओंमें उतनी बड़ी संख्यामें एकत्र होनेवाले लोग कलके सनातनी ही तो थे। जहाँतक कट्टर सनातनियोंका सम्बन्ध है, मैं नहीं कह सकता कि उनके रवैयेमें कोई परिवर्तन आया है, यद्यपि मैंने लक्ष्य किया है कि वे अब समझने लगे हैं कि जनता उनके साथ नहीं है।

प्र० : विधान-सभामें पेश मन्दिर-प्रवेश विधेयककी धाराओंसे क्या आप सन्तुष्ट हैं? जो लोग इस उद्देश्यके प्रति सहानुभूति रखते हैं वे भी कानूनी कठिनाइयोंकी वजहसे विधेयकके वर्तमान रूपमें उसके बहुत पक्षमें नहीं जान पड़ते।

उ० : विधान-सभामें पेश विधेयकमें सुधारकी गुंजाइश तो अवश्य है। ठीक समय आनेपर मैं सुझाव देनेको तैयार रहूँगा। जो लोग विधेयकका विरोध कर रहे हैं, उनके मनमें इसके खिलाफ इतना पूर्वग्रह है कि वे इसमें सुधार करनेके सवालपर भी विचार करने को तैयार नहीं हैं।

प्र० : हरिजनोद्धारके सम्बन्धमें सनातनियोंका रुख अनुकूल है। यह देखते हुए ऐसा कहा जा रहा है कि अगर आप चाहें तो उनके सामाजिक उत्थानके लिए सनातनियोंका समर्थन प्राप्त कर सकते हैं और मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न, जो इस बड़ी समस्याका एक पहलू-भर है, अभी छोड़ दे सकते हैं ताकि समयपर वह अपने-आप सुलझ जाये?

उ० : सनातनियोंका यह सौदेबाजीका रुख मेरी समझमें कभी नहीं आ पाया है कि मैं मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनको बन्द कर दूँ तो वे हरिजनोंके सामाजिक, नैतिक एवं आर्थिक उद्धारके प्रयत्नोंमें मुझसे सहयोग करेंगे। उन्हें सुधारकोंकी अन्तरात्माका भी तो खयाल करना चाहिए; सुधारक लोग मानते हैं कि मन्दिर-प्रवेश यरवडा-समझौतेका अभिन्न अंग है।

इसके बाद जब भेंटकर्त्ताने एक-दो राजनीतिक प्रश्नोंपर गांधीजी के विचार जानने चाहे तो उन्होंने साफ कह दिया कि इन प्रश्नोंके उत्तर वे नहीं दे सकते।

जब उनके आगामी कार्यक्रमके बारेमें पूछा गया तो उन्होंने कहा कि कर्नाटकका दौरा पूरा करते ही वे बाबू राजेन्द्रप्रसादके निमन्त्रणपर बिहार जानेका इरादा रखते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-२-१९३४

२००. एक प्रशंसापत्र

२१ फरवरी, १९३४

तमिलनाडुके पूरे दौरेमें, जो बहुत ही कठिन था, कैमलने चालकका काम अत्यन्त कुशलता और सावधानीके साथ किया।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९८) से।

२०१. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

२१ फरवरी, १९३४

चि० पुरुषोत्तम,

बहुत दिनों बाद तेरा पत्र मिला। तू इतना बीमार है, इसकी तो मुझे खबर ही नहीं थी। अब अच्छा हो जाये तो ठीक हो। तेरी सगाई हो चुकी है इसलिए शरीरके प्रति तेरा उत्तरदायित्व और बढ़ गया है। शरीरको स्वस्थ बना लेनेपर ही विवाह करना। शर्मासे इलाज करा देखनेकी बात मुझे भी पटती है। शर्मा आजकल खुर्जामें हैं और बहुत करके वे कुछ दिनोंमें वर्धा रहने चले जायेंगे। जब वे वहाँ पहुँच जायें तो तू वहाँ अवश्य जाना। वे स्वयं भी इस बातको स्वीकार करते हैं कि वे अभी इलाज करनेमें माहिर नहीं हुए हैं। फिर भी मैं तो यही मानता हूँ कि इसी प्रकारके उपचारसे तुझे बीमारीसे छुटकारा मिलेगा। समय-समयपर मुझे अपने स्वास्थ्य तथा अपनी सामान्य प्रगतिके बारेमें लिखते रहना।

कनु पर मार पड़नेकी बात मैंने सुनी थी किन्तु वह बहादुर है इसलिए मुझे उसकी चिन्ता नहीं है। जमनाका पत्र मुझे मिल गया था। यह पत्र उसे पढ़वा देना। मैं अलगसे उसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ। यह पत्र भी मैं बड़ी मुश्किलसे लिख पाया हूँ।

गुरुजनोंसे मेरे दण्डवत् प्रणाम कहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

जमनादाससे कहना कि उसका पत्र मुझे मिल गया था। कहना कि पुनः लिखे।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

२०२. भाषण : सार्वजनिक सभा, कांजीवरम्‌में

२१ फरवरी, १९३४

मित्रो,

इस दौरेमें मैं तमिलनाडु के जिन नगरोंमें गया हूँ, यह उनमें से लगभग अन्तिम है। यह सही है कि अर्कोनम्‌में गाड़ी पकड़नेके लिए मुझे आर्नी तथा ऐसे ही एक-दो अन्य स्थानोंसे भी गुजरना है। लेकिन, यह आजके कार्यक्रममें शामिल किया गया सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह संस्कृतके ज्ञानका गढ़ है। आपके यहाँ एक महान् मन्दिर है। इसलिए मैं यह चाहूँगा कि यह स्थान हरिजनोंकी क्षतिपूर्त्ति करनेके निमित्त आगे आनेको तैयार हो। लेकिन हमारा ऐसा सौभाग्य कहाँ? संस्कृतके कुछ जानकार लोग आज भी संस्कृतके ज्ञानका उपयोग हरिजनोंके विरुद्ध कर रहे हैं। आपके महान् मन्दिरके द्वार आज भी हरिजनोंके लिए बन्द हैं और मेरा निश्चित विश्वास है कि ईश्वर, जो सत्य और न्यायका निधान है, उस मन्दिरमें निवास नहीं कर सकता जिसमें हरिजनोंका प्रवेश निषिद्ध हो; और उन्हें उनका अधिकार देनेसे इनकार करनेका पाप सिर्फ संस्कृतके पण्डितोंके ही नहीं, बल्कि आपके और मेरे, और अपनेको सवर्ण हिन्दू बतानेवाले सभी लोगोंके सिर है। किन्तु मैं जानता हूँ कि हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें लोकमत तेजीसे तैयार होता जा रहा है, और मैं चाहूँगा कि आप लोकमत तैयार करनेमें तबतक डटकर लगे रहिए जबतक कि वह इतना दुर्निवार न हो जाये कि पण्डितों और मन्दिरोंके न्यासियोंकी अनिच्छाके बावजूद मन्दिरोंके द्वार हरिजनोंके लिए खुल जायें। और आपके मानपत्रमें कहा गया है कि यहाँ कार्यकर्त्ताओंके अभावके कारण हरिजनोंके लिए ज्यादा काम नहीं किया गया है। मुझे विश्वास है कि इस विशाल जन-समुदायमें से ऐसे बहुत-से कार्यकर्त्ता सामने आयेंगे जो हरिजनोंके लिए काम करना चाहेंगे। कांजीवरम्‌में ऐसे विद्यार्थी तो काफी तादादमें होंगे ही जो अपना अवकाशका समय इस बहुमूल्य सेवाके लिए दे सकें। मुझे पूरी आशा है कि आप इस नगरमें हरिजन-सेवाकी प्रवृत्तियोंका एक केन्द्र स्थापित करेंगे। और इतना याद रखिए कि यह आत्म-शुद्धिके निमित्त किया जाने-वाला प्रायश्चित्त है और आपमें से प्रत्येक अपने हृदयसे अस्पृश्यताको निकालकर अपनी शुद्धि कर सकता है। अगर आपको अन्त:प्रेरणाकी अनुभूति हो तो आप ऊँच-नीचके सारे भेद-भाव मिटा सकते हैं, और मुझे आशा है कि ईश्वर आपको मानवताके हितके इस महान् उद्देश्यके निमित्त कार्य करनेकी प्रेरणा देगा। और अन्तमें, मैं चाहूँगा कि आप बिहारके विपद्ग्रस्त लोगोंको याद रखिए, और जबतक मैं इन

मानपत्रों तथा आपकी दी हुई अन्य वस्तुओंको नीलाम करता हूँ तबतक स्वयंसेवक-गण बिहारके उन दुःखी जनोंके लिए चन्दा एकत्र करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-२-१९३४

२०३. भाषण : सार्वजनिक सभा, आर्नीमें[1]

२१ फरवरी, १९३४

आपके मानपत्रों और थैलीके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। तमिलनाडुसे विदा लेनेके पूर्व मेरा यही सन्देश है कि हममें से प्रत्येकको अपने हृदयसे अस्पृश्यताके पापको धो डालना चाहिए। हमें सभी हरिजनोंको अपने सगे भाई-बहनोंकी तरह मानना चाहिए। इसका मतलब यह है कि हमें ऊँच-नीचके सारे भेद-भाव भुला देने चाहिए। हम सब एक ही परम पिताकी सन्तान हैं और इसलिए हमारे बीच ऊँच-नीचका भेद नहीं हो सकता। हरिजनोंको वही अधिकार और सुविधाएँ होनी चाहिए जो अन्य हिन्दुओंको हैं। उनके बच्चोंको सार्वजनिक स्कूलोंमें प्रवेश मिलना चाहिए। उन्हें सार्वजनिक कुओं, तालाबों तथा ऐसे ही अन्य जरूरी स्थानोंके उपयोगकी छूट होनी चाहिए। सभी सार्वजनिक मन्दिरोंके द्वार उनके लिए ठीक उसी प्रकार खोल दिये जाने चाहिए जिस प्रकार वे अन्य हिन्दुओंके लिए खुले हुए हैं। हम यह सब करनेमें सफल हो गये तो उसका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि हम मानव-जातिके मूल-भूत भ्रातृत्वको जीवनमें सिद्ध कर दिखायेंगे। कारण, अस्पृश्यता-निवारणका मतलब केवल हरिजनोंको पुनः उनके अधिकार और सुविधाएँ प्रदान करना ही नहीं है, बल्कि इसका मतलब मनुष्य-मनुष्यके बीच विद्यमान सारे भेदोंको मिटा देना है। अब मैं यह चाहूँगा कि बिहारके पीड़ित जनोंके प्रति अपने भ्रातृत्व-भावको आप सिद्ध कर दिखायें। मैं जानता हूँ कि आपके बीच चन्दा किया गया है, लेकिन वह तो सिर्फ हरिजनोंके लिए था। मुझे आशा है कि वहाँके उन दसियों हजार लोगोंके दुःखको, जिनके पास न रहनेको घर बचा है और न खानेको कोई चीज, दूर करनेके लिए आपसे जहाँतक बनेगा, आप अवश्य करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-२-१९३४

१. इस सभामें लगभग १५,००० लोग उपस्थित थे। तीन मानपत्र और आम जनताकी ओरसे ८०१ रुपयेकी एक थैली गांधीजी को भेंट की गई थी।

२०४. भाषण : सार्वजनिक सभा, आरकोणम्में[1]

[२१ फरवरी, १९३४][2]

मित्रो,

आज रात और इस सभाके साथ मेरा तमिलनाडुका दौरा समाप्त हो जाता है। चूँकि इस प्रान्तसे मैं शीघ्र ही विदा लूँगा, इसलिए प्रारम्भमें ही मैं यहाँकी पुलिस तथा रेल प्रशासनको धन्यवाद देता हूँ। इस पूरे प्रान्तमें मैं जहाँ भी गया उन्होंने सदा मेरी सहायता की। मुझे यह कहते हुए बड़े हर्षका अनुभव हो रहा है कि उन लोगोंने, मेरा मतलब पुलिसवालों से है, इस तरह काम किया मानों वे जनसेवक हों, जो वे निस्सन्देह हैं या जैसा उन्हें होना चाहिए। यह कहते हुए मुझे लन्दनमें मेरी हिफाजतके लिए तैनात किये गये उन दो सज्जन गुप्तचरोंके साथ हुई अपनी बातचीत याद हो आई है। उन्होंने मुझे बताया था कि लन्दनमें कांस्टेबलोंको — वहाँ पुलिसके सिपाहियोंको कांस्टेबल ही कहा जाता है — प्रतिदिन उनके कामपर भेजनेसे पहले उनसे एक पाठकी आवृत्ति कराई जाती है, जिसमें उन्हें घोषणा करनी पड़ती है कि "हम जनसेवक हैं और जनसेवककी ही तरह आचरण करेंगे।" अंग्रेज अधिकारियोंसे मेरा चाहे जितना मतभेद हो, मैं अपने विरोधियोंके गुणोंको समझनेका दावा करता हूँ और इसलिए मैं लन्दनके कांस्टेबलोंको सदासे आदर्श पुलिसवाले मानता आया हूँ। मैं यह कहनेका साहस करता हूँ कि मनुष्यके रूपमें उनकी भी कुछ मर्यादाएँ हैं। लेकिन मैं दुनियाके कई हिस्सोंके पुलिसवालों को निकटसे जानता हूँ और उस जानकारीके आधारपर मैं ईमानदारीके साथ कह सकता हूँ कि लन्दनके कांस्टेबलोंके आचरणके बारेमें मेरी स्मृति सर्वथा सुखद ही है। इसलिए इस पूरे दौरेमें यहाँकी पुलिसके अपने अनुभवके आधारपर जब मैं उनकी प्रशंसा करते हुए लन्दनके कांस्टेबलोंका स्मरण कर रहा हूँ तो इसे कोई छोटी-मोटी प्रशंसा नहीं समझना चाहिए।

मुझे दक्षिणके सभी हिस्सोंमें अपने कर्त्तव्यका निर्वाह करनेवाले स्वयंसेवकोंका उल्लेख करना भी नहीं भूलना चाहिए। उनमें से अधिकांश प्राय: अप्रशिक्षित थे। वे छोटी-छोटी बातोंको भी बहुत तूल देकर कभी-कभी कुछ अटपटी स्थिति उत्पन्न कर देते थे; किन्तु इसके बावजूद यदि मैं यह न कहूँ कि इस दौरेकी सफलताके लिए वे हर तरहसे अनिवार्य थे तो यह कृतघ्नता होगी। उन्हें बहुत ही कठिन परिस्थितियोंमें काम करना पड़ा, क्योंकि हर जगह लोग जितनी बड़ी तादादमें देखनेको मिले उतनी बड़ी तादादमें उनके उपस्थित होनेकी आशा किसीने नहीं की

१. चन्द्रशंकर शुक्लके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) में प्रकाशित इस भाषणकी रिपोर्टको **हिन्दू**की रिपोर्टसे मिला लिया गया है।

२. **हिन्दू** में प्रकाशित भाषणकी रिपोर्टसे।

थी। इसलिए इस यात्राको सफल बनानेमें —और मेरी नम्र सम्मतिमें यह सफल रही है— सहयोग करनेवाले ये सभी पक्ष धन्यवादके पात्र हैं। अब मैं यही आशा करता हूँ कि इस प्रान्त-भरमें जो भारी जागृति देखने को मिली है, उसका मेरे सहयोगी और हरिजन-कार्यको अपना लेनेवाले दूसरे लोग पूरा-पूरा लाभ उठायेंगे। यदि कार्यकर्त्ता अपने-अपने कामोंमें शीघ्र ही जुट नहीं जाते तो इस बातका पूरा खतरा है कि यह जागृति या इससे उत्पन्न शक्ति व्यर्थ चली जायेगी। आत्म-शुद्धिके किसी आन्दोलनमें, जैसाकि यह आन्दोलन है, ऐसी कोई बात हो तो यह बहुत बुरा होगा। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि हरिजन-कार्यसे सम्बद्ध सभी लोग सदा सजग रहेंगे और न केवल अपनी चौकसी करेंगे, बल्कि इस बातका भी ध्यान रखेंगे कि इस उद्देश्यके सम्बन्धमें आम जनता क्या कर रही है।

और यह भी याद रखिए कि अस्पृश्यता-निवारणसे जिस महान् फलको प्राप्त करनेका हम इरादा या आशा रखते हैं वह कोई साधारण फल नहीं, बल्कि मानव-बन्धुत्वकी भावनाको साकार करना है। यदि आप लोग, आप करोड़ों सवर्ण हिन्दू, करोड़ों हरिजनोंके साथ, जिन्हें आपने सदियोंसे दबा रखा है, किये अपने अन्यायोंका प्रतिकार करेंगे तो निश्चित है कि उससे एक ऐसी शक्ति उत्पन्न होगी जो समस्त मानव-समाजपर छा जायेगी और उस परिवारके सभी सदस्योंको एक सूत्रमें पिरो देगी। और चूँकि इस लक्ष्यको मैंने अपनी दृष्टिसे कभी तिरोहित नहीं होने दिया है, इसीलिए इस आन्दोलनको मैंने गहन आध्यात्मिक और विशुद्ध रूपसे धार्मिक आन्दोलन कहा है और चूँकि मैं इस बातको भली-भाँति समझता हूँ कि आज हम धर्मके नामपर जैसी अस्पृश्यता बरतते हैं, वह बन्धुत्वकी उस भावनाको साकार करनेके मार्गकी बहुत बड़ी बाधा है, इसलिए मैंने बेहिचक कहा है कि यदि हमने अपने-आपको अस्पृश्यताके इस अभिशापसे मुक्त नहीं किया तो हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जातिका विनाश निश्चित है। तो आज रात आपसे विदा लेते हुए मैं अपने मनमें यह आशा लेकर जाना चाहूँगा कि जिस आदर्शकी रूप-रेखा मैंने आपके समक्ष प्रस्तुत की है उसे पूर्णतः साकार करनेके लिए आप प्रयत्नशील रहेंगे। यदि हम केवल अपना हृदय-परिवर्तन-मात्र कर दें तो यह काम बहुत सरल हो जायेगा। ईश्वर इसमें आपकी सहायता करे! मैं जानता हूँ कि हमारे बीच ऐसे लोग हैं जो आज भी अस्पृश्यताको पाप मानना तो दूर, उसका पालन करना शास्त्रों द्वारा विहित अपना एक कर्त्तव्य मानते हैं। इसके विपरीत, मैं केवल अपना व्यक्तिगत अनुभव ही आपके सम्मुख रख सकता हूँ। मेरा यह अनुभव, मैं गत पचास वर्षोंसे निरपवाद रूपसे जो आचरण करता आया हूँ, उसपर आधारित है और उसकी पुष्टि हमारे शास्त्रोंके अध्ययनसे, —जैसा अध्ययन मुझ-जैसे एक साधारण और उसपर भी इतने व्यस्त व्यक्तिके लिए सम्भव है, वैसे अध्ययनसे —होती है। इस प्रकार प्रार्थनापूर्ण मनसे शास्त्रोंका अध्ययन और अस्पृश्यतामें विश्वास रखनेवाले विद्वान् शास्त्रियोंके साथ बातचीत करनेके उपरान्त मैं इस सुचिन्तित निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि हिन्दूशास्त्रोंसे अस्पृश्यताका औचित्य कहीं भी सिद्ध नहीं होता। यह ईश्वर और मनुष्यके प्रति किया जानेवाला पाप है। इस

पापसे हम जितनी जल्दी मुक्त हो जायें, हमारे और सारी दुनियाके लिए उतना ही अच्छा होगा।

और अब मैं अपना धन्धा भी शुरू कर दूँ। तो जबतक मैं इन वस्तुओंको नीलाम करूँ, मैं चाहता हूँ कि स्वयंसेवक लोग आपके बीच जाकर बिहारके विपद्ग्रस्त लोगोंके लिए चन्दा एकत्र करें।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-३-१९३४ और **हिन्दू**, २३-२-१९३४

२०५. पत्र : एस्थर मेननको

२२ फरवरी, १९३४

रानी बिटिया,

तुम्हारे पास दो टोकरियाँ भेजी थीं। पहलीमें शहद और रास्तेमें मुझे मिली तमिल-हिन्दीकी पुस्तकें थीं। ये पुस्तकें वहाँ कुछ कामकी हो सकती हैं।

आशा है, तंगई अब स्वस्थ हो गया होगा।

मेरियाको तुमसे एक शिकायत है। मैंने उससे कहा है कि वह खुद ही उसके बारेमें तुमसे दिल खोलकर बातचीत कर ले।

मैंने प्रमाणपत्र पढ़ लिये हैं। वे अच्छे हैं। मेननके प्रयत्नका परिणाम बताना।

बच्चोंको चुम्बन और तुम सबको स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० १२५) से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृ० १०३ से भी।

२०६. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

मैसूर
२२ फरवरी, १९३४

बा,

यह पत्र मैं ट्रेनमें लिख रहा हूँ। तेरा पत्र मिल गया है। मैं कामसे इतना दबा हुआ था कि मंगलवारको तुझे पत्र न लिख सका। आज गुरुवार है। तू जो काम चाहे मुझे सौंप देना और जो भी प्रश्न पूछना चाहे, पूछ लेना। मैं सब कर दूंगा। कमसे-कम कोशिश अवश्य करूँगा। तूने हरिलालके बारेमें पूछा है। वह पांडी-चेरी गया था। वहाँ भी उसने पैसोंकी भीख माँगी और खूब शराब पीता था। उसे कुछ पैसे मिल भी गये। मैं नहीं जानता कि अब वह कहाँ है। उसका यही ढंग

१. यह अनुच्छेद **हिन्दू**से लिया गया है।

रहेगा। ईश्वर उसे सम्मति दे तभी वह सुधर सकता है। इसमें हमारे पाप-पुण्यका प्रभाव भी पड़ेगा न? जब हरिलाल गर्भमें आया उस समय मैं कितना मूढ़ था? जैसा मैंने और तूने किया होगा वैसा ही तो हमें भरना पड़ेगा। इस प्रकार अपने बच्चोंके चरित्रके लिए माता-पिता ही जिम्मेदार होते हैं। अब तो हम इतना ही कर सकते हैं कि पवित्र बननेका प्रयास करें। हम इसी बातमें सन्तोष मानें कि दोनों पवित्र बननेका प्रयास कर रहे हैं। जाने-अनजाने हमारी पवित्रताका प्रभाव हरिलालपर भी अवश्य पड़ता होगा। इधर हालमें मनुका पत्र तो नहीं मिला किन्तु जमनादासने उसके समाचार दिये थे। मैं सुशीलाको लिखूँगा। हरखचन्दकी लड़कीसे पुरुषोत्तमकी सगाई हो गई है। उसका स्वास्थ्य अभी अच्छा नहीं कहा जा सकता। रणछोड़भाईके भाईकी पत्नीके गुजर जानेसे मोतीबहन उदास रहती है। उसकी जिम्मेवारी बढ़ गई है। अम्बालालभाई और मृदुला आकर मुझसे मिल गये। अम्बालाल और सरलाबहन विलायत जा रहे हैं। तीन-चार महीने वे वहाँ रहेंगे। देवदास और लक्ष्मी अच्छे हैं। [गर्भके] बालकका भार उठाना लक्ष्मीको कठिन तो लगता है। रामदास और नीमू अच्छे हैं और उन दोनोंको मैं तेरे पत्रकी नकल भेज रहा हूँ। मूल पत्र मणिलालको भेज रहा हूँ। नकल वल्लभभाईको भी भेजी है, वे भी [तेरे समाचारोंके लिए] चिन्तित रहते हैं। माधवदासका अभीतक कोई उत्तर नहीं मिला। मथुरादास मेरे साथ है और एक-दो दिन ठहरकर बम्बई जायेगा। एस्थर मेनन विलायतसे लौट आई है। वह आकर मिल गई। कुमारी लेस्टर लंका गई है। कल मद्रासका दौरा पूरा होनेपर राजाजी हमसे अलग हो गये। वे दिल्ली जायेंगे तो सही। अमतुस्सलामको अभी कमजोरी है इसलिए उसे मद्रासमें ही छोड़ दिया है। राजाजी उसकी देख-भाल करेंगे। आशा है, तुझे पूनियाँ मिल गई होंगी। इनके खत्म हो जानेपर मुझे लिखना तो मैं और भेज दूँगा। कुसुमका भाई जंजीबारमें गुजर गया, जिससे उसे बहुत दुःख हुआ है। प्यारेलाल कल छूट गया। किशोरलाल देवलालीमें है। पहलेसे कुछ ठीक है। लक्ष्मीका प्रसव बारडोलीमें होगा। मंजुकेशा उसकी देखभाल करेगी। मोती या लक्ष्मी भी वहाँ रहेगी। नानीबहन झवेरीने जोड़ोंमें तकलीफकी वजहसे ऑपरेशन कराया है। मैं समझता हूँ कि अब तो मैंने काफी खबरें दे दी हैं। ९ तारीखको मैं हैदराबादसे रवाना होकर पटना जाऊँगा। राजेन्द्र बाबू बुला रहे हैं। प्रभावती वहीं है। ऐसा लगता है कि मुझे बिहारमें काफी दिन रहना पड़ेगा। और अब प्रवचन:

'नामको आधार तेरे नामको आधार', यह भजन यदि याद न हो तो देख लेना। आजकल यह भाव मनमें रमा रहता है। तुलसीदासजी ने तो नामकी महिमाका खूब गान किया है। नामका अर्थ है रामनाम या ईश्वरका नाम। और उन्होंने यह कहा है कि रामकी अपेक्षा उनका नाम बड़ा है अर्थात् राम नामक जो देहधारी हुआ है उसकी तो मर्यादा थी, उसकी देह नाशवान थी किन्तु नाम अमर है। राम नामक देहधारीके गुणोंकी एक मर्यादा थी। किन्तु राम नामवाले ईश्वरके गुणोंकी कोई मर्यादा ही नहीं है। उसमें हम चाहे जितने गुणोंकी कल्पना कर सकते हैं। क्योंकि

ईश्वरके गुण अनन्त हैं और इसीलिए वह गुणातीत है अर्थात् गुणोंसे परे है। हम चाहे जितने गुण क्यों न गिनायें किन्तु फिर भी ईश्वरके गुणोंको गिन नहीं सकते, इसलिए वह गुणातीत ही हुआ न? यदि ऐसे ईश्वरके नामको हम अपने हृदयमें अंकित कर लें तो इसमें सन्देह नहीं कि हम भवसागरसे तर जायेंगे। यह नाम लेनेसे सभी दुःख दूर हो जाते हैं। अतः चाहे जितने दुःख क्यों न पड़ें, उन्हें हमें सह लेना चाहिए। यदि हमें नाम लेनेकी टेव पड़ जाये तो हमें और किसी चीजकी आवश्यकता नहीं होगी। इसीलिए इस भजनकी रचना हुई और कविने गाया: "मुझे एकमात्र रामनामका ही सहारा है", बाकी सब मिथ्या है। "देहके स्नेही सकल स्वार्थी अन्तमें अलग हो जायेंगे।" इसके साथ हमने यदि सिर्फ नाम लेना सीख लिया होगा तो केवल वही हमारे साथ जायेगा।

सब बहनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, १४-६

२०७. भाषण : हुडकेरीमें[1]

[२२ फरवरी, १९३४][2]

ईश्वरने मुझे कुर्गके इस सुन्दर प्रदेशमें आनेका सुयोग प्रदान किया, यह मेरे लिए बड़े हर्षका विषय है। मैं जबसे आया हूँ, यहाँके प्राकृतिक सौन्दर्यका ही पान करता रहा हूँ। और मैं मानता हूँ कि आपके हृदय भी उतने ही सुन्दर हैं जितनी कि यह दृश्यावली। किन्तु, फिर भी आपके हृदयके सौन्दर्यके बारेमें मेरे मनमें कुछ आशंका है। कारण, मैं देखता हूँ कि यद्यपि आपके बीच वैसी विषाक्त अस्पृश्यता नहीं है जैसी मैदानी इलाकोंमें है, फिर भी वह कुछ-न-कुछ तो है ही। कारण, मैं देखता हूँ, आपने अपने मानपत्रमें कहा है कि यहाँके मन्दिर अस्पृश्योंके लिए खुले हुए नहीं हैं। यह तो वैसा ही है जैसे कोई पिता अपने बच्चोंसे कहे, मैं तुम्हें खाना, कपड़ा, रहनेको घर तो दूँगा, लेकिन अपने हृदय-मन्दिरमें स्थान नहीं दूँगा। जरा सोचिए कि उन बच्चोंको कैसा लगेगा। जबतक आप हरिजनोंको ठीक उसी प्रकार मन्दिरोंमें प्रवेश नहीं करने देते तबतक मैं नहीं कह सकता कि आपके हृदय सुन्दर हैं। इसलिए मेरी यही कामना है कि आप लोग प्रकृतिसे सबक लेकर अपने हृदयसे उस काले धब्बेको धो डालेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-३-१९३४

१. यह चन्द्रशंकर शुक्लके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से लिया गया है।
२. गांधीजी के यात्रा-विवरणसे।

२०८. भाषण : पन्नमपेटमें[1]

[२२ फरवरी, १९३४][2]

आप सिर्फ एक क्षण सोचकर देखें तो समझ जायेंगे कि यह केवल धर्मका ही सवाल हो सकता है, क्योंकि शास्त्रोंको समझनेका दावा करनेवालों ने हमें यह बताया है कि अस्पृश्यता तो एक दैवी प्रथा है। जब यह चीज मेरे सामने धर्मका जामा पहनकर आती है तो इसका मुकाबला भी मैं यही सिद्ध करके कर सकता हूँ कि आज हम जैसी अस्पृश्यता बरतते हैं उससे धर्मका कोई सरोकार नहीं है। फिर, मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नको लीजिए। मन्दिरोंके द्वार हरिजनोंके निमित्त खुलवानेके लिए मुझे आपके हृदयोंको छूना है; और जो चीज किसीके हृदयका स्पर्श करती है, उसकी श्रद्धाको छूती है, वह तत्काल धर्मकी चीज बन जाती है। सच तो यह है कि अस्पृश्यताके दैवी विधान होनेका दावा करनेवाले सनातनी मुझपर ताना कसते हुए कहते हैं कि मैं धर्मके बारेमें क्या जानता हूँ! बेशक, मैं इस तानेको स्वीकार नहीं कर सकता, क्योंकि मेरा सम्पूर्ण जीवन धर्मकी भावनासे ओतप्रोत है। धर्मके बिना मैं क्षण-भर भी जीवित नहीं रह सकता। मेरे बहुत-से राजनीतिक मित्र मेरी आशा इसलिए छोड़ बैठे हैं, कि उनका कहना है मेरी राजनीति भी मेरे धर्मसे ही उद्भूत है और उनका यह कहना सही है। मेरी राजनीति तथा अन्य तमाम प्रवृत्तियोंका स्रोत मेरा धर्म ही है। मैं तो इससे भी आगे बढ़कर यह कहूँगा कि धर्मपरायण व्यक्तिकी प्रत्येक प्रवृत्तिका स्रोत धर्म ही होना चाहिए, क्योंकि धर्मका मतलब है ईश्वरसे बँधा हुआ होना, जिसका अर्थ यह हुआ कि ऐसे व्यक्तिकी प्रत्येक साँसका नियामक ईश्वर ही है। यदि आप इस सचाईको समझ लेते हैं तो स्वभावत: आपकी प्रत्येक प्रवृत्तिका नियामक ईश्वर ही बन जाता है। तो अपने जीवनका एक-एक क्षण अपने धर्मके अनुसार जीनेके लिए प्रयत्नशील एक धर्मप्राण व्यक्ति के रूपमें ही मैं आपसे यह कहने यहाँ आया हूँ कि अस्पृश्यता कोई दैवी प्रथा नहीं है। मुझ-जैसा सामान्य व्यक्ति जिस प्रकार शास्त्रोंका अवगाहन कर सकता है उस प्रकार उनका अवगाहन करके मैं आपको यह बताने यहाँ आया हूँ कि अस्पृश्यता ईश्वर और मनुष्य दोनोंके साथ किया गया अपराध है। मैं यहाँ आपको यह बताने आया हूँ कि आज हम जैसी अस्पृश्यता बरतते हैं उसके लिए शास्त्रोंमें कोई आधार नहीं है, और इसलिए हरिजनोंको अपने मन्दिरोंमें प्रवेश न करने देना पाप है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-३-१९३४

१. चन्द्रशंकर शुक्लके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. गांधीजी के यात्रा-विवरणसे।

२०९. टिप्पणियाँ

बिहारके निमित्त

बिहारके भूकम्पके बाद शायद ही ऐसी कोई सभा हुई होगी, जिसमें मैंने अपने भाषणमें बिहारकी चर्चा न की हो। बाबू राजेन्द्रप्रसाद और प्रत्येक बिहारीको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि उन सभाओंमें दूर-दूर के गाँवोंके निर्धनतम आदमियोंने भी इस कोषमें काफी उदारतासे पैसा दिया है। भूकम्प-पीड़ित भाइयोंके लिए यथाशक्ति पाई-पैसा देनेमें हरिजन लोग भी दूसरोंसे पीछे नहीं रहे हैं। जहाँकी सभाओंमें लोगोंने कुछ नहीं दिया, वहाँ वे यह बतानेकी स्थितिमें रहे हैं कि हम अपना पत्रपुष्प राजेन्द्रबाबूको भेज चुके हैं। इन सभाओंमें स्त्रियोंने अपनी चूड़ियाँ और पुरुषोंने अपनी अँगूठियाँ उतारकर दी हैं। विद्यार्थियोंने अपनी कलमें दे दीं, क्योंकि उनके पास देनेके लिए और कुछ नहीं था। अबतक कुल मिलाकर इन सभाओंमें रु० ५१३५-४-१ का चन्दा मिला है। सहायताके लिए जितने की जरूरत है, उसके अनुपातमें यह रकम निश्चय ही बहुत कम है। लेकिन गरीबके दानका मूल्य रुपये-पैसेसे नहीं आँका जाता; उसकी कीमत तो उसकी सच्ची हमदर्दीसे ही लगाई जाती है। मनुष्य सिर्फ रोटीपर ही जीवित नहीं रहता। अकसर अपने भाइयोंकी सहानुभूति रोटीसे कहीं अधिक जीवनदायी चीज साबित होती है।

इन गाँववालों के दानके बारेमें लिखते समय मुझे यह सूचित करते हर्ष होता है कि योकोहामाके हिन्दुस्तानी व्यापारियोंने तार द्वारा रु० १९६९-३-२ भेजे हैं। यह रकम बाबू राजेन्द्रप्रसादके पास पटना भेज दी गई है। इसमें सन्देह नहीं कि बिहारकी घोर विपदाने संसार-भरके लोगोंका हृदय द्रवित कर दिया है।

गोखले और हरिजन

मेरे इस दक्षिणके दौरेमें कई नवयुवकोंने मुझे लिखा है कि अस्पृश्यता तथा जिन अन्य कुरीतियोंसे हिन्दू-समाज पीड़ित है, उनके लिए ब्राह्मण ही दोषी हैं। स्वर्गीय गोखलेकी १९वीं पुण्यतिथिके एक दिन बाद मैं यह लेख लिख रहा हूँ। इसलिए स्वभावतः मुझे उनका हरिजन-प्रेम याद आ रहा है। अस्पृश्यताके कलंकसे उनसे ज्यादा मुक्त किसी अन्य व्यक्तिकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। उनकी दृष्टिमें मनुष्य-मनुष्यके बीच कोई असमानता थी ही नहीं। एक बार दक्षिण आफ्रिकामें एक सज्जन उन्हें साम्प्रदायिक ढंगकी एक सभामें लिवा ले जानेके लिए उनके पास आये; पर वे जानेको तैयार न हुए। तब उनके हिन्दुत्वकी दुहाई दी गई। इसपर वे बिगड़ उठे। उन्होंने इसे अपना अपमान समझा और जरा गर्म पड़कर उक्त सज्जनसे बोले, "अगर यही हिन्दू-धर्म है तो मैं हिन्दू नहीं हूँ।" लोग तो यह सुनकर आश्चर्यचकित रह गये। किसी व्यक्ति या सम्प्रदाय द्वारा अपने-आपको उच्च माननेकी बात वे

सहन नहीं कर सकते थे। मनुष्यके साथ अपने व्यवहारमें उन्होंने विश्व-बन्धुत्वकी भावनाको अपने जीवनमें साकार करके दिखाया। परिया कहे जानेवाले भाइयोंसे वे खूब दिल खोलकर मिलते थे। उनमें इस भावनाका आभास भी नहीं मिलता था कि वे किसीपर कृपा कर रहे हैं। उन्होंने सेवाके आदर्शका प्रवर्तन किया। उनका विश्वास था कि सार्वजनिक लोग जनताके नेता नहीं, बल्कि सेवक हैं। उनकी दृष्टिमें सबसे बड़ा सेवक ही सबसे बड़ा नेता था। और स्वयं गोखले हर तरह एक सच्चे जन्मजात ब्राह्मण थे। वे जन्मजात अध्यापक भी थे। उनको जब कोई 'प्रोफेसर' कहता तो बड़े प्रसन्न होते थे। विनम्रताकी तो वे मूर्ति थे। राष्ट्रको उन्होंने सर्वस्व दे दिया था। चाहते तो वे मालामाल हो जाते, लेकिन उन्होंने तो स्वेच्छासे गरीबीका ही बाना पसन्द किया। गोखले-जैसे जनसेवक पर क्या इन ब्राह्मण-निन्दकोंको गर्व नहीं होगा? और यह बात नहीं कि ऐसे ब्राह्मण एक गोखले ही थे। मनुष्य-मनुष्यके बीच समानताके पोषक ब्राह्मणोंकी एक खासी लम्बी सूची बनाई जा सकती है। ब्राह्मण-मात्रको दोषी ठहरानेका तो यही अर्थ हुआ कि जिन ब्राह्मणोंने अपने-आपको खास तौरसे निःस्वार्थ सेवाके योग्य बनाया है उनकी उस सेवाके मधुर फलको हम खुद अस्वीकार कर रहे हैं। उन लोगोंको किसीके प्रशंसा-पत्रकी जरूरत नहीं है। उनकी सेवा ही उनका पुरस्कार है। गोखलेने अपने जीवनके एक महत्त्वपूर्ण अवसर-पर लिखा था कि "जो सेवा किसी व्यक्तिके कहनेसे हाथमें नहीं ली जाती, वह किसी दूसरेकी आज्ञासे त्यागी भी नहीं जा सकती।" इसलिए सबसे निरापद नियम तो यह है कि मनुष्यको हम उसकी वर्तमान योग्यताके अधारपर ही पहचानें, फिर वह चाहे जिस कुलमें पैदा हुआ हो और उसकी जाति या उसका रंग चाहे जो हो। अस्पृश्यता-निवारणके इस आन्दोलनमें हमें किसी की छोटीसे-छोटी सेवा की भी, यदि वह कृपा-कार्यकी तरह नहीं बल्कि सच्ची सेवाकी तरह अर्पित की गई हो तो, अवगणना नहीं करनी चाहिए।

एक सुन्दर उदाहरण

त्रिचिनापल्ली राष्ट्रीय महाविद्यालयके विद्यार्थियोंके आगे मैंने जो भाषण दिया था, उसके जवाबमें जिस दिन मैं त्रिची से चलने लगा उस दिन मुझे १३ विद्यार्थियोंके हस्ताक्षरोंसे युक्त निम्नलिखित पत्र मिला:

> **इस पत्रपर हस्ताक्षर करनेवाले हम राष्ट्रीय महाविद्यालयके विद्यार्थी, आपको नमस्कार करके, हरिजन-कार्य एवं बालसेवा-जैसी किसी योजनामें अपनी सेवा अर्पित करनेकी इच्छा प्रगट करते हैं। मगर चूँकि हम विद्यार्थी हैं, इस-लिए हमारा सारा समय हमारे हाथमें नहीं है। हम अपना छुट्टीका समय इन सत्कार्योंमें देनेको तैयार हैं।**
>
> **पूज्य महात्माजी, आपसे हमारी यही विनम्र प्रार्थना है कि आप हमें कोई ऐसी बात बतलाइए जो भविष्यमें हमारे लिए मार्ग-दर्शक हो, और हमें अपना आशीर्वाद भी दीजिए।**

इस पत्रपर हस्ताक्षर करनेवाले विद्यार्थियोंको मैं उनके संकल्पपर धन्यवाद देता हूँ। हमें आशा रखनी चाहिए कि उनमें सदा ऐसा ही उत्साह बना रहेगा और वे अपने इस सत्संकल्पको पूरा करके ही रहेंगे। ये लोग मार्ग-दर्शन चाहते हैं। मैं तो उन्हें इतना ही मार्ग दिखा सकता हूँ कि अगर वे खुद अस्पृश्य होते, तो अपने प्रति इन भाइयोंसे जिस प्रकारके बरतावकी अपेक्षा रखते उसी प्रकारका बरताव वे हरिजनोंके प्रति करें; अर्थात् हरिजनोंको वे अपने सगे भाई-बहनोंकी तरह समझें। इस भावनाको लेकर अगर वे हरिजन-बस्तियोंमें जायेंगे, तो उन्हें सहज ही सूझ जायेगा कि उन्हें क्या कहना चाहिए और क्या करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-२-१९३४

२१०. 'शान्तिके लिए अपील'

बंगालसे एक सज्जन लिखते हैं:

> सुधारकों और सनातनियोंके बीच आज जो झगड़ा चल रहा है, उससे दोनों ही तरफ बहुत कटुता पैदा हो रही है। अच्छा हो कि यह झगड़ा शीघ्र ही बन्द हो जाये। इसलिए मेरा तो दोनों ही पक्षोंसे अनुरोध है कि वे एक-दूसरेके प्रति सहिष्णुतासे काम लें। हिन्दुस्तान अनेक जातियों और विविध धर्मों का देश है। इससे देशकी शान्ति और उन्नतिके लिए यह जरूरी है कि विभिन्न जातियों और धर्मोंके लोगोंके बीच सहिष्णुता हो। भारतके इतिहासमें सदा ही सहिष्णुताका तत्त्व उसकी सबसे सुन्दर विशेषताओंमें से एक रहा है। जब अस्पृश्यताके विरुद्ध यह सुधारका आन्दोलन गांधीजी चला रहे हैं, तब कलह और कटुता पैदा होनेका तो कोई कारण ही नहीं। किन्तु गांधीजी और उनके अनुगामियोंको यह सुधार-आन्दोलन चलाते समय कुछ सहिष्णुता अवश्य दिखानी चाहिए। सुधारक भले मानें कि अस्पृश्यता एक बुरी वस्तु है। लेकिन उन्हें कट्टर सनातनियोंका अपने निजी मन्दिरोंमें अपनी मर्जीके मुताबिक पूजा करनेका अधिकार नहीं छीनना चाहिए।
>
> अस्पृश्यता-निवारण विधेयक और मन्दिर-प्रवेश विधेयक अगर पास हो गये, तो सनातनी हिन्दुओंका यह अधिकार क्या मारा न जायेगा? मान लीजिए कि कोई सनातनी हिन्दू एक मन्दिर बनवाता है और उसमें तमाम सवर्ण हिन्दुओंको जाने एवं पूजा करने की सुविधा दे देता है, पर हरिजनोंको, जिन्हें वह अछूत मानता है, मन्दिरके अन्दर जानेकी मनाही कर देता है। अस्पृश्यता-निवारण विधेयकके अनुसार उसकी यह इच्छा कि हरिजन मन्दिरमें न आयें, पूरी न होगी; क्योंकि कानून किसी भी मनुष्यको अस्पृश्य नहीं मानेगा। और

मन्दिर-प्रवेश विधेयकके अनुसार अगर उच्च-वर्ण हिन्दुओंका बहुमत हरिजनोंको मन्दिरमें ले जाना चाहता है, तो वह मन्दिर-निर्माता या दाताकी इच्छाको ठुकरा सकेगा। यह तो प्रत्यक्ष ही उनके प्रति अन्याय होगा।

मैं मानता हूँ कि सुधारकोंमें ऐसे बहुत-से होंगे, जो सनातनी हिन्दुओं को उनके धार्मिक कृत्योंकी उचित सुविधाओंसे वंचित कर देना ठीक न समझेंगे। ऐसे उदार-हृदय सुधारकोंको इन विधेयकोंका समर्थन नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करनेसे, जैसाकि ऊपर कहा है, सनातनियोंके जायज अधिकार मारे जायेंगे। अगर दोमें से कोई भी पक्ष दूसरेके उचित हक छीन लेनेका प्रयत्न न करे, तो मतभेदके कारण कटुता पैदा होनेका तो कोई कारण ही नहीं होना चाहिए।

जो मन्दिर आज मौजूद हैं, उनके विषयमें इन तीन पक्षोंके हितपर विचार करना आवश्यक है — (१) सुधारक, (२) सनातनी और (३) हरिजन। आजकल हरिजनोंको मन्दिरोंमें पूजा करनेका अधिकार नहीं है। सुधारक कहते हैं कि उन्हें मन्दिरोंमें देव-दर्शन तथा पूजन करने देना चाहिए। सनातनियोंका विश्वास है कि अगर हरिजनोंका मन्दिर-प्रवेश कराया गया, तो वे खुद विधि-पूर्वक पूजा न कर सकेंगे। हो सकता है कि सनातनियोंकी यह मान्यता गलत हो, पर वे ऐसा मानते जरूर हैं। जो अधिकार वे एक जमानेसे भोगते आ रहे हैं, अगर वह उनसे छीन लिया गया, तो स्वभावतः उन्हें यह बात बहुत खटकेगी। सुधारकी दृष्टिसे ऐसे नये मन्दिर बनवा देना क्या सबसे अधिक शान्तिपूर्ण मार्ग न होगा जहाँ सुधारक और हरिजन एक साथ पूजा कर सकें? सुधारक चाहें तो पुराने मन्दिरोंको त्याग दें। अगर, बकौल सुधारकोंके, देशका बहुमत अस्पृश्यताके विरुद्ध है, तो फिर सनातनियोंके पुराने मन्दिर सूने पड़े रहेंगे और इस प्रकार सुधारक दिखा सकेंगे कि अस्पृश्यता देशसे विदा हो गई है। गांधीजी अपने दौरेमें लाखों रुपये जमा कर रहे हैं, इसलिए वे चाहें तो सुधारकों तथा हरिजनोंके लिए नये मन्दिर बनवानेमें उन्हें कोई कठिनाई न पड़ेगी। हिन्दू-समाजके अन्दर फूट पैदा होनेकी जो सम्भावना है, वह इस प्रकार पैसा खर्च करनेसे रोकी जा सकती है।

अभी पिछले दिनोंकी बात है कि त्रिचिनापल्लीमें अपनेको उदार सनातनी बतलानेवाले एक वकील साहब मेरे पास एक लिखित वक्तव्य लाये थे, जिसमें से मैं एक अंश नीचे देता हूँ:

हमारा खयाल है कि फिलहाल मन्दिर-प्रवेशकी बात तो छोड़ ही दी जाये और तमाम हिन्दुओंकी — सनातनियोंकी भी — साधन-सम्पत्ति एकत्र करके हिन्दू-धर्मकी परम्पराओंके अनुसार हरिजनोंके आर्थिक, नैतिक, शिक्षा-विषयक एवं आध्यात्मिक कल्याणके लिए प्रयत्न किया जाये, जिससे हरिजन हर तरहसे

सवर्णोंकी बराबरीके हो जायें; और यदि हम उनके साथ अपने बन्धु-बान्धवोंकी तरह बरताव करने लगेंगे, तो फिर अस्पृश्यताका अभिशाप दूर ही हुआ समझिए। कोई भी निष्पक्ष मनुष्य स्पष्ट देख सकता है कि हरिजन जिन परम्परागत सामाजिक निर्योग्यताओंसे जकड़े हुए हैं, उन्हें हटाना नितान्त आवश्यक है। इस सुधारको एक क्रमसे धीरे-धीरे आगे बढ़ाना चाहिए। जिस तरह हम अपने घरोंमें यूरोपीयों और मुसलमानोंको आने देते हैं, उसी तरह हमें अपने यहाँ हरिजनोंको भी आने देना चाहिए। जो रोजगार-धन्धे सवर्णोंके लिए खुले हुए हैं, उन सबको करनेकी हरिजनोंको भी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। उन्हें इन बातोंमें अलग नहीं रखना चाहिए, और नागरिकताके मौलिक अधिकारोंपर दृढ़ रहनेकी भी उन्हें शिक्षा देनी चाहिए। सम्भव है कि इस तरह पचास वर्षके अन्दर हमारे हरिजन भाइयोंको मन्दिरोंमें प्रवेश करनेका हक मिल जाये।

मैंने बतौर नमूनेके ऊपर ये दो वक्तव्य दिये हैं। यह तो दोनों ही चाहते हैं कि मन्दिर-प्रवेशकी बात मुल्तवी कर दी जाये। पहले पत्रमें 'दोनों पक्षों'से एक-दूसरेके प्रति सहिष्णुतासे काम लेनेका अनुरोध किया गया है, मगर वास्तवमें यह आग्रह रखा गया है कि सिवा एकके और सब लोग यदि हरिजनोंको मन्दिरमें ले जानेके लिए तैयार हों, तो भी वह अकेला एक सनातनी उनके प्रवेशको रुकवा सकता है। स्पष्ट शब्दोंमें कहा जाये, तो यह बुरेसे-बुरे प्रकारका बल-प्रयोग है, क्योंकि इसमें एक ही मनुष्य बहुमतकी इच्छाको अपनी मर्जीके अनुकूल मोड़ना चाहता है। इतिहास तो यही कहता है कि सिवा जालिमोंके अपनी इच्छाको जबरदस्ती दूसरोंसे मनवानेमें कोई और सफल नहीं हुआ; और वे जालिम भी दूसरोंसे ऐसा करानेमें खुद जड़-मूलसे मिट गये। सुधारकोंकी तरफसे मैं कहूँ, तो उनकी स्थिति तो साफ है। जबतक मन्दिरमें जानेवाला खासा अच्छा बहुमत हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके पक्षमें न हो, तब तक सुधारक एक भी मन्दिर नहीं खुलवाना चाहते। इसलिए दबाव या बल-प्रयोगका तो कोई सवाल ही नहीं है। हाँ, अगर बहुत बड़े बहुमतकी इच्छाके अमलको भी बल-प्रयोगका नाम दे दिया जाये तो बात और है। बहुमतसे यह अपेक्षा तो की जा सकती है, बल्कि की ही जानी चाहिए, कि वह अल्पमतके प्रति सहिष्णुताका भाव रखे और अल्पमत जो-कुछ चाहता है उसके लिए भी थोड़ी-बहुत गुँजाइश कर दे। यह कैसे किया जा सकता है, सो मैं 'हरिजन'में पहले ही बता चुका हूँ। परन्तु अल्पमतवाले अपने लिए मामूली गुंजाइश नहीं चाहते; उनका तो आग्रह है कि आज जो स्थिति है, वही अक्षुण्ण रहनी चाहिए। इसका अर्थ तो यही हुआ कि अंधकूपमें ही पड़े-पड़े मर जाओ। इसीलिए मैं कहता रहता हूँ कि या तो हम अस्पृश्यताको नष्ट करें, या फिर कल सूर्योदय होनेके समान यह भी निश्चित है कि अस्पृश्यता हमारा हनन कर देगी।

पारस्परिक कटुता या कलहका तो कोई प्रश्न ही नहीं है। सनातनियोंके विरोधके कारण सुधारकोंके दिलमें कोई कटुता नहीं है; क्योंकि वे यह मानते हैं

कि वे स्वयं जिस खालिस ईमानदारीका दावा करते हैं, वही ईमानदारी दूसरे पक्षमें भी है। सुधारक आदर्श सहिष्णुता दिखा रहे हैं। सुधारके पक्षमें स्पष्ट बहुमत होते हुए भी जहाँ एक खासा विभाजन दिखाई पड़ता है, वहाँ वे मन्दिर खुलवाने के कामसे पीछे हट जाते हैं। इसलिए, सुधारकोंका काम तो लोकमतको अपने पक्षमें करनेका ही है। और यदि सनातनी भाई सुधारकोंके इस निर्विवाद अधिकारको कबूल कर लें, तो कलहकी तनिक भी सम्भावना न रहे।

जहाँ पहले पत्रका लेखक सनातनियोंसे कुछ भी करनेको नहीं कहता, सिर्फ सुधारकोंसे ही हर चीज कराना चाहता है, वहाँ परवर्ती वक्तव्यका लेखक यह कबूल करता है कि एक-न-एक दिन तो हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार खोलने ही पड़ेंगे। पर उसका कहना है कि अभी बाट जोहते रहो। लेखकका यह भी प्रस्ताव है कि हरिजनोंके हितकी दूसरी तमाम बातोंमें दोनों पक्षोंवाले मिलकर काम करें। मैं इसमें इतना ही संशोधन करूँगा कि मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न बिलकुल मुल्तवी तो नहीं किया जाना चाहिए, पर यह आन्दोलन सनातनियोंकी भावनाओंका पूरा-पूरा खयाल रखकर चलाया जाये। अगर सनातनी विरोध करनेकी बजाय — और कभी-कभी तो यह विरोध बहुत नासमझी-भरा होता है — इस बहुत ही नरम दृष्टिकोणको स्वीकार कर लें और दूसरी तमाम बातोंमें सुधारकोंके साथ मिलकर काम करें, तो यह सारा आन्दोलन अत्यन्त विवेक और सभ्यताके साथ बिना किसीका दिल दुखाये चलाया जा सकता है।

अब, प्रस्तुत विधेयकोंके सम्बन्धमें सुधारके मार्गमें आज जो बाधा बताई जाती है उसे हटानेके लिए इन विधेयकोंकी जरूरत है। यदि यह आग्रह न हो कि चाहे जितने बड़े बहुमतके विरुद्ध एक ही आदमीकी मर्जीके मुताबिक काम हो, तो इन विधेयकोंमें किसी भी तरहका कोई बल-प्रयोग नहीं है। और हिन्दू-समाजके बहुमतके विरोधके सामने इन विधेयकोंके पास किये जानेकी मेरी तनिक भी इच्छा नहीं है। मैं तबतक बाट जोहनेको तैयार हूँ, जबतक मौजूदा या भविष्यकी किसी भी विधान-सभा अथवा विधान-सभाओंके हिन्दू सदस्योंका बहुमत सुधारके लिए, जो कबका सम्पन्न हो चुकना चाहिए था, तैयार न होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-२-१९३४

२११. भाषण : विराजपेटमें[1]

२३ फरवरी, १९३४

सुन्दर और शुद्ध हिन्दुस्तानीमें मानपत्र प्राप्त करके मुझे सुखद आश्चर्य हुआ। मैं उर्दू और उर्दू-साहित्यका प्रेमी हूँ। लेकिन, मैंने देखा है कि दक्षिणमें उर्दूका कोई विद्वान् मुश्किलसे ही मिलता है। मैंने यह आशा नहीं की थी कि यहाँ कुर्गमें अच्छी उर्दू लिखी और बोली जाती होगी।

इस मानपत्रमें मुझसे कहा गया है कि जिस प्रकार यहाँके हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच एकता है उसी प्रकार सारे हिन्दुस्तानमें उनके बीच एकता स्थापित करनेके लिए जो-कुछ सम्भव है, मैं करूँ। जो चन्द चीजें मुझे अपने प्राणोंके समान प्यारी हैं उनमें हिन्दू-मुस्लिम एकता, अर्थात् भारतकी समस्त जातियोंके बीच एकताकी स्थापना भी एक है। और जैसाकि मैंने कुछ वर्ष पहले दिल्लीमें किया था, अवसर आने और अन्तःप्रेरणा होनेपर मैं इस उद्देश्यके लिए फिर अपनी जानकी बाजी लगा देनेको तैयार रहूँगा। मेरा जीवन एक अविभाज्य वस्तु है और मेरी सारी प्रवृत्तियाँ परस्पर एक-दूसरीसे सम्बद्ध हैं; और उन तमाम प्रवृत्तियोंका स्रोत मनुष्य-जातिके प्रति मेरा असीम प्रेम ही है। सभी जीवोंकी एकताको व्यवहारमें साकार करनेका प्रयत्न करते हुए, मैं यह देखकर सुखी नहीं रह सकता कि विभिन्न समुदाय आपसमें झगड़ें या मनुष्य मनुष्यका शोषण-दमन करे। इसलिए इस मानपत्रमें इस बातकी स्वीकृति देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई कि यह हरिजन-आन्दोलन मानव-मात्रकी तात्त्विक एकता को साकार करने का आन्दोलन है। और यदि मैंने अपने-आपको अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनमें मन-प्राणसे लगा दिया है तो यह इसीलिए कि अस्पृश्यता उस सपनेको साकार करनेके मार्गकी सबसे बड़ी बाधा है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-३-१९३४

१. चन्द्रशंकर शुक्लके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२१२. भाषण : सार्वजनिक सभा, मरकारामें[1]

२३ फरवरी, १९३४

आपके सुन्दर प्रान्तका मेरा यह बहुत ही अल्पकालिक दौरा इस शामको समाप्त हो रहा है। यद्यपि ये दो दिन या कहिए कि लगभग दो दिन मुझे काफी श्रम पड़ा, किन्तु ये मुझे बहुत प्रिय लगे हैं — केवल इसीलिए नहीं कि आपका यह प्रदेश सुन्दर दृश्यावलीसे भरा पड़ा है, बल्कि इसलिए भी कि आप लोगोंपर अस्पृश्यताका असर बहुत कम है। अपने मानपत्रमें आपने केवल हरिजनोंसे सम्बन्धित तथ्य-आँकड़े ही दिये हैं। आपने जिस तरहसे अपना मानपत्र तैयार किया है वह मुझे बहुत जँचा। यह तो वास्तवमें एक रिपोर्ट ही है। इसमें मुझे हरिजनोंके बारेमें ज्ञानवर्धक और विस्तृत जानकारी दी गई है। यह दुःखकी बात है कि यहाँके हरिजन प्रतिदिन भूमिहीन होते जा रहे हैं। मैं देखता हूँ कि अब भी उनके पास जो थोड़ी-बहुत जमीन है वह परती पड़ी हुई है। स्थानीय हरिजन संघका कर्त्तव्य है कि वह परिस्थितिकी बारीकीसे जाँच करे और हरिजनोंके हाथोंसे जमीन न निकलने देनेके लिए जो-कुछ सम्भव हो वह करे। हो सकता है कि इसके ऐसे आर्थिक कारण हों जो सबपर लागू होते हैं और जिनपर आपका कोई बस न चले। इसलिए हरिजन सेवक संघके लिए यह आवश्यक है कि वह उन हरिजनोंकी आर्थिक स्थिति मालूम करे जो भूमिहीन हो गये हैं। हो सकता है, जाँचसे यह पता चले कि अपनी जमीन खोनेके बावजूद वे पहलेसे ज्यादा गरीब नहीं हुए हैं। लेकिन अगर बात ऐसी न हो — और मुझे लगता है कि शायद नहीं ही है — तो यह काम हरिजन सेवक संघका होगा कि वह उनकी आर्थिक स्थिति सुधारनेके लिए आवश्यक उपाय करे।

लेकिन, मेरे विचारसे तो जहाँतक हरिजनोंका सम्बन्ध है, आपके सामने सबसे बड़ा प्रश्न उनके मन्दिर-प्रवेशका है। यह बात बड़ी असह्य लगती है कि यहाँका लोकमत हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार खुलवानेमें असमर्थ सिद्ध हो। देखता हूँ कि हरिजनोंके विरुद्ध जैसे पूर्वग्रह मैदानी इलाकोंके लोगोंके मनमें दिखाई देते हैं वैसे निश्चित पूर्वग्रह आपके मनमें नहीं हैं। इसलिए जिन कार्यकर्त्ताओंके हृदयोंमें हरिजन-कार्य करनेकी लालसा है उन सबसे मैं इस समस्याके समाधानमें लग जानेके लिए कहूँगा; और मैं चाहूँगा कि आप इस क्षेत्रमें आगे बढ़कर सारे भारतको रास्ता दिखानेकी अपने मनमें आशा सँजोयें।

१. २५ फरवरी, १९३४ के **हिन्दू**के अनुसार यह सभा शामके साढ़े छः बजे हुई थी, जिसमें लगभग १५,००० लोग उपस्थित थे। सभाके अन्तमें बिहारके भूकम्प-पीड़ितोंकी सहायताके लिए चन्दा एकत्र किया गया था।

आपके सामने मैं बिहारके विपद्ग्रस्त लोगोंका भी जिक्र करना चाहूँगा। आप लोग पूरे भारतसे कमोबेश अलग-थलग रह रहे हैं। आशा है, इससे आपके हृदय शुष्क नहीं हो गये होंगे। आखिर आप पूरे भारतका एक अंश ही तो हैं, और इसलिए सुदूर उत्तरमें भारतीयोंपर आ पड़े कष्टोंको शेष भारतकी तरह आपको भी अपना मानना चाहिए। आपको मालूम होना चाहिए कि बिहार एक पवित्र भूमि है, क्योंकि सीता और गौतम बुद्ध दोनोंका जन्म वहीं हुआ था। हमारे बिहारवासी देशभाई मानते हैं कि उस भूमिका कण-कण पवित्र है। और मुझ-जैसे व्यक्तिको तो लगभग यही लगेगा कि ईश्वरने अस्पृश्यताके पापकी ताड़ना देनेके लिए उस पवित्र भूमिको चुना है। मेरा सोचना गलत हो तो भी कोई बात नहीं। हमें इस विचारको मनमें रखकर अपने-आपको शुद्ध बनानेके लिए और अधिक प्रयत्न करना चाहिए। आखिरकार यह तो मानना ही होगा कि यदि हम यह अनुभव करना चाहते हैं कि समस्त मानव-समाज एक है तो दुनियाके किसी भी हिस्सेके किसी भी व्यक्तिके दु:खमें हिस्सा बँटाना ही चाहिए। तब फिर जिन्हें हम अपने सगे मानते हैं उनके सम्बन्धमें हमारे लिए ऐसा करना कितना अधिक आवश्यक हो जाता है। और मेरे लिए अस्पृश्यता-निवारणके फलितार्थोंमें यह तो एक है ही। यदि हम मानते हैं कि मानव-मात्र स्पृश्य हैं तो फिर यह आवश्यक हो जाता है कि हम उनके दु:खमें हिस्सा बँटायें। इसलिए जबतक मैं इन चीजोंकी नीलामी करता हूँ तबतक स्वयंसेवक आपके बीच जाकर चन्दा इकट्ठा करेंगे और आप लोग जितना दे सकते हैं, देंगे। ऐसा नहीं है कि इस तरह आप उन विपद्ग्रस्त लोगोंकी बहुत अधिक सहायता कर पायेंगे। लेकिन बिहारपर जितनी बड़ी विपत्ति आ पड़ी है, उसको देखते हुए एक-एक पैसेका दान उन विपद्ग्रस्त जनोंके प्रति आपकी सहानुभूतिका ठोस प्रमाण होगा और क्या हम यह नहीं जानते कि दु:खमें पड़े व्यक्तिको जितनी राहत आर्थिक सहायतासे मिलती है, अकसर उससे बहुत अधिक राहत किसीकी सहानुभूति प्राप्त करके मिलती है?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-३-१९३४

२१३. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२४ फरवरी, १९३४

चि० मणिलाल और सुशीला,

'इंडियन ओपिनियन' में थम्बी नायडूके बारेमें प्रकाशित लेखके सम्बन्धमें कुमारी श्लेसिनने कड़ी शिकायत की है। और उनकी शिकायत सही है। थम्बीकी जो आलोचना की गई है वह सर्वथा अनुचित है। अंग्रेजीमें एक कहावत है कि दिवंगत लोगोंके बारेमें यदि कुछ कहा जाये तो अच्छा ही कहा जाये। इसके अतिरिक्त उनका यह भी कहना है कि थम्बीकी जो आलोचना की गई है उसमें सचाई नहीं है। तू कुमारी श्लेसिनको पत्र लिख देना और मुझे भी समझाना। थम्बीकी यादगार बनाये रखनेके लिए जो कदम उठाये जा सकें, सो उठाना।

आज हम लोग कुर्गमें हैं। कुर्ग, मैसूरकी पिछली ओर, एक छोटा-सा पहाड़ी प्रदेश है। बहुत ही रमणीय और छोटा-सा इलाका है। मुश्किलसे डेढ़ लाखकी आबादी होगी। अब सवेरेके सवा छः बजे हैं। मैं पौने तीन बजे उठ गया था। सात बजे यहाँसे उतरकर मंगलोरके लिए रवाना होना है।

९ तारीखको हमें हैदराबादसे बिहार जाना है। वहाँ कबतक रहना होगा, यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता। आशा है, बिहारके लिए चन्दा उगाहने में सोराब तुम्हारी मदद कर रहे होंगे।

आज इतना ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१६) से।

२१४. भाषण : सार्वजनिक सभा, पुत्तूरमें[1]

२४ फरवरी, १९३४

मित्रो,

आपके ताल्लुके में आ पानेकी मुझे बहुत खुशी है। इन अनेक मानपत्रों, थैलियों और आभूषणोंके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। कर्नाटक तो सदासे बहुत-सारे आभूषणों और थैलियोंसे मेरा स्वागत करनेका अभ्यस्त रहा है। मैं नहीं समझता कि आभूषण-दानमें कोई भी प्रान्त कर्नाटकको मात दे पाया है। मेरा खयाल है, आपने शुरुआत अच्छी की है। अपने प्रमुख मानपत्रमें आपने मुझे बताया है कि आपके यहाँ मलेरियाका प्रकोप होने और आम मन्दीकी हालतके कारण आप अच्छी-खासी थैली नहीं भेंट कर पाये हैं। मुझे नहीं मालूम कि अच्छी-खासी थैली आप किसे कहते हैं। किन्तु, आपको यह जरूर बता सकता हूँ कि आपने जो थैली दी है वह मेरे दृष्टिकोणसे अच्छी-खासी ही है। मैं जानता हूँ कि आप लोग कोई बहुत धनी नहीं हैं और आपने कहा है कि आप अच्छी-खासी थैली तो मुझे भेंट कर नहीं सकते, इसलिए आप अपने हृदयकी समस्त भावनाएँ मेरे चरणोंपर उँड़ेल देना चाहेंगे। मैं जानता हूँ कि ये शब्द आपने शिष्टतावश कहे हैं। लेकिन, यदि अपने हृदयकी भावनाएँ मेरे चरणोंमें उड़ेलनेके बदले आप उन्हें मेरे मस्तकपर उड़ेलेंगे तो मुझे पूरा-पूरा सन्तोष प्राप्त होगा। अगर आपके हृदयकी भावनाएँ मेरे चरणोंमें पड़ी रहती हैं तो मैं उनका कोई उपयोग नहीं कर सकूँगा। लेकिन यदि आप उनसे मेरे मस्तकको सिक्त करेंगे तो मुझे किसी थैली और आभूषणकी भी जरूरत नहीं रह जायेगी और उनका मैं पूरा-पूरा उपयोग कर सकूँगा। मैं तो आपकी कही गई बातोंको आपके हृदयकी सच्ची भावना मान लेता हूँ और इसलिए आपके हृदयको अपने

१. यह सभा ट्रैवलर्स बँगलोमें हुई थी और इसमें चार हजारसे अधिक लोग उपस्थित थे।

साथ चुराये लिये जाता हूँ। सो अब अगर आप हरिजन-सेवाकी उपेक्षा करेंगे तो मैं अपने-आपको आपसे जवाबतलब करनेका हकदार मानूँगा। हरिजन-सेवाका मार्ग बहुत सीधा-सादा है। आप सब, स्त्री, पुरुष और बच्चे सभी, हरिजनोंके साथ अपने सगे भाई-बहनोंकी तरह व्यवहार कर सकते हैं। और मेरा खयाल है, इतना कहकर मैंने आपको आपके करने लायक सब-कुछ बता दिया है।

मैं तीसरे पहर हरिजन चेरीमें जानेवाला था, लेकिन चूंकि हम निर्धारित समयसे आधा घंटे पहले ही यहाँ पहुँच गये, इसलिए हमें पहले ही चेरी दिखला दी गई। यदि हम उनके साथ अपने भाई-बहनोंकी तरह व्यवहार करें तो निश्चय ही हम उन्हें मुख्य बस्तीसे विच्छिन्न उस तरहके स्थानमें उपेक्षित न रहने देंगे जिस तरहके स्थानमें यहाँ हरिजन लोग रह रहे हैं। और एक खाई उन्हें आपसे बिलकुल अलग कर देती है, यह आपके लिए कोई गर्वकी बात नहीं है। इस तरह तो बरसातके मौसममें हरिजन चेरीमें पहुँचना लगभग अशक्य हो जाता होगा। चेरीमें जाकर मैंने क्या देखा? बच्चे बिलकुल ही मैली-कुचैली हालतमें थे। पता नहीं, उनके बाल कभी साफ किये गये होंगे या नहीं। तो इन सभी बहनों और भाइयोंसे, जिनके हृदयमें हरिजन-सेवाकी आकांक्षा है, मैं यही कहता हूँ कि आप सब चेरीमें जाकर उसकी कायापलट कीजिए। उसमें आपको कुछ खर्च नहीं करना पड़ेगा, सिर्फ थोड़ा-सा समय ही देना पड़ेगा। और यह आपके इस कथन की कि आपने अपना हृदय इस कामको समर्पित कर दिया है, एक सही कसौटी होगी।

और अन्तमें, मुझे आशा है कि आपने बिहारके पीड़ित जनोंके लिए कोष एकत्र किया होगा। मैं नहीं समझता कि बिहारकी विपत्तिका आपके सामने वर्णन करनेकी मुझे जरूरत है। लेकिन, आप इतना जान लीजिए कि बिहारका यह कष्ट अभी कुछ समय जारी रहनेवाला है। इसलिए, जैसाकि राजेन्द्रबाबूने सुझाया है, आप बिहारके लिए किस्तोंमें भी दान दे सकते हैं। मैं ९ मार्चको बिहारको प्रस्थान करने-वाला हूँ। उस समयतक मुझे इस स्थितिमें होना चाहिए कि मैं बिहारियोंसे कह सकूँ कि उनके दुःखमें आप भी हिस्सा बँटा रहे हैं। अब मुझे जल्दी ही प्रस्थान करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-२-१९३४

२१५. भाषण : बँटवालमें

२४ फरवरी, १९३४

इतनी-भारी थैलियाँ और उपहार देनेवाले आप लोगोंको देनेको मेरे पास वास्तव में कोई सन्देश[1] नहीं है। लेकिन यदि आप संदेश ही चाहते हैं तो आपको यह समझ लेना चाहिए कि थैलियाँ और उपहार देने-मात्रसे आपका कर्त्तव्य पूरा नहीं हो गया। वास्तवमें आपके कर्त्तव्यका आरम्भ इस बातके बोधसे होता है कि यह आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है। इसलिए मैं आपसे आशा करता हूँ कि आप अपने-आपको अस्पृश्यताके पापसे मुक्त कर लेंगे। और इसका मतलब है कि आप ऊँच-नीचके भेद-भावको भूल जायेंगे। किसी भी आदमीको अपनेसे तुच्छ मानना उत्थानका नहीं बल्कि नैतिक पतनका लक्षण है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-३-१९३४

२१६. भाषण : ज्ञानोदय समाज, मंगलोरमें[2]

२४ फरवरी, १९३४

आपकी थैली और मानपत्रके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मुझे खुशी है कि आपने यह बात साफ-साफ स्वीकार कर ली है कि मछुओंके बीच मद्यपानकी बुराई विद्यमान है। मैं खुद मछुओंके ही एक गाँवका हूँ। इसलिए मैं जानता हूँ कि मछुए क्या करते हैं। और मेरा खयाल है, उन्हींकी आदतके आधारपर यह मुहावरा बना है कि "वह मछलीकी तरह 'पीता' है।" लेकिन मुझे यह देखकर खुशी होती है कि आपकी सभा मद्यपानकी बुराईको मिटानेकी कोशिशमें लगी हुई है। मुझे यह जानकर हर्ष हुआ कि आपके प्रयत्न किसी हदतक सफल भी हो रहे हैं। मद्य-निषेधके लिए मैंने खुद काम किया है, इसलिए मैं जानता हूँ कि मद्यपानके अभिशापको मिटाना कितना कठिन है। लेकिन मुझे आशा है कि आप सिर्फ इसी कारणसे अपने प्रयत्न शिथिल न कर देंगे कि आपको शायद पूर्ण सफलता मिलती न दिखे। आपको

१. कताई-यज्ञमें काता गया और हाथसे बुना गया कपड़ा प्राप्त हो जानेपर गांधीजी से एक संदेश देनेको प्रार्थना की गई थी।

२. मछुओंकी एक जाति मोघवीरोंके बीच मद्य-निषेधके लिए काम करनेवाली संस्था ज्ञानोदय समाजने गांधीजी को एक मानपत्र भेंट किया था। इस भाषणकी रिपोर्ट ९-३-१९३४ के **हरिजन**में भी छपी थी।

मैं एक सुझाव देना चाहूँगा कि आपको सिर्फ लोगोंसे मद्यपान न करनेका अनुरोध करके ही सन्तुष्ट न हो जाना चाहिए। मैंने देखा है कि बहुत-से लोग सिर्फ इसलिए पीते हैं कि उनके पास करनेको कुछ और नहीं होता। इसलिए आपको तरह-तरहके उपाय ढूंढ़ने चाहिए, जिनसे आप उनके मन और हाथ-पैरोंको व्यस्त रख सकें। आपको इसका अध्ययन करना चाहिए कि मद्यपानकी आदतसे निबटनेके लिए दूसरे लोगोंने क्या-क्या किया है।

मछुओंके लिए नमककी जरूरतके बारेमें आपने जो कहा है, वह बिलकुल सच है। मुझे पूरी आशा है कि एक-न-एक दिन हम इस समस्याको हल कर ही लेंगे। मैं इस सम्बन्धमें तनिक भी निराश नहीं हूँ। यह एक मानव-कल्याणका कार्य है और अगर समुचित प्रयत्न किया गया तो ऐसा कार्य कभी विफल नहीं हुआ है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-२-१९३४

२१७. भाषण : महिलाओंकी सभा, मंगलोरमें[1]

२४ फरवरी, १९३४

उत्तरमें गांधीजी ने कहा कि यह कोई पहला अवसर नहीं है जब मैं मंगलोरकी महिलाओंकी सभामें आया हूँ। मुझे कमसे-कम ऐसे दो अवसर तो याद हैं ही जब अपने आभूषण भेंट करते-करते आपने मुझे थका दिया था। अब मुझे यह देखना है कि हरिजनोंके लिए आप क्या करती हैं। इन दो-तीन सौ रुपयोंसे तो मैं सन्तुष्ट होनेवाला नहीं हूँ। अगर हिन्दुओंके हृदयोंसे अस्पृश्यताका कलंक मिटाया जाना है तो उस काममें स्त्रियोंका योग अपेक्षाकृत बड़ा होना चाहिए। यह आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है और ऐसे काममें स्त्रियाँ सदा ही पुरुषोंसे आगे रहती हैं; क्योंकि त्याग-तपस्याकी अपनी अधिक क्षमताके कारण वे दुनियामें हर जगह धर्मकी रक्षाका कार्य करती आई हैं। इसलिए मुझे आशा है कि स्त्रियाँ हरिजन-आन्दोलनमें सबसे आगे रहेंगी और मेरी सभी आशाएँ पूरी करेंगी। मैं नहीं समझता कि यहाँ ऐसी एक भी माता उपस्थित होगी जो अपने बच्चोंके बीच कोई भेद बरतती होगी। अगर मिट्टीका बना मनुष्य ऐसे भेद-भावका दोषी कदाचित् ही होता है तो फिर ईश्वर, जो हम सबका पिता है, एक वर्गके लोगोंको स्पृश्य और दूसरेको अस्पृश्य कैसे बना सकता है? मुझे इस सम्बन्धमें कोई सन्देह नहीं है कि शास्त्रोंसे अस्पृश्यताका औचित्य किसी भी तरह सिद्ध नहीं होता। धर्म-ग्रन्थ अधर्मकी शिक्षा कैसे दे सकता है? अद्वैत वेदोंका मूल सिद्धान्त है और अद्वैत मनुष्य-मनुष्यके बीच किसी भी प्रकारका

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। यह सभा राष्ट्रीय बालिका विद्यालयमें हुई थी और इसमें लगभग १५ हजार स्त्रियाँ उपस्थित थीं।

भेद स्वीकार नहीं करता। इसलिए मुझे आशा है कि आप सब किसीको अस्पृश्य नहीं मानेंगी और हरिजनोंको अपने सगे भाई-बहन समझेंगी। अभी मैं श्रीयुत रंगाराव का हरिजन स्कूल देखने गया था। अगर मुझे पहले ही नहीं बता दिया गया होता कि वहाँ हरिजन बच्चे पढ़ते हैं तो मैं कभी नहीं जान पाता कि वे हरिजन हैं। क्योंकि उन बच्चों, और अभी मैं जिनको अपने सामने देख रहा हूँ, उनमें मुझे कोई अन्तर नहीं दिखाई देता। वहाँ हरिजन बालकोंने उतना ही मधुर भजन गाया, जितना कि यहाँकी बालिकाओंने। किसीको अपनेसे नीच समझना घोर पाप है और ईश्वरसे मैं यही प्रार्थना करता हूँ कि आप इस पापकी भागी न बनेंगी। इसके बाद गांधीजी ने बिहारके विपद्ग्रस्त लोगोंकी सहायताके लिए अपील की। इस प्रसंगमें उन्होंने कहा कि जैसा बिहारी लोग कहते हैं, वहाँकी भूमि सीता और बुद्धके चरणोंके स्पर्शसे पावन बनी है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-३-१९३४

२१८. भाषण: सार्वजनिक सभा, मंगलोरमें[1]

२४ फरवरी, १९३४

मित्रो,

इन मानपत्रों, थैली और विभिन्न उपहारोंके लिए, जिनमें कुछ मंजूषाएँ भी हैं, मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। मैं आपके लिए कोई अजनबी नहीं हूँ और न आप मेरे लिए। इसलिए थैली भेंट करनेवालों के इस कथनका अनुमोदन करते हुए मुझे कोई हिचक नहीं हो रही है कि यह थैली बहुत ही छोटी है। लेकिन मैं आपकी कठिनाई समझता हूँ। मुसीबतमें पड़े बिहारको राहत देनेके लिए आप एक बड़ी राशि पहले ही भेज चुके हैं, और सारे भारत, बल्कि सारी दुनियामें जो आम मन्दी आई हुई है उसके असरसे आप भी मुक्त नहीं हैं। इसलिए आपकी थैलीके छोटी होनेपर मुझे कोई आश्चर्य नहीं होता। मैं जानता हूँ कि अस्पृश्यता-निवारणका काम ऐसा नहीं है जो केवल थैलियों — चाहे वे कितनी भी बड़ी हों — के बलपर आगे बढ़ाया जा सकता हो। यदि हिन्दुओंके हृदय नहीं बदलते तो चन्द लखपतियों द्वारा करोड़ों रुपये दे देनेपर भी अस्पृश्यताका कलंक मिट नहीं सकता। इसलिए जैसाकि मैंने कई सभाओंमें कहा है, हरिजन-कार्यके लिए मिलनेवाले प्रत्येक रुपयेके साथ अगर दाताका हृदय-परिवर्तन भी नहीं होता तो उसका कोई मूल्य नहीं है। मुझे यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि पूरे मध्य प्रान्त, आन्ध्र देश, मलाबार और तमिलनाडुमें जहाँ-कहीं

१. इस भाषणका एक सार-संक्षेप ९-३-१९३४ के **हरिजन**में प्रकाशित वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) में भी छपा था। सभामें लगभग १०,००० लोग उपस्थित थे। १,००१ रुपयेकी एक थैली और कई मानपत्र गांधीजी को भेंट किये गये।

भी मैं गया हूँ, दसियों हजार लोगोंने अपनी-अपनी सामर्थ्यके अनुसार दान दिया है, यद्यपि उन्हें मैं साफ-साफ आगाह कर देता था कि आप जो भी पैसा देंगे, वह आपके अस्पृश्यतासे छुटकारा पानेके संकल्पका द्योतक माना जायेगा। इसलिए नगर-पालिकाके मानपत्रमें मुझे यह पढ़कर अतीव हर्षका अनुभव हो रहा है कि अस्पृश्यता के सम्बन्धमें मंगलोरके नागरिकोंके हृदयोंमें परिवर्तन हो रहा है। और उस मान-पत्रमें यह भी ठीक ही कहा गया है कि जबतक हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार नहीं खुल जाते तबतक अस्पृश्यता-निवारणका कार्य पूर्ण हुआ नहीं माना जा सकता। यदि हरिजन हिन्दू-समाजके अभिन्न अंग हैं तो मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें उन्हें भी वही अधिकार और सुविधाएँ होनी चाहिए जिनका उपभोग सवर्ण हिन्दू करते हैं। जबतक मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें उन्हें सवर्ण हिन्दुओंके बराबर अधिकार और सुविधाएँ नहीं दी जातीं तबतक उनकी आर्थिक स्थितिमें चाहे जितना सुधार किया जाये, वह उन्हें सवर्ण हिन्दुओंकी बराबरीका दर्जा नहीं दिला सकता। लेकिन मन्दिर-प्रवेश कोई ऐसा सवाल नहीं है जिसके सम्बन्धमें जोर-जबरदस्ती की जा सकती हो। यह तो सवर्ण हिन्दुओंके मतको अनुकूल दिशा देकर ही सम्पादित किया जा सकता है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप सवर्ण हिन्दुओंके मतको सही दिशामें मोड़नेके लिए सतत प्रयत्नशील रहेंगे। आपने मुझे यह बताकर कि बिहारके कष्ट-पीड़ित जनोंके प्रति आप अपने कर्त्तव्यको समझ गये हैं, मेरा काफी समय बचा दिया है। लेकिन मैं चाहूँगा कि स्वयंसेवकगण चन्देके लिए श्रोताओंके बीच फैल जायें। जिन लोगोंने हरिजनोंके निमित्त भेंट की गई थैलीमें कुछ नहीं दिया है वे अगर कुछ देना चाहेंगे तो यह मेरे लिए इस विषयमें उनकी इच्छाका संकेत होगा। इस बीच मैं हरिजनोंके निमित्त इन सभी वस्तुओंको नीलाम करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-२-१९३४

२१९. डायरीके पन्ने[1]

२५ फरवरी, १९३४

डिंडीगल जाते हुए मुझे जिन अनेक स्थानोंको देखना था उनमें से एक वन्निवा-लसि भी था। यह डिंडीगल जिलेमें उदुमलपेटसे दस मील दूर एक छोटी-सी जगह है। इसे एक आदर्श पुरवा कहा जा सकता है। इसका यह आदर्श रूप थोड़े-से सच्चे हरिजन-सेवकों द्वारा पूरे मनसे किये चन्द महीनोंके श्रमका परिणाम है।[2] स्थानीय संघके मन्त्री बड़े उत्साही व्यक्ति हैं। उन्होंने क्या-क्या काम किये हैं, इसकी एक डायरी तैयार कर रखी है और उन्होंने उसका एक अंग्रेजी-अनुवाद मुझे दिया। उसे मैं संक्षिप्त रूपमें नीचे दे रहा हूँ:

१. इसका गुजराती-अनुवाद २५-२-१९३४ के **हरिजनबन्धु**में प्रकाशित हुआ था।
२. देखिए "भाषण: सार्वजनिक सभा, थेवरम्में", पृ० १५१-५२।

इस संघकी स्थापनाके पूर्व गाँवकी अवस्था :

जनसंख्या

१. हरिजन	१८५
२. अन्य	१२५

हरिजनोंकी आदतें

१. लगभग सभी वयस्कोंको मद्यपानकी आदत थी।
२. उनकी जीविका चोरी थी।
३. चारित्र्य भ्रष्ट।
४. वे कुछ पैसे लेकर आसपासके गाँवोंमें मारपीटमें शरीक होते थे।
५. गाँवमें कोई पढ़ा-लिखा नहीं था।
६. लोग बड़े आलसी थे।
७. साफ-सफाईकी हालत बुरी थी।

अन्य हिन्दुओंकी आदतें

१. वे सब भी अनपढ़ थे।
२. उनमें से अनेक चोरोंका जीवन बिताते थे।
३. शराबकी लत थी।
४. आलस्य आम बात थी।
५. चारित्र्य वैसा बुरा नहीं। ४-४-३३

२९-५-१९३३ को कुट्टथर नामकी एक पहाड़ी जनजातिके सोलह लोग इस गाँवमें रहते थे। उनका मुख्य धन्धा भीख माँगना है।

तीन परिवारोंके केवल २० आदमी अपनी-अपनी पैतृक सम्पत्तिके सहारे जीते हैं। शेष सभी लोग कुली या ऐसे ही कुछ हैं।

इस गाँवमें संघकी स्थापनाके पूर्व यहाँकी और यहाँके लोगोंकी यही अवस्था थी।

बादकी अवस्था

५-४-३३ चेरियोंकी सफाई और हरिजन बच्चों, जवानों और बूढ़ोंको स्नान कराना शुरू किया गया।

२७-५-३३ हरिजनोंके घरोंमें जाकर अन्दरकी गन्दगी साफ की और उनमें पूरी सफेदी कर दी।

२९-५-३३ हम हरिजन बच्चोंको अमरावती नदीके किनारे ला-लाकर उन्हें स्नान करनेको राजी करने लगे।

,, सार्वजनिक सभा। हरिजनोंसे शुद्ध ढंगसे और व्यस्त रहनेको कहा।

,, बेघर कुट्टथर जनजातिके लोगोंको, जो इस गाँवके लिए बाहरी आदमी थे, बसनेके लिए एक अलग हलका दिया।

२-६-३३	हरिजनोंके तीन घर नये सिरेसे बनवाये।
,,	पूर्वसे पश्चिमकी ओर जानेवाली सड़कको नये सिरेसे बनवाया। गाँवके स्नान-घाटको नये सिरेसे बनवाया। सड़कके बीचमें बने एक घरको गिराकर गाँवके अच्छे हलकेमें नया घर बनवाया गया।
९-६-३३	यह नियम बना दिया गया कि हरिजन लोग अपनी दिनचर्या अपने-अपने घरोंमें प्रार्थना करनेके बाद ही प्रारम्भ करें।
१३-६-३३	हरिजनोंने सूअरके मांसका स्पर्श न करनेका वचन दिया।
१७-६-३३	जनताने अस्पृश्यताका त्याग करनेका वचन दिया।
२५-६-३३	भंगियोंके कामकी देख-रेख शुरू की ।
१-७-३३	संघके कार्यकर्त्ताओंने प्रतिदिन हरिजनोंके घर जाकर उनकी सफाई करना शुरू किया।
९-७-३३	पाखानेके कामके लिए गाँवसे बाहर एक अलग जगह तय कर दी गई।
१७-७-३३	सड़कें नये सिरेसे बनवाई गईं।
८-८-३३	चार नये घर बनवाये गये।
१८-८-३३	हरिजनोंके उपयोगके लिए एक सवर्ण हिन्दूने एक नया घर बनवाया।
७-११-३३	गाँववालोंने पश्चिमकी ओर जानेवाली सड़कका पुनर्निर्माण आरम्भ किया।
३०-११-३३	एक सड़कका पुनर्निर्माण किया गया।
१२-१२-३३	बत्ती जलानेके खम्भे उखाड़कर नहानेके घाटपर गाड़े गये।
१४-१-३४	महात्माजी के गाँवमें आनेके लिए एक अलग सड़क बनाई गई। उसे बनाने में २०० लोगोंने काम किया।

हर झोंपड़ीका साफ-सुथरा रूप और सड़कोंकी अच्छी अवस्था उनके कामके ठोस होनेके प्रत्यक्ष प्रमाण थे। कार्यकर्त्ताओंकी दिनचर्या भी दिलचस्प और अनुकरणीय है।

प्रातःकाल :	५ से ६	: प्रार्थना
	६ से ७	: सड़कोंकी सफाई
	७ से ८	: हरिजन बच्चोंको स्नान कराना
	८-३० से ९	: नाश्ता
	९ से ११-३०	: स्कूलका समय
	११-३० से १२	: विश्राम
अपराह्न :	१२ से १-३०	: खाना बनाना और खाना
	१-३० से २	: विश्राम
	२ से ४-३०	: स्कूलका समय

	४-३० से ५-३०	:	अखबार पढ़ना और गाँववालोंको उस दिनके मुख्य समाचार सुनाना
	५-३० से ६-३०	:	चेरियोंमें जाकर लोगोंको सफाईके बारेमें बताना
रात :	६-३० से ७-३०	:	खाना पकाना और खाना
	७-३० से ८	:	विश्राम
	८ से १०	:	वयस्कोंके स्कूलमें पढ़ाना

यह इस बातके विरल उदाहरणोंमें से एक है कि लगनके साथ सतत कार्य करके क्या-कुछ किया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-३-१९३४

२२०. पत्र : एस्थर मेननको

२५ फरवरी, १९३४

प्यारी बिटिया,

तुम्हारा पत्र मिला। यह जानकर खुशी हुई कि फल तुम्हारे पास सुरक्षित पहुँच गये। एक और टोकरी भी भेजी गई थी। जरूरत हो तो और माँगनेमें संकोच मत करना।

तुम्हारे कथित वचन-भंगमें मेरियाने मेरा नाम घसीटा, इसपर मुझे कोई आश्चर्य नहीं है। मेरा मन साफ है। अगर बच्चोंके साथ वचन-भंगका खतरा होता तो मैं यह बर्दाश्त नहीं करता कि तुम मेरे पास रहो। लेकिन मेरियाके पत्रसे तो लगता है कि मेरे खिलाफ उसकी शिकायत ज्यादा गहरी और बड़ी है। अच्छा हो, वह सारे मामलेपर तुम्हारे साथ बातचीत करे। मगर न करे तो तुम चिन्ता न करना। मैंने उसे विस्तारसे लिखा है और कहा है कि उसे जो-कुछ कहना हो मुक्त मनसे पूरी तरह कह डाले।

हाँ, मैं चाहूँगा कि मेनन बंगलोरवाला काम हासिल कर ले। प्रमाणपत्र मैंने देख लिये हैं। अच्छे हैं, उनके आधारपर मेननको अच्छा काम मिल सकना चाहिए। क्या तुम प्रमाणपत्र वापस चाहती हो?

९ मार्चको हैदराबाद (दक्षिण)से पटनाके लिए रवाना होऊँगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० १२६)से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड,** पृ० १०३ से भी

२२१. पत्र : नान मेननको

२५ फरवरी, १९३४

प्रिय नान,

तुम्हारा अत्यन्त सुन्दर पत्र मिला। यह जानकर खुशी हुई कि तुम रोज कातती हो। तुम यह सुनहला नियम तो जानती ही हो कि जो-कुछ करो, अच्छी तरह और पूरे मनसे करो।

प्यार और चुम्बन।

बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड, पृ० १२०

२२२. पत्र : तंगई मेननको

२५ फरवरी, १९३४

प्रिय तंगई,

आशा है, तुम बिलकुल स्वस्थ होगी। तेज धूपमें कभी मत घूमो। खूब फल खाओ और माँड़युक्त पदार्थ न लो।

प्यार और चुम्बन।

बापू

[अंग्रेजीसे]
माई डियर चाइल्ड, पृ० १२०

२२३. भाषण : विद्यार्थियोंकी सभा, मंगलोरमें[1]

२५ फरवरी, १९३४

प्रिंसिपल महोदय, छात्रो और छात्राओ,

मेरे लिए यह बड़े हर्षका विषय है कि आज बिलकुल सुबह मैंने दो बड़ी साफ-सुथरी चेरियाँ देखीं, जहाँ मंगलोरके भंगी रहते हैं और फिर मुझे सभी जातियों के निमित्त बनाये जानेवाले मन्दिरके, 'ओल्ड बॉयज एसोसिएशन' द्वारा आयोजित, पुनीत शिलान्यास-समारोहमें उपस्थित होनेका अवसर मिला तथा अब मैं विद्यार्थियोंके बीच मौजूद हूँ। आपने मुझे एक छोटी-सी थैली दी है। इसे मैं छोटी थैली इसलिए कहता हूँ कि अन्य सभी स्थानोंमें विद्यार्थियोंने मुझे इससे बहुत अधिक दिया है। मैं कोई भेद करना या आपकी थैलीके छोटी होनेपर आपमें व्यर्थ ही खोट नहीं निकालना चाहता, क्योंकि मुझे तो याद नहीं आता कि मंगलोर, बल्कि सारे कर्नाटक ने कभी कंजूसी दिखाई हो। जहाँतक चन्दे आदिका सम्बन्ध है, कर्नाटकके सम्बन्धमें मेरी सारी स्मृतियाँ सुखद ही हैं। मैं नहीं समझता कि मेरे विभिन्न दौरोंमें कर्नाटक कभी किसीसे पीछे रहा हो। यह सदा सर्वप्रथम रहा है, अर्थात् दान देनेमें पहल करनेवालोंमें यह सबसे आगे रहा है। इसलिए मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस बार भी आपने ज्यादासे-ज्यादा ही दिया है। मैं जानता हूँ कि हमारा सारा देश मन्दीकी चपेटमें आ गया है।

आपने मुझे बताया है कि अब आपके बीच दो-तीन हरिजन विद्यार्थी भी हैं। आज परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि यह सूचना देते हुए आपने गर्वका अनुभव किया है। इससे मुझे कुछ प्रसन्नता तो होती है, किन्तु साथ ही विचार करनेके लिए भी काफी कारण मिलता है। ऐसा क्यों है कि एक बड़े हाई स्कूलमें सिर्फ दो हरिजन विद्यार्थी होने पर भी हम गर्वका अनुभव करें, क्योंकि आप लोगोंकी संख्या तो खासी बड़ी है और जैसाकि आपने ठीक ही कहा है, आपके स्कूलका स्थान बहुत ऊँचा है? इतने अच्छे हाई स्कूलमें भी केवल दो हरिजन विद्यार्थी हैं। यह रेगिस्तानमें नखलिस्तानके समान है। रेगिस्तान में चलते हुए नखलिस्तान मिल पाना कितना सुखद, कितना अच्छा लगता है? लेकिन प्रश्न यह है कि हम रेगिस्तानमें हैं ही क्यों, और इस स्कूलमें सैकड़ों हरि-जन लड़के क्यों नहीं होने चाहिए। मैं जहाँ भी जाता हूँ, मुझे आप लोगोंमें, और हरिजनोंमें भी, सीखनेकी एक-सी क्षमता दिखाई देती है। मैं एक वयोवृद्ध महिलासे

१. यह सभा कर्नाटक हाई स्कूलके अहातेमें हुई थी। स्वर्गीय वि० झ० पटेलकी प्रतिमाका अनावरण करनेके बाद गांधीजी ने भाषण दिया था। इस भाषणका सार-संक्षेप ९-३-१९३४ के **हरिजन** में प्रकाशित वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) में भी छपा था।

बातचीत कर रहा था। उनके पास एक घर है, बिलकुल राजमहल-जैसा। उसकी चारदीवारी बड़ी सुन्दर है, बड़े अच्छे और बड़े-बड़े कमरे हैं, धूलका कहीं नाम नहीं, बिलकुल राजाओंके रहने लायक। जब मैं इसकी तुलना त्रावणकोरकी महारानी के राजमहलसे करता हूँ तो, सच कहता हूँ, इस घर और त्रावणकोरमें मुझे जो राज-महल देखने का अवसर मिला उसके बीच कोई अन्तर नहीं मालूम पड़ता। जब मैं उस घरकी स्वामिनी उन वृद्ध महिलासे बातचीत कर रहा था तो वे समझ गईं कि मेरे मनमें क्या है और इसलिए उन्होंने बड़ी चतुराई-भरा जवाब दिया। वृद्ध महिला-की बुद्धिमानीसे मैं दंग रह गया।[1] इसलिए ऐसा लगता है कि ये हरिजन लड़के बुद्धिमानी तथा अन्य प्रकारकी क्षमतामें किसीसे पीछे नहीं हैं। वे पिछड़े हुए नहीं हैं। यह तो हमारा पिछड़ापन है। सचाई यह है कि सवर्ण हिन्दुओंने उनकी जो दशा कर रखी है उसका असर उनपर पाले-जैसा हुआ है; सवर्ण हिन्दुओंने उनको दलित कर रखा है। तो चूँकि हमने उन्हें दलितावस्थामें रखा है और आज भी रख रहे हैं, इसी-लिए किसी स्कूलमें दो हरिजन लड़कोंका होना भी हम अपने लिए गर्वका विषय मानते हैं। इस चीजका वर्णन करनेमें मैंने बहुत समय लिया है, लेकिन इसके माध्यम से मैं आपको एक बात समझाना चाहता हूँ। मैं जानता हूँ कि आपके प्रिंसिपल और अध्यापकोंकी हरिजन-कल्याणमें बड़ी रुचि है। वे लोग अपनी शक्तिके अनुसार हरिजनों की ज्यादासे-ज्यादा क्षतिपूर्त्ति करना चाहते हैं। इसलिए उनसे और आप छात्रोंसे मेरा कहना है कि हाई स्कूलोंमें हरिजन छात्रों और छात्राओंकी संख्यामें खासी वृद्धि किये बिना आप सन्तोषसे न बैठें। आपके मनमें उनके विरुद्ध कोई पूर्वग्रह नहीं है, क्योंकि तीन हरिजन लड़के तो अब आपके बीच हैं ही। तो अब आप अपने काममें लग जाइए। आप चेरियों तथा जिन अन्य स्थानोंमें ये लोग रहते हों, वहाँ जाइए और जो लड़के या लड़कियाँ पढ़ना-लिखना चाहें उनका पता करके ऐसी कोशिश कीजिए जिससे वे किसी भी तरहसे आपसे पीछे न रह पायें। आजकी सुबह मैं आपको यही सन्देश देना चाहूँगा। और विद्यार्थियोंसे अधिक कुशलतासे और कौन काम कर सकता है? यही बात मैं सर्वत्र कहता रहा हूँ। यदि विद्यार्थी चाहें तो जहाँतक हरिजनोंकी अवस्थाका सम्बन्ध है, वे उसमें परिवर्तन ला सकते हैं और इसके लिए उन्हें न बहुत अधिक समय देना पड़ेगा और न ज्यादा ध्यान ही। यह काम वे अपने मनोरंजनके समयमें कर सकते हैं। इससे सचमुच उनके मस्तिष्कको स्फूर्ति मिलेगी, उनमें जिज्ञासा उत्पन्न होगी और उनमें सेवा और प्रेमकी भावनाएँ जाग्रत होंगी।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-२-१९३४

१. **हरिजन**की रिपोर्टसे लगता है कि यह महिला हरिजन थीं।

२२४. भाषण : सार्वजनिक सभा, मुल्कीमें[1]

२५ फरवरी, १९३४

इस मानपत्र और थैलीके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आप अस्पृश्यता-निवारण के लिए किये अपने कई कार्योंका उल्लेख कर पाये, इसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि आपका यह विश्वास कि मन्दिर-प्रवेशके प्रति सनातनियों-का विरोध ठण्डा पड़ता जा रहा है, सच्चे तथ्योंपर आधारित है। आपके मानपत्रके अन्तिम वाक्यके स्पष्टीकरणकी आवश्यकता है। आपने सर्वशक्तिमान् ईश्वरसे प्रार्थना की है कि उसकी कृपासे हरिजनोंकी शक्तिसे हिन्दू समाजको बल प्राप्त हो। अगर इससे आपका तात्पर्य यह है कि जब हरिजनोंके साथ न्याय किया जा चुकेगा और सवर्ण हिन्दू उनकी क्षतिपूर्त्ति कर चुकेंगे तो हिन्दू समाज शुद्ध हो जायेगा और इस शुद्धिके फलस्वरूप उसे एक नैतिक ऊँचाई प्राप्त होगी तो आपकी इस प्रार्थनामें मैं सम्पूर्ण हृदयसे शामिल हूँ। किन्तु, यदि इसका मतलब यह हो कि ज्यादा ऐशो-आराम में रहने और पतित जीवन व्यतीत करनेके कारण सवर्ण हिन्दू शारीरिक दृष्टिसे अशक्त हो गये हैं और इसलिए उन्हें शरीरसे सक्षम हरिजनोंकी सहायतासे अधिक शारीरिक बल मिलेगा तो इस प्रार्थनामें मेरा शामिल हो पाना असम्भव है। मैं आपको बता दूँ कि ऐसी बात मेरे मनमें कभी नहीं रही। और मैं ऐसे आन्दोलनमें कभी शरीक नहीं होता जिसका आधार शारीरिक शक्ति हो। मेरा निश्चित विश्वास है कि संसारका कोई भी धर्म शरीर-बलपर टिका नहीं रह सकता। इसके विपरीत यह एक परमसत्य है कि "जो तलवारका सहारा लेते हैं उनका अन्त तलवारसे ही होता है।" धर्म वह महा-वृक्ष है जो अपना सारा सत्व उन लोगोंकी नैतिक उच्चतासे प्राप्त करता है जो उसको मानते हैं। इसलिए मैंने हजारों सभाओंमें यह बात दोहराई है कि यह तत्त्वतः आत्म-शुद्धि और पश्चात्तापका आन्दोलन है। आपको यह जानकर खुशी होगी कि इस ५०१ रुपयेकी थैली में २०० रुपये मछुओंके दिये हुए हैं। उनके इस बड़े दानपर मैं उन्हें बधाई देता हूँ। मैं जानता हूँ कि उनकी जाति काफी खुशहाल है और वह तरक्की कर रही है। और मुझे यह भी मालूम है कि अगर वे मद्यपानकी आदत छोड़ दें और उन्हें नमक निःशुल्क मिलने लगे तो उनकी स्थिति और भी सुधर जायेगी। नमककी निःशुल्क आपूर्त्ति ऐसी परिस्थितियोंपर निर्भर है जिनपर हमारा बस नहीं चलता। लेकिन मद्यपानकी आदतपर तो हमारा पूरा बस है और मैं चाहूँगा कि

१. इसका एक संक्षिप्त विवरण ९-३-१९३४ के **हरिजन**में प्रकाशित वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) में भी छपा था।

मेरे मछुए मित्र मंगलोरमें बड़ी अच्छी तरहसे प्रारम्भ किये इस सुधारको आगे बढ़ायें। यह ऐसी आदत है जो आत्माका हनन करती है।[1]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-२-१९३४

२२५. भाषण: सार्वजनिक सभा, उडीपीमें[2]

२५ फरवरी, १९३४

मित्रो,

उडीपीके बारेमें मैं कई दिनोंसे सोचता रहा हूँ। हाँ, यह सच है कि हमारे मिलनेके पहले ही उडीपीकी प्रसिद्धि मेरे पास पहुँच चुकी थी, क्योंकि उडीपीके सौन्दर्य के बारेमें मुझे कई लोगोंने बताया था। और फिर इस प्रसिद्धिका बड़ा कारण आपके यहाँका प्रसिद्ध मन्दिर है, जिसमें ईश्वरने स्वयं ही ब्राह्मणोंकी ओरसे मुँह फेर लिया था, क्योंकि वे हरिजनोंको उसके निकट जाने देनेको तैयार न थे।[3] इसके अलावा मुझे वचन दिया गया कि यदि मैं उडीपी आऊँ तो मुझे बहुत सारी प्राप्ति होगी, जिनमें स्त्रियोंकी ओरसे भेंट किये गये जवाहरात और कीमती आभूषण भी होंगे। तो अब आपने मुझे १,२४० रुपयेकी थैली भेंट करके अपना वचन पूरा करना शुरू कर दिया है। अभी-अभी मैं खादी-भण्डारका उद्घाटन करके आया हूँ। इस रस्मको पूरा करनेके लिए मुझे एक फीतेको चाँदीकी कैंचीसे काटना पड़ा। लेकिन, मैं आपको एक रहस्य की बात बताऊँ कि फीतेको काटनेके लिए कैंचीकी जरूरत नहीं थी; क्योंकि फीता बड़ा बारीक और कमजोर था। खैर, मैं आप लोगोंसे अब यह अपेक्षा कर रहा हूँ कि यहाँ आप ऐसा लोकमत तैयार करेंगे जिससे जो मन्दिर हरिजनोंके लिए खुले हुए नहीं हैं, वे शीघ्र ही खोल दिये जायेंगे। ऐसा लोकमत अत्यन्त विनयपूर्ण तरीकेसे ही तैयार किया जा सकता है। चूँकि हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार खोलना आत्म-शुद्धि और उनके साथ किये गये अन्यायोंके मार्जनका अंग है, इसलिए जबतक किन्हीं मन्दिरोंमें जानेवालों के बहुमतकी यह इच्छा न हो कि उन मन्दिरोंके द्वार हरिजनों के लिए खोल दिये जायें तबतक वैसा करनेमें कोई तत्त्व नहीं है। अगर आप अपने वचनके पक्के सिद्ध होना चाहते हों तो मैं यह अपेक्षा करता हूँ कि उडीपीमें हरिजन-कार्य दूनी तेजीसे किया जाने लगे, ताकि आप कर्नाटकके अन्य स्थानोंके लिए एक

१. सभाके अन्तमें उपहारोंकी नीलामी की गई, जिससे ३१२ रुपये मिले।

२. इस भाषणकी संक्षिप्त रिपोर्ट ९-३-१९३४ के **हरिजन**में प्रकाशित वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) में छपी थी।

३. किंवदन्ती है कि मन्दिरमें स्थापित भगवान् कृष्णकी प्रतिमाने हरिजनोंको दर्शन देनेके लिए स्वयमेव रुख बदल लिया था।

उदाहरण बन जायें। मुझे तो भारतके किसी भी हिस्सेके नागरिकोंके लिए इससे अच्छा कोई काम ही नहीं दिखाई देता कि वे अपने बीचसे अस्पृश्यताके पापको मिटा दें। हम सब एक ही परमपिता ईश्वरकी सन्तान हैं और यदि वह अपने बच्चों-के बीच भेद-भाव करता है तो फिर वह न्याय करनेवाला ईश्वर नहीं रह जाता। इसलिए अस्पृश्यता-निवारणका यह सन्देश मानव-बन्धुत्वकी कल्पनाको साकार करनेका सन्देश है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि हम सब अपने हृदयको अस्पृश्यता, अर्थात् ऊँच-नीचके भेदभावके कलुषसे मुक्त कर लेंगे।[१]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-२-१९३४

२२६. भाषण: सार्वजनिक सभा, कुन्दपुरमें[२]

२५ फरवरी, १९३४

मित्रो,

आपके मानपत्रों और थैलीके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। यह बड़े हर्षका विषय है और एक शुभ शकुन भी कि हमारे अध्यक्ष एक अस्सी वर्षीय वयोवृद्ध सज्जन[३] हैं। इसका मतलब यह हुआ कि इस सुधारकी आवश्यकताको समझनेमें वृद्ध-जन भी पीछे नहीं हैं। आप जानते हैं कि हम क्या करना चाहते हैं। अस्पृश्यताको समूल नष्ट करना है। यह बात कहनेमें तो बहुत सरल है लेकिन जैसा मैंने अन्यत्र कहा है, अस्पृश्यता एक सहस्र सिरोंवाला दैत्य है और इसने हमारे समाजके प्रत्येक क्षेत्रपर अपना कुप्रभाव डाला है। इसी कारण हम लोग आपसमें एक-दूसरेके लिए, एक जाति दूसरी जातिके लिए अस्पृश्य बनती गई और अन्तमें हालत यह हो गई कि ऐसी कोई भी जाति, कोई भी वर्ग न बचा जो अपने-आपको किसी-न-किसी दूसरी जाति या वर्गसे श्रेष्ठ न मानता हो। मेरा निश्चित विश्वास है कि हमारे साम्प्रदायिक और जातीय झगड़ोंमें से बहुतोंका मूल कारण यही श्रेष्ठता या हीनताकी भावना है, यद्यपि इसके अन्य अनेक कारण भी हो सकते हैं और हैं। इसलिए अस्पृश्यताके विरुद्ध इस आन्दोलनका फलितार्थ यह है कि हम मानव-बन्धुत्वके स्वप्नको साकार करना चाहते हैं। और मानव-मात्रका यह भ्रातृत्व-सम्बन्ध तबतक सम्पादित नहीं किया जा सकता जबतक हम यह मानते रहेंगे कि अस्पृश्यता एक दैवी विधान है। इसलिए इस विषयपर विचार करके यह तय करना सवर्ण हिन्दुओंका काम है कि उन्हें क्या करना है। अगर वे अस्पृश्यताको स्थायी बनाये रखते हैं तो हिन्दू-धर्म और हिन्दू-जाति

१. सभाके अन्तमें गांधीजी ने भेंटमें प्राप्त वस्तुओंको नीलाम किया, जिससे ४०० रुपये प्राप्त हुए।

२. इस भाषणकी संक्षिप्त रिपोर्ट ९-३-१९३४ के **हरिजन**में प्रकाशित वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) में भी छपी थी।

३. ये सज्जन थे सावरकर मनजय शेरिगर।

का विनाश निश्चित है। अगर वे अस्पृश्यताको बिलकुल मिटा देते हैं तो केवल यही उनके जीवित रहनेका रास्ता है। इसीलिए मैंने इसे आत्म-शुद्धिका आन्दोलन, पश्चात्ताप और हरिजनोंकी क्षति-पूर्त्ति करनेका आन्दोलन कहा है। सदियोंसे सवर्ण हिन्दू हरिजनोंका शोषण करते आ रहे हैं और उनका शोषण करके हमने स्वयं अपने-आपको गिराया है। तो समय रहते हम चेत जायें और अस्पृश्यताकी भावनाको अपने हृदयसे मिटा दें। देखता हूँ, यहाँ आपके बीच एक हिन्दी-कक्षा चलाई जाती है। इसपर मैं आपको बधाई देता हूँ। मेरी यही इच्छा है कि इस भाषाको आप लोगों ने अबतक जितना लोकप्रिय बनाया है, उसकी अपेक्षा बहुत अधिक लोकप्रिय बनायेंगे। हिन्दी या हिन्दुस्तानी वह भाषा है जिसे लगभग बीस करोड़ हिन्दू और मुसलमान बोलते और समझते हैं। यह ऐसी भाषा है जिसमें संस्कृत, फारसी, अरबी और न जाने कितनी ही अन्य भाषाओंके शब्दोंका सम्मिश्रण हुआ है। यह इतनी सरल भाषा है कि इसे संस्कृतवाले भी समझते हैं और अरबी-फारसीके जानकार लोग भी। इस भाषाको सीखना इतना आसान है कि आश्चर्य होता है और इस भाषापर अधिकार पानेके लिए आप लोगोंको पर्याप्त प्रयत्न करना चाहिए।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २८-२-१९३४

२२७. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२६ फरवरी, १९३४

चि० अमला,

तुम्हें मेरा मूर्ख कहना क्या ठीक नहीं है? मेरे खुद न लिखनेपर जब एक सर्वश्रेष्ठ आश्रमवासीने तुम्हें लिखा तब उसके पोस्टकार्डकी कद्र करनेके बजाय तुमने एक कुढ़न और चिढ़-भरा पोस्टकार्ड लिख दिया और वर्धाके लोगोंके बुरेपनका राग अलापतीं रहीं। क्या इसके लिए तुम्हें क्षमा नहीं माँगनी चाहिए? और तुम क्षमा माँगो भी तो उसका मैं क्या करूँगा? तुम तो बार-बार वही करती रहोगी। तो अब यही रहा कि मैं तुम्हारी मूर्खता झेलता रहूँगा! जिस प्रकार तुम्हें मुझको, मैं जैसा भी हूँ, उसी रूपमें स्वीकार करते हुए मेरे अच्छेसे-अच्छा बननेकी आशा करते रहना है, उसी प्रकार मुझे भी तुम जैसी हो, उसी रूपमें स्वीकार करके किसी दिन तुम्हें वैसी देखनेकी आशा करते रहना चाहिए जैसीकि तुम्हें होना चाहिए। सो हम दोनों को शिकायतें करना छोड़कर अपने-अपने काममें लग जाना चाहिए। तुम अपना काम करती जा रही हो, इससे मुझे खुशी होती है। याद रखो कि मुझे २४ घंटोंमें ६ घंटेसे अधिक ही सोनेकी जरूरत है। और ऐसा ही तुम्हारे साथ भी है। तुम चाहो तो बिना किसी कठिनाईके और भी सो सकती हो। इसलिए तुम्हें अपनेको स्वस्थ और नीरोग रखना चाहिए। गर्मीके मौसमका खयाल रखो। ऐसा न हो कि पहले

१. सभाके अन्तमें गांधीजी ने बिहार भूकम्प सहायता-कोषके लिए चन्दा देनेकी अपील की।

से ध्यान न दो और तब एक दिन बैठ ही जाओ। सभी मौसमोंमें स्वास्थ्य ठीक रखना एक कला है।

क्या तुम नहीं जानती कि पोस्टकार्डमें जो हिस्सा पतेके लिए होता है उसपर नाम-पतेके अलावा और कुछ नहीं लिखा जाता? पर तुमने उस हिस्सेपर और बातें भी लिख दीं और नतीजा यह हुआ कि मुझे डेढ़ आने जुर्माना देना पड़ा। आगेसे सावधान रहना।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

९ तारीखको हैदराबादसे पटना के लिए प्रस्थान करूँगा और ११ को वहाँ पहुँचूंगा।

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२२८. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

२६ फरवरी, १९३४

चि० दूधीबहन,

तुम्हारा पत्र मिला था। यदि बच्चोंको शीतला निकलनेका भय हो और टीका लगवाने में तुम्हें किसी प्रकारकी धार्मिक आपत्ति न हो तो मैं समझता हूँ कि उन्हें टीका लगवा देना ही अच्छा होगा। मुझे तो टीका लगवाना हर तरहसे नापसन्द है। क्योंकि मुझे मृत्युका डर विशेष नहीं लगता, इसलिए मैं उसका विरोध करता हूँ, किन्तु मेरे विरोध करनेके कारण तुम्हें या अन्य किसीको उसका विरोध नहीं करना चाहिए। धर्म ऐसी वस्तु है जो हरेकको स्वयं सूझना चाहिए। ऐसा भी नहीं है कि शीतलासे सभी लोग मर ही जाते हों। यह अंश मोतीबहनको भी पढ़वा देना, उसीने यह प्रश्न मुझसे पूछा है।

मैं आज मावोको[1] पत्र लिख रहा हूँ।

आशा है, तुम वालजी की चिन्ता नहीं करती होगी। उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता है। वे मेरी मदद तो करते ही हैं। उनके यहाँ होनेसे चन्द्रशंकरको खूब फुरसत मिल गई है। वह छुट्टीपर भी जा पाया है।

आशा है, तुम्हारा शरीर स्वस्थ होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४६४) से; सौजन्य : वालजी देसाई

१. सुदर्शन देसाई, वालजी देसाईके पुत्र; देखिए अगला शीर्षक।

२२९. पत्र : सुदर्शन वा० देसाईको

२६ फरवरी, १९३४

चि० सुदर्शन,

अब तो तू मावो न रहकर सुदर्शन हो गया। तेरा सातवाँ वर्ष लगनेपर मैं तुझे तुरन्त न लिख सका, इसकी माफी दे देगा न? तू दीर्घायु हो और देशकी बहुत सेवा करे। तेरी लिखावट अभी सुधरी हुई नहीं कही जा सकती। तुझे अपने साथ यात्रामें ले जानेमें अभी देर है। यह नहीं कहा जा सकता कि तू मेरे साथ यात्रा कर सकेगा या नहीं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७४२) से; सौजन्य : वा० गो० देसाई

२३०. पत्र : छगनलाल जोशीको

कुंदपुर
२६ फरवरी, १९३४

चि० छगनलाल,

लक्ष्मीदासकी[1] मार्फत तुम्हारा सँदेसा मिला। पूरा विवरण बहुत अच्छा है। लगता है, तुमने इस बीच जो अध्ययन किया है वह बहुत अच्छा हुआ है।

फिलहाल मेरी मानसिक स्थिति ऐसी है कि यदि कोई मुझसे निर्णय माँगता है तो वह मुझे अच्छा नहीं लगता। मुझे तो सलाह देते भी संकोच होता है। अपने स्वभावके अनुसार मैं यह मानता हूँ कि मैं केवल हरिजन-सेवाके लिए ही बाहर हूँ, अतः सलाह वगैरह देनेकी कुछ बहुत इच्छा नहीं होती। फिर, व्यक्तिगत सविनय अवज्ञामें सलाह दी ही क्या जा सकती है? इसलिए मेरा रुख यह है कि तुम्हें जो रुचे सो करना चाहिए। यह मत सोचो कि मैं क्या चाहता हूँ। तुम अपनी इच्छा को मेरी इच्छा समझना।

अब मैं कहूँ: धीरूको भावनगरसे न हटाना अच्छा होगा। तुम उसके पास हो आना। रमाको वर्धामें रहने देना मैं उचित मानता हूँ। इसलिए तुम्हें उससे मिलने जाना चाहिए। यदि मुझसे मिलनेकी उत्कट इच्छा हो तो ५-६ तारीखको बेलगाँवमें मिल सकते हो। एक बार ब्रिटिश प्रदेशमें प्रवेश करनेकी आज्ञा दिये

१. लक्ष्मीदास गांधी, बम्बईके एक सत्याग्रही, जो छगनलाल जोशीके साथ थाना-जेलमें थे।

बिना वे तुम्हें बेलगाँव कैसे आने देंगे? यदि वे तुम्हें आनेकी अनुमति दे दें और तुम्हारी इच्छा हो आये तो आनेमें जरा भी संकोच मत करना। विवाहमें सम्मिलित होनेके लिए तुम्हें कहीं जानेकी आवश्यकता नहीं। किन्तु भाईसे मिलनेकी इच्छा पूरी करना कदाचित् तुम्हारा कर्त्तव्य हो सकता है। यह सब तो मैंने तुम्हारी, रमा, धीरू और कल्याणरायकी भावनाओंका विचार किये बिना कह दिया। उन भावनाओंके आधारपर इसमें परिवर्तन करनेकी तुम्हें न केवल छूट है बल्कि वैसा करना तुम्हारा कर्त्तव्य भी है। [‘गीता’के] तीसरे अध्यायके छठे-सातवें श्लोकोंका मनन करना। ‘निग्रहः किम् करिष्यति’[1]—यह श्लोक ऐसी ही स्थितिमें लागू होता है। एक सीमातक ही भावनाओंको वशमें रखा जा सकता है। यदि उस सीमाका उल्लंघन किया जाये तो वे कच्चे पारेकी भाँति फूट निकलती हैं। अतः सबको अपनी-अपनी सीमा निश्चित कर लेनी चाहिए।

प्यारेलाल छूट गया है। वह वर्धामें है। चन्द्रशंकर १५ दिनके लिए उस ओर गया है। अतः कहीं-न-कहीं उनकी भेंट होगी क्या? मैं अपने बारेमें कुछ नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि समयकी बचत करनी है। यदि समय होता तो मैं पन्ने-के-पन्ने रँग डालता।

मुझे अभी-अभी तार मिला है कि लक्ष्मीदास[2] को पिछले आठ दिनसे आन्त्र-ज्वर है। [थर्मामीटरका] पारा काफी ऊँचा चढ़ जाता है। स्वामी उसके पास है। वह पटनामें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५१६) से।

२३१. पत्र : धीरू जोशीको

२६ फरवरी, १९३४

चि० धीरू,

तू अब तो मुझे बिलकुल ही भूल गया न? क्या अब भी तुझे बुखार आता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३१७)से।

१. **भगवद्गीता,** ३-३३।

२. लक्ष्मीदास आसर सहायता-कार्यके लिए बिहार गये थे और वहाँ बीमार पड़ गये थे।

२३२. पत्र : प्रभावतीको

२७ फरवरी, १९३४

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिला था। मैं तो तुझे नियमित रूपसे पत्र लिखता ही रहा हूँ। इस बार तेरा पत्र ही काफी इन्तजारके बाद मिला है।

समय बचानेके खयालसे जयप्रकाशको मैं अलगसे नहीं लिख रहा हूँ। इस समय सुबहके तीन बजे हैं। मैं वहाँ पहुँचकर राजेश्वरके लिए पैसे मँगा लूँगा। अन्य मामलोंके बारेमें, मेरे वहाँ पहुँचनेपर हम लोग बातचीत कर लेंगे। मैंने जयप्रकाशके सभी पत्र पढ़े हैं। किन्तु उत्तर देते समय सभी पत्र मेरे सामने नहीं हैं, शायद पीछे छूट गये होंगे। यह हो सकता है कि जवाब लिखानेके बाद मैं भूल गया होऊँ कि मैंने क्या लिखाया था, इसलिए उस सम्बन्धमें पुनः पूछनेकी आवश्यकता पड़ सकती है। इस आशयका पत्र मिलनेके बाद कि अन्य व्यवस्था कर ली है, उस सम्बन्धमें मेरे लिए कुछ करनेको नहीं रह जाता। बादमें जब यह बात याद आई तो मैंने तुझसे पूछा। अब इस सम्बन्धमें वहाँ मिलनेपर हम बातचीत कर लेंगे। भूकम्पके सम्बन्धमें मेरा प्रश्न तुम दोनोंको लेकर था। मेरा प्रश्न यह था कि भूकम्पने बहुत-से लोगोंकी आर्थिक और मानसिक स्थिति बदल दी है तो क्या तुम दोनोंके बारेमें ऐसा हुआ या नहीं। किन्तु इस बारेमें हम मिलनेपर चर्चा करेंगे। आशा है, तुम दोनों स्वस्थ होगे। मेरे वहाँ पहुँचनेपर यदि आवश्यक हुआ तो तुझे कहाँ रहना चाहिए, इस बारेमें भी चर्चा कर लेंगे। आशा है, फिलहाल तो तुम दोनों वहाँ किसी-न-किसी सेवा-कार्यमें लग ही गये होगे।

मैं तो बहुत आनन्दपूर्वक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४४३) से।

२३३. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

२७ फरवरी, १९३४

बा,

इस बार तेरा पत्र अभीतक नहीं मिला। मैं भी ऐसी जगह घूम रहा हूँ कि जहाँ डाकका कोई ठिकाना नहीं है, क्योंकि यहाँ रेल नहीं है। मैं छोरके छोटे-छोटे गाँवोंका दौरा कर रहा हूँ और यहाँ इतने नदी-नाले हैं कि रेलकी पटरी बिछाना बहुत महँगा पड़ेगा। पहाड़की तलहटीमें समुद्र है, जिससे पहाड़ी नदियाँ समुद्रमें मिल कर उसे एक बड़ी खाड़ीका रूप दे देती हैं और इस खाड़ीको नावसे ही पार किया जा सकता है। जहाँ ऐसी स्थिति हो वहाँ तेजीसे यात्रा नहीं की जा सकती, इसलिए डाक देरसे मिलती है। आज सुबह हम कुंदपुर नामक स्थानसे स्टीमरमें बैठे, जो हमें रातको कारवार पहुँचा देगा। यह १२ घंटेकी समुद्री यात्रा होगी। तू मंगलोर आ चुकी है। हम कल मंगलोरमें थे। वहाँसे नदियाँ पार करते हुए कल रात कुंदपुर पहुँचे और कल वहाँसे स्टीमर पकड़ा। यहाँके लोग कन्नड़ बोलते हैं। यह पूरा गंगाधररावका इलाका है। यह पूरा प्रान्त कर्नाटक कहलाता है। ५-६ तारीखको मैं बेलगाँवमें रहूँगा। समुद्र-तट होनेके कारण हवा ठंडी रहती है। कर्नाटकका दौरा पूरा करके पटना जानेका निर्णय हुआ है। मैं ९ तारीखको हैदराबादमें हूँगा, वहाँसे पटनाकी गाड़ी पकड़नी है। हैदराबादमें बहुत करके सरोजिनीदेवीसे मुलाकात होगी। पद्मा तो वहाँ है ही। पटना जाते हुए वर्धा रास्तेमें पड़ता है, वहाँ शायद प्यारेलाल मुझसे मिलने आये। वह अभी हालमें छूटा है और छूटकर वहाँ गया है। बहुत करके जमनालालजी भी पटना जायेंगे। ठक्कर बापा मेरे साथ पटना नहीं जायेंगे, बल्कि दिल्ली जायेंगे। उन्हें वहाँ काम करना होगा। लक्ष्मीदास पटनामें है। वह बहुत बीमार है। उसे टाइफाइड हो गया है। स्वामीका तार आया था। चन्द्रशंकर अपनी पत्नीसे मिलनेके लिए पन्द्रह दिनकी छुट्टी ले गया है। मैंने उसे माधवदाससे मिलने को लिखा है। माधवदासको मैंने जो पत्र लिखा था उसका अभी उत्तर नहीं आया है। नारणदास ९ तारीखको रिहा हो जायेगा और छगनलाल ३ तारीखको। वसुमतीके भी रिहा हो जानेकी खबर है। किन्तु उसका कोई पत्र नहीं मिला। पृथुराज मेरे पास ही है। अभी तो उसकी पटना जानेकी इच्छा नहीं है। बेचारी वेलाबहन उससे मिलनेको बेकार व्यग्र हो रही होगी। मणिलालका पत्र अभीतक नहीं आया है। महादेवका स्वास्थ्य अच्छा रहता है। दुर्गा जाकर उससे मिल आई है। उसके साथ जीवणजी थे। प्रभावती और जयप्रकाश पटनामें हैं। वे सहायता-कार्यमें लगे हैं। अब प्रवचन :

मैंने गत सप्ताह 'नामकी महिमा' के बारेमें लिखा था, किन्तु प्रश्न यह उठता है कि नाम कैसे लिया जाये? जब मनमें तरह-तरहके हजारों विचार आते हों तो

नाम जपनेसे क्या लाभ? नाम जपना हो तो हृदयसे जपना चाहिए या फिर जपना ही नहीं चाहिए। यह कहना सही भी है और नहीं भी है। यदि कोई व्यक्ति दिखावे के लिए नाम जपता है तो उसमें कोई सार नहीं है। उल्टे यह पाप है, क्योंकि यह तो ढोंग हुआ। किन्तु शुद्ध वृत्तिसे नाम जपना चाहनेपर भी जपके बीच नाना प्रकारके विचार मनमें उठते ही रहते हैं। ऐसा होनेके बावजूद हार नहीं माननी चाहिए। मनमें अन्य विचार आनेपर भी नाम जपते रहना चाहिए। ऐसा करते रहनेसे किसी दिन यह नाम हृदयमें अंकित हो जायेगा। नामकी जो महिमा गाई है उसका कारण यही है। अनपढ़ और मूर्ख भी नाम तो जप ही सकता है। नाम-जप तो एक क्षणमें सीखा जा सकता है। उसके बाद तो जपते ही रहना है। ऐसा करते हुए उसे ऐसी टेव पड़ जायेगी कि उसके बिना अच्छा ही नहीं लगेगा। यदि ऐसी टेव पड़ जाये कि खाते-पीते, सोते-बैठते नाम-जप चलता ही रहे तो यह कहा जा सकता है कि नाम उसके हृदयमें उतर गया है। ऐसे मनुष्य कम ही मिलते हैं किन्तु वे दुःखोंसे तर जाते हैं। उससे सम्बन्धित हनुमानजी की मजेदार कहानी हमें पण्डितजी के गुरुने एक बार आश्रममें सुनाई थी। उक्त कहानी मैं आगामी सप्ताह लिखूंगा।

सभीको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० १६-७

२३४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२७ फरवरी, १९३४

भाई वल्लभभाई,

यह पत्र मंगलवारको 'दयावती' स्टीमरमें लिख रहा हूँ। हम कुन्दपुरसे कारवार जा रहे हैं। चन्द्रशंकर घर गये हैं। बालजी मेरे साथ हैं, इसलिए उन्हें भेजनेमें कोई दिक्कत नहीं थी। मुझे हैदराबादसे ९ तारीखको रवाना होकर ११ तारीखको पटना पहुँचना है। वहाँ पहुँचते ही तुरन्त [साप्ताहिक] मौन आ जाता है। फिर भी वहाँ पहुँचना आवश्यक प्रतीत होता है। इससे पहले जाना कठिन था। कर्नाटकमें सब तैयारी हो चुकी थी और बिहारसे कर्नाटक वापस आना मुश्किल था। अम्बालाल और मृदुला आकर मिल गये। प्रेमवश ही मिलने आये थे। अम्बालाल और सरलादेवी विलायत जा रहे हैं। भारती[1] और सुहृद[2] जबतक वहाँ हैं, तबतक उन्हें चैन नहीं पड़ेगा। एक तरफ तो सभी बच्चोंको पूरी स्वतन्त्रता और दूसरी ओर बेहद प्रेम। दोनों मुझे अद्भुत दम्पती जान पड़े।

१. अम्बालाल साराभाईकी पुत्री।
२. अम्बालाल साराभाईके पुत्र।

प्रोफेसरके[1] आकर मिल जानेकी बात भी मैं लिख चुका हूँ। उन्हें भी कोई खास बात नहीं कहनी थी।

लेस्टर लंका गई है। अगाथा हैरिसन २ मार्चको लंदनसे रवाना हो कर यहाँ पहुँचे।

लक्ष्मीदास आठ दिनसे एण्टेरिक (जहरीले बुखार) से पीड़ित है। उसके विषयमें कल स्वामीकी तरफसे तार आया था। मैंने रोज तार भेजनेको कहा है। पृथुराज मेरे पास ही है। अभी तो उसने जानेकी इच्छा प्रकट नहीं की है। मैंने तो उसे अनुमति दे ही रखी है। वेलाबहन उसके लिए व्याकुल हो रही होगी। स्वामी सूचित करते हैं कि बीमारकी सेवा-शुश्रूषा अच्छी तरह हो रही है।

बा का पत्र साथमें है और भणसालीका कार्ड मैंने तुम्हारे लिए सुरक्षित रख छोड़ा है। विवरण तो मैं तुम्हें लिख ही चुका हूँ।

'टाइम्स' [ऑफ इंडिया] में तुमने मेरे बारेमें पढ़ा होगा। सब जहरसे भरा है। यदि मैंने हँसीमें कुछ कहा हो, तो वह भी मेरा विश्वास माना जाता है। उस 'सेल्फ रिस्पेक्ट' वालेके साथ विनोद न करूँ, तो और क्या करूँ? मगर उसका भी अनर्थ! ऐसी बातोंसे कैसे निपटा जाये? यह तो खुलेआम हो रहा है। अन्दर-ही-अन्दर तो बहुत विष-वमन किया जा रहा है। इसका क्या उत्तर दिया जाये? सत्यके सामने यह झूठ टिक नहीं सकता, इसी श्रद्धापर चल रहा हूँ। यह श्रद्धा अभीतक कभी बेकार साबित नहीं हुई।

(छगनलाल जोशी) ३ तारीखको छूट रहा है। मैंने उसे पत्र लिखा है। प्यारेलाल वर्धामें है। मालूम होता है, छगनलालने अध्ययन अच्छा कर लिया है। मराठीपर भी अधिकार कर लिया है। उसने अन्य साहित्य भी काफी पढ़ा दीखता है। मैंने लिख दिया है कि यदि उसकी इच्छा हो तो बेलगाँव आकर मिल जाये। कानजीभाई तो आखिर नहीं आये।

ठक्कर बापा इटारसीमें मुझसे अलग हो जायेंगे। उन्हें अभी तो पटना जानेकी आवश्यकता नहीं है। मुझे अभीतक यह नहीं सूझा है कि प्यारेलाल क्या करे। अपना पहलेवाला काम वह हाथमें ले ही सकता है। परन्तु यह वातावरण ऐसा है जो सबको परेशानीमें डाल दे।

इधर मुझे देवदासका पत्र नहीं मिला।

राजाजी आरकोनममें उतर गये। अमतुस्सलाम अभी तिरुचेनगोडुमें होगी। आरकोनम छोड़नेके बाद उसका कोई पत्र नहीं आया। आज रातको कारवार पहुँचूँगा। वहाँ उसका कोई पत्र मिले तो आश्चर्य नहीं।

जमनालाल पटना जानेवाले थे, परन्तु खाँसीके कारण रुक गये हैं।

इधर डाह्याभाईका पत्र भी मुझे नहीं मिला है। मणिको लिखो तो लिख देना कि मेरा प्रयत्न किस तरह विफल हुआ। दो दिन बेलगाँव रहनेपर भी उससे या महादेवसे मिलना न हो, यह उन्हें कितना खटकेगा? मगर किया क्या जाये?

१. आचार्य जे० बी० कृपलानी।

गोशाला को पहले अलग रखा था, लेकिन अब हरिजन आश्रममें मिला दिया है। उसका अलग ट्रस्ट बना देनेका निश्चय किया है। . . .[1] छूट गया है। उसपर जो जुर्माना हुआ था, सो उसने अदा कर दिया है। ऐसी बातें होती ही रहती हैं। उसका स्वास्थ्य गिर गया था।

यह तो तुम्हें मालूम ही होगा वीणाबहन[2] अब तुम्हारे अस्पतालमें[3] नहीं है। अब वह बम्बईमें अलग मकान लेकर रहती हैं। लड़कियोंको उसने अपने संरक्षणमें ले लिया है और अब उसके पतिपर बच्चोंके खर्चके लिए दावेकी बात चल रही है। सम्भवतः बच्चोंका खर्च तो मिल जायेगा।

मैं मंगलोरमें कमलादेवीके लड़के और उसकी माँ से मिला। लड़केने संयुक्त प्रान्तकी पोशाक पहन रखी थी। मैं सदाशिवरावकी माँ और साससे मिल आया। कमलादेवीकी माँ और लड़का मेरे पास आये थे। सदाशिवरावपर मुकदमा चल रहा है। आज आखिरी सुनवाई थी। कारवारमें परिणामका पता चलेगा। यदि समय मिला तो इस सम्बन्धमें सूचना दूंगा।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ८१-३

२३५. पत्र : अमतुस्सलामको

२७ फरवरी, १९३४

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

रोज तुमको लिखनेका इरादा करता था, लेकिन वक्त कहांसे निकालूं? आज चन्द मिनट मिलने से यह लिख रहा हूं। तुमको अच्छा होगा। शर्माके तरफसे अबतक कुछ पता नहीं मिला है। न मालूम तुमको कुछ मिला हो तो। मैं ऐसी जगहमें हूं [जहाँ] खत-बत बहुत देरसे मिलते हैं। हम सब अच्छे हैं।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २९४) से।

१. मूलमें नाम छूटा हुआ है।
२. श्रीमती लाजरस; कुमारप्पाने गांधीजी से उनका परिचय कराया था।
३. अहमदाबाद नगरपालिका द्वारा परिचालित वाडीलाल साराभाई अस्पताल।

२३६. पत्र : नारणदास गांधीको

[२७][1]/२८ फरवरी, १९३४

चि० नारणदास,

तुम्हारे छूटनेकी[2] तारीख निकट आती जा रही है।

जेलमें रहते हुए तुम्हें पत्र लिखनेकी मेरी कुछ बहुत इच्छा नहीं थी। तुम्हें लिखता भी क्या? न तो तुम्हें आश्वासन देनेकी जरूरत थी, न कोई खास खबर देनेकी और सामान्य खबरें तो तुम्हें मिलती ही रहती हैं। अतः मैंने न लिखना ही उचित समझा। किन्तु मैं तुम्हारे समाचार तो लेता ही रहता था। प्यारेलालने तुम्हारे बारेमें विस्तारसे समाचार दिये हैं। अब तुम सम्पूर्ण विवरण देना।

धर्म तो यह कहता है कि जैसे ही जेलसे छूटो वैसे ही फिर जेल चले जाओ। प्रेमा भी इसी तरह गई है। मैं यह नहीं कहूँगा कि तुम्हें भी वैसा ही करना चाहिए। थोड़े दिन बाहर रहकर परिस्थितिपर नजर रखना भी तुम्हारा धर्म हो सकता है। यदि स्वास्थ्य बिगड़ गया हो तो उसे सुधारना भी जरूरी हो सकता है। और सम्भवतः बिहार जाना भी तुम्हारा धर्म हो सकता है। ये सब बातें मेरे सोचनेकी नहीं हैं। इसका निर्णय तुम्हींको करना होगा। मैं यह मानता हूँ कि तुम जो भी निर्णय करोगे वह धर्मानुकूल ही होगा। यदि तुम बाहर रहो तो मुझसे वर्धामें मिल सकते हो। यदि पहले राजकोट जाना चाहो तो वहाँसे लौटते हुए अहमदाबादमें सबसे मिलकर और उनसे सब-कुछ समझकर मुझसे मिलने पटना चले आना। मैं ११ तारीखको पटना पहुँच जाऊँगा।

गोशाला फिर आश्रमको सौंप दी गई है, चिमनलाल इसका कारण तुम्हें बतायेगा। नया न्यास बनानेके बारेमें तुम्हारे विचार जानकर ही कोई निर्णय करूँगा। बीडजवाली जमीन हरिजन सेवक संघको देनेका निर्णय कर लिया है। किन्तु यदि तुम कुछ और सोचते होगे तो मैं अपना विचार बदल दूँगा।

छगनलाल ३ तारीखको छूट जायेगा। यदि उससे मिल सको तो मिल लेना।

लाल बँगलेका उपयोग करना हमने छोड़ दिया है क्योंकि चम्पाका रुख बदल गया है। जेकी आदिके प्रति अपना स्पष्ट कर्त्तव्य भी वह निभाना नहीं चाहती। उस बँगलेमें हम आश्रित बनकर नहीं रह सकते।

लक्ष्मीदास पटनामें सख्त बीमार पड़ा है। उसे टाइफाइड हो गया है। इस सम्बन्धमें परसों स्वामीका तार मिला था। पृथुराज मेरे साथ है। कालिकटसे साथ हो गया था। वेलाबहन भी बहुत बीमार है। ऐसा लगता है कि ऑपरेशन कराना पड़ेगा।

१. जैसाकि गांधीजी ने इस पत्रके अंतिम अनुच्छेदमें कहा है, उन्होंने इसे पिछले दिन लिखना शुरू किया था।

२. नारणदास गांधी नासिक-जेलमें थे।

देवदासकी लक्ष्मी, मारुतिकी लक्ष्मी और रामदासकी नीमू गर्भवती हैं। तीनोंका प्रसव लगभग एक ही समयपर होगा। अव समय हो आया है।

पुरुषोत्तमकी सगाईकी खबरसे प्रसन्नता हुई। किन्तु विवाह कुछ समय वाद होना चाहिए। पुरुषोत्तमका स्वास्थ्य अभी पूरी तरहसे सुधरा नहीं है। किन्तु यदि स्वयं पुरुषोत्तम ही तत्काल विवाह करना चाहे और कन्या भी ऐसा ही चाहे तो हम सब लाचार हैं। पुरुषोत्तम डॉ० शर्मासे इलाज करवाना चाहता है। बहुत करके शर्मा वर्धा आयेंगे। यदि वे वहाँ आ जायें तो पुरुषोत्तम खुशीसे उनसे उपचार करवाये किन्तु वे न आयें तो क्या होगा?

नागिनीके बारेमें यदि तुम कुछ न जानते हो तो कोई-न-कोई बता देगा। अमला सावरमतीमें है। मेरी बार वर्धामें है अथवा वर्धाके आश्रममें। डंकन एक जंगलमें रहता है। उसकी तपश्चर्या कठोर है। वह बैतूलके पास एक पहाड़ीपर रहता है। वह सख्त बीमार रहा और अच्छा होकर फिर वहीं लौट गया है।

अमतुस्सलाम मिलने आई थी किन्तु बीमार पड़ गई। उसे राजाजी के आश्रममें होना चाहिए। आरकोनम छोड़नेके बाद अर्थात् २२ तारीखके बाद मुझे उसकी कोई खबर नहीं मिली।

काफी शोर-गुलके बीच मैंने यह पत्र रुक-रुककर तीन बारमें पूरा किया है। इसे मैंने कल लिखना शुरू किया था। मैं रोज सुबह पौने तीन बजे उठता हूँ, तभी मैं भली-भाँति पत्र लिख पाता हूँ। फिर जो छूट गया सो अक्सर छूट ही जाता है। यदि तुम तुरन्त मिलने न आ रहे हो तो नियमित रूपसे मुझे लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

कनु अच्छी बहादुरी दिखा रहा है।[1]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९४ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. यह तेरह वर्षकी उम्रमें जेल गया था।

२३७. पत्र : क्षितीशचन्द्र दासगुप्तको

दुबारा नहीं पढ़ा

२८ फरवरी, १९३४

प्रिय क्षितीशबाबू,[1]

हेमप्रभाने मुझे बताया है कि किस तरह आजकल आप और आपकी पत्नी बीमार हैं। आपके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। मैंने तो आपका वह हट्टा-कट्टा और कसा हुआ शरीर देखा है। सो मेरे लिए तो यह सोच पाना भी मुश्किल है कि आप बीमार हैं। लेकिन बीमार तो हैं ही। सत्याग्रहीका पुरस्कार उसका कष्ट ही है और उस कष्टमें उससे हर्षित होनेकी अपेक्षा की जाती है। सुधन्वाका वर्णन करते हुए कहा गया है कि वह खौलते तेलसे भरे कड़ाहमें खुशीसे नाच रहा था। इसलिए यद्यपि एक सामान्य मनुष्यके नाते आप लोगोंकी बीमारीके समाचारसे मैं दुःखी हुआ हूँ तथापि एक सत्याग्रहीके नाते मैं आपको आपके कष्टपर बधाई देता हूँ। जब भी आपसे बने पत्र लिखकर मुझे अपने अनुभव अवश्य बतायें और अगर आपकी पत्नी हिन्दी या अंग्रेजीमें लिख सकती हों तो मुझे उनकी लिखी दो पंक्तियाँ भी मिलनी ही चाहिए।

ईश्वर आप दोनोंका कल्याण करे।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०७०) से।

२३८. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२८ फरवरी, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारी गुजराती अच्छी है। पत्रपर तुमने तारीख नहीं दी। अगर तुम्हें मलेरिया हो तो कुनैन लेनी चाहिए। हर बीमारीमें डॉक्टरकी सलाहके मुताबिक बरतो। तुम बिना सोचे-समझे यन्त्रवत् मेरी नकल करो और दवा खानेके बारेमें मेरी अनुमति माँगो, यह ठीक नहीं है। ऐसे मामलोंमें तो हर व्यक्तिको अपने लिए आप ही नियम बनाना चाहिए।

१. सतीशचन्द्र दासगुप्तके भाई।

अगर तुम एक स्थायी, जीवन्त और सर्वत्र व्याप्त एकमात्र सत्यके रूपमें ईश्वरमें विश्वास न करती हो तो स्वाभाविक है कि प्रार्थना करते समय या भूकम्प-जैसी किसी दुर्घटनामें तुम उसकी उपस्थितिका अनुभव नहीं कर सकती। विश्वास एक हदतक बुद्धिसे आता है और अन्तमें श्रद्धासे। बच्चोंके रूपमें हम अपने माता-पिताओंसे विश्वास करना सीखते हैं, वयस्क होनेपर खुद बुद्धिपूर्वक सोचते हैं और तब या तो हममें आस्था उत्पन्न होती है या हम सन्देहवादी हो जाते हैं। तुममें कालान्तरमें आस्था उत्पन्न होगी, क्योंकि मैं मानता हूँ कि तुम सत्यान्वेषिणी हो और तुम्हारा उस व्यक्तिमें विश्वास है जिसकी ईश्वरमें आस्था है।

कल भी तुम्हें लिखा था।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल-पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२३९. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

२८ फरवरी, १९३४

भाई परीक्षितलाल,

तुम्हारे पत्रका उत्तर ठक्कर बापाने दे दिया है।

मासिक खर्चके बारेमें तुम्हें अड़चन नहीं होगी। ठक्कर बापाने तुमसे खर्चका जो ब्योरा माँगा है वह जल्दी भेज देना। अम्बालालभाईने कमीको पूरा करनेका जिम्मा लिया है। तुम्हें चन्दा उगाहनेमें समय लगानेकी जरूरत नहीं है।

यदि अमलाबहनकी तरफसे तुम्हें कोई असुविधा हो तो मुझे लिखना। वह मनकी बहुत अच्छी है, उसका चरित्र बहुत निर्मल है और उसमें सेवा करनेकी उत्कट इच्छा है। किन्तु उसमें समझकी कमी है और हठी भी है; उसे प्रेमसे वश में किया जा सकता है।

आशा है, गोमाता आ गई होगी। इस कार्यमें जितने हरिजनोंको प्रशिक्षित कर सको उतनोंको करना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

साथमें अमलाबहनके लिए एक पत्र है। उक्त पत्र पढ़कर उसे दे देना। यदि उसे बुखार हो तो डॉक्टरको दिखाना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०२५) से।

२४०. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२८ फरवरी, १९३४

चि० हेमप्रभा,

तुमको क्या लिखुं?

तुलसीदासकी भक्ति तुमारा कल्याण करेगी। तुमको शांति देगी। सारा रामायण-का अनुवाद है? उसकी किम्मत क्या रखी है? बंगालमें उसकी १००० प्रति लोग लेंगे तो भी मुझे संतोष होगा।

क्षितीश बाबुका ऐसा मजबूत शरीर रोगग्रस्त हो गया, जानकर मुझे दुःख होता है और उनकी पत्निका भी। लेकिन यही सब तो सत्याग्रहका अंश है। शरीरको भले कुछ भी हो आत्मा उज्ज्वल रहनी चाहिये।

मैं पटना ११मी मार्चको पहोंचुंगा।

शायद वहां किसी रोज मिलेंगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०९) से।

२४१. भाषण : सार्वजनिक सभा, सिरसीमें[1]

२८ फरवरी, १९३४

गांधीजी ने कहा कि सिरसी नाम मेरे लिए अपरिचित नहीं है। जब मेरे कर्नाटकके दौरेकी व्यवस्था की जा रही थी तो उसमें सिरसीका शामिल किया जाना निश्चित था, क्योंकि मेरे बहुत-से साथी यहाँ रहते हैं, और अगर मैं अपने साथियोंसे ही हरिजन-सेवा न करा सकूँ तो अन्य लोगोंसे करानेका तो मुझे कोई अधिकार ही नहीं रह जाता। मेरा यह निरपवाद अनुभव रहा है कि जहाँ-कहीं मेरे साथी बड़ी संख्यामें हैं, वहाँ अस्पृश्यता मिटती जा रही है। और मेरे साथी कौन हैं? मेरे साथी सिर्फ वही लोग हैं जो हिन्दुओंको ही नहीं, भारतके सभी लोगोंको, चाहे वे मुसलमान हों या ईसाई, यहूदी या और कोई, भाई-बहन मानते हैं; जो भारतको अपने प्राणोंसे भी अधिक प्रिय मानते हुए भी संसारके किसी भी देशका अहित नहीं चाहते, जो कभी सपनेमें भी किसीसे घृणा नहीं करते, जो सत्यके लिए अपने प्राणोंकी

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

बलि दे देनेको तैयार रहते हैं। ऐसे साथी कभी भी किसीको अस्पृश्य या अपनेसे हीन नहीं मान सकते। इसलिए, मुझे पूरा विश्वास था कि कमसे-कम सिरसीमें तो मुझे कोई भी ऐसा नहीं मिलेगा जो अस्पृश्यताका समर्थन कर सकता हो। अतएव मुझे यह सुनकर कोई आश्चर्य नहीं हुआ कि यहाँकी नगरपालिकाने स्थानीय संघकी सहायता की और हरिजन लड़कोंके लिए निःशुल्क शिक्षाकी व्यवस्था की है। अगर ऐसा नहीं होता तभी मुझे आश्चर्य होता और दुःख तो होता ही। नगरपालिकाके मानपत्रमें यह स्वीकार किया गया है कि यहाँके लोग "अबतक ऊँच-नीचकी भावना को पूरी तरह त्याग नहीं पाये हैं।" यह स्वीकृति आपके लिए श्रेयका विषय है, क्योंकि अपूर्णताका बोध पूर्णतातक पहुँचनेकी सीढ़ीका पहला कदम है। फिर भी, मुझे आशा है कि आप उच्चताकी भावनापर विजय पा सकेंगे। न केवल अस्पृश्यताके मूलमें बल्कि साम्प्रदायिक वैमनस्यकी जड़में भी यही भावना काम कर रही है। अस्पृश्यता-निवारण मानव-बन्धुत्वके स्वप्नको साकार करनेकी दिशामें बहुत बड़ी प्रगति होगी। . . .

हरिजनोंके लिए मन्दिरके[1] द्वार खोलनेके लिए मन्दिरके न्यासियोंको बधाई देते हुए गांधीजी ने कहा कि यह सुनकर मुझे बड़ा दुःख हुआ कि मन्दिरमें पशु-बलि दी जाती है। जिस स्थानपर पशु-बलि होती हो, ऐसे किसी भी स्थानको मैं पवित्र नहीं मान सकता। अन्य देशोंमें करोड़ों आदमी खानेके लिए पशुओंका वध करते हैं, किन्तु वे यह पाखण्ड नहीं करते कि वे ऐसा ईश्वरको सन्तुष्ट करनेके लिए करते हैं। पशु-बलिसे देवताओंको सन्तुष्ट किया जा सकता है, ऐसा सोचना मानव-बुद्धिका अपमान और मानव-हृदयके साथ घोर अन्याय है। ईश्वरको तो केवल आत्म-बलिदान और आत्मत्यागके द्वारा ही सन्तुष्ट किया जा सकता है। इसलिए मुझे आशा है कि मन्दिरके न्यासी इस सम्बन्धमें साहसके साथ सही निर्णय करेंगे और इस बुरी प्रथाको समाप्त कर देंगे। मैं तो यहाँतक कहूँगा कि जहाँ पशु-बलि दी जाती हो, ऐसे मन्दिरोंमें जानेके लिए हरिजनोंको बढ़ावा नहीं देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-३-१९३४

१. मरिकाम्बा मन्दिर।

२४८. पत्र: आनन्द तो० हिंगोरानीको

१ मार्च, १९३४

प्रिय आनन्द,

तुम्हारे दोनों पत्र एक ही साथ, अर्थात् पिछली रातको मिले। जयरामदासके साथ तुम्हारी और घनिष्ठता बढ़नेसे मुझे बड़ी प्रसन्नता है। मैं यही कामना करता हूँ कि यह घनिष्ठता सदा बढ़ती ही रहे।

जयरामदास मुझसे सहमत है, यह जानकर बड़ी खुशी हुई। जब भी वह किसी बातसे सहमत होता है, पूरे दिलसे ही होता है। मैं जानता हूँ कि जब डॉ० चौइथराम मेरे विचारोंसे सहमत नहीं होते तब भी उनकी निष्ठा तो मुझमें बनी ही रहती है। और वे अथवा कोई भी दिल और दिमागमें कायल हुए बिना यों ही मेरे सुझावों पर सहमति दे दे, यह तो मैं चाहता ही नहीं।

जबतक महादेव विकासकी अवस्थामें है, विद्याको उसके साथ नरमी और सख्ती, दोनोंसे काम लेना होगा। बच्चोंका पालन-पोषण एक बड़ी कला है। विद्याको यह हर हालतमें सीखनी है।

फिलहाल तो तुम दोनोंको कराचीमें ही रहना चाहिए। पटना पहुँचनेपर मैं जान सकूँगा कि तुम्हारी जरूरत है या नहीं। यदि जरूरत हुई तो बुलवा लूँगा। अगर न हुई, तो क्या करना होगा, इसपर विचार करूँगा।

जिस अखबारको जमानतकी आवश्यकता हो, उसे चलाना ही ठीक नहीं है। मुझे साफ दिखता है कि आज किसी भी अखबारकी आवश्यकता नहीं है।

मैं समझता हूँ, मैंने तुम्हारे सभी प्रश्नोंका उत्तर दे दिया है।

सस्नेह,

बापू

श्री आनन्द हिंगोरानी
मार्फत आर० बी० तोताराम हिंगोरानी
सहीतीपुर
बंदर रोड, एक्सटेंशन
कराची

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखगार और आनन्द तो० हिंगोरानी

२४३. पत्र : रमाबहन जोशीको

१ मार्च, १९३४

चि० रमा,

तुम्हारा पत्र मिला। अब तो जोशी छूटनेवाला है इसलिए तुम दोनों मिलकर जो निश्चय करोगे वह मुझे मंजूर होगा। मैंने जोशीको विस्तारपूर्वक लिखा है। मैं समझता था कि तुम माँ-बेटीको वह जगह अनुकूल आ गई है। मैं भी यह मानता हूँ कि जहाँ मन उचाट रहे वहाँ रहना निरर्थक है।

मुझे समय-समयपर लिखती रहना।[1]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३६४) से। **बापुना पत्रो–७: श्री छगनलाल जोशीने**, पृ० २९९ से भी

२४४. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

१ मार्च, १९३४

चि० विद्या,

तुमने अक्षर बिगाड़ा है। मुझे खत लिखने में आलस्य न किया जाय।

महादेवके बारेमें आनंदको लिखा है। यदि आनंदका पटना जाना होगा तो तुमारे कराचीमें रहना होगा अथवा मुलतान। अधिक लिखनेका समय नहीं है।

बापुके आशीर्वाद

माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

१. यह वाक्य **बापुना पत्रो–७: श्री छगनलाल जोशीनेमें** ही मिलता है।

२४५. भाषण : सार्वजनिक सभा, सिद्दापुरमें[1]

१ मार्च, १९३४

गांधीजी ने कहा कि यह शिकायत[2] शायद अतिरंजित है, लेकिन मुझे कोई सन्देह नहीं है कि तत्वतः यह सच है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि सिद्दापुरके सवर्ण हिन्दू हरिजनोंपर लगाई निर्योग्यताएँ दूर कर देंगे। अगर वे ऐसा नहीं करते तो उनके हरिजन-कोषमें दान देनेका कोई मतलब ही नहीं है। ऐसे दानको किसीको भी उन पापोंको करते रहनेका परवाना नहीं मानना चाहिए जिन्हें मिटानेके लिए यह दान दिया गया है। अपने पापके प्रायश्चित्तस्वरूप दिया गया दान भविष्यमें कभी भी वह पाप न करनेके संकल्पका प्रतीक होना चाहिए। इसलिए भविष्यमें आपको हरिजनोंके साथ अपने सगे भाई-बहनोंकी तरह व्यवहार करना चाहिए। हमारी वर्तमान अधोगतिका एक प्रबल कारण हरिजनोंका शोषण है। और जबतक हरिजनोंके बेड़ियाँ पड़ी हुई हैं तबतक भारतको सुखी होनेकी आशा कभी नहीं करनी चाहिए। . . . एक किसानने गांधीजी को सुपारियों-इलाचियों और काली मिर्चके नमूने भेंट किये, जिनपर उसने उन चीजोंके १९२९ और १९३३ के मूल्य अंकित कर दिये थे।

इसका उल्लेख करते हुए गांधीजी ने कहा कि मैं इसका एक इलाज सुझाऊँगा, जिसे आप चाहें तो आजमा सकते हैं। वह इलाज है कताई। आपको लाभदायक फसलें उगानी चाहिए और अपनी फुरसतके समयका पूरा-पूरा उपयोग करना चाहिए। यह सोचकर कि कताईसे बहुत ज्यादा कमाईकी सम्भावना नहीं है, आपको बेकार नहीं बैठे रहना चाहिए। कुछ न मिलनेसे तो कुछ मिलना अच्छा ही है। आपको मजबूत और समान सूत कातकर उसे बुनवाना चाहिए और वह कपड़ा खुद पहनना चाहिए या यदि आपको निजी इस्तेमालके लिए उसकी जरूरत न हो तो उसे बेच देना चाहिए।

मेरे कहनेका मतलब यह नहीं कि मन्दीका मूलगामी निवारण करनेके लिए दूसरे उपाय आवश्यक नहीं हैं, लेकिन वह तो एक बड़ा सवाल है, जिसको बड़े-बड़े राजनयिकों और राजनीतिज्ञोंको हल करना है। मैं तो सीधे उन लोगोंको कुछ सुझा रहा हूँ जो कठिनाईमें हैं और मैं यह दिखानेकी कोशिश कर रहा हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति अपना कष्ट दूर करनेके लिए कुछ कर सकता है और वह 'कुछ करना' स्पष्ट ही मजबूरीके उस अवकाशका ठीक उपयोग करना है जो इस कठिनाईके कारण और

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. स्थानीय हरिजनोंकी यह शिकायत कि उनके साथ गुलामों-जैसा व्यवहार किया जाता है।

भी खलनेवाली चीज बन गया है। कोई चाहे तो ज्यादा लाभ देनेवाले दूसरे धन्धे सुझाये। मुझे तो करोड़ों स्त्री-पुरुषोंपर लागू किया जा सकनेवाला कोई और उपाय नहीं सूझता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-३-१९३४

२४६. राय भेजिए

गांधीजीके दौरेमें हरिजनोंके निमित्त प्राप्त थैलियोंसे संचित कोषके वितरणसे सम्बन्धित नियमोंका मसविदा[१]

(१) सभी प्रान्तोंका थैली-कोष एकत्र हो जाने के एक-दो महीने बाद केन्द्रीय कार्यालय तथा प्रान्तीय कार्यालयोंके वर्तमान आर्थिक सम्बन्धोंके स्थान पर इस थैली-कोषके कारण नये आर्थिक सम्बन्ध कायम किये जा सकते हैं, जिनका वर्णन आगे किया गया है। इस कोषको गांधी हरिजन थैली-कोष कहा जायेगा।

(२) हरिजन-कल्याणकी योजनाओंके स्वीकृत हो जानेपर उन योजनाओं पर होनेवाले खर्चका भुगतान थैली-कोषसे, अर्थात् थैली-कोषके ७५% के कोटेमें से या अगर मामला बड़े-बड़े नगरोंका हो तो ५०% कोटेमें से किया जाना चाहिए। व्यवस्था तथा प्रचारपर होनेवाले खर्चके निमित्त दिये जानेवाले अनुदान वर्तमान प्रणालीके अनुसार ही दिये जाते रहेंगे, अर्थात्, ऐसे खर्चका आधा या दो-तिहाई अथवा जो भी अनुपात तय किया गया हो वह केन्द्रीय कोषमें से, जिससे थैली-कोषको अलग रखा जायेगा, दिया जायेगा।

(३) बम्बई, कलकत्ता, कराची और ऐसी ही परिस्थितियोंवाले अन्य नगरोंको छोड़कर सर्वत्र प्रत्येक शहर या जिले अथवा प्रान्तमें एकत्र की गई राशिका ७५% उसी स्थान, या क्षेत्र अथवा प्रान्तमें खर्च किया जायेगा, बशर्ते कि निम्नलिखित दो शर्तें पूरी होती हों :

(क) किसी भी कल्याण-योजनामें, जिसमें पहले अंगीकार किये सभी कार्य शामिल होंगे, थैली-कोषके कोटेके उपयोगके लिए यह आवश्यक होगा कि ऐसी योजनाको केन्द्रीय कार्यालय तैयार करे और वही उसे पेश तथा स्वीकृत करे।

(ख) स्वीकृत योजना या योजनाओंको कार्यान्वित करनेके लिए पूरे या आधे समय अथवा अवैतनिक रूपसे काम करनेवाले कार्यकर्त्ता मिल रहे

१. यह मसविदा दिल्लीके हरिजन सेवा संघने तैयार किया था।

हों और उनके नाम स्वीकृत हो गये हों तो स्थायी कार्यकर्त्ता नियुक्त करनेमें यह सावधानी बरतनी चाहिए कि उन्हें कमसे-कम दो वर्षोंका अबाध अनुभव हो।

(४) सम्बन्धित क्षेत्रके कार्यकर्त्ताओंकी इच्छाके अनुसार और प्रान्तीय कार्यकर्त्ताओंकी सहमतिसे थैली-कोषकी रकम परिस्थितियोंके अनुसार क्रमशः कमसे-कम दो सालमें खर्च की जानी चाहिए।

(५) पैसा जरूरतके मुताबिक किस्तोंमें, कल्याण-योजनापर हुए खर्चका मासिक हिसाब पेश करनेपर, दिया जायेगा। लेकिन कामको चालू रखनेके लिए यथोचित अग्रिम राशियाँ भी दी जायेंगी।

महात्मा गांधीकी विशेष इच्छा है कि थैली-कोषमें से एक भी रुपया प्रान्तीय, जिला या अन्य कार्यालयोंकी व्यवस्था या प्रचार-कार्यपर खर्च न किया जाये और थैली-कोषकी रकमका उपयोग हरिजन-कल्याण कार्यको सम्पन्न करनेके अलावा और किसी मदमें न किया जाये।

(६) दानकी रकमको विशेष प्रयोजनोंके लिए सुरक्षित रखना हो तो दान देते समय ही वैसा कर दिया जाना चाहिए, बादमें नहीं। और प्रयोजन-विशेषके लिए दिया गया ऐसा दान तभी स्वीकृत माना जायेगा जब गांधीजी उसपर सहमति दे देंगे।

(७) यदि कोई जिला ७५ प्रतिशतके कोटेसे अधिक राशिकी माँग करे तो उसकी इस विशेष माँगपर केवल उसकी गरीबीके आधारपर या उस जिलेमें कार्यके असाधारण विस्तार अथवा उसमें हरिजनोंकी असामान्य रूपसे बड़ी आबादीके आधारपर ही विचार किया जायेगा।

(८) जहाँतक ताल्लुका-संगठनों और ताल्लुकोंके वित्त का सम्बन्ध है, कोषमें पैसा देनेवाले ताल्लुकोंकी योजनाओंका ऐसी योजनाओंके सन्दर्भमें यथोचित खयाल किया जायेगा। ताल्लुकोंमें वैतनिक मन्त्री या कार्यालयकी जरूरत नहीं होनी चाहिए।

(९) प्रान्तीय मन्त्री तथा जिला मन्त्रियोंको सम्बन्धित कार्यालयोंके अधिकारियोंकी हैसियत छोड़कर कल्याण-योजनाओंके अभिन्न अंग बन जाना चाहिए। इस प्रकार जिलोंमें योजनाओंकी देखरेख करनेवाले प्रान्तीय कर्मचारियोंका खर्च ७५ % कोटेसे किया जायेगा और वह सम्बन्धित जिलोंसे उनके बजटके अनुपातमें लिया जायेगा। कल्याण-योजनाओंकी देखरेखके लिए आवश्यक कर्मचारियोंपर होनेवाले व्ययको रचनात्मक व्यय माना जा सकता है।

जो लोग विभिन्न हरिजन सेवक संघोंसे सम्बद्ध हैं या अन्यथा इस कार्यमें रुचि रखते हैं उन सबको इस बातके लिए आमन्त्रित किया जाता है कि वे जितनी जल्दी

बने, ऊपरके नियमोंके मसविदेके बारेमें अपने सुझाव केन्द्रीय बोर्डके मन्त्रीके पास भेज दें। मंशा यह है कि जो लोग उपयोगी सुझाव दे सकते हैं, उनकी बुद्धिका लाभ इन नियमोंको अन्तिम रूप देनेमें उठाया जा सके। जितना कठिन पैसा एकत्र करना था, उससे शायद अधिक ही कठिन उसे समझदारीके साथ खर्च करनेका काम है। मुख्य कठिनाई पूरे समय काम करनेवाले विश्वस्त और अन्यथा सक्षम-कुशल कार्यकर्त्ता मिलनेमें होगी। इसलिए सुझाव देते समय स्थानीय संघ और व्यक्ति कार्यकर्त्ताओंसे सम्बन्धित कठिनाईका ध्यान रखेंगे। लेकिन जिन योजनाओंमें हरिजनोंके नियोजनकी गुंजाइश होगी वे निश्चय ही उनकी अपेक्षा अधिक स्वीकार्य होंगी जो कार्यकर्त्ताओंसे ऐसी योग्यताकी अपेक्षा रखती हों कि उनके कार्यान्वियनमें हरिजनोंको लगाना असम्भव ही हो जाये। इतना कहना काफी है कि प्रत्येक योजनाका उद्देश्य उपलब्ध कोषसे हरिजनोंकी शैक्षणिक तथा आर्थिक अवस्थामें जल्दीसे-जल्दी और अधिकसे-अधिक सुधार लाना है। इसलिए सामान्य नियम केवल दिशाका संकेत देनेवाले और लोचदार होने चाहिए, जिससे प्रान्तीय तथा जिला संघों द्वारा तैयार की जानेवाली तरह-तरहकी योजनाओंका उनमें समावेश हो सके।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-३-१९३४

२४७. टिप्पणी

बिहारके लिए

सुदूर न्यूजीलैंडसे वेलिंगटन भारतीय संघने तार-मनीआर्डरसे बिहार राहत कोषके लिए ९३ पौंडकी राशि भेजी है। वह राशि बाबू राजेन्द्रप्रसादके पास भेज दी गई है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-३-१९३४

२४८. मेला-अरासुरका रुदन

मुझे ऐसी कोई भी जगह याद नहीं आती जहाँ मुझे हरिजनोंकी ओरसे मानपत्र न भेंट किया गया हो। अधिकांश मानपत्रोंमें आम ढंगकी शिकायतें थीं, किन्तु दो-तीन ऐसे उदाहरण मुझे याद आ रहे हैं जिनमें सवर्ण हिन्दुओंके अत्याचारके खिलाफ खास शिकायतें भी की गई थीं। त्रिचिनापल्लीसे कुछ ही दूर स्थित, लालगुडि ताल्लुकेमें मेला-अरासुर नामक एक गाँव है। सामान्य प्रशंसात्मक अनुच्छेदके बाद निम्न प्रकार अपील की गई है:[1]

१. यहाँ इसके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

> हम मेला-अरासुर ग्रामवासियोंके पास पीनेके पानीके दो तालाब हैं। इनमें से एक बड़ा है और दूसरा छोटा, लेकिन दोनोंका उपयोग केवल सवर्ण लोग ही करते हैं और हमें उनका उपयोग नहीं करने दिया जाता। हमारे लिए उन तालाबोंके जलका स्पर्श करना भी निषिद्ध है। . . . हम लगभग अस्सी परिवार हैं। . . . इस निषेधको हटवानेके लिए हमने सरकारके पास प्रार्थना-पत्र भेजा था। . . . फलस्वरूप एक सूचना जारी कर दी गई कि इस तालाबके जलका उपयोग करनेमें किसीको कोई बाधा न दे; लेकिन उससे प्रतिबन्ध हटाया न जा सका, क्योंकि सवर्ण लोगोंने हमारे प्रयत्नोंका बुरा माना और वे हमें अपने खेतोंमें काम देनेको ही तैयार नहीं हो रहे थे। . . . इस प्रकार इस दयनीय हालतमें पिछले नौ महीनोंसे हम ऐसी कठिनाइयाँ झेल रहे हैं जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता। . . .
>
> इस अवसरका लाभ हम आपके सामने अपने दुःख रखनेके लिए उठा रहे हैं . . . क्योंकि हम जानते हैं कि हमें आप ही उनसे छुटकारा दिला सकते हैं। . . . इसके अतिरिक्त हमारा यह अनुरोध भी है कि आप हमें इस गरीबी और कष्टसे राहत दिलानेके लिए प्रत्येक परिवारको, आप जैसा चाहें उस ढंगसे, कमसे-कम इतना अनुदान देनेकी कृपा करें जिससे हम तीन महीनेतक गुजारा कर सकें।

यह शिकायत मेरे सामने त्रिचीमें रखी गई और अपने भाषणमें मैंने लोगोंके सामने इसकी चर्चा भी की।[1] जो बातें बताई गई हैं वे यदि सच हों तो यह मेला-अरासुरके सवर्ण हिन्दुओंके लिए कोई श्रेयका विषय नहीं है। आशा करनी चाहिए कि सवर्ण हिन्दुओंपर इतने अधिक निर्भर रहनेवाले बेचारे हरिजनोंको न्याय दिलानेके लिए प्रान्तीय हरिजन सेवक संघ कुछ भी उठा नहीं रखेगा। प्रसंगको देखते हुए यह जानकारी भी प्राप्त करनी चाहिए कि क्या हरिजनोंको उक्त तालाबोंके अलावा किसी और स्रोतसे शुद्ध जल प्राप्त करनेकी सुविधा है? यदि न हो तो मानवताका ताकाजा है कि जो लोग हरिजनोंको, जिन्हें सार्वजनिक तालाबोंके पानीका उपयोग करनेका कानूनी अधिकार है, उससे वंचित रख रहे हैं वे इस बातकी निश्चित व्यवस्था करें कि उन्हें शुद्ध जल मिलता रहे। हरिजनोंके अपने अधिकारपर अमल करानेकी कोशिश करनेके कारण उनका बहिष्कार करना तो जलेपर नमक छिड़कना है। लेकिन, मैं आशा करता हूँ कि स्थानीय हरिजन सेवक संघके सौजन्यपूर्ण हस्तक्षेपके परिणाम-स्वरूप हरिजनोंको न्याय प्राप्त हो जायेगा और एक ही परिवारके दो हिस्सोंमें फिरसे अच्छे सम्बन्ध स्थापित हो जायेंगे।

अपीलके आखिरी वाक्यका उत्तर देना आवश्यक है। अगर मैं कर सकता तो भी उस मानपत्रके हस्ताक्षरकर्त्ताओंकी इस अपीलको मैं पूरा नहीं करना चाहता कि

१. देखिए "भाषण: सार्वजनिक सभा, त्रिचिनापल्लीमें", १०-२-१९३४।

उन्हें कमसे-कम तीन महीनेतक गुजारा कर सकने लायक 'अनुदान' दिया जाये। ऐसे अनुदान सार्वजनिक धनका अपव्यय होते हैं। वे प्राप्त करनेवालोंको पतित बनाते हैं और उनके आलसीपनको बढ़ावा देते हैं। शरीरसे सक्षम लोगोंको दान नहीं, काम माँगना चाहिए। मैं जानता हूँ कि तंगीके इस समयमें काम ढूँढ़ना भी मुश्किल होता है। यह कठिनाई आम तौरपर सभीको होती है और हरिजनोंको तो अधिक ही है। लेकिन मैं मानता हूँ कि जो आदमी कोई भी ईमानदारीका काम करनेको तैयार है उसे काम मिलनेमें बहुत ज्यादा कठिनाई नहीं होगी। इसलिए मैं सभी हरिजन-हितैषियोंसे यह अनुरोध करूँगा कि वे दानके लिए अपील करनेकी प्रवृत्तिको रोकें और जिन बेरोजगार लोगोंको ईमानदारीका कोई भी काम करनेपर एतराज न हो उन्हें काम दिलानेकी कोशिश करें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-३-१९३४

२४९. 'हरिजन-सेवक' के ग्राहकोंसे

'हरिजन-सेवक'का पहला वर्ष पूरा हो गया है। पत्रकी नीति ग्राहक जानते हैं। इसमें राजनीतिक प्रश्नोंकी चर्चातक नहीं की जाती है। केवल हरिजन-सेवाके निमित्त ही इसका अस्तित्व है, और यथासंभव स्वावलंबी बनानेकी चेष्टा है। एक दृष्टिसे स्वावलंबी-सा है ही, क्योंकि जो घाटा आता है वह हरिजन सेवक संघकी ओरसे नहीं लिया जाता है, तो भी दूसरी और सच्ची दृष्टिसे स्वावलंबी नहीं है, क्योंकि जितने चाहिए, उतने ग्राहक अबतक नहीं बने हैं। आजतक लगभग १,६०० ग्राहक हुए हैं। स्वावलंबी बनानेके लिए कम-से-कम ८०० तो और चाहिए ही। लेकिन जो आज मौजूद हैं वे भी न रहें, तो इस अखबारके जारी रखनेका कोई कारण नजर नहीं आता। अतएव ग्राहकोंसे विनय है कि अपना चंदा इस अंकके बाद अब तुरंत और अवश्य भेज दें। इसके बाद जिन सज्जनोंका चंदा नहीं आया होगा, उनको हरिजन-सेवक नहीं भेजा जायगा। पत्रका वार्षिक चंदा ३।।) है, और छः माहका २)। जो मित्रगण इस पत्रके ग्राहक बनाकर अथवा दूसरी तरह सहायता भेजते रहे हैं, वे कृपया अपनी वह सहायता इस वर्ष भी जारी रखें। सब सज्जन याद रखें कि इस अखबारमें सार्वजनिक खबरें भी नहीं छापी जाती हैं, और हिन्दीमें हरिजन सेवक संघका यही एक मुखपत्र है।

हरिजन-सेवक, २-३-१९३४

२५०. पत्र : अमतुस्सलामको

२ मार्च, १९३४

प्यारी बेटी अम्तुस्सलाम,

तुम्हारा खत कल मिला। सारा पढ़ लिया। मुझे रंज हुआ, इसके यह मानी नहीं कि मैं तुमसे नाराज हूं। और अब तो वात भी भूल गया। माफ तो करना क्या था? तुमने कुछ गुनाह तो नहीं किया था। और क्या चाहती है? राजाजी कहें जहांतक वहीं रहो।[1] जेल जानेकी कोई जल्दी नहीं है। तुमने कबूल किया है कि जबतक बिलकुल अच्छी नहीं होगी तबतक जेल जानेकी बात नहीं करोगी। यह भी समझो कि राजाजी का संग जितना मिले उतना अच्छा ही है। वहां रहकर जो सेवा बन सके लिया करो। डाक्टर शर्माका मेरेपर कुछ खत या तार नहीं है। अब पागल मत बनो। खुश रहो। मुझे लिखा करो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २९५) से।

२५१. भाषण : सार्वजनिक सभा, बेल्लारीमें[2]

३ मार्च, १९३४

गांधीजी ने अध्यक्षकी स्पष्टवादिताके लिए उन्हें बधाई देते हुए कहा कि यह पहली ही बार मैंने ऐसे विलगावके बारेमें सुना है। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि सनातनी लोग मन्दिर-प्रवेश-सम्बन्धी कानून बनानेके मेरे प्रयत्नोंका बुरा मान रहे हैं। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि प्रस्तावित विधेयकमें जबरदस्तीकी बातका कहीं समावेश नहीं है। इसके विपरीत उसका उद्देश्य अभी जो कानूनी प्रतिबन्ध लगा हुआ है उसे हटाना है। इसलिए बेल्लारीके सनातनियोंसे मेरा अनुरोध है कि जिन बातोंके सम्बन्धमें मतभेद नहीं है, उनमें वे सहायता करें। मैं आप सबसे पारस्परिक सहिष्णुता बरतनेका आग्रह करता हूँ। अगर उन्हें यह आश्वासन मिल जाता है कि जो लोग वास्तवमें मन्दिरोंमें जाते हैं उनके बहुत बड़े बहुमतकी स्पष्ट इच्छाके बिना

१. अर्थात्, जबतक राजाजी कहें तबतक वहीं रहो।

२. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। थैली भेंट करते हुए स्वागत समितिके अध्यक्षने बताया था कि यहाँ कुछ ऐसे हिन्दू हैं जिन्होंने थैलीके लिए चन्दा नहीं दिया, लेकिन कुछ ऐसे भी हैं जो थैली भेंट करनेके पीछे विद्यमान भावनासे भी अपना कोई सम्बन्ध रखनेको तैयार नहीं हैं।

किसी भी मन्दिरका द्वार हरिजनोंके लिए नहीं खोला जायेगा तब तो उनके पास शिकायतका कोई कारण नहीं रह जाना चाहिए। इसलिए यह विधेयक यदि पास कर दिया जाता है तब भी मन्दिरोंके द्वार खोल ही दिये जायेंगे, ऐसी बात नहीं है। इस कानूनका उद्देश्य जब स्पष्ट बहुमत राजी हो तो हरिजनोंको मन्दिरोंमें प्रवेश देनेका अधिकार प्रदान करना है। मौजूदा कानूनके अन्तर्गत ऐसा सम्भव नहीं है। और इस प्रश्नको अलग रखें तो हरिजन बच्चोंकी शिक्षा, हरिजनोंको सार्वजनिक कुओं या तालाबोंके उपयोगकी सुविधा देने या उनकी आम आर्थिक स्थितिमें सुधार लानेपर तो उन्हें कोई आपत्ति नहीं हो सकती। मैं निस्संकोच कह सकता हूँ कि जो पैसा इकट्ठा किया जा रहा है वह मन्दिर बनवानेमें नहीं लगाया जायेगा। उसका उपयोग तो केवल ऊपर बताये गये किस्मके रचनात्मक कार्यमें ही किया जाना है। इसलिए सनातनियोंसे यह अपील करते हुए मैं यहाँ उपस्थित विशाल जनसमुदायकी भावनाको परखना चाहूँगा। इसलिए स्वयंसेवकोंसे मेरा अनुरोध है कि उपस्थित पुरुषों और स्त्रियोंके बीच जाकर वे लोग हरिजन-कार्यके लिए, यह जानते हुए कि उसका क्या उपयोग होगा, जो-कुछ देना चाहें, एकत्र करें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-३-१९३४

२५२. पत्र : छगनलाल जोशीको

[३ मार्च], १९३४[के पश्चात्][1]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरा पत्र तो तुम्हें जेलमें मिला ही होगा। तुम भले द्वारका में रहो और रमा भी भले वहाँ चली आये। किन्तु जिसका काम उसीको साजे। मेरे सभी विचार मूल उद्देश्यके अनुसार होते हैं, किन्तु वास्तविकतासे अपरिचित होनेके कारण वे सब व्यर्थ हैं। सूर्यनारायण पोषक हैं। लगभग सामान्य रूपसे यह ज्ञान सही है। किन्तु झुलसे हुए को वह और भी झुलसाता है। इसमें दोष सूर्यनारायणका नहीं बल्कि झुलसे हुए व्यक्तिका है। ऐसा व्यक्ति तो सूर्यके अभावकी ही कामना करेगा। इसी प्रकार तुम्हें अपने बारेमें स्वयं ही यह निर्णय करना होगा कि तुम कहाँतक सिद्धान्तोंका पालन कर सकोगे। तुम जो-कुछ करोगे उसमें मेरे माफ करने या न करनेका प्रश्न ही नहीं है। तुम्हारे लिए यही उचित था, यह मानकर उसे स्वीकृति देनी है।

माँ के प्रति तुम्हारा जो कर्त्तव्य है वह भारतमाता के प्रति तुम्हारे कर्त्तव्यमें निहित है। माँ के प्रति अपने इस कर्त्तव्यमें तुम भारतमाता के प्रति अपने कर्त्तव्यको

१. छगनलाल जोशी ३ तारीखको जेलसे छूटे थे।

सम्मिलित कर सकते हो। यदि तुम ऐसा करो तो तुम्हें अपना जीवन अन्य प्रकारसे गढ़ना चाहिए। अपने-अपने स्थानपर दोनों कर्त्तव्य उचित हैं। किन्तु दोनोंको मिलाना उचित नहीं। यही बात तुम्हारी भाभीके सम्बन्धमें भी लागू होती है। किन्तु इस सबके बारेमें तो यदि हम मिलेंगे तब विचार-विमर्श करेंगे। इस बीच वहाँके समाचार लिखते रहना। मैं वहाँ ११ तारीखको पहुँचूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५२७) से।

२५३. पत्र : डब्ल्यू० एच० ब्राउनको

धारवाड़
४ मार्च, १९३४

प्रिय मित्र,

मुझे हुबलीसे धारवाड़ ले जानेवाली गाड़ीपर लगे राष्ट्रीय झंडेके सम्बन्धमें आपका आजकी तारीखका लिखा पत्र श्रीयुत अ० वि० ठक्करने दिखाया है। आपका यह अनुमान सही है कि झंडा मेरी सहमतिसे नहीं लगाया गया होगा। झंडा धारवाड़ जाकर ही लगाया गया था और श्रीयुत अ० वि० ठक्करके कहनेपर। जब उन्होंने हमारी गाड़ीपर झंडा नहीं देखा तो सम्बन्धित कार्यकर्त्ताओंसे कहा कि अगर वह जान-बूझकर नहीं लगाया गया है तो उसे न लगानेका सचमुच कोई कारण नहीं है, क्योंकि झंडा फहराना, जहाँतक वे जानते हैं, गैरकानूनी करार नहीं दिया गया है। मैंने यह बातचीत तो सुनी, लेकिन श्रीयुत ठक्करकी इस बातपर कोई आपत्ति नहीं की। मेरी स्थिति तो पूर्ण तटस्थताकी रही है। न मैंने कहीं झंडा फहरानेको कहा है और न फहरानेसे मना किया है। बल्कि मध्य प्रान्तमें एक स्थानके बारेमें तो मुझे ऐसा याद आता है कि मुझसे सार्वजनिक रूपसे झंडा फहरानेको कहा गया और मैंने निस्संकोच उसे फहरा दिया। जबसे मुझे मेरी अवधिके पूर्व रिहा किया गया है, मैंने किसी भी राजनीतिक आन्दोलनमें प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष किसी भी रूपमें भाग न लेनेकी खास सावधानी बरती है और स्वेच्छासे ली गई उस प्रतिज्ञाका निर्वाह करनेके लिए मेरा इरादा अगले ३ अगस्ततक, जहाँतक सम्भव है, ऐसी प्रवृत्तियोंसे अलग ही रहनेका है। लेकिन, उससे अलग रहनेका मतलब यह नहीं है कि अब मैं कांग्रेसी नहीं रह गया हूँ या यह कि मैं सचमुच क्या हूँ, इस बातको छिपाऊँ। मेरे अलग रहनेका इतना ही मतलब है कि उक्त अवधिमें मैं सविनय प्रतिरोध नहीं करूँगा और न किसीको उसके लिए प्रेरित करूँगा। मैं मानता हूँ कि अभी कानून जैसा है उसका श्रीयुत ठक्कर द्वारा लगाया गया यह अर्थ सही है कि राष्ट्रीय झंडा फहराना कोई अपराध नहीं है।

और यहाँ यह बता देना शायद उचित रहेगा कि अपने मध्य प्रान्त तथा मद्रास प्रान्तके दौरेमें मैंने अकसर ऐसी गाड़ियोंसे यात्रा की है जिनपर राष्ट्रीय ध्वज फहरा रहा था।

मैं दिनके ३ बजे बेलगाँवसे रवाना होनेवाला हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत डब्ल्यू० एच० ब्राउन, आई० सी० एम०
जिला मजिस्ट्रेट
धारवाड़

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१९) से। सी० डब्ल्यू० ७७७७ से भी; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

२५४. भाषण : रेलवे कर्मचारियोंकी सभा, हुबलीमें[1]

४ मार्च, १९३४

गांधीजी ने कहा कि मैं आप लोगोंकी ही तरह एक श्रमिक हूँ, क्योंकि अपनी युवावस्थासे मैं श्रमिकोंके ही बीच रहा हूँ। मैं आपसे यही कहूँगा कि आप हिम्मत न हारिए, अपने-आपमें विश्वास न खोइए, जिन्हें आप पूँजीपति कहते हैं, उनके सामने अपने-आपको असहाय न मानिए। यह जरूरी नहीं है कि आदमीकी पूँजीका अन्दाजा उसके पास कितने सिक्के हैं, इसी बातसे लगाया जाये। प्राचीन कालमें इसका अनुमान, उनके पास कितना पशु-धन है, इस बातसे लगाया जाता था। श्रमिककी पूँजी उसका श्रम है। इसलिए फर्क किस्म या गुणका नहीं, बल्कि सिर्फ कम-ज्यादाका ही है। पूँजीपतियोंके पास हजारों रुपये हो सकते हैं, जबकि श्रमिकोंके पास श्रम है, जिसे शायद आठ आने प्रतिदिनके हिसाबसे कूता जा सकता है। लेकिन, ५०,००० श्रमिकोंके सम्मिलित श्रमका मतलब होगा एक दिनमें अर्जित २५,००० रुपयेकी पूँजी। ऐसे उदाहरण दिये जा सकते हैं जब किन्हीं विशेष परिस्थितियोंमें पूँजीपतियोंके सोनेके सिक्के इस कारणसे किसी कामके साबित न हुए कि उन्हें श्रमिकोंकी सेवा प्राप्त नहीं हो सकी, जबकि केवल एक ही श्रमिकका श्रम अमूल्य साबित हुआ है। इसलिए यदि श्रमिक एक होकर काम करें तो वे भी वैसे ही पूँजीपति हो सकते हैं जैसे उनके नियोक्ता हैं। इसलिए नियोक्ता और श्रमिक आपसमें एक-दूसरेपर निर्भर हैं। और यदि दोनोंमें से प्रत्येक पक्ष अपनी मर्यादाओंको स्वीकार करके चले तो

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

शिकायतका कोई कारण ही सामने न आये। गांधीजी ने आगे कहा, मैंने जो-कुछ कहा है, वह हरिजनोंपर भी उतना ही अधिक लागू होता है। जब उन्हें अपनी शक्तिका बोध हो जायेगा तो दुनियाकी कोई भी ताकत उनकी आर्थिक प्रगतिको रोक नहीं सकेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-३-१९३४

२५५. एक पत्र[1]

[५ मार्च, १९३४ के पूर्व][2]

आपको शायद मालूम हो गया होगा कि मैं जल्दी उड़ीसा नहीं आ रहा हूँ। मैं पहले बिहार जाऊँगा। हाँ, जुलाईके आरम्भसे पूर्व ही उड़ीसाका दौरा जरूर पूरा कर लेना चाहता हूँ। अपना अगला कार्यक्रम तो साफ-साफ मैं ११ मार्चको बिहार पहुँचनेके बाद ही जान पाऊँगा।

[अंग्रेजीसे]
न्यू उड़ीसा, ७-३-१९३४

२५६. पत्र : वसुमती पण्डितको

बेलगाँव
५ मार्च, १९३४

चि० वसुमती,

कल रात बेलगाँव पहुँचनेपर तेरा पोस्टकार्ड मिला। तेरा या अन्य किसीका पथ-प्रदर्शन करना मेरे लिए कठिन हो गया है क्योंकि मेरा मन यरवडामें बसा हुआ है। सिर्फ उतना ही बाहर है जितना हरिजन-कार्यके लिए आवश्यक है। इसके सिवा, मुझे ऐसा भी लगता है कि तुम सबको जो अच्छा लगे वैसा करो। अन्तिम निर्णय यही तो था न कि सब लोग अपनी जवाबदारी और इच्छानुसार कार्य करें। क्या इसीमें सबकी परख नहीं हो जायेगी? इसके बावजूद मैं यह समझता हूँ कि तेरे जैसोंका पथ-प्रदर्शन किये बिना भी काम नहीं चल सकता। मुझसे सलाह लेनेवालों को मैं वही राय देता हूँ जो मुझे सूझती है।

१. साधन-सूत्रसे यह ज्ञात नहीं होता कि यह पत्र किसको लिखा गया था।
२. खबर पर ५ मार्चकी तिथि दी गई है।

तुझसे मिलनेकी मेरी भी उतनी ही इच्छा है जितनी तेरी। इसके बावजूद अपने मनको रोकता हूँ। तत्काल तो मुझे यही लगता है कि तू वर्धा चली जा और वहाँ जो-कुछ हो रहा है, उसे देख। मैं वर्धा से १० तारीखको गुजरूँगा। मेरे वहाँ पहुँचनेके कुछ स्टेशन पहले या वर्धामें मेरे साथ होकर उसके कुछ स्टेशन बादतक तू मुझसे सलाह-मशविरा कर सकती है। वर्धाके कार्यका अनुभव भी प्राप्त करना। यदि तुझे ऐसा करना न रुचे तो तू बोरीवली में रहना। मैं तुझे अहमदाबाद जानेकी सलाह नहीं दूँगा। वहाँ टिकनेके ठिकाने कम ही हैं। लाल बँगलेमें तो रहा ही नहीं जा सकता। और हरिजन आश्रममें भी नहीं रहा जा सकता। अतः वर्धा ही एक ऐसी जगह है जहाँ शान्तिपूर्वक रहा जा सकता है।

अपनी पढ़ाईके बारेमें तू जो कहती है वह मैं समझता हूँ। पुस्तकें पढ़ना ही काफी नहीं है। उनपर मनन करना चाहिए और मनन करनेके लिए उनमें से कुछ-एक पुस्तकें दुबारा पढ़नी चाहिए। यदि तू चाहे तो मैं फिर एक सूची बनाकर भेज सकता हूँ। तुझे व्याकरणकी भी कोई पुस्तक पढ़ लेनी चाहिए। 'गुजराती वाचनमाला' भी छोड़ देने-जैसी पुस्तक नहीं है।

तेरे मनमें यह प्रश्न उठता होगा कि बापू मुझे पटना क्यों नहीं बुला लेते। फिलहाल पटनामें रहनेमें बहुत-सी कठिनाइयाँ हैं। मैं यह भी नहीं जानता कि पटनामें रहने की क्या व्यवस्था है। लोगोंके मन शंकित हैं। अब भी भूकम्पका भय बना हुआ है। ऐसी स्थितिमें किसीको मिलनेके लिए बुलाने की मेरी इच्छा नहीं होती। किन्तु पटना पहुँचकर मैं इस सम्बन्धमें अधिक लिख सकूँगा।

दुर्गा महादेवसे मिलने आज यहाँ आ रही है। मुझसे मिलनेका निमित्त भी होगा ही। उसके यहाँ आनेकी खबर मुझे आज ही मिली है। डाह्याभाई और भड़ौंच के चन्दुभाई भी आ रहे हैं। मैं सचमुच यह सोचता हूँ कि यदि उनके साथ तू भी चली आती तो कितना अच्छा होता। क्या पता, शायद चली ही आये। प्रातःकालकी प्रार्थनाके बाद मैं यह लिख रहा हूँ। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। यहाँसे बुधवारको नेपानी, वहाँसे बीजापुर और ८ तारीखको हैदराबादकी गाड़ी पकड़नी है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

गंगाबहन कहाँ है? यदि वह वहाँ हो तो उससे कहना कि वह मुझे फिर लिखनेवाली थी किन्तु उसने नहीं लिखा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३८३)से। सी० डब्ल्यू० ६२८से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

२५७. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

५ मार्च, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरा वजन १०७ पौण्ड है। आहार पहलेवाला ही चल रहा है। रक्तचाप कुछ दिनोंसे नहीं लिया गया है। स्वास्थ्य काफी ठीक है।

हाँ, तुम्हारा गुजराती पत्र मिला था। काफी अच्छा था। बेशक, संस्कृत सीखो।

काश मुझे जर्मनका व्याकरण आता! खेद है कि मैं जर्मन कभी सीख ही नहीं पाया।

जब 'वु' 'जोउं छुं' के साथ जोड़ा जाता है तब 'वु' का 'वा' क्यों हो जाता है, इसका सिवा इसके मैं कोई कारण नहीं बता सकता कि इसका उच्चारण करना अपेक्षाकृत अधिक आसान होता है।

तुम शारदा-मन्दिर गईं, यह जानकर खुशी हुई।

आर० जर्मनीमें यहूदियोंके उत्पीड़नका समर्थन करे, इसपर मुझे विश्वास नहीं होता।

तुम पूर्णता प्राप्त करो, यह तो मैं चाहता ही हूँ। उसके लिए प्रयत्न करनेसे अच्छा और क्या हो सकता है।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२५८. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

५ मार्च, १९३४

मरकरासे मैसूर तक की यात्रामें अच्छा अनुभव हुआ। मुझे प्रसन्नता है कि उक्त अनुभव हुआ। ऐसे अनुभवोंके बिना जीवनमें रस नहीं आता। जब बिना काँटोंके 'कल्चर्ड' गुलाब उगेंगे तो उनमें आज-जितनी चमक कदापि नहीं हो सकती। गुलाबकी जितनी खूबी फूलमें है उतनी काँटोंमें भी है; और काँटे फूलकी खूबीको बढ़ाते हैं।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृ० १४३

२५९. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

५ मार्च, १९३४

चि० ब्रजकृष्ण,

ऐसा दौरा वन गया है खत पेट-भरके लिखा ही नहिं जाता। अच्छा ३५वे वर्षमें प्रवेश किया। मेरे आशीर्वाद तुमारे पास नित्य हैं। ईश्वर तुमारा कल्याण ही करेगा और तुमारे पाससे और भी सेवा लेगा। इलाज तो दा० अनसारी कहें वही किया करो।

मातुश्री अच्छी हो गई होगी।

मैं ११ तारीखको पटना पहोंचता हूं।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४०९) से।

२६०. पत्रः अमतुस्सलामको

५ मार्च, १९३४

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुमारा खत मिला। तुम्हारे लिये यह हुक्म है कि जबतक अच्छी तरह शक्ति न आ जाय वहीं रहो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २९६) से।

२६१. प्रश्नोत्तर[1]

बेलगाँव
५ मार्च, १९३४

बेलगाँवमें हरिजन-सेवकोंकी एक सभा हुई। वह गांधीजी का मौन-दिवस और 'हरिजन' के सम्पादनका दिन था। एक कार्यकर्त्ता टाइप किये हुए प्रश्न ले आया था। उनमें से बहुत उपयोगी प्रश्नोंको छाँटकर उत्तरोंके साथ दिया जा रहा है।

प्रश्न : आपका हरिजन-कार्य विशुद्ध रूपसे धार्मिक कारणोंपर ही आधारित है या राजनीतिक कारणोंपर?

उत्तर : विशुद्ध रूपसे धार्मिक कारणोंपर।

प्र० : जब आप यह जानते हैं कि ऐसे पण्डित और सनातनी लोग हैं जो अस्पृश्यताको शास्त्र-सम्मत मानते हैं तो आप उन लोगोंका मत क्यों लेते हैं जो ऐसा नहीं मानते?

उ० : मेरा मत किसीसे उधार लिया हुआ नहीं है। अस्पृश्यताके विषयमें तो मेरा मत इस विषयपर किसी पण्डितसे चर्चा करनेसे वर्षों पूर्व स्थिर हो चुका था। लेकिन जब मैंने अस्पृश्यताके खिलाफ प्रचार शुरू किया, और विशेषकर तब जब कि मेरे उपवासके कारण इस ओर सारी दुनियाके लोगोंका ध्यान गया, तब मेरे लिए उन लोगोंकी स्थितिका अध्ययन करना जरूरी हो गया जो इस आधारपर अस्पृश्यता का बचाव करते थे कि यह शास्त्रमूलक प्रथा है। और ऐसा करते हुए अगर एक ओर मुझे ऐसे पण्डित मिले जो अस्पृश्यताका बचाव करते थे तो दूसरी ओर ऐसे भी लोग मिले जिनका दृढ़ विचार था कि आज जैसी अस्पृश्यता बरती जाती है वैसी अस्पृश्यताका औचित्य शास्त्रोंसे सिद्ध नहीं होता। इस दूसरे मतवाले लोग मुझे उतने ही पण्डित लगे जितने अन्य लोग। निश्चय ही, अपने मतके समर्थनमें इन पण्डितोंके प्रमाणका उपयोग करनेका मुझे अधिकार था। लेकिन मान लीजिए कि इन पण्डितोंका मत जैसा है उससे भिन्न हो तो भी इस विषयमें मेरी प्रतीति इतनी दृढ़ है कि वह किसी भी पण्डितके समर्थनके बिना कायम रह सकती है।

प्र० : आपने अनेक अवसरोंपर कहा है कि आपसे हिमालय-जैसी बड़ी भूलें हुई हैं। क्या आप इस विषयमें आश्वस्त हैं कि आप वैसी ही भूल फिर नहीं कर रहे हैं?

उ० : नहीं, इस विषयमें मैं तनिक भी आश्वस्त नहीं हूँ, क्योंकि मैं कोई त्रिकालज्ञ तो हूँ नहीं। लेकिन अगर मुझे लगेगा कि मुझसे भूल हुई है, तो मैं अपना

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

कदम बेझिझक वापस ले लूँगा। और मैं जानता हूँ कि ईश्वर अनजानमें की गई सभी भूलें क्षमा कर देगा, जैसाकि उसने पहले किया है।

प्र० : कुछ लोगोंका कहना है कि हरिजनोंके लिए अलग स्कूल होने ही नहीं चाहिए, किन्तु कुछ अन्य लोग कहते हैं कि ऐसे स्कूल नितान्त आवश्यक हैं।

उ० : मेरा विचार यह है कि यों तो हरिजनोंको सार्वजनिक स्कूलोंमें दाखिल होनेकी सारी सुविधाएँ दी जानी चाहिए, किन्तु अभी कुछ दिनतक प्रारम्भिक स्कूल तो सर्वथा आवश्यक होंगे, ताकि हरिजन बच्चोंको प्राथमिक स्कूलोंके लिए तैयार किया जा सके। ऐसी आशा करना व्यर्थ है कि हरिजन बच्चे प्राथमिक शालाओंको एकाएक भर दें। अगर सामूहिक रूपसे दाखिलेका प्रयत्न किया गया तो उसके विरोध की भी सम्भवना है। इसलिए, यदि हम सच्चे मनसे हरिजन बच्चोंके शिक्षणको प्रोत्साहन देना चाहते हों तो प्रारम्भिक शालाएँ आवश्यक हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-३-१९३४

२६२. पत्र : सर सैम्युअल होरको

वर्धा, (म० प्रा०) भारत
के पतेपर
६ मार्च, १९३४

प्रिय सर सैम्युअल होर,

आपको याद होगा कि जब मैं १९३१ के दिसम्बरमें भारत लौट रहा था तो आपने रोममें मेरे द्वारा एक पत्रकारको दी गई कथित मुलाकातके सम्बन्धमें मेरे पास एक तार भिजवाया था और मैंने अपने उत्तरमें उस समाचारका खण्डन किया था।[1] मेरे इस खण्डनका भी खण्डन निकला, पर मैंने उसे हाल ही में देखा है, क्योंकि बम्बईमें कदम रखनेके एक सप्ताहके भीतर ही मुझे पकड़कर जेल भेज दिया गया था।

गत अगस्तमें आखिरी दफा जेलसे छूटनेके बाद मुझे मीराबाईने बताया कि एक अंग्रेज मित्र बम्बईके विल्सन कॉलेजके प्रोफेसर मैकलीनका विचार है कि यद्यपि बात पुरानी पड़ गई है, तथापि उसकी सफाई हो जाना अच्छा है, क्योंकि जिस समय रोमके पत्रकारने मेरे कथनका खण्डन प्रकाशित कराया था उस समय उसका बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा था और सम्भवतः उसीके फलस्वरूप वाइसराय द्वारा मेरे विरुद्ध १९३२ की कार्यवाही की गई थी। प्रोफेसर मैकलीनका विचार मुझे ठीक लगा और मैंने मीराबाईसे कुमारी अगाथा हैरिसनको तत्सम्बन्धी कतरनें प्राप्त करनेके लिए लिखनेको कहा। बहुत खोज-बीनके बाद उन्हें कतरनें मिल पाईं। इनमें जो सबसे जरूरी कतरन

१. देखिए खण्ड ४८, पृ० ४७१-७२।

थी वह मुझे सबसे अन्तमें गत मास मिली। उस समय मैं अस्पृश्यता निवारण-कार्यके सिलसिलेमें तूफानी दौरा कर रहा था। आपको सन्दर्भ ढूँढ़नेमें कोई कठिनाई न हो, इसलिए वे कतरनें 'ए', 'बी' और 'सी' का चिह्न लगाकर भेजता हूँ।

यह बात स्मरण रखनी होगी कि ये कतरनें मैंने कुमारी अगाथा हैरिसन से प्राप्त होनेपर पहली बार देखीं। मैंने इन्हें कई बार पढ़ा है, और मैं बगैर किसी संकोचके कह सकता हूँ कि 'ए', 'बी' और 'सी' जो-कुछ वास्तवमें हुआ था, उसका उपहासजनक चित्र-मात्र है। 'ए' को इटालियन पत्रकारको दिये गये मेरे कथित लम्बे वक्तव्यका संक्षिप्त संस्करण बताया गया है। 'सी' में 'टाइम्स' का सम्वाददाता मुलाकातके समाचारका मेरे द्वारा किया गया खण्डन देखकर अनिच्छापूर्वक इतना स्वीकार करता है कि सम्भव है, जहाँतक श्रीयुत गेडाके मुझसे "कोई औपचारिक मुलाकात माँगने और ऐसी किसी मुलाकातकी स्वीकृति न दी जानेका" सम्बन्ध है, मेरी बात सही हो, लेकिन साथ ही इस बातपर उसका बड़ा आग्रह है कि मेरे द्वारा दिया बताया वक्तव्य सार-रूपमें ठीक है। परन्तु यदि मैं अपनी जानकारीकी बात न बताकर केवल 'ए' और 'सी' का विश्लेषण-मात्र कर दूँ तो सत्यकी रक्षा ज्यादा अच्छी तरह होगी।

१. 'ए' में जो कहा गया है कि मैंने श्रीयुत गेडाको एक लम्बा वक्तव्य दिया, सो मैंने न कभी लम्बा वक्तव्य दिया, न छोटा।

२. मुझे श्रीयुत गेडासे किसी भी स्थानपर मिलनेको आमन्त्रित नहीं किया गया। हाँ, मुझे एक निजी मकानके गोल कमरेमें कुछ इटालियन नागरिकोंसे अनौपचारिक रूपसे मिलनेका निमन्त्रण अवश्य दिया गया। उस अवसरपर मेरी मुलाकात कई लोगोंसे कराई गई, लेकिन उनके नाम अब मुझे याद नहीं हैं, न मैं उनके नाम उस भेंटके दूसरे दिन ही याद कर सकता था। मुलाकात बिलकुल औपचारिक ढंगसे कराई गई थी।

३. इस अवसरपर वार्तालाप आम ढंगसे ही हुआ था और किसीको विशेष रूपसे सम्बोधित करके नहीं किया गया। कई मित्रोंने प्रश्न किये और असम्बद्ध ढंगकी बातचीत चलती रही, जैसाकि ऐसे अवसरोंपर हुआ करता है।

४. अतएव श्रीयुत गेडा या 'टाइम्स' के संवाददाताका मेरी बातोंको एक ऐसे सम्बद्ध वक्तव्यका रूप देना मानों वह किसी व्यक्तिको सम्बोधित करके दिया गया हो, गलत था।

५. श्रीयुत गेडाने तसदीकके लिए मुझे कुछ नहीं दिखाया कि क्या लिखा है।

६. वार्तालाप अनेक विषयोंपर हुआ, जैसे गोलमेज परिषद्, मेरी तत्सम्बन्धी धारणा और मेरा भावी कार्यक्रम। 'ए' में जो अनेक बातें मेरे द्वारा कही बताई गई हैं वे मैंने कभी नहीं कहीं। अपनी आशाओं, आशंकाओं और भावी कार्यक्रमके सम्बन्धमें मुझे जो-कुछ कहना था, मैंने गोलमेज परिषद्की समाप्तिपर अपने भाषणके दौरान अपनी सामर्थ्य-भर अधिकसे-अधिक नपी-तुली भाषामें कह दिया था। उस निजी वार्तालापके दौरान मैंने जो-कुछ कहा, वह उस भाषणका रूपान्तर-मात्र था। मेरा

यह स्वभाव नहीं है कि सार्वजनिक रूपसे कुछ कहूँ और आपसी बातचीतमें कुछ, या एक मित्रसे कुछ कहूँ और दूसरे से कुछ। मैं यह कैसे कह सकता था कि भारतीय राष्ट्र और ब्रिटिश सरकारमें निश्चित रूपसे झगड़ा खड़ा हो गया है, क्योंकि मैंने उसी समय कई मित्रोंसे यह कहा था कि गांधी-इर्विन समझौतेके द्वारा जो मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हुआ है उसे अक्षुण्ण रखनेकी मैं पूरी शक्तिके साथ चेष्टा करूँगा और विभेद नहीं उत्पन्न होने दूँगा। मैं तो आशावादी हूँ, इसलिए मनुष्योंमें अमिट झगड़ा खड़ा होनेकी सम्भावनामें मेरा विश्वास नहीं है।

७. मैंने यह कभी नहीं कहा था कि मैं इंग्लैंडके विरुद्ध नये सिरेसे संघर्ष छेड़नेके लिए भारत लौट रहा हूँ। उस अनौपचारिक वार्तालापके अवसरपर मुझसे कई प्रकारकी सम्भावनाओंके बारेमें प्रश्न किये गये थे, और 'ए' में उस बातचीतको इस रूपमें रखा गया मानों मैं भारतमें उन सम्भावनाओंको, सम्भव हो, तो साकार करनेके लिए लौट रहा होऊँ।

मैं यह भी कहूँगा कि जनताको न श्रीयुत गेडा द्वारा, जैसीकि खबर है, तैयार किया मूल नोट देखनेको मिला न उनके द्वारा तैयार किया गया विवरण ही। 'ए' और 'सी' में तो 'टाइम्स' के सम्वाददाताकी अपनी धारणाएँ हैं, जो उसने श्रीयुत गेडाके लेख या कथनसे ग्रहण कीं।

पता नहीं, 'सी' का आपके ऊपर क्या प्रभाव पड़ा। यदि मेरे खण्डनकी सत्यता-के सम्बन्धमें आपको शंका होने लगी थी तो जिस प्रकार आपने पहली रिपोर्टकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया था, उसी प्रकार मेरे खण्डनके खण्डनकी ओर भी करना चाहिए था। पता नहीं, आप इस पत्रको किस रूपमें लेंगे, परन्तु यदि आपको मेरी सचाईमें कुछ सन्देह हो गया है तो मैं, सम्भव हो, तो उसका निवारण करना चाहूँगा।

'सी' में जिस 'अनुचरी' का जिक्र किया गया है, वह कुमारी स्लेड हैं। मैं इस पत्रके साथ उनके उक्त वार्तालाप-सम्बन्धी संस्मरण भेजता हूँ।[1]

मैं इस पत्रको प्रकाशित नहीं करा रहा हूँ, पर इसकी प्रतिलिपियाँ अपने कुछ मित्रोंको उनके निजी उपयोगके लिए भेज रहा हूँ। पर मैं चाहूँगा कि आप करा सकें तो स्वयं इसे प्रकाशित करवायें, या प्रोफेसर सी० एफ० एन्ड्रयूजसे, जिनका पता वुडब्रुक, सैली ओक, बर्मिंघम है, इसका जिस प्रकार चाहें सार्वजनिक उपयोग करनेको कह दें।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९४२) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला। **इन द शेडो ऑफ महात्मा**, पृ० १३०-३३से भी

१. 'ए', 'बी' और 'सी' तथा मीराबहनके संस्मरणके लिए देखिए परिशिष्ट २।

२. ७ अप्रैलको इसका उत्तर देते हुए सर सैम्युअलने लिखा कि खुद वे तो इसका कोई उपयोग नहीं करना चाहते, लेकिन एण्ड्रयूज जैसा वांछनीय समझें वैसा करें, इसपर उन्हें कोई आपत्ति नहीं थी।

२६३. पत्र : हीरालाल शर्माको

बेलगाँव
६ मार्च, १९३४

भाई शर्म्मा,

तुमारा खत अच्छा है।

मेरी सलाह है जमनालालजी जो मकान बताते हैं वहां जाओ। लड़कोंको साथ ले जाओ। उनकी रक्षा करना तुमारा धर्म है। तंबु देवे उसका भी उपयोग करो। आश्रममें ही दिन व्यतीत किया जाये। तुमारी वृत्ति ऐसी पाता हूँ कि तुमारा संग्रह हर जगह हो सकेगा। मैं चाहता हूं जल्दी आश्रम पहोंच जाओ। तुमारे पाससे मैं बहुत सेवा लेना चाहता हूं। तुमारी पत्नीकी भी पहचान कर लेना चाहता हूँ। मैं वर्धासे १० तारीखको पसार होता हूं। इतनेमें पहोंच सको तो पहोंच जाओ। अमतुलसलाम को मैं तुमारे पास भेजना चाहता हूं, जब आश्रममें पहोंचोगे तब।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्षमें पृ० ५६-७ में प्रकाशित अनुकृतिसे।

२६४. भाषण : व्यापारी संघ, निपानीमें[1]

७ मार्च, १९३४

मैं एक व्यापारीकी हैसियतसे व्यापारी भाइयोंसे बात कर रहा हूँ। फर्क इतना ही है कि आप लोग अपने-अपने परिवारोंके लिए कारोबार चला रहे हैं, जिनमें से प्रत्येकमें अधिकसे-अधिक सौ सदस्य होंगे; किन्तु मैं यह व्यापार हरिजन कहे जाने-वाले करोड़ों लोगोंके परिवारके लिए कर रहा हूँ। मैंने देखा है कि व्यापारियोंकी साख, वे कितना नकद पेश कर सकते हैं, इस बातपर नहीं, बल्कि अपने वादोंको पूरा करनेके बारेमें उनकी जो एक प्रतिष्ठा बनी होती है, उसपर निर्भर करती है। किसी बैंकके खजानेमें सोनेका अम्बार हो लेकिन वह कोई चेक वापस कर दे—अर्थात् अगर वह उस चेकमें निहित इस वादेको पूरा न करे कि यदि चेक पेश करनेवाले की रकम जमाखाते पड़ी है तो वह चेक देनेपर उसे अवश्य रकमका भुगतान कर देगा — तो उस बैंककी भी साख क्षण-भरमें खत्म हो जायेगी। इसलिए

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

मुझे आशा है कि आपके करोड़ों हरिजनोंके प्रति जो वादा करनेकी खबर है उसे पूरा करनेमें आप नहीं चूकेंगे।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-३-१९३४

२६५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

रोडबल
८ मार्च, १९३४

भाई वल्लभभाई,

इधर कुछ दिनोंसे तुम्हारा पत्र नहीं आया। यह पत्र लिखना प्रार्थनासे पहले शुरू किया है। बेलगाँव कल छोड़ा। यह स्थान छोटा-सा गाँव है, मगर यहाँ रेलवे है।

इस बार पत्र देरीसे लिख रहा हूँ, क्योंकि बेलगाँवमें डाह्याभाई, चंदूभाई, दुर्गा, जीवणजी वगैरह आये थे। डाह्याभाई मणिसे मिले। दुर्गा, जीवणजी और बाबलो महादेव से मिले। यह कह सकते हैं कि मणि और महादेव सकुशल हैं। महादेव अपने काममें मशगूल हैं। मैंने चंदूभाईसे सब-कुछ सुन लिया है। कानजीभाई अभीतक नहीं आये। अपनी नाकका ध्यान रखो। नेती करते रहो। नेती मुलायम कपड़ेकी ही ठीक होती है।

लेस्टर दिल्ली गई है। हैरिसन १६ तारीखको आ रही है। बा का पत्र साथमें है। बा का भाई सख्त बीमारीसे गुजरा है। लक्ष्मीदासको अब कोई डर नहीं है। तारा-बहन मोदी काफी बीमार हैं। उसके गलेमें गाँठ हो गई है और वह फूट गई है। दाँतोंने बहुत दुःख दिया और अभीतक दे रहे हैं। किशोरलालका बुखार अभीतक बना हुआ है।

मैं ११ तारीखको पटना पहुँचूँगा। ठक्कर बापा और उनके संगी-साथी दिल्ली जायेंगे। यदि पटना पहुँचकर ऐसा लगा कि हरिजन-यात्रा हो सकती है, तो ठक्कर बापाको बुला लूँगा।

लीलावती (आसर) काफी बीमार हो गई है। प्रेमा उसके साथ है, इसलिए चिन्ता नहीं है। अमतुस्सलाम अभीतक तो बीमार है ही। ब्रजकृष्ण ठीक होता जा रहा है। यह तो तुम जानते ही होगे कि अहमदाबादमें बच्चोंकी बीमारी फूट निकली है। आज इतनेसे सन्तोष करना। अब लोगोंसे मिलनेका समय हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ८४-५

१. गांधीजी को बताया गया था कि व्यापारियोंमें अपने वादेको पूरा करनेकी कुछ अनिच्छा जान पड़ती है। लेकिन अध्यक्षने उन्हें भरोसा दिलाया कि ऐसी किसी आशंकाका कोई कारण नहीं है।

२६६. पत्र : ताराबहन र० मोदीको

८ मार्च, १९३४

चि० तारा,

इस समय सुबहके साढ़े तीन बजे हैं। यह एक छोटा-सा गाँव है। लम्बी यात्रा करके हम रातको ९ बजे यहाँ पहुँचे। यहाँ पहुँचनेपर तुम्हारा पत्र मिला और अब मैं यह लिख रहा हूँ।

आजकल भारतमें (१) एलोपैथी, (२) आयुर्वैदिक, (३) यूनानी, (४) होम्योपैथी और (५) प्राकृतिक चिकित्सा, ये पाँच प्रकारके उपचार प्रचलित हैं। झाड़-फूंकको मैं छोड़ देता हूँ। इनमें सबसे अधिक प्रचलित एलोपैथी है। मेरा रुझान प्राकृतिक चिकित्साकी ओर है और यदि इसके अतिरिक्त किसी अन्य चिकित्सा-पद्धति की सहायता लेनी हो तो मैं एलोपैथीकी सहायता लूँगा, किन्तु सो भी एक सीमातक। एलोपैथी चिकित्सा-पद्धतिका एक अंग — उसकी शल्य-क्रिया — कहीं-कहीं बिलकुल जरूरी हो जाती है और कुछ दवाएँ — जैसेकि कुनैन आदि — बहुत अच्छा काम करती हैं। मैं तुम्हारी प्राकृतिक चिकित्सा कराना चाहूँगा और दाँत आदिका इलाज एलोपैथी के अनुसार कराऊँगा। किन्तु मैं तुम्हारे पास नहीं हूँ और दूर बैठकर अपनी अकलमन्दी नहीं दिखाना चाहता। अतः जो इलाज वहाँ चल रहा है, मेरा मन उसे चलने देनेकी गवाही देता है। एलोपैथीसे इलाज करनेवाले अपेक्षाकृत अधिक प्रामाणिक होते हैं। पश्चिममें वे लोग रोज नये-नये प्रयोग करते रहते हैं। अतः उनके उपचार प्रायः सफल होते नजर आते हैं। किन्तु इतना तो मैं यहाँसे लिख ही दूँ कि किसी पद्धति-विशेषसे उपचार आरम्भ कर देनेके बाद तटस्थ हो जाना चाहिए और उसका जो असर हो उसपर निगाह रखनी चाहिए। परिणामके बारेमें जल्दबाज़ी नहीं मचानी चाहिए। अच्छा-बुरा जो हो सो भले हो। फिर हम अच्छा-बुरा किसे कहेंगे? न तो दुःख दुःख है और न सुख सुख। नारायणको भूल जाना ही दुःख है और उसके नामका सतत स्मरण ही सुख है। देहके प्रति जो मोह है उसे कम कर देना चाहिए। मुझे लिखती रहना। तब यदि मुझे कोई सुझाव देना होगा तो दूँगा।

जबतक शरीर काम करने योग्य सर्वथा स्वस्थ न हो जाये तबतक अन्य सब बातोंको भूल जाना। शरीर स्वस्थ हो जाये तो सेवा-कार्य करनेको पड़ा ही हुआ है।

किशोरलाल देवलालीमें हैं। बुखार उनका पीछा ही नहीं छोड़ता। उनके वहाँ जानेसे कुछ बहुत फर्क पड़ा हो, ऐसा नहीं लगता। वसुमतीका पत्र मिला था। प्यारेलाल बम्बईमें हैं।

वहाँ अलग कोठरी लेकर अच्छा किया किन्तु तुम्हारी सहायता कौन करता है? झाड़-पोंछ कौन करता है और खाना आदि कौन बनाता है? ऐसे मौकेपर

आश्रमका महत्त्व अनुभव हुए बिना नहीं रहना होगा। आश्रमके न होनेपर भी हम आश्रम-जैसा वातावरण तैयार कर सकें, इसमें हमारी कसौटी है।

अब शोर-गुल आरम्भ हो गया है। घड़ीकी सुइयाँ ८.२० के पास पहुँच रही हैं। मैं जहाँ भी होता हूँ वहाँ प्रातः और सायंकालकी प्रार्थना में हजार-दो हजार लोग आते हैं। नित नई जगह होनेके कारण लोगोंको एक रात जागना मुश्किल नहीं लगता। वे काफी दूरसे भी प्रातःकालकी प्रार्थनामें पहुँच जाते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी एन० ४१८०) से। सी० डब्ल्यू० १६७९से भी; सौजन्य : रमणीकलाल मोदी

२६७. पत्र : लीलावती आसरको

८ मार्च, १९३४

चि० लीलावती,

तू यह मान लेना कि जिस तरह तू मेरे नामकी माला जपती जान पड़ती है उसी तरह मैं भी तेरे नामकी माला जपता रहता हूँ। मैंने यह सोचकर पत्र नहीं लिखा था कि तेरे जेल पहुँच जानेके बाद तुझे मेरा पत्र नहीं मिलेगा। किन्तु देखता हूँ कि अब तुझे मेरा पत्र मिल जायेगा। इसलिए लिखने बैठ गया हूँ। ऐसा लगता है कि तुझे मेरा वह पत्र नहीं मिला जो मैंने तेरे जेलसे छूटनेके बाद लिखा था। तूने जेल जानेमें उतावली की किन्तु ऐसा करके तूने अपनी बहादुरी दिखाई है, इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं। इससे तेरा कल्याण ही होगा। अब कड़ाईसे संयमका पालन करके बुखारसे छुटकारा पा लेना। किसी प्रकारकी चिन्ता मत करना। बाहरकी घटनाओंके बारेमें सोच-विचार मत करना। यदि लिख सके तो मुझे विस्तारसे लिखना। मैं आनन्दपूर्वक हूँ। ११ तारीखको मेरे पटना पहुँच जानेकी सम्भावना है। क्या प्रेमा तेरी सेवा कर सकती है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३२७) से। सी० डब्ल्यू० ६६०२से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

२६८. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

बीजापुर
[८ मार्च][१], १९३४

बा,

तेरा पत्र मिला। माधवदासका पत्र न मिलनेके कारण मैंने मथुरादासको वहाँ जानेको लिखा था। वह वहाँ हो आया और माधवदास तथा कृष्णाके पत्र भी आये हैं, जो इसके साथ भेज रहा हूँ। मणिलालका पत्र भी मिला है। इन पत्रोंके अतिरिक्त, इन चारोंके बारेमें, और कुछ लिखनेको नहीं रह जाता। अब तू मणिलालके बारेमें किसी प्रकारकी चिन्ता मत करना। यह बात तेरे ध्यानमें है न कि वह अब चालीस वर्ष का हो गया है? वह अपनी देख-भाल स्वयं कर लेता है और किसी बातकी चिन्ता नहीं करता। वह अपना काम-धन्धा करता है और अपना खर्च स्वयं उठा लेता है। वह सुखसे रहता है, इसलिए मणिलालकी बिलकुल चिन्ता नहीं करनी चाहिए। मैं बेलगाँवसे बीजापुर आया हूँ। दुर्गा, जीवणजी, डाह्याभाई, बाबलो, चंदूभाई और मोहनलाल बेलगाँवमें आकर मुझसे मिल गये। दुर्गा और जीवणजी महादेवसे मिले और डाह्याभाई मणिबहनसे। सभी आनन्दपूर्वक हैं। सिद्धिमती भी आकर मिल गई और दुर्गा के साथ अहमदाबाद चली गई होगी। प्यारेलालके पत्र मिलते रहते है। जमनालालजी पटना गये हैं। मैं वहाँ ११ तारीखको पहुँचूँगा। ठक्कर बापा हम लोगोंसे अलग हो जायेंगे। बालजीभाई मेरे साथ ही हैं और साथ ही पटना जायेंगे। किशन और ओम तो मेरे साथ हैं ही। यह पत्र मैंने खाना खाते-खाते ओमसे लिखवाया है।

तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० ८-९

१. साधन-सूत्रमें ८ जनवरी दी गई है। किन्तु गांधीजी बीजापुरमें ८ मार्चको थे।

२६९. पत्र : एफ० मेरी बारको

[९ मार्च, १९३४के पूर्व][1]

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं १२ घंटे हैदराबादमें रहूँगा, इसलिए जरूर आ जाओ। फिर मेरे ही साथ वापस हो जाना।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

तुम्हारा उपवास अच्छा है। मिलनेपर तुम्हें उसका विस्तारसे वर्णन करना होगा। चन्द्राको चुम्बन।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३३५०) से; सौजन्य : एफ० मेरी बार

२७०. हमारा कलंक

'तमिल-प्रान्तके आदि-हिन्दुओं' की ओरसे कुनूरमें मुझे जो स्मरण-पत्र दिया गया था, उसका उल्लेख इन स्तम्भोंमें पहले ही हो चुका है। उसपर ३६ प्रतिनिधियों के हस्ताक्षर थे। सही करनेवालों में कई नगरपालिका या ताल्लुका बोर्डके सदस्य हैं। जिन कठिनाइयोंका उन्हें सामना करना पड़ रहा है, उनकी सूची, संक्षिप्त रूपमें, मैं नीचे देता हूँ। संक्षिप्त करनेमें उनकी असली भाषाको मैंने बदला नहीं है। हाँ, उस बयानके साथ उनकी जो टीका थी, उसे मैंने अनावश्यक समझकर हटा दिया है। यों सूची में कोई हेरफेर नहीं किया गया है :

१. भोजनालय, धोबीकी दुकानें, नाईकी दुकानें, कहवा और चायघर, उपाहार-गृह, धर्मशाला, स्कूल, अग्रहार, कुएँ, तालाब, नल, झरने आदि सभी स्थान हमारे लिए बन्द हैं। गाँवके डाकखानेतक में हम पैर नहीं रख सकते। मन्दिरोंकी तो बात ही न पूछिए।

२. कहीं-कहीं तो न हम छाते लगा सकते हैं, न खड़ाऊँ पहन सकते हैं और न घुटनोंके नीचे धोती पहन सकते हैं। अगर हम ऐसा करें तो यह बड़ा भारी जुर्म समझा जाता है। हमारी औरतें अगर कभी सोनेके जेवर या

१. गांधीजी ९ मार्चको हैदराबाद पहुँचे थे और यह पत्र स्पष्ट उसके पूर्व ही लिखा गया था।

साफ कपड़े ही पहनकर आगेसे निकल जायें, तो सवर्ण हिन्दू इसे अपशकुन समझते हैं।

३. एक जगह तो यूनियन बोर्डके इलाकेकी एक आम सड़कसे हम अपने मुर्देतक नहीं ले जा सकते, सो सिर्फ इसलिए कि उस सड़कके किनारे एक देवताका मन्दिर पड़ता है। धानके एक खेतमें होकर हमें अपना मुर्दा ले जानेके लिए बाध्य किया जाता है — और सो भी बरसातके मौसममें, जबकि वहाँ घुटनोंतक कीचड़-ही-कीचड़ होती है।

४. एक यूनियन बोर्डके इलाकेमें तथाकथित अछूतोंके मुखियाको, जब उसे उस पदपर प्रतिष्ठित करनेकी विधि सम्पन्न की जाती है, उस समय सवर्ण हिन्दू आम सड़कसे घोड़ेपर नहीं निकलने देते।

५. गाँवोंके कुछ हाट-बाजारोंमें त्योहारोंके अवसरपर हम कपड़े खरीदना चाहें तो देखनेके लिए नये साफ कपड़े हमें छूने नहीं दिये जाते।

६. बाजारोंमें जाने या अनजाने रोटी या खाने-पीनेकी दूसरी चीजें यदि हमसे छू जायें, तो इस गुनाहका हमें भारी दण्ड भरना पड़ता है — दुकानमें खाने-पीनेकी जितनी चीजें होती हैं, उन सबका हमें पूरा दाम देना पड़ता है।

७. मद्रास प्रान्तके अधिकांश जिलोंमें हमारे वर्गके लोगोंकी विशाल ग्रामीण आबादीके पास रहनेको जगह नहीं है, इसलिए जमींदार वर्गके लोगोंकी अनुमतिसे वे उन्हींकी जमीनपर घर बनाकर रहते हैं। मगर उनके खेतोंपर, वे लोग जो काम करते हैं, उसके एवजमें जब अपनी मजदूरी माँगते हैं तब जमींदार इसका बहुत बुरा मानते हैं। इससे उन श्रमिकोंको निर्वाहके लायक भी मजदूरी नहीं मिलती और कामके घंटे असीम होते हैं। मजदूरीमें अकसर घटिया किस्मके अनाज और सो भी छोटे बाटोंसे तोलकर दिये जाते हैं।

८. ब्याह-बारात या देवी-देवताकी सवारीके अवसरपर कभी-कभी ऐसा भी होता है कि हमें अपनी जातिके गाने-बजानेवाले नहीं मिलते, तो उस वक्त सवर्ण गवैये-बजैये हमारे यहाँ गाने-बजाने नहीं आते।

९. हमारी बिरादरीके नवयुवकोंका साइकिलपर चढ़ना ऊँची जातिवालोंको बहुत अखरता है। शहरोंसे बहुत दूरके गाँवोंमें हमें ताँगे नहीं मिलते। उनके मालिक सवर्ण हिन्दू हमें उनपर नहीं चढ़ने देते। और यही हाल मोटर-लारियोंका है।

१०. एक नगरपालिकाके इलाकेमें सार्वजनिक पैसेसे बनी हुई आम टट्टियोंमें जानेसे अस्पृश्योंको रोका जाता है। काफी कोशिश करनेके बाद अब कहीं वहाँ उनके लिए अलग टट्टियाँ बनवा दी गई हैं।

११. कुछएक स्थानिक संस्थाओंके कुछ दवाखानोंमें काम करनेवाले सवर्ण हिन्दू हम लोगोंका ठीक-ठीक इलाज नहीं करते।

१२. गर्मीके मौसममें सवर्ण हिन्दुओंकी ओरसे जो प्याऊएँ बिठाई जाती हैं, वहाँ पानी पिलाते समय हम आदि-हिन्दुओंके साथ जो भेद-भाव किया जाता है वह असह्य और मनको चोट पहुँचानेवाला होता है।

१३. जब हमारे आदमी स्थानिक संस्थाओं और पंचायतोंमें मेम्बर चुन लिये जाते हैं तब इसके विरोधस्वरूप कट्टर सवर्ण हिन्दू अपनी सदस्यतासे इस्तीफा दे देते हैं, और कहीं-कहीं तो हमारे सदस्योंको वहाँ भी अलग बिठाया जाता है।

१४. जब कोई आदि-हिन्दू अपने मकानके सामने चारपाई पर बैठा हो और उस वक्त वहाँसे कोई सवर्ण हिन्दू निकले, तो उसे उठकर उसके आगे झुककर प्रणाम और उचित मान-प्रदर्शन करना पड़ता है। अगर कभी इस स्वागत-पूजामें गफलत हो गई, तो फिर उस आदि-हिन्दूकी खैर नहीं। सवर्ण लोग उसे इसका मजा चखा देते हैं।

हम लोगोंसे यह अकसर कहा जाता है कि पहले अपने घरको सुधारो, तब दूसरोंसे अधिकार माँगो। यह तो महज बातको टालना हुआ। जब सारा हिन्दू-समाज ही जात-पाँत और जन्मपर आधारित ऊँच-नीचके भेद-भावसे भरा एक विशाल तन्त्र बनकर रह गया है तब अछूत कहे जानेवालों के माथे यह दोष मढ़ना मुनासिब नहीं कि वे तो खुद ही आपसमें एका नहीं रखते हैं। ये अछूत कहे जानेवाले भी आखिरकार खुद परिस्थितियोंके वशीभूत तो हैं ही।

१५. नगरपालिकाओंके हलकोंमें, जहाँ सवर्ण हिन्दू आपत्ति करते हैं, हम लोगोंके लिए अलग नल लगे हुए हैं।

१६. देहातकी प्रारम्भिक पाठशालाओंमें हमारे बच्चे सहज ही दाखिल नहीं हो सकते, हालाँकि ये पाठशालाएँ सार्वजनिक पैसेसे चलाई जाती हैं। अगर कभी किसी तरह दाखिल हो भी गये तो या तो उन्हें बैठनेकी अलग जगह दी जाती है या उन्हें जमीनपर बैठना पड़ता है। अगर ये विद्यार्थी सनातनी सवर्ण शिक्षकोंके पास जाने या अनजाने कभी कोई सवाल पूछने जाते हैं तो अपवित्र हो जानेके भयसे शिक्षक स्लेट या छड़ीके सहारे उन्हें पीछे ढकेल देते हैं। कहीं-कहीं तो हमारे बच्चोंको पाठशालाके बाहर ही बारहों महीने खड़े रहना पड़ता है। बाहर खड़े-खड़े खिड़कीसे ही उन्हें सबक लेना पड़ता है, और इस तरह बेचारोंको स्याह तख्तेको देखना भी कभी नसीब नहीं होता। लोअर प्राइमरीकी पढ़ाई पृथक् पाठशालाओंमें जब समाप्त हो जाती है, तब उसी गाँवकी सार्वजनिक अपर प्राइमरी पाठशालाओंमें हमारे बालक दाखिल नहीं हो सकते। आदि-हिन्दू जातिके प्रशिक्षित अध्यापकोंतक को अपर प्राइमरी स्कूलोंमें नौकरी नहीं दी जाती। हमारे बच्चे आम पाखानेतक में नहीं

जा सकते। यह कितने दुःखकी बात है कि विभिन्न स्थानिक संस्थाओंसे संयुक्त हमारे प्रतिनिधि भी उन पाठशालाओंके आकस्मिक निरीक्षणके लिए जानेकी हिम्मत नहीं करते जिनमें सवर्ण हिन्दुओंका बोलबाला है, क्योंकि अगर वे जायें तो उन्हें दुर्व्यवहारका शिकार होने और न जाने कितनी परेशानियाँ उठानेका भय रहता है। कोयम्बतूरके पासके सिंगानलूर और इरुगुर गाँव तो इस बातके लिए काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। शहरी इलाकोंकी प्रारम्भिक पाठशालाएँ भी इन दोषोंसे मुक्त नहीं हैं।

अब हाई स्कूलोंकी बात सुनिए। वहाँ हमारे विद्यार्थी उन घड़ोंसे पानी नहीं ले सकते, जो गर्मियोंमें खास तौरपर रखे जाते हैं। हमारे लड़कों और लड़कियोंको उन सवर्ण छात्रोंके आसरे खड़े रहना पड़ता है, जो दूरसे पानी डाल देते हैं। पानी पीनेके बर्तन तक हमारे विद्यार्थियोंको नहीं दिये जाते। बेचारोंको ओकसे पानी पीना पड़ता है। चाय-पानीके आम कमरोंमें भी वहाँ हमारे विद्यार्थियोंको बेरोक-टोक नहीं जाने दिया जाता।

१७. हमारे लिए निषिद्ध मुहल्लोंमें बने हुए डाकखानोंमें जाकर न तो हम चिट्ठी-पत्री डाल सकते हैं, न कोई और जरूरी काम वहाँसे कर सकते हैं। डाकखानेसे हटकर हमें काफी फासलेपर खड़े रहना पड़ता है। पोस्टकार्ड, लिफाफा या टिकट खरीदनेके लिए भी हमें किसी आने-जानेवाले सवर्ण हिन्दूका मुँह ताकना पड़ता है। इसमें दो बाधाएँ समाहित हैं — पहली तो यह कि हमें सार्वजनिक सड़कोंपर नहीं चलने दिया जाता और दूसरी यह कि हमें सीधे डाकघर तक जाकर वहाँ अपना जरूरी काम नहीं करने दिया जाता।

१८. हमें दुःख होता है कि आप-जैसे पुण्यात्मा पुरुषने हम आदि-हिन्दुओंके घरमें जन्म न लिया। हमारे यहाँ आप जन्मे होते, तभी हमारी इन सारी कठिनाइयोंको आप पूरी तरहसे महसूस कर सकते।

यह एक बृहत् सूची है। जिन एक-दो बातोंको लेखकने अकथित रखा है उनका खयाल रखते हुए देखें तो इस सूचीमें कहीं अत्युक्ति नहीं है। जो बातें कही गई हैं उनमें से प्रत्येक किसी-न-किसी स्थानके सन्दर्भमें सच्ची है। कोई भी बाधा सार्वत्रिक नहीं है। कई किसी एकाध स्थानमें ही हैं। और सभी बाधाएँ सेवा-भावसे किये गये प्रयत्नोंसे कम होती जा रही हैं। सही तसवीर देख पानेके लिए इन बातोंको ध्यानमें रखना आवश्यक है। पर इनके कारण सवर्ण हिन्दुओंका कलंक कुछ कम नहीं हो जाता, और न सुधारकोंको ही ढील देनी चाहिए। धर्मके नामपर जबतक ये असुविधाएँ — चाहे जिस सीमातक हो — मौजूद रहेंगी, तबतक सवर्ण हिन्दुओंके माथेपर कलंकका टीका लगा ही रहेगा। तथाकथित सनातनियोंका यह स्पष्ट कर्त्तव्य है कि वे कड़ेसे-कड़े शब्दोंमें इन तमाम असुविधाओंकी निन्दा करें और धार्मिक प्रथाके नामपर हरिजनोंका आज जो बुरी तरहसे दलन किया जा रहा है, उससे उन्हें बचानेके लिए

वे भी सुधारकोंके साथ मिलकर काम करें। अठारहवीं शिकायतको, जिसे हस्ताक्षर-कर्त्ताओंने रेखांकित कर दिया है, मैं मुझे दिया सम्मान मानता हूँ। हाँ, यह सर्वथा सम्भव है कि अगर मैंने किसी आदि-हिन्दूके घरमें जन्म लिया होता, तो उनकी इन भयानक व्यथाओंकी कसकको और भी अधिक गहराईसे मैं महसूस करता। पर यह भाग्यमें न होनेसे मैं स्वेच्छासे हरिजन बन गया हूँ। जबतक अस्पृश्यता रहेगी, तबतक न तो मुझे ही चैन है और न हरिजन-सेवक संघको ही।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-३-१९३४

२७१. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

९ मार्च, १९३४

भाईश्री ५ मावलंकर,

खास तौरसे तुमसे मिलनेके लिए ठक्कर बापा वहाँ जा रहे हैं। संकट-निवारण का जो कोष है — जिसके वे एक न्यासी हैं — वह कितना है और रकमें कहाँ जमा की गई हैं तथा अब क्या किया जा सकता है, इस बारेमें वे तुमसे विचार-विमर्श करेंगे। अन्य कोषोंका पैसा कहाँ जमा किया गया है और कितनी रकम निकाली गई है, यदि तुम उसका विवरण भेज दो तो मैं इस सम्बन्धमें कुछ और सोच सकूँगा। यदि तुम्हें कोई सुझाव देना हो तो लिख भेजना।

आशा है, तुम्हारा शरीर स्वस्थ होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२३८) से।

२७२. भाषण : महिलाओंकी सभा, हैदराबादमें

९ मार्च, १९३४

आप लोग तो गृह-स्वामिनियाँ हैं, इसलिए मैं आशा करता हूँ आप काफी सुधार और अच्छा काम कर सकती हैं। स्त्रियाँ स्वभावसे ही पुरुषोंकी अपेक्षा अधिक धैर्य-शालिनी होती हैं और वे कष्ट-सहन भी अधिक कर सकती हैं, इसलिए जो काम वे हाथमें लें उसका सफल होना निश्चित है। हम अपने ही लोगोंमें से कुछ को, जो हमारे सहधर्मी भी हैं, अपना न मानें, यह अमाननीय आचरण है। लोगोंके एक विशाल समुदायको, जिनमें से सभी हमारे समाजके एक वर्गके लोगोंकी अवस्था सुधारनेके निमित्त काम करनेको आतुर हैं, देखकर सचमुच मुझे बड़ी खुशी हो रही है। आप लोग आज शुद्ध प्रेम और मैंने जो काम किया है उसके प्रति अपने प्रेमसे प्रेरित होकर जो धन और आभूषण दे रहे हैं, उसके लिए मैं आप सबका आभारी हूँ। महत्त्व इन

चीजोंका नहीं है; कष्टमें पड़े लोगोंका त्राण तो वास्तवमें काम करनेसे ही होता है। मैं आशा करता हूँ कि हैदराबादकी महिलाएँ इस काम को यथासम्भव करेंगी और अपना समय दे सकेंगी। अगर ठीक काम किया गया तो उसके लिए पैसे तो मिलेंगे ही।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १३-३-१९३४

२७३. भाषण : सार्वजनिक सभा, हैदराबादमें[1]

९ मार्च, १९३४

उन्होंने जनताको उसके भेंट किये मानपत्रों और थैलियोंके लिए धन्यवाद दिया। वे जिस भाषाका प्रयोग कर रहे थे वह कुछ उर्दू और हिन्दीका मिला-जुला रूप था, जिसका कारण यह था कि वे दोनों भाषाओंको एक ही मानते हैं। उन्होंने कहा : ऊँच-नीचके भेदको स्थायी नहीं बनाना चाहिए, क्योंकि देश-सेवाके कार्यमें सब लोग एक ही हैं। इस प्रश्नपर मैं पिछले ५० वर्षसे विचार करता आ रहा हूँ और मुझे लगता है कि हरिजनों और दूसरे वर्गोंके बीच कोई भेद नहीं किया जाना चाहिए। सच तो यह है कि हिन्दुओं तथा मुसलमानों, ईसाइयों, पारसियों आदि अन्य धर्मावलम्बियोंके बीच भी कोई भेद नहीं होना चाहिए। सबको एक बनकर रहना चाहिए — हाथकी पाँचों उँगलियोंकी तरह एक। हिन्दुओंका एक विशेष कर्त्तव्य अस्पृश्यताके कलंकको मिटाना है। अमेरिका, जापान तथा दूसरे देशोंसे मित्रगण पत्र लिखकर बताते रहते हैं कि उनके यहाँ अस्पृश्यता-जैसी कोई चीज नहीं है।

सनातनियोंके विरोधका जवाब देते हुए गांधीजी ने कहा कि मेरे आलोचक कहते हैं कि मैं तो हिन्दू-धर्मका नाश करनेपर तुला हुआ हूँ। यह आरोप बिलकुल गलत है; मैं तो उसपर से कलंकका टीका मिटानेकी कोशिश कर रहा हूँ। अन्तमें गांधीजी ने सबसे उत्कट अनुरोध किया कि हरिजनोंकी अवस्था सुधारनेके काममें वे उनकी मदद करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १३-३-१९३४

१. यह सभा वी० वी० स्कूलके अहातेमें हुई थी। सभामें लगभग १०,००० लोग उपस्थित थे। इसमें बहुत-से अधिकारी भी शामिल थे।

२७४. भाषण : सार्वजनिक सभा, सिकन्दराबादमें

९ मार्च, १९३४

गांधीजी ने अपना भाषण इस कथनसे आरम्भ किया कि जबतक मुझे यह नहीं बता दिया गया था कि ये लड़कियाँ हरिजन हैं तबतक मैं नहीं जानता था कि ये हरिजन हैं। उन्हें सवर्ण हिन्दुओंसे अलग दिखानेवाली कोई बात नहीं है, यद्यपि सवर्ण हिन्दू उनकी बगलमें बैठना पाप मान सकते हैं। मैं हैदराबाद हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें आया हूँ और यहाँके लोगोंसे सहायता देनेकी अपील करता हूँ। लोग मुझे जो-कुछ देंगे उसे ग्रहण करके मुझे खुशी होगी, लेकिन उन्हें साफ समझ लेना चाहिए कि यह पैसा हरिजनोंपर खर्च किया जायेगा। हरिजन-कार्य आत्मशुद्धिके लिए है और सौभाग्यसे यह युगों पुराना अभिशाप तेजीसे मिटता जा रहा है। इस आन्दोलनमें घृणा या स्वार्थके लिए कोई अवकाश नहीं है। सनातनियोंसे भी मेरी अपील है कि वे हरिजन समाजके मार्गकी बाधाओंको दूर करनेमें मेरी सहायता करें। ये बाधाएँ शैक्षणिक सुविधाओंका अभाव, पानी पा सकनेमें आनेवाली रुकावटें आदि हैं। कहना कठिन है कि कोई उच्च वर्गका हिन्दू किसी हरिजन रोगीका उपचार करनेको तैयार होगा या नहीं। अन्तमें गांधीजी ने कहा कि अगर मैं हरिजनोंके कष्ट गिनाने बैठूँ तो दुःखकी वह गाथा और हमारे कलंककी कहानी कभी खत्म न होगी। अतएव मैं आप सबसे सहायता देनेका अनुरोध करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १३-३-१९३४

२७५. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

हैदराबाद
९ मार्च, १९३४

भविष्यके विषयमें बतानेकी क्षमता दूसरोंकी तरह मुझमें नहीं है और तीन महीने बादकी बातके बारेमें तो मेरे कुछ बतानेका प्रश्न ही नहीं उठता।[1] जब स्वेच्छासे अंगीकार की गई मेरी निष्क्रियताकी अवधि ३१ जुलाईको खत्म होगी तब इस सवालपर विचार करनेका ठीक अवसर आयेगा। तबतकके लिए तो मेरे सिर अस्पृश्यता-विरोधी कार्य और बिहारके कार्यक्रमका पर्याप्त बोझ पड़ा हुआ है।

१. गांधीजी से यह पूछा गया था कि कांग्रेसका भावी कार्यक्रम क्या होगा।

जब उनसे यह पूछा गया कि वे बिहारमें कितने दिन रहेंगे तो उन्होंने जवाब दिया कि इस सम्बन्धमें तो मैं पूरी तरहसे राजेन्द्रबाबूके हाथोंमें हूँ, लेकिन ऐसी आशा करता हूँ कि इस यात्राका लाभ उठाकर अस्पृश्यता-विरोधी कार्यके सम्बन्धमें उड़ीसा और असमका भी दौरा कर सकूँगा। गांधीजी ने इस खबरका जोरोंसे प्रतिवाद किया कि उनकी हैदराबाद-यात्रा हरिजनोद्धारके निमित्त चल रहे उनके दौरेका अन्त है। उन्होंने कहा कि मैं तो बिहारको तत्काल मेरी आवश्यकता होनेके कारण अपने कार्यक्रमको स्थगित-भर कर रहा हूँ। उन्होंने आगे कहा कि यों तो अबतक काफी-कुछ किया जा चुका है, लेकिन अभी बहुत करना शेष है।

जब उनसे उनके हालके दक्षिण भारतके दौरेके परिणामके बारेमें पूछा गया तो उन्होंने कहा कि दौरा पूरी तरहसे सफल रहा है। अपने पूरे दौरेमें उन क्षेत्रोंमें मुझे ऐसा-कुछ भी देखनेको नहीं मिला जिससे इस बातकी पुष्टि होती हो कि दक्षिण भारतीय लोग अस्पृश्यता-निवारणमें सहायता देनेको भारतके दूसरे हिस्सोंके लोगोंसे कम तत्पर हैं। उन्होंने कहा कि इसके विपरीत मैंने तो अपने आन्दोलनके प्रति वहाँ उतना ही उत्साह देखा जितना अन्यत्र। मन्दिरोंके द्वार हरिजनोंके लिए खोलने और अस्पृश्यता-विरोधी कोषमें चन्दा देनेमें वे लोग किसीसे भी पीछे नहीं थे। गुरुवायूर एक अपवाद है, जिससे दक्षिण भारतके मेरे सामान्य अनुभवकी पुष्टि ही होती है। मुझे विश्वास है कि किसी दिन वहाँ भी लोकमत प्रतिष्ठित होकर रहेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १०-३-१९३४

२७६. उडुमलपेटके हरिजनोंके कष्ट[1]

पोदनूर और डिंडीगलके बीचमें उडुमलपेट एक छोटा-सा कस्बा है। वहाँ हरिजनोंने भी मुझे एक मानपत्र दिया था। उनके उस लम्बे-चौड़े और वेदनापूर्ण मानपत्रमें से मैं नीचे एक अंश उद्धृत करता हूँ:

> इस कस्बेमें हम लोगोंको किसी भी सार्वजनिक कुएँसे ताजा पानी नहीं भरने दिया जाता। हमारी औरतों और बाल-बच्चोंको घड़े-भर पानीके लिए सवर्ण हिन्दुओंकी दयापर निर्भर रहना पड़ता है। कुएँपर घण्टों हमें खड़े-खड़े राह देखनी पड़ती है, तब कहीं, गालियोंकी बौछारके बाद, कोई सवर्ण हिन्दू हमारे घड़ेमें दूरसे पानी डाल देता है।
>
> हमारी गरीबीकी क्या पूछते हैं! हममें से बहुतोंको तो रहनेको भी कहीं ठौर-ठिकाना नहीं। कड़ी धूप और मूसलाधार पानीमें हम आकाशके नीचे ही

१. इसका गुजराती-अनुवाद "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत ११-३-१९३४ के **हरिजनबन्धु**में छपा था।

पड़े रहते हैं। कहाँतक अपनी मुसीबतें गिनायें! हमारी चेरियोंकी यह हालत है कि एक झोंपड़ी दूसरी झोंपड़ीसे बिलकुल सटी हुई है। जब आग लगती है, तो हमारा माल असबाब तो स्वाहा हो ही जाता है, कुछ जानें भी चली जाती हैं। कस्बेकी पालिकाको क्या पड़ी है कि वह हमारी बस्तियोंको साफ रखे! हमारे मुहल्ले कभी साफ नहीं कराये जाते।

न नालियाँ अच्छी तरहसे बनाई गई हैं, न मैला साफ करनेका कोई ठीक प्रबन्ध है, और न हम लोगोंके आरोग्यपूर्ण जीवन बितानेकी कोई सुविधा है। हमारी गलियोंमें एक लालटेन भी कहीं टिमटिमाती नजर नहीं आती। बस्तियोंमें हमारे चलने-फिरनेके लिए कहीं कोई ठीक सड़क भी नहीं है। कस्बेके और तमाम मुहल्लोंकी तरक्कीपर तो पालिकाका अच्छा ध्यान रहता है, पर हमारी बस्तियोंका तो वह कुछ भी खयाल नहीं करती।

अगर ये शिकायतें सच हैं, तो उनपर नगरपालिका, जनता और स्थानीय तथा प्रान्तीय हरिजन सेवक संघको तुरन्त ध्यान देना चाहिए। इन शिकायतोंमें अगर कोई अत्युक्ति हो, तो उसका खण्डन मैं खुशीसे प्रकाशित कर दूँगा। तबतक मैं इसपर और टीका-टिप्पणी न करूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-३-१९३४

२७७. विपद्ग्रस्त बिहारके लिए[1]

पटना
मौनवार, १२ मार्च, १९३४

यह आपको सूचित करनेके लिए है कि मैं आपकी सेवामें उपस्थित हूँ। मैंने अपनेको राजेन्द्रबाबूके हाथोंमें सौंप दिया है। जब यह विपत्ति आपपर आई थी उस समय यद्यपि मैं देशके एक छोरपर था, किन्तु मेरा हृदय आपके साथ था। राजेन्द्रबाबू जानते थे कि वे चाहे जब मुझे बुला सकते हैं। मैं चाहूँगा कि आप यह याद रखें कि अस्पृश्यता-रूपी भूचाल धरतीमाता के उस कंपनसे कहीं अधिक बुरी चीज है। इस विचारसे हम संयत और विनम्र बनें तथा इससे हमारे लिए यह विपत्ति अधिक सह्य हो।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, १४-३-१९३४

१. गांधीजी ने यह सन्देश 'अर्थक्वेक बुलेटिन' में लिखा था।

२७८. पत्र : गंगाबहन मजमूदारको

१२ मार्च, १९३४

चि० गंगावहन,

तुमने छगनलालको वीजापुर जानेका वचन बहुत वार दिया किन्तु अपने वचन का कभी पालन नहीं किया। वीजापुरकी जमीन यदि मेरी होती तो मुझे तनिक भी दुःख न होता। किन्तु यह जमीन गरीबोंकी है और तुम उसकी ठीक-ठीक व्यवस्था करनेके अपने[1] कर्त्तव्यका पालन न करो यह बात मुझे अखरती है। तुमने मुझे अपना पिता माना है। मैं तो पिता बनने नहीं निकला था। अव तुम बेटीके कर्त्तव्यका पालन करो और जिस सेवा-कार्यके लिए तुमने मुझे अपना पिता माना है उसे पूरा करके मेरा दुःख दूर करो। आशा है, तुम और कीकी सानन्द हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५८३) से; सौजन्य : छगनलाल गांधी

२७९. पत्र : छगनलाल गांधीको

पटना
१२ मार्च, १९३४

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। गंगाबहनके लिए एक पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। यदि वह तुम्हारे कामका हो तो उसका उपयोग कर लेना। यदि दूसरा कोई हो जो उसे समझा सके तो मुझे लिखना। क्या तुम यह कहना चाहते हो कि शंकर-लालने बुनाईकी जो दर रखी है, हम उससे अधिक दे सकते हैं? प्रभुदासके पत्र मुझे मिलते रहते हैं। मैं कल रात पटना पहुँचा। फिलहाल तो मैंने बिहारमें रहनेका निर्णय कर लिया है। और कुछ समय रहनेके बाद इस सम्बन्धमें अन्तिम रूपसे निर्णय कर सकूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५८२) से; सौजन्य : छगनलाल गांधी

१. वीजापुर-आश्रमकी जमीन गंगाबहन मजमूदारके नाम खरीदी गई थी। उससे सम्बन्धित दस्तावेज आश्रमके न्यासियोंके नाम करा देनेके लिए छगनलाल गांधी गंगाबहनसे कई बार मिले थे।

२८०. पत्र : मनुबहन गांधीको

पटना
१२ मार्च, १९३४

चि० मनुड़ी,

बहुत प्रतीक्षा करानेके बाद तूने पत्र लिखा। इसका कारण मैं अब समझ गया। बली लिखती है कि तूने उसका कहना नहीं माना। तुझे अचार और तेल नहीं खाना चाहिए। तुझे तो दूध, बिना मसालेकी सब्जी, फल और रोटीपर निर्वाह करना चाहिए। तब तू बीमार नहीं पड़ेगी। जिस भोजनसे शरीर स्वस्थ रह सके उसीसे सभी तरहके स्वाद लेना सीख लेना चाहिए।

तुम सबके पत्रोंका विवरण मैं बा को लिख दूँगा। इससे वह बहुत प्रसन्न होगी। आशा है, अब तुम सभी अच्छी हो गई होगी।

मुझे नियमित रूपसे लिखती रहना। बलीका कहा मानना। अपनी वर्धाकी सहेलियोंको पत्र लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५३०) से; सौजन्य: मनुबहन मशरूवाला

२८१. पत्र : क० मा० मुंशीको

पटना
१२ मार्च, १९३४

भाईश्री मुंशी,

तुम्हारे पत्रका उत्तर आज ही दे पा रहा हूँ। वर्तमान परिस्थितिमें उक्त पत्र पाकर मुझे ऐसा लगा जैसे मरुभूमिके यात्रीको मीठे पानीका सरोवर मिल गया हो। मैं तुम दोनोंका आभारी हूँ। तुम्हारा निर्णय ठीक ही है। यदि तुम्हें पहाड़पर जानेकी मनाही हो तो तुम हजीरा क्यों नहीं जाते? मैं तो वहाँ कभी नहीं गया किन्तु जितने लोग वहाँ हो आये हैं उन्होंने उसकी बहुत तारीफ की है। पहाड़ोंमें सिंहगढ़की भी गिनती की जाती है क्या? आँत या शरीरके किसी अन्य भागमें यदि कोई बीमारी नजर आये तो तटस्थतापूर्वक उसका उपचार करना। बीमारीका ध्यान करते

रहनेसे वह बढ़ती है। "ध्यायतो विषयान् पुंसः"[1] इस मामलेमें भी ठीक-ठीक लागू होता है।

सरोजिनीदेवी मुझसे कह रही थीं कि तुम ज्योतिषियोंके घरोंके चक्कर काटने लगे हो। यदि उन [ज्योतिषियों] के कथनमें सचाई हो तो भी यह त्याज्य है। इस बहनने मुझे नये दलके बारेमें भी बताया। कोई भी निश्चित कार्यक्रम सामने रखकर यदि कांग्रेसवालों के किसी दलकी स्थापना हो तो मैं उसका स्वागत करूँगा। उक्त दल यदि ईमानदारीसे गलती भी करे तो मैं उसे बरदाश्त कर लूँगा। वे जहाँ भूल करेंगे वहाँसे फिर गिनेंगें। किन्तु यदि गिनना ही न चाहें तो वे बोझ ही सिद्ध होंगे।

फिलहाल तुम्हारे बारेमें मेरी दो इच्छाएँ हैं। एक, न्यासी बनकर तुम जितना कमाना उचित समझो उतना कमाओ। जितने भोगसे तुम्हें सन्तोष हो उस भोगको भी तुम न्यास मानो। दूसरी, अपना स्वास्थ्य तुम अच्छी तरह सुधार लो। इसके लिए यदि तुम्हें प्राकृतिक चिकित्सा रुचे तो करा देखो। तुम्हारे पड़ोसमें ही पूनाके मेहता और लोनावालाके[2] कुवलयानन्द हैं। दोनों संस्थाओंकी शाखाएँ वहाँ हैं।

सरोजिनीदेवीने सोशलिस्ट पार्टीकी बात भी बताई थी। मैंने उसका घोषणा-पत्र पढ़ा था। मुझे वह पसन्द नहीं आया। मैं इस सम्बधमें कुछ लिखना चाहता हूँ किन्तु फुरसतसे लिखूँगा। पुरुषोत्तमने मेरी राय माँगी है। यदि उन्होंने शुरूसे ही यह सोचा हो कि सरकार क्या करती है तो वे अपने लक्ष्यतक कैसे पहुँच सकेंगे?

फिलहाल निश्चयपूर्वक यह कहा जा सकता है कि एक महीने तो मैं यहाँ हूँ।

मैं लीलावतीके पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा। ऐसा लगता है कि उसमें जो विशेषताएँ हैं उन्हें उपयोगमें लानेका कोई ढंग वह अबतक खोज नहीं पाई है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

क्या तुम स्त्रियोंके पढ़ने लायक गुजराती-पुस्तकोंकी सूची बनाकर मुझे भेज सकोगे? किन्तु इस काममें बहुत अधिक समय खर्च करो, यह मैं नहीं चाहता।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५३३) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

१. भगवद्गीता, २, ६२।
२. साधन-सूत्रमें यह शब्द स्पष्ट नहीं है।

२८२. पत्र : रामीबहन कुँ० पारेखको

पटना
१२ मार्च, १९३८

चि० रामी,

कई महीने बाद तेरी लिखावट देखनेको मिली। तू समय-समयपर मुझे लिखती रहा कर। बा तुम सबके बारेमें हमेशा पूछती रहती है। यदि मैं उसे तुम लोगोंके बारेमें कोई समाचार दे सकूँ तो वह प्रसन्न होगी। खूब सावधानीसे रहना। कुँवरजीसे पत्र लिखनेको कहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२०) से।

२८३. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

पटना
१२ मार्च, १९३८

चि० बली,

पूरे दिन लिखते रहनेके कारण इतना थक गया हूँ कि अब दाहिने हाथने काम करनेसे इनकार कर दिया है। अतः मैं बायें हाथसे लिख रहा हूँ। कभी-कभी तेरा पत्र पढ़कर मेरी आँखें भीग उठती हैं। तू बाघिन-जैसी है; जिन बच्चोंको अपना मानती है उनकी गुलाम बन जाती है। यह तेरे माता-पिताके पुण्यका फल जान पड़ता है। तेरा कहना है कि मनु तेरी लड़की नहीं है। यदि वह तेरी लड़की नहीं है तो किसीकी नहीं है। वह बा की थी किन्तु जबसे बा ने जेल जाना सीख लिया तबसे उक्त सम्बन्ध शिथिल पड़ गया। ऐसा लगता है कि तू तो सिर्फ चंचीके[1] बच्चोंके लिए जीवित है। तेरी देख-रेखसे मनुको हटाते हुए मुझे दुःख होगा ही। मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि सदा मेरी ऐसी वृत्ति नहीं रही। किन्तु बालकोंके प्रति तेरे प्रेमने मुझे जीत लिया है। मैं नामका बाप या दादा हूँ। अगणित बालकोंका बाप और माँ बननेका प्रयास करके मैं किसी एकका नहीं रह गया हूँ। मुझे भरोसा सिर्फ इसी बातका है कि तुम सब मुझे निभा लेते हो और अपने प्रेममें न्यूनता नहीं आने देते तथा अब भी मुझे पिताका स्थान देते हो।

१. चंचल उर्फ गुलाब, हरिलाल गांधीकी पत्नी।

भगवान् तुम सबका सदा कल्याण करेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०५२) से; सौजन्य : सुरेन्द्र मशरूवाला

२८४. पत्र : अमतुस्सलामको

१२ मार्च, १९३४

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

तुम्हारा खत मिला है। आरामसे रहो। अच्छी होनेपर वर्धा चली जाओ। डाक्टर शर्माका तार अभी आया। वह वर्धा जा रहा है। तुम्हारे जेल जानेका वक्त आवेगा तब मैं लिखूंगा। उसकी फिकर मैं करूंगा। तुम्हारे बिलकुल अच्छी हो जानेकी ही फिकर करनी है। मैं यहां नहीं बुला सकता हूं, चूंकि यहां रहने, खाने, पीनेकी तकलीफ है। आगे देखा जायेगा। कृष्णाको[1] खत भेज दो। उसका पता मुझे भेजो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७) से।

२८५. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

पटना

१३ मार्च, १९३४

भाई घनश्यामदास,

इसके साथ . . .का[2] दूसरा खत भेजता हूं। लड़की दुःखी हो रही है। मैंने आश्वासन भेजा है। अब जो मैं कर रहा हूं वह आप सब भाइयोंको और . . .के पिता इ० को कहां तक पसंद होगा नहिं जानता। मुझे न रोका जाय तबतक मैं लिखा करूं ना? मेरे खयालमें . . .को इतना अधिकार है जितना . . .को। . . . दूसरी शादी चाहे तो उसको प्रोत्साहन देना हमारा धर्म हो जाता है। करेगी नहिं ऐसा मेरा विश्वास है। लेकिन उसको स्वतन्त्रता दे देनी चाहिये। इस बारेमें दिल खोल-कर मुझे कहो। मुझे रोक सकते हो — यद्यपि . . . मेरे लिये बेटी-सी हो गई है।

सर सेम्युअलसे मैंने खत लिखा है[3] उसकी एक प्रतिलिपि इसके साथ रखता हूं। और एक धारवाड़के मजिस्ट्रेटको जो पत्र लिखा था उसकी।[4] धारवाड़का केवल तुमारे जाननेके लिये है। सर सेम्युअलके बारेमें कुछ काम लेना चाहता हूं। स्कार्पा अगर वहां है तो उनसे पूछो क्या उस मिटींगमें हुआ था। क्योंकि वह वहां मौजूद

१. कृष्णकुमारी, एक आश्रमवासी बहन, जो जेलमें अमतुस्सलामके साथ थी।

२. नाम छोड़ दिये गये हैं।

३. देखिए "पत्र : सर सैम्युअल होरको," ६-३-१९३४।

४. देखिए "पत्र : डब्ल्यू० एच० ब्राउनको," ४-३-१९३४।

था। अगर न था तो भी उसीके जरिये यह मीटिंग हुई थी। जो लोग हाजिर थे उनके नाम-ठाम देवे तो भी अच्छा होगा। जो कुछ भी हकीकत मिल सकती है वह इकट्ठा करना चाहता हूं। आज तक इस चीजकी बातें इंग्रेजीमें हो रही हैं। और है सबकी सब जाल। अजमेरका 'आज मरा' बनाया गया है।

मुझे मिलनेके लिये आना चाहते हैं। हरिजन-कार्यके लिए थोड़ी देरके बाद बुलाऊंगा। ठक्कर बापाको दिल्ली जाने दीये हैं। उनका यहां काम नहिं था। यों तो सब कार्यमें उनके जैसा सेवक मदद दे सकता है। विशेष . . .[1] आवश्यकता न थी। लेकिन . . . के[2] बारेमें अथवा बिहारके अथवा सर सेम्युअलसे जो पत्र-व्यवहार शुरू किया है उस बारेमें आना है तो दिल चाहे तब आ सकते हैं। बुधसे शुक्र तक मोतीहारी [की] तर्फ हूंगा। शुक्रकी शामको वापिस आउंगा।

एगथा हेरीसन १६को मुंबई पहोंचेगी। लेस्टर वाइसरायसे मिली है। कल यहां आती है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९४७) से; सौजन्य: घनश्यामदास बिड़ला

२८६. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१३/१४ मार्च, १९३४

बा,

गत सप्ताहका मेरा पत्र मिल गया होगा। वह मैंने ओमसे लिखवाया था। आज मंगलवार है। दातुन करके यह पत्र लिखने बैठ गया हूँ। अभी ४ नहीं बजे हैं। मैं पटनामें हूँ। संकट-निवारण समितिने एक मकान किरायेपर लिया है। उसमें तम्बू लगाये गये हैं और तम्बुओंमें भी कुछ लोग रहते हैं। राजेन्द्रबाबू, उनकी बहन, प्रभावती और उसके पति, सब यहीं हैं। जमनालाल भी यहीं है। बाल, मगन-भाई, स्वामी, कृपलानी, सोमणजी आदि भी यहाँ हैं। मैं कल उस जगह जाऊँगा जहाँ अत्यधिक नुकसान पहुँचा है। लक्ष्मीदास अब ठीक है। वह थोड़ा घूम-फिर भी लेता है। उसके शरीरमें ताकत आती जा रही है। वेलाबहन आनेको छटपटा रही है किन्तु अभी तो आई नहीं है। इस बार मनु, बली और रामीके पत्र मिले हैं। सभी एक साथ बीमार पड़ गई थीं इसलिए कोई भी पत्र नहीं लिख सका। मनु और बली लिखती हैं कि अपनी-अपनी बीमारीके कारण सब लोग कुसुमकी मृत्युके दुःखको भूल गये। अब वे सब ठीक हैं। रामी या तो बम्बई चली गई होगी या अब जायेगी। मनुकी पढ़ाई-लिखाई तो कुछ हुई ही नहीं। मनुने अचार आदि खाना शुरू कर दिया था, जिससे बुखार आ गया और गलेमें भी दर्द होने लगा। सभीने तुझे प्रणाम लिखवाया है। असलमें तेरे लिए प्रणाम तो सभी पत्रोंमें होता है। काका

१. साधन-सूत्रमें यहाँ कुछ शब्द अस्पष्ट हैं।
२. नाम छोड़ दिये गये हैं।

हैदराबादमें विराजते हैं। छगनलाल जोशी द्वारकामें है इसलिए रमाबहन भी विमुको लेकर द्वारका गई है। वसुमती बोरीवलीमें है। गंगाबहन कच्छ गई थीं और वहाँसे लौटकर अहमदाबाद चली गई हैं। कृष्णकुमारी बीमार है। अमतुस्सलाम अभी राजाजी के पास ही है। प्यारेलाल बम्बईमें है। कुसुम देसाई वर्धा स्टेशनपर आकर मिल गई। यहाँ आते हुए वर्धा बीचमें पड़ा था। मैं हैदराबाद होता हुआ आया। वहाँ सरोजिनीदेवी आई थीं। वे भी आनन्दपूर्वक हैं। ठक्कर बापा दिल्ली गये हैं और हिसाब-किताब रखनेके लिए मामा भी साथ गये हैं। अतः अब हम सात ही रह गये हैं। अन्यथा पहले हम सोलह थे। रामदास मिला था। रामदास एक-दो स्टेशनोंतक मेरे साथ रहा था। वह अच्छा है। और अब प्रवचन :

मैंने अपने पिछले पत्रमें विष्णु दिगम्बर शास्त्री द्वारा सुनाई गई जो कहानी लिख भेजनेकी बात लिखी थी, वह मैं दे रहा हूँ। भक्तिका स्वरूप बतानेके लिए यह कहानी गढ़ी गई है। जब रामजी पुष्पक विमानमें सीताजी को लेकर अयोध्या पधारे तब हनुमान आदि भी उनके साथ थे। जब सबको विदा करनेका समय आया तो दरबार लगा। राम सबसे गले मिले और सीताजी ने सबके सिरपर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। सबकी आँखें भीग गईं। सबको पारितोषिक दिये गये। अब हनुमानजी की बारी आई। सीताजी ने अपने गलेकी मणिमाला उतारकर हनुमानजी को पहना दी और उन्हें गले लगाया। किन्तु हनुमानजी को मणिमालासे क्या मतलब? उन्होंने उसे तोड़ा और मणिके हर दानेको दाँतसे फोड़-फोड़कर फेंकने लगे, क्योंकि उसमें रामनाम नहीं था। यह देखकर सबको आश्चर्य हुआ। सीताजी द्वारा अपने गलेसे उतारकर दी गई मणिमालाका यह हाल! सीताजी ने हनुमानसे इसका कारण पूछा। हनुमान बोले: "माता, जिस मणिमालामें रामनाम न हो उसे पहनकर मैं क्या करूँगा? मुझे रामनामके अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहिए।" सब लोगोंको और भी आश्चर्य हुआ। किसीने कहा, "यदि ऐसी बात है तो तुम्हारे शरीरमें भी रामनाम दिखाई नहीं देता, उसका क्या होगा?" हनुमान ठठाकर हँसे और बोल उठे, "ठीक है, तो फिर देखो।" यह कहकर अपनी छाती फाड़ डाली और उससे रक्तका झरना गिरने लगा, जिसकी बूँद-बूँदमें सबको रामनाम दिखाई दिया। एक साथ सब लोग चिल्लाने लगे, "बस, बस, हमने देख लिया, हमने देख लिया; कृपा करो, कृपा करो।" हनुमानने फटी हुई छातीको बन्द कर लिया और राजसभामें जयघोष हुआ। सीताजी ने उन्हें गलेसे लगा लिया और हर्षके आँसुओंसे नहला दिया।

यह गढ़ी हुई कहानी है। 'रामायण' में भी यह नहीं मिलती। हनुमानको भी अपनी छाती फाड़कर दिखानेकी आवश्यकता नहीं थी। किन्तु हमें तो इससे शिक्षा ग्रहण करनी है। हनुमानको पारितोषिककी आवश्यकता नहीं थी। उनके लिए तो उनकी सेवा ही पारितोषिकके समान थी। उनकी भक्ति दिखावेकी भक्ति नहीं थी। मौखिक भक्ति भी नहीं थी। सेवा ही उनकी भक्ति थी। उनके रोम-रोममें, श्वासोच्छ्वासमें राम बसा हुआ था। उठते-बैठते, खाते-पीते, सोते-जागते उन्हें रामकी ही धुन लगी रहती थी। उन्होंने अपना मन, वचन और काया रामजी को अर्पित कर दी थी। उनकी वीरता उनकी भक्तिपर आश्रित थी। वह उसीमें से विकसित

हुई थी। यदि हम प्रयत्न करें तो ऐसी ही भक्ति हमें भी प्राप्त हो सकती है। यदि रामनाम हर समय हमारी जीभपर रहेगा तो किसी दिन वह हृदयमें उतर जायेगा; और यदि एक बार हृदयमें उतर गया तो फिर उसे नस-नसमें व्याप्त हुआ समझो।

प्रभावती विशेषकर तुझे अपने प्रणाम भेज रही है। वह सबको याद कर रही है। मैंने यह पत्र कल लिखना शुरू किया था और आज बुधवारको सुबह पूरा किया है। अभी चार नहीं बजे हैं।

सभी बहनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० १७-९

२८७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

पटना
१४ मार्च, १९३४

भाई वल्लभभाई,

बेलगाँवसे लिखा मेरा पत्र मिल गया होगा। वह ठेठ गुरुवारको डाकमें डाला गया था।

यह पत्र बुधवारको सवेरे शुरू कर रहा हूँ। अभी चार नहीं बजे हैं। बा का पत्र पूरा किया और इसे हाथमें लिया है। पटना रविवारकी रातको पहुँचा। मैं आज ६ बजे मोतीहारीके लिए रवाना हो रहा हूँ। मैंने कलका दिन साथियोंसे विचार-विमर्श करनेमें बिताया। पैसा अच्छा मिल रहा है। मगर जरूरत भी उतनी ही बड़ी है। यह सावधानी रखनी होगी कि कौड़ी-कौड़ीका सदुपयोग ही हो। जमनालालजी यहीं हैं। लक्ष्मीदास अब अच्छा होता जा रहा है। घरमें चलता-फिरता है। राजेन्द्र बाबूका स्वास्थ्य अब बिलकुल अच्छा कहा जा सकता है। उनपर आ पड़े कामके बोझके कारण वे अपनी बीमारीको भूल गये हैं। मैं कल पटना शहरकी हालत देख आया। बहुत-सी सरकारी इमारतें बेकार हो गई हैं। कहा जाता है कि लगभग डेढ़ करोड़का नुकसान तो केवल पटनामें हुआ है। ८० लोग मरे और ४०० घायल हुए। फिर भी दूसरे भागोंकी तुलनामें पटनाको विशेष क्षति नहीं हुई है। वाइसराय-फंडकी कमेटी अलग है और राजेन्द्रबाबूकी अलग है। अब देखना है कि क्या किया जा सकता है।

लेस्टर और उसकी सहेली कल दिल्लीसे लौट आईं। दोनों मेरे साथ आयेंगी। उसकी सहेलीको जल्दी विलायत लौट जाना पड़ेगा। लेस्टर अभी ठहरेगी। उसे पूरी स्थितिका अध्ययन करना है। अगाथा हैरिसन १६ तारीखको आ रही है। वह भी यहाँ तो आयेगी ही।

ठक्कर बापा और उनके संगी-साथी हैदराबादमें उतर गये। फिर जब मैं उड़ीसा वगैरह का दौरा लगा सकूँगा, तब वे आ जायेंगे। मुझे लगता है कि लगभग एक मास तो यहाँ लगेगा ही। ज्यादा रुकनेकी जरूरत शायद नहीं पड़ेगी।

यहाँ आते हुए रास्तेमें इलाहाबाद पड़ा था। इलाहाबादमें तीन घंटे ठहरना था, इसलिए मैं आनन्द-भवन गया था। इससे स्वरूपरानी (नेहरू) को आश्वासन मिला। उनके पास काफी देर तक बैठा। कुछ देर कमला (नेहरू) के पास भी बैठा। कमला बीमार है। सास-बहू दोनों रोगशय्या पर पड़ी थीं। कमला डॉ० विधानकी वाट देख रही थी।

शास्त्री ('हरिजन' पत्रवाले) के दो सुन्दर बालक थे। दोनोंको उनके माँ-बाप पूजते थे। उनमें से छोटा बच्चा पाँच वर्षका होगा; वह गुजर गया। अब दोनों विलाप कर रहे हैं। दोनों बच्चे बड़े ही चतुर थे। तमिल, हिन्दी, बंगला समझते थे; नाचते-गाते थे। माँ-बापने उनको ऊँचे दर्जेकी तालीम दी थी।

अब आज ज्यादा नहीं लिखा जाता। आँखें काफी थक गई हैं। अभी प्रार्थनाका समय हो जायेगा। सोया तो जा ही नहीं सकता।

तुम्हारा पत्र इस बार भी नहीं आया। मैं लिखता रहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ८५-६

२८८. पत्र : वसुमती पण्डितको

पटना
१४ मार्च, १९३४

चि० वसुमती,

तेरा पत्र मिला। तू फिलहाल वर्धा चली जा। मैं तुझे तत्काल यहाँ नहीं बुला रहा हूँ क्योंकि मुझे बिहारके भूकम्प-पीड़ित इलाकोंका दौरा करना है। मैं वहाँ किसीको नहीं ले जा रहा हूँ। वर्धासे मेरे पास पहुँचना आसान होगा। और फिर वर्धामें रहकर वहाँका अनुभव भी लेना ही है।

दुर्गासे कहना कि मैंने उसे पत्र लिखा है कि वह अनसूयाबहनसे पूछकर अहमदाबाद अवश्य जा सकती है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

पटनाके पतेपर तू मुझे लिख सकती है।

श्रीमती वसुमतीबहन
मार्फत – श्री गंगाबहन वैद्य
रामबाग, बोरीवली
बरास्ता – बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३८४) से। सी० डब्ल्यू० ६२९ से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

२८९. सम्मति : शारदा सदन पुस्तकालय, लालगंजकी दर्शक-पुस्तिकामें

१४ मार्च, १९३४

मकान तो गिरा लेकिन विद्याका नाश नहि हो सकता है इसलिये लोक[1] पुस्तकालयसे विद्याधन प्राप्त करें।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५०२) से।

२९०. भाषण : ग्रामवासियोंके समक्ष[2]

१४ मार्च, १९३४

मैं आपसे एक बात कहना चाहता हूँ। आपमें से जिन लोगोंको केन्द्रीय राहत समितिकी ओरसे काम मिल रहा है उनका यह धर्म है कि उसे अच्छी तरहसे करें। ईमानदारीसे अच्छी तरह काम कीजिए। जो लोग पहलेसे काम नहीं कर रहे हों उन्हें अब करना चाहिए। घटिया काम या बिना कामके पैसा देना लोगोंको भिखारी बनाना है। और आपको अपने हृदय तथा जीवनसे अस्पृश्यताको निकाल देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
महात्मा, खण्ड २, पृ० २५३-५४

१. अर्थात् 'लोग'।

२. यह भाषण गांधीजी ने लालगंज से मोतीहारी जाते समय दिया था। साधन-सूत्रमें यह नहीं बताया गया है कि वह कौन-सा गाँव था, जहाँ गांधीजी ने भाषण दिया था।

२९१. भेंट : यूनाइटेड प्रेसके संवाददाताको[1]

[१५ मार्च, १९३४के पूर्व][2]

यह खबर बिलकुल गलत है। मैंने जो कहा था वह यह कि "अगर बिहारके हरिजन भूकम्प-पीड़ितोंको, दूसरे लोगोंसे अलग, खास मददकी जरूरत हुई तो हरिजन सेवक संघके केन्द्रीय बोर्डको इस बातपर विचार करना होगा कि उक्त मदद कैसे दी जा सकती है।"

लेकिन इसका मतलब तो यह होगा कि बिहार केन्द्रीय राहत समितिने भूकम्प-प्रभावित क्षेत्रोंके हरिजन भूकम्प-पीड़ितोंकी उपेक्षा की है।

मुझे पूरा विश्वास है कि ऐसा अवसर कभी नहीं आयेगा, क्योंकि केन्द्रीय राहत समितिका अब जैसा पुनर्गठन हुआ है उस रूपमें वह बिहारके हरिजन भूकम्प-पीड़ितोंकी देखभाल करनेके लिए पूर्ण रूपसे सक्षम है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-३-१९३४

२९२. पत्र : एस्थर मेननको

[१५ मार्च, १९३४][3]

प्यारी बिटिया,

तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। यह पत्र मैं मोतीहारीसे रातके १२-१५ बजे लिख रहा हूँ। उठा यह सोचकर कि तीन बज गये हैं, लेकिन देखा कि अभी रातके १२ ही बजे हैं। लेकिन पत्र-व्यवहारका काम सामने पड़ा छोड़कर सोनेको मन नहीं हुआ।

मेननके बारेमें तुम्हारी बात समझता हूँ। मुझे मैसूरके दीवानके पास व्यक्तिगत मामलेको लेकर पत्र नहीं लिखना चाहिए। मेननको सभी अस्पतालोंमें अर्जी देनी चाहिए और उसकी जहाँ भी जरूरत हो वहाँ आबोहवाका खयाल किये बिना चला जाये। तुम्हें फिलहाल वहीं रहना होगा जहाँकी आबोहवा और दूसरी बातें तुम्हारे और बच्चोंके अनुकूल पड़ें। वकालतके धन्धेकी तरह डॉक्टरीके पेशेमें भी ऊपर बड़ी कशमकश है। खैर, क्या होता है, मुझे बताती रहना। मेननसे तुम्हें कहना चाहिए कि वह जब भी चाहे मुझे पत्र लिखनेको स्वतन्त्र है।

१. यूनाइटेड प्रेसके संवाददाताने गांधीजी का ध्यान **स्टेट्समैन**में छपी इस खबरकी ओर दिलाया था कि उनका इरादा हरिजन-कोषका कुछ पैसा बिहारके भूकम्प-पीड़ित हरिजनों पर खर्च करनेका है।

२. साधन-सूत्रमें इस रिपोर्ट पर १५ मार्चकी तिथि है।

३. पत्रमें मोतीहारी का उल्लेख होनेके कारण यह तारीख दी जा रही है। गांधीजी इसी तारीख को मोतीहारी पहुँचे थे।

आशा है, बच्चे स्वस्थ-प्रसन्न होंगे। हाँ, गर्मीके मौसममें तुम्हें उनको किसी पहाड़ी स्थानपर ले जाना होगा।

वादेके बारेमें तुम्हारी बात मैं समझता हूँ। उसे तोड़ा गया या नहीं, यह तुम अकेली नहीं तय कर सकती हो। मुझे दुःख है कि मेरे पोर्टोनोवो न जानेपर मेरिया को नाराजगी हुई। उसकी बातसे तो मुझे ऐसा लगा कि उसने मेरी आत्मत्याग की भावनाका मर्म समझ लिया है। उसमें जितने दुःखकी बात उसके लिए थी उतने ही दुःखकी बात तो मेरे लिए भी थी। लेकिन आत्मत्याग तो सच्चा वही है जिससे त्याग करनेवालेको दुःख न हो, और नाराजगी तो होनी ही नहीं चाहिए, बल्कि खुशी होनी चाहिए।

तुम सबको स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सं० १२७) से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड,** पृ० १०४ से भी

२९३. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१५ मार्च, १९३४

चि० अमला,

अभी रातके १२-४० बजे हैं। घंटी २-३० पर बजनी चाहिए थी, लेकिन १२ बजे ही बज उठी। अब पिछड़ गये पत्र-व्यवहारको पूरा करनेमें लगा हुआ हूँ। यह बिहारका एक भूकम्प-प्रभावित क्षेत्र है।

यह बात बिलकुल सच है कि पशुओंको जो कष्ट हो रहा है, उसके प्रति बहुत-से हिन्दू हृदयहीनता बरत रहे हैं। यह इस बातका सूचक है कि उनकी धार्मिक भावना कितनी गिर चुकी है और किस प्रकार निष्प्राण हो गई है। अगर तुम्हें यहूदी धर्म सन्तोष नहीं दे रहा है तो कोई भी अन्य धर्म तुम्हें अधिक दिनों तक सन्तोष नहीं दे सकता। मैं तो तुम्हें यही सलाह दूंगा कि तुम यहूदी बनी रहो और दूसरे धर्मकी अच्छाइयोंको ग्रहण करती रहो।

मेरा वजन १०७ पौंड है; रक्त-चाप कई दिनोंसे नहीं लिया गया है।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

२९४. पत्र : अ० वि० ठक्करको

१५ मार्च, १९३४

भाई ठक्कर बापा,

साथका [कागज] डॉ० अम्बेडकरने भेजा है। इसे ध्यानसे पढ़कर अपनी राय मुझे लिखना।

पोर्टोनोवोमें हरिजनोंके लिए नई जगहकी माँग की जा रही है। आशा है, इस बारेमें तुमने वेंकटसुब्बैयाको[1] लिख दिया होगा।

मैंने यहाँ क्षतिग्रस्त अंचलका दौरा आरम्भ कर दिया है। इसमें कमसे-कम महीना आसानीसे निकल जायेगा। उसके बाद ही उड़ीसा और असमका दौरा किया जा सकता है। हरिजी[2] संयुक्त प्रान्तके दौरेके लिए उतावली मचा रहे हैं। तुम यह सब देख लेना।

यह पत्र मैं भोरमें एक बजे मोतीहारीसे लिख रहा हूँ। ढाई बजेका अलार्म लगाया था किन्तु १२ बजे बज गया। मैं घड़ी देखे बिना दातुन करके बैठ गया और पत्रोंका ढेर मुझे फिर भला क्यों सोने देगा?

यहाँ मैं मीराबहन, लेस्टर तथा हॉगके अतिरिक्त अपने दलके अन्य किसी व्यक्तिको नहीं लाया हूँ। मोटर या अन्य प्रकारकी सुविधाकी व्यवस्था यहाँ हो ही नहीं सकती।

तुम्हारे साथ रहनेकी आदत पड़ जानेके कारण यहाँ तुम्हारे बिना अटपटा-सा लगता है। किन्तु क्या किया जा सकता है?

मुझे भी सपने आते थे।

बापू

[पुनश्चः]

तुम पटनाके पतेपर ही लिखते रहना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११३६) से।

१. भारत सेवक समाज, मद्रासके।

२. हृदयनाथ कुँजरू।

२९५. पत्र : लॉर्ड विलिंग्डनको

पटनाके पतेपर
मोतीहारी
१५ मार्च, १९३४

प्रिय मित्र,

कुमारी लेस्टरने, आपकी अनुमतिसे, आपके साथ हुई अपनी बातचीतका विवरण मुझे दिया है। बातचीतकी उनके मनपर यह छाप पड़ी है कि आप मुझे झूठा मानते हैं। यह तो सही हो सकता है कि मेरे जो विचार हैं उनमें से कई भ्रमपूर्ण हों। लेकिन मैं यह जानता हूँ कि मैं झूठा नहीं हूँ। आपको सिवा यह भरोसा दिलानेके कि अपने जीवनमें मैंने किसीके साथ बेईमानी नहीं बरती है, मैं नहीं जानता कि मैं आपको अपनी ईमानदारीका विश्वास कैसे दिलाऊँ। मुझमें आपको जो-कुछ भी झूठ दिखाई दिया हो, उसकी सफाई आपको देकर मुझे बड़ी खुशी होगी। मुझे आपको लिखनेकी जरूरत इसलिए पड़ी है कि आपके जैसे उच्च पदासीन व्यक्तिके मनमें मेरी ईमानदारीके प्रति यदि कोई शंका हो तो भारत और इंग्लैंडके बीच उस शान्तिकी स्थापनामें निश्चय ही बाधा पड़ेगी जिसकी स्थापनाके लिए मैं इतने वर्षोंसे प्रयत्न करता रहा हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता रहा हूँ। आप सच मानिए, मैं आपका और इंग्लैंडका वफादार मित्र हूँ।

सेवामें
परमश्रेष्ठ वाइसराय महोदय

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५६४) से।

२९६. पत्र : अमीना गु० कुरैशीको

१५ मार्च, १९३४

चि० अमीना,

तेरा पत्र मिला था। तू स्वस्थ नहीं रहती, इसमें तेरा दोष भी है न? खाने-पीनेमें सावधानी नहीं बरतती। मिर्च-मसाला चाहिए, चावल चाहिए, यह चाहिए, वह चाहिए। तुझे तो केवल दूध और फल ही लेने चाहिए। तेरा शरीर भी बेडौल होता जा रहा है। हमीदको अस्पतालमें रखकर खुजलीको दूर करना ही चाहिए। चाहे जैसे भी हो, तेरी और बच्चोंकी सेहत अवश्य सुधरनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

पत्र पटनाके पतेपर लिखना।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९२४) से; सौजन्य: अमीना गु० कुरैशी

२९७. पत्र : पार्वती प्रा० देसाईको

१५ मार्च, १९३४

चि० पार्वती,

प्रागजी से मिल आनेके बाद भी तूने मुझे खबर नहीं दी। यह क्या बात है? प्रागजी कैसे हैं? वे आजकल क्या पढ़ते हैं और कौन-सा शारीरिक श्रम करते हैं? वे क्या खाते हैं? क्या वे खुश हैं? उनके साथ कौन-कौन हैं? वे चुप क्यों हैं?

तू और बच्चे कैसे हैं?

. . .[1] मुझे . . .[2] लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०३७) से।

२९८. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

१५ मार्च, १९३४

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मिला था। तुमने बाल काटनेकी मशीन और कैंची खरीदकर अच्छा किया। हरएकको अपना हज्जाम खुद ही होना चाहिए।

गिरधारीलाल नहीं आयेगा।

मणिबहनके बारेमें मैं समझता हूँ। यदि सम्भव हो तो उसे भूल जाना।[3]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३६७) से; सौजन्य: भगवानजी पु० पण्ड्या

१ और २. मूलमें पढ़े नहीं जा सके।

३. इसके बादवाले वाक्यका कोई अर्थ नहीं बैठता। भगवानजी पण्ड्या द्वारा उक्त अंशका अर्थ स्पष्ट करनेका अनुरोध करनेपर गांधीजी ने जो उत्तर दिया था उसके लिए देखिए "पत्र: भगवानजी पु० पण्ड्याको", ९-४-१९३४।

बातचीतमें सामान्यतया जैसे प्रश्न पूछे जाते हैं वैसे ही प्रश्न पूछे जा रहे थे और उनके उत्तर भी मैं उसी ढंगसे दे रहा था। तभी ऐसा हुआ कि एकने कागज-पेंसिल माँगकर उन प्रश्नोत्तरोंको लिखना आरम्भ कर दिया। मैं जो-कुछ कहता हूँ वह महादेव देसाई आम तौरपर लिख लेते हैं, लेकिन उस दिन ऐसा हुआ कि देवदास और प्यारेलाल दोनों देरसे पहुँचे और तुम तो आई ही नहीं।

उस इतालवी मुलाकातीने जो-कुछ लिखा उसे मैं मूल रूपमें देखना चाहूँगा, क्योंकि 'टाइम्स' में जैसी खबर छपी है, वैसी कोई बात कह सकनेकी तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकता।

अगर वैसी बात मैंने कही हो तो अवश्य ही मैं नशेमें रहा होऊँगा या . . .

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ऑफिस लाईब्रेरी, लन्दन

३०१. भाषण : सार्वजनिक सभा, मोतीहारीमें

[१५ मार्च, १९३४][1]

यह बातचीत करनेका समय नहीं है। मैं आपसे बातचीत करने नहीं, आपको देखने और आपकी सहायता करने आया हूँ। लेकिन दो बातें हैं, जो मैं आपसे कहना चाहता हूँ। पहली यह कि राहत समितियोंके पास पैसा है और वह पैसा या तो भिखारियोंको मिलेगा या काम करनेवालोंको। और मैं भिखारी नहीं चाहता। अगर यह भूकम्प हमें भिखारी बना देता है तो यह बहुत दुःखद बात होगी। भीख वही माँग सकते हैं जिनकी आँखें नहीं हैं या हाथ अथवा पैर नही हैं या जो अन्य किसी कारणसे काम करनेमें असमर्थ हैं। जो शरीरसे समर्थ हैं, उनका भीख माँगना, 'गीता' के शब्दोंमें, चोरी करना है।

दूसरी बात यह है कि हमारे लिए यह उपहार खुद ईश्वरने भेजा है। इसको हमें उसके उपहारकी तरह ही स्वीकार करना चाहिए और तभी हम इसके मर्मको समझ सकेंगे। इसका मर्म क्या है? वह यह है कि अस्पृश्यताको मिटना चाहिए, अर्थात् किसीको भी अपनेको किसी अन्यसे ऊँचा नहीं मानना चाहिए।

अगर हम ये दो बातें समझ सकें तो यह भूकम्प हमारे लिए वरदान साबित हो सकता है। अभी हम इसे एक विपत्ति मानते हैं और इन सुन्दर खेतों और जमीनको बर्बादीकी हालतमें देखते हुए ऐसा मानना स्वाभाविक ही है। लेकिन ईश्वरसे मेरी यही प्रार्थना है कि वह हमें इस ध्वंसको वरदान बनानेकी शक्ति प्रदान करे।

[अंग्रेजीसे]

महात्मा, खण्ड-३, पृ० २५४-५५

१. १८-३-१९३४ के **सर्चलाइट**में प्रकाशित भाषणकी रिपोर्टसे।

३०२. भेंट : मोतीहारीमें मध्यवित्त-लोगोंके शिष्ट-मण्डलको

१५ मार्च, १९३४

महात्माजी ने शिष्ट-मण्डलके सदस्योंसे कहा कि आप जो सहायता माँग रहे हैं उसे कर्ज कहना बेकार है।[१] मेरा गुजरातके अकालका अनुभव तो यह है कि ऐसे कर्ज कभी वापस नहीं किये जाते। राहत देनेवाली संस्थाओं द्वारा दी गई सहायताको कर्ज कहनेसे केवल एक उद्देश्य सिद्ध होता है। इससे मध्यवित्त-लोगोंकी नाक रह जाती है और राहत-समितियोंको भी यह सन्तोष मिलता है कि जो पैसा वे दे रही हैं वह वापस मिल जायेगा; लेकिन वास्तवमें यह पैसा कभी लौटाया नहीं जाता। महात्माजी को मध्यवित्त-लोगोंकी आवश्यकताओंके अनुसार उन्हें सहायताकी बड़ी रकमें देनेमें कोई अड़चन दिखाई नहीं देती, यद्यपि साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि मध्यवित्त-लोगोंकी जरूरतोंपर विचार करते हुए उन लोगोंकी उपेक्षा नहीं की जा सकती जो भूखों मर रहे हैं। उन्होंने शिष्ट-मण्डलके लोगोंसे पूछा कि मध्यवित्त-लोगोंकी न्यूनतम और अधिकतम आवश्यकता क्या है। इसपर एकने कहा कि जब सहायता दी ही नहीं जानी है तो रकम बतानेसे क्या लाभ। इसपर महात्माजी ने कहा कि ऐसा रवैया ठीक नहीं है। मध्यवित्त-लोगोंकी समितिको अपना पक्ष तैयार करके रखना चाहिए ताकि जरूरत पड़नेपर उसे निजी या सरकारी किसी भी संगठनके सामने रखा जा सके। यह तय करनेका काम राहत-संगठनोंका होगा कि वे मध्यवित्त-लोगोंको, जो सचमुच बहुत कष्टमें हैं और जिन्हें राहतकी आवश्यकता है, क्या और किस रूपमें सहायता दे सकते हैं।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, १८-३-१९३४

१. शिष्ट-मण्डलने गांधीजी को बताया था कि अपने ढह गये घरोंको बनवाने और अपना कारोबार फिरसे आरम्भ करनेके लिए उन्हें अनुदान नहीं, बल्कि कर्जकी सख्त जरूरत है।

३०३. भेंट : चम्पारनके राहत-कार्यकर्त्ताओंको

मोतीहारी
१५ मार्च, १९३४

महात्मा गांधीके मोतीहारीसे प्रस्थान करनेके पूर्व चम्पारन-जिलेके राहत-कार्यकर्त्ता उनसे मिलने आये। उस अवसरपर महात्माजी ने उन्हें कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण सलाह दी।

जमीनको फिरसे आबाद करनेकी समस्याके बारेमें गांधीजी ने कहा कि केन्द्रीय राहत-समितिके लिए यह एक कठिन समस्या है। मेरे विचारसे केन्द्रीय समितिको केवल वही कार्यक्रम हाथमें लेना चाहिए जिसे वह ठीक ढंगसे पूरा कर सके।

गांधीजी ने आगे बताया, यह सच है कि अपनी जमीनको आबाद करनेकी समस्या के समाधानके लिए लोग हमसे आशा लगाये हुए हैं, लेकिन मेरा विचार है कि उनकी समस्याओंको सम्बन्धित अधिकारियोंके सामने प्रस्तुत कर देनेके अतिरिक्त राहत-समितिको इस सम्बन्धमें अपने सिर कोई जिम्मेदारी नहीं लेनी चाहिए।

उन्होंने आगे कहा, इस समस्याकी उपेक्षा न सरकार कर सकती है और न जमींदार, क्योंकि जमीनको फिरसे आबाद करानेमें उनका बहुत बड़ा हित निहित है। अन्यथा उनके राजस्व और लगानपर इसका बहुत बुरा असर होगा।

जब गांधीजी से बिहार केन्द्रीय राहत-समिति द्वारा सम्बन्धित किसानोंको जमीन आबाद करनेके लिए कर्ज दिये जानेके बारेमें उनका विचार पूछा गया तो उन्होंने कहा कि किसानोंको कर्ज देनेके सवालके साथ शहरोंमें रहनेवाले मध्यवित्त लोगोंको भी कर्ज देनेका सवाल जुड़ा हुआ है और केन्द्रीय राहत-समिति-जैसी गैरसरकारी संस्था इनमें से किसीसे भी बादमें कर्जकी रकमें वसूल नहीं कर सकती।

उन्होंने कहा कि इस कामके लिए दी जानेवाली कोई भी नकद सहायता दानके ढंगकी ही हो सकती है। लेकिन मुझे इस बातमें सन्देह है कि केन्द्रीय राहत-समितिके पास इतने साधन हैं कि वह ऐसी सहायताके जरूरतमन्द इतने सारे लोगोंकी आवश्यकताओंको पूरा कर सके।

अन्तमें गांधीजी ने कहा कि आपको लोकप्रियताके पीछे नहीं भागना चाहिए, बल्कि अपनी सारी शक्ति संचित करके रखनी चाहिए ताकि जब दूसरी एजेंसियाँ असफल हो जायें और सहायताकी आवश्यकता बहुत तीव्र हो उठे तब आप उस शक्तिका उपयोग कर सकें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-३-१९३४

३०४. मन्दिर-प्रवेश बनाम आर्थिक उन्नति

मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नके सम्बन्धमें कभी-कभी अखबारोंमें टीका-टिप्पणी देखनेमें आती है। यह आलोचना दोतरफा हुआ करती है — एक ओर तो यह हरिजनों द्वारा की जाती है और दूसरी ओर सनातनियों द्वारा। कुछ हरिजन कहते हैं, "हमें मन्दिर-प्रवेशकी जरूरत नहीं, यह हमें नहीं चाहिए। रहने दीजिए यह मन्दिरोंका बनवाना। आप तो इस सारे पैसेको हमारी आर्थिक उन्नतिमें ही लगाइए।" और कुछ सनातनियों का कहना है कि "मन्दिर-प्रवेशकी बात तो एकदम छोड़ दीजिए। हरिजनोंको मन्दिरों में जबरदस्ती लाकर आप हमारी भावनाओंको ठेस पहुँचाते हैं।" ये दोनों तरहके आलोचक भ्रममें हैं। मन्दिर बनवानेमें हरिजन-कोषका एक पैसा भी खर्च नहीं हुआ है और न होगा। प्रयत्न तो यही हो रहा है कि सार्वजनिक मन्दिर जिस प्रकार अन्य हिन्दुओंके लिए खुले हुए हैं, उसी प्रकार हरिजनोंके लिए भी खोल दिये जायें। फिर यह हरिजनोंकी मरजीपर है कि वे मन्दिरोंमें जायें या न जायें। हरिजनों पर जो प्रतिबन्ध लगा हुआ है, वह सवर्ण हिन्दुओंको दूर करना है। उन करोड़ों लोगोंके लिए, जो मन्दिरोंको अध्यात्म-धनका भंडार समझते हैं, वे प्राणोंके समान प्रिय जीवन्त वास्तविकता हैं। यदि हरिजनोंके साथ किये अपने अन्यायोंपर उन्हें सचमुच पश्चात्ताप हो रहा है, तो उन्हें अपने इन अध्यात्म-भंडारोंमें हरिजनोंको अवश्य उचित भाग देना चाहिए। मन्दिरोंके द्वारोंका हरिजनोंके लिए खोला जाना उनके लिए कितनी बड़ी बात है, यह मैं जानता हूँ। धारवाड़ और बेलगाँवके बीच पिछले हफ्ते मैंने हरिजनोंके लिए तीन मन्दिरोंके द्वार खोले। उन अवसरोंपर सवर्ण हिन्दू और हरिजन काफी बड़ी संख्यामें उपस्थित थे। आलोचक अगर वहाँ होते और उन्होंने प्रतिमाको नमन करते और प्रसाद ग्रहण करते समय हरिजनोंकी मुखाकृतियों पर झलकती हर्षकी आभा देखी होती तो उनकी सारी आलोचना बन्द हो जाती। आलोचना करनेवाले हरिजनोंकी समझमें भी यह आ जाता कि खुद उनके अलावा आम हरिजन मन्दिर-प्रवेशको लालायित हैं। और सनातनी आलोचक देखते कि जहाँ भी जिस मन्दिरके द्वार खुलते हैं, वहाँ वे मन्दिरमें जानेवाले लोगोंकी पूरी सम्मतिसे और उनकी खासी अच्छी उपस्थितिमें ही खोले जाते हैं। हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार खोलनेका आध्यात्मिक या अन्य कोई महत्त्व तभी हो सकता है जब यह कार्य यथोचित प्रचारके बाद विधिपूर्वक सम्पन्न किया जाये। साथ ही यह भी जरूरी है कि यह काम अपनेको सुधारक बतानेवाले उन लोगोंकी इच्छासे नहीं जिनकी मन्दिरोंमें कोई श्रद्धा या रुचि ही नहीं है और जिनके लिए मन्दिर शायद अन्धविश्वासके प्रतीक भी हों, बल्कि उनकी सम्मतिसे सम्पन्न किया जाये जो आज सचमुच मन्दिरोंमें जाते हों। हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार चोरी-छिपे खोलनेसे हिन्दू-धर्मकी भलाई नहीं होगी।

मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनको पैसेकी तो कोई वैसी आवश्यकता है नहीं; इसके अलावा इस प्रश्नपर कोई आन्दोलन करनेकी भी गुंजाइश नहीं है। बस जो-कुछ करना है, मन्दिरोंमें श्रद्धा और सवर्ण लोगोंपर प्रभाव रखनेवाले कुछ थोड़े-से कार्यकर्त्ताओंको ही करना है। इसलिए यह प्रश्न बहुत ही नम्रता और सावधानीसे सुलझानेका है और इसी तरह सुलझाया भी जा रहा है। अगर किसी बातपर आग्रह है तो इसीपर कि श्रद्धालु सुधारकोंको यह अधिकार है और उनका यह कर्त्तव्य है कि मंदिर-प्रवेशकी वकालत करें और लोगोंको यह बतलायें कि बिना मन्दिर-प्रवेशके यह सुधार अधूरा ही नहीं, बल्कि व्यर्थ है। कारण, अगर हरिजनोंको मन्दिरोंमें जानेका निर्बाध अधिकार नहीं मिला तो यह नहीं कहा जा सकता कि अस्पृश्यता जड़-मूलसे नष्ट हो गई है।

रही अब आर्थिक उन्नतिकी बात; सो यह कहना बिलकुल ही गलत है कि मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नसे हरिजनोंकी आर्थिक उन्नतिमें बाधा पहुँच रही है। मन्दिर-प्रवेश आर्थिक उन्नतिमें भी सहायक होगा। कारण यह है कि हरिजनोंको जब मन्दिरोंमें जानेका अधिकार मिल जायेगा, तो आर्थिक उन्नतिके जो मार्ग आज हरिजनोंके अलावा दूसरोंके लिए खुले हुए हैं, वे हरिजनोंके लिए भी आप-से-आप खुल जायेंगे। जहाँतक हरिजन-कोषमें प्राप्त पैसेका सम्बन्ध है, वह सब केवल उनकी आर्थिक उन्नतिपर ही खर्च किया जायेगा, बशर्ते कि यह मान लिया जाये कि शिक्षाका भी आर्थिक उन्नतिके अंतर्गत समावेश हो जाता है, क्योंकि पढ़े-लिखे हरिजन जीवनकी दौड़के लिए अधिक योग्य बनेंगे। मुझे मालूम है कि शिक्षा इस दौड़के लिए सवर्ण लोगोंकी योग्यता बहुधा कम कर देती है। मगर इसका कारण यह है कि उनकी शिक्षा उनमें श्रमके प्रति तिरस्कारका भाव भरती है। हरिजनोंके सामान्य समुदायके लिए अभी कुछ समयतक तो ऐसी किसी आपदाकी आशंका नहीं है। और यह भय हमेशाके लिए भी दूर हो सकता है। इसके लिए जरूरी सिर्फ यह है कि हमारे हरिजन-सेवक हरिजन-शिक्षाको उस प्रचलित शिक्षा-पद्धतिके दोषोंसे दूर रखनेका ध्यान रखें, जिसमें तकनीकी पक्षकी पूरी नहीं तो अधिकांशतः तो उपेक्षा की ही जाती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-३-१९३४

३०५. हरिजन-कोष

पत्र-लेखक कभी-कभी पूछ बैठते हैं कि जनताको इस बातकी जानकारी क्यों नहीं दी जाती कि दौरेमें मुझे कितना पैसा मिल रहा है और उसे किस प्रकार खर्च किया जा रहा है। जो लोग यह पूछते या अखबारोंमें लिखते हैं, स्पष्ट ही वे 'हरिजन' पढ़नेकी तकलीफ नहीं करते। मेरे दौरेमें जो पैसा मिल रहा है, उसका हिसाब-किताब, जहाँतक बनता है, पूरा-पूरा ब्योरेवार 'हरिजन'में प्रकाशित होता रहता है। पाठक देखनेका कष्ट करें, तो उन्हें तमाम थैलियों, व्यक्तिगत दान और जेवरातकी नीलामकी सारी रकमोंका उल्लेख 'हरिजन'में मिल जायेगा। हमारी मंडलीमें हिसाब रखनेवाले जो तीन सज्जन हैं, वे केन्द्रीय बोर्डके सतत सजग मंत्री ठक्कर बापाके अधीन दिन-रात काममें जुटे रहते हैं। चाँदी और ताँबेके सिक्कोंको गिनने और प्राप्त रकमोंका हिसाब प्रतिदिन मिलानेमें उन्हें अकसर आधी-आधी राततक बैठना पड़ता है। यह पैसा केन्द्रीय बोर्ड, दिल्लीको भेज दिया जाता है, जहाँ वह ठीक तरहसे बैंकमें जमा कर दिया जाता है। दिल्लीमें निस्सन्देह हिसाब-किताब बहुत ठीक तरहसे रखा जाता है। एक-एक पाईका जमा-खर्च वहाँके बही-खातेमें मिलेगा। वहाँ हिसावकी जाँच-पड़ताल की जाती है और समय-समयपर बोर्डकी बैठकोंमें वह सारा हिसाब पेश होता रहता है। बोर्डका सारा लेन-देन, आमद-खर्च जगजाहिर है और उसे विधिगत दर्ज किया जाता है। दूसरे शब्दोंमें, बोर्ड ठीक-ठीक बैंकके तरीकोंपर चल रहा है, और एक सार्वजनिक संस्थाके रूपमें वह आर्थिक तथा व्यवस्था-सम्बन्धी अन्य मामलोंमें अपनेको जनताके प्रति उत्तरदायी समझता है।

जनताको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि २ मार्च, १९३४ तक दौरेमें ३,५२,१३० रुपये, ९ आने, ७ पाई प्राप्त हो चुके हैं।

अब रही खर्चकी बात, सो जिस प्रान्तसे जो रकम मिली है उसे वही प्रान्त केन्द्रीय बोर्डकी मंजूरीसे खर्च करेगा। कोषकी रकम किस प्रकार खर्च की जाये, इस सम्बन्धमें नियमोंका एक मसविदा पिछले सप्ताह प्रकाशित किया गया था और उस पर लोगोंकी राय माँगी गई है।[1] इससे अधिक करना तो मनुष्यके लिए असम्भव ही नहीं, अनावश्यक भी है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-३-१९३४

१. देखिए "राय भेजिए", पृ० २५७-५९।

३०६. भाषण : सार्वजनिक सभा, मुजफ्फरपुरमें[1]

१६ मार्च, १९३४

गांधीजी ने कहा, यह आपके सामने अधिक विस्तारसे बोलनेका समय नहीं है। अगर समय मिला और राजेन्द्रबाबूने मुझे फिर मुजफ्फरपुर बुलाना वांछनीय समझा तो मैं फिर कभी विस्तारसे बोल सकूँगा। लेकिन इस समय मैं आपसे इतना ही कहना चाहूँगा कि शरीरसे सक्षम कोई भी पुरुष या स्त्री वर्तमान परिस्थितिसे नाजायज फायदा उठाकर भीख माँगे, यह तनिक भी वांछनीय नहीं है। भीख माँगना आत्म-सम्मानके खिलाफ है और 'गीता' के अनुसार, जो स्त्री या पुरुष अपनी आजीविका कमानेमें सक्षम है वह यदि भीख माँगता है तो वह चोरी करनेका पाप करता है। मैं चाहता हूँ कि आपमें से कोई भी इस पापका भागी न बने। दूसरी बात यह है कि आपको ईश्वरकी इच्छाको सिर झुकाकर स्वीकार करना चाहिए और ऐसी कोशिश करनी चाहिए कि इस विपत्तिमें भी आपका कोई हित सधे और यह हित आप अस्पृश्यताके अभिशापको सदाके लिए मिटाकर साध सकते हैं। आपको यह समझना चाहिए कि हम सब समान रूपसे ईश्वरकी सृष्टि हैं और इसलिए अस्पृश्यता बरत-कर मानव-मानवमें ऊँच-नीचका भेद-भाव मानना घोर पाप है और ऐसे आचरणका आदेश वेद कभी नहीं दे सकते, क्योंकि जो चीज सत्यपर आधारित नहीं है वह कभी वेदवाक्य हो ही नहीं सकती। इसलिए मैं चाहता हूँ कि विधाताने आपको जो भारी विपत्ति भेजी है उसके मर्मको समझिए और उससे लाभ उठाइए।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, १८-३-१९३४

१. यह सभा दरभंगा राजभवनके अहातेमें हुई थी। इसमें लोग बड़ी तादादमें उपस्थित थे।

३०७. भेंट : 'सर्चलाइट' के प्रतिनिधिको

पटना
[१६ मार्च, १९३४][1]

सब-कुछ देखकर मेरे मनपर जो छाप पड़ी है वह यह कि जिसे मैं एक सुरम्य प्रदेश मानता था, वह वीरान हो गया है। मोतीहारी, हरिपुर, लालगंज और मुजफ्फरपुरको मैंने पहले भी देखा था। जिन दूसरी जगहोंपर मैं इस बार गया वहाँ पहले गया होऊँ, ऐसा मुझे याद नहीं आता। मोतीहारीमें मैं कई महीने रहा था। १९१७ में जब मैं चम्पारनमें था तब मेरा सदरमुकाम वहीं था। इन जगहोंपर एकके-बाद-एक सभी घरोंको, जिनमें से कुछसे मैं भली-भाँति परिचित था, ध्वस्त अवस्थामें या मलबेके ढेरोंके रूपमें देखकर मेरा हृदय विदीर्ण हो उठा। रेतसे भरे एकके-बाद-एक खेतको देखनेसे पता चलता था कि इस हजारों एकड़ जमीनमें खेती करनेवाले किसानों का जीवन कितना कठिन हो गया होगा। भूकम्पसे पहलेवाली स्थिति किसी हदतक ला सकनेकी समस्या ऐसी है जो देशके सभी श्रेष्ठतम कार्यकर्त्ताओंके सम्मिलित प्रयत्नोंके लिए भी एक चुनौती है। लेकिन इस मरुस्थलमें विभिन्न राहत-संस्थाओंके प्रतिनिधियोंको, जिनमें सरकार के राहत-विभागके प्रतिनिधि भी हैं, देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। मैंने देखा कि वे सब आपसमें न्यूनाधिक सलाह-मशविरा करते हुए काम कर रहे हैं और उन सबका एक ही लक्ष्य है — कष्टमें पड़े हुए लोगोंको अपनी सामर्थ्य-भर अधिकसे-अधिक राहत देना।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, १८-३-१९३४

३०८. भाषण : बिहार केन्द्रीय राहत समितिकी बैठक, पटनामें[2]

१८ मार्च, १९३४

आपको यह बता दूँ कि यह प्रस्ताव[3] मेरा तैयार किया हुआ है। यों तो मैं असहयोगका जनक हूँ, लेकिन हमारे सामने जो काम है उसमें सहयोग करनेकी सिफारिश

१. तिथि **हिन्दू**में छपी रिपोर्टसे ली गई है।

२. इस बैठकमें अन्य लोगोंके अलावा मदनमोहन मालवीय, जमनालाल बजाज और राजेन्द्रप्रसाद भी उपस्थित थे।

३. इस प्रस्तावमें कहा गया था कि "बिहार पर आई अभूतपूर्व विपत्तिसे उसे छुटकारा दिलानेके सामान्य उद्देश्यकी पूर्तिमें सरकारके साथ ससम्मान सहयोग करने" के लिए हम तैयार हैं।

मैंने बेहिचक की है। जब पहले-पहल तिन्नवल्लीमें मैं इस विपत्तिके बारेमें बोला था,[1] तभी मैंने कहा था कि यह ऐसा संकट है जिसके निवारणमें सारे भारतका सहयोग अपेक्षित है और हमें सरकारको निश्चय ही यह सहयोग देना चाहिए। बिहारकी आकस्मिक विपत्तिमें सारे देशने उसके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित की है और बिहारको अपने पैरोंपर खड़े होनेमें सहायता देनेको जो विभिन्न एजेंसियाँ जुटी हुई हैं उनके बीच कोई भी भेद करना बहुत अनुचित होगा।

जब किसीकी मृत्यु होती है तो हम कुछ समयके लिए आपसी झगड़ोंको भूलकर श्रद्धापूर्वक अन्तिम संस्कार सम्पन्न करनेके काममें लग जाते हैं और मृत व्यक्तिके प्रति सम्मान प्रकट करनके लिए शव-यात्रामें शामिल होते हैं। लेकिन बिहारमें तो हजारोंकी मृत्यु हुई है और अनेक गाँव तथा नगर धूलमें मिल गये हैं। हमारी गणनाके अनुसार भूकम्पने लगभग २५,००० लोगोंकी जानें लीं और सरकारी आँकड़ोंके अनुसार लगभग १०,००० की। सही संख्या जो हो, समयकी माँग निस्सन्देह यह है कि बिहारके कष्ट-पीड़ित लोगोंको उबारनेके लिए हम अपनी पूरी शक्तिसे प्रयत्न करें और ऐसा करनेमें सभी भेद-भावोंको त्याग दें। यह विपत्ति इतनी बड़ी है कि इससे जो क्षति पहुँची है वह केवल पैसा एकत्र और वितरित करनेसे पूरी नहीं हो सकती। पीड़ितोंके व्यथित हृदयोंको सान्त्वना तो केवल इसी बोधसे मिल सकती है कि सारी दुनियाकी सहानुभूति उन्हें प्राप्त है।

तो इस विपत्तिका खयाल करके हम हिन्दू-मुसलमानका, भारतीय और अंग्रेजका भेद भुला दें। इसी सिद्धांतको सरकार और जनताको भी आपसमें सहयोग करनेके लिए लागू करना चाहिए, और इसलिए इस सामान्य उद्देश्यकी पूर्तिमें सरकारको सम्मानपूर्वक अपना सहयोग देना हमारा कर्त्तव्य है। सरकारके पास बहुत-से विशेषज्ञ हैं, जमीनपर उसका नियन्त्रण है और उसके पास अन्य सुविधाएँ भी हैं, जबकि इस दृष्टिसे हमारे साधन नगण्य हैं। इस हालतमें हमारे और सरकारके बीच सहयोगके अभावमें अपने कोषका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना हमारे लिए असम्भव होगा। और मेरा निश्चित विश्वास है कि जनताके हार्दिक सहयोगके बिना सरकार भी कष्टमें पड़े लोगोंको पूरी सहायता नहीं दे पायेगी। हमें मनमें ऐसा कोई भय नहीं पालना चाहिए कि अपने सहयोगसे हम सरकारके हाथ मजबूत करेंगे। अगर सरकार सबके मिले-जुले प्रयत्नसे कष्टमें पड़े लोगोंको उससे उबारनेके लिए शक्ति प्राप्त कर सकती है तो वह शक्ति प्राप्त करनेका उसे हक है। हम जनताका नुकसान करनेके निमित्त नहीं, बल्कि उसे सुरक्षा और राहत देनेके उद्देश्यसे अपना सहयोग देना चाहते हैं।

मैं मोतीहारी गया था। वहाँ कई राहत-संस्थाओंके प्रतिनिधियों और सरकारके भी दो अधिकारियोंसे मैंने बहुत-सी जानकारी प्राप्त की। उन अधिकारियोंने, जो नये घर बनानेकी तजवीज की जा रही है, उनकी योजनाएँ मुझे दिखाईं और बताया कि सरकार किस रूपमें सहायता करने जा रही है। इस तरह मेरे मस्तिष्कमें हमारी प्रवृत्तियोंके

[1] देखिए "भाषण: तिन्नवल्लीकी सार्वजनिक सभामें", पृ० ४८-५०।

क्षेत्रका एक अधिक साफ चित्र उभरा। मैं मध्यवित्त लोगोंके कुछ प्रतिनिधियोंसे भी मिला। उनकी समस्याका समाधान बहुत कठिन है।[1] उन्हें जिस सहायताकी जरूरत है वह उन्हें सरकार और जनताके पारस्परिक सहयोगके बिना नहीं मिल सकती।

अगर कांग्रेसियोंको ऐसी आशंका हो कि इस तरहके सहयोगसे कांग्रेसकी प्रतिष्ठाको आँच आयेगी तो मेरा निवेदन है कि यह आशंका निर्मूल है। बात यह है कि हम कांग्रेसियोंके रूपमें नहीं, बल्कि मानवतावादियोंकी तरह काम करने जा रहे हैं। इसलिए कांग्रेसकी प्रतिष्ठा बढ़ने-घटनेका यहाँ कोई सवाल ही नहीं उठता। कांग्रेसकी प्रतिष्ठा तो कांग्रेसियोंकी आन्तरिक पवित्रता और सेवाकी क्षमतापर निर्भर है। किसी मानवीयतापूर्ण कार्यमें सरकारके साथ सहयोग करनेसे हम कांग्रेसी नहीं रह जाते, ऐसी बात तो नहीं है। क्या राजेन्द्रबाबू कांग्रेसी नहीं रह गये हैं? या कि इस प्रस्तावको प्रस्तुत करनेके कारण मैं अब कांग्रेसी नहीं रह गया?

अभी सबसे बड़ा सवाल तो लोगोंको दुःखसे उबारनेका है। इसमें किसी बाहरी तत्त्वको दाखिल करना पाप होगा। चम्पारनमें मुझे कांग्रेसका नाम लेनेकी कभी जरूरत नहीं पड़ी और न मैंने उसका नाम लिया ही। राजेन्द्रबाबूकी माँगपर देशने आज २० लाखसे अधिक रुपये दिये हैं। लोग तो सिर्फ राजेन्द्रबाबूको ही जानते हैं और उन्हींकी ईमानदारीका भरोसा करके उन्होंने मदद दी है। उन्होंने देशके लिए जो महान् त्याग किये हैं, वे उन्हें याद हैं। अब ऐसी व्यवस्था करना हमारा काम है जिससे इस कोषका अच्छेसे-अच्छा उपयोग हो सके। इसी उद्देश्य को ध्यानमें रखकर राजेन्द्रबाबूने ऐसी समिति बनाई जिसमें सभी वर्गों और विचारोंके लोग हैं और इसीलिए उन्होंने सरकारको लिखा कि वे सहयोग करनेको तैयार हैं।

इसलिए मैं कांग्रेसियोंसे यह अनुरोध करूँगा कि पहले तो वे यह तय करें कि हमें बिहारके पुनर्निर्माणका काम अपने हाथमें लेना चाहिए या नहीं। अगर वे यह तय करें कि लेना चाहिए तो हमें इस क्षेत्रमें काम करनेवाले सभी कार्यकर्त्ताओंके साथ, सरकारी कर्मचारियोंके साथ भी, हृदयसे सहयोग करना चाहिए और हमें ऐसा पूरे मनसे करना चाहिए। एक सामान्य लक्ष्यको पूरा करनेमें असहयोगको भूल जाना चाहिए, या फिर बिहारको राहत देनेके कामसे बिलकुल अलग ही हो जाना चाहिए। इसलिए अगर आप इस प्रस्तावको स्वीकार करें तो मेरा खयाल करके नहीं, बल्कि आपसे सहायताकी अपेक्षा रखनेवाले कष्टमें पड़े लाखों लोगोंका खयाल करके सच्चे हृदयसे और स्वयं इस प्रस्तावके गुण-दोषोंका विचार करके स्वीकार करें। सेवकको केवल अपने स्वामी, अपने सेव्यके विषयमें ही सोचना चाहिए और आज हमारे स्वामी, हमारे सेव्य कष्टमें पड़े लाखों लोग ही हैं।

कहनेकी जरूरत नहीं कि इस प्रस्तावका मतलब यह नहीं होना चाहिए कि हमारे विचारसे जहाँ सरकारकी नीति गलत हो या उसके द्वारा किये गये उपाय अपर्याप्त हों वहाँ हम उसकी आलोचना न करें।

१. देखिए "भेंट: मोतीहारीमें मध्यवित्त-लोगोंके शिष्ट-मण्डलको", पृ० ३०५।

और अन्तमें, अध्यक्षकी[1] हैसियत से नहीं, बल्कि एक पुराने साथी कार्यकर्त्ता और सेवककी हैसियतसे मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि अगर बने तो इस प्रस्तावपर कोई बहस खड़ी न करें।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २४-३-१९३४

३०९. पत्र : गंगम्माको

पटना
२० मार्च, १९३४

प्रिय गंगम्मा,

बिहारके निमित्त दिये आपके ५ रुपयेके नोटके लिए धन्यवाद। जिसे आप हृदयसे दिया गया छोटा . . .[2] कहती हैं उसके लिए क्षमा-प्रार्थनाकी जरूरत नहीं है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीमती गंगम्मा
मार्फत – श्री वी० वी० मुरनाड
कुर्ग

[अंग्रेजीसे]

बाहरी एजेंसियोंसे प्राप्त गांधीजी के कागजात, फाइल सं० १; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार।

३१०. भाषण : सार्वजनिक सभा, पटनामें[3]

२० मार्च, १९३४

मेरे मनमें इस सम्बन्धमें कोई सन्देह नहीं है कि आप सबको इस विपत्तिको ईश्वरसे मिली भेंट और अपने पापोंके दण्डके रूपमें स्वीकार करना चाहिए। ऐसे संकट हमारे अपने ही कर्मोंके फलस्वरूप आते हैं और बुद्धिमानीका काम यह होगा

१. गांधीजी को बिहार केन्द्रीय राहत-समितिका अध्यक्ष चुन लिया गया था और राजेन्द्रप्रसादने वह पद छोड़ दिया था।

२. इस वाक्यका एक शब्द पढ़ा नहीं जा सका।

३. अखबारोंकी रिपोर्टोंमें बताया गया था कि यह उस समयतक पटनामें हुई सबसे बड़ी सभा थी। उसमें तीससे पचास हजारतक लोग उपस्थित थे। गांधीजी के अतिरिक्त मदनमोहन मालवीय और मौलाना आजादके भी भाषण हुए थे।

कि इनसे हम, जो सबक लेने चाहिए, वे सबक लेकर अपने हृदयमें बैठा लें। हमारे किस कर्मके फलस्वरूप यह विपत्ति हमें मिली, यह तो मैं नहीं बता सकता, लेकिन मैं चाहता हूँ, आप यह याद रखें कि इस देशकी समस्त जनता एक विशाल मानव-परिवारके समान है और इसलिए उसके किसी भी एक हिस्सेके बुरे कर्मोंकी गहरी प्रतिक्रिया पूरे परिवारपर होती है। केवल भारतकी ही नहीं, सम्पूर्ण विश्वकी दृष्टि अभी बिहारपर टिकी हुई है और दूर-पासकी सभी जगहोंसे राहत-कोषके लिए चन्दा आ रहा है। बहुत-से लोगोंने छोटी-छोटी रकमें भेजी हैं और एक हमदर्दने तो मुझे सिर्फ एक शिलिंग भेजा है, किन्तु उसका मूल्य इससे बहुत अधिक है क्योंकि यह उसकी कुल जमा पूँजी थी। मुझे तो लगता है कि चन्देका एक करोड़ रुपयेतक पहुँच जाना भी असम्भव नहीं है।

लेकिन लोगों द्वारा दिखाई इस उदारताके कारण हमारा दायित्व और भी बढ़ जाता है। देश-विदेशसे हमें जितनी अधिक सहायता मिलती है, हमारा दायित्व उतना ही बढ़ता जाता है और हमारी कर्त्तव्य-भावनाके लिए उतनी ही बड़ी चुनौती सामने आती जाती है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप सोचें कि हम जिस संकटमें हैं उसमें हमारा कर्त्तव्य क्या है। हमारा पहला कर्त्तव्य तो यह है कि कोषमें दी गई एक-एक कौड़ीका हम ठीक हिसाब रखें और उससे भी बड़ी बात यह है कि हम इसका पूरा खयाल रखें कि इस तरह दी गई एक-एक कौड़ी उन लोगोंके हाथोंमें पहुँचे जिनके लिए वह दी गई है। हमारा कर्त्तव्य है कि हम सेवाके भावसे काम करें और इस बातकी पूरी सावधानी बरतें कि एक पाई भी बर्बाद न हो। महात्माजी ने आगे कहा, दूसरी बात यह है कि जो लोग नुकसानसे बच गये हैं या जिनकी कम क्षति हुई है वे उन लोगोंके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करें जिनका अधिक नुकसान हुआ है। बिहारको पूरी तरहसे बाहरी सहायतापर ही निर्भर नहीं करना चाहिए। जिन लोगोंका नुकसान हुआ है उन्हें पूरी वाजिब मदद जरूर मिलनी चाहिए, लेकिन इस प्रान्तके बहुत बड़े हिस्सेका या तो कोई नुकसान नहीं हुआ है या हुआ भी है तो आंशिक ही। आजकी शाम जो लोग इस सभामें उपस्थित हैं वे सब-के-सब तो ऐसा बहाना नहीं कर सकते कि उनका इतना अधिक नुकसान हुआ है कि वे कष्टमें पड़े लोगोंको राहत देनेमें अपनी ओरसे थोड़ा-बहुत योग-दान करने लायक भी नहीं रह गये हैं। आपमें से प्रत्येकका कर्त्तव्य है कि आप ईश्वरको साक्षी मानकर इस दृष्टिसे अपने कर्त्तव्य और साधनपर विचार करें। आपसे मैं बम्बईसे आये एक अजनबीके रूपमें यह अनुरोध नहीं कर रहा हूँ। मैं तो खुद बिहारका हूँ, या ज्यादा ठीक कहूँ तो, चम्पारनका हूँ। चम्पारन वह पहला स्थान था जिसने मेरे दक्षिण आफ्रिकासे स्वदेश लौटनेपर मुझे मान्य किया। मेरा जो कर्त्तव्य गुजरातके प्रति है, वही बिहारके प्रति भी है। मेरे लिए भारतमें कोई भौगोलिक सीमा नहीं है। आपसे अपना कर्त्तव्य पूरा करनेका अनुरोध मैं आपके ही बीचके एक व्यक्तिकी हैसियतसे कर रहा हूँ।

मैं जानता हूँ कि पटनाकी बहुत अधिक क्षति हुई है। ८४ आदमियोंकी जानें गई हैं और इससे कई गुना अधिक लोग घायल हुए हैं। फिर भी ध्वंस-लीलाके ग्रास हुए दूसरे क्षेत्रोंकी तुलनामें आप सस्ते ही छूट गये हैं। इसलिए आप सबका कर्त्तव्य है कि आप अपना हृदय टटोलकर देखें और विचार करें कि कष्टमें पड़े अपने भाइयों के प्रति आपका क्या दायित्व है।

गांधीजी ने उनसे तीसरी बात यह कही कि आप लोग सोचिए कि क्या अस्पृश्यताको अब भी विदा नहीं होना चाहिए। ईश्वरने यह संहार-लीला मचानेमें सवर्ण-अवर्ण, हिन्दू-मुसलमानमें किसी तरहका भेद नहीं किया। हिन्दुओंके लिए अस्पृश्यतासे अधिक जघन्य अपराध कुछ नहीं है। अगर वे इस युगों पुराने पापको नहीं धोते, ऊँच-नीचका भेद-भाव नहीं मिटाते और इस तरह अपनी शुद्धि नहीं करते तो मुझे तो इसमें कोई सन्देह नहीं है कि हमारे भाग्यमें भविष्यमें इससे भी बड़ी विपत्ति लिखी हुई है। अस्पृश्यताके पापने हमारी सारी समाज-व्यवस्थाको खोखला बना दिया है। जिस चीजने हमें असंख्य हिस्सोंमें बाँट रखा है और हमें आपसमें झगड़नेवाले इतने सारे समूहोंमें विभक्त कर रखा है, वह अस्पृश्यताके इसी अभिशापके पीछे निहित भावना और वृत्ति है। हम आज जिस संकटमें पड़े हुए हैं उसमें हमारा यह पवित्र-पुनीत कर्त्तव्य है कि हम ऊँच-नीचकी भावनाको मिटाकर मानव-भ्रातृत्वके सिद्धान्तको दुनियामें फैलायें। अगर हम ऐसा करेंगे तभी यह माना जायेगा कि हमने इस भूकम्पसे सही सबक लिया है।

अन्तमें गांधीजी ने कष्टमें पड़े लोगोंको आगाह करते हुए कहा कि अपने दुःखकी इस घड़ीमें वे भीख माँगकर अपनेको नैतिक पतनका शिकार न होने दें। जो असहाय हैं उन्हें तो बिना किसी प्रतिदानके दी गई राहतपर निर्भर करना ही होगा। जिस प्रकार सच्चा संन्यासी भीख शब्दका जो वास्तविक अर्थ है उस अर्थमें भीख नहीं माँगता, उसी प्रकार उनका सहायता स्वीकार करना भी भीख माँगना नहीं गिना जायेगा। कारण, संन्यासी तो माँगकर जो-कुछ लेता है, वह दूसरे रूपोंमें समाजको लौटा ही देता है। किन्तु, जो लोग काम करनेमें सक्षम हैं उन्हें तो काम करके ही जरूरी सहायता प्राप्त करनी चाहिए। तो कष्टमें पड़ा प्रत्येक व्यक्ति, उसे जो सहायता दी जाये, उसके बदलेमें काम करके उसका असली हकदार बने। प्राप्त सहायताके बदले वे जिस अनुपातमें काम करेंगे उसी अनुपातमें श्रमकी गरिमाको प्रतिष्ठित करेंगे और देश तथा दुनियाकी नजरोंमें अपनी प्रतिष्ठा बढ़ायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, २३-३-१९३४

३११. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

पटना
२०/२१ मार्च, १९३४

बा,

इस बार तेरा पत्र अभीतक नहीं मिला। यह पत्र मैं मंगलवारको सुबहकी प्रार्थनाके बाद लिख रहा हूँ। मैं पटनामें हूँ; मेरी बगलमें बैठे सतीशबाबू तकली चला रहे हैं। राजेन्द्रबाबूकी बहन बैठी हैं। प्रभावती भी है। ओम और किशन सोनेकी तैयारी कर रही हैं। स्वामी भी बैठे हैं। मीराबहन दूध तैयार करने गई है। इस समय मालवीयजी, मौलाना अबुल कलाम आजाद, डॉ० महमूद आदि यहाँ हैं। रविवारको उन सबकी एक बैठक थी। उसमें बिहार संकट-निवारणके लिए एक नई समिति बनाई गई। उसमें जमनालाल भी हैं। काम ठीक चल रहा है। मैं मोतीहारी आदि जगहोंपर हो आया हूँ। बड़ी-बड़ी हवेलियाँ भी ईंट-चूनेके ढेरमें परिणत हो गई हैं। मुहल्लोंमें चारों ओर ईंट-चूनेके ढेर और खण्डहर दिखाई देते हैं। धरतीकी दरारसे ऊँचे पानीके स्रोतके साथ फेंकी गई बालूकी मोटी परत खेतोंमें जम गई है। जबतक यह रेती हटाई नहीं जाती तबतक फसल नहीं हो सकती। रेती हटाना कोई सहज काम नहीं है। क्योंकि यह रेती कोई एक-दो बीघेमें नहीं बल्कि हजारों बीघेमें है और कहीं-कहीं तो छः इंचसे भी मोटी तह जमी हुई है। इसलिए लोगोंकी कंगालीकी कोई सीमा नहीं है। इसके बावजूद जिन्दगी इतनी प्यारी है कि लोग जिस तरह अपना दुःख भूलकर चेहरेको हँसता हुआ रख पाते हैं, उसे देखकर तो ऐसा लगता है मानों उन्हें कालका ग्रास बननेसे बच जानेका नशा चढ़ा हो। घरमें खानेको नहीं, पहननेको कपड़े नहीं, किन्तु जैसे इस सबकी भी वे कोई ज्यादा चिन्ता करते नहीं जान पड़ते। ऐसी स्थिति है यहाँ। ऐसेमें हम क्या कर सकते हैं? जो लोग उनके बीच कार्य कर रहे हैं वे नम्रता और सादगीसे उनकी सेवा करें। आलसीसे उद्यमी बननेकी विनती करें और स्वेच्छाचारीको अपने संयमके उदाहरण द्वारा संयमका पाठ पढ़ायें। वे लोगोंको रामधुनके द्वारा भगवान्की ओर उन्मुख करें। इस प्रकार मूकभाव से सेवा करनेवाले भी जगह-जगह पड़े हुए हैं। इस प्रकार ईश्वरकी लीला अपरम्पार है। जन्म और मृत्युके बीचका अन्तर उसने एक-दो मिनटमें ही मिटा दिया। कौन जन्मा और कौन मरा? मनुष्य मरे या जन्मे किन्तु उसकी लीला चलती ही रहती है। तो फिर इसमें हर्ष किस बातका और दुःख किस बातका? सत्य तो एक हरिका नाम ही है। जिसे इस बातका भान है और जो उसकी अर्थात् उसकी सृष्टिकी यथा-शक्ति सेवा करता है वही जीवित रहता है। जो ऐसा नहीं करते वे जीवित रहते हुए भी मृतवत् हैं। इस प्रकार मैंने तुझे पत्र लिखना आरम्भ करके इस सप्ताहका

प्रवचन दे दिया। इसमें शायद दो-तीन शब्द ऐसे होंगे जो तू नहीं समझ सकेगी। किन्तु डाहीबहन, शान्ता या ललितामें से कोई-न-कोई तो उन्हें समझती ही होगी। फिर भी यदि ऐसा कोई शब्द हो जो समझमें न आये तो उसका अर्थ मुझसे पूछ लेना।

कल यहाँतक लिखनेके बाद आगे नहीं बढ़ सका था। अब आज बुधवारको प्रातः (८.४५) फिर लिख रहा हूँ। अब जल्दी ही बैठकमें पहुँचनेका निमन्त्रण आ जायेगा। माधवदासका एक पत्र और आया है। उसका स्वास्थ्य अब ऐसा हो गया है कि वह पोरबन्दर जानेकी जरूरत महसूस नहीं करता। बम्बईमें रहकर वह कोई धन्धा शुरू करेगा। देवदास और लक्ष्मी आनन्दपूर्वक हैं। राजाजी अभीतक वहाँ नहीं गये हैं। बहुत करके वे यहाँ होते हुए मुझसे मिलकर जायेंगे।

सभी बहनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० १९-२०

३१२. तार : अमतुस्सलामको

पटना
२१ मार्च, १९३४

अमतुस्सलाम
गांधी आश्रम
तिरुचेनगोडु

वहीं रहो। जैसा राजाजी कहें, करो। स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१५) से।

३१३. पत्र : सैम हिगिनबॉटमको

पटना
२१ मार्च, १९३४

प्रिय मित्र,

आपका पत्र पाकर मुझे अपार हर्ष हुआ है। मैं मान रहा हूँ कि आपने जैसा कहा है, वैसा ही आप सचमुच करेंगे। तो आप आइए और कष्ट-पीड़ित क्षेत्रको देखकर हमें बताइए कि —

(१) भूकम्पमें जो कुएँ भर गये हैं उन्हें हम अच्छीसे-अच्छी तरहसे और सस्तेमें कैसे साफ कर सकते हैं;

(२) बेघर लोगोंके रहनेकी व्यवस्था हम कैसे कर सकते हैं;

(३) पानीसे भरे क्षेत्रोंमें से हम पानी कैसे निकाल सकते हैं;

(४) हमारे सुन्दर खेतोंमें भरी रेतको हम कैसे हटा सकते हैं।

हमारे सामने जो काम है ये तो उसके कुछ नमूने हैं। सरकार और जनता तो मिल-जुलकर काम कर ही रही है। लेकिन विशेषज्ञकी हैसियतसे आपके ज्ञानकी मैं कितनी कद्र करता हूँ, यह आप जानते हैं। अगर आप हमें नया कुछ न बता पायेंगे तो भी मुझे इतना सन्तोष तो मिलेगा ही कि आपने इस क्षेत्रको अपनी आँखों देख लिया है। अगर आप आयें तो केन्द्रीय राहत कार्यालय, पटनाको समयपर सूचना भेज दें। आपको लेने कोई स्टेशन चला जायेगा और आपके यहाँ पहुँचनेपर आपके लिए पाँच दिनोंके दौरेका कार्यक्रम तय कर देगा।

जिन इलाकोंको मैंने अभीतक नहीं देखा है, उन्हें देखने राजेन्द्रबाबूके साथ कल मैं पटना से प्रस्थान कर रहा हूँ। लेकिन, मेरी फिक्र न करते हुए आप अपनी सुविधासे आ सकते हैं। कहीं-न-कहीं हम मिल ही जायेंगे। मैं अगले महीनेकी ४ तारीखकी शामको पटना लौटूँगा। फिर ७ को पूर्णियाके लिए रवाना हो जाऊँगा और वहींसे असमको चल दूँगा।

श्रीमती हिगिनबॉटमसे मेरा नमस्कार कहें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

प्रोफेसर सैम हिगिनबॉटम
एग्रिकल्चरल इंस्टिट्यूट
इलाहाबाद, सं० प्रा०

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९३६) से।

३१४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२१ मार्च, १९३४

भाई वल्लभभाई,

फिलहाल तो तुम्हारे पत्रकी आशा कैसे रखूं ? आज बुधवारका सवेरा है। ९ बजे हैं। पासके कमरेमें बिहार कमेटीकी बैठक हो रही है। मुझे किसी भी समय बुलाया जा सकता है। यदि अभी न लिखूं तो आज यह पत्र पूरा नहीं होगा। सब-कुछ ठीक चल रहा मालूम होता है। प्रस्ताव तो तुमने अखबारोंमें देखे ही होंगे। मौलाना, मालवीयजी, विधान वगैरह थे। जमनालालजी पर इसी कामका भार डाल दिया है। यदि ऐसा न करूं तो हो सकता है कि मुझको ही यहाँ रह जाना पड़े। मेरी इच्छा यथासाध्य हरिजन-यात्रा कर लेनेकी है। राजा बीमार पड़ गये हैं। दमा है। वे अप्रैलके आरम्भमें दिल्ली जायेंगे। लक्ष्मीको उनके बिना शान्ति नहीं मिलेगी। चरखा संघकी बैठक यहाँ होनेवाली है, इसलिए यहीं होकर जायेंगे। मैं यहाँसे ७ तारीखको रवाना होकर असम जाऊँगा। वहाँ दो हफ्ते लगेंगे। फिर वापस यहीं लौट आऊँगा, थोड़े दिन बिताकर उत्कल जाऊँगा। उसके बाद फिर यहीं। उसके बादका कार्यक्रम अभी तय नहीं है। परन्तु मेरी इच्छा थोड़े-थोड़े दिन सभी प्रान्तोंको देनेकी है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ८७

३१५. भाषण : भूकम्प राहत समितियोंके प्रतिनिधियोंकी सभा, पटनामें

२१ मार्च, १९३४

गांधीजी उनके समक्ष विस्तारसे बोले। प्रारम्भमें उन्होंने इस बातपर जोर दिया कि केन्द्रीय राहत समितिकी सलाहसे कार्यकी कोई योजना निश्चित करनेमें सभी समितियाँ परस्पर सहयोग करें, यह नितान्त आवश्यक है। राहत पहुँचानेके कार्यमें वर्ग, सम्प्रदाय अथवा धर्मके नामपर कोई भेद-भाव किये जानेकी उन्होंने तीव्र निन्दा की। गांधीजी ने आग्रहपूर्वक कहा कि झोंपड़ियाँ या कामचलाऊ घर बनवानेका काम अनमने ढंगसे तैयार की गई किसी योजनाके अनुसार शुरू नहीं किया जाना चाहिए।

आप लोगोंको सरकारी विशेषज्ञोंकी सलाह लेनेको तैयार रहना चाहिए और असुरक्षित करार दी गई जमीनोंपर घर नहीं बनवाने चाहिए। यह सवाल सचमुच बहुत कठिन है और इसके सम्बन्धमें विशेषज्ञोंकी रायका पूरी सावधानीसे पालन करना चाहिए। मोतीहारी और मुजफ्फरपुरके लोगोंसे मैं कहूँगा कि जिन स्थानोंको असुरक्षित बताया गया है वहाँ वे घर न बनवायें और वर्षाका मौसम बीतनेतक इन्तजार करें। जहाँ पीड़ित लोग सहायता माँगनेको इच्छुक नहीं हैं, वहाँ भी उनके कष्टोंको दूर करनेका आपसे मेरा अनुरोध है। बूढ़ों, बेसहारों और लँगड़ोंकी सहायता उनके घर जाकर की जानी चाहिए और चींटी तथा हाथी दोनोंको एक ही गजसे नहीं नापना चाहिए। कार्यकर्त्ताओंको राहत बाँटनेमें इस चीजको ध्यानमें रखकर चलना चाहिए कि कौन कितने कष्टमें है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २४-३-१९३४

३१६. पत्र : राजकुमारी अमृतकौरको

पटना

२२ मार्च, १९३४

प्रिय बहन,

आपके ३८ पौंड ८ शिलिंगके चेक और पत्रके लिए धन्यवाद। मैं डॉ० रायडेन को[1] पत्र लिख रहा हूँ। उनकी निर्धनोंकी उस धर्म-परिषद्से प्राप्त यह राशि बड़ी तो है ही।

हृदयसे आपका,

मो० क० गांधी

श्री राजकुमारी अमृतकौर

जलंधर सिटी

पंजाब

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३१८) से। सी० डब्ल्यू० ३५०९से भी; सौजन्य : राजकुमारी अमृतकौर

१. गिल्ड हाउस चर्च, लन्दनके डॉ० मॉड रायडेन।

३१७. पत्र : अ० वि० ठक्करको

२२ मार्च, १९३४

भाई ठक्कर बापा,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तुम्हें कल तार दिया है। आज मैंने भोर में दो बजे काम शुरू कर दिया था; तब कहीं तीन बजे इस पत्रतक पहुँच सका हूँ। इसके सिवा और कोई चारा ही नहीं है। कल ही तुम्हें पत्र लिखना चाहता था किन्तु समय कहाँसे लाऊँ?

मैं तुम्हें ५ और ६ तारीख दूंगा। आशा है कि घनश्यामदास आ सकेंगे।

बिहारके दौरेके सिलसिलेमें मुझे पूर्णिया जाना ही पड़ेगा। राजेन्द्रबाबूने एक कार्यक्रम बनाया है, जिसके अनुसार फिलहाल पूर्णिया जाना स्थगित कर दिया गया है और उसकी जगह अब मैं वहाँ पूरा एक दिन असम जाते हुए बिताऊँगा। तुम एक दिन पहले असम जा सकते हो। यहाँसे हम साथ-साथ रवाना हों और मैं पूर्णियामें उतर जाऊँ तथा सोमवारका दिन वहाँ बिताकर मंगलवारको चलकर बुधवारकी दोपहरको गोहाटी पहुँच जाऊँ। मेरा विचार यह है कि असमकी यात्रा पूरी करके हम बिहार वापस लौट आयें। बिहारको एक सप्ताह दिया जाये और इस बीच छोटा नागपुरकी हरिजन-यात्राका कार्यक्रम पूरा कर लिया जाये और फिर उत्कल जायें। उत्कलसे फिर बिहार लौट आयें। वहाँ कुछ दिन बिताकर दूसरा कार्यक्रम तैयार किया जाये। मैं इस ढंगसे सोचता हूँ। सभी प्रान्तोंको थोड़ा-थोड़ा समय दिया जाये। इस प्रकार बहुत नहीं तो थोड़ा काम तो हो ही जायेगा। स्थानीय कार्यकर्त्ताओंसे मिलना हो जायेगा। किन्तु यह सब तो जब हम मिलेंगे तब तय करेंगे।

मैं यहाँसे २७ तारीखको उत्तरकी ओर रवाना हो जाऊँगा और ४ तारीखको वापस लौट आऊँगा। यदि तुम ४ तारीखको यहाँ आना चाहो तो आ सकते हो। रामनारायण तुम्हारा पत्र न मिलनेकी शिकायत कर रहा है। वह राजपूतानेकी यात्राका आग्रह कर रहा है।

लक्ष्मीदास श्रीकान्त भील सेवा-मण्डलके लिए पैसोंकी माँग कर रहा है। इसका क्या किया जाये? जब यहाँ आओगे तो हम लोग इस बारेमें बातचीत कर लेंगे। ये सब बातें अपनी दैनन्दिनीमें टाँक लेना, वरना रह जायेंगी।

चिदम्बरम् वाले २०० रुपये भेज देना।

बापू

[पुनश्च :]

बीजापुरका रेलका किराया भर देनेपर ही छुटकारा मिलेगा। हरिजन-कोषमें से तो एक पाई भी खर्च नहीं की जा सकती। यदि खर्च हुआ तो उसे चोरी ही माना जायेगा। असम तथा चिदम्बरम्वाला पत्र वापस लौटा रहा हूँ।

[पुनश्च :]

लक्ष्मण शास्त्रीका पत्र साथ भेज रहा हूँ। मुझे लगता है कि जितनी सहायता उन्होंने माँगी है उतनी सहायता हमें देनी चाहिए। यदि तुम्हें भी यही लगता हो तो तुम्हें जितना उचित लगे उतना उस कार्यके लिए फिलहाल भेज देना। इस पत्रको अपने साथ लेते आना और इसे अपनी दैनन्दिनीमें दर्ज कर लेना।[1]

वामनरावका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ।

जो अंश मैंने काट दिया है उसे पढ़ लेना। उसे इसलिए काट दिया था क्योंकि पत्र भेजते समय मुझे याद आया कि इस सम्बन्धमें मैं तुम्हें लिख चुका हूँ।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११३५) से।

३१८. पत्र : अमतुस्सलामको

पटना
२२ मार्च, १९३४

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

जरूर वर्धा जाओ। यहां आना बेकार है। थोड़े दिनोंमें मैं आसाम जा रहा हूं। वर्धामें लिखूंगा। अब तो शर्मा वहां होने चाहिये। तुम्हारा बदन अच्छा बना लो।

बापुकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८) से।

१. यही अनुच्छेद, जिसकी आगे चर्चा है, काट दिया गया था, किन्तु पढ़ा जाना था।

३१९. बातचीत : आश्रमवासियोंसे[1]

पटना
२२ मार्च, १९३४

मैंने आज आप सब लोगोंको विशेष रूपसे जेल न जानेके बारेमें दो शब्द कहनेके लिए बुलाया है। इस सम्बन्धमें आपमें से बहुतोंके मनमें नाना प्रकारकी शंकाएँ और प्रश्न उठते होंगे, जिनका आप समाधान कराना चाहेंगे।

फिलहाल सिर्फ उन्हीं लोगोंको जेल जाना चाहिए जिन्हें स्वतन्त्रतापूर्वक यह लगता हो कि जेल गये बिना उन्हें शान्ति नहीं मिलेगी। और जो जेल जायें वे अपने मनमें यह गाँठ बाँध लें कि अब तो हम सब-कुछ छोड़-छाड़कर ही जेल जा रहे हैं। शुरूमें मुझे ऐसा लगा था कि यह मामला लम्बा चलेगा। मेरी यह मान्यता अब और भी दृढ़ हो गई है कि यह निश्चित रूपसे लम्बा चलेगा। अतः ऐसे लोगोंको ही जेल जाना चाहिए जो वहीं मरना और दफन होना चाहते हों। अन्यथा उन्हें कमाई करना शुरू कर देना चाहिए। इस बातको भली-भाँति समझ लेना चाहिए। गोडसेने[2] मुझे एक पत्र लिखा था। उसने लिखा था कि नारणदास उसकी माँ के लिए जो पैसे भेजता था वे उसने भेजने बन्द कर दिये हैं और उलटे यह जानना चाहा कि उतने ज्यादा पैसे किसलिए चाहिए। उसका कहना है कि यह उससे पूछा ही कैसे जा सकता है। इसमें उसे अपना अपमान जान पड़ा। किन्तु मुझे स्वयं ऐसा नहीं लगा, और मैंने उसे लिखा कि "ऐसा काम करना तुम्हारे लिए कदापि लाभदायक न होगा जिसमें तुम अपमान मानते हो।" आत्मसम्मान एक काल्पनिक वस्तु है किन्तु काल्पनिक जगत्में विचरण करनेवाले के लिए तो वही सत्य है। कल्पना-जगत्में मनुष्य ऊपर उठता और नीचे गिरता है। जब किसीको ऐसा लगता है कि मेरा मान भंग हुआ है तो उसकी आत्माका हनन हो ही जाता है। अतः यही वह स्थल है जहाँ व्यक्ति उठ-गिर सकता है। यह उसकी सीढ़ी है। उस सीढ़ीपर चढ़ जाने या उतर जानेके बाद वह उससे छूट जाती है। अतः मैंने उसे लिखा :

"अपने योग्य कोई काम खोजकर चार पैसे कमाना तुम्हारा कर्त्तव्य है। इसके लिए तुम खुद बाजारमें जाकर अपना मूल्यांकन करवा लो। तुम होशियार आदमी

१. इस बातचीतके समय निम्नलिखित आश्रमवासी उपस्थित थे: जमनालाल बजाज, लक्ष्मीदास आसर, केदारनाथ कुलकर्णी, स्वामी आनन्दानन्द, नारायण मोरेश्वर खरे, वालजी गोविन्दजी देसाई, हरिवदन, चिमनलाल भट्ट, रावजीभाई नाथाभाई पटेल, मगनभाई पी० देसाई, रामचन्द्र जे० सोमण, माधव सावन्त, हिम्मतलाल खीरा और पृथुराज आसर।

२. गणपत वासुदेव गोड्से, एक आश्रमवासी।

हो। तुम्हें काम मिल जायेगा। यदि तुम मुझसे काम ढुंढ़वाओगे तो तुम्हारी आशा पूरी नहीं होगी। तुम्हें अधिकसे-अधिक २० या ३० रुपये मिलेंगे। अब तुम्हें जेल जानेकी बात बिलकुल भुला देनी चाहिए। इसके लिए मैं तुम्हारी निन्दा नहीं करूँगा। देवदास और रामदासने इसी मार्गको अपनाया है। यही मार्ग तुम भी अपनाओ और उसमें सफलता प्राप्त करो।"

जमनालालजी : किन्तु ऐसा करनेसे प्रतिज्ञा-भंग होनेका प्रश्न उठता है, उसका क्या होगा?

गांधीजी : पूरी तरह समझे बिना केवल आवेशवश लोगोंका मन हो आता है कि चलो, आन्दोलनमें कूद पड़ें या जेल हो आयें। यह आन्दोलन १०-२० वर्ष थोड़े ही चलनेवाला है। ऐसी प्रतिज्ञा लेनेवाले से मैं यह आशा नहीं रखता कि वह प्रतिज्ञाका पालन करेगा। क्योंकि उसने सोच-समझकर प्रतिज्ञा नहीं ली थी। यदि ऐसे लोग जेल न जायें तो वे मेरी नजरोंमें गिर नहीं जायेंगे। किसी व्यक्तिको प्रतिज्ञाके महत्त्वके बारेमें स्वयं ही सोचना चाहिए। यदि ऐसी स्थिति आ जाये जिसकी प्रतिज्ञा लेनेवाले ने स्वप्नमें भी कल्पना न की हो और उसे अन्य प्रकारसे सोचना पड़े तो मैं ऐसे व्यक्तिको प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए कैसे बाध्य कर सकता हूँ?

किन्तु आप इससे यह न समझें कि जो लोग आज बाहर हैं, कमाते-खाते हैं, भोग भोगते हैं, वे सदा ऐसे ही रहेंगे और उनकी बारी ही नहीं आयेगी। उनका भी अवसर आयेगा और अवश्य आयेगा। और तब वे आपके साथ इसमें कूद पड़ेंगे। आखिर वे कबतक सांसारिक भोगोंका उपभोग करते रहेंगे? एक बरस, दो बरस या पाँच बरस। आखिर तो उन्हें ऐसा अवश्य लगेगा कि 'अरे, हम क्या कर रहे हैं।' मृत्युंजय कल ही मुझसे मिला था। उसने मुझसे कहा कि ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते हैं त्यों-त्यों अधिकाधिक उसे यही लगता रहता है कि वह मुझसे दूर-दूर होता जाता है। किन्तु मैंने उससे कहा: "तेरे मनमें ऐसी भावना उठती है, इससे पता चलता है कि तू मेरे और भी निकट आता जा रहा है। कुछ सालमें तेरे पिता, मैं और प्रत्येक व्यक्ति कालका ग्रास बन जायेगा और तुम सब लोग हमारे उत्तराधिकारी बनोगे। आज तो मुझे ऐसा लगता है कि देवदास, गोविन्द [मालवीय] और तुझे, तीनोंको मानों मैं खो बैठा होऊँ।" मैं यह नहीं कहता कि आप लोग जो-कुछ कर रहे हैं वह उचित है। किन्तु मैं आपको दोष देनेकी बात भी नहीं सोचता। यदि ऐसा न हो तो आप लोग दम्भी बन जायेंगे। मुझे विश्वास है कि आखिरकार आप स्वयं ही इसमें कूद पड़ेंगे। और इस प्रकार कूदनेपर ही आप सुशोभित होंगे। आप-जैसे लोगोंके सिवा मेरे पास और कौन है? मैं नये सिरेसे कार्यकर्त्ता थोड़े ही तैयार करूँगा। मेरे सम्पर्कमें रहनेवाले लोग मुझपर श्रद्धा रखकर चलनेवाले हैं तथा वे मेरी मनोवृत्ति और मेरे विचारोंको ध्यानमें रखकर आन्दोलन चला रहे हैं। जब मैं नहीं रहूँगा तो वे स्वतन्त्रतापूर्वक आन्दोलन चलायेंगे। आज मुझे ऐसा नहीं लगता कि वे स्वतः आगे बढ़ सकेंगे। आखिरकार कहीं-न-कहीं तो वे मेरे निर्णयपर निर्भर रहेंगे ही।

यदि स्वेच्छासे आपका कुछ करनेका मन न होता हो तो वैसा करनेसे मैं आपको रोकना चाहता हूँ। इसीलिए जो लोग जेल जाना चाहते हैं, जिनके मनमें थोड़ा-बहुत उत्साह भी है, ऐसे लोगोंको जेल जानेकी बात भी नहीं सोचनी चाहिए। हाँ, जिसके मनमें उत्साहके अतिरिक्त इतनी आग, श्रद्धा और मोह है, बल्कि यों भी कहा जा सकता है कि जिसे ऐसा लगता हो कि जेल गये बिना वह पागल हो जायेगा उसे जेल जाकर बुद्धिमान बने रहना चाहिए। आप सबको यह नियम बहुत कठोर जान पड़ेगा किन्तु यह कठोर है नहीं। जिस रुपयेके पूरे सोलह आने मिलें वही खरा रुपया है। यदि चौदह आनेवाला रुपया उसमें मिल जायेगा तो खरे रुपयेकी कीमत भी घट जायेगी। अतः जिसे अपने बारेमें तनिक भी सन्देह है या जो सत्याग्रह के नियमोंका पालन करनेमें ढिलाई बरतता है उसे जेल जानेकी बात छोड़ देनी चाहिए। इसीलिए मुझे अब ऐसा लगने लगा है कि मैं अकेला ही काफी हूँ।

सत्याग्रह परिपूर्ण धर्म है। यह शास्त्र पारिवारिक सम्बन्धोंके जालमें से मेरे हाथ लगा है। जिसे मैं पहले केवल अपनी बुद्धिसे देख पाता था, उसे अब ज्यों-ज्यों निकटसे देखता हूँ त्यों-त्यों अपने हृदयमें देख पाता हूँ। सत्याग्रह भी एक सुन्दर शब्द है। सत्यके आग्रहसे अधिकका दावा सत्याग्रही नहीं करता। सत्याग्रह धार्मिक वस्तु है। और यदि ऐसा है तो एक व्यक्ति द्वारा किया गया सत्याग्रह भी काफी होना चाहिए। किन्तु सत्याग्रहमें असत्याग्रहकी इतनी अधिक मिलावट हो गई है कि उसका प्रभाव ही नहीं पड़ता। आपके लिए सत्याग्रह राजनीतिका विषय नहीं होना चाहिए। यह विशुद्ध धार्मिक विषय है। धर्मका सच्चा स्वरूप तो तभी प्रकट हो सकता है जब चारों ओर निराशा फैल जाये। किन्तु मेरे मनमें उठनेवाली बात आपका धर्म नहीं हो सकती। आपके मनमें उठनेवाली बात ही आपका धर्म है। धार्मिक वृत्तिका सत्याग्रह जिसके मनपर छा गया होगा वह जेलमें भी सबके हृदयको पिघला सकेगा। यदि हम ऐसे होंगे तो ज्यों-ज्यों अंग्रेजोंके निकट आते जायेंगे त्यों-त्यों हम उन्हें अधिक समझा सकेंगे। यह स्वयंसिद्ध बात है।

केवलराम निर्मल-हृदय है किन्तु अभी उसकी भोगकी इच्छा मरी नहीं है। अभी उसकी बीमारी पूरी तरह गई नहीं है। इसपर भी उसे लगा कि मुझे अवश्य जेल जाना चाहिए। किन्तु मित्रोंने उससे कहा कि यदि तुम ऐसी हालतमें जेल जाओगे तो तुम्हारी वहीं मृत्यु हो जायेगी, यह समझ लेना। और उस स्थितिमें जेल जाना आत्महत्या करने-जैसा होगा। तुम बापूसे पूछ देखो। अतः वह मेरे पास आया। उसने मुझसे कहा कि मैं आपसे यह पूछने नहीं आया हूँ कि मुझे जेल जाना चाहिए या नहीं। बल्कि यदि वहाँ मेरी मृत्यु हो जाये तो क्या उसे आत्महत्या माना जायेगा? मैंने कहा, "कदापि नहीं।" मरना-जीना तो ईश्वरके हाथकी बात है। यदि कोई मरनेके इरादेसे जेल जाये तो उसे आत्महत्या माना जायेगा। जो जेल जाये वह जीवित रहनेके विचारसे जाये। मैं यदि मृत्यु-शय्यापर पड़ा होऊँ तो भी यही कहूँगा कि मैं जीवित हूँ और मरना नहीं चाहता। यदि कोई यह कहे कि मैं जेल जाना चाहता हूँ किन्तु बादमें इतना और जोड़ दे कि जबतक बापू कहते हैं तभी

तकके लिए तो इसका कोई अर्थ नहीं होता। यह विचार स्वतः उसके मनमें उठे तभी वह सच्चा होगा। क्योंकि बापू कहते हैं इसलिए जेल जानेका यह समय नहीं है। जिसके मनमें तनिक भी सन्देह हो, जो मुझसे अब भी कुछ पूछना चाहता है और जिसका विश्वास मेरे विश्वासपर आधारित है उसे जेल नहीं जाना चाहिए। अभी मैं ऐसे लोगोंको जेल भेजना नहीं चाहता जो यह समझते हैं कि देशके कल्याणके लिए उन्हें जेल जाना चाहिए। क्योंकि ऐसे व्यक्ति कदाचित् सत्याग्रह को आत्मसात् या शोभान्वित न कर सकें। ऐसे लोगोंको फिलहाल मैं ओटमें रखना चाहता हूँ। अभी ऐसे लोगोंको मेरी जिम्मेदारीपर जेल नहीं जाना चाहिए। ऐसे लोग यह मानकर भी जेल न जायें कि जब सरदार जेलमें हैं तो हम कैसे बाहर रह सकते हैं और न उन्हें यही सोचना चाहिए कि जुगतराम और हम साथी-कार्यकर्त्ता हैं, किन्तु वे जेलमें रहें और हम बाहर, यह हमें शोभा नहीं देता। इस तरहकी मित्र-भावनाको निभानेके लिए मैं अकेला ही काफी हूँ। मैं उन सबका प्रतिनिधि हूँ। सरदार या अन्य लोगोंको छुड़ानेके लिए भी आप सबको बाहर रखा जाना चाहिए। संसारके कल्याणमें ही देशका कल्याण और देशके कल्याणमें हमारा अपना कल्याण निहित होता है। दूसरे शब्दोंमें, हमारे अपने कल्याणमें संसारका कल्याण निहित होना चाहिए। मैं तो अपनेसे शुरू करता हूँ। व्यक्तिगत कल्याणको कल्याण ही नहीं माना जा सकता। यदि आप अपनेसे शुरू करेंगे तो कदापि कहीं कोई भूल नहीं करेंगे। इन सब बातोंको समझकर जो जेल जाना चाहें वे जायें। जबतक यह कहनेकी गुंजाइश है कि हम तो देशके कल्याणको ही मानते हैं तबतक यह नहीं माना जा सकता कि सत्याग्रह हमारे मनमें बस गया है। हमें तो एक व्यक्तिके कल्याणसे अनेकका कल्याण करना है।

स्वामी : प्रयत्नशील सत्याग्रही तो जेलमें जाकर ही और भी दृढ़ सत्याग्रही बननेका प्रयत्न करता है न?

बापू : मैं यह नहीं कहना चाहता कि वह जेल जाकर ही प्रयत्न करे। समय आनेपर तो ऐसे व्यक्तिको फाँसीपर चढ़ना होगा। ऐसे लोगोंसे मैं पूरे सोलह आने आशा रखता हूँ। किन्तु जिन सत्याग्रहियोंको ऐसा लगता हो कि वे बाहर रहनेसे पागल हो जायेंगे वे भले जेल जायें।

स्वामी : अनुभवसे यह सिद्ध हुआ है कि जेल जानेसे प्रयत्नशील सत्याग्रहीकी हिम्मत और श्रद्धा बढ़ती है। सभीके बारेमें तो ऐसा नहीं होता किन्तु यदि थोड़े-से लोगोंको भी ऐसा अनुभव हुआ हो तो उन्हें जेल जानेसे कैसे रोका जा सकता है?

बापू : ऐसे लोगोंको मैं नहीं रोकता। दो प्रकारके मनुष्य होते हैं : एक वे जो जेलमें जाकर ही आत्मनिरीक्षण कर सकते हैं और दूसरे प्रकारके वे जिनके लिए आजतक की परीक्षा ही काफी है। पहले प्रकारके मनुष्य स्वेच्छासे अपनी आध्यात्मिक उन्नतिके लिए जेलमें जाते हैं। दूसरे प्रकारके मनुष्योंमें ऐसी स्वतन्त्र इच्छा नहीं होती।

उनकी सीमा आ गई हो, उसके बाद उनसे जेल जानेका आग्रह नहीं किया जा सकता। सत्याग्रहीमें आध्यात्मिक विश्वास हो तो ही जेल जानेसे सत्याग्रहके विषयमें उसकी श्रद्धा बढ़ती है। किन्तु मेरे जेल जानेके बाद तुम्हारे लिए यह प्रश्न अवश्य उठता है कि उस हालतमें तुम्हें क्या करना चाहिए? सार्वजनिक रूपसे मैंने यह कहा है कि मेरा अनुकरण कोई न करे। सरदारने मेरी इस बातका अक्षरशः पालन किया और मैंने देखा कि उद्धार इसीमें है। अंग्रेजीके एक समाचार-पत्रने टिप्पणी लिखी कि गांधी पकड़ा गया किन्तु एक कुत्ता भी न भौंका। मैं तो इस टिप्पणीको अपनी प्रशंसा ही मानता हूँ। यदि कुत्तोंको ही भौंकना हो, होहल्ला ही करना हो, तो अकेले सरदार भी काफी बड़ी हदतक ऐसा कर सकते थे। और लोग भी कर सकते थे। तथापि सब लोग समझ गये और यह कड़वा घूंट शान्तिपूर्वक पी गये। इसका परिणाम यह हुआ कि लोग जेलमें नहीं गये। लेकिन यह अच्छा ही हुआ। इस बार जब मैं पुनः जेल जाऊँगा तब क्या स्थिति होगी, मैं नहीं जानता। मैं चार माहके बाद जेल जाऊँगा। किन्तु उस समय यदि कोई विशेष घटना हो गई तो इस निर्णयमें कुछ परिवर्तन भी किया जा सकता है। उदाहरणके लिए, ठीक उसी समय यदि कोई भूकम्प आ जाये या २ अगस्तके दिन वाइसराय मुझे बातचीतके लिए बुला भेजें। यह तो एक आकस्मिक घटनाकी बात हुई। इन उदाहरणोंसे मैं केवल यह समझाना चाह रहा हूँ कि दुबारा जेल जानेके मेरे इस निर्णयपर ऐसे ही किन्हीं कारणोंसे पुनर्विचार किया जा सकता है। हरिजन-कार्यका आधार लेकर अब जेलके बाहर ज्यादा दिन रहना सम्भव नहीं है। हरिजन-सेवाके लिए तो मैं जेलके भीतर पहुँचकर भी कार्य करता रह सकूंगा। इसलिए यदि ऐसा मान लें कि मैं जेल चला गया हूँ तो तुम्हें तुम्हारा धर्म उसी समय सूझेगा।

स्वामी: एक वर्षतक हरिजन-कार्य करनेके बाद यदि अब आप जेल जायेंगे तो इस बार यह कार्य करते रहनेके लिए आपको जो सुविधाएँ चाहें उन्हें पानेके लिए शायद लड़नेकी आवश्यकता नहीं रहेगी। आपने एक बार ऐसा कहा भी था कि जितना मुझे करना था उतना, मुझे लगता है, मैं कर चुका। क्या यह बात ठीक है?

बापू: नहीं। यदि ऐसा कहा हो तो मैंने नींदमें कहा होगा। इस बार भी हरिजन-कार्य करते रहनेके लिए आवश्यक सुविधाएँ तो मैं माँगूँगा ही और सरकारको ऐसी सुविधाएँ देनी ही पड़ेंगी। इस कार्यको बढ़ाकर हम जिस सीमातक ले आये हैं, उसके बाद अब उसे छोड़ा नहीं जा सकता। आज अस्पृश्यता लूली-लँगड़ी हो गई है। हरिजन-कार्यके लिए मैंने अभी जो यात्राएँ की हैं, उनके फलस्वरूप हम इतनी तैयारी कर चुके हैं कि अस्पृश्यताको पूरी तरह दफनानेके लिए जेलमें रहते हुए भी मुझे यह काम जारी रखना ही होगा। इसलिए यदि हिन्दू-जगत्से मैं (किसी भी रूपमें) लोप हो जाता हूँ तो यह काम रुक जायेगा, हमारा आन्दोलन शिथिल पड़ जायेगा और यह ऐसी बात है जो मुझे सहन नहीं होगी।

यदि जेलमें हमें इस कामकी खातिर अनुमति प्राप्त करनेके लिए उपवास करना पड़े तो उस परिस्थितिमें क्या करना होगा, इस प्रश्न के उत्तरमें गांधीजी ने कहा :

वे मुझे छोड़ भी दें तो भी मेरा उपवास तो चालू ही रहेगा। क्योंकि इस बार यह ऐसा आमरण अनशन होगा जिसकी कोई शर्त नहीं होगी। जेलसे रिहा कर दिया गया तो तुम लोगोंसे मिलूँगा ही और जितने दिन जीता रहूँगा उतने दिन तक कुछ-न-कुछ कहता ही रहूँगा। तुम यह सब स्वयं देखोगे ही और यदि मैं सच्चा सिद्ध हुआ तो अपनी उन घड़ियोंमें, 'गीता' में जिसका उपदेश किया गया है उस सत्यताको ही मैं रटता रहूँगा। उसमें से तुम्हें अपना मार्ग मिल जायेगा और यदि नहीं मिला तो जैसा तुम्हें सूझेगा तुम वैसा करोगे। तुम सब मिलकर मेरे उस समयके शब्दोंका अर्थ भी करोगे। शब्दोंकी व्याख्या आदि भी करोगे। अलबत्ता, मैं उस समय नहीं होऊँगा।

जमनालालजी के एक प्रश्नके उत्तरमें गांधीजी ने कहा :

मेरे जेलके भीतर होने और अनशनके चालू रहनेकी स्थितिमें तुम लोगोंको बाहर क्या करना चाहिए, इसके सम्बन्धमें तो मैं यह कहूँगा कि तुम सब लोग घर-घर घूमना, लोगोंको अपनी बात समझाना और उसकी सफलताके लिए जो उचित जान पड़े सो करना।

सन् १९२२ और १९३४ के बीचका अन्तर बताते हुए गांधीजी ने कहा :

१९२२ में राजनीतिक दृष्टिसे और चौरीचौरा-जैसी बड़ी गलतीके कारण यह आवश्यक हो गया था कि हम लड़ना बन्द कर दें। हम लड़नेके लिए तैयार न हों और फिर भी लड़ें तो यह गलती ही कही जायेगी। किन्तु आज तो हम आध्यात्मिक दृष्टिसे ही विचार कर रहे हैं। यदि सत्याग्रह धार्मिक दृष्टिसे चलाया जा रहा हो तो वह निर्मल होता है और जब वह निर्मलतापूर्वक चलाया जाता है तो यह श्रद्धा-वचन है कि वह व्यापक बनता है। उस स्थितिमें सफलताके लिए एक निर्मल सत्याग्रही भी काफी होता है। जेलमें उसका व्यवहार विनयपूर्ण होना चाहिए, इस नियमका पालन न होनेपर निर्मलता मन्द पड़ती है और सत्याग्रहका मूल्य घटता है।

जो व्यक्ति ऐसा मानता है कि राजनीतिक कार्यक्रमकी तरह सविनय अवज्ञा वांछनीय है क्योंकि वही एकमात्र ऐसा कार्यक्रम है जो प्रभावकारी है, वह क्या करे, इस प्रश्नके उत्तरमें गांधीजी ने कहा :

यह जवाहरलाल-जैसोंकी बात हुई, किन्तु मैं अभी सविनय अवज्ञाके सम्बन्धमें इस दृष्टिकी चर्चा नहीं कर रहा हूँ। अलबत्ता, मैं ऐसे लोगोंसे भी अभी सविनय अवज्ञा न करनेको ही कहूँगा। जिस तरह गोलमेज परिषद्में मैं ही [कांग्रेसका] एकमात्र प्रतिनिधि था उसी तरह मौजूदा राजनीतिक कार्यक्रममें भी यदि मैं ही अकेला उसका प्रतिनिधित्व करूँ तो वह पर्याप्त होगा। और इतनेसे ही उसकी पूरी सिद्धि हो जायेगी।

यदि ऐसा ही हो तो फिर कांग्रेसके सत्याग्रहसे चिपटे रहनेका क्या अर्थ रहा?

उसे तो ऐसा करना ही चाहिए, क्योंकि सत्याग्रहके बिना कांग्रेसका अस्तित्व ही नहीं रहेगा। आज कांग्रेसका बाहरी संगठन तो कुछ रह नहीं गया है। कुछ अराजकताकी-सी स्थिति है। इसलिए आज यदि कांग्रेसके तेजकी रक्षा करनी हो तो एक ही रास्ता है। जिन्हें सविनय अवज्ञामें आस्था नहीं है वे देशोन्नतिके लिए दूसरा कोई कार्य करें किन्तु कांग्रेसके नामसे न करें; हाँ, कांग्रेसी भी व्यक्तिकी तरह भले वैसा करें।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१३०) से।

३२०. हरिजनोंके निमित्त दौरा और बिहार

हरिजनोंके निमित्त मैं जो दौरा कर रहा था उसे बीचमें ही छोड़ देना मेरे लिए बड़ी कष्टकर बात थी। मगर वह करना ही था, क्योंकि श्री राजेन्द्रप्रसादकी पुकारका उत्तर देना स्पष्ट कर्त्तव्य था। वैसे वे मुझे बुलाना जितने दिन टाल सकते थे, टालते ही रहे। अस्पृश्यता-निवारणका कार्य निस्सन्देह अधिक महान् है और उसमें निहित सन्देश स्थायी महत्त्वका है। मगर यह तो एक पुरानी बीमारी है और जब कोई खतरनाक बीमारीका मामला सामने आ जाता है तो पुरानी बीमारीवाले की ओरसे कुछ समयके लिए ध्यान हटानेमें कोई हर्ज नहीं होता। बिहार ऐसी ही खतरनाक बीमारीका मरीज है। इस बीमारीका इलाज करनेवाले मुख्य वैद्य राजेन्द्रबाबू हैं और जब वे किसीको पुकारें तो उसे या तो तुरन्त वहाँ पहुँच जाना चाहिए अन्यथा उसके पहुँचनेका कोई मतलब ही नहीं रह जायेगा। इसलिए जब उनकी पुकार आई तो मुझे दौरा स्थगित करना पड़ा। लेकिन जिन प्रान्तोंमें मैं नहीं जा पाया हूँ वहाँ के अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताओंको मैं आश्वस्त कर देना चाहता हूँ कि मुझे उम्मीद है, परिस्थितियोंके अनुकूल होते ही मैं पुनः दौरा आरम्भ कर दूँगा। और फिर अस्पृश्यताके दंशको राजेन्द्रबाबू मुझसे कुछ कम महसूस नहीं करते। वे मुझे जैसे ही सम्भव होगा, तुरन्त मुक्त कर देंगे। पहले मैं उत्कल और असमको लेनेकी आशा करता हूँ और इन दो में से पहले वहाँ जाऊँगा जहाँ आबोहवाके कारण पहले जाना जरूरी होगा। तो कार्यकर्त्तागण सावधान रहें!

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-३-१९३४

३२१. अस्पृश्यता-निवारणका माग

हुबलीके एक सज्जनने निम्नलिखित प्रश्न पूछे हैं:

अस्पृश्यता स्वाभाविक है या कृत्रिम? क्या यह समाजके लोगोंके नैतिक तथा बौद्धिक विकास, जीवनके तौर-तरीके आदिपर निर्भर नहीं है? क्या आप ऐसे समाजका चित्र खींच सकते हैं जिसमें अस्पृश्यता बिलकुल न हो?

मेरे विचारसे अस्पृश्यता पूर्ण रूपसे कृत्रिम वस्तु है। लोगोंके नैतिक या बौद्धिक विकाससे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि आपको हिन्दू-समाजमें अस्पृश्य कहे जानेवाले ऐसे लोग भी मिलेंगे जो नैतिक तथा बौद्धिक विकासकी दृष्टिसे बड़ेसे-बड़े सवर्णके हर तरहसे समकक्ष हैं, किन्तु फिर भी जिनके साथ अस्पृश्यताका व्यवहार किया जाता है। मेरी कल्पनाका अस्पृश्यता-मुक्त समाज वह है जिसमें कोई भी अपनेको किसीसे ऊँचा नहीं मानेगा। स्पष्ट है कि इस तरहसे संघटित समाजमें कोई भी अशोभन प्रतिद्वन्द्विता या झगड़ा नहीं होगा।

पत्र-लेखकने आगे पूछा है:

क्या रोटी-बेटी व्यवहार अस्पृश्यता-निवारणके लिए आवश्यक है?

इसके उत्तरमें मैं 'ना' भी कहूँगा और 'हाँ' भी। 'ना' इसलिए कि यह हरिजन सेवक संघके कार्यक्रमका कोई अंग नहीं है। वैसे आम तौरपर भी शादी-विवाह और खान-पान आदमी-आदमीकी मर्जीकी बात है। किसीको भी किसीसे उसकी अपनी इच्छाके विरुद्ध किसी लड़कीसे विवाह करने या किसीके साथ खाने-पीनेको कहनेका अधिकार नहीं है। लेकिन साथ ही मेरा उत्तर 'हाँ' भी है, क्योंकि अगर व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्तिका छुआ खाना खानेसे इसलिए इनकार करता है कि वह व्यक्ति अस्पृश्य या उससे निम्नतर कोटिका है तो उसका यह व्यवहार अस्पृश्यताका पालन करना होगा। दूसरे शब्दोंमें, अस्पृश्यता रोटी-बेटी व्यवहार-विषयक किसी प्रतिबन्धका आधार नहीं हो सकती।

इसके बाद पत्र-लेखकने पूछा है:

क्या किसी अपूर्ण व्यक्तिको धार्मिक विधि-विधानों और रीति-रिवाजमें परिवर्तन दाखिल करनेका अधिकार है?

अपूर्णता तो एक सापेक्ष शब्द है। सभी मर्त्यजन न्यूनाधिक अपूर्ण हैं। लेकिन किसी परिवर्तन-विशेषको दाखिल करनेकी दृष्टिसे कोई अपूर्ण व्यक्ति शायद इतना अपूर्ण न भी हो कि उसे उस परिवर्तनको दाखिल करनेका अधिकार न हो। कोई भी व्यक्ति अन्य दृष्टियोंसे चाहे जितना अपूर्ण हो, किन्तु हो सकता है कि मादक द्रव्य और शराब पीनेके बारेमें उसकी कुछ निश्चित मान्यताएँ हों। उस हालतमें

उसे लोगोंके सामने मद्यपानकी आदतके सम्बन्धमें पेशकश करने और इस सम्बन्धमें उनमें परिवर्तन लानेका पूरा अधिकार होगा, चाहे वे परिवर्तन धार्मिक कारणोंपर ही क्यों न आधारित हों।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-३-१९३४

३२२. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

पटना
२३ मार्च, १९३४

प्रिय आनन्द,

आशा है, जमशेद मेहताको भेजा मेरा तार तुम्हें मिल गया होगा। यहाँ तुम्हारे लिए कोई काम नहीं था। इसलिए मैंने तुम्हें नहीं बुलवाया। तुम्हारा और विद्याका कैसा चल रहा है, यह सूचित करते हुए मुझे नियमपूर्वक लिखते रहो।

तुम दोनोंको स्नेह।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

३२३. पत्र : लीलावती आसरको

[२३ मार्च, १९३४][1]

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला। मैं तुझे क्या लिखूं? मेरे पत्र तुझे क्यों नहीं मिलते? तुझे इस तरह प्रेमाके पीछे नहीं पड़ना चाहिए। उसके त्याग, उसके उद्यमका अनुकरण कर। यदि वह तुझसे व्यक्तिगत सेवा लेना चाहे तो अवश्य कर। किन्तु यदि वह तेरी सेवा न लेना चाहे तो देनेका आग्रह कैसे किया जा सकता है? अब तो नारणदास आ गया है, जैसा वह कहे वैसा कर। जैसे भी हो, अच्छी हो जा और अपने चित्तको स्थिर बना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३२८) से। सी० डब्ल्यू० ६६०३ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१. जी० एन० रजिस्टरके अनुसार।

३२४. पत्र : नरसिंहराव बी० दिवेटियाको

पटना
२३ मार्च, १९३४

सुज्ञ भाईश्री,

आपको शोकपूर्ण पत्र लिखना ही मेरे भाग्यमें आया है।

अभी-अभी गोकुलभाईका पत्र मिला, जिससे पता चला कि आपका दौहित्र प्रेमल आपको असहाय छोड़कर चला गया। उस बेचारेको क्या पता कि आपको अकेला छोड़ा ही नहीं जा सकता। ईश्वरके बारेमें जिसका मन जीवन्त विश्वाससे पूर्ण है उसे अकेला कौन कह सकता है? गोकुलभाई लिखते हैं कि धीरज बँधानेके लिए आनेवाले लोगोंको आप दोनों धीरज बँधा रहे हैं। यह पढ़कर मेरी छाती फूल उठती है। ईश्वरमें आपकी श्रद्धा बढ़े। प्रेमलका तो श्रेय ही है। आपको शायद याद होगा कि मैं उससे आसमानी बँगलेमें मिला था।

आपका,
मोहनदास

[गुजरातीसे]
नरसिंहरावनी रोजनीशी, पृ० ५८

३२५. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

२३ मार्च, १९३४

भाईश्री भगवानजी,

आपने मुझे पत्र लिखकर अच्छा किया। आपका स्पष्ट कथन मुझे सदा प्रिय लगा है।

आपने दो-तीन चीजोंको गड्डमड्ड कर दिया है।

भाई प्रभाशंकरके बारेमें मेरा व्यक्तिगत अनुभव आपसे भिन्न है। किन्तु मैं उस सम्बन्धमें कुछ लिखना नहीं चाहता क्योंकि मेरे अनुभवका कोई असर नहीं पड़ेगा।

वसीयतनामोंके बारेमें मैं आपके विचारोंसे सहमत हूँ। 'कब्जा सच्चा और दावा झूठा'के न्यायके अनुसार मैं ऐसा मानता हूँ कि माता-पिता अपनी जीवितावस्थामें जो व्यवस्था कर दें वही ठीक है। किन्तु मुझे तो इस मामलेमें जो हुआ है उसपर भी ध्यान देना होगा। डॉक्टर द्वारा लिखे गये दस्तावेजको मैं नैतिक दृष्टिसे वसीयत-

नामा मानता हूँ। जो पैतृक सम्पत्ति लेनेको तैयार हों उन्हें उसकी शर्तोंका भी पालन करना चाहिए। दोनों बहनोंमें से एककी स्थिति तो ऐसी है कि यदि वसीयतनामा न होता तो भी भाइयोंको उसकी देखभाल करनी चाहिए। रतिलाल स्वयं अपनी देख-भाल करनेमें असमर्थ है। इसलिए यदि मेरा कुछ बस चले तो मैं रतिलालसे भी कहीं अधिक असमर्थ उसकी बहनको अवश्य पैसा दिलवाऊँ। कौन कह सकता है कि इस पुण्य-कार्यके कारण उसे अधिक लाभ नहीं होगा? हानि तो निश्चय ही नहीं होगी। बहनको पैसा मिले या न मिले किन्तु स्वर्गवासी मित्र, उनके कुटुम्ब और विशेषकर रतिलाल तथा चम्पा — जिनसे मैंने विशेष सम्बन्ध रखा है — के प्रति मेरा कर्त्तव्य मुझे यह कहनेको विवश करता रहेगा कि रतिलालके हिस्सेमें से बहनोंको उनका उपयुक्त हिस्सा मिलना चाहिए, भले ही वह किस्तोंमें दे। नरभेरामके उदा-हरणसे आप जो निष्कर्ष निकालते हैं वह ठीक नहीं है। आप अंग्रेजीकी वह कहावत तो जानते हैं न कि "विषम मामलोंको ध्यानमें रखकर बनाया गया कानून दूषित होता है।" इसके अतिरिक्त आप यह भी जानते हैं न कि नरभेराम तो आपके आरोपको स्वीकार नहीं करता।

देवदास और लक्ष्मीका विवाह 'सिविल मैरेज'की विधिसे राजाजी के सन्तोषके लिए किया। हम सब तो धार्मिक विधि चाहते थे। किन्तु धर्मशास्त्रके हमारे अर्थके अनुसार उसमें भी कोई विरोध नहीं है। हम उसका जो अर्थ लगाते हैं वह 'सिविल मैरेज' से पूरा हो जाता है। मेरे विचारसे हिन्दू-कानूनमें पर्याप्त संशोधनकी आव-श्यकता है।

मुझे लगता है कि इतनेमें आपके सभी प्रश्नोंका उत्तर आ जाता है। मैं यथा-शक्ति बिहारका काम कर रहा हूँ। मैं यह मानता हूँ कि आपने अच्छी रकम भेजी है।

मोहनदास

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२१) से। सी० डब्ल्यू० ३०४४ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

३२६. सन्देश : समाचार-पत्रोंको

पटना
२३ मार्च, १९३४

'अमृत बाजार पत्रिका' को[१] दिये एक विशेष सन्देशमें गांधीजी ने राहत-कार्यकर्त्ताओंके मार्गदर्शनके लिए निम्नलिखित नियम निर्धारित किये हैं:

(१) जो काम किसी एक कार्यकर्त्ता या कार्यकर्त्ताओंकी मंडलीको सौंपा गया हो उसे दूसरे कार्यकर्त्ता या उनकी मण्डली भी न करने लगें, इसका खयाल बड़ी सावधानीसे रखा जाना चाहिए।

(२) विज्ञापनपर या जुलूस-तमाशे द्वारा कोई प्रभाव पैदा करनेपर एक आना भी खर्च नहीं किया जाना चाहिए।

(३) राहत-संगठनोंके बीच — चाहे वे सरकारी संगठन हों या लोक-संगठन — किसी प्रकारकी अशोभन स्पर्धा नहीं होनी चाहिए। स्पर्धा होनी चाहिए तो बस चुपचाप समयपर सेवा करनेके बारेमें ही।

(४) प्रत्येक संगठनको यह मालूम होना चाहिए कि दूसरे संगठन क्या कर रहे हैं।

(५) कार्य-कुशलता और ठीक हिसाब रखनेका खयाल रखते हुए व्यवस्थाका खर्च, जहाँतक सम्भव हो, कम कर देना चाहिए।

(६) ऊँच-नीचका सारा भेद-भाव बिलकुल मिटा देना चाहिए।

(७) जिन्हें राहत दी जा रही हो उन्हें उत्पादनका कोई काम करनेको प्रेरित करना चाहिए।

(८) राहत-केन्द्रोंको पूरी तरहसे साफ-सुथरा रखना चाहिए।

(९) सभी स्वयंसेवकोंको प्राथमिक चिकित्साका ज्ञान होना चाहिए और ग्रामवासियोंको प्रारम्भिक सफाई-स्वच्छताके नियम सिखाने चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
अमृत बाजार पत्रिका, २४-३-१९३४

१. हिन्दूके अनुसार यह विशेष सन्देश सर्चलाइटके लिए था।

३२७. भेंट : यूनाइटेड प्रेसको[1]

पटना

२३ मार्च, १९३४

मैं साफ कहता हूँ कि मैंने कौंसिल-प्रवेशका समर्थन कभी नहीं किया।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २४-३-१९३४

३२८. पत्र : तोताराम सनाढ्यको

२४ मार्च, [१९३४][2]

भाई तोतारामजी,

तुमारा पत्र मिला। वर्धा अवश्य जाओ। और उसके पहेले जिधर जाना आवश्यक लगे वहां जाना। इस मह हम वर्धामें मिले।[3] हरिप्रसादके बारेमें चिंताका कोई कारण नहि है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५२७) से।

३२९. भाषण : दानापुरमें

[२४ मार्च, १९३४][4]

यह दूसरी बार मैं दानापुर आया हूँ। आपने अपने मानपत्रमें कहा है कि हालके भूकम्पने जो तबाही मचाई, उसके कारण हरिजनोद्धारका आन्दोलन पृष्ठभूमिमें चला गया है। आपका कहना ठीक है। अपने पटनाके भाषणमें मैंने आप लोगोंसे

१. मद्रास और बम्बईके कुछ अखबारोंमें यह खबर छपी थी कि गांधीजी कौंसिल-प्रवेशके पक्षमें हैं। इसीका प्रतिवाद करते हुए गांधीजी ने यह बात कही थी।

२. किसी अन्य व्यक्ति द्वारा स्थान-स्थानपर काँट-छाँट करनेके कारण तारीख एवं पत्रका विषय अस्पष्ट है।

३. शायद गांधीजीका आशय यह था कि वे इलाहाबाद जाते समय रास्तेमें वर्धा रुकनेपर उनके पुत्र हरिप्रसादसे मिले थे।

४. चन्दुलाल दलाल कृत **गांधीजीनी दिनवारी** से।

जो-कुछ कहा, वही फिर कहूँगा, अर्थात् यह कि संसारमें लगभग हर व्यक्तिपर कष्ट पड़ा है और तब भी लोग शीघ्र ही इस भूकम्पसे हुई तबाहीको भूल जायेंगे। जिस प्रकार इस पुरातन संसारके इतिहासमें हुए अन्य भूकम्पोंको हमने पूरी तरहसे भुला दिया है और उन्हें हम मात्र ऐतिहासिक घटनाएँ मानते हैं, उसी प्रकार कालान्तरमें इस भूकम्पके विषयमें भी हमारा यही विचार बन जायेगा। लेकिन जबतक अस्पृश्यता कायम है तबतक तो हमें अपनी दयनीय स्थितिका स्मरण होता ही रहता है। कुछ लोग अस्पृश्यताको अपना धर्म मानते हैं और उनके विचारसे इसका लोप उनके लिए एक बहुत बड़ी दुर्घटना होगी। लेकिन, अगर आप इस चीजपर तटस्थ होकर विचार करें तो आप पायेंगे कि इसका बचाव किसी तरह नहीं किया जा सकता। जो लोग अपनेको सनातनी कहते हैं वे भी समझते हैं कि अस्पृश्यताको उचित सिद्ध नहीं किया जा सकता, और मेरा खयाल है कि सनातनियोंमें कट्टरतम वर्गका भी ऐसा ही विचार है। इस भूकम्पके बाद, यह सोचकर कि मृत्यु अवश्यम्भावी है, हमें अधिक विनीत बनना चाहिए। इसलिए जो लोग इस तबाहीसे दुःखी हैं उनमें अधिक विनय आनी चाहिए। ईश्वरने इस तरह हमें एक चेतावनी दी है और अगर हम उसको अनसुना कर देते हैं तो समझ लीजिए कि हमारे भाग्यमें इससे भी बड़ी विपत्ति लिखी हुई है। शास्त्रोंमें लिखा है कि किसी समय समस्त सृष्टिका पूर्ण नाश होगा। इन सभी दैवी चेतावनियोंको ध्यानमें रखते हुए हमें अधिक विनम्र बनना चाहिए और अस्पृश्यताके इस पापसे छुटकारा पाना चाहिए।

भूकम्पसे पीड़ित लोगोंकी संख्या एक करोड़से कुछ अधिक है, लेकिन इस प्रान्तमें और भी लोग हैं, जो इस विपत्तिसे बच गये हैं और जिन्होंने इसमें कुछ भी नहीं गँवाया है। इसलिए उन लोगोंको दूसरे प्रान्तोंके लोगोंके ही समान उदारतासे चन्दा देना चाहिए। सच तो यह है कि राहत-कोषमें चन्दा देना पड़ोसियोंकी हैसियतसे आपका कर्त्तव्य है।

कल हम लोग राहत-समितिके बजटपर चर्चा कर रहे थे। कुल चालीस लाखकी आवश्यकता दिखाई दी और इतनेपर भी कुछ चीजें राहत-योजनामें शामिल नहीं हो पातीं। मगर अबतक केवल २० लाखके लगभग इकट्ठा हो पाया है। पीड़ित जनोंको आम लोगोंसे सहायता मिलनी ही चाहिए और आपको भी उदारतासे चन्दा देकर उसमें अपना योग देना चाहिए। मैं जिस दूसरी बातकी ओर आपका ध्यान आकृष्ट करूँगा वह यह है कि कार्यकर्त्ता बाहरसे लाने हैं। मेरे विचारसे यह ठीक तरीका नहीं है। बिहारियोंमें से ही पर्याप्त संख्यामें कार्यकर्त्ता आने चाहिए। जब यह सम्भव जान पड़ेगा तभी हम बाहरी कार्यकर्त्ताओंको सहायताके लिए बुलायेंगे।

बिहारी विद्यार्थियोंसे बड़ी उत्कटतासे अनुरोध करते हुए गांधीजी ने कहा :

मुझे विद्यार्थियोंसे भी दो शब्द कहने हैं। उन्हें जैसा और जितना कर दिखाना चाहिए था वैसा और उतना उन्होंने करके नहीं दिखाया है। इससे मुझे सचमुच दुःख हुआ है। अगर आप यह बता सकें कि विद्यार्थी ऐसा क्यों नहीं कर पाये हैं तो मैं उसे समझनेको तैयार हूँ। लेकिन वास्तवमें ऐसा कोई कारण नहीं है कि वे आगे क्यों

नहीं आये। हरिजनोंके निमित्त किये अपने दौरेमें मुझे विद्यार्थियोंके सम्पर्कमें आनेके बहुत-से अवसर मिले। उन्होंने यह इरादा जाहिर किया है कि उनके करने लायक जो भी मानवीयताका कार्य उन्हें बताया जायेगा उसके लिए वे अपना खाली समय जरूर देंगे। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि वे अब भी आगे आयेंगे, और कार्यकर्त्ताओं की सूचीमें शामिल किये जानेके लिए राजेन्द्रबाबूको अपने नाम देंगे। ऐसे भी विद्यार्थी हैं जो अपना काम छोड़कर इस विपत्तिमें केवल हमारी मदद करनेके लिए ही कलकत्तासे यहाँ आये हैं।

और अब राहत देनेकी समस्याके बारेमें कुछ कहूँगा। जिन लोगोंपर यह विपत्ति पड़ी है उनकी सहायता करनेका हमने संकल्प लिया है, लेकिन आपको याद रखना चाहिए कि हम उन्हें भिखारी नहीं बनाना चाहते। जो काम करेंगे वे बदलेमें सहायता पायेंगे। बस, मुझे इतना ही कहना है। और मुझे जो थैली दी गई है उसमें, मेरे खयालसे, यहाँ उपस्थित सभी लोगोंने चन्दा नहीं दिया है। इसलिए मैं उनसे अनुरोध करूँगा कि वे भी अपना योग दें। मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि यहाँ एकत्र की गई पूरी राशिका और मुझे भेंट की गई थैलीकी राशिका आधा भाग हरिजन-आन्दोलनके लिए जायेगा और आधा बिहार राहत-कोषमें।[1]

[अंग्रेजीसे]
इंडियन नेशन, २८-३-१९३४

३३०. पत्र : एन० आर० मलकानीको

२५ मार्च, १९३४

प्रिय मलकानी,

दोनों विधेयकोंपर तुम्हारे स्मरण-पत्रका[2] अध्ययन मैंने अभी-अभी समाप्त किया है। तुमने इतना लम्बा कर दिया है कि मन ऊब जाता है। इसे दोबारा पढ़ा भी नहीं है। कहीं-कहीं दलील कमजोर है। तुमने अपने मनकी आँखोंके सामने उन लोगों का चित्र नहीं रखा जिनको सम्बोधित करके तुमने इसे लिखा है। अध्यक्षकी व्यवस्थाओं का कानूनमें कोई महत्त्व नहीं होता और न जानकार लोगोंके लिए ही। हमें अपने विरोधियों, अपने सनातनी मित्रोंके मनको बदलना है। अगर मैं सनातनी होता तो तुम्हारी इस चीजको पढ़कर मेरा मन तो नहीं बदलता। लेकिन खैर, यहाँ तो वैसा कोई प्रसंग ही नहीं है। तुम यही तो चाहते हो कि संघोंका थोड़ा दिशा-दर्शन कर दिया जाये। सो यह तो मैं पहले ही कर चुका हूँ। जितना किया है उतना पर्याप्त न हो तो मुझे अवश्य बताओ।

१. सभाके अन्तमें गांधीजी के अनुरोधपर लोगोंने २५२ रुपये दिये और मानपत्रकी नीलामीसे ४०१ रुपये मिले।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

तुम्हारा स्मरण-पत्र शायद मुंशीके[1] लिए उपयोगी हो। लेकिन वह कोई पक्षसार नहीं है। पक्षसारमें तो सिर्फ घटनाओंका क्रमबद्ध विवरण ही होना चाहिए और दलील किसी तरहकी नहीं दी जानी चाहिए।

आशा है, मेरे कार्यक्रमका विवरण तुम्हें मिल गया होगा।

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०५) से।

३३१. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

पटना
२६ मार्च, १९३४

चि० दूधीबहन,

काफी सोच-विचारके बाद और एकाधिक कारणोंसे मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि फिलहाल वालजीभाईका मेरे साथ दौरा करना ही उचित होगा और यही उनका कर्त्तव्य है। तुम्हें और बच्चोंको उनकी अनुपस्थिति खलती होगी। किन्तु इस तरहके वियोगमें सुख मानना चाहिए। यदि यहाँ वालजीका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहा तो मैं दौरेमें उन्हें अपने साथ नहीं ले जाऊँगा। उनका स्वास्थ्य तो ठीक ही रहता है। वे मेरे लिए उपयोगी भी हैं। इसलिए उनके बारेमें अन्य कोई बात नहीं सोचनी चाहिए। यह व्यवस्था तो जुलाईके अन्ततक रहेगी। उसके बाद भगवान्को जो करना होगा सो करेगा। मुझे आशा है कि तुम और बच्चे मेरे इस विचारसे सहमत होंगे और खुश रहेंगे।

आशा है, अब वहाँका मौसम अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४६५) से; सौजन्य : वा० गो० देसाई

१. कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी।

३३२. पत्र : विमलचन्द्र वा० देसाईको

पटना
२६ मार्च, १९३४

चि० नानू,

तुम सब मिलकर अपनी एक सभा करना और एक मतसे यह प्रस्ताव पास कर मुझे भेज देना कि वालजी फिलहाल मेरे साथ दौरा करते रहें। उक्त प्रस्ताव पास करनेको कहनेका एक अच्छा कारण यह है कि इस दौरेसे उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता है। इससे अतिरिक्त लाभ यह होगा कि सब-कुछ देखनेके बाद वे तुम्हें बहुत-सी नई बातें सिखा सकेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७३८) से; सौजन्य : वा० गो० देसाई।

३३३. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

पटना
२६ मार्च, १९३४

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र मिले। शान्तिकी आशा छोड़ देना। यदि सुशीला अधिकाधिक योग्य बनती जाये तो वह बहुत-सारी जिम्मेदारी सँभाल लेगी। सतीशबाबूकी पत्नी अंग्रेजी नहीं जानती किन्तु फिर भी वह खादी-प्रतिष्ठान और उसके प्रकाशन-मन्दिरका पूरा भार स्वयं उठाती है और इस प्रकार उसने सतीशबाबूको हरिजन-कार्य करनेके लिए मुक्त कर दिया है। सच बात तो यह है कि दोनोंका ध्यान केवल सेवा-कार्यमें ही लगा रहता है।

वेस्टके[1] बारेमें तुम जो कहते हो वह मैं समझ गया। मुझे तो ऐसा लगता है कि यदि अब वे हमारे प्रति उदासीन हो गये हों तो भी उनकी सेवा इतनी मूल्यवान है कि हमें उनके भूतकालको नहीं भूलना चाहिए। फिर भी तुम्हें जो उचित लगे

१. ए० एच० वेस्ट

वैसा ही करना। मैं तुमसे ऐसा कोई काम नहीं कराना चाहता जो तुम्हारे मनको न पटता हो। आज और अधिक नहीं लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१७) से।

३३४. पत्र : छगनलाल जोशीको

२६ मार्च, १९३४

चि० छगनलाल,

आज तुम्हें तार दिया है और मैं उसके उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। आशा है, तुम्हारा उपवास[1] निर्विघ्न पूरा हो गया होगा। सात दिनका उपवास करना तो मुश्किल नहीं होना चाहिए। उससे लाभ ही होना चाहिए। उपवास तोड़ना अवश्य आना चाहिए। खुराक हलकी और धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिए। नियमित रूपसे शौच आना चाहिए। इस उपवासका तुम्हारे शरीर और मनपर क्या असर हुआ, मुझे लिखना।

आजकल मेरे पत्रोंकी बिलकुल आशा मत करना। मुश्किलसे ही लिख पाता हूँ। संगी-साथी जितने लिख सकते हैं उतने ही पर्याप्त हैं। आजकल तो मेरे साथी भी बदलते रहते हैं, इस कारण भी मैं अधिक पत्र नहीं लिखवा सकता। यह जानते हुए भी कि तुम्हें मेरे पत्र पानेकी उत्कट इच्छा बनी रहती है, मैं उसे पूरी नहीं कर सकता।

तुम्हें यहाँ बुलानेकी मेरी खास इच्छा तो नहीं है, और न ऐसी इच्छा करनी चाहिए, किन्तु यदि तुम न रह सको तो अवश्य आ जाना। यही बात मैंने नारणदास और वसुमतीको लिखी है। और गंगाबहनको भी यही लिखा है। वह आखिर नहीं आई। किन्तु तुम्हें किसीकी नकल नहीं करनी चाहिए। मन जो कहे तदनुसार चलना। किन्तु मनके कहनेसे किसीको पाप-कर्म नहीं करना चाहिए। लेकिन मुझसे आकर मिल जानेमें पापकी बात नहीं है।

तुमने जो पैसे मँगाये थे, उस सम्बन्धमें चिमनलालने[2] लिखा था। क्योंकि तुमने पैसे माँगे थे इसलिए मैंने मँगाई हुई रकम भेजनेके लिए लिख तो दिया है। जो रकम बच गई है वह किसी एककी नहीं बल्कि हम सबकी है। यदि उक्त रकम तुम्हारे अधिकारमें होती और मैं जेलमें होता तो तुम उसे अपनी इच्छानुसार ही खर्च करते न? मैं तो संयोगसे बाहर हूँ। आश्रम को कृष्णार्पित करते समय हमारे मनमें जो कल्पना थी, मेरे बाहर रहनेके कारण उसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। उक्त कल्पना

१. यह उपवास जेलसे छूटनेके बाद किया गया था।

२. चिमनलाल शाह, आश्रमके तत्कालीन व्यवस्थापक

कठिन थी: "आश्रमके खातेसे कोई कुछ न निकाले, जेलसे छूटते ही फिर जेलमें पहुँच जाये, और वहाँ भी बिना पैसे अपना काम चलाये।" किन्तु यह तो सिद्धान्त के ही रूपमें रहा है। चूँकि म जेलसे बाहर निकल आया, इसलिए इस चीजकी और ज्यादा उपेक्षा हुई। किन्तु हमारी कल्पना जहाँ-की-तहाँ ही है। हम सबको उसका यथाशक्ति पालन करना चाहिए। यदि हम इस दृष्टिकोणसे विचार करें तो काफी होगा। और किसी तरहका बन्धन तुमपर लगाया ही नहीं जा सकता। यदि मेरे विचारोंमें तुम्हें कोई दोष दिखाई पड़े तो मुझे बताना।

कुमारी हैरिसन मेरे साथ आ गई है। प्यारेलाल उसके साथ आया है। कुमारी लेस्टर तो मेरे साथ ही है। मैं कल पुनः भूकम्पग्रस्त क्षेत्रको देखने निकलूँगा। यह मत समझना कि कुमारी हैरिसन के आनेमें कोई रहस्य है। वह वर्तमान स्थितिका परिचय प्राप्त करने आई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५१७) से।

३३५. पत्र: रमाबहन जोशीको

२६ मार्च, १९३४

चि० रमा,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि जेल जानेका निर्णय ऐसा समझकर न किया हो कि जेल जाना धर्मकी दृष्टि से आवश्यक है तो उसे बदल देना। इस सम्बन्धमें यहाँ तो विस्तारसे चर्चा हुई है, जिससे कुछ लोग रुक गये हैं। उस चर्चा के विवरणकी[1] नकल सम्भवतः सबको मिल जायेगी। उसे देखनेके लिए यदि तुम दोनों रुकना चाहो तो रुक सकते हो। बाकी जेल तो हमारा घर है। जेलसे बाहर रहना तो गृह-विहीन हो जाना है। किन्तु यह सब तो उनके लिए है जो जेल जाना अपना धर्म समझते हैं। उनके लिए जेलका दुःख सुख है, जबकि जेलके बाहरका सुख दुःख है। यदि यह सब तुम्हें स्पष्ट हो और उसका कारण भी स्पष्ट हो तो तुम खुशी से जेल जाओ। यदि स्पष्ट न हो तो कदापि नहीं जाना चाहिए। यदि तुम जेल नहीं जाओगी तो मैं नाराज नहीं होऊँगा। और अधिक लिखनेकी इच्छा तो बहुत होती है किन्तु समयाभावके कारण यहीं समाप्त करता हूँ। आशा है, विमु मौज कर रही होगी। धीरू भावनगर चला गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५१७) से।

१. देखिए "बातचीत: आश्रमवासियोंसे", पृ० ३२४-३०।

३३६. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पटना
२७ मार्च, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मेरे सामने है। एक ही साथ कई काम करनेकी कोशिश मत करो। अगर तुम्हें हरिजनोंकी सेवा करनी है तो मेनिनजाइटिसके रोगियोंके बारेमें मत सोचो। उनकी देखभाल दूसरे करेंगे। अपने कार्यके योग्य बननेके लिए तुम्हारे लिए जो-कुछ करना जरूरी हो, अवश्य करो। मुझसे मत डरो। मैं तुम्हें छोड़नेवाला नहीं हूँ; तुम छोड़ दो तो बात और है। किसी दूसरेसे डरनेके बजाय तुम्हें खुद अपनेसे डरना चाहिए। मैं स्वस्थ-प्रसन्न हूँ।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

अब गुजरातीमें क्यों नहीं लिखती?[1]

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३३७. भाषण : सार्वजनिक सभा, छपरामें[2]

२७ मार्च, १९३४

आज एक भयंकर विपत्तिने हम सबको — हम हिन्दू, मुसलमान, ईसाई तथा अन्य लोगोंको, तथाकथित उच्च-कुलोत्पन्न और नीच-कुलोत्पन्न दोनोंको — समान रूपसे बेबस कर दिया है, बिना किसी पक्षपातके, बिना किसी भेदभावके। अगर इस भयंकर आघातसे भी सचेत होकर हम अपने-आपको 'रक्त और स्थानके अहंकार'से मुक्त करने, आदमीके ही द्वारा मनमाने तौरपर आदमी-आदमीके बीच खड़ी की गई भेदकी दीवारें मिटानेको प्रवृत्त नहीं होते तो मैं यह कह सकता हूँ कि हम-सा अभागा और कोई नहीं है। मुझे दिन-दिन इस बातका अधिकाधिक बोध होता जा रहा है कि मानव-बुद्धि ईश्वरकी लीलाको पूरी तरहसे समझनेमें अक्षम है। ईश्वरने बड़ी बुद्धिमानी

१. यह वाक्य गुजरातीमें है।

२. प्यारेलाल नैयरके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। इस सभामें लगभग बीस हजार लोग एकत्रित थे। गांधीजी हिन्दीमें बोले थे।

के साथ मनुष्यकी परिदृष्टिको सीमित कर दिया है और यह अच्छा ही किया है, क्योंकि अन्यथा मनुष्यके कपट-पाखण्डका कोई अन्त ही नहीं रहता। लेकिन यद्यपि मैं मानता हूँ कि ईश्वरकी लीलाको मनुष्य पूरी तरहसे नहीं समझ सकता, फिर भी मेरा दृढ़ विश्वास है कि उसकी इच्छाके बिना एक पत्ता भी नहीं गिरता, और वास्तव में कोई पत्ता गिरता नहीं बल्कि उसका गिरना भी उसके किसी-न-किसी हेतुकी पूर्त्तिके लिए ही होता है। अगर हममें केवल पर्याप्त विनम्रता होती तो हमें हालके भूकम्पको अपने पापोंके उचित दण्डके रूपमें स्वीकार करनेमें कोई संकोच न होता। मेरे कहनेका मतलब यह नहीं कि हम निश्चयपूर्वक ऐसा कह सकते हैं कि अमुक विपत्ति अमुक मानवीय कृत्यका परिणाम है। प्रायः हमें तो अपने घोरतम पापोंका भान ही नहीं रहता। मेरे कहनेका मतलब सिर्फ इतना ही है कि प्रत्येक प्राकृतिक प्रकोपका अर्थ यह होता है या यह होना चाहिए कि प्रकृति हमसे आत्मालोचन, पश्चात्ताप और आत्म-शुद्धि करनेको कह रही है। आज हमें अपने हृदयोंको सम्यक् रूपसे शुद्ध करने की जितनी आवश्यकता है उतनी कभी नहीं थी, और मैं तो यहाँतक कहूँगा कि यदि हालके भूकम्पके परिणामस्वरूप भारत अस्पृश्यताके घुनसे छुटकारा पा सकता है तो भूकम्पमें उठाये कष्टोंके रूपमें चुकाया हमारा वह मूल्य अधिक नहीं माना जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-४-१९३४

३३८. भाषण : राहत-कार्यकर्त्ताओंकी सभा, छपरामें[1]

२७ मार्च, १९३४

गांधीजी ने कहा कि इस अवसरपर मैंने अधिकारियोंके साथ सम्मानपूर्वक सहयोग करनेकी अपनी तत्परता बताई है। उन्होंने स्थितिको समझाते हुए कहा कि जनता पर जो भारी विपत्ति टूट पड़ी है उससे उसे त्राण देनेका और कोई रास्ता नहीं था। आज हमारे सामने सहयोग-असहयोगका, कांग्रेस और सरकारका सवाल नहीं, बल्कि सिर्फ यह सवाल है कि इस भारी विपत्तिके परिणामस्वरूप कष्ट भोग रही जनताकी सबसे अच्छी सेवा किस तरह की जाये। वास्तवमें जरूरत खाने, कपड़े, रहनेकी जगह और सबसे बढ़कर पानीकी है। श्री गांधीने वहाँके लोगोंको आगाह करते हुए कहा कि अगर आपको लगे कि पर्याप्त सहायता नहीं मिल रही है या अमुक-अमुकके साथ न्याय नहीं किया जा रहा है तो आपको इसका बुरा नहीं मानना चाहिए। आपको व्यक्तिगत दृष्टिसे सोचना छोड़कर तटस्थ भावसे समष्टिकी दृष्टिसे विचार करना चाहिए। आपको यह नहीं भूलना चाहिए कि यह विपत्ति इतनी बड़ी है कि सरकार या अन्य किसी भी एजेंसीकी चाहे जितनी इच्छा हो, वह पूरी

१. लगभग ऐसी ही रिपोर्ट ३०-३-१९३४ के **इंडियन नेशन** और ३०-३-१९३४ के **बॉम्बे क्रॉनिकल**में भी छपी थी

राहत नहीं दे सकती। इसलिए मैं आपसे फिर वही बात कहूँगा कि प्रकृति द्वारा किये गये घावको भरनेवाला मरहम किसी बाहरी वस्तुसे — रुपया-पैसा आदिसे — नहीं, बल्कि अपने अन्दरसे मिलेगा। हमारी रक्षा करनेवाला वह सबसे कारगर मरहम मानवीय सहानुभूति और प्रेम है। उसके बलपर पारस्परिक सहयोग और सेवाका रस चखते हुए आप अपने दुर्भाग्यको भुला सकेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २९-३-१९३४

३३९. पत्र : सर जॉर्ज शुस्टरको[1]

पटना

२८ मार्च, १९३४

प्रिय सर जॉर्ज,

इर्विन-गांधी समझौतेकी गरीबोंको नमक निकालने-बनानेकी छूट देनेसे सम्बन्धित शर्तके तोड़े जानेसे मुझे जितना दुःख हुआ है उतना अन्य किसी भी शर्तके तोड़े जानेसे नहीं हुआ। एक मित्रने मुझे याद दिलाया है कि उसके सम्बन्धमें जारी किये गये आदेश कभी वापस लिये ही नहीं गये। क्या यह सच है? उस धाराके स्वीकार किये जानेकी पूरी कहानी आपको मालूम है। उसे विशुद्ध रूपसे मानवीयताके खयालसे जोड़ा गया था। क्या नमक-सम्बन्धी धाराको बचाया जा सकता है? क्या इसे सविनय प्रतिरोध और अध्यादेशोंकी परिधिसे बाहर रखा जा सकता है? बिहारकी विपत्ति-निवारणके सम्बन्धमें सहयोग करनेमें मुझे कोई कठिनाई महसूस नहीं हुई। उस मामलेमें तो मेरे पास कुछ देनेको था। लेकिन गरीबोंके नमकके सम्बन्धमें तो मैं सहयोग की माँग ही कर सकता हूँ। क्या आप मेरी सहायता कर सकते हैं? नहीं, मेरी नहीं, गरीबोंकी?[2]

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७०६) से; सौजन्य : आन्ध्र प्रदेश सरकार। होम डिपार्टमेंट, पॉलिटिकल, फाइल नं० ८९/३४ से भी; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार। **हरिजन**, ३०-११-१९३४ से भी।

१. वाइसरायकी परिषद्के वित्त-सदस्य।

२. अधिकारियोंको यह "पत्र सरकारके साथ सम्बन्ध स्थापित करनेका श्री गांधीका एक और प्रयत्न" लगा। उनके खयालसे यह एक ऐसी नीति थी जिसको उन्हें "निश्चित रूपसे बढ़ावा नहीं देना" चाहिए था। तदनुसार शुस्टरने ६ अप्रैलको गांधीजी को लिखा कि "स्थानीय लोगोंको नमक इकट्ठा करने और बनानेके सम्बन्धमें रियायतें देनेके बारेमें सरकारके निर्णय" में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, लेकिन कुछ इलाकोंमें रियायतोंका इतना अधिक दुरुपयोग किया गया कि "उन्हें वापस ले लेना आवश्यक हो गया।" इस विषयपर आगे हुए पत्र-व्यवहारके लिए, देखिए खण्ड ५८।

३४०. भाषण : सोनपुरमें[१]

२८ मार्च, १९३४

मैं जानता हूँ कि बिहारके इस हिस्सेपर क्या गुजरी है। यहाँके लोगोंके कष्टोंके प्रति सारी दुनियाका ध्यान गया है और उन्हें सारी दुनियाकी सहानुभूति मिली है। वाइसराय तथा बाबू राजेन्द्रसादकी अपीलोंपर लोगोंने काफी-कुछ किया है, लेकिन इसके बावजूद उत्तर बिहारको जो भारी क्षति हुई है उसकी पूर्त्ति करना असम्भव ही होगा। लेकिन यदि क्षतिपूर्त्ति कर भी दी जाती है तो भी अगर प्रकृतिकी इस भयंकर चेतावनीका कोई अधिक ठोस परिणाम नहीं निकलता तो यह क्षतिपूर्त्ति बहुत ही नगण्य परिणाम मानी जायेगी। दोनों कोषोंमें जिन असंख्य लोगोंने चन्दा दिया है उन्होंने तथा अन्य अनेक संस्थाओंने अपनी-अपनी दानकी राशियाँ भेजकर अपनी-अपनी अन्तरात्माओंको शायद सन्तुष्ट कर लिया है। अब क्या राहत पानेवाले केवल समयपर मिले इन दानोंको प्राप्त करके ही सन्तुष्ट रह जायेंगे? इस विपत्तिने हमें जो नैतिक सबक सिखाया है उसे यदि हम नहीं सीखते तो यह उपेक्षा स्वयं इस विपत्तिसे बहुत अधिक बुरी होगी। कल जब हमारी मोटरगाड़ी गंडक बाँधसे होकर गुजर रही थी, पासके एक गाँवके डोमोंकी ओरसे मुझे एक ज्ञापन दिया गया। उसमें उन्होंने बताया था कि पानीकी कमीके कारण उन्हें बड़ा कष्ट हो रहा है, क्योंकि गाँववाले उन्हें सार्वजनिक कुएँसे पानी नहीं लेने देते। इस बातकी ओर मैंने गाँवके मुखियाका ध्यान दिलाया। उसने वादा किया कि अगर डोमोंकी शिकायत उचित होगी तो वह उसे अवश्य दूर करेगा। ईश्वरके प्रकोपका असर तो अमीर-गरीब, हिन्दू-मुसलमान, सवर्ण-अवर्ण सबपर समान रूपसे हुआ। क्या हम ईश्वरकी इस भयंकर निष्पक्षतासे यह सबक नहीं लेंगे कि किसी भी मनुष्यको अस्पृश्य या अपनेसे नीच मानना अपराध है? अगर एक भी डोम या किसी भी अन्य व्यक्तिको गाँवके कुओंके उपयोगके अधिकारसे वंचित रखा जाता है तो निश्चित है कि पन्द्रह जनवरीको हमें जो सबक दिया गया था उसका हमपर कोई असर नहीं हुआ। मैं आपकी परीक्षा अभी इस क्षण लेना चाहता हूँ। मैं जानता हूँ कि आप सब लोग निर्धन हैं, अपनी रोटी अपना पसीना बहाकर कमाते हैं। लेकिन मैं यह भी जानता हूँ कि इस भारी भीड़में ऐसा एक भी आदमी नहीं है जो एक-आध पैसा भी न दे सके। मैं चाहता हूँ कि आपमें से प्रत्येक अपनी-अपनी सामर्थ्यके अनुसार अधेला-पैसा दे और इस बातके संकेतके रूपमें दे कि आपको अस्पृश्यताके पापके लिए पश्चात्ताप हो रहा है, आप किसीको अपनेसे

१. प्यारेलाल नैयरके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। गांधीजी ने यह भाषण सोनपुर स्टेशनपर रेलगाड़ीके डिब्बेके दरवाजेपर खड़े होकर दिया था।

अधम नहीं मानते और व्यक्तिशः आप लोग ऊँच-नीचके सारे भेद-भावको मिटा देनेको कृतसंकल्प हैं। मैं नहीं चाहता कि आपमें से कोई भी, जो शर्त मैंने रखी है, उस शर्तके बिना कुछ भी दे।[1]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-४-१९३४

३४१. भाषण : हाजीपुरमें[2]

२८ मार्च, १९३४

मैं भूकम्पसे प्रभावित क्षेत्रोंको जा-जाकर देखता रहा हूँ। इस भयंकर विपत्तिके बाद अब दूसरी बार मैं हाजीपुर आया हूँ। घर बुरी तरहसे टूट-फूट गये हैं और लोग अकथ कष्टोंमें पड़ गये हैं। यह कहते हुए मनको बड़ा सुख मिलता है कि सरकार भूकम्प-पीड़ितोंको राहत दे रही है। दूसरी एजेंसियाँ भी सहायता देनेकी कोशिश कर रही हैं। लोग दुःखमें तो जरूर पड़ गये हैं, लेकिन हम सबको उसका मुकाबला साहसके साथ करना चाहिए। आप पेशेवर भिखारी न बनें। राहत तो जरूरतमन्दोंको देनेके लिए है। इसलिए सहायता उन्हींको दी जानी चाहिए जिनको इसकी सख्त जरूरत हो। तन्दुरुस्त लोगोंको भीख माँगनेके बजाय मेहनत करके गुजारेके लिए कमाना चाहिए। मुझे मालूम हुआ है कि अबतक बिहार केन्द्रीय राहत-समिति लगभग पचीस लाख रुपये इकट्ठे कर पाई है और बत्तीस लाख रुपये वाइसरायके भूकम्प राहत-कोषमें जमा कराये गये हैं। राहत-एजेंसियोंके स्वयंसेवकों और कार्य-कर्त्ताओंको क्षतिका ठीक-ठीक अनुमान देना चाहिए। अतिरंजित विवरण नहीं दिये जाने चाहिए।

हम सब पाप कर रहे हैं। अस्पृश्यताके बोझको अपने सिरसे उतार फेंकिए। हमारा शरीर अशुद्ध है। हमें शुद्ध बननेकी कोशिश करनी चाहिए। किसीको नीची निगाहसे नहीं देखना चाहिए, क्योंकि सब ईश्वरकी ही सन्तान हैं। मैं तो खुद ही बिहारी हूँ, क्योंकि मैं कई महीने बिहारमें रहा हूँ। बिहारियोंको अस्पृश्यतासे छुटकारा पाना चाहिए। अपनेको पद या रुतबेमें बड़ा मानना भूल है। हमारे अन्दर समस्त मानवोंके लिए दयाका भाव होना चाहिए।

छपरा-कलक्टरीसे मालूम हुआ है कि सारन-जिलेमें लगभग दो हजार कुओंकी सख्त जरूरत है। मेरा ख़याल है कि सबसे महत्त्वपूर्ण समस्या जल-सम्भरणकी है। कोई भी पानीके बिना नहीं जी सकता। इसलिए भूकम्प-प्रभावित क्षेत्रोंमें कुओंकी

१. भाषणके समाप्त होते ही श्रोताओंने गांधीजी के हाथोंमें पैसे-रुपये देना आरम्भ कर दिया। गाड़ी छूटनेतक यह सिलसिला चलता रहा।

२. मुजफ्फरपुर जाते हुए गांधीजी और उनके साथी थोड़ी देरके लिए हाजीपुर-स्टेशनपर रुके थे। यह भाषण तभी दिया गया था।

आवश्यकतापर मैं अधिक जोर दूँगा। ऐसे कुएँ बनवाये जाने चाहिए जिससे जाति या धर्मके भेद-भावके विना सभी लोग उनका पानी पी सकें।

और अन्तमें मैं श्रोताओंसे हरिजन-कोषमें चन्दा देनेकी अपील करता हूँ। आप चाहे जो दें, चाहे जितनी छोटी रकम दें, उसका स्वागत है। अगर लोग चन्दा नहीं देते तो मैं यही मानूँगा कि वे हरिजन-कार्यको समर्थन देनेको तैयार नहीं हैं। सोनपुर के लोगोंने कुछ चन्दा दिया। लोग पूरे समयतक इस तरह शान्त रहे, इसका मेरे मनपर बहुत अच्छा असर पड़ा है, और आप सब लोगोंने इतने धीरजके साथ मेरी बात सुनी, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। लेकिन, मैं अब भी आपसे शान्त ही रहनेका अनुरोध करूँगा और कहूँगा कि कोई प्रदर्शन आदि न करें।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, १-४-१९३४

३४२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

मुजफ्फरपुर
२९ मार्च, १९३४

भाई वल्लभभाई,

तुम नाराज न होना। यह पत्र मैं तुम्हें २·४५ बजे सवेरे लिख रहा हूँ। अलार्म ३ बजेका लगाया था। लेकिन वह १२ बजेके पहले ही बज गया और मैं उठ बैठा। दातुन करके लिखने बैठा और थोड़ा लिखनेके बाद घड़ीपर निगाह पड़ी तो देखा १२ बजे हैं। काम इतना इकट्ठा हो गया है कि सोनेकी हिम्मत न हुई इसलिए सोचा जितना निबटा सकूँ उतना निबटा डालूँ। 'हरिजन'का काम लगभग पूरा करके अब तुम्हें यह पत्र लिख रहा हूँ। फिर बा को लिखूँगा। बा का पत्र मैं तुम्हें बादमें भेजूँगा। उसकी नकल करानी है।

तुमने इस बार बहुत प्रतीक्षा कराई। अब तो लिखते रहोगे न? हैरिसन बहुत दृढ़ निश्चयवाली स्त्री है। ऐसी ही लेस्टर है। हैरिसन अधिक प्रौढ़ है। उसकी निर्मलता और नम्रताका पार नहीं। लेस्टर जरा बीमार हो गई है। इसलिए पटनामें रुक गई है। हैरिसन मेरे साथ है। हम मुजफ्फरपुरमें हैं सुबह बेलसंड जायेंगे। वहाँ आश्रमके लोग हैं। प्यारेलाल मेरे साथ है। वह थोड़े ही दिन साथ रहेगा। मैं देखूँगा। वालजी और हिम्मतलाल लेस्टरकी सेवामें लगे हैं। हम कल छपरामें थे। डॉ० महमूदके[1] यहाँ ठहरे थे। ध्वस्त होकर चूर-चूर हो गये मकान तो सभी जगह हैं। डॉ० महमूद कलक्टरके साथ मिलकर संकट-निवारणका अच्छा काम कर रहे हैं। संकट-निवारण विभागके उच्च अधिकारीसे मैं मिला हूँ। तुम (गुजरातके बाढ़-संकटमें) जितना कर सके थे, उतना तो हरगिज नहीं हो सकेगा। फिर भी, काम अच्छा तो होगा। जो-कुछ खर्च होगा वह ठीक जगहपर होगा।

१. डॉ० सैयद महमूद।

जमनालाल अभी तो यहीं रहेंगे। लक्ष्मीदासके बारेमें कह सकते हैं कि वे अच्छे हो गये। वे भी यहीं खादी-उत्पादनमें लगेंगे। दूसरोंको भी जमनालाल उसमें लगा देंगे। भूलाभाई आकर मुझसे मिल गये। किसी मुकदमेके लिए गया गये थे। वहाँसे मिलने चले आये थे। थोड़ी ही बातें हो सकीं।

लगता है कि मणिको (बेलगाँव-जेलमें) काफी तपाया जा रहा है। ऐसा ही सही। उसकी रक्षा ईश्वर करेगा।

बा मईमें छूटेगी।

गुजरात तो मैं जुलाईमें जा सकूँगा। चन्द्रशंकर तीसरी-चौथी तारीखको आयेगा। मेरी या बाहर की कोई चिन्ता मत करना। ईश्वरमें हमारी श्रद्धा बुद्धिका विनोद नहीं है। हम तो मानते हैं कि वह सच्चा है। वही सच्चा है। हम उसका ध्यान धरकर चलते हैं। इसलिए वह अपनी इच्छाके अनुसार हमें चलाये और हम चलें। इस तरह तुम्हें भी शामिल कर लूँ, तो इसमें अतिशयोक्ति तो नहीं है न?

तुम्हें कोई साथी मिला?[1]

अब अधिक नहीं लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ८८-९

३४३. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

२९ मार्च, १९३४

बा,

सुबहके ३.३० हुए हैं। आज बृहस्पतिवार है। तेरा पत्र कल ही साँझको मिल पाया। आज हम मुजफ्फरपुरमें हैं। पण्डितजी, स्वामी और कृपलानी यहाँ हैं। माधवदास भी यहीं हैं। मैं बालसे ११ बजे मिलूँगा। मगनभाई, रावजीभाई और सोमण आदि जहाँ काम कर रहे हैं, मैं वहाँ जानेवाला हूँ। मैं रावजीभाईसे पत्र लिखनेको कहूँगा। मैं वे सब समाचार देनेका प्रयत्न करूँगा जो तू जानना चाहती है। किन्तु यदि कुछ छूट जाये तो फिर पूछ लेना। प्रभावती आजकल मेरे साथ घूम रही है। कुँवरजी बम्बईमें हैं। रामी भी वहीं गई है। मनु अब ठीक है। माधवदास भी पहलेसे बेहतर हैं। वसुमती वर्धा गई है। छगनलाल और रमा द्वारकामें हैं। छगनलालने केवल आत्म-शुद्धिके विचारसे सात दिनका उपवास किया था। वह सोमवारको पूरा हो गया। वह ठीक है। दूधीबहन और छोटी कुसुम भावनगरमें हैं। कुसुम देसाई शान्तिनिकेतन देखने गई है। उसका अभी कोई ठिकाना नहीं लगा है। वह कोई

१. वल्लभभाई पटेल के साथी डॉ० चन्दूलाल देसाई सजा पूरी होनेपर छूट गये थे।

काम खोज रही है। मणिलाल और सुशीलाका पत्र आया था। वे आनन्दपूर्वक हैं। चन्द्रशंकर अब चार दिनमें आ जायेगा। अहमदाबादमें बच्चोंका सिर दुखने लगता है, वे अचेत हो जाते हैं, बुखार हो आता है और वे मर जाते हैं। अब इस बीमारी का जोर घटता जा रहा है। सिनेमा आदि जानेसे ऐसी बीमारी होती है। इसका मुख्य कारण दूषित वायु है। हाँ, विद्यापीठकी इमारतमें एक अस्पताल खोल दिया है। छूटनेके बाद कान्ति कहाँ जायेगा या कहाँ रहेगा, यह मैं नहीं जानता। मैं उसे लिखनेवाला हूँ। आनन्दी आदि सभी बच्चे अनसूयाबहनके पास हैं और मौज कर रहे हैं। आनन्दीको हलका बुखार था। अब अच्छी है। लक्ष्मीदास भी अच्छा है। वह पटनामें है। पार्वती प्रागजीसे मिल आई। प्रागजी ठीक है। देवदास और लक्ष्मी दिल्लीमें ही हैं। कुछ दिनोंमें राजगोपालाचारी वहाँ पहुँच जायेंगे। लगता है मणिबहनका काम ठीक-ठीक चल रहा है। मुझे उसका कोई पत्र नहीं मिला है। नागिनी अमेरिका गई है और अमला साबरमतीमें मजेमें है। जानकीबहन और मदालसा आदि सभी वर्धामें हैं। रावजीभाईकी विद्या भी वर्धामें है। वह सयानी हो गई है और उसकी विवाह करनेकी इच्छा है। उसके लिए लड़का खोजा जा रहा है। लक्ष्मीबहन खरे वर्धाका काम-काज सँभाल रही है। लड़कियाँ बहुत बढ़ गई हैं। उनकी संख्या पचाससे ऊपर पहुँच गई है। द्वारकानाथजी भी वहीं हैं। ब्रजकृष्ण दिल्लीमें है। वह अब अच्छा है। प्यारेलाल मेरे साथ है। जो महिला इंग्लैंडमें मेरी सहायता करती थी, वह भी मेरे साथ है। उसके साथ आनेवाले व्यक्तिका क्या किया जाये, यह अभी निश्चित नहीं हुआ है। हो जायेगा। फिलहाल तो वह यहीं है। पद्मजा अच्छी है। श्रीमती नायडू मुझसे मिलने हैदराबाद आई ही थीं। रामनवमीके दिन पण्डितजी उपस्थित नहीं थे। सोमणजीने ही 'जय राम रमा' भजन गाया था। १० तारीखको हम बिहार छोड़ देंगे और असम जायेंगे। मैं असममें दस दिन बिताकर फिर बिहार लौट आऊँगा और फिर वहाँसे उड़ीसा जाऊँगा। मईके महीनेमें मैं वहाँ पहुँचूँगा। कल मैं राजेन्द्रबाबूकी पत्नी और विद्यावतीसे मिला था। इस बार प्रवचन नहीं भेज रहा हूँ। अब प्रार्थनाका समय हो चला है।

तुम सबको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना बाने पत्रो, पृ० २१-२

३४४. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२९ मार्च, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारे पत्रोंका उत्तर देनेकी मैं बहुत कोशिश करता रहा हूँ, लेकिन इधर मुझे समय ही नहीं मिल पाया।

तुम्हारा वर्ष समाप्त होनेपर मैं तुम्हें छोड़नेवाला नहीं हूँ। क्यों छोड़ूँ? क्या तुम इतना भी नहीं समझ सकती कि मैं तुम्हें मूर्ख कहता हूँ तो स्नेहके कारण ही? और तुम्हारे बारेमें मैं क्या कहता हूँ, इस बातको लेकर तुम्हें परेशान क्यों होना चाहिए? तुमको अपने ऊपर संयम रखना चाहिए। क्या तुम यह नहीं समझ सकती कि मुझसे प्रेम रखनेवाले सभी लोगोंके लिए मेरे साथ रहना असम्भव है? लेकिन मेरा काम करते रहकर एक तरहसे सभी मेरे साथ रह सकते हैं। तुम मेरा ही तो काम कर रही हो; तुम्हें उसमें सन्तोष पाना चाहिए। जब ईश्वर चाहेगा, हम मिलेंगे भी।

मैं तुमसे कह चुका हूँ कि मेननजाइटिसके रोगियोंकी देख-भाल करनेकी तुम्हें जरूरत नहीं है।

मेरा वजन १०८ पौंड है और रक्तचाप १६०/१२०।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३४५. भाषण : सार्वजनिक सभा, भरतुआ चौरमें[1]

२९ मार्च, १९३४

उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा कि डॉ० सॉफ्ट और सत्यदेवजी ऐसे कार्यकर्त्ता हैं जो चौरके पानीको निकालनेके लिए कठोर परिश्रम कर रहे हैं। पानी जमे रहनेके कारण यहाँके गाँव और इनके निवासियोंकी ४८ हजार बीघा जमीन बर्बाद हो रही है। उजड़ती हुई आबादीको अन्यत्र बसानेमें पैसा सहायक नहीं हो सकता। सरकार और राजेन्द्रबाबू पानीको निकालनेका उपाय सोच रहे हैं, जिससे लाखों रुपये और जान-मालकी रक्षा हो सकती है, लेकिन उन्हें यह मालूम नहीं है कि इंजीनियर लोग, जो परिधि-रेखाका सर्वेक्षण कर रहे हैं, क्या सलाह देंगे। हर सम्भव उपायको आजमाया जायेगा। राजेन्द्रबाबूने इस कामपर कोषका धन खर्च करनेके लिए समितिको राजी करनेका निश्चय किया है।

अगर इतना सब करनेके बावजूद हम सफल नहीं होते तब तो इसे ईश्वरकी मर्जीपर ही छोड़ना होगा। बरसातमें बाढ़ आयेगी, घर ढहेंगे, जानें जायेंगी। इसलिए कुछ-न-कुछ तो शीघ्र ही किया जाना चाहिए। आपका कष्ट कुछ सालोंसे चला आ रहा है। भूकम्पने उसे बहुत अधिक बढ़ा दिया है। साहस और विश्वाससे काम लीजिए। मामला अच्छे और योग्य लोगोंके हाथोंमें है। अस्पृश्यताके अभिशापको मिटाइए। हरिजनोंको प्यार कीजिए। ऊँच-नीच, अस्पृश्य-स्पृश्यका भेद-भाव मिटाइए। डोम लोग वैसा ही काम तो करते हैं जैसाकि आप सबकी माताओंने आपके लिए आपके बचपनमें किया है। फिर उन्हें वर्ण-बहिष्कृत क्यों रखा जाये?

महिलाओंसे बापूने कहा :

चरखा चलाओ, तकली चलाओ और सूत कातो, जिससे गरीबी, बेकारी और दुःख-दुर्भाग्य दूर हों।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, १-४-१९३४

१. इस सभामें लगभग १५,००० लोग उपस्थित थे। गांधीजी को एक मानपत्र भी भेंट किया गया था।

३४६. भाषण : सार्वजनिक सभा, सीतामढ़ीमें[1]

[२९ मार्च, १९३४][2]

किसी मुसलमान या ईसाईके स्पर्शको —— चाहे वह उतना ही सत्य-निष्ठ, ईश्वरसे डरनेवाला, पवित्र, बहादुर और आत्मत्यागी हो जितना कोई और —— अशुद्ध मानना[3] क्या आघात पहुँचानेवाली बात नहीं है? जिस प्रकार विभिन्न धर्मोंके माननेवालों की सृष्टि ईश्वरने की उसी प्रकार उन धर्मोंकी सृष्टि भी उसीने की है। फिर मैं अपने मनमें ऐसा विचार कैसे रख सकता हूँ कि मेरे पड़ोसीका धर्म मेरे धर्मसे घटिया है और यह इच्छा कैसे कर सकता हूँ कि वह अपने धर्मको त्यागकर मेरे धर्मका वरण करे? एक सच्चे और वफादार मित्रकी हैसियतसे हम यही कामना कर सकते हैं, ईश्वरसे यही प्रार्थना कर सकते हैं कि वह अपने ही धर्ममें रहकर उसीके अनुसार अपनेको पूर्ण बनाये। ईश्वरके महाभवनमें अनेक भवन हैं और सब-के-सब समान रूपसे पवित्र हैं। विश्वके सभी धर्म मानव-मात्रकी समानता और भ्रातृत्वकी शिक्षा देते हैं, अपनेमें सहिष्णुताके गुणको विकसित करनेकी सीख देते हैं। आज जो 'मुझे मत छुओ' वाली वृत्ति हिन्दू-धर्मको विरूप बना रही है, वह तो उसमें उभर आई एक विकृति है। यह मस्तिष्ककी जड़ता, अन्ध आत्म-वंचनाका द्योतक है। यह धर्म और नैतिकता दोनों धरातलोंपर त्याज्य है। असली अस्पृश्य तो मनमें विद्यमान अशुद्ध विचार हैं —— झूठ, ईर्ष्या और कपट, जो हमारे दैनिक व्यवहारको दूषित करते हैं। हमें कोई अशुद्ध बना सकता है तो यही चीजें बना सकती हैं और हमें बचना चाहिए तो इन्हींसे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २०-४-१९३४

१. प्यारेलाल नैयरके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. गांधीजी २९ मार्चको सीतामढ़ीमें थे।

३. एक मुसलमान राहत-कार्यकर्त्ताने गांधीजी को हिन्दुओं द्वारा गैर-हिन्दुओंके स्पर्श किये भोजन और पानीको अशुद्ध माने जानेकी प्रथाके कारण अपने काममें आनेवाली अड़चनें बताई थीं।

३४७. ईसाको अपने रोजके जीवनमें प्रकट कीजिए

ईसाई धर्म-प्रचारकोंके समक्ष दिये कुमारी लेस्टरके प्रवचनको[१] छापनेमें मुझे कोई हिचक नहीं हो रही है। उन्होंने उसे संकोचके साथ मुझे देते हुए पूछा कि क्या मैं इसे 'हरिजन' के परिशिष्टकी तरह छाप सकता हूँ, ताकि इसकी कुछ प्रतियाँ उन्हें अपने मित्रोंके बीच बाँटनेको मिल जायें और साथ ही — जैसाकि मेरा खयाल है — केवल हरिजनोंकी सेवाको समर्पित इस उपक्रमको भी थोड़े-से पैसे मिल सकें। जब उपर्युक्त बातें कहते हुए मेरे कागज-पत्रोंके बीच उन्होंने अपना यह प्रवचन रख दिया तो मैंने यह निश्चय किया था कि या तो इसे अखबारमें ही छापूँगा या छापूँगा ही नहीं। गैर-ईसाई पाठक दैनिक जीवनमें 'ईसाको प्रकट करने' की बात सुनकर घबरायें नहीं। कुमारी लेस्टरके लिए ईसाका चाहे जो अर्थ हो, ईसा एक जातिवाचक शब्द है, ऐसी विशेषताका सूचक शब्द है जिसे केवल एक ऐतिहासिक व्यक्तिपर ही नहीं घटाना चाहिए। इसलिए हर व्यक्ति अपनी-अपनी रुचिके अनुसार अपने-अपने गुरु और पथ-प्रदर्शकके सम्बन्धमें, या यों कहना अधिक ठीक होगा कि अपने-अपने एकमात्र और कभी निराश न करनेवाले गुरु और पथ-प्रदर्शक सत्यके विषयमें अपनी धारणा निश्चित करके उसे ईसाकी संज्ञा दे सकता है। पाठक मेरी की हुई व्याख्याके अनुसार इस वार्त्ताको पढ़कर देखें तो मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि उन्हें उससे लाभ जरूर होगा। कुमारी लेस्टरकी तरह बहुत-से लोगोंने पहले भी लिखा है। इस वार्त्ताका महत्त्व इस बातमें निहित है कि वे अपने जीवनके प्रत्येक क्षणको इसमें प्रस्तुत की गई अपनी मान्यताओं और शिक्षाओंके अनुसार जीनेका प्रयत्न करती हैं।

> **. . . भाषा वह माध्यम है जिससे मानव एक-दूसरेको गलत रूपमें समझते हैं। शब्द आध्यात्मिक सत्योंका प्रेषण करनेके लिए अपर्याप्त हैं। . . .**
>
> **और न मनुष्यको दलीलोंके बलपर ईसाइयतको अंगीकार करनेको प्रेरित किया जा सकता है।**
>
> **वह कौन-सी चीज थी जिसने उस व्यभिचारिणीको, जो कुछ क्षण पहले तक उसके बारेमें निर्णय करनेको बैठे न्यायाधीशोंका डटकर मुकाबला कर रही थी और उनके प्रति पूरा तिरस्कार प्रकट करते हुए भी उनके निर्णयको स्वीकार करनेके लिए अपने मनको कड़ा कर रही थी, हृदय-परिवर्तनके लिए प्रेरित किया? . . .**
>
> **उसका यह हृदय-परिवर्तन चीजोंको देखनेकी ईसाकी अपनी विशेष दृष्टिका परिणाम था। लोगोंको, पापियोंको देखनेकी उनकी दृष्टिका परिणाम। . . .**

१. यहाँ इसके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

क्या यह सम्भव है कि मनमें सहज बोधसे उतरनेवाली इस चीजको, ईसा मसीहकी मुखाकृतिमें ईश्वरकी दीप्तिके बोधको किसीके अन्तरमें तर्क द्वारा उतारा जाये ?

हम मस्तिष्कको बेशक प्रशिक्षित करें; ज्ञान-विज्ञान और दर्शनकी सभी शाखाओंके मर्मका निरन्तर गहनसे गहनतर अवगाहन करते रहें; हम सत्यके समस्त क्षेत्रका अन्वेषण करनेमें अपनी शक्ति लगा दें। लेकिन, हमें यह बात बराबर याद रखनी चाहिए कि ज्ञानका दुरुपयोग भी बड़ी आसानीसे किया जा सकता है। मानव-समाजको आवश्यकता यह जाननेकी है कि वह कैसे जिये, कि उस आनन्दका, उस शान्तिका अजस्र स्रोत क्या है जो दुनियाके दिये न मिल सकती है और न उसके छीने छिन सकती है। . . .

ईसा मसीहने अपने विचारोंका प्रतिपादन 'आशीर्वचनों' (बिएटिट्यूड्स) जैसे नीति-वाक्योंके रूपमें किया। फिर, उन्हीं विचारोंको वे कथा-कहानियोंके आवरणमें लपेटकर प्रस्तुत करते थे, क्योंकि वे जानते थे कि इस तरह ये विचार हमारे मस्तिष्कमें अधिक अच्छी तरह जम पायेंगे। लेकिन यदि उन्होंने अपने जीवनमें इन सिद्धान्तोंका आचरण न किया होता तो उनकी शिक्षा इतनी सुन्दर रीतिसे प्रस्तुत किये जानेपर भी वे मानव-जीवनको एक नये साँचेमें न ढाल पाते, अनेक संस्थाओंका निर्माण और पुनर्निर्माण न कर पाते और करोड़ों लोगोंके लिए आत्मिक स्वास्थ्य और आनन्दका मार्ग न बन पाते।

हम तो उसी अपरिष्कृत और पिटे-पिटाये आम तरीकेसे काम लेते हैं कि जो हमारा नुकसान करे उसे हम दण्ड देंगे। हम ईसाके "शत्रुसे भी प्रेम करो" के सिद्धान्तपर विशेष ध्यान नहीं देते। लेकिन अपने हत्यारोंके प्रति उनके व्यवहारकी स्मृति हमारे मनमें आती रहती है, उनके ये शब्द हमें याद आते रहते हैं — "हे परमपिता, वे निर्बुद्धि हैं। उन्हें क्षमा करो।"

"जो महान् बनना चाहता है वह सबकी सेवा करे।" उन्होंने इस किंचित् चौंकानेवाले सिद्धान्तकी घोषणा बड़े स्पष्ट शब्दोंमें की। सदियोंसे इसके अर्थको सफलतापूर्वक तोड़ा-मरोड़ा जाता रहा है, तरह-तरहकी व्याख्या करके उसके महत्त्वको नकारा जाता रहा है। लेकिन इस वचनकी यह शक्ति, जो हमें चैन नहीं लेने देती और अन्ततः हमें अपने सुख-सुविधापूर्ण, स्वार्थमय जीवनकी संकुचित परिधिसे बाहर धकेल देती है, उस दृश्यमें निहित है जिसे ईसा-प्रेमियोंने अपने मानसमें मूल्यवान निधिकी तरह प्रतिष्ठित कर रखा है। यह वह दृश्य है जिसमें हम ईसाको एक बर्तनमें पानी लेकर अपने लोगोंमें से, जिनमें कुछ मजदूर भी हैं, प्रत्येकके सामने झुक-झुककर भृत्यकी तरह उनके चरण धोते हुए देखते हैं। . . .

वेरियर एलविनने गोंडोंके बीच जो आश्रम स्थापित किया है उसका एक विशिष्ट महत्त्व है। आश्रमवासी उन लोगोंके बीच रहकर काम करते हैं और उन्हें ईसा मसीहके व्यक्तित्व और शक्तिका बोध करानेके लिए वे सिर्फ सेवा-धर्मपर ही निर्भर रहते हैं। . . .

बो में किसी समारोहके अन्तमें अपने पड़ोसियोंकी भीड़के बीच मेरी उपस्थिति मुझे सत्यके, ईश्वरके जितना निकट ले जाती है उतना और कुछ नहीं। . . .

सुविधाका खयाल करके सिद्धान्तोंका त्याग करते रहनेसे ईसाइयोंकी संवेदनशीलता इतनी कुण्ठित हो गई है कि जब यह धर्म युवा-वर्गके समक्ष प्रस्तुत किया जाता है तो उसे इसमें ऐसा बहुत कम या कुछ भी नहीं मिलता जिसे वह एक चुनौतीकी तरह स्वीकार करे। उनकी प्रवृत्तियाँ तो पैसा बनाने, या खेल-कूदमें रत रहने अथवा निरर्थक आलोचनामें लगे रहनेकी होती हैं; और इनमें से कोई भी प्रवृत्ति बहुत रचनात्मक नहीं है।

आज दुनियाकी जो स्थिति है उसमें तो वह ज्यादा दिन नहीं चल सकती। एक नाजुक-सा सन्तुलन कायम तो रखा जा रहा है, लेकिन वह सन्तुलन ऐसा है कि तनिक-सी चूक होते ही विश्व महाविनाशका ग्रास बन जायेगा। युद्धको तभी टाला जा सकता है जब शान्तिप्रिय लोग भी उतनी ही शक्ति और उत्साहसे काम करें जितनी शक्ति और उत्साहके साथ शस्त्रीकरण किया जा रहा है। जिसे साम्यवादी भौतिकवाद कहा जाता है उसपर हम ईसाई लोग तभी विजय प्राप्त कर सकते हैं जब हम न्यायोचित समाज-व्यवस्थाके अपने प्रयत्नमें उतनी ही सेवा और बलिदानके लिए तत्पर रहेंगे जितनी सेवा और बलिदान रूसमें साम्यवादी दलके किसी सदस्यको करना पड़ता है।

जो प्रेम हमें लोगोंकी सेवा करनेकी प्रेरणा देता है, वह चूँकि उसी प्रेमका अंश है जिसकी अनुभूति हम ईश्वरके प्रति करते हैं, इसलिए हम कष्ट-सहनसे जी कैसे चुरा सकते हैं?

जब मनुष्यमें ईश्वरत्वका अवतरण हुआ
उसने सत्ताके अत्याचारको सहा;
जघन्य अपराधियोंको दी जानेवाली मृत्युका वरण किया किन्तु
अपनी खोजमें अकेला प्रवृत्त रहा
और ईश्वरने इतना पर्याप्त समझा, इतनेसे सन्तोष माना।

शायद यह हममें से हरेकके लिए . . . बहुत अच्छी बात है कि हमें एक निर्धन इलाकेमें रहनेका सौभाग्य प्राप्त है, जहाँके लोगोंमें वह सहिष्णुता है जो प्रतिदिन जीवनकी कठोर वास्तविकता, मृत्यु और क्षुधाका सामना करते-करते मनुष्यमें आ जाती है; जहाँ ऐसी उदारता शायद ही देखनेको

मिले जिसपर कोई चकित रह जाये, क्योंकि वह यहाँके लिए सर्वथा सहज-स्वाभाविक वस्तु है . . . और कष्ट, प्रेम और सेवा के रूपमें ईसाकी अवतारणा प्रतिदिन होती है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-३-१९३४

३४८. मन्दिर-प्रवेश विधेयक

हरिजन सेवक संघके बम्बई प्रान्तीय बोर्डके अवैतनिक मन्त्रीने सचिव, विधि-विभाग, भारत सरकार, नई दिल्लीको निम्न पत्र भेजा है:

> विधान-सभाके आदेशके अधीन लोगोंकी राय लेनेके लिए प्रचारित मन्दिर-प्रवेश बाधा-निवारण विधेयक (टैम्पल ऐंट्री डिजैबिलिटीज रिमूवल बिल) पर हरिजन सेवक संघके बम्बई प्रान्तीय बोर्डके विचार मैं सादर सूचित कर रहा हूँ।
>
> प्रारम्भमें ही मैं सादर निवेदन करता हूँ कि मेरे बोर्डके सभी सदस्योंकी इस विधेयकके लक्ष्यों और उद्देश्योंके साथ पूरी सहानुभूति है और उनका विचार है कि इसे शीघ्रातिशीघ्र कानूनका रूप दिया जाये। यदि सरकार तथा विधानमण्डल द्वारा अनेक बार दिये गये इस वचनको पूरा करना है कि हरिजनोंको आज जो बाधाएँ और कठिनाइयाँ झेलनी पड़ती हैं उनको मिटानेके लिए हर सम्भव कदम उठाया जायेगा, तो हमारा दृढ़ विश्वास है कि इस विधेयकमें जैसा कानून प्रस्तावित किया गया है उस ढंगके कानूनकी प्रबल आवश्यकता है।
>
> प्रस्तावित कानूनके विरुद्ध जो मुख्य आपत्तियाँ हैं उनमें से एक यह है कि इसमें जोर-जबरदस्तीकी कुछ बात है। आपत्ति करनेवालों का कहना है कि सरकार अथवा विधानमण्डलको किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों या धार्मिक संस्था को ऐसा काम करनेपर मजबूर नहीं करना चाहिए जो तथाकथित धार्मिक रूढ़ि-रिवाजोंके खिलाफ है। यहाँ इस बातपर विचार कर लेना समीचीन होगा कि ये रूढ़ि-रिवाज क्या हैं और हिन्दू-समाजमें ये कैसे विकसित हुए हैं।
>
> किसी समय — आज कोई नहीं कह सकता कि कब — हिन्दू-समाजके कुछ हिस्सों को वर्जित वर्ग माननेकी प्रथा चल पड़ी और उस प्रथाके विकास-क्रममें वर्जित वर्गोंके लोगोंको हिन्दू होनेके नाते उनके जो चन्द अधिकार थे उनसे वंचित कर दिया गया। अब उनके मन्दिर-प्रवेशपर इस आधारपर आपत्ति की जाने लगी कि वे गन्दे हैं और उनके स्पर्श या छाया-मात्रसे मन्दिरोंमें दर्शनार्थ जानेवाले हिन्दू भक्त अपवित्र हो जाते हैं। इस तरह कालक्रमसे वर्जित वर्गोंके

हिन्दुओंका मन्दिर-प्रवेश बिलकुल निषिद्ध कर दिया गया। कालान्तरमें यह चीज रूढ़ि-रिवाज मानी जाने लगी और इसे कानूनी समर्थन भी प्राप्त हो जानेके कारण हिन्दू-समाज, आज उसके विचार चाहे जैसे हों, अस्पृश्योंको मन्दिरोंमें न आने देनेके लिए बाध्य है।

तो वास्तविक स्थिति तो यह है कि जोर-जबरदस्तीकी बात पहलेसे ही मौजूद है — सो इस तरह कि ब्रिटिश अदालतोंने उन रूढ़ि-रिवाजोंको मान्यता दे रखी है जिनके अनुसार वर्जित वर्गोंके लोगोंको अस्पृश्य माना गया है और उन्हें मन्दिर-प्रवेशके अधिकारोंसे वंचित कर दिया गया है। मद्रासमें १९२७ के मद्रास धर्मस्व अधिनियम २ के द्वारा ऐसी रूढ़िको बहुत स्पष्ट शब्दोंमें स्वीकार किया गया है। उस अधिनियमका खण्ड ४० उसे पूर्ण कानूनी समर्थन प्रदान करता है।

समय और परिस्थितियोंमें परिवर्तन आने और दिन-प्रतिदिन विचारोंका विकास होनेके साथ-साथ अनेक रूढ़ि-रिवाजोंमें भारी परिवर्तन हुए हैं। कहीं-कहीं सरकारने प्रमुख हिन्दुओंके विचारपर भरोसा करके हिन्दुओंके बहुमतके विरोधके बावजूद सुप्रतिष्ठित तथा सुमान्य रूढ़ि-रिवाजोंके खिलाफ कानून बनानेमें कोई हर्ज नहीं देखा है। इसमें उसका मंशा हिन्दू-समाजको आधुनिक विचारोंके अनुकूल ढालनेका रहा है। कहीं-कहीं, जहाँ कानूनी समर्थन पाना आवश्यक नहीं था, ऐसा भी हुआ है कि हिन्दू-समाजके बहुमतने इन रूढ़ियोंको बिलकुल तोड़ दिया है और कहीं-कहीं सरकारसे इन रूढ़ियोंको समाप्त करवानेके लिए कानून पास करवाये हैं।

इसलिए विशुद्ध कानूनी और तकनीकी दृष्टिकोणको छोड़ दें तो यह दलील देना कि इस विधेयकमें जोर-जबरदस्तीकी बात है और इसका कोई विचार ही नहीं करना कि वह जबरदस्ती किस बातमें निहित है और किस प्रकार यह जबरदस्ती पहलेसे मौजूद एक बड़ी जबरदस्तीको मिटानेके लिए की जानी है, ठीक नहीं होगा। अभी तो न्यासियों और भोक्ताओंको हरिजनोंको हिन्दू-मन्दिरों में देव-दर्शन करनेसे मजबूरन रोकना ही पड़ता है। अगर आजके हिन्दुओंकी आम राय यह हो कि जबरदस्तीकी इस बात को खत्म किया जाये और यह तय करनेकी छूट स्वयं हिन्दुओंको दे दी जाये कि वर्जित वर्गोंके लोगोंको किस प्रकार हिन्दू-समाजके सदस्योंकी तरह मान्यता दी जाये और किस तरह उन्हें दर्शनके अधिकार या सुविधाएँ प्रदान की जायें तो ऐसी परिस्थितियाँ अवश्य उत्पन्न कि जानी चाहिए जिससे इस मामलेमें जरूरी कार्यवाही करनेका रास्ता खुल जाये। इसका मतलब जरूरी तौरपर यही नहीं होगा कि विधेयक पास हो जाने पर वर्जित वर्गोंके सभी लोग दर्शनके अपने अधिकारोंको कार्य-रूप देनेके लिए सभी मन्दिरोंपर उमड़ पड़ेंगे। जब रुकावटें हटा दी जायेंगी तब

तो बात हिन्दुओं और वर्जित वर्गोंके लोगोंके बीच आपसमें ठीक समझौता-व्यवस्था करनेकी हो जायेगी। फिर वे आपसमें मिल-बैठकर कोशिश करेंगे कि इस विषयको इस तरहसे कैसे निबटाया जाये जिससे उनमें कोई आपसी झगड़ा न हो और वे देशके दण्ड-विधानकी धाराओंकी परिधिमें न आ जायें। यह विचार गलत है कि इस विधेयकके पास हो जानेसे हिन्दू-धर्मके सभी सिद्धान्त और मान्यताएँ अस्त-व्यस्त हो जायेंगी। सच तो यह है कि विधेयकके पास हो जानेके बाद भी वर्जित वर्गोंके लोग हिन्दुओंकी सद्भावना और मूक सम्मतिके बिना मन्दिरोंमें देव-दर्शन नहीं कर पायेंगे। देव-दर्शनके निमित्त वर्जित वर्गोंके लोगोंके मन्दिरोंमें प्रवेश करनेसे हिन्दुओंको कोई खास चिढ़ नहीं है, यह इसीसे स्पष्ट है कि बहुत कड़े और रूढ़िगत नियमोंका पालन करनेवाले महत्त्वपूर्ण मन्दिरोंके द्वार भी सालके कुछ दिन सभी वर्गोंके हिन्दुओंके लिए, जिनमें वर्जित वर्गोंके हिन्दू भी शामिल हैं, खोल दिये जाते हैं। देव-दर्शनके लिए मन्दिर जाना तो हर हालतमें किसीकी स्वेच्छापर निर्भर होता है। कुछ परिस्थितियोंमें और कतिपय अवसरोंपर तथाकथित उच्च वर्गके हिन्दुओंको भी मन्दिरोंके कुछ खास हिस्सोंमें नहीं जाने दिया जाता। कभी-कभी ऐसे हिन्दू खुद ही कुछ नियमोंका पालन करते हुए मन्दिरमें जाना उचित नहीं मानते, क्योंकि वे मानते हैं कि अमुक अवसरपर वे ऐसी स्थितिमें हैं कि उनके मन्दिर जानेसे मन्दिर तथा दूसरे दर्शनार्थी भी अपवित्र हो जायेंगे। इसलिए जहाँतक इस विधेयकका सम्बन्ध है, इसमें जबरदस्तीकी जितनी बात हो सकती है, वह पहलेसे ही मौजूद उस जबरदस्तीकी तुलनामें सर्वथा नगण्य है जो कुछ खास परिस्थितियोंके अधीन, जिनका अस्तित्व अब मिट चुका है, कतिपय रूढ़ि-रिवाजोंको मान्यता देकर कायम की जा रही है।

रूढ़ि-रिवाजोंके मिटाये जानेकी कठिनाई बेशक बहुत बड़ी है, क्योंकि अधिकांश मामलोंमें कोई विधिवत निर्मित न्यास भी नहीं है। सामान्यतया तो न्यासियोंको यह तय करते समय कि किसको क्या अधिकार दिया जाना चाहिए, समझदार और दुनियादार आदमियोंकी तरह अपने विवेकके उपयोगका अधिकार होना ही चाहिए। लेकिन यहाँ रूढ़ि-रिवाजोंके अनुसार प्रचलित नियम आड़े आते हैं। नये न्यास कायम नहीं किये जा सकते। विधिवत निर्मित न्यास न होनेसे रूढ़ि-रिवाजोंपर ही निर्भर रहना पड़ता है और न्यासियों या भोक्ताओं, अर्थात् मन्दिर जानेवाले हिन्दुओंके लिए भी अपने विवेकके प्रयोगकी कोई गुंजाइश नहीं रहती। इस विधेयकके पास हो जानेसे न्यासियोंको — और जहाँ जरूरी होगा वहाँ मन्दिरोंका उपयोग करनेवाले आम लोगोंको भी — अपने विवेकके प्रयोगकी सत्ता मिल जायेगी और तब वे बहुमतकी स्पष्ट इच्छासे तय कर सकते हैं कि किसी मन्दिरका उपयोग करनेवालोंमें अन्य किन लोगोंको

शामिल किया जा सकता है और सो भी मौजूदा अधिकारोंको कोई आँच पहुँचाये बिना। तो कुल मिलाकर स्थिति यह हुई कि आज मन्दिरोंके कर्त्ता-धर्त्ता लोगोंपर जो विवशता बनी हुई है और फलतः उनके मार्गमें जो बाधाएँ कायम हैं उन्हींको हटाना, उनके मार्गको प्रशस्त करना और उन्हें परिस्थितियोंके अनुरूप तथा जिन लोगोंका सीधा सम्बन्ध हो उनकी इच्छाके अनुसार काम करनेकी सत्ता पुनः प्रदान करना ही इस विधेयकका उद्देश्य है। इसमें, जैसी कि कुछ क्षेत्रोंमें आशंका व्यक्त की गई है, न्यासियोंको न्यासके नियम भंग करनेका निर्देश नहीं दिया गया है। सच तो यह है कि सारी कठिनाईकी जड़ विधिवत् निर्मित न्यासोंका अभाव है। यह विधेयक सिर्फ एक ऐसी स्थिति उत्पन्न करेगा जिसमें न्यासीगण समझदार लोगोंकी हैसियतसे और बहुमतकी रायसे वर्जित वर्गोंके लोगोंको हिन्दुओंको मान्य शर्तों और परिस्थितियोंके अधीन दर्शन आदिकी सुविधा दे सकते हैं।

तो इस तरह यदि इस विधेयकमें जबरदस्तीकी कोई बात है भी तो वह वास्तवमें पहलेसे मौजूद कहीं अधिक बड़ी जबरदस्तीको खत्म करनेके लिए ही है।

दूसरी आपत्तिका सम्बन्ध इस बातसे है कि क्या यह विधेयक किसी भी व्यक्तिके धार्मिक आचार या अन्तरात्माके प्रति हस्तक्षेप करता है। मेरे बोर्डके विचारसे यह देखते हुए कि वर्षके कुछ त्योहारोंके खास दिन वर्जित वर्गोंके लोगोंके मन्दिरोंमें प्रवेश करनेपर हिन्दू लोग कोई आपत्ति नहीं करते और इसे किसी उच्च वर्गके हिन्दूके धार्मिक आचार या अन्तरात्माके प्रति हस्तक्षेप करना नहीं माना जाता, वर्जित वर्गोंके लोगोंको वर्षके अन्य दिनोंके लिए भी यह सुविधा दे देनेका मतलब, सारतः देखें तो, किसी उच्चवर्गके हिन्दूके धार्मिक आचार या अन्तरात्माके प्रति हस्तक्षेप करना नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त मन्दिर जानेमें प्रत्येक हिन्दूको तरह-तरहके प्रथागत प्रतिबन्धों और हस्तक्षेपको तो स्वीकार करना ही पड़ता है और तब कोई भी धर्मिष्ठ हिन्दू इसकी शिकायत नहीं करता, क्योंकि किसी अवसर-विशेषपर मन्दिरमें जानेका उसका एकमात्र उद्देश्य दर्शन और पूजा करना होता है, और जिस अनुज्ञापक कानूनको विधि-पुस्तकमें स्थान दिलानेका प्रयत्न किया जा रहा है उससे उस उद्देश्य-की पूर्त्तिमें किसी प्रकारका हस्तक्षेप नहीं होता। किन्तु, इस सम्बन्धमें वर्तमान रूढ़ि-रिवाजोंको जो कानूनी मान्यता प्राप्त है वह मौजूदा स्थितिमें किसी प्रकारके परिवर्तनके मार्गमें एक ठोस बाधा या रुकावट बनकर खड़ी है और इसी कारणसे यह कानून बनाना जरूरी हो गया है — सो इसलिए नहीं कि हिन्दुओंके धार्मिक रिवाजों या उनकी अन्तरात्मापर कोई चोट पहुँचाई जाये या उनके विपरीत कोई स्थिति उत्पन्न की जाये, बल्कि इसलिए कि हिन्दू-मन्दिरोंके

कर्त्ता-धर्त्ता लोगोंको यह अधिकार दिया जाये कि वे वर्जित वर्गोंके लोगोंको हिन्दुओंके रूपमें उनका समुचित दर्जा दे सकें और इस प्रकार हिन्दू-समाजको टूटनेसे बचा सकें।

तो प्रभावतः देखें तो इसका मतलब अबतक पूजाकी जो रीति कायम रही है उसमें कुछ अन्तर करना है, किन्तु ऐसा अन्तर किया जाना किसीके सहज या परम्परासिद्ध अधिकारमें हस्तक्षेप नहीं माना जा सकता है। सच तो यह है कि यह ऐसा अधिकार है जो सामान्य स्थितिमें, हिन्दू-समाजके बृहत्तर हितों या कतिपय वर्गोंके हितोंका ध्यान रखकर, परिवर्तित कर दिया जाता, लेकिन बाधा यह है कि मौजूदा रूढ़ि-रिवाजोंको कानूनी मान्यता प्राप्त है। इसलिए हस्तक्षेप शब्दका यहाँ जैसा प्रयोग हुआ है उसके अनुसार वह किसी व्यक्ति या व्यक्तियोंके परम्परासिद्ध अधिकारोंपर आपत्तिजनक ढंगसे हाथ डालना नहीं है और न इसका वैसा कोई मतलब ही निकलता। उसका मतलब तो केवल इस तथ्यको बताना है कि जो स्थिति लानेका प्रयत्न किया जा रहा है उससे मौजूदा स्थितिमें कुछ अन्तर पड़ेगा, जिसे तकनीकी दृष्टिसे हस्तक्षेप भी कहा जा सकता है।

अनुभवसे ज्ञात होता है कि किसी हिन्दू-मन्दिरके न्यासियों तथा पूजकोंकी इच्छाके बावजूद आंग्लन्यास कानून और भारत के उच्च न्यायालयोंके सुविदित निर्णयोंके कारण कोई भी सार्वजनिक हिन्दू-मन्दिर हरिजनोंके लिए अपने द्वार नहीं खोल सकता। इसीलिए मेरे बोर्डके विचारसे भारतके उच्च न्यायालयों तथा प्रिवि कौंसिल द्वारा रूढ़ि-रिवाजोंको दी गई मान्यताके कारण ऐसा कानून बनाना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि इन न्यायाधिकरणोंके निर्णयोंके परिणामोंका निवारण किसी और तरह किया ही नहीं जा सकता। अब जो कानून बनानेकी कोशिश की जा रही है वह अनुज्ञापक कानून है और आज दण्ड-विधानकी जो धाराएँ लागू हैं उनके रहते हुए इस कानूनपर, इस सवालसे जिनका गहरा सम्बन्ध है, उनकी — अर्थात् सवर्ण हिन्दुओंकी — सद्भावनाके बिना वास्तवमें अमल नहीं किया जा सकता।

उपर्युक्त विचार विशुद्ध वैधानिक दृष्टिकोणसे व्यक्त किये गये हैं। वर्जित वर्गोंके लोगोंके लिए मन्दिरोंके द्वारोंका खोला जाना जबरदस्त सार्वजनिक तथा व्यावहारिक महत्त्वका प्रश्न है। यदि किसी स्थानके हिन्दुओंका एक अच्छा-खासा बहुमत वर्जित वर्गोंके लोगोंको वहाँके मन्दिरोंमें प्रवेश देनेके पक्षमें है तो ऊपर जिस जबरदस्तीकी बातका जिक्र किया गया है वह प्रस्तावित कानूनके मार्गमें बाधक नहीं होनी चाहिए, क्योंकि इतनी जबरदस्ती तो सभी मानवीय कार्य-व्यापारोंके संचालनमें देखनेको मिलेगी।

किन्तु, इस विधेयकमें निहित जबरदस्ती, जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है, उस ढंगकी है जिसे 'पंचोंका कथन ईश्वरकी बात' की श्रेणीमें रखा जा सकता है और किसी जन-समुदायसे उसके बहुमतकी इच्छाके अनुसार आचरण करनेको कहना वास्तवमें या अंशतः भी जबरदस्ती नहीं माना जा सकता। इस विधेयकका परिणाम वास्तवमें न्यासियोंपर लादी गई विवशताको हटाना होगा — इस विवशताको कि किसी रूढ़ि-रिवाजको यदि मात्र न्यायिक मान्यता मिल गई है तो भले ही बहुमत उसके पक्षमें नहीं हो, न्यासियोंको तो उसके अनुसार बरतना ही पड़ेगा। आज जैसा कानून मौजूद है, उसका उपयोग तो किसी मन्दिरमें पूजा करनेवाला केवल एक सवर्ण हिन्दू भी न केवल मन्दिर के न्यासियोंपर, बल्कि हरिजनोंको वहाँ आकर पूजा करनेकी सुविधा देनेको इच्छुक उस मन्दिरमें पूजा करनेवाले शेष सभी लोगोंपर भी अपनी मर्जी थोपनेके लिए कर सकता है। इस विधेयकका असली नतीजा सवर्ण हिन्दूको उस शोषण-चक्रसे वंचित करना है जो न्यायालयोंके निर्णयोंने उसे दे रखा है। दूसरे शब्दोंमें, यह विधेयक सवर्ण हिन्दूको न्यायालयोंके निर्णयों द्वारा प्रदत्त उस सत्तासे वंचित कर देगा जिसके बलपर वह हरिजनोंको उनपर थोपी गई निर्योग्यताओंको सिर-आँखों लेनेपर सदाके लिए विवश कर सकता है। यद्यपि प्रस्तावित कानूनमें सिद्धान्ततः कुछ जबरदस्तीकी भी बात है, किन्तु यदि यह विधेयक कानून बन गया तो व्यवहारतः यह किसी भी मन्दिरमें पूजा करनेवालों को लोक-प्रचलित विचारों और बहुमतकी इच्छाके अनुसार अपनी पूजाकी व्यवस्था करनेकी स्वतन्त्रता देगा।

उपर्युक्त कारणोंसे मेरे बोर्डका यह दृढ़ मत है कि न केवल प्रस्तावित कानूनके उद्देश्य किसी भी तरहसे आपत्तिजनक नहीं हैं, बल्कि जिस तरीकेसे उन उद्देश्योंको प्राप्त करनेकी इसमें तजवीज है वह ऐसा है जिससे लोगोंको कमसे-कम असुविधा और कष्ट होगा और सामाजिक शान्तिमें कमसे-कम बाधा पड़ेगी।

इसलिए बोर्डके सभी सदस्य निवेदन करते हैं कि विधान-सभा प्रस्तावित कानूनके ढंगका कानून जल्दीसे-जल्दी पास करेगी। दलित वर्गोंके प्रति सरकार तथा विधानमण्डलका जो कर्त्तव्य है, उसकी दृष्टिसे तो यह आवश्यक है ही, साथ ही समस्त हिन्दू-समाजके हितके लिए भी जरूरी है।

पाठकोंको यह बताकर कि इस निवेदनको बम्बईके एक प्रसिद्ध वकीलने तैयार किया है, मैं किसी रहस्यका उद्घाटन नहीं कर रहा हूँ। इसमें वैधानिक स्थितिपर बड़े सुयोग्य ढंगसे और वस्तुपरक दृष्टिकोणसे विचार किया गया है। लेकिन इसमें भी वे कमियाँ रह गई हैं जो विशुद्ध कानूनी दृष्टिकोणसे तैयार किये गये किसी भी दस्तावेजमें रहती हैं।

बोर्ड चाहता तो कानूनी दलीलके साथ-साथ धार्मिक और नैतिक दलीलें भी पेश कर सकता था। कारण, यह निवेदन किसी न्यायालयसे नहीं, बल्कि सरकारसे किया गया है और उसके माध्यमसे विधान-सभासे भी। इन दोनोंके लिए कानूनसे बाहरके मामलोंकी ओर ध्यान देना आवश्यक है। और ऐसे मामलोंपर उन्होंने ध्यान दिया भी है। जो संस्थाएँ कानूनी प्रक्रियाओं और दूसरी कानूनी मर्यादाओंसे बिलकुल बँधी नहीं होतीं उनके लिए कानूनकी परिधिसे बाहरकी ऐसी बातें अकसर निर्णायक सिद्ध होती हैं।

तो मेरे विचारसे बोर्ड इस दस्तावेजमें अपने संघटनके स्वरूप और हिन्दू लोकमतका प्रतिनिधित्व करनेकी अपनी क्षमताकी चर्चा कर सकता था। वह विधान-सभा को बता सकता था कि यरवडा समझौता और हरिजनोंके प्रति सरकारकी व्यापक नीति, दोनों ही दृष्टियोंसे यह विधेयक आवश्यक है।

बम्बईने जो रास्ता दिखाया है उसका अनुगमन दूसरे प्रान्तीय बोर्ड भी बखूबी कर सकते हैं। वे इस प्रश्नपर अपने-अपने प्रान्तोंकी परिस्थितियोंके सन्दर्भमें विचार कर सकते हैं। बस उन्हें इतना खयाल बराबर रखना चाहिए कि हिन्दू लोकमतके साक्ष्यको वह बढ़ाकर नहीं, घटाकर ही प्रस्तुत करें।

अब यह सवाल उठाया जा सकता है कि हरिजनोंके निमित्त किये अपने दौरेमें प्रस्तावित विधेयकके बारेमें लोकमत जाननेकी कोशिश मैंने खुद क्यों नहीं की। दौरेके प्रारम्भिक चरणमें यह प्रश्न मेरे मनमें उठा था और तब मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा था कि अगर मैं लोगोंके मत लूँ तो बहुत सम्भव है कि वे केवल इसी कारणसे इसके पक्षमें मत दें कि मैं उनसे मत माँग रहा हूँ। जहाँ श्रद्धासे काम लेनेका उचित प्रसंग हो वहाँ लोगों द्वारा सहज श्रद्धाके साथ दिया गया सहयोग प्राप्त करनेमें मैं कोई हर्ज नहीं देखता। इस प्रसंगमें श्रद्धाके आधारपर बरतनेसे काम चलनेवाला नहीं था। लोगोंको एक बहुत ही प्राविधिक प्रश्नपर निर्णय करना था, जिसके लिए उनमें संसदीय प्रक्रिया तथा कार्य-कलापका ज्ञान होना आवश्यक था। सभाओंमें मेरे सामने जो विशाल जनसमुदाय उपस्थित होते थे उन्हें इस तरहका प्रशिक्षण देनेके लिए मेरे पास न तो समय था और न वैसा करनेकी मेरी इच्छा ही थी। और यदि मैंने वैसा करनेकी कोशिश की होती तो मैं अपने उस उद्देश्यसे बहुत दूर जा पड़ता जिसके बारेमें मैंने यह दावा किया था कि यह विशुद्ध रूपसे धार्मिक है। फिर, यदि मैं मन्दिर-प्रवेश विधेयकके औचित्य-अनौचित्यके बारेमें मत लेना आरम्भ कर देता तो सनातनियोंके साथ मेरे तीव्र विवादमें पड़ जानेका खतरा था। यह तो मैं कभी करना ही नहीं चाहूँगा। इसलिए इस प्रश्नको मैंने अपने श्रोताओं के मतार्थ जान-बूझकर प्रस्तुत नहीं किया।

इसलिए इस प्रश्नपर मैं जब भी बोला, अपना यह विचार व्यक्त करके ही सन्तोष माना कि यदि १९३२ में दिये गये वचनको पूरा करना है तो इस कानूनकी माँग करना प्रत्येक हिन्दू सुधारकका कर्त्तव्य है। लेकिन अगर आम सवर्ण हिन्दुओंके मत नहीं लिये जाने हैं तो फिर किया क्या जाना है? मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा

हूँ कि इस सवालपर समुचित ढंगसे तो वही लोग मत दे सकते हैं जो संसदीय प्रक्रिया तथा कार्य-कलापोंसे भली-भाँति परिचित हैं। वही लोग इस चीजको समझ सकते हैं कि किन्हीं विशेष परिस्थितियोंमें किस प्रकार केवल धार्मिक निरपेक्षता तथा अन्तरात्मा-की स्वतन्त्रताकी रक्षा के लिए, जिसपर सनातनी लोगोंका आग्रह है—और वह आग्रह उचित ही है—ऐसा कानून नितान्त आवश्यक हो सकता है। ऐसी संस्थाएँ प्रथमतः तो वकीलोंके संघ थे, फिर शास्त्रियोंकी समितियाँ, हरिजन सेवक बोर्ड तथा अन्य प्रातिनिधिक संस्थाएँ, जिनमें ऐसे मामलोंमें उचित ढंगसे कुछ कहनेकी सामर्थ्य हो। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि जिन संस्थाओंकी अस्पृश्यता-निवारणमें रुचि है और जिन्हें यह अधिकार है कि उनकी बात सुनी जाये, ऐसी सभी संस्थाएँ जनता तथा अधिकारियोंको अपने-अपने मतोंसे अवगत करा देंगी।

किन्तु, अनिच्छुक जनतापर इस विधेयकके थोप दिये जानेकी मेरी कोई इच्छा नहीं है। फिर भी, जबतक इस प्रश्नपर तर्कपूर्वक उचित सार्वजनिक चर्चा नहीं की जाती और समुचित प्रचार-निवेदन नहीं किया जाता तबतक न तो जनताको इस विषयका सही ज्ञान ही प्राप्त हो सकता है और न उसका मत ही जाना जा सकता है। यदि अन्तमें यह पाया जाये कि शिक्षित-प्रबुद्ध सवर्ण हिन्दुओंका मत इस विधेयकके विरुद्ध है तो मैं तो यह नहीं चाहूँगा कि यह विधेयक विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायोंके सदस्योंके बहुमतसे पास कर दिया जाये। मेरा कहना तो सिर्फ इतना ही है कि जिन हिन्दुओंकी मन्दिरोंमें श्रद्धा है उन्हें यह अधिकार है और उनका यह कर्त्तव्य है कि जहाँ-कहीं काफी बड़ा बहुमत यह चाहता हो कि अमुक हिन्दू-मन्दिरके द्वार हरिजनोंके लिए खोल दिये जायें वहाँ वे अपने मतको स्वीकार करायें। और अगर कोई कानूनी बाधा है—और वकीलोंके अनुसार ऐसी बाधा है—तो वह तो कानून बनाकर ही दूर की जा सकती है और इसलिए इसी तरहसे दूर की जानी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-३-१९३४

३४९. भाषण : कार्यकर्त्ताओंकी सभा, सीतामढ़ीमें

३० मार्च, १९३४

गांधीजी ने कहा, मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि आप लोगोंको, आपके, सामने जो काम हो, उसीकी परवाह करनी चाहिए। अगर आप सेवा करना चाहते हैं तो आपको राजनीतिको भुला देना चाहिए। कुछ समयके लिए आपको कांग्रेसका नाम भूल जाना चाहिए। कांग्रेसको काम करना है, नाम नहीं कमाना है। झण्डे फहराने या नारे लगानेसे नाम-यश नहीं मिलता। कामसे ही प्रतिष्ठा मिल सकती है और फिर उस प्रतिष्ठाको कायम रखनेके लिए भी प्रयत्न करना पड़ता है। सरकारको कष्टमें पड़े लोगोंकी सहायता करनी है।

लेकिन हम सरकारको इसके लिए मजबूर नहीं कर सकते। हमें उसकी ओरसे दी जानेवाली सहायतामें बाधक भी नहीं बनना चाहिए। प्यासेको जिस हाथसे भी पानी मिलेगा, पियेगा ही, भूखेको जिस हाथसे भी खाना मिलेगा, खायेगा ही। तो उन्हें हम सबसे सहायता लेने दीजिए। हमें अपना राहतका काम करते हुए सरकारसे सहयोग करना चाहिए। देना-लेना ठीक चल रहा है, इसका ध्यान रखना हमारा धर्म है। हमें तत्काल अधिकसे-अधिक कुएँ साफ करने और खोदने हैं, लेकिन कार्य-कर्त्ताओंकी संख्या कम है।

यहाँकी आबादी बहुत बड़ी है और प्रत्येक व्यक्तिके पास पर्याप्त काम नहीं है। हमें स्थानीय लोगोंके बीचसे ही कार्यकर्त्ता चुनने हैं। बाहरके हजारों कार्यकर्त्ता यहाँ आकर कुछ नहीं कर सकते। कुएँ खोदना खतरे और मेहनतका काम है। कार्य-कर्त्ता स्थानीय ही होने चाहिए। अगर वे मजदूरी या वेतन चाहें तो हमें देना है। अगर इस कामकी कोई भी, यहाँतक कि राजेन्द्रबाबू भी, जो मेरे साथी कार्यकर्त्ता हैं, उपेक्षा करें तो यह अच्छी बात न होगी। अगर हम यह नहीं कर पाते तो लोगोंसे कोषमें चन्दा देनेको कहनेका भी हक हमें नहीं होगा। पैसा तभी आयेगा जब बिहार अपना कर्त्तव्य चुस्तीसे पूरा करता रहेगा। जिसको लोगोंका विश्वास और सम्मान प्राप्त नहीं है वह कुछ नहीं पा सकता, एक कौड़ी भी नहीं। राजेन्द्रबाबूकी प्रतिष्ठा सारे देशमें है और भारतके प्रत्येक हिस्सेसे उन्हें पैसा भेजा गया है, क्योंकि उन्हें उनपर पूर्ण विश्वास है। राजेन्द्रबाबूके पास कार्यकर्त्ताओंका एक अच्छा दल है, जिससे इस बातमें कोई शंका नहीं रह जाती कि लोगोंके पैसेका सही उपयोग किया जायेगा। इसीलिए वे देते हैं। आपको उत्तरोत्तर अधिकाधिक कार्यकर्त्ता तैयार करने हैं। जिन कुओंको नुकसान पहुँचा हो उनके आँकड़े आप तैयार करें। फिर हम यह तय करेंगे

कि हम उनमें से कितनेकी मरम्मत कर सकते हैं और कितने नये दे सकते हैं। अगर हमारी लापरवाहीके कारण एक व्यक्तिको भी कष्ट उठाना और प्यासा रहना पड़ता है तो यह बहुत दुःखद बात होगी। लोग भोजनके बिना तो कुछ दिन चल सकते हैं, लेकिन पानीका अभाव तो उन्हें जल्दी ही मार देगा। मुझे बोअर युद्धका अनुभव है। उसमें लोगोंको जहाँ जैसा पानी मिल जाता था, उसीको पी लेते थे। मैंने भर-तुआ चौर का पानी देखा है। वह जहरीला है। मैं एक नावमें बैठकर उस पानीको देखनेकी कोशिश कर रहा था। वह कितना गन्दा और जहरीला था। लोग उसे कैसे पी सकते हैं? अब उनके सामने डॉक्टरी सहायताका भी सवाल है। बाहरी डॉक्टरोंसे काम नहीं चल सकता। आपको स्थानीय रूपसे डॉक्टरी सहायताकी व्यवस्था करनी है। कार्यकर्त्ताओंको एकत्र कीजिए, दूसरी संस्थाओं तथा प्रशासनसे सहयोग करते हुए कुशलतासे काम कीजिए। स्थानीय सरकारी अधिकारियोंसे सलाह कीजिए। जैसा वे छपरामें कर रहे हैं, उसी तरह अगर वे बिना किसी दुराव-छिपावके काम लें तो वे बहुत अधिक सहायता कर सकते हैं। छपरामें जिला-मजिस्ट्रेट तथा हमारे कार्यकर्त्ताओंके बीच सहयोग चल रहा है और वे सब मिल-जुलकर बहुत अच्छी तरह काम कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट ४-४-१९३४

३५०. भाषण : प्रार्थना-सभा, सीतामढ़ीमें

[३० मार्च, १९३४][1]

यह बड़ा भयंकर भूकम्प था। इतिहासमें जितने भूकम्पोंका उल्लेख मिलता है, यह उन सबमें शायद सबसे अधिक विनाशकारी था। इस बर्बादीसे उबरनेकी हमें कोशिश करनी चाहिए। लेकिन अगर हम अपने ढह गये घरोंको फिरसे बनाकर, भर गये कुओंको खोदकर और रेत भर गये खेतोंको साफ करके ही सन्तोष मान लेते हैं और इससे कोई नैतिक सबक नहीं सीखते तो ऐसा नहीं माना जायेगा कि हमने करने लायक पर्याप्त काम कर लिये हैं। अगर हम तमाम भौतिक क्षतिकी पूर्त्ति कर लेते हैं और जरूरतके करोड़ों रुपये प्राप्त कर लेते हैं तो भी वह किसी कामका नहीं होगा। वस्तु तो कुछ नहीं है; स्थायी तो आत्मा ही है। सीता-राम, राधा-कृष्णका शरीरान्त तो कबका हो चुका है। आज कोई यह भी नहीं जानता कि वे कैसे दिखते थे, लेकिन उनकी आत्मा आज भी अमर है। हम बिहारवालोंको न केवल इस खण्डहरमें से भौतिक ढाँचे तैयार करने हैं, बल्कि आत्माका भवन भी खड़ा करना है, जो सदियोंतक कायम रहेगा।

१. गांधीजी २९ और ३० मार्च, १९३४ को सीतामढ़ीमें थे।

हमें यह समझना है कि ईश्वरने किस प्रकार ऊँच-नीच, हिन्दू-मुसलमान आदिका कोई भेद नहीं किया। क्षतिपूर्त्तिके काममें भी हमें सारा भेद-भाव भुला देना चाहिए। हमें आपसी भ्रातृत्व और एकताका निर्माण करना चाहिए, जिससे हम शुद्ध बनेंगे और हमें शक्ति प्राप्त होगी। हमें यह भी याद रखना चाहिए कि सारी दुनियाकी नजर हमपर टिकी हुई है और वह देखना चाहती है कि हम क्या करते हैं, दुनिया-भरसे इकट्ठा किये पैसेका उपयोग हम किस तरह करते हैं। क्या हम इससे अपनी सच्ची सहायता करनेके बदले इसे भिखारियोंकी तरह चट कर जायेंगे? नहीं, हमें सीताकी इस पवित्र भूमिको भिखारियोंकी भूमि नहीं बनने देना है। जो पैसा इकट्ठा किया गया है, अपने-आपको उसका योग्य पात्र साबित करनेके लिए हमें काम करना चाहिए और एक-दूसरेकी सहायता करनी चाहिए। मैं जानता हूँ कि बिहारमें अस्पृश्यताके पुरातन पापकी जड़ें बहुत गहरी जमी हुई हैं। लेकिन अगर हम यह कह सकते हों कि इस भूकम्पसे हमने अपेक्षित सबक सीख लिया है तो इसे सदाके लिए विदा हो जाना है।

आगे उन्होंने कहा, अब मैं आप लोगोंसे एक-एक पैसा, बल्कि वह न बने तो एक-एक कौड़ी भी देनेको कहूँगा और उस पैसे या कौड़ीको इस बातके सूचकके रूपमें ग्रहण करूँगा कि आपके हृदयोंसे अस्पृश्यता मिट गई है और तब मैं यह मान सकता हूँ कि अस्पृश्यता बिहारसे विदा हो रही है।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, ५-४-१९३४

३५१. पत्र : डॉ० मु० अ० अन्सारीको

[३१ मार्च, १९३४ के पूर्व][1]

मेरा दृढ़ मत है कि बौद्धिक वर्ग जिस जड़तासे ग्रस्त हो गया है उसे मिटाया जाना चाहिए। इसलिए कौंसिल-प्रवेश-कार्यक्रमसे मैं चाहे जितना असहमत होऊँ, कांग्रेसियोंको ऐसी स्थितिमें डालकर रखनेके बजाय जिससे वे खिन्न, असन्तुष्ट और निष्क्रिय होकर बैठे रहें, मैं यह बात कहीं ज्यादा पसन्द करूँगा कि उनका एक दल कौंसिल-प्रवेश कार्यक्रमको लागू करे। मैं अब भी यही मानता हूँ कि अगर कांग्रेस पूना प्रस्तावका[2] त्याग कर देती है तो वह उसके लिए आत्मघात करनेके समान होगा। लेकिन अगर कांग्रेसियोंका बहुमत इस प्रस्तावपर अमल करनेके पक्षमें न हो तो मैं अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकका स्वागत करूँगा। उस बैठकमें कांग्रेस

१. कांग्रेसके नेताओंके एक सम्मेलनमें ३१ मार्चको डॉ० अन्सारीने कौंसिल-प्रवेशपर गांधीजी के विचारोंकी चर्चा करते हुए बताया था कि उन्हें गांधीजी का एक पत्र मिला है। शायद यह वही पत्र है।

२. देखिए खण्ड ५५, पृ० २७४-७५ और २७६-७८।

अपना मत व्यक्त करे और चाहे तो इस प्रस्तावको वापस ले ले। मुझे विश्वास है कि देश साहसके साथ किये उनके निर्णयसे सहमत होगा।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ५-४-१९३४

३५२. तार : नारणदास गांधीको

दरभंगा
३१ मार्च, १९३४

नारणदास गांधी
मिडिल स्कूलके सामने
राजकोट

अपनी नाकका हाल बसु, मधुबनीके पतेपर तार द्वारा सूचित करो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९६ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३५३. पत्र : एफ० मेरी बारको

पटनाके पतेपर
३१ मार्च, १९३४

चि० मेरी,

यही तो सोचता था कि तुम पत्र क्यों नहीं लिख रही हो। जब नर्मदा अपनेको तुम्हारे अभिभावकत्वमें रखनेको तैयार हुई थी तब मुझे सुखद आश्चर्य हुआ था। मैं जानता हूँ कि अगर वह वहाँ टिकी रहती तो उसके व्यक्तित्वका ठीक निर्माण हो पाता। लेकिन वह परिवर्तन उसके लिए बहुत बड़ा था। वहाँ न उसकी कोई सहेली थी, न उसे अंग्रेजीका ज्ञान था और रहनेको शानदार भवनके बजाय झोंपड़ी थी। उस हालतमें वह टूट ही जाती। लेकिन तुम्हारी इस बातसे मैं सहमत हूँ कि तुम्हें अप्रत्याशित रूपसे बिलकुल अकेली और निश्चिन्त होकर रहनेका यह एक अवसर मिला है। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि तुम इस स्थितिका यथासम्भव अच्छेसे-अच्छा उपयोग करोगी।

हरिजनोंके साथ रहनेकी बात मैं निस्सन्देह अकसर सोचता रहा हूँ। लेकिन, हरिजन-कार्यको क्षति पहुँचाये बिना ऐसा कर पाना आसान नहीं है। उनके साथ

रहना कष्टकर नहीं, बल्कि आनन्ददायक बात है। लेकिन उनके बीच रहकर मैं सनातनियोंसे कट जाऊँगा। और आज मेरा प्रयोजन हरिजनोंके बजाय सनातनियोंके मनको प्रभावित करनेका है, क्योंकि अभी मेरा काम सवर्ण हिन्दुओंको पश्चात्ताप करनेको प्रेरित करना है। इसलिए हरिजनोंके बीच काम करनेका दायित्व मैंने स्थानीय लोगोंपर छोड़ दिया है। मध्य प्रान्तमें एक जगह मैं हरिजन-छात्रावासमें ठहरा भी था। हिन्दू लोग मेरे पश्चात्ताप करनेके आमन्त्रणका उत्तर जिस उत्साहसे दे रहे हैं उसे मैं सन्तोषजनक मानता हूँ। जब सवर्ण हिन्दुओंको अस्पृश्यताके पापकी भीषणताकी सही प्रतीति हो जायेगी तो प्रगति और भी तेजीसे होगी।

इमलीके पानीके बारेमें तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है। उससे वातरोग बिलकुल नहीं होगा। मैं तो कहूँगा कि जिस कारणसे इसका ऐसा कोई असर नहीं हो पाता वह शायद यह है कि तुम जब भी इमलीका पानी पीती हो, उसमें १० ग्रेन सोडा मिला देती हो। आशा है, तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक होगा।

अभी मैं भूकम्प-प्रभावित क्षेत्रोंका दौरा कर रहा हूँ। प्रकृतिने कहीं-कहीं तो ऐसी बर्बादी मचाई है जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उदाहरणके लिए मैं उस घरकी ठीक तसवीर तुम्हें नहीं दे सकता जिसकी दीवारें जमीनके अन्दर वस्तुतः तीन फुट धँस गई हैं। इसकी बड़ी-बड़ी दीवारोंमें, जिनकी मोटाई १८ इंचसे कम नहीं होगी, हर जगह दरारें पड़ गई हैं। ज्यादातर खेत दो-दो, तीन-तीन फुट रेतसे भर गये हैं। इन जगहोंमें भूकम्पसे पहले जरा-सी भी रेत मिलना असम्भव था। कहना मुश्किल है कि राहत-समितिके बीस लाख और वाइसरायके दिये ३० लाख रुपयोंसे लोगोंको इस कष्टसे कहाँतक उबारा जा सकता है। इतना भारी नुकसान हुआ है!

सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०२२) से। सी० डब्ल्यू० ३३५१ से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार

३५४. पत्र : नारणदास गांधीको

३०/३१ मार्च, १९३४

चि० नारणदास,

वर्धासे तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला। राजकोटसे लिखा पहला पत्र कल साँझको मिला था। मैं यह पत्र प्रातःकालकी प्रार्थनाके पहले लिख रहा हूँ।

बिहारके संकटका वर्णन नहीं किया जा सकता। तुम्हें बुलानेका मन होता है किन्तु मैं अपनेको रोक रहा हूँ। इसका यह मतलब नहीं कि मेरी इच्छा तुम्हें यहाँ न आने देनेकी है। यदि तुम्हारी इच्छा हो और तुम्हें कुछ खास बातोंपर सलाह-मशविरा करना हो तो अवश्य आना चाहिए। मैंने तो सिर्फ इसका निर्णय तुमपर छोड़ दिया है।

तुम्हारी नाककी तकलीफके बारेमें पढ़कर मैं आश्चर्यमें पड़ गया हूँ। तुम्हें नाकसे ठंडा पानी चढ़ाना चाहिए और लेटे रहना चाहिए। सिरमें तेलकी मालिश करवानी चाहिए। दोपहरको मिट्टीकी पट्टी रखनी चाहिए और जितना पी सको उतना दूध पीना तथा फल खाना चाहिए। फलोंमें सन्तरे, अंगूर या किशमिश और मिल सकें तो अच्छे अनार भी खाने चाहिए। काठियावाड़के अच्छे मिलते हैं। मैंने जो तार दिया है उसका उत्तर मैं मधुबनीमें पानेकी आशा करता हूँ।

बच्चोंको राजकोट ले आनेका विचार अच्छा है। किन्तु जब कि जमनादासका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है तथा पुरुषोत्तमका भी वही हाल है और न जमना ही बहुत पुष्ट है, तो ऐसी स्थितिमें लड़के-लड़कियोंको वहाँ रखना कुछ उचित नहीं जान पड़ता। इसका मतलब यह होगा कि मुझे तुम्हें ही वहाँ रखना चाहिए। यदि बच्चोंको अहमदाबादमें नहीं तो वर्धामें क्यों नहीं रखा जा सकता? क्या भाषाके कारण?

आजकल मेरे हृदयमें मंथन चल रहा है।[1] किन्तु मैं अभीतक किसी निर्णयपर नहीं पहुँच सका हूँ। एक-दो दिनमें पता चल जायेगा।

३१ मार्च, १९३४

मैं कल इतना लिख पाया था कि तभी विघ्न पड़ गया। आज अब यहाँसे रवाना होनेकी तैयारी हो रही है तो मैं इस बीच यह लिखे दे रहा हूँ।

बुजुर्ग लोग आनन्दपूर्वक हैं, यह परमेश्वरका अनुग्रह है। क्या जमनादास बिलकुल आराम नहीं लेगा? चिमनलाल या और किसीको टाइटसके काममें दखल देना ही नहीं चाहिए। हम जो चीज दे चुके हैं, उसको चलानेके लिए हमें उतनी ही सहायता देनी चाहिए जितनी कि लेनेवाला माँगे। दानमें दी गई वस्तुमें अपने मनको अटकाये रखना तो मरे हुएके पीछे तबाह होने-जैसा है। गोशाला के नये न्यासी किन्हें नियुक्त किया जाये आदि मामलोंके बारेमें तुम्हें अभी अपने सुझाव देने हैं। मैंने तो अम्बालालभाई, शंकरलाल, रणछोड़भाई और परीक्षितलालके नाम सोचे हैं। शंकरलाल आश्रमके नियमोंसे परिचित है और वह यथाशक्ति उनका पालन करता है। पन्नालालका नाम शामिल करनेका सुझाव चिमनलालने दिया है। किन्तु यदि पन्नालालको लिया जाये तो उसे गोशाला को पर्याप्त समय देना चाहिए। क्या वह समय दे सकेगा?

लीलावतीके बारेमें जैसा तुमने लिखा वैसा ही है।

अब मैं अधिक नहीं लिख सकता। बड़ोंको दण्डवत्।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९५ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी

१. आन्दोलन स्थगित करनेके बारेमें।

३५५. भाषण : सार्वजनिक सभा, दरभंगामें[1]

३१ मार्च, १९३४

गांधीजी ने कहा, मैंने देखा है कि जो खेत कभी फसलोंसे लहलहाते थे वे रेत से भर गये हैं, कुएँ ध्वस्त हो गये हैं या रेतसे भर गये हैं, और नदियाँ सूख गई हैं। मैंने जो दृश्य देखा उसे देखकर कोई भी, वह चाहे जितना कठोर-हृदय हो, विचलित हुए बिना नहीं रह सकता। महाराजाधिराजके महल ही तहस-नहस नहीं हो गये हैं, गरीबोंकी झोपड़ियाँ भी मलवेके ढेर बनकर रह गई हैं। मैं क्या कर सकता हूँ? और सारी दुनिया भी क्या कर सकती है? परिस्थिति बड़ी विकट है। आपको कुछ सहायता मिल सकती है, कुछ पैसा मिल सकता है, लेकिन असली चीज, जिसकी जरूरत है, सहानुभूति है। पैसेसे की जानेवाली सहायता उस सहानुभूतिका प्रतीक-भर है। इस समय आपको कर्त्तव्य स्पष्ट है। आपको आन्तरिक शुद्धिके लिए प्रयत्न करना चाहिए।[2]

आत्म-शुद्धि और सुधारके कार्यके रूपमें गांधीजी ने उनसे अस्पृश्यताको मिटा देनेकी पुरजोर अपील की। गज और ग्राहकी रूपक-कथाका उल्लेख करते हुए उन्होंने श्रोताओंसे कहा कि याद रखिए, हमारे पापोंके दण्डस्वरूप हमपर प्रकृतिका प्रकोप होना अवश्यम्भावी है, चाहे उनके घटित होनेमें कितनी ही देर लगे। वे हमारी सुप्त आत्माको जगाने आते हैं। कथा है कि गज और ग्राह पूर्व जन्ममें सहोदर थे। लेकिन आपसमें एक-दूसरेको भाईकी तरह प्यार करनेके बदले वे घृणा करते थे। फलतः उन्हें शाप मिला कि अगला जन्म तुम एक-दूसरेके शत्रुके रूपमें लो। फिर भी वे सुधरे नहीं। एक दिन जब हाथी नदीमें गया तो ग्राह उसका पैर पकड़ पानीके अन्दर खींच ले चला। यह भयंकर द्वन्द्व हजार कल्पोंतक चलता रहा। अन्तमें जब हाथीने देखा कि उसकी शक्ति चुक रही है और उसकी सूँड़का अग्र भाग ही पानीके ऊपर रह गया है तो उसने ईश्वरको टेरा और उसके त्राणके लिए वह दौड़ा आया। उसका भ्रम दूर हो गया और वह अपने भाईको फिर प्यार करने लगा। दोनों ईश्वरकी कृपासे फिर मानव बन गये।

प्रकृति मेघ-गर्जनके समान उच्च स्वरमें हमें चेतावनी देती है। वह लपटोंके लेखके समान स्पष्ट अक्षरोंमें हमारी आँखोंके सामने अपनी चेतावनी कौंधा देती है। किन्तु हम उसे सुनकर भी अनसुना कर देते हैं, देखकर भी अनदेखा कर देते हैं।

१. प्यारेलाल नैयरके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. यह अनुच्छेद **सर्चलाइट**से लिया गया है।

उन्होंने लोगोंको सावधान करते हुए कहा कि अगर आप प्रकृतिकी चेतावनियों की ओर ध्यान नहीं देंगे तो वह आपसे ब्याज-सहित अपना कर्ज वसूल करेगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-४-१९३४ और **सर्चलाइट**, ४-४-१९३४

३५६. दरभंगामें राहत-कार्यकर्त्ताओंको सुझाव-सलाह

३१ मार्च, १९३४

मध्यवित्त वर्गको राहत पहुँचानेकी समस्याका उल्लेख करते हुए गांधीजी ने कहा कि उनके कष्टोंका मुझे ध्यान है। मैं नहीं चाहता कि उनकी उपेक्षा हो। मैं तो सिर्फ यह चाहता हूँ कि सही काम सही ढंगसे और व्यवस्थित रूपसे किया जाये। और शहरोंमें जो मकान गिर गये हैं उन्हें फिरसे बनाने और जो छोटे-छोटे उद्योग-धन्धे बर्बाद हो गये हैं उन्हें फिरसे प्रतिष्ठित करनेका काम बहुत बड़ा है, जिसमें करोड़ोंका खर्च पड़ेगा। इस कामको तो सरकार-जैसी कोई बड़ी एजेंसी ही कर सकती है। लेकिन राहत-समितिको फिलहाल गाँवोंके लिए जरूरतके पानीका इन्तजाम करनेपर ही अपना पूरा ध्यान लगाना चाहिए। केवल इसी काममें राहत-समिति की २० लाख रुपयेकी राशि लग जा सकती है। जरूरी खर्चके मामलेमें आपको पैसे-पैसेको दाँतसे पकड़नेकी नीतिपर नहीं चलना चाहिए। जो राशियाँ जिन कार्योंके लिए तय की जा चुकी हैं उन्हें उनमें तुरन्त लगाकर बरसातका मौसम शुरू होनेसे पहले ही आपको कुओंके पुनर्निर्माणका कार्य सम्पन्न कर देना चाहिए। जब हमें यह काम कर दिखानेका श्रेय प्राप्त हो जायेगा तो हम इस स्थितिमें होंगे कि आगेके कामके लिए जनतासे और पैसेकी माँग कर सकें। इस बीच मध्यवित्त वर्गको हताश नहीं होना चाहिए, बल्कि उसका कितना नुकसान हुआ है और उसके कारोबारमें कितना बिखराव आया है, उसे कितनी राहत की आवश्यकता है और कितने लोग इसके पात्र हैं, इस सबके आँकड़े जुटानेके निमित्त राहत-समिति द्वारा किये जानेवाले सर्वेक्षणमें उसे सहयोग करना चाहिए। फिर उससे सम्बन्धित आँकड़ोंको लेकर समिति सरकारके पास जा सकती है और उसकी सहायतासे मध्यवित्त लोगोंको राहत पहुँचानेके लिए आवश्यक कार्यवाही कर सकती है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि आपको याद रखना चाहिए कि स्पष्ट विचार, सावधानीसे तैयार की गई योजनाओं और पूरी शक्ति तथा तीव्रतासे उनके कार्यान्वयनके आधारपर ही हम परिस्थितिसे पार पा सकते हैं। असावधानी, हिचक या सन्देहसे काम लेना घातक सिद्ध होगा।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, ४-४-१९३४

३५७. भाषण : सार्वजनिक सभा, मधुबनीमें[1]

३१ मार्च, १९३४

गांधीजी ने कहा कि चारों ओर मची तबाही और बर्बादीको देखकर मेरा मन बहुत व्यथित हो गया है। ऐसा लगता है, मानों किसी शक्तिशाली शत्रुने शहरों, गाँवों, बड़े-बड़े महलों और मिट्टीके घरोंपर भीषण बमबारी की हो, लेकिन धरतीकी मजबूत सतहको मैं जिस तरह तहस-नहस देख रहा हूँ वैसा तो बम भी नहीं कर सकते। बड़ी-बड़ी दरारोंमें घर समा गये हैं। यह बहुत भयंकर स्थिति है। उन्होंने कहा :

राजनगर में मेरे सामने बर्बादीका जो दृश्य फैला हुआ था उसे देखकर मैं कातर हो उठा और लोगोंके कष्टोंके बारेमें सोचकर मेरा दम घुटने लगा। लेकिन तभी मुझे कुन्ती की प्रार्थनाका स्मरण हो आया, 'हे ईश्वर! मुझे सदैव दुःख और दुर्भाग्य ही प्रदान कर, अन्यथा मैं तुझे कहीं भूल न जाऊँ।' हो सकता है, हममें इस प्रार्थनाके लिए अपेक्षित वैसी अगाध श्रद्धा न हो जैसी कुन्तीमें थी। लेकिन इन दुःखद घटनाओंसे क्या हम अपनी आत्म-शुद्धिकी और अपनी वृत्तियोंको ईश्वरोन्मुख करनेकी शिक्षा भी नहीं ले सकते?[2]

उन्होंने आगे कहा कि जब मैं मनुष्यको ऐसे नश्वर पदार्थोंके प्रति पूरे मन-प्राणसे आसक्त देखता हूँ जो क्षण-भरमें नष्ट हो गये, तो मनमें सोचता हूँ कि यह परिस्थितिकी कैसी विडम्बना है। मैं समझ सकता हूँ कि ऋषि-मुनियोंने क्यों अनासक्तिकी शिक्षा दी और क्यों उन्होंने समस्त आसक्ति, सुविधा और विलासका त्याग किया। अब गजेन्द्र-मोक्षकी कथा बहुत स्पष्ट होकर मेरे मनकी आँखोंके सामने आ रही है। स्थिति बिलकुल वैसी ही है — ग्राहकी पकड़में पड़े गजका सारा शरीर जलमग्न हो चुका है, सिर्फ सूँड़का अग्रभाग जलसे ऊपर रह गया है, जिससे गज उसमें कमलका फूल लेकर भगवान् विष्णुको रक्षाके लिए टेर सके, उनसे प्रार्थना कर सके। इसी तरह बिहारके कष्ट-पीड़ित जनोंको भी भगवान्से प्रार्थना करनी है, विनम्र बनना है, अपने अन्तरको टटोलना है ताकि इस निराशाके बीच आशाकी किरण फूटे। . . .[3]

वह देखिए, काले झण्डेवाले आ गये हैं और वे अपनी-अपनी छतरियाँ भी हिला रहे हैं। तो उन्हें आकर, उनको क्या कहना है, कहने दीजिए। उनकी उपस्थितिमें

१. सभामें २५,००० से अधिक लोग उपस्थित थे। इस भाषणका सार-संक्षेप **हरिजन**के २१-४-१९३४ के अंकमें प्रकाशित प्यारेलाल नैयरके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) में भी दिया गया था।

२. यह अनुच्छेद २०-४-१९३४ के **हरिजन**से लिया गया है।

३. इस समय सभामें कुछ काले झण्डे दिखाये गये थे।

मुझे छुआछूत हटानेके बारेमें बोलना है। अस्पृश्यताके दानवको हमें अपने बीचसे भगाना ही है।

अस्पृश्यताके सम्बन्धमें अपने विचार स्पष्ट शब्दोंमें दोहराते हुए गांधीजी ने कहा कि अस्पृश्यता शास्त्रोंकी शिक्षाके विरुद्ध और सनातनधर्म की भावनाके विपरीत है, क्योंकि यह तो संसारका सबसे उदार और सहिष्णु धर्म है।

जो काम डोम करता है वही हमारी माँ करती है; तब उसी कामके लिए माँ को सम्मान देना और पूजना लेकिन डोमको अस्पृश्य मानना क्या उपहासास्पद नहीं है?

गांधीजी बोल रहे थे तभी उपद्रवी लोग जिस तरह आये थे उसी तरह चुपचाप खिसक गये।[1]

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, ६-४-१९३४

३५८. पत्र : एस्थर मेननको

पटनाके पतेपर
३.४५ बजे रात, १ अप्रैल, १९३४

प्यारी बेटी,

काफी दिनोंतक प्रतीक्षा करनेके बाद तुम्हारा लम्बा पत्र मिला। तुम्हारे पत्रमें सत्य अर्थात् ईश्वरके अज्ञात हेतुका पर्याप्त अन्वेषण नहीं है। जब हम जानते हैं कि ईश्वर तो स्वयं परम रहस्यमय है तो फिर उसकी किसी लीलासे हम चकरायें क्यों? यदि उसकी गति वैसी ही हो जाये जैसी हम चाहें या उसकी गति भी हमारी-जैसी ही हो जाये तो न तो हम उसकी सृष्टि रह जायेंगे और न वह हमारा स्रष्टा। हम जिस अभेद्य अन्धकारसे चतुर्दिक् घिरे हुए हैं वह अभिशाप नहीं, वरदान है। उसने हमें यह देखनेकी शक्ति दी है कि बस आगे हमें कौन-से कदम उठाने हैं और अगर उसका दिव्य आलोक हमें ठीक-ठीक उतना ही दिखा देता है तो यह पर्याप्त है। फिर तो हम न्यूमैनके स्वरमें स्वर मिलाकर गा सकते हैं, 'मेरे लिए तो बस आगेका एक पग ही पर्याप्त है।' और अपने अतीतके अनुभवोंसे हम इस बातके लिए आश्वस्त हो सकते हैं कि वह अगला कदम हम सदैव देख सकेंगे। दूसरे शब्दोंमें वह अभेद्य अन्धकार सचमुच वैसा-कुछ अभेद्य नहीं है, जैसा होनेकी हम शायद कल्पना करते हों। लेकिन जब हम अधीर होकर उस एक पगसे आगे देखना चाहते हैं तब वह अभेद्य लगता है। और चूँकि ईश्वर प्रेम-रूप है, इसलिए हम निश्चयपूर्वक कह सकते हैं कि वह हमें यदा-कदा जो भौतिक विपत्तियाँ भेजता है, वे भी छिपे हुए

१. यह और इससे पहलेके दो अनुच्छेद २०-४-१९३४ के **हरिजन**से लिये गये हैं।

वरदान ही हैं, लेकिन जो उन्हें आत्मावगाहन और आत्म-शुद्धिके लिए दी गई चेतावनियोंके रूपमें ग्रहण करते हैं उन्हींके लिए वे वरदान हो सकती हैं।

बच्चोंके बारेमें तुम्हारी बात मैं समझता हूँ। यह जानकर खुशी हुई कि तुम कोडाईकनालमें बच्चोंके साथ हो। मेननको कुछ मिल जाये तो बताना। अगाथा हैरिसन मेरे साथ है। वह भारतीय जीवनकी अभ्यस्त नहीं है, इसलिए यह उसके लिए एक तरहसे परीक्षाका ही काल है। लेकिन वह सब-कुछ बहादुरी से झेल रही है, क्योंकि वह कमसे-कम समयमें जो-कुछ जान-सीख सकती है, जान-सीख लेना चाहती है। म्यूरियल लेस्टरको पटना ही छोड़ आया हूँ। उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं था। ४ अप्रैलको पटना पहुँचकर वहाँसे ७ को असमके लिए प्रस्थान कर दूँगा। फिर २५ के आसपास बिहार लौटूंगा। वहाँ हफ्ते-भर रहकर उड़ीसा चला जाऊँगा और तब एक बार फिर लौटकर बिहार आऊँगा। तुम वर्धाके पतेपर ही पत्र लिखती रहना।

तुमको प्यार और बच्चोंको चुम्बन। आज उनको तो पत्र शायद लिख नहीं पाऊँगा।

बापू

श्रीमती एस्थर मेनन
बोर्न एंड
कोडाईकनाल

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (नं० १२८) से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डीयर चाइल्ड**, पृ० १०४-५ से भी

३५९. पत्र : चारुप्रभा सेनगुप्तको

पटनाके पतेपर
१ अप्रैल, १९३४

प्रिय चारुप्रभा,

तुम्हारा पत्र मिला।

तुमको निराश क्यों होना चाहिए? हमेशा वैसा ही तो नहीं होता जैसा हम चाहते हैं। लेकिन, हम उनके प्रति अनासक्त दृष्टि बराबर रख ही सकते हैं। हमें तो प्रतिदिन अपने हिस्सेका काम करना है और उसीमें आनन्दका अनुभव करना है। शान्ति पानेका और कोई रास्ता नहीं है।

कह नहीं सकता कि बंगाल कब आ पाऊँगा। अभी तो असम जाऊँगा और मईके पहले हफ्तेमें उड़ीसाका दौरा शुरू करूँगा। अभी यह नहीं बता सकता कि पुरी कब पहुँचूंगा।

तुम फिर लिखो और ठीक-ठीक बताओ कि तुम्हें परेशानी किस बातकी है।
सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७०३) से। सी० डब्ल्यू० १४८९ से भी; सौजन्य: ए० के० सेन

३६०. पत्र: अभयदेव शर्माको

१ अप्रैल, १९३४

भाई अभय,

गुरुकुलसे मुक्ति पानेके लिये धन्यवाद। मेरा कुछ ख्याल रहा है कि तुमारा गुरुकुलमें आचार्य बनाना सभा और तुम दोनोंके लिए शायद हानिकर था। लेकिन जहांतक सभा तुमको छोड़ना नहिं चाहती थी तुमारा वहां रहनेका धर्म था। अब सभाके साथ और गुरुकुलके साथ निर्मल आध्यात्मिक संबंध बना रहेगा। रहना चाहिये।

दूसरे कारणोंको छोड़कर मेरेमें जो आंदोलन आजकल चल रहा है उस कारण ही तुमारे जेल जानेमें जल्दी नहिं करना। मेरे निश्चयके लिये इंतझारीमें रहीयो।

पींजनकी तांतके बारेमें मुझे कुछ पता नहिं था। मैंने माना था मगनलाल इस बारेमें जामन था। मैं अब तलाश करूंगा। हां इतना अवश्य है सही, मैंने इस बारेमें विशेष प्रयत्न नहिं किया है। तांतोंके लिये जानवर मारे नहिं जाते हैं। जैसे असंख्य लोग गो-सेवा धर्म मानते हुए भी कतल किये हुए पशुके चमड़ेके जुते पहनते हैं ठीक इसी तरह हम तांतका उपयोग करते हैं। जब मृत जानवरमें से तांत निकाली जायगी तब उसी तांतका उपयोग करेंगे। दरम्यान जो तांत मिलती है उसके उपयोगमें मैं हरज नहिं पाता हुं। आंतोंकी तांतका काम ठीक कर सके ऐसी तांत अब तक नहिं मिली है। तांतके विशय [विषय] में तटस्थ रहें। आवश्यक समझकर उसका उपयोग किया करें।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

पटना लिखें।

सी० डब्ल्यू० ९७१० से।

३६१. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

[सोमवार, २ अप्रैल, १९३४][१]

चि० ब्रजकृष्ण,

आज सोमवार है। एक छोटी देहातमें प्रातःकालमें ३-३० बजे यह लिख रहा हूं। तुमारे बारेमें जमनालालजी पर खत देख चुका था। तुमारा कर्त्तव्य आश्रममें जाकर रहनेका है। परंतु आज तुमारे लिये अशक्य सा है। इस समय तुमारे जेल जानेकी आवश्यकता नहिं है। दूसरोंको भी मैं रोक रहा हूं। कृष्ण नायरको भी लिख दो। मैं अधिक सोच रहा हूं। ज्यादा पीछे जानोगे।

कुछ भी सेवाकार्यमें पड़ जाना और तुमारा खर्च (नियत) भाइयोंपर रहे यह उत्तम मार्ग है। जबतक वे कुछ भी कमाते है तबतक तुमको थोड़ी रकम देवे उसमें मैं धर्म पाता हूं। कुटुंबके लिये भी यह उचित है कि एक भाईको सेवाकार्यमें रहने दें। तुमसे व्यापार नहिं हो सकेगा। सेवा-क्षेत्रमें भी एक प्रकारका व्यापार है, यह सब भी शरीर बिलकुल ठीक होने पर ही किया जाय।

मैंने बताया है उसी मार्गको ग्रहण करनेका निश्चय करके शांत हो जाना और बैठे-बैठे गीता-पाठ और रामायण अच्छी तरह सीख लेना।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरा स्वास्थ्य ठीक है। ता० ७ को पटना छोड़कर आसाम जाऊंगा।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४१०) से।

३६२. प्रश्नोंके उत्तर[२]

२ अप्रैल, १९३४

प्रश्न : क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि जबतक व्यक्तिगत सत्याग्रह-आन्दोलन चल रहा है तबतक तो हर कांग्रेसीका और विशेष रूपसे आपकी प्रेरणासे स्थापित विभिन्न आश्रमोंके कार्यकर्त्ताओंका यह कर्त्तव्य है कि वे उस आन्दोलनमें भाग लें?

उत्तर : यदि यह बात उनके मनमें नहीं उठती तो कदापि नहीं।

१. मूल पर उसकी प्राप्तिकी तारीख ४ अप्रैल, १९३४ दी हुई है।

२. २२ मार्चको गांधीजी से हुई बातचीतके आधारपर उठे ये प्रश्न चिमनलाल भट्टने लिखित रूपमें उन्हें दिये थे। गांधीजीने उन प्रश्नोंके उत्तर लिख दिये थे। देखिए "बातचीत : आश्रमवासियोंसे", २२-३-१९३४।

प्रश्न : **क्या आप यह पसंद नहीं करेंगे कि जो कार्यकर्त्ता किसी कारणवश इस आन्दोलनसे अलग हो गये थे किन्तु जिनका झुकाव उसमें भाग लेनेकी ओर है वे सविनय अवज्ञा करें ?**

उत्तर : यदि उन्होंने सत्याग्रह-धर्मको पूरी तरह समझ लिया हो और वे उसका पालन अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर करें तो पसन्द करूँगा।

प्रश्न : **पं० जवाहरलाल नेहरूकी तरह क्या आप भी इस बातको स्वीकार करते हैं कि राजनीतिक स्वतन्त्रताकी दृष्टिसे सविनय अवज्ञा करनेमें देशको लाभ ही है ?**

उत्तर : यदि वह स्वच्छ होगी तो मैं उसे अवश्य स्वीकार करूँगा।

प्रश्न : **जो लोग सत्याग्रहके मूलमें निहित धार्मिक दृष्टिकोणसे नहीं बल्कि केवल राजनीतिक दृष्टिकोणसे अबतक सरकारसे लड़ते रहे हैं, यदि वे भविष्यमें भी इसी विचारसे सविनय अवज्ञा करें तो क्या यह वांछनीय नहीं होगा ?**

उत्तर : मुझे इसमें पूरा सन्देह है।

प्रश्न : **कल्याणजीभाई, केशवभाई, खुशालभाई, चुन्नीभाई आदि बारडोली संघके कार्यकर्त्ताओंसे जब मैं यहाँसे जाकर मिलूँ तो क्या २२ मार्चको आपके साथ हुई बातचीतके सारांशके रूपमें मेरा उनसे यह कहना ठीक होगा कि न तो अपनी प्रतिष्ठाके कारण, न किसीका अनुसरण करते हुए और न जेलमें पड़े अपने साथियोंके कारण बल्कि सविनय अवज्ञाके शस्त्रमें यदि उनकी श्रद्धा हो और इस आन्दोलनमें भाग लेनेसे होनेवाले लाभालाभका भली-भाँति विचार कर लिया हो तभी उन्हें इसमें भाग लेना चाहिए ?**

उत्तर : ठीक है।

ये उत्तर मेरी उस दिनकी स्थितिके अनुसार हैं। अभी हृदय-मंथन चल रहा है और उससे क्या निकलेगा, यह देखना है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९१३१) से।

३६३. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

सहरसा
२ अप्रैल, १९३४

यह वक्तव्य जारी करनेकी बात मेरे मनमें सत्याग्रह आश्रमके अपने कुछ साथियोंसे हुई निजी ढंगकी एक बातचीतके कारण आई। ये लोग अभी जेलसे छूटकर आये ही थे कि राजेन्द्रबाबूके कहनेपर मैंने इन्हें बिहार भेज दिया था। यह बातचीत यहाँ इन्हीं लोगोंसे हुई थी। लेकिन ज्यादा ठीक कहूँ तो यह वक्तव्य

१. अखबारोंके लिए यह वक्तव्य ७ अप्रैलको जारी किया गया था; देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", ७-४-१९३४।

उस बातचीतमें मिली एक विशेष जानकारीका फल है। जानकारी आँख खोलनेवाली थी। मुझे बताया गया कि मेरे एक बहुत ही पुराने और सम्माननीय साथी जेलमें दिये जानेवाले सारे काम करनेको तैयार नहीं थे और उन्हें अपने हिस्सेके कामके बजाय अध्ययन अधिक पसंद था। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि उनका यह आचरण सत्याग्रहके नियमोंके विरुद्ध था। इस कारण उनके प्रति मेरा प्रेम कम नहीं हुआ है, बल्कि आज उनके प्रति जितना प्रेम है उतना पहले कभी नहीं था। लेकिन इस जानकारीने उनकी अपूर्णतासे कहीं अधिक स्वयं अपनी अपूर्णताके प्रति मेरी आँखें खोल दीं। उन मित्रने कहा कि उनका तो खयाल था कि मैं उनकी इस कमजोरीसे वाकिफ हूँ। मैं अन्धा था। किसी नेताका अन्धा होना अक्षम्य अपराध है। मुझे यह समझते देर नहीं लगी कि फिलहाल तो केवल मुझे ही सविनय प्रतिरोधके क्रियागत रूपका प्रतिनिधि रहना है।

पिछले जुलाई-महीनेमें पूनामें जब सप्ताह-भर अनौपचारिक रूपसे बातचीत और विचार-विमर्श चला था, उस समय मैंने कहा था कि यदि निजी तौरपर सविनय प्रतिरोध करनेवाले अनेक लोग सामने आयें तो यह खुशीकी बात होगी, लेकिन वैसे ऐसा एक आदमी भी सत्याग्रहके सन्देशको जीवित रखनेके लिए पर्याप्त है। अब काफी हृदय-मंथनके बाद मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि यदि सविनय प्रतिरोधको पूर्ण स्वराज्यकी प्राप्तिके साधनके रूपमें सफल होना है तो वर्तमान परिस्थितियोंका तकाजा है कि फिलहाल तो केवल एकको, और सो भी किसी अन्यको नहीं बल्कि स्वयं मुझे ही, सविनय प्रतिरोधका दायित्व सँभालना चाहिए।

मुझे लगता है कि सर्वसाधारण ने सत्याग्रहके पूर्ण सन्देशको ग्रहण नहीं किया है, जिसका कारण यह है कि सम्प्रेषणकी प्रक्रियामें, एकसे दूसरेतक इसके पहुँचाये जानेके क्रममें इसका रूप दूषित हो गया। मेरे सामने यह बात स्पष्ट हो गई है कि जब आध्यात्मिक साधनोंके उपयोगका प्रशिक्षण अध्यात्मेतर माध्यमसे दिया जाता है तो उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है। आध्यात्मिक सन्देश तो अपना प्रचार-प्रसार आप करते हैं। मैं क्या कहना चाहता हूँ, इस बातको स्पष्ट रूपसे उजागर करनेवाली जो चीज अभी हालमें सामने आई है, वह है हरिजनोंके निमित्त किये मेरे पूरे दौरेमें सर्व-साधारण द्वारा व्यक्त की गई प्रतिक्रिया। सर्वसाधारणमें जो शानदार प्रतिक्रिया देखने को मिली है वह बिलकुल सहज है। उन विशाल जन-समुदायोंने जैसे उत्साहका परिचय दिया और जितना तवज्जह दिया उसे देखकर कार्यकर्त्तागण भी चकित रह गये, क्योंकि ये लोग पहले कभी उनके पास पहुँच भी नहीं पाये थे।

सत्याग्रह विशुद्ध रूपसे आध्यात्मिक अस्त्र है। यदि इस अस्त्रका संचालक यह जानता हो कि यह एक आध्यात्मिक अस्त्र है तो इसका उपयोग लौकिक दिखाई देनेवाले उद्देश्योंके लिए भी किया जा सकता है और सो भी इसकी आध्यात्मिकताको समझनेमें असमर्थ स्त्रियों और पुरुषों द्वारा। शल्य-चिकित्साके औजारोंको हर-कोई नहीं समझ सकता। लेकिन अगर विशेषज्ञ उसका निर्देशन-संचालन कर रहा हो तो उसका उपयोग बहुत-से लोग कर सकते हैं। मैं पूर्णताको प्राप्त करनेकी प्रक्रियासे गुजर रहे

एक सत्याग्रह-विशेषज्ञ होनेका दावा करता हूँ। मुझे अपने शास्त्रमें पूर्ण रूपेण पारंगत, कुशल शल्य-चिकित्सककी अपेक्षा अधिक सावधानीकी आवश्यकता है। मैं अब भी एक विनम्र अन्वेषक ही हूँ। सत्याग्रह-शास्त्रका स्वरूप ही ऐसा है कि यह अपने अध्येताके लिए सामनेके एक पगसे आगे देख सकनेका अवकाश नहीं छोड़ता।

आश्रमवासियोंके साथ हुई बातचीतके बाद मैंने जो आत्म-चिन्तन किया, उससे इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि कांग्रेसियोंको स्वराज्यकी प्राप्तिके निमित्त चलाया जानेवाला सविनय प्रतिरोध स्थगित कर देना चाहिए; अलबत्ता, विशिष्ट शिकायतोंको दूर करवानेके लिए जरूरी हो तो उसके लिए वह चलाया जा सकता है। स्वराज्य के निमित्त सविनय प्रतिरोधकी बात उन्हें अकेले मुझपर छोड़ देनी चाहिए। मेरे जीवन-कालमें उसे यदि अन्य लोग फिरसे आरम्भ करना चाहें तो वह मेरे निर्देशनमें ही किया जाना चाहिए। हाँ, यदि हमारे बीचसे इस शास्त्रको मुझसे अधिक अच्छी तरह जाननेका दावा करनेवाला निकल आये और वह हममें अपने प्रति विश्वास पैदा कर सके तो बात और है। यह राय मैं सत्याग्रहके जनक और प्रवर्तकके रूपमें दे रहा हूँ। इसलिए प्रत्यक्ष रूपसे मेरी दी हुई सलाहपर या अप्रत्यक्ष रूपसे मुझसे ग्रहण की गई सलाहपर जो लोग स्वराज्यके निमित्त सविनय प्रतिरोधमें प्रवृत्त हुए हैं वे कृपा कर उसे बन्द कर दें। मेरा निश्चित विश्वास है कि ऐसा करना भारतकी स्वतन्त्रताकी लड़ाईके हकमें सबसे अच्छा है।

मानव-जातिके हाथोंमें यह सबसे बड़ा अस्त्र है और इसकी मुझे अत्यधिक चिन्ता है। सत्याग्रहके सम्बन्धमें हमारा दावा यह है कि यह हिंसा या युद्धका स्थान पूरी तरहसे ले सकता है। इसलिए इसका उद्देश्य 'उग्रपंथियों' के और एक पूरे राष्ट्रको पुंसत्वहीन बनाकर उग्रपंथियोंको समूल नष्टकर देनेको प्रयत्नशील शासकोंके भी हृदयका स्पर्श करना है। लेकिन बहुत-से लोगों द्वारा जैसे-तैसे किया गया सविनय प्रति-रोध एक वर्गके रूपमें न तो 'उग्रपंथियों' के हृदयका स्पर्श कर पाया है और न शासकोंके हृदयका, यद्यपि इसके बड़े शानदार परिणाम निकले हैं। विशुद्ध सत्याग्रह निश्चित रूपसे दोनोंके हृदयोंका स्पर्श करेगा। इस मान्यताकी सचाईकी कसौटी करनेके लिए यह आवश्यक है कि एक बारमें केवल एक ही सुयोग्य व्यक्ति सत्याग्रह करे। यह प्रयोग करके कभी नहीं देखा गया है। अब किया जाना चाहिए।

मैं पाठकोंको सावधान कर दूँ कि वे मात्र सविनय प्रतिरोधको ही सत्याग्रह समझ बैठनेकी भूल न करें। सत्याग्रहमें सविनय प्रतिरोधके अतिरिक्त और भी बहुत-सी बातें आती हैं। सत्याग्रहका मतलब सत्यकी सतत शोध और उस शोधसे शोधकर्त्ताको प्राप्त शक्ति है। यह शोध विशुद्ध रूपसे अहिंसक उपायोंसे ही की जा सकती है।

तो इस दृष्टिसे विचार करनेपर सविनय प्रतिरोधियोंके लिए क्या करनेका अवकाश रह जाता है? यदि वे आह्वान किये जानेपर सामने आ जानेको तैयार रहना चाहते हैं तो उन्हें आत्म-त्याग और सहर्ष-स्वेच्छया वरण की गई गरीबीकी शिक्षा लेनी चाहिए और इन दोनों चीजोंमें निहित सौन्दर्यको हृदयंगम करना चाहिए। उन्हें राष्ट्र-निर्माणकी प्रवृत्तियोंमें लग जाना चाहिए — कताई और बुनाईका काम

स्वयं करके खादीका प्रसार करना चाहिए, जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें व्यक्तिगत स्तरपर आपसमें एक-दूसरेके प्रति ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिसपर कोई उँगली न उठा सके और इस तरह विभिन्न सम्प्रदायोंके बीच हृदयकी एकता स्थापित करनी चाहिए, अपने व्यक्तिगत जीवनमें अस्पृश्यताके हर रूपका त्याग करना चाहिए और मादक द्रव्यों तथा पेयोंका सेवन करनेवाले लोगोंसे निजी सम्पर्क स्थापित करके और व्यक्तिगत रूपसे सभी तरहसे पवित्र आचार-व्यवहार रखकर इस बुराईको दूर करना चाहिए। जो ये सेवाएँ करेंगे उनको उतना मिल जायेगा जिससे वे गरीबीकी जिन्दगी ठीकसे बिता सकें। जिन लोगोंके लिए ऐसा जीवन बिताना सम्भव नहीं है, उन्हें अच्छा पुरस्कार देनेवाले राष्ट्रीय महत्त्वके उन छोटे-छोटे उद्योगोंमें लग जाना चाहिए जो ठीकसे संगठित नहीं किये जा सके हैं। यह समझ लेना चाहिए कि सविनय प्रतिरोध वही लोग कर सकते हैं जो कानून और सत्ताके प्रति अपना कर्त्तव्य जानते हैं और उसका पालन सहर्ष-स्वेच्छया करते हैं।

कहनेकी जरूरत नहीं कि यह वक्तव्य जारी करनेका मतलब कुछ ऐसा नहीं है कि मैं कांग्रेसका दायित्व और अधिकार हड़प रहा हूँ। यह तो केवल उन लोगोंको दी गई मेरी सलाह है जो सत्याग्रहके सम्बन्धमें मुझसे मार्ग-दर्शनकी अपेक्षा रखते हैं।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९१३७)से।

३६४. भाषण : सार्वजनिक सभा, मुँगेरमें[1]

[३ अप्रैल, १९३४][2]

इतनी जानें लेकर और इतने मकान गिराकर ईश्वरने हमें सचेत किया है। सभी धर्मोंमें कहा गया है कि पृथ्वीपर पाप बढ़नेपर ही प्रलय होता है। अस्पृश्यता घोर पाप है। इसे दूर करनेके लिए हम तैयार हैं अथवा नहीं, मुख्य प्रश्न यही है। एक सज्जनने कहा है कि यह कोई बिहारके १$\frac{1}{2}$ करोड़ लोगोंका पाप थोड़े ही है।[3]

यह कहना कि बिहारी लोग शेष भारतीयोंसे ज्यादा दुष्ट हैं, इसीलिए प्रकृतिने अपने क्रोधके लिए उन्हें विशेष रूपसे चुना है,[4] एक ऐसी निरर्थक बात है जिससे ज्यादा निरर्थक और कुछ नहीं हो सकता। ऐसी बड़ी विपत्ति किसी व्यक्ति या समुदाय-विशेषकी दुर्जनताका प्रमाण नहीं है। तथापि यह सही है कि मनुष्यके

१. प्यारेलालके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र)से उद्धृत इस भाषणका सार-संक्षेप अंग्रेजीमें २०-४-१९३४ के **हरिजन**में भी छपा था।

२. चन्दुलाल दलाल-कृत **गांधीजीनी दिनवारी**से।

३. अगला अनुच्छेद २०-४-१९३४ के **हरिजन**से लिया गया है।

४. मुँगेरमें भूकम्पसे दो हजार घर धराशायी हो गये थे और दस हजार आदमियोंकी मृत्यु हुई थी।

पापों और प्राकृतिक विपत्तियोंमें कोई अविच्छेद्य सम्बन्ध है। ऐसा नहीं हो सकता कि किसी संगठनके एक हिस्सेमें नैतिक नियमका व्याघात हो और सारे संगठनमें उसकी कोई प्रतिक्रिया न हो। जब शरीरके किसी एक अंगमें पीड़ा होती है तो उस पीड़ाका दण्ड सारे शरीरको भोगना होता है। इसलिए जब भी ऐसी कोई विपत्ति आये तो हमें वैयक्तिक जीवन और उसके साथ सामाजिक जीवनका भी पूरा-पूरा शोधन करना चाहिए।

इसमें मुसलमानोंका क्या पाप है? क्या मैं उनका पाप बताऊँ? उनका पाप यह है कि हम अस्पृश्यता बरतते हैं फिर भी वे हमसे सम्बन्ध रखते हैं। अमुक व्यक्ति जन्मसे तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी अस्पृश्य माना जाये, क्या इसे ईश्वरीय विधान माना जा सकता है? ऐसा कोई विधान तो मनुष्य-निर्मित भी नहीं है; दुनियामें कहीं नहीं है। अमेरिकाके हब्शियोंकी बड़ी बुरी हालत है, वे अस्पृश्य हैं; लेकिन उन्हें जन्मसे अस्पृश्य नहीं माना जाता। उन्हें अस्पृश्य मानना धर्म नहीं है। हब्शियोंको अस्पृश्य माननेवाले वहाँ बहुत लोग हैं, लेकिन वे इसे धर्मका पालन नहीं समझते। बिहारको जो दण्ड मिला है वह उसके विशेष पापके कारण मिला हो, ऐसा नहीं है। बिहार तो हिन्दुस्तानका एक हिस्सा है; बल्कि दुनियाका एक हिस्सा है। ईश्वरके न्यायको तो ईश्वर ही जानता है। हम तो यही मानते हैं कि ईश्वर दया, प्रेम और कृपासे भरपूर है। इसलिए उसके द्वारा दी गई सजा भी न्यायपूर्ण होनी चाहिए। यह किस प्रकार सम्भव हो सकता है, यह मेरी समझसे बाहरकी बात है, किसीकी भी समझसे बाहर की बात है। हम सब तो इसे अपने पापका परिणाम मानें। तुम्हारे पापका नहीं, बल्कि हमारे पापका। प्रत्येकको यह जानना चाहिए कि बिहारकी मुसीबत हमारी मुसीबत है, इससे मुझे उतना ही आघात लगना चाहिए जैसे मेरा कोई सम्बन्धी मर गया हो। यदि मैं ऐसा मानूँ तभी उसे मानवता माना जायेगा, और तभी मैं ईश्वर को जाननेका दावा कर सकता हूँ। अपने व्यक्तिगत और सामाजिक पापको धोनेके लिए जबतक इस दुःखकी याद रहे तबतक जितने प्रयत्न हो सकें करें। यह बात आपको संकट-निवारण-समिति नहीं बता सकती। मैंने तो बचपनसे ही सुधारकका कार्य किया है। इसका आरम्भ मैंने स्त्रियों और बच्चोंसे किया था। इसलिए मैं आपके सामने चिकनी-चुपड़ी बात करके चला जाऊँ, यह मेरा धर्म नहीं है। आप यदि जाग्रत नहीं हैं तो जाग्रत हो जायें, और ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह पाप-प्रक्षालनकी शक्ति दे। यह दुःख आ पड़ा है और इस समय दुनिया देख रही है कि बिहारी क्या करते हैं। इस परीक्षामें आप लोग उत्तीर्ण हों। मैंने जो कहा है उसे हृदयमें उतारें और जो उचित लगे उसे स्वीकार करें तथा ईश्वर उसपर अमल करनेकी शक्ति आपको प्रदान करे।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २९-४-१९३४, और **हरिजन**, २०-४-१९३४

३६५. पत्र : मु० अ० अन्सारीको[1]

५ अप्रैल, १९३४

प्रिय डॉ० अन्सारी,

वड़ी कृपाकी कि आप, भूलाभाई और डॉ० विधान राय तीनों कुछ कांग्रेसियों की अनौपचारिक बैठक[2] द्वारा हालमें ही स्वीकृत प्रस्तावोंपर चर्चा करने और उनके बारेमें मेरी राय जाननेके लिए इतनी दूर पटना तक आये। स्वराज्य पार्टीके पुनरुद्धार और विधान-सभाके आगामी चुनावमें भाग लेनेके बैठकके निर्णयका स्वागत करनेमें मुझे कोई संकोच नहीं है। आपका कहना है कि विधान-सभा भंग की जानेवाली है। आजकलकी परिस्थितिमें विधान-मण्डलोंकी उपयोगिताके बारेमें मेरे विचार सभी जानते हैं। कुल मिलाकर मेरे विचार वही हैं जो १९२० में थे, परन्तु मैं महसूस करता हूँ कि जो कांग्रेसी किसी भी कारणवश पूना-कार्यक्रममें भाग नहीं लेना चाहता या नहीं ले सकता और जिसका विधान-मण्डलोंमें प्रवेश करनेमें विश्वास है, ऐसे प्रत्येक कांग्रेसी को यह अधिकार है, वल्कि उसका यह कर्त्तव्य है कि वह विधान-मण्डलोंमें प्रवेश पानेकी कोशिश करे और वहाँ जाकर उस कार्यक्रमपर अमल करानेके लिए अपने संगठन बनाकर कोशिश करे जिसे वह या वैसे ही बहुत-से सदस्य देशके लिए हितकर मानते हों। ऊपर दरसाये गये अपने विचारोंके अनुरूप, मैं हर समय दलके लिए सुलभ रहूँगा और यथाशक्य सहायता करता रहूँगा।[3]

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ६-४-१९३४

१. डॉ० अन्सारी, डॉ० वि० च० राय और भूलाभाई देसाईने यह पत्र अपने इस वक्तव्यके साथ समाचार-पत्रोंको प्रकाशनके लिए दिया था: "हमने इसी ४ तारीखको सुबह पटना पहुँचकर महात्मा गांधीसे दिल्ली सम्मेलनके निर्णयोंके बारेमें परामर्श किया। बेहद थके होनेके बावजूद, उन्होंने विषयके महत्त्वको देखते हुए हमारे साथ स्वराज्य पार्टीके पुनरुद्धारके विभिन्न पहलुओंपर लगभग तीन घंटेतक बातचीत की। आज सुबह और दोपहरको भी इस विषयपर महात्माजी के साथ फिर चर्चा हुई और उस चर्चाके निष्कर्ष अब डॉ० अन्सारीके नाम लिखे गये महात्माजी के इस पत्रमें शामिल किये गये हैं।. . ."

२. दिल्लीमें ३१ मार्च, १९३४ को हुई बैठकमें मदन मोहन मालवीय, डॉ० वि० च० राय, खलीकुज्जमा, गो० व० पन्त और अन्य कांग्रेसी नेताओंने भाग लिया था। बैठकमें तय किया गया कि एक स्वराज्य पार्टी बनाई जाये और केन्द्रीय विधान-सभाके चुनावोंमें भाग लिया जाये।

३. इस विषयसे सम्बन्धित गांधीजी के विचारोंके बारेमें प्यारेलालकी टिप्पणीके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

३६६. टिप्पणियाँ

आप प्रार्थना कैसे करते हैं?

ईश्वरकी कृपासे मेरे अनेकानेक मित्र हैं और वे विभिन्न धर्मोंके अनुयायी हैं। उनमें से कुछ अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनमें मेरी सहायता करनेके लिए उत्सुक हैं। यह प्रश्न अब एक ठोस शक्ल अख्तियार करता जा रहा है और इसलिए इसका एक निश्चित उत्तर अपेक्षित है। मेरी अपनी दृष्टि इसके बारेमें बहुत ही स्पष्ट और निश्चित है। महान् आन्तरिक सुधारके इस शुद्धि-आन्दोलनमें मुझे समस्त संसारका सहयोग दरकार है। मैंने कहा है कि इसकी सफलताके लिए संसारकी समस्त जनता ईश्वरसे प्रार्थना करे। पर कुछ गैर-हिन्दू लोग अपनी प्रार्थनाको कार्य-रूपमें परिणत करना चाहते हैं और यदि उनसे बन पड़ा तो वे मुझसे सहयोग करते हुए ऐसा करेंगे। मैं भी दिलसे चाहूँगा कि वे मेरे साथ यथासम्भव अधिकसे-अधिक सहयोग करें। परन्तु इसकी भी एक सीमा है। मान लीजिए कि मैं किसी हरिजन शिशुको किसी ईसाई या किसी मुसलमान मित्रको या किसी संस्थाको सौंप देता हूँ। तब वे क्या करेंगे? वे उसका लालन-पालन एक हिन्दू शिशुकी तरह करेंगे या उसे अपने धर्मके अनुसार पालेंगे? मेरे तईं तो सभी मुख्य-मुख्य धर्म इस अर्थमें समान हैं कि वे सभी सच्चे हैं, सत्यका प्रतिपादन करते हैं। वे सभी मानवकी आध्यात्मिक प्रगतिके एक ऐसे अभावकी पूर्त्ति कर रहे हैं जिसकी आवश्यकता सभी महसूस करते हैं। इसलिए मुझे अपनी देखरेखमें मुसलमान, पारसी और ईसाई शिशुओंको उनके अपने धर्मके अनुसार पालने-पोसनेमें कोई कठिनाई नहीं पड़ी। सच तो यह है कि उनके माता-पिताकी ओरसे यह आग्रह किये जानेपर कि मैं उनको ग्रंथ-विशेषमें विहित आराधना-पूजाकी कोई विधि-विशेष सिखाऊँ, मुझे उनकी खातिर कुछ साहित्य भी पढ़ना पड़ा। इस सन्दर्भमें किसी भी मनुष्यकी स्थिति मालूम करनेका सबसे सरल उपाय शायद उसकी प्रार्थनाको देखना ही है। मैं प्रार्थनाके दो रूप नीचे प्रस्तुत करता हूँ:

१

हे ईश्वर! अपनी समस्त सृष्टिको ज्ञान दे, जिससे कि सभी अपनी-अपनी दृष्टिके अनुसार तेरी आराधना और तेरा अनुसरण कर सकें और अपने-अपने धर्मके अन्तर्गत अपना विकास कर सकें।

२

हे ईश्वर! अपनी समस्त सृष्टिको ज्ञान दे, जिससे कि सभी उसी तरह तेरी आराधना और तेरा अनुसरण कर सकें जिस प्रकार मैं करनेका प्रयास करता हूँ।

स्पष्ट है कि प्रार्थनाका यह पहला रूप सर्वग्राही है और इसलिए इसे अपनानेवाला कोई भी व्यक्ति या संस्था ईमानदारीसे हिन्दू शिशुओंका हिन्दुओंकी तरह और मुसलमान शिशुओंका मुसलमानोंकी तरह और इस प्रकार अन्य शिशुओंका भी पालन-पोषण कर सकता है। दूसरी प्रार्थनाको अपनानेवाला ईमानदारीके साथ केवल उन शिशुओंका ही लालन-पालन कर सकता है जो उसके अपने धर्मके हों। हाँ, यदि वह दूसरे धर्मके शिशुओंको अपने धर्ममें दीक्षित करनेके ऐलानिया मकसदसे उनका पालन-पोषण करे, तो और बात है।

क्या इन पंक्तियोंको पढ़ने और इस विषयमें रुचि रखनेवाले मित्र मेरी जानकारीके लिए मुझे यह लिख भेजनेका कष्ट करेंगे कि नित्य-प्रतिकी उनकी प्रार्थना क्या रहती है?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-४-१९३४

३६७. एक आदि-द्रविड़की कठिनाइयाँ

एक सज्जन लिखते हैं:

(१) आप सच्चे हृदयसे हरिजनोंका कल्याण चाहते हैं या इसके पीछे यह स्वार्थ है कि हिन्दुओंकी जनसंख्यामें वृद्धि दिखाई जा सके?

(२) यदि आप सचमुच ऐसा मानते हैं कि अस्पृश्य लोग हिन्दू-जातिके अभिन्न अंग हैं, तो क्या आप हिन्दुओं द्वारा पवित्र मानी जाने वाली 'मनुस्मृति' के इन श्लोकोंके बारेमें अपने विचार व्यक्त करनेकी कृपा करेंगे:

"पंचम वर्णका कोई व्यक्ति यदि कुलीनोंका कोई व्यवसाय करके धनी बन जाये तो उसे उसकी सम्पदासे वंचित करके देश-निकाला दे देना चाहिए।" (मनुस्मृति १०/९६)

"जो भी किसी शूद्रको शिक्षा देगा वह उसके (शूद्रके) साथ ही नरकमें जायेगा। ब्राह्मणको धर्मोपदेश देनेका प्रयास करनेवाले हर शूद्रके मुँह और कानोंमें गरम-गरम तेल डालकर उसे दण्डित किया जाना चाहिए।" (१४/८९)

"ऊँची आवाजमें बात करते पाये जानेवाले किसी भी शूद्रको गरम लोहेके लाल सरियेसे दागना चाहिए। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके समकक्ष आसन ग्रहण करनेवाले हर शूद्रको गरम लोहेके लाल सरियेसे दागना चाहिए।" (८/२७६; ८/२७१)।

हिन्दुओंको आदेश है कि वे इस ग्रन्थको पवित्र मानें और इसमें दी गई हिदायतोंके मुताबिक आचरण करें। आप यदि इस ग्रन्थको अपवित्र मानते हैं,

तो आप वैसी घोषणा क्यों नहीं कर देते और इसके बदले अपनी ही एक 'गांधीस्मृति' क्यों नहीं रच देते?

(३) आर्यसमाजी लोग भी तो अस्पृश्यताके निवारणमें लगे हुए हैं और इसका उनका एक अपना ही तरीका है। वे अस्पृश्यका शुद्धि-संस्कार करके उसे अपने समाजमें शामिल कर लेते हैं। यदि अस्पृश्य वास्तवमें हिन्दू ही हैं तो फिर इसकी क्या आवश्यकता है? क्या आप इस विषयमें उनसे सहमत हैं?

पत्र-लेखक अपने-आपको आदि-द्रविड़ बतलाते हैं, और इसलिए उनको मेरी नीयतपर शक करनेका पूरा हक है। इसलिए मैं उनके पहले प्रश्नका सबसे अच्छा उत्तर यही दे सकता हूँ कि उनको मेरे बारेमें अपनी अन्तिम धारणा मेरी मृत्युके बाद ही बनानी चाहिए। तबतक यदि वे मेरे शब्दोंपर विश्वास करनेको तैयार हों तो मैं उनको आश्वस्त करता हूँ कि तथाकथित हिन्दुओंकी संख्यावृद्धिको मैं कोई महत्त्व नहीं देता। किसी भी धर्मके झूठे अनुयायी उसकी कोई सेवा तो नहीं ही करते, यह अवश्य सम्भव है कि वे उसका गला घोट दें। इसलिए हरिजन-कल्याणके कार्यके पीछे मेरा एकमात्र लक्ष्य यही रहा है कि हिन्दू-धर्म अस्पृश्यताके अभिशापसे मुक्त होकर शुद्ध बन जाये। और यदि शुद्धिके क्रममें हिन्दू-धर्मका प्रतिनिधित्व करनेवाला, उसकी कसौटीपर खरा उतरनेवाला एक ही हिन्दू रह जाये तो भी मुझे पश्चात्ताप नहीं, बल्कि हर्ष ही होगा कि हिन्दू-धर्म अभी मरा नहीं है।

पत्र-लेखकका दूसरा प्रश्न बहुत ही संगत है। इतना जरूर है कि यदि वे 'हरिजन'के नियमित पाठक होते और इस तरह शास्त्रोंकी मेरी परिभाषा उनको मालूम होती, तो वे मुझसे यह प्रश्न न पूछते। मैं 'मनुस्मृति' को शास्त्रोंका ही अंग मानता हूँ। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि 'मनुस्मृति' के नामसे प्रचलित ग्रन्थमें छपे हरेक श्लोकमें मेरी श्रद्धा है। छपे हुए ग्रन्थमें इतने अन्तर्विरोध हैं कि आप यदि उसके एक भागको स्वीकार करें तो आपको उसके उन दूसरे भागोंको अस्वीकृत करना ही पड़ेगा जो उस भागसे कतई मेल नहीं खाते। मैं 'मनुस्मृति' में दी गई उच्चादर्शपूर्ण शिक्षाओंके कारण उसे एक धार्मिक ग्रन्थ मानता हूँ। पत्र-लेखक द्वारा उद्धृत श्लोक पूरे ग्रन्थकी मुख्य भावनाके सर्वथा प्रतिकूल जान पड़ते हैं। पत्र-लेखकको मालूम होना चाहिए कि ग्रन्थका मूल पाठ तो किसीके पास है नहीं। सच तो यह है कि ऐसा भी कोई प्रमाण नहीं मिलता कि मनु नामके कोई ऋषि कभी हुए भी थे। हिन्दू-धर्मकी यही प्रकृति रही है कि महानतम सत्योंको हमारे सामने रखनेवाले लेखकों या शिक्षकोंने अपने व्यक्तित्वको सर्वथा विलुप्त कर दिया है। इसलिए शास्त्रोंके अध्ययनमें सत्यान्वेषियोंके मार्ग-दर्शनके लिए मैंने एक और एकमात्र निरापद नियम सुझा दिया है — यह कि उनको शास्त्रोंमें जो भी बात सत्य और अहिंसाके प्रतिकूल लगे उसको वे अस्वीकृत कर दें, क्योंकि सभी धर्मोंकी यही दो आधारशिलाएँ हैं।

पत्र-लेखकको अपना तीसरा प्रश्न तो आर्यसमाजियों से ही पूछना चाहिए। यही उचित है। मैंने तो यह पहली बार सुना है कि आर्यसमाजी लोग हरिजनोंको

आर्यसमाज में शामिल करनेसे पहले उनका शुद्धि-संस्कार करना आवश्यक मानते हैं। हाँ, मैंने गोमांस और मरे हुए पशुओंका मांस खाना, नशीले द्रव्योंका सेवन करना त्यागने, इत्यादिका व्रत लेनेवाले हरिजनोंका यह संकल्प दृढ़ करनेके लिए उनका शुद्धि-संस्कार होते तो देखा है। पत्र-लेखकका यह कथन बिलकुल सही है कि यदि अस्पृश्य वास्तवमें हिन्दू हैं, तो उनका शुद्धि-संस्कार करनेकी कोई जरूरत नहीं पड़नी चाहिए। यदि किसी का शुद्धि-संस्कार होना चाहिए तो वह सवर्ण हिन्दुओंका ही होना चाहिए, जिन्होंने अस्पृश्यतामें विश्वास करनेका पाप किया है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-४-१९३४

३६८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

पटना

६ अप्रैल, १९३४

भाई वल्लभभाई,

इस समय सबेरेके २.३० बजने जा रहे हैं। आज राष्ट्रीय सप्ताह शुरू होता है। आजकल मेरे उठनेका समय यही हो गया है। मैं दिनमें सो लेता हूँ। मेरे स्वास्थ्यके बारेमें तुम्हारा तार मिला था। मैंने उसका जवाब दे दिया था। अन्सारी मुझसे मिले थे। उन्होंने मेरी जाँच की थी। उनके कहनेका सार यह था कि कोई गड़बड़ नहीं है। आराम लेनेको तो सभी कहते हैं। तुम इतना विश्वास करना कि मैं भरसक विश्राम लेता हूँ। फिर तो जो भगवान करे सो सही।

अन्सारी, डॉ० विधान और भूलाभाई मुझसे मिल चुके हैं। मैंने उनसे लिखित रूपमें कह दिया है कि जिनका कौंसिलोंमें विश्वास है उनका वहाँ जाना धर्म है। वे वहाँ व्यक्तिगत रूपसे जायें, कांग्रेसके नामसे नहीं। मैं मानता हूँ कि उनपर दबाव डालनेमें श्रेय नहीं है। अन्सारी अपने स्वास्थ्य और नवाब साहबकी खातिर मई मासमें विलायत जायेंगे। भूलाभाई सबका काम सँभालेंगे।

मैं समझता हूँ कि बहुत सोच-विचारके बाद मैंने जो कदम उठाया है, वह तुम्हें पसन्द आयेगा। मुझे यह उचित नहीं लगता कि जिसके जी में आये वह अपनी जिम्मेदारीपर व्यक्तिगत रूपसे सविनय अवज्ञा करे और इसलिए मैंने साथियोंको सलाह दी है कि वे भी इसे मुल्तवी रखें। ऐसी अवज्ञा मुझको ही करनी है और जब मैं उचित समझूँगा तब दूसरोंको शामिल होनेका न्योता दूँगा। यदि मेरे उदाहरणसे आकर्षित होकर कोई जेल जाये तो यह स्वतन्त्र रूपसे की गई सविनय अवज्ञा नहीं मानी जायेगी और बड़ोंको हम ऐसा करनेसे नहीं रोक सकते। इस बारेमें दो-तीन दिन में मेरा बयान देखोगे। अगर मेरा यह कदम तुम्हारी समझमें न आये तो चिन्ता मत करना। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि अधिक विचार करनेपर तुम्हें यह ठीक ही प्रतीत होगा।

विट्ठलभाईका वसीयतनामा पढ़ गया हूँ। उसमें सब बातें नियमानुसार मालूम होती हैं। मेरा रुख तो यह है कि यदि बोसको रुपये मिलते हों तो वे भले ले जायें। तुम्हारा साथी कौन है? आज इतना काफी है।

अधिक लिखनेको स्वामीसे कह रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ९०-१

३६९. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

६ अप्रैल, १९३४

बा,

आज शुक्रवार है। तेरा पत्र अभीतक नहीं मिला। सुबहके लगभग तीन बजेका समय है। तेरे पहले पत्रका मैं पूरा उत्तर दे चुका था। तुझे रावजीभाईका पत्र मिला होगा। वसुमती यहाँ आ गई है। उससे अभी बातचीत ही नहीं हुई है। हेमप्रभादेवी भी खादीके सम्बन्धमें बातचीत करने यहाँ पहुँच गई हैं। कल रात रुखी अपनी आँखोंके लिए यहाँ पहुँच गई। उसकी आँखोंसे पानी झरता है। माधवदासका पत्र आया है। लिखता है कि अब वह बिलकुल ठीक है। मनुका पत्र आया है। वह अच्छी है। आशा है, तूने मेरे बारेमें चिन्ता नहीं की होगी। मैं अच्छा हूँ। डॉ० अन्सारी मुझे देखते ही रहते हैं। कल ही तो वे यहाँ आये थे। कहते हैं, डरकी कोई बात नहीं है। आराम करनेको अवश्य कहते हैं। मैं यथासम्भव आराम तो करता हूँ। आखिरकार सब-कुछ ईश्वरकी इच्छापर निर्भर है। अब मैंने ऐसा सोचा है कि अन्य सब लोग जो जेल जा रहे हैं उन्हें रोक दूँ। सिर्फ मुझे ही सत्याग्रह करना चाहिए। इसलिए जब तुम सब लोग छूट जाओगे तो फिलहाल तुम्हें फिर सत्याग्रह करनेकी जरूरत नहीं होगी। तुम्हें खादी आदिका काम करते रहना चाहिए। आज और अधिक नहीं लिखूंगा। तुझे यह याद है न कि आज उपवासका दिन है? मैं कल असमके लिए रवाना हो जाऊँगा। बाल साथ रहेगा। पृथुराज तो साथमें है ही।

सभीको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० २२

३७०. पत्र : डाह्याभाई पटेलको

[६ अप्रैल, १९३४ के आसपास][1]

चि० डाह्याभाई,

तुम्हारा पत्र मिल गया था किन्तु अन्य कामोंमें व्यस्त होनेके कारण यथासमय उत्तर न दे सका। फिलहाल तो मणिबहनसे हर बार मिल आना ही उचित होगा। जब तुम जाओ तो उससे कहना कि ऐसा कोई दिन नहीं जाता जब कि मैं उसे याद न करता होऊँ। किन्तु मैं चिन्ता नहीं करता क्योंकि उसकी सहनशक्ति और दृढ़तापर मुझे पूरा भरोसा है।

जब तुम पिताजी से मिलो तो उनसे कहना कि ऐसा कोई सप्ताह नहीं गया जिसमें मैंने उन्हें पत्र न लिखा हो।

मैंने काकाका[2] वसीयतनामा पढ़ लिया है। उसे बम्बईमें स्वीकार करानेमें कठिनाई तो अवश्य होगी। किन्तु मेरी रायमें इस सम्बन्धमें हमें कुछ भी नहीं करना चाहिए और जो-कुछ सुभाष बोसके हाथमें जानेवाला हो उसे जाने देना चाहिए। मैं ऐसा मानता हूँ कि वे उसका सार्वजनिक हितमें ही उपयोग करेंगे।

बाबाके समाचार देना। मैं सानन्द हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई वल्लभभाई पटेल
रामनिवास पारिख स्ट्रीट, बम्बई-४

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–४ : मणिबहेन पटेलने, पृ० १५७

१. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", ६-४-१९३४।
२. विट्ठलभाई पटेल।

३७१. भेंट : 'हिन्दू' के संवाददाताको

पटना
६ अप्रैल, १९३४

हालाँकि लोग मुझे बड़ी ही सजीव कल्पना-शक्तिवाला व्यक्ति मानते हैं और सुन्दर बिहार-प्रदेशसे मेरा काफी अन्तरंग परिचय होनेके कारण राजेन्द्रबाबूके वर्णनोंके आधारपर अपने मनमें मैंने भूकम्पकी विनाश-लीलाका एक बड़ा विशद चित्र बना लिया था, फिर भी यथार्थ मेरे इस काल्पनिक चित्रसे कहीं बढ़कर निकला।

हालाँकि राजेन्द्रबाबूकी भाषा चित्रणात्मक होती है, फिर भी वे बिहारकी विनाश-लीलाका पर्याप्त चित्रण करनेमें सफल नहीं हो पाये।

मैंने पूर्णियाको छोड़कर, शेष सभी विनाश-ग्रस्त क्षेत्रोंका दौरा पूरा कर लिया है। लगभग सभी जगह जलके अभावके कारण अकाल पड़नेका वास्तविक खतरा मँडरा रहा है।

उपजाऊ खेत रेतसे ढँक गये हैं, कस्बों और गाँवोंमें घरोंकी कतारों-की-कतारें बिलकुल ध्वस्त पड़ी हैं, पत्थर या सीमेंटके फर्श फोड़कर नीचेसे जल और रेत निकल पड़ी है, दीवारें और खम्भे कमरतक की गहराईमें धँस गये हैं, महल अब ईंटोंके ढेर दिखाई पड़ते हैं, उनकी इक्की-दुक्की दीवारें या खम्भे जहाँ-तहाँ विलुप्त वैभवकी शोकपूर्ण स्मृति दिला रहे हैं, जहाँ-तहाँ खड़ी की गई कामचलाऊ झोंपड़ियोंमें आग लगनेका खतरा हर क्षण बना रहता है, बरसातमें धसकनेके भयके कारण पहलेके घरोंकी जगह नये घर खड़े नहीं किये जा सकते, चारेके अभावमें मवेशी भूखसे तड़प रहे हैं और कुछ पानीके अभावमें मर रहे हैं। इन सबके अतिरिक्त एक अत्यन्त ही वास्तविक खतरा बाढ़का भी मँडरा रहा है, जो अब कुछ बिलकुल ही नये क्षेत्रोंतक भी पहुँच सकती है।

सबसे अधिक विपद्ग्रस्त शायद मध्यवर्गके लोग ही रहे हैं। उनमें से कुछका तो सब-कुछ नष्ट हो चुका है और वे भिखारीकी दशामें पहुँच गये हैं। इस तरह सबसे अधिक विपद्ग्रस्त वही लोग हुए हैं जिनमें विपत्तिका भार सहनेकी क्षमता सबसे कम है।

बिहार केन्द्रीय राहत-समितिके सम्मिलित प्रयत्न, अन्य संगठनोंकी सहायता पाकर भी इन मध्यवर्गीय लोगोंको पूरी राहत तो नहीं ही पहुँचा पायेंगे।

चन्देके रूपमें केन्द्रीय-राहत समितिको प्राप्त लगभग बीस लाख रुपये और वाइसरायके कोषमें आये लगभग चालीस लाख रुपयेकी राशियाँ न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्त्तिके लिए भी नितान्त अपर्याप्त हैं। इसलिए मुझे आशा है कि जनता सरकार और आम लोगोंके सामने पड़े कार्यकी विशालताको महसूस करेगी और केन्द्रीय राहत-

समितिको पूरी उदारताके साथ यथाशक्ति चन्दा भेजनेके प्रयत्नोंमें किसी भी तरह कोई ढिलाई नहीं आने देगी।

भोजन, चिकित्सा-सम्बन्धी आवश्यकताओं और अस्थायी या लगभग स्थायी आवासकी व्यवस्थाका खर्च तो दूरकी बात है, प्याससे तड़पते मनुष्यों तथा मवेशियोंको समुचित मात्रामें जल सुलभ करानेपर ही कितने लाख रुपये दरकार होंगे, मैं नहीं कह सकता।

विनाशकी चपेटमें आये खेतोंको फिरसे कृषि-योग्य बनानेके कामकी ओर बिलकुल ही ध्यान न दिया गया हो, ऐसा नहीं है। सरकार ऐसे क्षेत्रका सर्वेक्षण करा रही है। सरकारने किसानोंको बड़ी ब्योरेवार हिदायतें भेजी हैं कि वे बतलायें कि आगामी वर्षाके दिनोंके लिए अपने खेतोंको वे किस प्रकार कृषि-योग्य बना सकते हैं।

सरकार द्वारा किये गये सबसे हालके अनुमानके अनुसार भूकम्पकी रेतसे पाँच लाख एकड़से कुछ अधिक ही भू-क्षेत्र ढँका हुआ है। कमसे-कम लेखा जाये, तो भी ऐसी एक एकड़ भूमिको कृषि-योग्य बनानेकी लागत बीस रुपये तो आयेगी ही। इसका मतलब हुआ कि एक करोड़ रुपये चाहिए। इन खेतोंके मालिकोंको कितनी-क्या राहत दी जा सकेगी, यह मैं अभी कहनेकी स्थितिमें नहीं हूँ। लेकिन मेरा खयाल है कि विपद्ग्रस्त क्षेत्रमें रहनेवाले डेढ़ करोड़ लोगोंकी मैंने जो आवश्यकताएँ बतलाई हैं, वे निस्सन्देह बहुत कम करके लेखी गई हैं। कहनेकी जरूरत नहीं कि इन सभी लोगोंपर विपत्तिकी मार एक समान नहीं पड़ी है। कुछ लोगोंकी तो प्रत्यक्ष हानि कुछ हुई ही नहीं। परन्तु विनाशके अप्रत्यक्ष प्रभावसे तो कोई भी अछूता नहीं रहा है।

संवाददाता : आपने तो बिहारकी परिस्थितिकी इतनी दर्दनाक तसवीर खींची है और अधिक राशिके लिए आग्रह भी किया है कि इस भेंटको केवल अपने समाचार-पत्रके लिए सीमित रखना मानवीयतापूर्ण नहीं होगा। यदि मैं वैसा करूँ, तो वह बिहारको सभी सुलभ सहायता-स्रोतोंसे वंचित रखना ही होगा।

गांधीजी : आप कहना क्या चाहते हैं?

संवाददाता : मैं इस भेंटका विवरण सभी समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको सुलभ करा देना चाहता हूँ। कारण स्पष्ट ही है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ७-४-१९३४

३७२. बिहार अस्पृश्यता-विरोधी बोर्डकी बैठकमें कुछ सुझाव-सलाह

५/६ अप्रैल, १९३४

देवघरके वैद्यनाथ मन्दिर और गया के विष्णुपुर मन्दिर-जैसे अखिल भारतीय महत्त्वके मन्दिरोंमें हरिजनोंको प्रवेश दिलानेके उपायोंके बारेमें पूछे जानेपर गांधीजी ने जोर-जबरदस्ती और किसी भी तरहके दबावके बिना शान्तिपूर्ण प्रचारके जरिये सवर्ण हिन्दुओंका हृदय जीतनेके महत्त्वपर जोर दिया। उनका खयाल है कि इस तरीकेसे कुछ समयमें अस्पृश्यताका लोप अवश्यम्भावी है।

हरिजनोंको हिन्दू-मन्दिरोंमें प्रवेशके लिए तैयार करनेकी वांछनीयताके बारेमें गांधीजी का विचार था कि सवर्ण हिन्दुओंको तो मन्दिरोंके द्वार उनके लिए खोल ही देने चाहिए, फिर उनमें प्रवेश करना या न करना हरिजनोंकी अपनी इच्छापर निर्भर है। हरिजनोंमें पवित्रताका जीवन व्यतीत करनेकी इच्छा पैदा की जानी चाहिए और केवल मन्दिर-प्रवेशसे उनके जीवनमें पवित्रता नहीं आ जायेगी।

खान-पानके मामलेमें बरती जानेवाली अस्पृश्यताके सम्बन्धमें पूछे जानेपर गांधीजी ने कहा कि किसीके स्पर्श-मात्रसे खाने और पानीमें कोई दोष नहीं आ जाता, केवल गन्दे हाथोंका स्पर्श ही उनको दूषित बनाता है।

उनसे पूछा गया कि क्या हरिजनोंके लिए माध्यमिक शिक्षा ही वांछनीय है या उनको इसके साथ ही व्यावसायिक या औद्योगिक प्रशिक्षण भी देना चाहिए। गांधीजी ने कहा कि हरिजनोंके लिए सभी प्रकारकी शिक्षाकी व्यवस्था की जानी चाहिए और व्यावसायिक प्रशिक्षणका प्रबन्ध भी किया जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-४-१९३४

३७३. पत्र : मदनमोहन मालवीयको

७ अप्रैल, १९३४

भाई साहब,[१]

डॉ० महमूदके साथ मैंने काफी देरतक बातचीत की थी। वे साम्प्रदायिक एकताकी स्थापना और उसके लिए काम करनेको अत्यन्त उत्सुक हैं। मैंने उनको अपनी ओरसे यह राय दी कि यदि हम मुसलमानोंका सहयोग पाना और देशके लिए कोई लाभ हासिल करना चाहते हैं तो साम्प्रदायिक निर्णय (कम्युनल एवार्ड) स्वीकार करनेसे बचा नहीं जा सकता। दूसरा रास्ता यही है कि स्थिति ज्यों-की-त्यों बनाये रखी जाये। तब 'निर्णय' का बिलकुल कोई प्रश्न नहीं उठता। मुझे तो बीचका कोई मार्ग नहीं सूझ पड़ता। हर स्थितिमें हमारे सामने कुछ कठिनाइयाँ आयेंगी। लेकिन मैं समझता हूँ कि हमें इसके बारेमें कोई एक निश्चित रुख अपनाना ही पड़ेगा।

आपका,
मोहनदास[२]

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०७०) से।

३७४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

७ अप्रैल, १९३४

इस वक्तव्यका[३] मसविदा मैंने सहरसामें अपने मौन-दिवसपर अर्थात् ईस्टरवाले सोमवार, इस महीनेकी २ तारीखको तैयार किया था। मैंने मसविदा राजेन्द्रबाबूको दे दिया था और उसके बाद इसे वहाँ उपस्थित मित्रोंमें घुमाया गया था। मूल मसविदेमें काफी रद्दोबदलकी गई है। इसे संक्षिप्त भी बनाया गया है। परन्तु सार-रूपमें यह वैसा ही है जैसा सोमवारको था। मुझे खेद है कि इसे मैं अपने उन सभी मित्रों तथा सहयोगियोंको नहीं दिखला पाया जिनके साथ इसपर बात करनेसे मुझे खुशी हासिल होती। पर चूँकि मुझे अपने निर्णयके सर्वथा उचित होनेमें किसी भी तरहका कोई सन्देह नहीं था और चूँकि मैं मानता था कि कुछ मित्र शीघ्र ही

१. और २. दोनों हिन्दीमें लिखे गये हैं।

३. देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", पृ० ३७८-८१।

सविनय प्रतिरोध करनेवाले हैं, इसलिए मित्रोंकी राय लेनेमें समय लगाकर मैं इसके प्रकाशनमें विलम्ब करनेका जोखिम नहीं उठाना चाहता था। मेरा निर्णय और इस वक्तव्यका एक-एक शब्द गहरे आत्म-चिन्तनका, अपने हृदयको टटोलने और ईश्वरसे मार्गदर्शन माँगनेका ही परिणाम है। इस निर्णयके द्वारा एक भी व्यक्तिका कोई दोष दिखाना अभिप्रेत नहीं है। इसके द्वारा तो मैंने विनम्रतापूर्वक अपनी ही सीमाएँ स्वीकार की हैं और उस भारी दायित्वका निर्वाह किया है जो मैं इतने वर्षोंसे अपने कन्धोंपर सँभाले रहा हूँ।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९१३७) से।

३७५. भेंट : 'हिन्दू' के संवाददाताको

पटना
७ अप्रैल, १९३४

संवाददाता : आपका वक्तव्य सामान्य पाठकके लिए अत्यन्त ही संक्षिप्त है और उनमें से कुछ उसका ऐसा गलत अर्थ भी लगा सकते हैं कि आपने अपने साथी बन्दियोंका साथ छोड़ दिया है।

गांधीजी : चूँकि बन्दियोंकी रिहाई हासिल करनेसे मेरे निर्णयका कतई कोई ताल्लुक नहीं था, इसलिए मैंने उनका कोई भी हवाला न देनेका निर्णय जान-बूझकर ही किया था। तब मैं जानता था कि मुझपर ऐसा आरोप लग सकता है। सविनय प्रतिरोध करनेवाले यह सोचकर जेल नहीं जाते कि वे दूसरे ही दिन जेलसे बाहर आ जायेंगे। अपने ठीक समयपर ही उनकी जेलसे रिहाई होगी।

ऐसा निर्णय लेनेका मेरा एक यही उद्देश्य था कि आन्दोलनमें अन्दरूनी सड़न पैदा होनेकी कोई गुंजाइश न छोड़ी जाये। जब भी कोई अपूर्ण व्यक्ति किन्हीं अपूर्ण साधनोंको लेकर काम करेगा, तब ऐसी गुंजाइश हमेशा रहेगी ही। इसीलिए मैंने महसूस किया कि सड़न पैदा न होनेकी गुंजाइश कमसे-कम रहने देनेका उचित समय आ गया है। यह तभी किया जा सकता था जब सविनय प्रतिरोधको ऐसे व्यक्ति तक ही मर्यादित कर दिया जाये जो इस शास्त्रमें सर्वाधिक पारंगत हो।

मैं तो समझता हूँ कि इस निर्णयसे आन्दोलन पहलेसे अधिक शक्तिशाली बन जायेगा और जनता तथा सरकार दोनोंके लिए उससे पेश आना आसान हो जायेगा।

इस प्रकार बन्दियोंकी शीघ्र रिहाईकी सम्भावना वास्तवमें अब पहलेसे कहीं अधिक हो गई है, विशेषकर यदि सरकार मेरे निर्णयकी ईमानदारीपर विश्वास करे।

यह पूछे जानेपर कि सविनय प्रतिरोधको केवल अपनेतक ही सीमित कर देनेके बाद अब वे पूरी तरहसे आन्दोलनको निलम्बित करके इस प्रक्रियाको पूर्ण ही क्यों नहीं कर देते, गांधीजी ने कहा :

सचमुच यह एक बहुत ठीक सवाल है। इसके उत्तरमें मैं यही कह सकता हूँ कि सत्याग्रहका प्रणेता और उसकी कार्य-साधकतापर अटूट विश्वास रखनेवाला व्यक्ति होनेके नाते मुझे अपनी हदतक तो सत्याग्रहको निलम्बित नहीं ही करना चाहिए। हाँ, यदि परिस्थिति ऐसी हो जाये कि आन्दोलन ही बदनाम होने लगे, उदाहरणके लिए यदि सत्याग्रही लोग स्वयं ही हिंसा करने लगें, तो बात दूसरी है।

यह पूछे जानेपर कि उनके अपने निर्णयके पीछे दिल्लीमें किये गये निर्णयोंकी कितनी प्रेरणा है, महात्माजी ने उत्तर दिया :

तनिक भी नहीं। मैंने निश्चित रूपसे यह निर्णय ईस्टरवाले सोमवारको सहरसामें लिया था। तब मुझे यह जानकारी भी नहीं थी कि दिल्ली-सम्मेलनने अपना विचार-विमर्शका काम पूरा कर लिया है और वह एक निश्चित निष्कर्षपर पहुँच चुका है। मुझे मंगलवारको पता चला कि सम्मेलनने अपना विचार-विमर्श पूरा कर लिया है। इतना ही नहीं, यह निर्णय कुछ दिनों पहले — यानी अन्तिम रूपसे मेरे निर्णय करनेसे पहले — एक अस्पष्ट रूपमें मेरे मनमें आया था, और तब मुझे दिल्लीके प्रस्तावोंके बारेमें कतई कोई जानकारी नहीं थी। इसलिए समयके हिसाबसे और वास्तविकताको देखते हुए भी, सविनय प्रतिरोधको केवल अपनेतक सीमित करनेके मेरे निर्णयका दिल्ली सम्मेलनके प्रस्तावोंसे बिलकुल भी सम्बन्ध नहीं है। दिल्लीमें सम्मेलन करनेकी कोई बात उठनेसे भी बहुत पहले मैं मित्रोंके साथ अपनी बातचीतमें और पत्रोंमें भी कह चुका था कि विधान-परिषदोंमें प्रवेश करनेमें विश्वास करने और सविनय प्रतिरोध आन्दोलनमें भाग लेनेकी इच्छा न रखनेवाले या भाग न ले सकनेवाले कांग्रेसियोंका यह कर्त्तव्य है कि वे अपना एक दल बना लें और विधान-परिषदोंमें प्रवेश करनेके अपने कार्यक्रमको कार्यान्वित करें। मेरी रायमें परिस्थितिमें स्पष्टता लाने और कांग्रेसियोंमें आई निष्क्रियताको दूर करनेका केवल यही एक उपाय था। वास्तवमें, मैंने तो तब पूना-सम्मेलनके दौरान ही सर्वश्री आसफअली और सत्यमूर्तिको सुझाया था कि यदि वे विधान-परिषदोंमें प्रवेश करनेके कार्यक्रममें विश्वास रखते हैं तो उनको उसीपर चलना और उसीके पक्षमें लोकमत तैयार करना चाहिए।

सविनय अवज्ञासे सम्बन्धित मेरा निर्णय केवल नैतिकतापर आधारित है और जहाँ तक मेरी जानकारी है, बाहरी परिस्थितियोंसे उसका कतई कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं आपको यह भी बतला दूँ कि ईस्टरवाले सोमवारको तैयार किये गये उस वक्तव्यमें उन लोगोंके लिए विधान-परिषद्-प्रवेशका उल्लेख भी एक पैराग्राफमें किया गया था जो मेरे वक्तव्यमें उल्लिखित रचनात्मक कार्योंमें भाग न लेना चाहें। मैंने वह पैरा बादमें निकाल दिया था, क्योंकि वक्तव्य समाचार-पत्रोंको देनेसे पहले ही दिल्लीसे आये मित्रोंसे मेरी मुलाकात हो चुकी थी और मैंने वह पत्र उन्हें दे दिया था जो अब जनताके सामने आ ही चुका है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ८-४-१९३४

३७६. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको

पटना
७ अप्रैल, १९३४

यह पूछे जानेपर कि वे स्वराज्य पार्टी के साथ कहाँतक सहयोग करेंगे, गांधीजी ने कहा :

विधान-परिषदोंमें प्रवेशके सम्बन्धमें मेरे अपने विचारोंके अनुरूप मैं उनकी जितनी भी सहायता कर सकता हूँ, करूँगा।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे चुनाव जीतनेमें उनकी सहायता करेंगे, गांधीजी ने कहा :

निश्चय ही मैं चुनावोंमें कोई हस्तक्षेप तो नहीं करूँगा, परन्तु मतदाता मेरी रायकी जितनी कद्र करते हैं, उस हदतक तो वे इस जानकारीको महत्त्व देंगे ही कि मैं चाहता हूँ कि स्वराज्य पार्टीके उम्मीदवार यदि अन्य सभी प्रकारसे योग्य हों तो वे उन्हींको अपने मत दें।

यह पूछे जानेपर कि एक संस्थाके रूपमें कांग्रेसियोंका कहाँतक कर्त्तव्य होगा कि वे चुनावोंमें मदद दें, गांधीजी ने कहा :

विधान-परिषद्-प्रवेशमें विश्वास करनेवाले कांग्रेसी निश्चय ही चुनावोंमें भाग लेना अपना कर्त्तव्य मानेंगे।

प्र० : बाबू राजेन्द्रप्रसाद-जैसे उन व्यक्तियोंकी क्या स्थिति होगी जो विधान-परिषद्-प्रवेशमें विश्वास तो नहीं करते, पर चुनाव जीतनेके लिए जिनकी सहायता आवश्यक है?

उ० : यदि राजेन्द्रबाबू विधान-परिषद्-प्रवेशमें विश्वास नहीं करते तो स्वयं खड़े तो नहीं होंगे, पर विधान-परिषद्में प्रवेशके इच्छुक कांग्रेसियोंको परामर्श देने और उनका मार्ग-दर्शन करनेसे उनको कौन रोक सकता है?

यह पूछे जानेपर कि पार्टीको उनकी सहायता किस हदतक सुलभ हो सकेगी, गांधीजी ने उत्तर दिया :

जो भी सहायता वे माँगेंगे और मैं उचित रूपमें उनको दे सकूँगा, वह सदा ही उनको सुलभ रहेगी, लेकिन जबतक मैं जेलसे बाहर हूँ तभीतक।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे संविधान और कार्यक्रम तैयार करनेमें पार्टीकी सहायता करेंगे, गांधीजी ने कहा :

यदि मैं समय निकाल सका और उनको कोई उपयोगी सलाह दे सका, तो मैं अवश्य दूँगा। लेकिन इसका किसी भी तरहसे यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए

कि मैं उनको हर मौकेपर अपने पास सलाहके लिए दौड़नेका आमन्त्रण दे रहा हूँ। वैसे एक बात तो यही है कि ऐसे दायित्वका भार सँभालने लायक समय ही मुझे नहीं मिल पायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-४-१९३४

३७७. तार : नारणदास गांधीको

अररिया
९ अप्रैल, १९३४

नारणदास गांधी
नवापरा
राजकोट

अब भी नकसीर फूटती हो तो बम्बई जाकर जीवराज मेहताकी राय लो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९७ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३७८. पत्र : भीमराव अम्बेडकरको

पटनाके पतेपर
९ अप्रैल, १९३४

प्रिय डॉ० अम्बेडकर,

आपके २९-३-३४ के पत्रका उत्तर देनेमें विलम्ब हो गया। क्षमाप्रार्थी हूँ। लगातार यात्राके कारण इससे पहले उत्तर नहीं दे सका।

आपकी योजना यदि प्रान्तोंको मान्य हो जाती तो मैं उसे स्वीकार तो कर लेता, पर मैं अपने कन्धोंपर यह दायित्व नहीं ले सकता था कि अन्य प्रान्तोंसे आग्रह करूँ कि वे अपने-अपने यहाँके लिए निश्चित सीटोंकी संख्याके मामलेमें समझौतेपर फिरसे विचार करें।

मैं बंगालको सन्तुष्ट करनेके लिए जो भी मुझसे हो सकता है, करता रहा हूँ, लेकिन अबतक सफलता नहीं मिल पाई है। यदि बंगालकी हरिजन जनसंख्या उतनी ही है जितनी कि समझौतेके समय मानी गई थी, तो उनके शिकायत करनेकी कोई गुंजाइश नहीं है। लेकिन यदि वास्तवमें वह उस संख्यासे बहुत ही

कम है जिसके आधारपर सीटोंकी संख्या निर्धारित की गई थी, तो मैं समझता हूँ, आपको इसपर कोई आपत्ति नहीं होगी कि सीटोंकी संख्या वास्तविक जनसंख्याके मुताबिक कर दी जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९४९) से; सौजन्य : घ० दा० बिड़ला

३७९. पत्र : जे० एस० हॉयलैंडको

९ अप्रैल, १९३४

प्रिय हॉयलैंड,

तुम्हारे स्नेह-भरे पत्र मुझे बिलकुल नियमित रूपसे मिलते रहे हैं। समय और धनकी बचतके खयालसे मैं उनकी प्राप्तिकी सूचना नहीं भेजता। डाकखर्च काफी पड़ जाता है। महीनेके अन्तमें देखता हूँ कि उतनी राशिसे हरिजनों या अन्य लोगोंके लिए एक ग्राम-पाठशाला बड़े मजेमें चलाई जा सकती है। भारतके अकाल-पीड़ित क्षेत्रोंमें उससे एक हजार लोगोंके लिए एक बारका खाना जुटाया जा सकता है।

यह जानकर खुशी हुई कि अनुवादों[1] के सम्बन्धमें एलेन ऐंड अनविनके साथ तुम्हारी बात तय हो गई है। आशा है, तुम उनको मेरे किये अनुवादोंके रूपमें प्रस्तुत नहीं करोगे। उनको तुमने मेरे अनुवादोंसे रूपान्तरित किया है।

अगाथा और म्यूरियलने मेरे साथ कई कामके दिन बिताये। उनसे फिर मुलाकात होनेकी आशा है।

मौन प्रार्थना-सभाओंमें सम्मिलित होनेवाले सभी लोगोंको मेरी ओरसे स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४५११) से। सौजन्य : वुडब्रुक कॉलेज, बर्मिंघम तथा श्रीमती जेसी हॉयलैंड

१. **आश्रम भजनावली**का जॉर्ज एलेन ऐंड अनविनने १९३४ में जे० एस० हॉयलैंड-कृत एक रूपान्तर **सांग्स फ्रॉम प्रिज़न** शीर्षकसे प्रकाशित किया था।

३८०. पत्र : प्रेमी जयरामदासको

बिहार केन्द्रीय राहत समिति
एक्जीबिशन रोड
पटना
[९ अप्रैल, १९३४][1]

प्रिय प्रेमी,

पिताजीका आहार क्या है? उनको ताजे और सूखे फल बड़ी मात्रामें लेने चाहिए और पत्तेदार सब्जी सादा-उबली हुई लेनी चाहिए। ऐसा करने से उनको बवासीरसे छुटकारा मिल जायेगा। मेरा नया निर्णय उनको कैसा लगा? तुमको पसन्द आया? सिंधका दौरा जूनसे पहले नहीं हो पायेगा। आशा है, डॉ० चोइथराम अब पहलेसे अच्छे हैं। लगता है कि हैदराबादके लिए एक दिनसे अधिक नहीं दिया जा सकेगा। मैं कल असम जाऊँगा और २४ तारीखको पटना लौट आऊँगा।

सस्नेह,

बापू

श्री० प्रेमीबहन जयरामदास
प्रेम भवन
हैदराबाद
सिंध

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२४५) से; सौजन्य : जयरामदास दौलतराम

३८१. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

९ अप्रैल, १९३४

प्रिय कुमारप्पा,

मैंने डॉ० येसुदासनका पत्र कल ही पढ़ा। उनको अमेरिकी श्रोताओंके समक्ष बिहारकी दशाका वर्णन करके उनसे सहायताके लिए अपील अवश्य करनी चाहिए। उनको हमारा प्रकाशित साहित्य भेज दो।

मुझे लगता है कि डॉक्टरके पत्रसे यह स्पष्ट हो जाता है कि मैंने तुम्हें जो पहली प्रार्थनाका[2] मसविदा दिखलाया था वह उनको मान्य नहीं है और इसलिए वे ईमानदारीके साथ अपने आश्रित किसी हिन्दू बालकका पालन-पोषण एक हिन्दूकी

१. डाककी मुहरसे।
२. देखिए "टिप्पणियाँ", पृ० ३८४-८५।

तरह नहीं कर सकेंगे। पता नहीं, तुम नियमित रूपसे 'हरिजन' पढ़ते हो या नहीं। मैंने 'हरिजन'में प्रार्थनाके दो रूप अपनी टिप्पणीके साथ प्रकाशनके लिए भेजे थे। मैं चाहूँगा कि डॉ० येसुदासन 'हरिजन'में प्रकाशित उस टिप्पणीके बारेमें अपने विचार व्यक्त करें, जो प्रकाशनके लिए नहीं, बल्कि मेरी अपनी जानकारीके लिए होंगे।

सस्नेह,

बापू

श्री कुमारप्पा
केन्द्रीय राहत शिविर
एक्जीबिशन रोड
पटना

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१०४ और १०१०५) से।

३८२. पत्र : चारुप्रभा सेनगुप्तको

पटनाके पतेपर
९ अप्रैल, १९३४

प्रिय चारुप्रभा,

बेकारकी बात है। तुमको इस तरह हताश नहीं होना चाहिए। साधु लोग तो 'गीता'की एक ही तरहकी व्याख्या करेंगे। उस तरहकी व्याख्या दिमागी काहिली की उपज है। तुमको 'गीता'का तृतीय अध्याय बार-बार पढ़ना चाहिए। उसमें कृष्ण कहते हैं, "मैं एक क्षणके लिए भी काम करना बन्द नहीं करता। यदि कर दूँ तो समस्त विश्व नष्ट हो जायेगा।" फिर कहते हैं, "काम करना तो कोई एक क्षणके लिए भी बन्द नहीं करता, हाँ यह है कि ज्ञानी के अतिरिक्त अन्य सभी लोग विवशतामें काम करते हैं।" आओ, हम ज्ञानपूर्वक और स्वेच्छया काम करें, अपने लिए नहीं बल्कि समस्त मानवताके लिए; फिर तो निश्चय ही हमें ईश्वरका साक्षात्कार होगा। हमारी मानवता भारत है। हम इसकी इस तरह सेवा करें कि किसी अन्यको हानि न पहुँच पाये और यही ईश्वरकी सेवा होगी। हमें ऐसी सेवामें ईश्वरका दर्शन करना सीखना चाहिए। 'गीता'का योग यही है, दूसरा कुछ नहीं।

मुझे निराशा-भरे पत्र मत लिखा करो। बस, सहज भावसे मिलनेवाले सेवाकार्य में जुट जाओ और तुम शीघ्र ही देखोगी कि तुम्हारी परिधिका विस्तार होने लगा है और उससे तुमको हर्ष होगा।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७०४) से। सी० डब्ल्यू० १४९० से भी; सौजन्य : ए० के० सेन

३८३. पत्र : नारणदास गांधीको

९ अप्रैल, १९३४

चि० नारणदास,

आज मौनवार है। किन्तु अचानक ही दो घंटे गाड़ीमें बैठनेका मौका आ गया है। अतः एक स्टेशनपर बैठा यह पत्र लिख रहा हूँ।

तुम्हारी नाकसे खून गिरनेके बारेमें मैंने एक तार दिया है। आशा है, तुमने तदनुसार अमल किया होगा। इसके लिए बम्बईकी आबोहवा माफिक है। राजकोट की आबोहवा बहुत गरम और सूखी है। और बम्बईमें डॉक्टर भी अच्छे हैं।

सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी प्रस्तावके कारण तुम्हें एक बार मुझसे अवश्य मिल जाना चाहिए। यदि तुम मिलो तो हम भविष्यके बारेमें भी विचार-विमर्श कर लेंगे। मेरे मनमें बहुत-से नये विचार आये हैं, जिन्हें लिखनेमें काफी समय लग जायेगा और मैं उन्हें भली-भाँति समझा भी नहीं सकूँगा।

पूरी व्यवस्थाके सम्बन्धमें कुछ सोच-विचार कर मैं उन्हें लिख डालूँगा।

मैं समझता हूँ कि नये प्रस्तावकी आध्यात्मिक आवश्यकता और औचित्यको तुम समझ गये होगे। यदि न समझे होगे तो वह भी मैं समझा दूँगा। मैं तो उसके रसमें डूबा हुआ हूँ।

विजयाके लिए एक पत्र इसके साथ है। मेरे कार्यक्रमकी प्रति भी इसके साथ ही होगी, बशर्ते कि चन्द्रशंकर पहले भेज न चुका हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९८से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३८४. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

९ अप्रैल, १९३४

भाईश्री भगवानजी,

आपका पत्र मिला। यदि आप अनुमति दें तो मैं आपका पत्र नरभेरामको भेजना चाहता हूँ। यदि आप अनुमति दें तो भाई नरभेरामका पता मुझे भिजवा दें। यदि आप रतिलालको मूर्ख मानते हैं तो फिर उसके जो पत्र आते हैं उनकी क्या कीमत हो सकती है? चम्पाके अभिभावकके रूपमें या तो प्रभाशंकर या स्वयं चम्पा निर्णय करे।

रतिलालको जानने-समझनेके बाद मैंने विवाहसे पहले प्रभाशंकरसे कहा था कि उन्हें सगाई तोड़ देनी चाहिए। ऐसा करनेके लिए मैंने रेवाशंकरभाई की अनुमति भी ले ली थी। किन्तु भाई प्रभाशंकर, उनकी बहन और माताजी ने विवाह करनेका आग्रह किया। चम्पाके नाम रुपये जमा करनेमें मेरी सम्मति थी और मैंने सहायता भी दी थी।

आप मगनलालको दोष देते मालूम होते हैं; मुझे उसका दोष नहीं दिखता। मगनलाल तो सम्पत्तिको सम्मिलित रखनेके लिए भी तैयार था। लेकिन भाइयोंने आपसमें मिलकर जो परिवर्तन किया है, उसका उपयोग [पिता द्वारा] बहनोंको दी जानेवाली रकम उन्हें न देने में तबतक कैसे किया जा सकता है जब-तक कि उनकी भी सम्मति न ले ली जाये? यदि मगनलाल किस्तोंमें देता है तो दोनों भाई भी किस्तोंमें दें। यदि छगनलाल नहीं देता तो भी चम्पाको, जो न्यायकी भूखी है और होनी चाहिए, बहनोंके प्रति न्याय करनेमें संकोच क्यों होना चाहिए? और चम्पा यानी प्रभाशंकर। मुझे ज्यादा चिन्ता तो कंगाल हो चुकी जयकुँवरके बारेमें है।

हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें यदि मैं कठियावाड़का दौरा करूँ तो राजकोट जो देगा मैं उसीमें सन्तोष मानूँगा।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२२) से। सी० डब्ल्यू० ३०४५ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

३८५. पत्र : क० मा० मुंशीको

९ अप्रैल, १९३४

भाईश्री मुंशी,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने भूलाभाईसे बात तो की है। वे जिम्मेदारी उठायेंगे। यदि अच्छे और त्यागी लोग मिल जायेंगे तो आशा है कि वे कुछ हदतक कार्यको शोभान्वित कर सकेंगे। मुझे जो सूझा उसके अनुसार मैंने मसविदा तैयार कर लिया है। मुझे इसके सिवा और कोई रास्ता नजर नहीं आता। तुमने वह मसविदा देखा होगा। तुम्हें इस मामलेमें जुटना तो पड़ेगा ही।

यह प्रयोग करनेके सिवा और कोई चारा नहीं था। अब बादल छँट जायेंगे। यदि यह प्रस्ताव पास न हुआ होता तो सब-कुछ अनिश्चित रहता। नैया डूब जाये तो भी प्रयोगने अपना प्रयोजन तो सिद्ध किया, यही कहा जायेगा। किन्तु नैया डूबेगी नहीं क्योंकि कांग्रेसमें कौंसिल पार्टी सदा बनी ही रहेगी। यदि बनी रहती है तो वह भले कौंसिलोंमें जाये। मैंने तो मानसिक रूपसे विरोध करना भी छोड़ दिया है। विरोधसे जितना सार ग्रहण किया जा सकता था उतना मैंने ग्रहण कर लिया है। विरोध करनेका मुझे पश्चात्ताप नहीं है। उस समय विरोध करनेकी आवश्यकता थी। आज वैसा विरोध मूर्खतापूर्ण जान पड़ता है।

आशा है, सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी मेरा निर्णय तुम्हें पसन्द आया होगा। उसका रहस्य समझनेमें तुम्हें तो कोई कठिनाई होनी ही नहीं चाहिए। किन्तु यदि किसी तरहकी कठिनाई हुई हो तो मुझे सूचित करना।

अपना स्वास्थ्य सुधार लेना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

कलसे असमका दौरा आरम्भ हो जायेगा। तुम यदि पटनाके पतेपर ही पत्र लिखोगे तो मुझे मिल जायेगा।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५३६)से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

३८६. पत्र : भगवानजी पु० पण्डचाको

पूर्णिया
९ अप्रैल, १९३४

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मिला। फलका विचार न करते हुए अनन्य श्रद्धापूर्वक अपने कर्त्तव्यपर डटे रहो।

मणिबहनसे सम्बन्धित जो वाक्य तुमने मेरे पत्रसे[1] उद्धृत किया है उसे मैं भी नहीं समझ सका। या तो मेरे लिखनेमें कोई शब्द छूट गया या फिर पढ़नेमें गलती हुई है, या नींदके झोंकेमें मैंने कुछ अंडबंड बका होगा। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि मैं बहुत थका होता हूँ और नींदके झोंकोंमें पत्र लिखने पड़ते हैं। यदि तुम वह पत्र मुझे भेज दो और उसका यदि कोई अर्थ निकलता होगा तो मैं बता दूँगा। करना क्या है, यह तो तुमने समझ ही लिया है इसलिए [यदि तुम वह पंक्ति नहीं पढ़ पाये तो] कोई बात नहीं।

सोने-उठनेके समयमें जो परिवर्तन किया है वह आवश्यक था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३६८)से; सौजन्य : भगवानजी पुरुषोत्तम पण्डचा

३८७. पत्र : द्रौपदी शर्माको

९ अप्रैल, १९३४

प्रिय द्रौपदी,[2]

तुमारा आश्रममें आना मुझे बहूत प्रिय लगा है। जो सीखनेका कार्यक्रम अब बनाया है सो अच्छा लगता है। मेरी उमेद है तुम सबका स्वास्थ्य वर्धामें अच्छा रहेगा। आश्रम-जीवन समझनेकी पूरी कोशीष करो। सब बहिनोंका परिचय करके उनकी यथाशक्ति सेवा करो। तुमको आश्रममें लानेमें मैंने बहूत आशाएँ बांध रखी हैं।

मुझे खत अवश्य लिखो।

बापुके आशोर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ५८-९ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

१. देखिए "पत्र : भगवानजी पु० पण्डचाको", पृ० ३०२।
२. डॉ० हीरालाल शर्माकी पत्नी।

३८८. पत्र : हीरालाल शर्माको

९ अप्रैल, १९३४

भाई शर्म्मा,

तुमारे दोनों खत मिले हैं। लंबा खत तो कया लिखुं? समय कहां?

द्रौपदीदेवीको साथका खत[1] देना। लड़का और लड़कीको सच्ची तालीम तुम दोनोंके संयमसे मिल जायगी। उनकी तालीम तुमारे संसर्गमें रहनेसे काफी होगी। इसका अर्थ यह नहिं की यदि कोई शिक्षा आश्रममें पा सके तो न पावे। यह तुमारे प्रयत्नकी पूर्तिमें हो सकती है।

तुमारे हाथमें आश्रमके कोई मरीज आ जायं उसका उपचार तो अवश्य किया जाय। तुमारे इस ज्ञानका उपयोग मैं पूरा लेना चाहता हूं। ज्यों-ज्यों वहांके लोगोंका तुमारे इस ज्ञानका उपयोग मैं पूरा लेना चाहता हूँ। ज्यों-ज्यों वहाँके लोगोंका विश्वास बडे त्यों-त्यों यह काम वड़ता जायगा।

तुमारे दोनोंने चरखाकी सव क्रियाएं सीख लेनी हैं। आश्रममें नैसर्गिक चिकित्सा की मेरी किताब आ गई है। उसमेंसे किसीका उपयोग करना है तो किया जाय।

कृष्णाको तुमारे पास बुला लेना अच्छा होगा।

अगस्त मासमें देखें क्या होता है। सुभिता रहा तो मेरे पास बुला लुंगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ५८-९ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

३८९. पत्र : अमतुस्सलामको

९ अप्रैल, १९३४

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारे खत मिले हैं, लेकिन वक्त कहांसे निकालूं? अब तो डाक्टरके पास आ गई। मेरे खतकी इतनी जरूर न रहनी चाहिए। मेरा निवेदन[2] तुमने देखा होगा। अब तुम्हारे जेल जानेकी बात रहती नहीं है। तुम्हारा वहीं रहना आजकल तो अच्छा लगता है। आगे देखा जायेगा।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २९९) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. देखिए "वक्तव्य: समाचार-पत्रोंको", पृ० ३७८-८१।

३९०. भाषण : पूर्णियाकी सार्वजनिक सभामें

९ अप्रैल, १९३४

महात्माजी ने पीड़ितोंकी घोर विपत्तिमें उनके साथ हार्दिक सहानुभूति व्यक्त करते हुए, उपयुक्त शब्दोंमें उत्तर[1] दिया। उन्होंने कहा :

एक ईश्वर ही सब-कुछ ठीक कर सकता है।

उन्होंने नगरपालिकाके अध्यक्षको सम्बोधित करते हुए कहा कि नगरपालिकाकी भी सरकारतक उतनी ही पहुँच है जितनी कि केन्द्रीय समितिकी, इसलिए नगर-पालिकाको सरकारसे सीधा सम्पर्क करना चाहिए और आश्वस्त रहना चाहिए कि केन्द्रीय राहत-समिति जितना भी कर सकती है, जरूर करेगी। बिहार केन्द्रीय राहत-समितिकी एक शाखा खोलनेके बारेमें उन्होंने कहा कि उस मामलेमें बाबू राजेन्द्र-प्रसादसे बात की जानी चाहिए और वे अवश्य ही आवश्यकतानुसार कार्यवाही करेंगे। भूमिका धँसकना सचमुच एक भारी खतरा पैदा करता है। परिस्थितिका बिलकुल ठीक-ठीक पता लगाना चाहिए और सरकार ही विशेषज्ञोंकी मददसे यह सबसे अच्छी तरह करनेकी स्थितिमें है।

बाढ़के खतरेकी चेतावनी आपको पहलेसे दी जानी चाहिए और अन्य जिलोंके अन्य स्थानोंकी भाँति पूर्णियामें भी उसका सामना करनेकी सभी तैयारी पहलेसे की जानी चाहिए। वर्षाके अगले मौसममें निश्चय ही परिस्थिति बड़ी भीषण हो जायेगी और सरकार, केन्द्रीय राहत-समिति तथा जनताका यह कर्त्तव्य है कि वे लोगोंको उस विपत्तिसे बचानेके लिए यथेष्ट व्यवस्था करें। सरकार और केन्द्रीय राहत-समिति, दोनों वर्तमान संकटमें जनताकी सहायताके लिए अपनी शक्ति-भर प्रयत्न करेंगी, परन्तु उससे अधिक कुछ होनेवाला नहीं है। जनताको खुद ही कमर कसकर और ईश्वर पर पूरा भरोसा रखकर, काम करना चाहिए और अपने ऊपर पड़ी विपत्तिसे जूझना चाहिए। उसकी सफलता निश्चित है। विपत्तियाँ वास्तवमें हमारे बीच फैले पापोंके विरुद्ध चेतावनीके रूपमें आती हैं और इसलिए लोगोंको अपने व्यक्तिगत तथा सामा-जिक पापों से अपने-आपको मुक्त करना चाहिए। ऐसा अवसर इसलिए आया है कि हम खुद अपने-अपने पापोंको समझें, उनपर विचार करें और दूसरोंके दोष ही न देखते रहें। अस्पृश्यता मिटनी ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

सर्चलाइट, १३-४-१९३४

१. सभामें भेंट किये गये मानपत्रका।

३९१. डॉ० विधानचन्द्र रायको लिखे पत्रका अंश

[१० अप्रैल, १९३४ या उसके पूर्व][1]

मुझे असमके अतिरिक्त छोटा नागपुर, उड़ीसा, संयुक्त प्रान्त, पंजाब, सिन्ध, राजपूताना, महाराष्ट्र, बम्बई और गुजरातका दौरा करना है, बंगालका तो करना ही है; और इन सभी प्रान्तोंका दौरा मुझे आगामी जुलाईके अन्ततक पूरा कर लेना है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १२-४-१९३४

३९२. पत्र : छगनलाल जोशीको

असम जाते हुए
१० अप्रैल, १९३४

चि० छगनलाल,

तुम्हारे दो पत्र मेरे पास पड़े हैं। मैं उन्हें फिर पढ़ गया हूँ। यह पत्र मैं असम जानेवाली गाड़ीमें लिख रहा हूँ। यह पार्वतीपुर स्टेशन है। लोग शोर मचा रहे हैं। (इतना लिखनेपर चन्दा उगाहनेमें लग गया।) मेरा डिब्बा बिलकुल आखिरमें होनेके कारण लिखनेमें दिक्कत होती है। इसके सिवा वर्षा शुरू हो गई है।

तुमने अखबारोंमें देखा होगा कि अब तुम्हें फिलहाल तो जेल नहीं जाना है। रमाको भी जेल जानेकी जरूरत नहीं है। बहुत विचार करने और हृदयमंथनके बाद मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ। फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह निर्णय आवश्यक और शुद्ध है। इसकी आलोचना तो होगी ही, निन्दा भी होगी, भले हो। अब यह एक बड़ा प्रश्न उठ खड़ा हुआ है कि तुम्हें, रमा और अन्य आश्रमवासियोंको क्या करना चाहिए। मैंने नारणदासको बुलाया है। या तो हम उड़ीसामें मिलेंगे अथवा मैं बम्बई जानेका प्रयत्न भी कर रहा हूँ। उस समय यदि तुम भी पहुँच जाओ तो अच्छा हो। या फिर वहींसे अपने विचार लिख भेजना। पुराना आश्रम जैसा था वैसा तो हम कदापि खड़ा करना नहीं चाहते। लड़ाई तो चल ही रही है। मैं अकेला इसे चलानेवाला हूँ, इस कारण वह बन्द नहीं हुई, और न यह धीमी पड़ी है; बल्कि

१. गांधीजी द्वारा असमके दौरेका उल्लेख करनेके कारण यह तारीख दी गई है; देखिए अगला शीर्षक।

एक नया और शुद्ध रूप ले रही है। यदि तुम मेरे निवेदनको भली-भाँति पढ़ जाओ तो सब-कुछ दिनके प्रकाशकी भाँति स्पष्ट हो जायेगा।

मुझे तो अब भी यही लगता है कि रमा और विमुके लिए वर्धा ही सबसे अच्छी जगह है। किन्तु उन्हें जबरदस्ती हम वहाँ नहीं भेजेंगे। यही उचित होगा कि वे अपनी रुचिके अनुसार चलें।

आशा है, तुम्हारे शरीरमें शक्ति आ गई होगी। यों तो और भी बहुत-सी बातें लिखी जा सकती हैं किन्तु लिखनेका समय मैं कहाँसे लाऊँ? स्वामी तुम्हें लिखते रहते हैं। आशा है, उनसे तुम्हें काफी खबरें मिल जाती होंगी। प्यारेलालको राजेन्द्र बाबूने माँग लिया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५१८)से।

३९३. भाषण : सार्वजनिक सभा, रूपसीमें[1]

११ अप्रैल, १९३४

एक बहुत लम्बे अर्सेके बाद फिर से असम आनेकी मुझे बड़ी खुशी है। मैं इस बार हरिजन-आन्दोलनके सम्बन्धमें आया हूँ। अस्पृश्यता हिन्दू-धर्मका एक बड़ा कलंक है। यदि हम इसे समय रहते मिटायेंगे नहीं तो धरतीसे हमारा अपना अस्तित्व ही मिट जायेगा। आपके मानपत्र और थैलीके लिए मैं आपका आभारी हूँ, क्योंकि ये दोनों आपके इस संकल्पके प्रतीक हैं कि आप अपने नित्यप्रतिके जीवनसे अस्पृश्यताको समूल उखाड़ फेंकेंगे। कहा जाता है कि असम और बंगालमें कोई बहुत अधिक अस्पृश्यता नहीं है। लेकिन मैं नहीं समझता कि यह कथन यथार्थ परिस्थितिसे मेल खाता है। मनुष्य और मनुष्यमें किसी प्रकारका भेद करते ही, ऊँच और नीचकी श्रेणियाँ बनाते ही हम अस्पृश्यता बरतनेके दोषी बन जाते हैं। निश्चय ही, असममें ऐसा काफी भेद बरता जाता है। इस भेदभावके शिकार बननेवाले लोग इसे यहाँ भी उतनी ही तीव्रतासे महसूस करते हैं जितनी तीव्रतासे देशके अन्य भागोंमें लोग महसूस करते हैं। और आप लोग डोमोंको नीची निगाहसे देखते हैं। दूसरे प्रान्तोंसे यहाँ आनेवाले भंगियों और चमारोंको आप नीचोंसे नीच मानते हैं। और आम तौरपर लगभग सभी जातियाँ अपने-आपको अन्य जातियोंसे ऊँची मानती हैं और मुसलमानों, ईसाइयों तथा अन्य जातियोंके लोगोंको भी किसी-न-किसी तरहसे अस्पृश्य माना जाता है। अस्पृश्यता को मिटानेका मतलब है कि हम ऊँच-नीचके सभी भेद-भावोंसे मुक्ति पायें और सभी मनुष्योंके साथ समानताका बरताव करें, सभी मनुष्योंको एक ही ईश्वरकी सन्तान

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र)से उद्धृत।

मानें और इस तरह उनके साथ सच्चा भाईचारा कायम करें। मुझे यह कहनेमें तनिक भी संकोच नहीं कि मैंने जिस अस्पृश्यताका वर्णन किया है और हम आज जैसी अस्पृश्यता कमोबेश सारे भारतमें बरत रहे हैं, उसका हमारे शास्त्रोंमें कहीं कोई आधार नहीं है। मैं चाहता हूँ आप इस एक सबसे भले उद्देश्यके लिए किये जानेवाले कार्यको अपना आशीर्वाद और अपना सहयोग दें।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-४-१९३४

३९४. भाषण : प्रार्थना-सभा, रंगियामें[1]

१२ अप्रैल, १९३४

सुबहकी प्रार्थनाके बाद भाषण करना मुझे हमेशासे नापसन्द रहा है। पर मुझे जो उद्देश्य यहाँ असम खींच लाया है, वह मेरे लिए बड़े ही धार्मिक प्रकारका है, इसलिए प्रार्थना करनेके लिए एकत्र लोगोंको किसी सभाका श्रोतृ-समुदाय मान लेनेमें मुझे संकोच नहीं हो रहा है। परन्तु अपने उद्देश्यकी बात करनेसे पहले मैं यहाँ इतनी बड़ी संख्यामें जमा हुए आप लोगोंसे यह कहना चाहता हूँ कि आप बड़े सुबह उठकर प्रार्थनाके साथ अपना दिन शुरू करने और सोनेसे पहले प्रार्थनाके साथ अपना दिन समाप्त करनेकी आदत डालिए। यदि आप अपने पड़ोसियोंको इसमें शामिल नहीं कर सकते, तो अपने ही परिवारके सभी लोगोंको शामिल कीजिए। यदि परिवारके लोग भी शामिल न हो सकते हों, तो फिर अकेले ही प्रार्थना कीजिए। यदि आप ऐसी आदत डाल लेंगे, तो स्वयं देखेंगे कि हृदयसे की गई प्रार्थना कितनी शान्ति-दायक होती है और आप अपनेको स्थिरचित्त पायेंगे। और इतने शुभ ढंगसे शुरू किये हुए आपके दिनकी समाप्ति भी हमेशा अच्छी ही होगी। अभी हमने जिन श्लोकों का गायन किया, उनमें से एकका अर्थ यह है: "हे ईश्वर, मुझे न सांसारिक सम्पदाकी कामना है, न स्वर्गकी और न मैं मुक्ति ही चाहता हूँ। मेरी कामना है कि समस्त प्राणियोंके कष्ट दूर हो जायें।" यह कोई नया रचा हुआ आधुनिक श्लोक नहीं है। यह एक अत्यन्त प्राचीन सनातनी प्रार्थना है। क्या आप समझते हैं कि आप प्रतिदिन इस प्रार्थनाको लगातार सच्चे दिलसे गाते हुए भी अपने उन करोड़ों भाइयोंके साथ अस्पृश्यताका बरताव करते रह सकते हैं, जिनके जीवनका सारा सार-तत्व ही निचुड़ चुका है और जिनके साथ पालतू पशुओंसे भी बदतर बरताव किया जाता है? इसलिए प्रत्येक भले हिन्दूके लिए सुविदित इस प्रार्थना और अस्पृश्यता, इन दोनोंमें से आपको किसी एक को चुनना पड़ेगा। मेरा सुझाव है कि आप अपने लिए प्रार्थनाको चुनें और अपने हृदयोंसे अस्पृश्यताको निकाल फेंकें। अस्पृश्यताको घोर पाप मानिए।

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। गांधीजी बारपेटासे तेजपुर जाते हुए रास्तेमें सुबहके समय रंगियामें रुके थे।

लेकिन जहाँ एक भी मनुष्यको अस्पृश्य मानना पाप है, वहीं मैं आपको कुछ ऐसे अस्पृश्योंसे भी मिला सकता हूँ जिनसे आपको हर कीमतपर दूर ही रहना है और ये अस्पृश्य हैं बुरे विचार, जो हमको रोज-रोज बुरे कर्मोंमें प्रवृत्त करते हैं। उनको निकाल फेंकनेकी जरूरत है। और असममें अफीमकी कुटेव भारतके अन्य भागोंसे कहीं अधिक हैं। यह बुराई सच्चे अर्थोंमें अस्पृश्य है। अफीम खानेकी आदत बुद्धिको मन्द और शरीरको आलसी बना देती है। मैं यह माननेको तैयार नहीं कि अफीम किसी तरहका कोई फायदा भी करती है। इसलिए यदि आप मेरी सलाह मानें तो आपसे मेरा अनुरोध है कि आप नित्यप्रति ईश्वरसे यही प्रार्थना करें कि वह आपको अपने हृदय से मानव अस्पृश्यताको निकाल फेंकनेकी शक्ति दे, और बुरे विचारको अस्पृश्य माननेकी सुबुद्धि तथा इस मान्यताके अनुसार चलनेकी शक्ति दे। यदि आप स्वयं अफीम खानेकी आदतके शिकार हों, तो ईश्वरसे प्रार्थना कीजिए कि वह आपको इस आदतसे छुटकारा पानेमें मदद दे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-४-१९३४

३९५. टिप्पणियाँ

स्वागत-समितियाँ ध्यान रखें

हरिजनोंके निमित्त चल रहे दौरेके सिलसिलेमें मैं जिन-जिन स्थानोंपर गया हूँ वहाँसे, ठक्कर बापा द्वारा प्रान्तीय हरिजन सेवक संघोंको भेजे गये एक परिपत्रके उत्तर में, हमारे पास मेरे स्वागतके सिलसिलेमें हुए खर्चके लेखे आते रहे हैं। खण्डवामें मुझे ३,००० से कुछ अधिक रुपयोंकी थैली भेंट की गई थी। मैंने वहाँसे भेजे गये लेखेमें देखा है कि मुझको भेंट किये गये मानपत्रकी छपाईपर लगभग ४० रुपए खर्च दिखाया गया है और कुछ राशि स्वयंसेवकोंकी वर्दियोंपर भी खर्च की गई थी। खर्चकी कुछ दूसरी मदें भी हैं, जो मुझे फिजूलखर्ची लगती हैं, पर मैं उनके बारेमें कुछ नहीं कहता। लेकिन यह सोचना कि मानपत्रों और स्वयंसेवकोंकी वर्दियोंपर होनेवाला खर्च थैलीकी राशिमें से निकाला जाये, पूरे स्वागतको ही एक तमाशा, बल्कि एक पतनकारी चीज बना देता है। यदि स्वागतका आयोजन करना ही हो तो मान-पत्रोंको छपवाने, उनकी सजावट आदिपर होनेवाले खर्चके लिए अलगसे पैसा इकट्ठा करना चाहिए और वह भी थैलीके लिए चन्दा जमा हो चुकनेके बाद ही किया जाना चाहिए। स्वागतपर खर्च बढ़ाकर हरिजनोंके निमित्त चल रहे दौरेकी शोभाको तो फीका नहीं बनाना चाहिए। खर्चीला स्वागत बिलकुल अनावश्यक है। मैं समझता हूँ कि एक तरहका कुछ प्रदर्शन तो अनिवार्य है और आवश्यक भी। लेकिन जब वह स्वतःस्फूर्त होगा, सहज होगा, तब उसपर एक पैसा भी खर्च नहीं आना चाहिए और यदि आये ही तो उसके लिए अलगसे चन्दा जमा किया जाना चाहिए —

सो भी इस ढंगसे कि थैलीके लिए किये जानेवाले चन्देपर उसका कोई असर न पड़े। मंजूषाएँ देना नितान्त अशोभनीय है और मानपत्र अनावश्यक हैं। मानपत्रोंके स्थानपर तो स्थानीय हरिजन-कार्योंका एक संक्षिप्त विवरण मुझे भेंट किया जाना चाहिए और वह भी साफ-सुथरी लिखावटमें हाथसे लिखकर ही मुझे दिया जाना चाहिए, जिससे मैं उसके बारेमें कुछ कह सकूँ। खण्डवाके खर्चके लेखेका यह उल्लेख मैंने वहाँकी स्वागत-समितिपर आक्षेप करनेके लिए नहीं किया है। अनेक स्वागत-समितियोंने शायद खण्डवाकी समितिकी तरह ही किया है। स्पष्ट है कि वे समितियाँ यह नहीं समझ पाईं कि हरिजनोंका सच्चे सेवक होनेका दावा करनेवाले मुझ-जैसे व्यक्तिको भेंट किये जानेवाले मानपत्रों तथा मंजूषाओंपर किये गये खर्चको हरिजनोंके लिए दी गई थैली की राशिमें से निकालना कितना अनुचित है।

एक खोई हुई जंजीरका किस्सा

एक खोई हुई जंजीर कैसे मिली, किस तरह अन्ततः वह हरिजन-कार्यमें लगा दी गई और सो एक हरिजनकी ईमानदारीके फलस्वरूप –– इस सबका यह विवरण पाठकोंको रुचेगा। तमिलनाडुसे पल्लादमके श्रीयुत आर० एम० कुमारस्वामी लिखते हैं:

श्रद्धेय महात्माजी,

आपके हालके दौरेमें तिरुपुरसे कोयम्बटूर जाते हुए आपको पल्लादममें साढ़े चार सौ रुपयेकी एक थैली भेंट की गई थी। वहाँ मेरी चार वर्षीया भानजी अपनी सोनेकी जंजीर आपको भेंट करना चाहती थी। पर मेरी चाचीको जंजीर भेंट करना पसन्द नहीं था। इसलिए उसने जंजीर लेकर अपने पास रख ली थी। आपके पल्लादममें पधारनेके समय पता नहीं कैसे भीड़में वह जंजीर मेरी चाचीसे खो गई। मैंने उनसे कहा कि जंजीरका खोना एक तरहसे बच्चीकी इच्छाकी अवहेलना करनेका जुर्माना है।

हमें दो हफ्ते बाद जंजीरका सुराग मिला। वह जंजीर एक दसवर्षीय हरिजन बालक को मिली थी। वह पड़ोसके ही एक गाँवका था। हम एक पखवारे बाद बालकके पिताके पास गये। पहले तो उसने कहा कि उसे उसकी कोई जानकारी ही नहीं थी। उसे यह डर था कि शायद उससे कैफियत तलब की जायेगी। फिर जब मैंने उसे आपके दौरेका उद्देश्य समझाया और कहा कि खोई हुई चीज यदि उसके बालकको मिले तो उसे अपने पास रखनेमें गलत तो कुछ भी नहीं है तब उसने खुशी-खुशी मुझे सारी बात बतला दी और अपनी मर्जीसे जंजीर लौटा दी। मैंने उसे भेंटके तौरपर २५ रुपये दिये जो उसने कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार कर लिये और उसने शराब पीनेकी अपनी बुरी आदत छोड़नेका वादा किया। यहाँके हरिजनोंमें उसे एक ईमानदार और भरोसे का आदमी माना जाता है।

मेरे परिवारके सभी लोग बच्चीकी इच्छानुसार यह जंजीर आपको भेजना चाहते हैं। यदि आप अनुमति दें तो मेरी यह भी इच्छा है कि इस जंजीरसे मिलनेवाली राशि पल्लादममें हरिजन-कार्यके लिए रखी जाये। मैं इसे इन क्षेत्रोंमें होनेवाले हरिजनोद्धार-कार्यका शुभारम्भ मानूँगा।

मैंने पत्र-लेखकको आश्वस्त कर दिया है कि जंजीरसे मिलनेवाली रकमका उपयोग उनकी इच्छानुसार ही किया जायेगा।[1] हाँ, उनका यह सोचना गलत है कि खोई हुई वस्तु पानेवालेकी ही होती है। यदि उस वस्तुके मालिकका पता न लगे, तो वह राज्यकी होती है। मैं सही मालिकको जंजीर लौटानेवाले हरिजनको, अपने संकल्पके लिए उस चार वर्षीया बालिकाको और अन्ततः उस नन्ही दानकर्त्रीकी इच्छाका सम्मान करनेके लिए उसके सम्बन्धियोंको बधाई देता हूँ। पर उसे यह भी जानना चाहिए कि हरिजन-कार्यके लिए अपनी जंजीर देनेवाली अपनी अवस्थाकी वह पहली बालिका नहीं है।

उनकी दुर्दशा

श्रीयुत पी० मजमूदार लिखते हैं:

ऐसा बताया गया था कि रोजीके अभावमें, या सच पूछिए तो अस्पृश्य होनेके कारण शेष जनताको सुलभ रोजगारकी सम्भावनाओंसे वंचित रहनेकी वजहसे हरिजन लोग गोबरसे चुने गये बिना पचे अनाजके दानोंपर गुजारा कर रहे हैं। हाल में ही गुजरातमें ऐसा ही एक घिनौना दृश्य देखकर मेरे हृदयको आघात लगा। मैं भाल जिलेके एक गाँवमें गया हुआ था। मैंने वहाँ भंगी बस्तीमें जगह-जगह सूखनेके लिए गोबर फैलाया हुआ देखा। कारण पूछनेपर वहाँ रहनेवाले हरिजनोंने बतलाया कि रोजीके साधन बहुत ही स्वल्प होनेसे उनको गोबरसे चुने गये अनाजके दानोंपर ही गुजर करनी पड़ती है। गोबर सुखानेके बाद, वे उससे बिना पचे और अधचबे दाने चुन-कर उनको धोकर, सुखाकर पीस लेते हैं और फिर उस आटेसे चपातियाँ बनाते हैं।

मैंने सवर्ण हिन्दुओंके बीच ऐसा कुछ होते न कहीं देखा और न सुना ही है। श्रीयुत पी० मजमूदारने अपनी आँखों-देखी बात लिखी है, इसलिए उनके साक्ष्यपर कोई शंका नहीं की जा सकती। सवर्ण हिन्दू देखें कि अस्पृश्यता उनके हिन्दू भाइयोंके ही एक भागकी क्या दुर्दशा कर रही है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-४-१९३४

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं हुआ।

३९६. एक सुधारककी कठिनाई

एक सज्जन लिखते हैं:

> **आप अस्पृश्यताके विरुद्ध अपने अभियानमें कुछ ऐसी बातें कह जाते हैं जो 'यंग इंडिया' में प्रकाशित आपके पहलेके लेखोंके साथ मेल खाते नहीं लगते। उदाहरणके तौरपर, आपने कुछ वर्ष पहले लिखा था कि अन्तर्जातीय खान-पानके प्रतिबन्धके नियमका मंशा आत्मिक विकास है, लेकिन वह वर्ण-धर्मका एक अंग नहीं है। यदि आप आत्मिक विकास की खातिर अन्तर्जातीय खान-पानको प्रतिबन्धित करना ठीक समझते हैं या उसे आवश्यक मानते हैं, तो फिर आप आजकल जो यह कहते रहते हैं वह कैसे कह सकते हैं कि अस्पृश्यताके आधारपर किसी 'अस्पृश्य' के साथ खान-पान रखनेपर किसीका आपत्ति करना पाप है? मैं आपकी इस बातसे सहमत हूँ कि अन्तर्जातीय खान-पान-सम्बन्धी प्रतिबन्ध वर्ण-धर्मका कोई अंग नहीं है, लेकिन मेरी समझमें नहीं आता कि अन्तर्जातीय खान-पानसे आत्मिक विकासमें बाधा क्यों पड़नी चाहिए।**

यहाँ दोहरी उलझन दिखाई देती है। पहली बात तो यह कि अस्पृश्यताके आधारपर अन्तर्जातीय खान-पान प्रतिबन्धित करना एक चीज है और आत्मिक विकासके निमित्त ऐसा करना एक बिलकुल ही दूसरी चीज है। पहले प्रकारके प्रतिबन्धमें तो समाजके एक समूचे वर्गको पृथक् कर दिया जाता है और उसके अस्तित्व तकको खतरा पैदा हो जाता है, जब कि दूसरे प्रकारके प्रतिबन्धमें किसीको भी एक वर्ग-विशेषमें जन्म लेनेके कारण पृथक् नहीं किया जाता, लेकिन उसमें कुछ खास आदतोंके गुलाम व्यक्तियोंको पृथक् किया जा सकता है। इस प्रकार, अस्पृश्यताके आधारपर लगाया हुआ प्रतिबन्ध तो व्यक्तिकी आदतोंका कोई खयाल किये बिना हमेशा लागू रहेगा, जब कि आत्मिक विकासके आधारपर बरता जानेवाला प्रतिबन्ध व्यक्ति-विशेषकी आपत्तिजनक आदतोंके छूटते ही समाप्त होने लगेगा। इसलिए 'यंग इंडिया' के उल्लिखित लेखोंमें व्यक्त किये गये विचारों और मेरे वर्तमान विचारोंमें कोई असंगति नहीं है। दूसरी चीज यह कि 'यंग इंडिया' में प्रस्तुत मेरा मत यदि असमर्थनीय हो, तो भी मेरे यह दिखा देनेसे — और मैं ऐसा दिखा चुका हूँ — कि पत्र-लेखककी शंकाका समाधान हो जाना चाहिए कि अस्पृश्यताके आधारपर अन्तर्जातीय खान-पान पर आपत्ति उठानेकी मैंने जो भर्त्सना की है, वह 'यंग इंडिया' में उल्लिखित उस प्रतिबन्धपर बिलकुल लागू नहीं होती जिसका मैंने अनुमोदन किया है।

पत्र-लेखक आगे पूछते हैं कि मैं अपने विचारों और वैष्णव साहित्य द्वारा निश्चित किये गये अनुल्लंघनीय प्रतिबन्धोंके बीच तालमेल कैसे बैठाता हूँ। प्रश्न सर्वथा संगत है। लेकिन मुझे स्वीकार करना पड़ेगा कि मैं दोनोंमें तालमेल बैठानेमें असमर्थ रहा हूँ। हालाँकि मुझे अपने वैष्णव होनेपर गर्व है, परन्तु मेरा गर्व यह अपेक्षा नहीं रखता कि मैं वैष्णव साहित्यमें विहित सभी धार्मिक विधियोंका पालन करूँगा ही। मैं वैष्णव धर्मको इसलिए मानता हूँ कि वह सार्वभौमिक प्रेम और इसलिए भ्रातृत्वकी भावना जगाता है; वह सत्य-व्रत और अहिंसा-व्रतका सख्तीके साथ पालन करनेपर सबसे अधिक जोर देता है और ईश्वरके प्रति निःस्वार्थ भक्तिका आग्रह करता है। हिन्दू-धर्मके धार्मिक और लौकिक साहित्यमें वैष्णव सन्तों तथा अन्य लेखकोंने जिस प्रकार दो-टूक भाषामें संकीर्णता, असहिष्णुता तथा धर्मान्धताकी भर्त्सना की है, उससे आगे इन दृष्टियोंसे अन्य कोई भी साहित्य नहीं जाता। इसलिए मुझे उन धार्मिक विधियोंको लेकर परेशान होनेकी जरूरत नहीं है जो वैष्णव धर्मकी भावनाके स्पष्ट ही प्रतिकूल हैं।

पत्र-लेखक अन्तमें कहते हैं:

> **हम अपनी शंकाओंका स्वयं ही समाधान नहीं कर सकते। हम आपका अपेक्षाकृत अधिक विवेकपूर्ण मत स्वीकार करते हैं। पर आपकी शिक्षाओंपर चलनेमें हमें अपने स्वजनों तथा प्रियजनों द्वारा भी बहिष्कृत किये जानेका खतरा उठाना पड़ता है। ऐसी परिस्थितियोंमें क्या किया जाये?**

इस प्रश्नका उत्तर देना कठिन है और यह तो हर व्यक्तिको कष्ट-सहनकी अपनी वैयक्तिक क्षमताके अनुसार ही अपने लिए तय करना पड़ेगा। अस्पृश्यताको एक बुराईके रूपमें देखनेवाले लोग उसे किसी भी रूपमें नहीं बरत सकते। मैं आशा करता हूँ कि इस प्रकारके अत्यधिक महत्त्वपूर्ण मामलेमें हर सुधारक अपने विश्वाससे बल हासिल करके अपने ऊपर पड़नेवाले सभी कष्टों और सामाजिक दण्डोंका सामना करेगा। संसार-भरमें सुधारकोंका यही भाग्य रहा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-४-१९३४

३९७. गलत तरीका

हरिजन-कार्यमें रुचि लेनेवाले एक मित्रने सनातनियोंके लेखोंसे इकट्ठी की गई कुछ कतरनें मेरे पास भेजी हैं। उनमें मुझपर तरह-तरहके विचार थोपे गये हैं, और उनमें से कुछमें तो मेरे लेखोंसे कुछ उद्धरण भी तोड़-मरोड़कर पेश किये गये हैं, जिससे कि आम जनता मेरे खिलाफ हो जाये। मेरे मित्रने उन आरोपोंका उत्तर देनेके लिए कहा है। मेरे साथ ऐसा पहली ही बार नहीं हुआ है। उनमें उठाये गये कुछ प्रश्नोंके उत्तर मैं समय-समयपर दे ही चुका हूँ। मैं कुछ भी सफाई क्यों न दूँ, पूर्वग्रहोंसे ग्रसित लोग तो उसपर कान देंगे नहीं। और जो मित्रवत् हैं उनपर इन आरोपोंका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, विशेषकर तब जब कि आरोप बिलकुल बेसिर-पैरके हों, जैसेकि निस्सन्देह ये हैं। परन्तु कभी भी सहमत न होनेवाले आलोचकों और कभी भी बहकाये न जा सकनेवाले समर्थकोंके बीच सदा एक मध्यम वर्ग भी रहता है जो इस या उस पक्षकी ओर झुकाया जा सकता है। मेरे पास कतरनें भेजनेवाले मित्र शायद इसी मध्यम वर्गमें हैं। इसलिए उनके पत्रका इन स्तम्भोंमें उत्तर दिया ही जाना चाहिए। कुछ कतरनें इस प्रकार हैं:

१. "'महाभारत' शुरूसे आखिरतक बिलकुल बकवास है।"

२. "मैं श्रीकृष्णको अवतार नहीं, एक साधारण मनुष्य ही मानता हूँ।"

३. "मैं नैतिक नियमोंमें विश्वास नहीं रखता। मैं तो मूर्ति-भंजक हूँ।"

४. "हिन्दुओंका धर्म दानवी है, शास्त्रोंसे ईश्वरका कोई सम्बन्ध नहीं और ऋषि-मुनि दानव हैं।"

इसमें लगे उद्धरण-चिह्न सनातनियोंके लिखे मूल लेखके ही हैं। उनमें से किसी भी उद्धरणके अन्तमें 'यंग इंडिया' या 'नवजीवन'के लेखोंका कोई हवाला नहीं दिया गया है। 'यंग इंडिया' और 'नवजीवन'की फाइलें मेरे पास नहीं हैं। इसलिए मुझे अपनी स्मरणशक्तिका ही सहारा लेना पड़ रहा है।

'महाभारत' के बारेमें मैंने पहले कहा है और आज भी मेरा यही विश्वास है कि वह हीरोंकी एक ऐसी समृद्ध खान है जिसमें आप जितने ही गहरे उतरें उतने ही ज्यादा हीरे आपके हाथ लगते जायेंगे।

कृष्णके बारेमें मैंने पहले कहा है और आज भी मेरा विश्वास यही है कि वे अनेक अवतारोंमें से एक हैं।

मैंने यह कभी नहीं कहा कि हिन्दू-मन्दिर पापाचारके अड्डे हैं। परन्तु यह मैंने अवश्य कहा है और अब फिर दोहराता हूँ कि कुछ मन्दिर पापाचारके अड्डोंकी तरह हैं। मैं यह कह ही नहीं सकता था कि "मैं नैतिक नियमोंमें विश्वास

नहीं रखता", क्योंकि मेरे तईं धर्म और नैतिकता समानार्थी शब्द हैं। मेरे सभी लेखोंसे इसकी पुष्टि की जा सकती है।

हाँ, यदि मैं मूर्ति-पूजक भी हूँ तो सचमुच मैं मूर्ति-भंजक भी हूँ। मैं मिथ्या देवताओंके आगे सिर नहीं नवाता।

चौथा उद्धरण धर्मकी घोर निन्दा है, जो मैं कभी कर ही नहीं सकता। यदि मैं हिन्दू-धर्मको दानवी समझता तो मैं कभी का उसे त्याग चुका होता।

अपने-आपको सनातनी कहनेवाले लोगोंके प्रकाशनोंमें इस तरह तोड़-मरोड़ या अनापशनाप लेख देनेसे सनातनधर्म को किसी तरहका कोई फायदा होनेवाला नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-४-१९३४

३९८. कुछ संशोधन

हरिजन सेवक संघके प्रधान कार्यालयसे निम्नलिखित तीन संशोधन प्राप्त हुए हैं।[1]

१

नियम (५), पैरा २ में एक पूरक धारा जोड़ दी जाये : — केन्द्रीय बोर्ड द्वारा अपने अधिकारमें रखा गया मुख्य-मुख्य नगरोंका २५ प्रतिशत अभ्यंश तथा ५० प्रतिशत अभ्यंश भी इस इच्छाकी पूर्त्तिके हेतु सीधा कल्याण-कार्यमें ही लगाया जायेगा। श्री बिड़ला द्वारा अभिदानमें दी गई २५,००० रुपयोंकी राशि केन्द्रीय बोर्ड तथा कार्यालय और कर्मचारियों तथा यात्राओंपर होनेवाले व्ययके लिए अलग रख ली जायेगी। केन्द्रीय बोर्ड अब आगेसे प्रान्तीय बोर्डों द्वारा व्यवस्था तथा प्रचारपर किये गये व्ययके अपने भागका अंशदान पूरा करनेके लिए अलगसे चन्दा जमा करनेका विशेष प्रयत्न करेगा।[2]

२

नियम (९) के स्थानपर यह रखा जाये : (९) दौरेके तुरन्त बाद और अधिक राशियाँ जमा करनेकी कठिनाईको देखते हुए प्रान्तीय मन्त्रीको और साथ ही जिला मन्त्रियोंको भी कार्यालय-कर्मचारी नहीं बने रहना चाहिए, बल्कि उनको कल्याण-कार्यकी योजनाओंका आवश्यक अंग बन जाना चाहिए। इस

१. नियमोंके जिस प्रारूपमें ये संशोधन सुझाये गये थे उसके पाठके लिए देखिए "राय भेजिए", २-३-१९३४।

२. तात्पर्य गांधीजीकी इस विशेष इच्छासे है कि थैली-कोषकी निधिमें से एक रुपया भी व्यवस्था तथा प्रचारपर खर्च नहीं होना चाहिए, उसका उपयोग तो हरिजन कल्याण-कार्यकी योजनाओंको अमली रूप देनेके लिए ही किया जाना चाहिए।

प्रकार जिलोंमें योजनाओंके अधीक्षणके लिए आवश्यक प्रान्तीय कर्मचारियोंपर होनेवाला व्यय ७५ प्रतिशत अभ्यंशमें से पूरा किया जायेगा और जिलोंके बजटोंके अनुपातमें उनसे लिया जायेगा। परन्तु यह नियम उस तिथिसे केवल एक वर्ष तकके लिए ही प्रभावी रहेगा जिस तिथिको थैलीकी निधिके कारण उत्पन्न होनेवाले नये वित्तीय सम्बन्ध अस्तित्वमें आयेंगे।

३

नियम (१०)के रूपमें यह जोड़ दिया जाये:

जिस प्रान्तका दौरा पूरा हो चुका हो उस प्रान्तके बोर्डको दौरा पूरा होनेके दिनसे प्रान्तोंमें दो महीनेके अन्दर ही कल्याण-कार्यकी योजनाएँ जरूरी तौरपर पेश कर देनी चाहिए। ऐसा न होनेपर, पहलेकी व्यवस्थाके अन्तर्गत मंजूर किये गये अनुदान रोक दिये जायेंगे। नई व्यवस्थाके अन्तर्गत स्वीकृत अनुदान प्रान्तों द्वारा पेश की गई कल्याण-कार्यकी योजनाओंको केन्द्रीय बोर्ड द्वारा अनुमोदित कर दिये जानेके बाद ही अदा किये जायेंगे।

सभी सम्बन्धित लोगोंको, विशेषकर प्रान्तीय बोर्डोंको इन संशोधनोंपर सावधानीसे विचार करना चाहिए और प्रधान कार्यालयको अपने विचार अविलम्ब भेज देने चाहिए। आप देखेंगे कि नियम (५), पैरा २ का अनुपूरक इस मूल उद्देश्यकी पूर्त्ति ज्यादा अच्छी तरहसे करता है कि हरिजन-सेवाके लिए प्राप्त होनेवाले चन्दे जहाँ तक बन सके केवल कल्याण-कार्यमें ही लगाये जायें। और यदि प्रान्तीय बोर्ड इसमें हार्दिक सहयोग दें और यह समझ जायें कि हरिजनोंकी निःस्वार्थ और मौन सेवाके लिए तैयार रहना और ऐसी सेवा करना ही अस्पृश्यता-निवारणका सबसे शीघ्रप्रभावी तरीका है, तो इस उद्देश्यकी पूर्त्ति आसानीसे की जा सकती है। ऐसे कामसे एक साथ तीन प्रयोजन सिद्ध होते हैं। चूँकि इसके लिए कार्यकर्त्ताओंका शुद्ध होना जरूरी है, इसलिए सनातनियोंके बीच यही सबसे अच्छा प्रचार सिद्ध होगा। जिन लोगोंके दिलोंमें कोई मिथ्या धार्मिक विश्वास घर कर चुकता है, उनको कभी भी बौद्धिक तर्कोंसे सहमत नहीं किया जा सकता। परन्तु सुधारककी शुद्धता और सज्जनताका प्रभाव उनपर निस्सन्देह पड़ेगा। दूसरी चीज यह कि हरिजनोंके बीच निःस्वार्थ सेवा करके सुधारक उनमें पाई जानेवाली यदि सब नहीं तो कुछ बुरी प्रथाओं तथा आदतोंसे तो उनको छुटकारा दिला सकेंगे; इतना ही नहीं, वे हिन्दू-धर्ममें हरिजनोंकी आस्थाको दृढ़ता भी प्रदान कर सकेंगे, जबकि वे लोग अबतक हिन्दू-धर्मको अपने पतनके लिए ही जिम्मेदार मानते आये हैं। तीसरे यह कि व्यक्तिगत रूपसे हरिजनोंकी सेवा करने-वालोंसे बहुत ही ऊँचे स्तरका चारित्र्य अपेक्षित है और ऐसा चारित्र्य कार्यकर्त्ताओंके लिए निश्चय ही आन्तरिक आनन्दका स्रोत होगा।

दूसरे और तीसरे संशोधनोंके बारेमें इसके अलावा और कुछ कहनेकी जरूरत नहीं कि तीसरा संशोधन करना इसलिए आवश्यक समझा गया कि प्रान्तीय बोर्डोंने रचनात्मक कार्यकी अपनी योजनाएँ भेजनेके बारेमें लापरवाही बरती है। इस बातको,

जो शायद विचित्र लगे, मैं भली-भाँति समझता हूँ कि एक अच्छी रचनात्मक योजना तैयार करना और उसे निष्ठापूर्वक क्रियान्वित करनेवाले उतने ही अच्छे कार्यकर्त्ता जुटा सकना चन्दे जमा करनेकी अपेक्षा कहीं अधिक दुष्कर कार्य है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-४-१९३४

३९९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१३ अप्रैल, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आज उपवासका दिन है। और हम तेजपुरसे गोहाटी जानेवाले जहाजके डेक पर पड़े हैं। एक किनारे ठक्कर बापा, दूसरे किनारे ओम और आसपास हमारी मंडली है। सामने पाखाना है। बहुत गंदगी नहीं है। यहाँ तो बरसातका मौसम शुरू हो गया है। क्योंकि कल खूब वर्षा हुई थी, इसलिए आज उमस है। अतः डेकका सफर सह्य है। इस वक्त सुबहके नौ बजे हैं। हम लोग १२ के लगभग गोहाटी पहुँचेंगे। मीराबहन वहाँ पहुँच गई होगी। वह बीमार हो गई थी इसलिए उसे पटनामें छोड़कर हम रवाना हो गये थे। मेरा शरीर अच्छा है। पर्याप्त आराम मैं ले ही लेता हूँ। बूतेसे बाहर काम नहीं करता। यदि कोई डॉक्टरोंकी सभी बातें सुने, तब तो खाटसे उठना ही न हो।

अहमदाबादमें मजदूरों और मालिकोंके बीच जो झगड़ा हो रहा है, उसमें मुझे मालिकोंका दोष ज्यादा दिखाई देता है। मालिक खुद ही मंजूर करते हैं। इस बार कस्तूरभाईने[1] जिस तरह भाग लिया है, उससे उनकी शोभा नहीं बढ़ी। मालिकोंका प्रस्ताव इतना बेहूदा था कि मुझे लगा कि कुछ-न-कुछ लिखना ही चाहिए। मैंने कस्तूरभाईको मीठा उलाहना दिया। इस प्रस्तावके पीछे धमकीके सिवा कुछ था ही नहीं। परन्तु बारह बरसकी मेहनतसे बनाया हुआ मकान ढह जानेका डर था। मेरे पत्रका असर हुआ। यों कहो कि मालिकोंमें ही फूट पड़ गई। इसलिए चिमनभाई[2] और साकरलाल[3] मिलने आये। कस्तूरभाई जिनेवा जानेकी तैयारी कर रहे थे, इसलिए नहीं आये। मैंने कहा कि सबूतके बिना मजदूरोंका वेतन हरगिज नहीं घटाया जा सकता। परन्तु मैंने सुझाया कि अगर वे वेतनको नफेके साथ जोड़ने और कमसे-कम वेतन मुकर्रर करनेको तैयार हो जायें, तो इससे जो राहत उन्हें मिल सकती हो, वह मैं देनेको तैयार हूँ। यह सुझाव तो उन्हें पसन्द आया, परन्तु उन्होंने कहा कि इसपर अमल करानेमें दूसरे मालिकोंकी तरफसे कठिनाई होगी। यह तो है ही। अब देखूँ क्या हो सकता है।

१, २ और ३. अहमदाबादके मिल-मालिक।

मेरा निर्णय तो तुमने देखा होगा। तुम्हारी राय जाननेकी उत्सुकता रहती है। मैंने तो मान लिया है कि मेरे दोनों फैसले तुम इशारेसे ही समझ लोगे। दोनों ठीक ही हैं, इस बारेमें मुझे बिलकुल सन्देह नहीं है। अब सत्याग्रहको किसी तरहका खतरा नहीं रहा, और विधान-सभाओंमें जानेवाले पक्षकी निष्क्रियता टल गई। वह निष्क्रियता बहुत खटकती थी। वे भले जायें। यदि कार्य-पद्धतिमें शुद्धता बरती जाये तो वहाँ भी कुछ-न-कुछ काम तो होगा ही।

देवदास दिल्लीमें आराम कर रहा है। लक्ष्मीके गर्भके दिन पूरे हो गये हैं। जबतक राजाजी वहाँ हैं और लक्ष्मीका प्रसव नहीं हो जाता तबतक तो वह वहीं रहेगा।

बड़े लोग[1] मुझसे फिर अवश्य मिलेंगे। तुम्हें 'हरिजन' नहीं मिलता, यह आश्चर्यकी बात है। मैं जाँच कर रहा हूँ।

नाकका इलाज कठिन तो है ही, परन्तु वह ठीक होनी चाहिए। लेकिन कैसे ठीक हो सकेगी, इस बारेमें क्या कहा जा सकता है? इस सम्बन्धमें तो आखिरकार तुम्हें ही विचार करना पड़ेगा; क्योंकि मैंने देखा है कि डॉक्टर भी इस मामलेमें लाचार हो जाते हैं। बीमार ही यदि कोई रास्ता ढूंढ़ निकालता है तो काम बन जाता है। मेरा विश्वास है कि प्राणायाम और कुछ आसनोंका असर जरूर होना चाहिए। मैं मानता हूँ कि प्राणायाममें बाहरकी हवा दूनी या उससे ज्यादा मात्रामें उतने ही समयमें ली जानेके कारण उस भागको जो ऑक्सीजन मिलती है, उसका असर हुए बिना रह ही नहीं सकता। प्राणायामकी सारी क्रिया करके यदि देखोगे, तो तुम्हें भी पता चलेगा कि उस क्रियाका नाकके साथ निकट सम्बन्ध है। इसलिए नाकपर अच्छा या बुरा असर तो पड़ना ही चाहिए। किन्तु बुरा असर पड़नेकी कोई सम्भावना नहीं है। इसलिए जो असर होगा अच्छा ही होगा। प्राणायाम स्वच्छ हवामें ही करना चाहिए। इसलिए मैदानमें किया जाये तो अच्छा होगा। तुम कहाँ सोते हो, यह मैंने कभी नहीं पूछा। परन्तु मैं मान लेता हूँ कि तुम्हारी कोठरी खुली ही रहती होगी।

डाह्याभाईने मणिका पत्र भेजा था। यह बहादुरीसे भरा होनेपर भी कष्टकर अवश्य है। अमीनभाईसे मैं मिला हूँ। वहाँ उन्हें कितना समय बिताना है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ९१-३

1. प्रमुख नेता।

४००. भाषण : सार्वजनिक सभा, गोहाटीमें[1]

१३ अप्रैल, १९३४

गांधीजी ने कहा कि मैं हरिजन बस्तियोंकी दशाको देखकर गोहाटी नगर-पालिकाकी सराहना नहीं कर सकता। वे आदमियोंके रहने लायक नहीं हैं। यह कहनेसे कोई फायदा होनेवाला नहीं कि हरिजन लोग गन्दे होते ही हैं। नगरपालिका चाहे तो उनको गन्दी आदतें छोड़ना सिखा सकती है। आपने बताया कि हरिजनोंके लिए प्रसिद्ध कामाख्या मन्दिर और कई दूसरे मन्दिरोंके भी दरवाजे खोल दिये गये हैं, यह तो खुशीकी बात है। लेकिन आपको तबतक चैनकी साँस नहीं लेनी चाहिए जबतक आप हरिजनोंको बाकी समाजसे अलग करनेवाले बाड़ोंको बिलकुल ही गिरा नहीं देते और उनको सारे समाजके साथ बराबरीके दर्जेपर नहीं ले आते। अब इस चौंसठ वर्षकी अवस्थामें मैं श्रमका जीवन छोड़कर विश्रामका जीवन अपनानेका हकदार तो हो ही गया हूँ, लेकिन मैं इसी आध्यात्मिक उद्देश्यकी खातिर अपना सन्देश सुनाने दर-दरकी धूल फाँकता घूम रहा हूँ। मेरे लिए तबतक चैनसे बैठना नामुमकिन है जबतक कि हमारे पवित्र देशपर अस्पृश्यताका दानव हावी रहता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-४-१९३४

४०१. तार : नारणदास गांधीको

गोहाटी
१४ अप्रैल, १९३४

नारणदास गांधी
नवापरा
राजकोट

तार मिला। सम्भव हो तो तीस तारीखको राँची आ जाओ।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

४०२. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१४ अप्रैल, १९३४

प्रिय सतीश बाबू,

आपका पत्र मिला।

आपको किसी भी हालतमें बहुत ज्यादा काम करके अपने ऊपर अपनी सामर्थ्यसे अधिक बोझ नहीं डालना है। मेरी यह एक बुरी आदत है कि मैं उत्साही कार्यकर्त्ताओंपर कामका इतना बोझ लाद देता हूँ कि उनमें बहुधा उसे ठीकसे सँभालनेकी शक्ति नहीं होती। मुझे आपसे सचाईकी उम्मीद है और सचाईका यही तकाजा है कि जब कभी मैं आपसे आपकी सामर्थ्यसे ज्यादाकी उम्मीद करने लगूँ तो आप मुझे चेता दें।

आपका यह सोचना गलत है कि सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी मेरा निर्णय किसी भी रूपमें आपमें से किसी भी कार्यकर्त्तापर कोई आक्षेप है। यदि आक्षेप किसीपर है भी तो स्वयं मुझपर ही है। लेकिन मुझे अपना अपराध कबूल करनेकी जरूरत नहीं। मैं तो आप सबका एक सहकर्मी — एक वरिष्ठ सहकर्मी-भर हूँ। पहलेके कामोंके फलस्वरूप हमने कुछ भी खोया नहीं है। हाँ, यदि स्पष्टतया आवश्यकता महसूस कर लेनेपर भी मुझमें विराम लगा देनेका साहस न होता, तो अवश्य हम कुछ खो बैठते। उपवास करनेका कोई कारण सामने नहीं था। यदि मैं करता तो वह निरा बल-प्रयोग ही होता।

मेयरका चुनाव एक दिशा-संकेत है। हमें अग्नि-परीक्षा देनी ही होगी। परिषद्-प्रवेश-सम्बन्धी निर्णय बिलकुल ठीक है। हमें कांग्रेसियोंका एक संसदीय दल और जब कांग्रेस संस्था वैधानिक रूपसे काम कर सके तो एक संसदीय विभाग रखना ही चाहिए। अब चूँकि कांग्रेसी परिषद्वालोंकी तरह काम करेंगे इसलिए कुछ ही दिनोंमें यह स्पष्ट हो जायेगा कि परिस्थितियाँ कैसे ढलती हैं। हमें गलतियोंकी सीढ़ीसे चढ़कर ही सत्यतक पहुँचना पड़ेगा।

मैं आपके बंगाल-कार्यक्रमपर नजर रखूँगा।

हेमप्रभाने मुझे पत्र लिखा है। उसे अलगसे पत्र लिखनेका समय नहीं है। मैंने जो-कुछ कहा है उसपर विचार करके वह अपना मार्ग आप निकाल लेगी और खादीके सिलसिलेमें जो ठीक समझेगी सो करेगी। कोई दुस्साहसपूर्ण कदम नहीं उठाना है। मुलाकात होनेपर हम चीजोंके बारेमें अधिक विस्तारसे चर्चा करेंगे।

अरुणका पुर्जा मिला था। मैं उसको अलगसे नहीं लिखूँगा। उसे अपनी देह बलिष्ठ बनानी चाहिए।

आप सभीको स्नेह।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९५० बी०) से; सौजन्य : घ० दा० बिड़ला

४०३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको[1]

गोहाटी
१४ अप्रैल, १९३४

प्रिय जवाहरलाल,

बकाया पत्र-व्यवहार निबटानेके लिए मैं आज रात सवा बारह बजे उठा हूँ।

मुझे तुम्हारा ध्यान हर समय रहा है। आशा है, तुमको यह पत्र प्राप्त करनेकी अनुमति मिल जायेगी। मैं चाहता हूँ कि तुम मुझको दो पंक्तियाँ लिखकर बतला दो कि तुम कैसे हो और क्या कर रहे हो।

तुमने मेरे दो निर्णय देख लिये होंगे। दोनों एक ही समयमें किये गये, यह मात्र संयोग है। स्वराज्य पार्टीका पुनरुद्धार एक सही कदम है। इसमें जरा भी शक नहीं कि कांग्रेसमें ऐसे लोगोंका एक समुदाय है जो विधान परिषद्-प्रवेशमें विश्वास करते हैं और जो उस कार्यक्रमके न रहनेपर और कुछ भी करनेको तैयार नहीं हैं। उनकी आकांक्षा पूरी की जानी चाहिए। सविनय प्रतिरोधको केवल अपने-आपतक सीमित करनेका दूसरा निर्णय, जहाँतक लक्ष्यका सम्बन्ध है, सर्वाधिक महत्त्व रखता है। ऐसा निर्णय अनिवार्य हो गया था। निर्णयपर पहुँच चुकनेके बाद, अब उसके सही होनेके पक्षमें हजारों कारण मुझे दिखाई दे रहे हैं। मैंने सबसे निर्णायक, तात्कालिक कारण ही बताया है। लेकिन यह निर्णय तो मेरे मनमें पहलेसे ही धीरे-धीरे बनता जा रहा था। मुझे आशा है कि उसे सुनकर तुम परेशान नहीं हुए होगे। जब यह निर्णय स्वरूप ग्रहण कर रहा था उन दिनों हर समय मुझे तुम्हारा ध्यान बना रहता था। मैं फिर इसी निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि तुम थोड़े समयके लिए इससे कुछ विचलित चाहे हो जाओ, पर अन्तमें इसकी सचाई समझ जाओगे और तब तुमको इससे खुशी ही होगी। ठीक है न?

हम लोग अकसर तुम्हारी बातें करते रहते हैं। हमारी मण्डली काफी बड़ी है। इलाहाबादसे गुजरते समय मैंने लगभग दो घण्टे माताजी और परिवारके अन्य सदस्योंके साथ बिताये थे।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३४; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। सी० डब्ल्यू० ७९५० से भी; सौजन्य : घ० दा० बिड़ला

१. वे इन दिनों अलीपुर सदर जेलमें थे।

४०४. पत्र : सर जॉर्ज शुस्टरको[1]

पटनाके पतेपर
१४ अप्रैल, १९३४

प्रिय सर जॉर्ज शुस्टर,

आपके ६ अप्रैलके पत्रके लिए मैं आपका आभारी हूँ। वह मुझे असममें अपने हरिजन-दौरेमें अभी-अभी मिला है।

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि सरकारने नमकके बारेमें अपने १९३१के निर्णयमें कोई भी परिवर्तन करनेके लिए सविनय अवज्ञाका पुनः आरम्भ होना कोई कारण नहीं माना। क्या मैं कार्यकर्त्ताओंको इसके अनुसार काम करनेका परामर्श देनेके लिए स्वतन्त्र हूँ? क्या आप मुझे यह बतलानेकी कृपा करेंगे कि किन-किन क्षेत्रोंमें रियायत वापस लेना आवश्यक हो गया था और रियायतको फिर बहाल कैसे कराया जा सकता है?[2]

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७०७) से; सौजन्य : आन्ध्र प्रदेश सरकार। **हरिजन**, ३०-११-१९३४से भी

४०५. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

१४ अप्रैल, १९३४

प्रिय सी० आर०,

लिखनेको तो बहुत-सी चीजें हैं, परन्तु ये काल महोदय सचमुच एक बड़े क्रूर पिता हैं। सर जॉर्ज शुस्टर और मेरे बीच हुए पत्र-व्यवहारकी एक प्रति भेज रहा हूँ।

मेरी समझमें नहीं आ रहा है कि स्वराज्यवादियोंको हमारे कार्यक्रमका पाबन्द कैसे बनाया जाये। हमें इन चीजोंका सुझाव देना पड़ेगा। हमारा लोकतन्त्र संसारके अन्य सभी संसदीय परम्पराओंमें पनपे-पले लोकतन्त्रोंके तौर-तरीकोंका ही अनुसरण

१. देखिए "पत्र : सर जॉर्ज शुस्टरको", २८-३-१९३४।

२. शुस्टरने २२ अप्रैलको अपने पत्रके साथ ऐसे क्षेत्रोंकी एक सूची संलग्न करते हुए लिखा था कि सम्बन्धित ग्रामवासियों द्वारा रियायत बहाल करानेके लिए प्रार्थनापत्र दिये जा सकते हैं।

करेगा। संसदीय दलका अस्तित्व भी उतना ही अनिवार्य है जितना कि एक खद्दर-दल या मद्य-निषेध-दलका। कांग्रेसके सभी संसदवादी एक ही रंगके नहीं होंगे। हो सकता है, वल्कि वास्तवमें निश्चित ही है कि विभिन्न नीतियोंके प्रश्नपर कांग्रेसी आपसमें ही एक-दूसरेके विरुद्ध खड़े होंगे। कांग्रेसके संसदवादियोंकी नीति निर्धारित करनेमें हमें अपने हिस्सेका योग देना ही पड़ेगा।

बड़े शोरगुलके बीच यह पत्र लिखा जा रहा है।

सप्रेम।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९५० ए) से; सौजन्य : घ० दा० बिड़ला

४०६. पत्र : हीरालाल शर्माको

१४ अप्रैल, १९३४

भाई शर्मा,

तुमारा खत मिला है। अमतुलसलामको मैं तो लिखता रहुंगा। लेकिन अब मैं उसके बारेमें चिंतामुक्त हुआ हूं। उसका इलाज दिल चाहे ऐसे करो। अच्छी हो जाये तो सब झनझट मिट जाये।

मुझे लिखा करो कैसे चल रहा है।

तुमको तो मैंने लंबा खत दिया है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

खुराकके बारेमें क्युने, जुस्ट, केलाग, कैरिंगटन अच्छे हैं। कोई पूर्ण नहिं है। मैंने जो परिणाम निकाला है वह यह है।

रसदार फल सबसे निर्दोष खुराक है।

शक्तिके लिये दूधके पदार्थोंकी अत्यावशयकता है। कच्चा ताजा दूध उत्तम है।

नित्य बहूत चीज नहिं खाना। एक-एक चीज भिन्न खाना आवश्यक है।

सिरियल्समें घउं अच्छे हैं।

चावल अनावश्यक है।

दाल अनावश्यक है।

इतना संक्षेपमें।

बापु

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ६०-१ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे।

४०७. पत्र : अमतुस्सलामको

गोहाटी
१४ अप्रैल, १९३४

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारे खत मिले हैं। अब तो डाक्टर शर्मा तुम्हारे पास है, इसलिए मैं तुम्हारे बारेमें बेफिकर हूं। अब तो तुम्हारे किसीको जेल जाना नहीं है। एक वारगी अच्छी हो जा, बादमें सोच लेंगे क्या किया जाये। जो डाक्टर कहे वही करो।

बापूकी दुआ

[पुनश्च :]

डाक्टरकी लड़कीको बुला लेना चाहिए।

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०१) से।

४०८. बिहार ही क्यों?

एक विद्यार्थी लिखता है :[१]

विज्ञानके विद्यार्थीको ऐसी बातको अस्वीकार करनेका कोई अधिकार नहीं जो उसकी समझमें न आये। विज्ञानके विद्यार्थीको विनम्र होना चाहिए। वह जो-कुछ सुने उसे एक किनारे न रख दे; उसके सम्बन्धमें उसे विचार करना चाहिए। इस दुनियामें हम बहुत कम चीजोंको समझ पाते हैं। असंख्य चीजोंको हम समझ नहीं पाते। इसी कारण ज्ञानी लोग ज्यों-ज्यों ज्ञान प्राप्त करते जाते हैं त्यों-त्यों वे विनम्र बनते जाते हैं। क्योंकि ज्ञानीका ज्ञान अपने घोर अज्ञानको देखनेमें ही निहित है। वह ज्यों-ज्यों गहराईमें उतरता है त्यों-त्यों उसे लगता है कि वह स्वयं तो कुछ भी नहीं जानता। इसके अतिरिक्त, जितना वह जानता है उसका अधिकांश अनुमान-भर है। ऐसा लिखकर मैं विज्ञानको गिराना नहीं चाहता। अल्प ही क्यों न हो, जो भी ज्ञान हम प्राप्त करते हैं उसका उपयोग तो है ही। किन्तु जितना ज्ञान प्राप्त करना है उसकी तुलनामें प्राप्त ज्ञान समुद्रमें बूंद से भी कम है।

१. पत्रका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। विज्ञानके एक विद्यार्थी पत्र-लेखकने गांधीजी को लिखा था कि मैं आपके इस विचारसे सहमत नहीं हो सकता कि बिहारके भूकम्पका कारण अस्पृश्यता है और वह हमारे पापोंका फल है।

इस जगत्‌में जीवमात्रका मूल एक ही है, और इस प्रकार मूल रूपमें सभी एक हैं। इसमें वनस्पतिसे लेकर मानव-प्राणीतक सभी आ जाते हैं। जो समझता है, उसके लिए एक प्राणीका दुःख सभीका दुःख है, और एकका सुख सभीका सुख है। इसीलिए त्यागवृत्तिमें सच्चा सुख माना गया है और है। हम देखते हैं कि कुटुम्बों में यह नियम अच्छी तरह चलता है। पिताके दुःखसे सब दुःखी हो जाते हैं। और उसके पापसे सभी प्रभावित होते हैं। अतः यदि यह विद्यार्थी जीवमात्रके ऐक्यको स्वीकार करे तो बिहारको जो दण्ड मिला है उसमें सभी आ जाते हैं। जिन्हें भूकम्पका अनुभव नहीं हुआ वे भी इससे अछूते नहीं बचे हैं। यदि वे प्रत्यक्ष रूपसे इसका अनुभव नहीं करते तो उस हदतक यह उनका अज्ञान माना जायेगा। अतः विज्ञानका विद्यार्थी कदाचित् यह स्वीकार करेगा कि "बिहार ही क्यों?" इस प्रश्नमें कोई बहुत सार नहीं है। बिहार ही क्यों और अन्य प्रदेश क्यों नहीं? भगवान्‌से यह पूछनेवाले हम कौन होते हैं? उसकी कला अगम्य है, इसीलिए जहाँ बुद्धि नहीं पहुँचती वहाँ श्रद्धा काम देती है।

हम बहुत-से उदाहरणों द्वारा यह सिद्ध कर सकते हैं, कि भौतिक घटनाओंका अध्यात्मसे सम्बन्ध है। भौतिक वस्तुकी उत्पत्ति एक ही शक्तिसे होती है, इसलिए भौतिक और आध्यात्मिकके बीच कोई अनिवार्य भेद नहीं है। वर्षा आना एक भौतिक घटना है, उसका सम्बन्ध मनुष्यके सुख-दुःखसे तो है ही; तो फिर पाप-पुण्यसे भी उसका सम्बन्ध क्यों न माना जाये? संसारके इतिहासमें ऐसा कोई काल नजर नहीं आता जब कि असंख्य लोगोंने भूकम्प आदि घटनाओंको मनुष्यके पापसे न जोड़ा हो। आज भी सभी स्थानोंपर लोग उक्त सम्बन्धको स्वीकारते हैं।

हमारे किन पापोंके कारण ऐसे संकट आते हैं यह कोई नहीं कह सकता। इस सम्बन्धमें स्वर्णिम नियम यह है कि सभी लोग इसे अपने व्यक्तिगत और सामाजिक पापका दण्ड मानें। 'तुम्हारे पापके कारण यह संकट आया', ऐसा कहनेमें अभिमान है, किन्तु 'मेरे पापके कारण ऐसा हुआ', यह माननेमें विनम्रता है, ज्ञान है। जो लोग अस्पृश्यताको पाप नहीं मानते उनसे मैं यह मनवानेका प्रयत्न ही नहीं करता कि भूकम्पका मूल[1] पाप है। वे बेखटके मान सकते हैं कि यह मेरे पापका फल है। ऐसे मामलोंमें सही-गलतका निर्णय अपूर्ण मनुष्य कर ही नहीं सकता। यदि मैं पाठकोंसे यह मनवा सकूँ कि हमारे पापके कारण भूकम्प आया था तो मेरा काम पूरा हो जाता है। फिर तो अस्पृश्यताको महापाप माननेवाले लोग उसे भूकम्पसे जोड़कर प्रायश्चित्त करेंगे ही और जैसे बने वैसे इस कलंकको यथासमय धो देंगे।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १५-४-१९३४

१. मूलमें यह अंश इस प्रकार है: "कि भूकम्प हमारे पापका मूल है"।

४०९. भाषण : सार्वजनिक सभा, गोलाघाटमें[1]

१५ अप्रैल, १९३४

गांधीजी ने हरिजन-सेवाकी शर्तोंको फिरसे दोहराया। उन्होंने कहा कि मैं आपसे विशेषकर हरिजन-सेवाका संक्षिप्त और कामकी बातोंका हवाला देनेवाला विवरण चाहता हूँ; मानपत्र इत्यादि अनावश्यक हैं और उनपर बिलकुल कोई खर्च नहीं किया जाना चाहिए। यदि मानपत्र भेंट करना ही हो तो उसे अच्छे कागजपर सुन्दर लिखावटमें लिखकर हिन्दी या अंग्रेजीमें उसके अनुवाद के साथ, मुझे दिया जाना चाहिए। यदि उसे छपवाया जाये, तो छपाईका खर्च अलगसे पूरा किया जाना चाहिए; हरिजन-कार्यके लिए भेंट की जानेवाली थैलीकी राशिसे उसे किसी भी हालतमें नहीं निकालना चाहिए। थैलीकी राशिमें से छपाईका खर्च निकालना चोरी या गबनसे किसी भी कदर कम नहीं होगा। गाड़ी-भाड़ा और भोजनका खर्च भी थैलीमें से नहीं निकाला जाना चाहिए; यदि मुझे और मेरे साथके लोगोंको भोजन करानेके लिए कोई तैयार न हो, तो मैं अपने मित्रोंसे उसका खर्च उठानेको कहूँगा, लेकिन हरिजन-थैलीका इसके लिए कभी स्पर्श नहीं करूँगा। यदि पर्चे आदि बँटवाकर कुछ प्रचार करना जरूरी ही हो जाये, तो कार्यकर्त्ताओंको उसपर कुल जमा चन्देके पाँच प्रतिशत भागसे अधिक खर्च नहीं करना चाहिए। सभी चन्दे ज्यों-के-त्यों महामन्त्रीके पास जमा करा दिये जाने चाहिए और खर्चके बिल उसके साथ दे दिये जाने चाहिए, जो कभी भी पाँच प्रतिशतसे अधिक नहीं बैठना चाहिए। मैं स्वागत पानेके लिए नहीं, बल्कि हरिजनोंकी ओरसे काम करने, लोगोंको जगाने, कार्यकर्त्ताओंसे बात करने और अधिक-से-अधिक धन उगाहनेके लिए ही दौरा कर रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-५-१९३४

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

४१०. पत्र : श्रीप्रकाशको

१६ अप्रैल, १९३४

प्रिय श्रीप्रकाश,

मैंने अपना निर्णय करनेमें एक भी अनुयायी या सहयोगीके बारेमें अपनी कोई राय स्थिर नहीं की। मैंने यदि राय स्थिर की ही है तो वह स्वयं अपने बारेमें। और अपनी राय स्थिर कर लेने, निर्णय कर चुकनेके बाद मैं अपने-आपको अधिक स्वतन्त्र महसूस करता हूँ। यदि मैं स्वयं अपने प्रति सच्चा बना रहा तो इससे हम सभीको लाभ होगा। सत्याग्रह एक अनोखा अस्त्र है। इसलिए आपको आत्म-भर्त्सनाकी कोई जरूरत नहीं। हाँ, मैं यह जरूर चाहता हूँ कि समय आनेपर मैं आपको तैयार पाऊँ।

सप्रेम,

बापू

श्री श्रीप्रकाश
सेवाश्रम, बनारस कैंट

[अंग्रेजीसे]

श्रीप्रकाश-पेपर्स, फाइल संख्या जी-२; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय। सी० डब्ल्यू० ७९५१ से भी; सौजन्य: घ० दा० बिड़ला

४११. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१६ अप्रैल, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे बारेमें मीरा तुमको सब-कुछ लिखती रही है।

यदि अपने अन्दर आत्म-विश्वास महसूस करो, तो तुम व्रत ले सकती हो। तुम्हारे सामानको निबटानेका इन्तजाम कर दिया जायेगा। ऐसा तुम क्यों सोचती हो कि मैं तुम्हारे बारेमें शंकाशील हूँ या तुम मीरासे कुछ कम हो? मीराको जसी फटकार और झिड़कियाँ सुननी पड़ी हैं, वैसी तो तुम्हें बिलकुल कभी नहीं मिली हैं। लेकिन वह सब महत्त्व नहीं रखता। तुमको तो बस अपने काममें डूब जाना चाहिए। फिर तो तुम मुझे वास्तविक रूपमें पा लोगी।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल-पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४१२. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१६ अप्रैल, १९३४

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले।

भूकम्प-राहतका पैसा बिहार भेज दिया गया होगा।

भाई सोराबजी तथा भवानीदयालके बारेमें भी मैं समझ गया। अपनी समस्याएँ धैर्यपूर्वक और निःस्वार्थ बुद्धिसे सुलझाना। सोराबजी किसी दिन समझ जायेंगे। कुँवर महाराजके बारेमें कुछ समझ नहीं सका। किन्तु तेरे मनपर जो छाप पड़ी हो तेरे लिए वही ठीक है। मैं उन्हें जानता ही नहीं। इस बातका ध्यान रखना कि किसीपर व्यक्तिगत हमला न किया जाये। क्रोधमें आकर कुछ नहीं किया जाना चाहिए।

आशा है, मेरे निर्णयकी जानकारी तो तुम्हें तारसे हो गई होगी। इससे तुम्हारा बोझ हलका होना चाहिए। किन्तु इससे यह समझना कि मैं तुमसे अधिककी आशा करता हूँ। भविष्यमें जब भी [आन्दोलनका] ज्वार आये तो तुम दोनोंको तैयार होना चाहिए। मेरी मृत्युके बाद तो तुम-जैसे मुट्ठी-भर लोगोंको ही जिम्मेदारी निभानी होगी।

बा अब एक-आध महीनेमें रिहा होनेवाली है। उसका पत्र इसके साथ है। दोनों लक्ष्मी और निमूके प्रसवका समय अब आ पहुँचा है।

और समय नहीं है। इसलिए इसे यहीं समाप्त करता हूँ। आशा है, मेरे पत्र नियमित रूपसे मिलते रहते होंगे। मैं तुम्हें लिखनेके लिए अन्य लोगोंको भी लिखता रहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१८) से।

४१३. पत्र : शान्तिलाल जे० मेहताको

१६ अप्रैल, १९३४

चि० शान्ति,

तेरा पत्र, हुण्डी और १५ रुपये मिले। मैं सभी रकमोंका उपयोग बिहारके राहत-कार्यमें ही कर रहा हूँ।

मोहनलाल और उमियाशंकरको यह समाचार दे देना।

यदि तू हर तरह सुचारु ढंगसे रहे तो तेरी आशाएँ अवश्य फलीभूत होंगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

४१४. पत्र : क० मा० मुंशीको

जोरहाट
१६ अप्रैल, १९३४

भाई मुंशी,

तुम्हारा पत्र मिला। उससे मुझे काफी मदद मिली है। तुमने व्याख्यामें ठीक दोष ढूँढ़ निकाले हैं। मसौदेके लिए मुझे प्रमाणपत्र मिल रहे हैं किन्तु ये कितने खोखले होते हैं, यह तुमने बताया। आजकल मैं इतनी जल्दबाजीमें काम कर रहा हूँ कि मुझे दुबारा विचार करनेका समय ही नहीं मिलता। तुमने जो भूल ढूँढ़ निकाली है उसपर मेरी नजर पड़नी चाहिए थी। तुम्हें भेजा गया मसौदा वापस लौटा रहा हूँ ताकि तुम्हें और ज्यादा छानबीन करनेमें सहायता मिल सके, साथ ही संशोधित मसौदेकी नकल भी भेज रहा हूँ। यदि उसमें फिर भी तुम्हें कोई भूल नजर आये तो बताना।

यदि लीलावती आँख मीचकर, एकाग्र चित्तसे लघु उद्योगोंमें ही अपनी शक्ति लगाकर सन्तोष माने तो काम बन सकता है, अन्यथा वे तेलीके बैलकी तरह चक्कर काटते ही रहेंगे। फर्क इतना ही है कि अन्धे बैलके पीछे देखनेवाला तेली होता है, इसलिए थोड़ा-बहुत तेल निकल आता है। किन्तु यहाँ तो स्वदेशी घानी घिसती रहेगी और कोई फल नहीं निकलेगा।

मिलका कपड़ा, चीनीकी मिलें आदि मेरी व्याख्यामें छोड़ दी गई हैं और खादी, गुड़ आदिको संरक्षण दिया गया है। हम इन्हींको सँभाल सकते हैं और हमें सँभालना

चाहिए। यह क्षेत्र कोई छोटा नहीं है। लघु उद्योगोंको बड़े उद्योगोंके साथ मिला देनेसे वे कुचल जायेंगे। यह पत्र लिखते हुए ही व्याख्यामें कुछ संशोधन करनेकी बात मुझे सूझी है, जो मैंने एक विशेषण जोड़कर कर लिया है। इसका उद्देश्य मादक पदार्थोंको इनकी गिनतीसे बाहर रखना है। मैं नहीं जानता कि तुम बीड़ी फूंकते हो या नहीं। मेरा लड़का हरिलाल फूंकता है। एक दिन बात उठनेपर बोला कि "मैं मद्रासी चुरुट पीता हूँ, न कि विदेशी सिगार।" उसके उदार प्रोत्साहनके बावजूद मेरी व्याख्यामें से चुरुट निकाल दिया गया है। चुरुट अपना रास्ता आप निकाल लेगा, ताड़ी निकाल ही रही है।

कौंसिल-प्रवेशके बारेमें तुम्हें जो डर है, वही मेरे सामने भी है। अन्य डर भी हैं। लेकिन मैं मानता हूँ कि यह डर सदा ही रहेगा। इसका समर्थन करनेवाला दल कांग्रेसमें बना ही रहेगा। इसलिए उनकी अवहेलना करनेको मैं असम्भव और अनुचित मानने लगा हूँ। अतः इस दलको मजबूत बनानेके लिए मुझसे जो मदद बन पड़े, सो देनेकी मैं सोचता हूँ। किन्तु सविनय अवज्ञाके साथ इसका कोई मेल नहीं बैठेगा। जेलमें पड़े हुए मैं सीधी मदद थोड़ी ही दे सकूँगा। मेरे जेल जानेसे यदि उसे बल मिले तो यह एक अलग बात है। मेरी नजर तो तुमपर और भूलाभाईपर है। और कौन-कौन जायेगा सो मैं नहीं जानता। किसीसे जानेका आग्रह करनेकी इच्छा भी नहीं है। अतः राजगोपालाचारी, राजेन्द्रबाबू, जयरामदास आदिका बाहर रहना सम्भव है। मैंने इस बारेमें किसीसे विचार-विमर्श नहीं किया है। सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी मेरे निर्णयसे वे जितने मुक्त थे उसकी अपेक्षा फिलहाल कहीं अधिक ही हैं। शायद जवाहरलाल भी ललचाये। यदि दृढ़, कुशल, निःस्वार्थ और त्यागी स्त्री-पुरुष उसमें सम्मिलित हो जायें तो कौंसिल-प्रवेशसे निश्चय ही कुछ लाभ उठाया जा सकता है। किन्तु ऐसे बहुत-से लोगोंको कौंसिलके प्रपंचोंमें रस नहीं आयेगा। मेरी कल्पनाका जनतन्त्र कुछ और ही प्रकारका है। वह बाहर गढ़ा जायेगा, कौंसिलोंमें नहीं। उसके गढ़े जानेपर ही कौंसिल सही रूप ले सकेगी। आज तो सब जगह जनतन्त्र कौंसिलोंके पीछे घिसट रहा है और बरबादी हो रही है। मुझे तो लोकमतका अनुसरण करनेवाली कौंसिल चाहिए। फिलहाल उसके अनुकूल वातावरण मुझे नजर नहीं आता। तात्पर्य यह कि ऐसा वातावरण तैयार किया जा सकता है। सविनय अवज्ञाकी दिशामें जो प्रगति हुई वह मामूली नहीं है। इस सम्बन्धमें उठाये गये किसी भी कदमके बारेमें मुझे पश्चात्ताप नहीं है। सभी कदम यथासमय उठाये गये थे। क्योंकि मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि उक्त कदम मैंने नहीं उठाये थे, बल्कि मुझसे सत्यनारायणने उठवाये थे। उसने जैसे मुझे चलाया वैसे मैं चला हूँ।

सविनय अवज्ञा और रचनात्मक कार्यकी भाँति कौंसिल-प्रवेश भी कांग्रेसका अविभाज्य किन्तु स्वतन्त्र अंग होगा। उससे सौतेला व्यवहार नहीं किया जायेगा। किन्तु मैं उसमें कहाँतक भाग ले सकूँगा, यह फिलहाल नहीं कह सकता। रचनात्मक कार्य तो सविनय अवज्ञाके साथ एकाकार हो ही गया है। उसमें मुझे अपना मार्ग पूरी तरह दिखाई देता है। कौंसिल-प्रवेश-सम्बन्धी मामलेमें तो मित्रोंके प्रेम और वाता-

वरणने मुझे खींचा है। उपर्युक्त दो मामलोंमें मैं अपनेको योग्य समझता हूँ किन्तु इस बारेमें ऐसा नहीं है। अब देखो, क्या होता है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरा पता पटना ही है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५३७) से; सौजन्य : क० मा० मुंशी

४१५. पत्र : रावजीभाई ना० पटेलको

जोरहाट (असम)
१६ अप्रैल, १९३४

चि० रावजीभाई,

तुम्हारा पत्र अभी-अभी मिला। यदि ललिता, बलभद्र और नाथाभाईसे मिलने के औचित्यको स्वीकार कर लिया जाये तो तुम्हारे खर्चके बारेमें कुछ भी कहनेको नहीं रह जाता। इस औचित्यके बारेमें तुम्हारा निर्णय ही सही माना जायेगा। हमसे सम्बन्धित मामलोंमें अन्य लोग जो निर्णय करें वह तर्कसंगत हो, किन्तु हृदयको न पटे तो उसे अस्वीकार देना चाहिए। चिमनलालकी आलोचनापर विचार करना चाहिए किन्तु उसकी वजहसे तुम्हें तनिक भी खिन्न नहीं होना चाहिए। हमें ऐसा कोई काम नहीं करना चाहिए जो स्वयं हमें निन्द्य जान पड़े। किन्तु यदि वह अन्य लोगोंको वैसा लगे तो उसके लिए हम क्या कर सकते हैं। "स्वधर्मे निधनं श्रेय:" का[1] एक अर्थ यह भी है कि व्यक्तिको जो सूझे वह स्वधर्म है।

यदि फुरसत हो तो चिमनलालके सन्तोष या विनोदकी खातिर एक पत्र लिख देना। 'विनोद' क्रियापदसे भड़क मत जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९००२) से।

१. भगवद्गीता, ३-३५।

४१६. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

जोरहाट
१६ अप्रैल, १९३४

लगता है तू वहुत-कुछ समझ गया है। मैं देख रहा हूँ कि मेरे निर्णयसे बहुतों के सिरका वोझ उतर गया है। यदि यह निर्णय न हुआ होता तो अबतक बहुत-से लोग पागल हो गये होते, यहाँतक कि बिलकुल टूट गये होते। अन्धश्रद्धासे किसी तरहकी सहायता न मिलती। यह निर्णय शुद्धतम है। अब यदि कांग्रेस मुझे निकाल वाहर करे तो शायद ज्यादा अच्छा हो। किन्तु मेरी इच्छा-अनिच्छा-जैसी कोई चीज नहीं है। वह मुझे जैसे नचायेगा, मैं वैसे नाचूँगा और प्रसन्न रहूँगा। यदि तू राँची आना चाहे तो आ जाना।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १४४

४१७. पत्र : रा० शंकरन्को

जोरहाट
१६ अप्रैल, १९३४

भाई शंकरन्,

तुमारा खत मिला।

सच्ची बात है कि मुंबई गूजरात इ० में भी राष्ट्रभाषाका प्रचार होना चाहिये। उस कार्यके लिये यू० पी०, बिहारसे कोई शिक्षक आने चाहिये। यह तुमारा कार्य नहीं है।

कामचलाऊ हिन्दी उसे कहे जिससे देहातीओंसे बातें कर सके, मामूली खत लिख सकें।

मो० क० गांधी

श्री रा० शंकरन्
हिंदी प्रचार सभा
नापू हॉल, माटुंगा, बम्बई

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७१५) से।

४१८. पत्र : संतोषकुमार बसुको

[१७ अप्रैल, १९३४ के पूर्व]

प्रिय संतोष बाबू,

मैं आपको और आपके निगमको[1] हरिजन बजट स्वीकृत करने पर बधाई देता हूँ। परन्तु यह तो मात्र आरम्भ ही है। बजट स्वीकृत करना एक बात है, सचमुच धन व्यय करना और बात है। मैं आशा करता हूँ कि आपके कोषमें कितनी ही कम राशि क्यों न हो, पर आप स्वयं इसका खयाल रखेंगे कि आपके व्ययकी सबसे पहली मद हरिजन ही हों। बस्तियोंमें पानीके नल लगवाना कृपया मत भूलिएगा।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]
अमृत बाजार पत्रिका, १७-४-१९३४

४१९. पत्र : छगनलाल जोशीको

जोरहाट
१७ अप्रैल, १९३४

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। क्या तुम्हारे शरीरमें पूरी ताकत आ गई है? मेरे निर्णय[2] पर तुमने अपनी टीका-टिप्पणी नहीं भेजी। भेज देना। फिलहाल तुमने उधर ही रुककर ठीक किया। खादी और हरिजन-कार्यकी समस्याओंका अध्ययन करना। रामजीभाई और जीवनलाल क्या कर रहे हैं, यह देखना। यदि उनकी कोई सहायता कर सको तो करना। यह भी देखना कि बच्चोंका कैसा चल रहा है। दूधीबहन और कुसुम कैसी हैं? यदि इन सबको जोड़ें तो तुम्हें आरम्भ करनेको काफी काम मिल गया है। मैं ३ तारीखतक बिहारमें रहूँगा। २४ तारीखको मैं बिहार पहुँच जाऊँगा। अन्य बातें लिखनेका समय अभी मेरे पास नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५१९) से।

१. संतोषकुमार बसु कलकत्ता नगरनिगमके मेयर थे।
२. सत्याग्रह स्थगित करनेका निर्णय।

४२०. पत्र : रावजीभाई म० पटेलको

जोरहाट
१७ अप्रैल, १९३४

चि० रावजीभाई,

मैं पाटीदार युवक परिषद् और महिला परिषद्की सफलताकी कामना करता हूँ। जब डॉ० भास्कर वहाँ हैं तो इस परिषद्को शानदार सफलता मिलनी ही चाहिए। पाटीदार यह जान लें कि मैं उनसे बहुत-कुछ पानेकी आशा करता हूँ। बहनोंसे मुझे दूनी अपेक्षा है। और उन्हें यह जान लेना चाहिए कि सरदारकी अनुपस्थितिमें वह अपेक्षा बढ़ती जा रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५९०) से।

४२१. पत्र : रावजीभाई ना० पटेलको

जोरहाट
१७ अप्रैल, १९३४

चि० रावजीभाई,

मेरा वक्तव्य तुम फिरसे पढ़ो। ऐसा लगता है कि तुम उसे भली-भाँति समझ नहीं सके हो। मैंने यह कहा है कि फिलहाल स्वराज्यके साधनके रूपमें सविनय अवज्ञाका उपयोग मेरी अनुमतिके बिना कोई न करे। जिन्हें इसका प्रयोग करना आता है वे इस शास्त्रका उपयोग दूसरे कई प्रयोजनोंके लिए कर सकते हैं। स्वराज्य के साधनके रूपमें बहुत-से लोगों द्वारा इसका प्रयोग करानेमें कठिनाई होती है। यों भी कह सकते हो कि उस रूपमें प्रयोग करनेकी मेरी क्षमता कम है।

आशा है, तुम्हें मेरा पत्र मिल गया होगा। तुम ऋण-मुक्त हो जाओ तो तुम्हारे लिए काम तैयार ही है — या तो खादी या हरिजन-कार्य। यदि तुम इन दोनोंमें से चुनाव नहीं कर सकोगे तो मैं कर दूँगा।

यदि मेरा वक्तव्य बार-बार पढ़ने पर भी समझमें न आये तो धीरज रखना। धीरे-धीरे समझमें आ जायेगा।

तुम्हारा पत्र मुझे आज ही मिला है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५९१) से।

४२२. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

जोरहाट
१७ अप्रैल, १९३४

. . .[१] जो चीख-पुकार मची हुई है वह क्षणिक है और शान्त हो जायेगी। मेरा निर्णय इतना अच्छा है कि उसके खिलाफ कहनेको कुछ नहीं मिलेगा। कांग्रेस मुझे अपने नामपर सत्याग्रह करने देगी या नहीं, यह एक अलग बात है। इस निर्णयके बिना सत्याग्रहका पूरा महत्त्व नहीं बताया जा सकता था। यह भी सम्भव है कि अब भी न बताया जा सके। यह मेरी कमी होगी, सत्याग्रहकी कदापि नहीं। मेरे निर्णयका अच्छा प्रभाव कुछ तो अब भी देखा जा सकता है। किन्तु यह सारी रामायण मैं तुझे क्यों सुनाऊँ? लगता है, तू तो इसे अच्छी तरह समझ गया है।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १४४

४२३. पत्र : अमतुस्सलामको

१७ अप्रैल, १९३४

प्यारी बेटी अम्तुलसलाम,

अब तो जेलकी बात भूल गई है न? याद रखो कि जेलमें जानेका कोई अलग धर्म नहीं हैं। बहार रहकर शान्तिसे अपना काम करते रहना वह भी बड़ा धर्म हो सकता है। तुम्हारे सामने आज यही धर्म है। एक बारगी वहां रहकर अपनी सेहत अच्छी कर लो। शर्माके लिए भी तुम्हारा वर्धामें रहना मुझे अच्छा लगता है।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३००) से।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।

४२४. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१८ अप्रैल, १९३४

बा,

तेरा पत्र देरसे मिला। इस समय सवा तीन बजे हैं। दातुन करनेके बाद तेरा पत्र हाथमें लिया है। इस स्थानका नाम जोरहाट है। यह असममें है। यहाँका दौरा पूरा होनेमें अभी दो दिन बाकी हैं। उसके बाद एक सप्ताहसे कुछ अधिक समय मैं दक्षिण बिहारमें बिताऊँगा और फिर उत्कल अर्थात् उड़ीसामें। मुझे लगता है कि तू जब छूटेगी तब मैं बंगालमें हूँगा। तेरे छूटनेकी तारीख निश्चित हो गई हो तो सूचित करना। मणिलालका पत्र विशेष रूपसे तेरे लिए आया है। वह उन सब लोगोंके बारेमें है जिन्हें तू याद करती है। मैंने लिख दिया है कि तेरे मूल पत्र मैं फीनिक्स भेज रहा हूँ, और उनकी नकल रामदास, देवदास और सरदारको। कान्तिके छूटनेकी खबर तो तुझे लिख चुका हूँ। वह अच्छा है। अब जेल नहीं जाना होगा इसलिए वह कहाँ रहेगा यह अभी तय करना है। वह मुझसे किसी जगह आकर मिल लेगा। जमनालालजी को अबतक बिहार पहुँच जाना चाहिए। सतीशबाबू अच्छे हैं। वे कलकत्तामें हैं। रावजीभाई, पण्डितजी, पारनेकर आदि बिहारमें साथ-साथ काम कर रहे हैं। माधवदास भी है। बाल और पृथुराज मेरे साथ हैं। नारणदासकी नाकसे खून बहता है इसलिए वह अभी राजकोटमें है। शायद वह राँचीमें मुझसे मिलेगा। छगनलाल भावनगरमें है। उसका जितना वजन घट गया था वह उसने लगभग प्राप्त कर लिया है। वह भणसालीसे मिल आया। भणसालीके पैर खराब हैं। वे चल-फिर नहीं सकते। उन्होंने अपने ओठ सिलवा लिये है। पानीमें आटा घोलकर नलीसे पीते हैं। पानीमें चने और मूँगकी पीठी मिलाकर भी पीते हैं। मुझे जब-तब पोस्ट-कार्ड लिखते रहते हैं। दर्दके बावजूद आनन्दसे रहते हैं। राजेन्द्रबाबूकी तबीयत बहुत अच्छी रहती है। प्रभावती और जयप्रकाश अब ठीक हैं। मेरा वजन १०८ पौण्ड है। मीराबहन भाषण नहीं देती। कभी-कभी खादी-प्रदर्शनीका उद्घाटन करने जाती है। वहाँ मैं तो जा नहीं सकता। उद्घाटनके समय वह जो दो शब्द कहती है उसकी रिपोर्ट अखबारोंमें देखनेको मिलेगी। मैं तो अखबार मुश्किलसे ही पढ़ पाता हूँ। रामदासकी सास और नवनीत वर्धा गये हैं। अहमदाबादकी बीमारी तो अन्य स्थानोंपर भी फैल गई है। श्यामलाल नेहरूके बारेमें मैंने इलाहाबाद लिखा था। उमाबहनने पति-वियोगको बहुत धीरजसे सहन किया है। उसकी पुत्रीने मुझे एक विस्तृत पत्र लिखा था। तुझे पूनियाँ मिल गई होंगी। जब और पूनियोंकी जरूरत पड़े तो मुझे लिखना। तू अधिमासका व्रत कहाँ तोड़ना चाहती है? आशा है, तुझे दूध और फल पर्याप्त मिलते होंगे। रणछोड़भाई आदि तो अहमदाबादमें ही हैं। वे

कहीं बाहर नहीं गये। चिमनलालको बुखार रहा करता है इसलिए वह वेरावल गया है। शारदा साथ गई है। मीठूबहन बम्बईमें ही है। कल्याणजी और कुँवरजी भी बम्बईमें हैं। कुँवरजी की पत्नीके गुजर जानेपर मैंने संवेदनाका पत्र भी लिखा था। चन्द्रशंकर आया था किन्तु फिर बीमार पड़ जानेके कारण वह लौट गया है। तेरी तरफसे मैं प्रेमलीलाबहनको पत्र लिख दूँगा। किशोरलाल अभीतक बीमार ही है और देवलालीमें है। राधा तो वहाँ है ही, सन्तोक और गोमती भी हैं। वेलाबहन बड़ौदामें है। ओम और किशन सुबहकी प्रार्थनाके बाद, यदि काम नहीं होता तो, सो जाती हैं। दोनोंका शरीर अधिक नींद माँगता है। अब इस बार इतना काफी होगा। इन दिनों मैं प्रवचन नहीं भेज सकता।

सबको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० २२-४

४२५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

जोरहाट, असम
१८ अप्रैल, १९३४

भाई वल्लभभाई,

प्रार्थनाका वक्त होने वाला है। मैं जोरहाटमें हूँ। पक्षी चहचहा रहे हैं। यहाँ सवेरा जल्दी होता है। ५ बजे तो उजाला हो जाता है।

बा के पत्रकी नकल इसके साथ है।

अब तो सब-कुछ तुम्हारी समझमें आ गया होगा। मैं देखता हूँ कि मेरे निर्णयका असर अच्छा ही हो रहा है। निर्णय करनेके बाद देखता हूँ कि उसका होना जरूरी ही था। इसमें न तो जल्दबाजी हुई और न देर ही। इसे मैं ठीक समयपर हुआ मानता हूँ। परन्तु हम परिणामके बारेमें क्यों सोचें? 'गीता' का अध्ययन करना और परिणामका विचार करना, ये दोनों बातें कैसे हो सकती हैं? परिणाम तो जो होना हो सो हो। अच्छा दीखनेवाला पणिमाम बुरा हो सकता है और बुरा दीखनेवाला अच्छा हो सकता है। हम कैसे जान सकते हैं? 'विपदो नैव विपदः' भी हम रोज गाते हैं।

सब राँचीमें जमा होंगे। वहाँ जैसा सूझेगा, वैसा रास्ता बताऊँगा। मेरा खयाल है कि कौंसिल-प्रवेशका समर्थन करनेवालोंको पूरी छूट देना हमारा धर्म है। जो लोग मनसे रोज विधान-सभामें बैठते हैं, वे शरीरसे भी वहाँ बैठें इसीमें भलाई है। तभी उस नीतिके गुण-दोषोंकी जाँच हो सकती है। रोज मनसे जलेबी खानेवाला उसे खाकर देख ले, यही अच्छा है न? बहुत करके मथुरादास भी आयेगा। पेरीन वगैरह भी

आयेंगे। वहाँ ४ दिन रहना होगा। आशा है कि राजा भी आयेंगे। मालूम होता है राजाको सब-कुछ बड़ा अच्छा लग रहा है। इसी तरह मथुरादासको। राजेन्द्रबाबू तो शुरूसे ही इसके समर्थक रहे हैं। प्यारेलाल अभी उनके पास है।

जिनेवासे पीयर सेरेसोल, जो बहुत परोपकारी मनुष्य हैं, आ रहे हैं। यह कहा जा सकता है कि जहाँ भूकम्प-जैसी दुर्घटना हो जाये, वहाँ पहुँचकर मदद देना ही उनका काम है। वे खुद कुशल इंजीनियर हैं। वे बिहारकी मदद करनेके लिए २५ तारीखको बम्बई पहुँचेंगे। मथुरादास उन्हें लेकर राँची आयेगा या रवाना करेगा। हिगिनबॉटम भी आकर मिल गये हैं। उन्होंने भी मदद देनेको कहा है। हैरिसन और लेस्टर मुझसे पटनामें मिलेंगी। फिर देखूँगा कि वे क्या कर आई हैं। दोनों कलकत्ते गई थीं। वे मेहनत करनेवाली तो खूब हैं। निर्मल हैं, बहादुर हैं। परन्तु उनकी आवाज तूतीकी आवाज है।

बाल (कालेलकर) अभी मेरे साथ है। काका हैदराबाद [सिंध]में [जेलमें] काफी आनन्दमें हैं। वे खूब किताबें इकट्ठी कर रहे हैं। महादेव तो इनमें डूबा हुआ है ही; अब काका डूबेंगे।

ओबेदुल्लाके[1] बारेमें मैंने अप्रत्यक्ष रूपसे काफी मेहनत की है। मैं मानता हूँ कि उसका फल निकल रहा है। शायद वह बच जायेगा।

अहमदाबादमें बच्चोंका रोग काफी फैल गया है। कुछ लोग कहते हैं, इसका कारण सिनेमा है। यदि ऐसा हो तो आश्चर्य नहीं। देखनेवाले कहते हैं कि सिनेमाका मस्तिष्क और आँखोंपर बहुत दबाव पड़ता है।

चन्द्रशंकर [घर] गये तो बीमार हो गये। जल्दबाजी करके लौट आये। फिर बीमार पड़ गये, इसलिए चले गये हैं। यह देखा गया कि सफर उनसे बरदाश्त नहीं हो सकता।

कमला नेहरू और स्वरूपरानी इलाज कराने कलकत्ता गई हैं। बंगालकी यात्रा करनेका भी निश्चय हुआ है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ९४-५

१. डॉ० खनसाहबके दूसरे पुत्र। मुलतान जेल उनके स्वास्थ्यके लिए अनुकूल नहीं थी। ७८ दिनके उपवासके बाद सरकारने उन्हें सियालकोट-जेलमें भेजा था।

४२६. भेंट : हरिजन-नेताओंको[1]

जोरहाट

[१८ अप्रैल, १९३४][2]

यह पूछे जानेपर कि क्या वर्तमान आन्दोलनसे हरिजनोंके अतिरिक्त अन्य पिछड़े वर्गोंको भी लाभ पहुँचेगा, गांधीजी ने उत्तर दिया कि निश्चय ही उनको परोक्ष रूपसे लाभ होगा। अस्पृश्यताकी वैधानिक मान्यता समाप्त कर देनेके बाद सिर्फ पिछड़े वर्गोंके लोग ही, चाहे वे पहले अस्पृश्य रहे हों या स्पृश्य, राज्यके संरक्षणकी माँग करनेके लिए रह जायेंगे। उन्होंने एक दूसरे प्रश्नके उत्तरमें कहा कि अन्तर्जातीय खान-पान या विवाह तो व्यक्तिगत पसन्दकी चीजें हैं, उनका सामाजिक विनियमन नहीं किया जा सकता। ये अपने-आपमें सुधारकी एक मद हैं, और इनका अस्पृश्यतासे कोई सम्बन्ध नहीं है। एक कार्यकर्त्ताने पूछा कि क्या वर्तमान आन्दोलनके फलस्वरूप हिन्दुओंमें आपसी झगड़े नहीं उठ खड़े होंगे। गांधीजी ने कहा कि नहीं, क्योंकि हर झगड़ेमें दो पक्ष होते हैं और दोनोंके चाहनेपर ही झगड़ा हो सकता है और मैं तो अपनी ओरसे कमसे-कम प्रतिरोधकी नीतिके अनुसार काम कर रहा हूँ और उस दिनकी राह देख रहा हूँ जब इसके बारेमें लोकमत परिपक्व हो जायेगा। पर लोगोंको समय रहते दृढ़ इच्छाके साथ काम करना चाहिए। नहीं तो एक भीषण उथल-पुथल, एक मानवीय भूकम्प आ जायेगा, जिसका कारण वर्तमान आन्दोलन नहीं, बल्कि अस्पृश्यताके पापका स्वाभाविक परिणाम होगा। यह पूछे जानेपर कि क्या खिलाफत-आन्दोलनमें अदा की गई अपनी भूमिकाके लिए वे दुःखी नहीं हैं, गांधीजी ने कहा कि मुझे अपने जीवनकी अन्य बड़ी घटनाओंकी भाँति, उसपर भी गर्व है और इतिहासमें उसे स्वार्थ-रहित सहयोगके एक अन्यतम उदाहरणकी तरह याद किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-५-१९३४

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. 'साप्ताहिक पत्र' में गांधीजी के दौरेके विवरणसे।

४२७. भेंट : एक अमेरिकी मिशनरीको[1]

जोरहाट
[१८ अप्रैल, १९३४][2]

गांधीजी से एक अमेरिकी मिशनरीने धर्म-परिवर्तनके बारेमें उनके विचार पूछे थे। बातचीत दिलचस्प रही। गांधीजी ने अपनी अकसर जाहिर की हुई राय को दोहराते हुए कहा कि मनुष्योंके माध्यमसे कराये जानेवाले धर्म-परिवर्तनमें मैं विश्वास नहीं करता। सत्यान्वेषी लोगोंकी स्थिति वही है जो भारतीय नीति-कथामें एक हाथीको देखने गये कुछ अंधोंकी थी, बल्कि उनकी स्थिति उससे भी कहीं गई-बीती है। कारण, स्थूल चक्षुओंसे हीन लोग देख तो नहीं सकते, पर उनके इस अभावकी पूर्ति कुछ हदतक उनकी अन्य ज्ञानेन्द्रियोंकी अधिक संवेदनशीलतासे हो जाती है। परन्तु जहाँ-तक अन्तर्दृष्टिका सम्बन्ध है, सत्यान्वेषी लोग उस दृष्टिसे चीजोंको उसी प्रकार धुँधले रूपमें देख सकते हैं, जैसे कोई धुंधली ऐनक लगाकर देखे। इसलिए दूसरोंको अपने धर्ममें लानेका उनका प्रयास कोरा दंभ ही होगा। ईश्वरके पास पहुँचनेके ईश्वरके तईं तो उतने ही मार्ग हैं जितने कि संसारमें मानव-प्राणी हैं।

मिशनरी मित्रने जब ईसा तथा मानवोंके श्रद्धेय अन्य सन्तोंकी तुलना करनेकी कोशिश की, तो गांधीजी ने कहा कि इस प्रकारकी तुलना बेमतलब है। इतिहासके ईसाका रूप बिलकुल वही नहीं है जिसकी पूजा-आराधना ईसाई लोग करते हैं। ईसाइयोंके लिए ईसा एक अवतार हैं। इसी प्रकार मैं भी अपनी कल्पनाके कृष्णमें विश्वास करता हूँ। वह कृष्ण ईश्वरका ही रूप है और इतिहासके उस कृष्णसे सर्वथा भिन्न है जिसके बारेमें अत्यधिक परस्पर-विरोधी साक्ष्य हमें मिलते हैं। ऐतिहासिक व्यक्ति तो संसारसे उठ चुके हैं। पर आध्यात्मिक अवतार तो जीवन्त विचार और आदर्श हैं, जो भौतिक अस्तित्व से कहीं अधिक वास्तविक हैं। धर्मका आधार इतिहासको कभी भी नहीं बनाया जा सका, क्योंकि इतिहासको आधार मान लेनेसे आस्था तथा विश्वासका बल मन्द पड़ जायेगा। इसीलिए तुलसीदासने ठीक मर्मको पकड़ते हुए कहा था कि रामसे नाम कहीं बड़ा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-५-१९३४

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। देसाईने मिशनरीका नाम नहीं दिया है।

२. साधन-सूत्रमें इस भेंटके विवरणको १८ तारीखको हरिजनोंके लिए एक मन्दिर खोलनेके विवरणके बाद स्थान दिया गया है।

४२८. भेंट : समाचार-पत्रोंको

१८ अप्रैल, १९३४

आज एक भेंटमें श्री गांधीने यह राय जाहिर की कि विधानमण्डलोंमें सरकार के साथ सहयोग किया जा सकता है और किया जाना चाहिए।

गांधीजी से पूछा गया कि क्या स्वराज्य पार्टीकी स्थापनाके लिए अपना आशीर्वाद देनेसे उनका तात्पर्य यह था कि 'दमनकारी' कानून रद करने और 'श्वेतपत्र संविधान' — सरकार द्वारा अधिसूचित संविधान — को अस्वीकृत करनेके निश्चित उद्देश्यसे कांग्रेसी विधानमण्डलोंमें जायें। श्री गांधीने उत्तर दिया कि मैं संसदवादी कांग्रेसियोंकी नीति उसी तरह निश्चित नहीं कर सकता जिस तरह कांग्रेसकी बागडोर स्वराज्य पार्टीके हाथों सौंपनेमें सहायक होनेपर भी मैंने पण्डित मालवीय और स्वर्गीय श्री चि० रं० दास द्वारा बरती जानेवाली नीतिको निर्धारित नहीं किया था। यदि स्वराज्य पार्टी फिरसे बनेगी और उसके सदस्य विधानमण्डलोंमें उनकी अपनी कार्य-नीतिके बारेमें मुझसे सलाह लेने आयेंगे, तो मैं उनको उस समय विद्यमान परिस्थितियोंके मुताबिक सलाह दूँगा।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे ऐसा नहीं मानते कि विधानमण्डलोंमें सरकारके साथ सहयोग करनेके भी कुछ अवसर आ सकते हैं, श्री गांधीने उत्तर दिया :

निश्चय ही, ऐसे कुछ अवसरोंकी मैं कल्पना कर सकता हूँ जब सरकारके साथ सहयोग किया जा सकता है और किया जाना चाहिए।

यह पूछे जानेपर कि क्या प्रान्तीय तथा केन्द्रीय विधानमण्डलोंके मौजूदा सदस्योंमें से उन लोगोंको नई स्वराज्य पार्टीमें फिर शामिल होनेकी अनुमति दी जायेगी जो पुरानी स्वराज्य पार्टीके सदस्य थे, श्री गांधीने कहा :

उनको माँगनेसे ही सदस्यता मिल जायेगी।

आगे प्रश्नोंका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा :

मैं निश्चित तौरपर कह सकता हूँ कि इस तथ्यसे कोई अन्तर नहीं पड़ेगा कि उन लोगोंने लाहौर-प्रस्तावका पालन करते हुए तब अपनी सीटोंसे त्यागपत्र नहीं दिये थे। स्वराज्य पार्टीकी नीति अपनानेवाले हर व्यक्तिको सदस्य बननेका अधिकार होगा, भले ही उसके पहलेके विचार कुछ भी रहे हों। मान लीजिए, मैं आज कांग्रेसमें शामिल होता हूँ और स्वराज्य पार्टीका कार्यक्रम अपना लेता हूँ, तो मुझे सदस्यताका अधिकार मिलना चाहिए।

एक और प्रश्नके उत्तरमें श्री गांधीने कहा :

यदि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी स्वराज्य पार्टीके फिर गठित किये जानेकी बातकी ताईद करती है, तो पार्टीकी वही स्थिति रहेगी जो श्री चि० रं० दासकी मृत्युके तुरन्त बाद पटनामें स्वीकृत किये गये एक प्रस्तावके समय थी।

प्र० : पटनामें दिये गये आपके वक्तव्यसे[1] लगता है कि सविनय अवज्ञाको कुछ समयके लिए ही स्थगित किया गया है। क्या आपका तात्पर्य यह है कि निकट या सुदूर भविष्यमें कमसे-कम उन व्यक्तियों द्वारा इसे फिर शुरू कराना पड़ेगा जो इसमें पर्याप्त कुशल हो चुके हैं?

उ० : मेरे मनमें कोई अस्पष्टसे-अस्पष्ट कल्पना भी नहीं है कि भविष्यमें क्या होगा, क्योंकि सत्याग्रही कोई भी ऐसा पूर्व-निश्चित कार्यक्रम लेकर नहीं चलता। अलंकारोंकी भाषामें कहूँ, तो सत्याग्रही हर दिन कुआँ खोदकर पानी पीता है। लेकिन यह सचाई है। इसलिए मैं कुछ नहीं कह सकता कि अपने सहयोगियोंसे फिर संघर्ष आरम्भ करनेके लिए कहनेकी आवाज कब मुझे अपने अन्तःकरणसे सुनाई पड़ेगी।

यह पूछे जाने पर कि १४ अप्रैलके 'स्टेट्समैन' में प्रकाशित श्री सम्पूर्णानन्दकी टिप्पणीके[2] बारेमें उनके क्या विचार हैं, श्री गांधीने कहा :

श्री सम्पूर्णानन्द आवेशमें थे, इसलिए मुझे उनसे पूरी सहानुभूति है, लेकिन जब वे शान्तचित्त होकर मेरा वक्तव्य पढ़ेंगे तो मुझे तनिक भी सन्देह नहीं कि वे इसी निष्कर्षपर पहुँचेंगे कि मैंने अपने किसी भी सहकर्मीपर कोई आक्षेप नहीं किया था। सत्याग्रहके दौरान पहले जो भी कदम उठाये गये थे, उनको लेकर मुझे कोई खेद नहीं है। लेकिन इसके बारेमें मैं एकदम निःशंक हूँ कि देशके सामने आई इस असाधारण परिस्थितिमें कांग्रेसियोंको सत्याग्रह स्थगित करने और उसे केवल मुझतक ही सीमित करनेका परामर्श देना ही मेरे लिए सबसे अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण था।

पटनामें दिये गये वक्तव्यके सम्बन्धमें 'स्टेट्समैन' ने सम्पादकीयमें लिखा था : "बहिष्कार और अवज्ञासे युक्त यह शारीरिक अहिंसा भावात्मक हिंसाका एक मुखौटा ही है और चूँकि इस हिंसाको अभिव्यक्त नहीं होने दिया जाता और उसे नैतिक भाषाका

१. देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", पृ० ३७८-८१।

२. सम्पूर्णानन्दने अपने वक्तव्यमें कहा था : "श्री गांधीने अभी थोड़े ही दिन पहले देशमें कांग्रेसके संगठित जीवनके सभी अवशेष ध्वस्त कर दिये, लेकिन सत्याग्रहके एक खण्डित रूपको बनाये रखनेकी पैरवी की। फिर उन्होंने, लाहौर-कांग्रेसके प्रस्तावोंकी अनदेखा करते हुए, नवजीवन-प्राप्त स्वराज्य पार्टीको भी आशीर्वाद दे दिया। . . . वे जब यह कहकर हमारे अन्दर हीनभावना पैदा करनेकी कोशिश करते हैं कि इतने सारे कष्ट झेलनेवाली हमारी जनताने एक समूहके रूपमें अपने-आपको सत्याग्रहके अयोग्य सिद्ध कर दिया है, तब हम उनके कथनपर चुप नहीं बैठ सकते। . . . हम न तो श्री गांधीको अपना एक-मात्र प्रवक्ता नियुक्त करनेको तैयार हैं और न यह वचन ही दे सकते हैं कि उनके आदेशके बिना हम फिर संघर्ष शुरू ही नहीं करेंगे। यदि यह अस्त्र-विशेष हमारे लिए अनुपयुक्त है तो हम सहज ही दूसरा कोई अस्त्र तलाश लेंगे. . .।"

ही प्रयोग करनेपर विवश कर दिया गया है, इसलिए यह आन्तरिक घृणा और भी तीव्र हो उठी है।" इसके बारेमें श्री गांधीने कहा :

मैं इसपर कोई आपत्ति नहीं करता, यदि सम्पादकने "भावात्मक हिंसाका एक मुखौटा ही है" लिखनेके स्थान पर यह लिखा होता : "भावात्मक हिंसाका एक मुखौटा-भर हो सकता है।" लेकिन यदि मेरा और मैं जिनके नाम गिना सकता हूँ, मेरे उन साथियोंका साक्ष्य कुछ भी मायने रखता है, तो मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि वहिष्कार और अवज्ञा कभी भी भावात्मक हिंसाका मुखौटा नहीं थे। हमारे मनमें एक भी अंग्रेजके प्रति घृणाकी भावना कभी नहीं थी, और इतना ही नहीं, जनरल डायर-जैसे व्यक्तिके प्रति भी हमारे हृदयमें घृणा नहीं रही, जिसने हमारी रायमें हजारों निर्दोष स्त्री-पुरुषोंपर घोर अत्याचार किया था। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि जब भी इन पिछले चौदह वर्षोंका एक निष्पक्ष इतिहास लिखा जायेगा तो इतिहासकार निश्चय ही इस तथ्यकी सविनय साक्षी देगा कि कांग्रेस द्वारा पारिभाषित बहिष्कार और सविनय अवज्ञाके साथ शारीरिक अहिंसाने एक बड़ी हदतक हिंसाको फैलनेसे रोका और जनताको आम-संयमका महत्त्व सिखलाया था। एक बार भड़क उठनेपर हिंसाकी शक्तियाँ दिन-दिन चुकने, कम होती जानेके बदले निरन्तर फैलती-बढ़ती जाती हैं और उनके साथ अन्दरूनी घृणा भी, जबकि दूसरी ओर लोगोंने देखा है कि ईमानदारीसे उसका पालन करनेपर सविनय अवज्ञा घृणाको मैत्रीकी भावनामें बदल देती है और मैं १९०६ से अबतक के अपने अनुभवके आधारपर यही बात पूरे विश्वासके साथ कह सकता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

स्टेट्समैन, १९-४-१९३४

४२९. पत्र : एस० के० दत्तको

पटनाके पतेपर
१९ अप्रैल, १९३४

प्रिय डॉ० दत्त,

आपके पत्र और तारोंके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं तो इतना ही सुझाव दे सकता हूँ कि आपको बिशपसे कहना चाहिए कि वे तबतक चैनकी साँस न लें जबतक खानको रिहा नहीं किया जाता या कमसे-कम उन लोगोंको उससे बिना किसी बाधा या शर्तके मिलनेकी अनुमति नहीं दी जाती जिनका उसपर असर है।

हाँ, सचमुच! मेरी दृष्टिमें तो वर्तमान अनन्तमें समाया हुआ है। मैं वर्तमानके लिए अनन्तकी बलि नहीं दे सकता। और यही मेरी वह मान्यता है जिसके कारण अन्तमें मुझे वह वक्तव्य[1] जारी करना पड़ा। पर मुझे आशा है कि सबसे हालका यह

१. देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", पृ० ३७८-८१।

निर्णय स्वराज्यको और अधिक समीप ले आयेगा, इतना समीप जितना कि वह पहले कभी नहीं था; बशर्ते कि जनता इस विचारपर दृढ़ बनी रहे कि स्वराज्य केवल अहिंसात्मक उपायोंसे प्राप्त किया जा सकता है। हिंसासे जो भी प्राप्त किया जा सकता है वह मेरी कल्पनाका स्वराज्य नहीं होगा।

आप दोनोंको स्नेह।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९५० सी)से; सौजन्य : घ० दा० बिड़ला

४३०. पत्र : हरीसिंह गौरको

१९ अप्रैल, १९३४

प्रिय सर हरीसिंह गौर,

आपके पत्रके लिए आभारी हूँ।

स्वराज्य पार्टीके पुनरुद्धारके बारेमें आपने जो दृष्टि रखी है, वह तो कभी मेरे दिमागमें ही नहीं आई। मैंने तो उसे बस कांग्रेसके दृष्टिकोणसे देखा था, जो अबतक विधान-परिषदोंमें प्रवेश करनेके एकदम विरुद्ध रहा है। क्या कोई ऐसी आपत्ति है जो आपके उस पार्टीके सदस्य बननेके आड़े आती हो? क्या आपका राष्ट्रवाद जरूरी तौरपर उनके राष्ट्रवादसे भिन्न है?

बौद्ध धर्मके बारेमें आपकी पुस्तक मैंने सचमुच बड़ी रुचिसे पढ़ी। मुझे याद नहीं कि उसे पढ़नेके बाद मुझे आपको लिखना भी था। आपका उपन्यास तो मैं अबतक पढ़ ही नहीं पाया। समाज-सुधारके सम्बन्धमें मेरे विचार वही हैं जो पहले थे और अस्पृश्यताके विरुद्ध चलनेवाले वर्तमान आन्दोलनके रूपमें उनको एक क्रिया-शील स्वरूप मिल गया है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९५० डी)से; सौजन्य : घ० दा० बिड़ला

४३१. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

[डिब्रूगढ़
१९ अप्रैल, १९३४][1]

प्रिय आनन्द,

तुम्हारे पत्र मिले, विद्याका भी। मैं नहीं जानता कि मुझे तुम्हें कोई पत्र लिखना छूट गया है। तुम्हें अपने साथ रखकर मुझे तो प्रसन्नता ही होगी, लेकिन फिलहाल तुम्हें उस अवसरकी प्रतीक्षा करनी है। पहली बात तो यह है कि इस कठिन यात्रामें तुम्हें मेरे साथ तबतक नहीं शामिल होना चाहिए जबतक तुम्हारा स्वास्थ्य इस लायक नहीं हो जाता कि तुम्हें बीमारी न लगे। चन्द्रशंकर दो बार बीमार पड़ गया। और अन्तमें उसे स्वास्थ्य-लाभके लिए वापस जाना पड़ा। इसलिए स्वस्थ होकर खबर भेजना। तबतक वहाँ जितना कर सको, उतना खादी-कार्य और हरिजन-कार्य करो और अपना हिन्दीका ज्ञान बढ़ाओ।

तुम मेरे वक्तव्यको जितना अधिक पढ़ोगे उतना ही वह तुम्हें पसन्द आयेगा। इसमें किसीपर भी आक्षेप नहीं किया गया है। इस अवस्थामें यह कदम उठाना सत्याग्रहमें सहज रूपसे निहित था। मिलनेपर विस्तृत चर्चा करेंगे।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

तुम्हें पता है कि मुझे जूनमें किसी भी दिन सिंध जाना है। समाचार-पत्रका तो, बेशक, कोई सवाल नहीं उठता।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१. डाककी मुहरसे

४३२. पत्र : डाह्याभाई म० पटेलको

१९ अप्रैल, १९३४

भाई डाह्याभाई,

मुझे याद नहीं पड़ता कि तुम्हारे किसी पत्रका उत्तर नहीं दिया गया है। तुम्हारे द्वारा भेजी गई पुस्तकका उपयोग तो मैंने किया ही था। फिलहाल तो तुम्हें जिस तरहका सेवा-कार्य करना उचित जान पड़े सो करते रहो। मुझसे स्वयंसेवकोंकी माँग की गई हो, यह भी मुझे याद नहीं है। शायद चन्द्रशंकर जानता होगा, किन्तु अभी वह यहाँ नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७०२)से; सौजन्य : डाह्याभाई म० पटेल

४३३. पत्र : मानशंकर ज० त्रिवेदीको

१९ अप्रैल, १९३४

चि० मनु,

पिताजी ने अपना अन्तिम निर्णय दे दिया है, उसे तू सिर-माथे लेना। यदि तेरी और विमलाकी[1] प्रीति सच्ची होगी तो तुम दोनों एक-दूसरेके प्रति बाह्य व्यवहार बन्द रखने योग्य संयमका पालन कर सकोगे। संयम-पालनके इस कर्त्तव्यको न समझ पाने पर यदि तुझे मिलनेवाली आर्थिक सहायता बन्द हो जाये तो तू उसका बुरा मत मानना। बड़ी उम्रका हो जानेके बाद किसी पुत्रको पितासे सहायता लेनेका अधिकार नहीं रहता। फिर भी पिता कुछ करता रहे तो यह उसकी कृपा मानी जायेगी। तेरे माता-पिताने तेरे लिए जो किया है वैसा या उतना अन्य लोग मुश्किलसे ही करते हैं। अब भी जो निर्णय तेरे पिताने किया है वह तेरे भलेके लिए किया है। यह प्रश्न तू मत उठाना कि उसमें सचमुच तेरा हित है या नहीं। हो सकता है कि वह तेरे लिए हितकर न हो किन्तु फिर भी उससे तेरा अहित नहीं होगा। कारण, जयशंकरके निर्णयके पीछे शुद्ध हेतु है। और उससे धर्म-भंग तो कदापि नहीं होता। फिलहाल यदि विमलासे बाह्य सम्बन्ध स्थगित रहे तो यह अधर्म नहीं होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१२)से।

१. एलिजाबेथ।

४३४. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

१९ अप्रैल, १९३४

चि० विद्या,

मुझे तो कुछ पता नहीं है, तुमारे खतका मैंने उत्तर नहिं दिया है। हां जुन मासमें वर्धाकी हवा अच्छी होगी। लेकिन आनंद जब तक वहां है तबतक तुमारे वर्धा जानेकी आवश्यकता नहिं समझना। थोड़े अरसेमें निश्चय हो सकेगा महादेवको कहां रहना होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

४३५. भेंट : समाचार-पत्रोंको

डिब्रूगढ़
१९ अप्रैल, १९३४

विधान-सभामें गृह-सदस्यके वक्तव्यके[1] सम्बन्धमें एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिने आज सुबह डिब्रूगढ़के गोशाला आश्रममें, जहाँ गांधीजी ठहरे हुए हैं, उनसे भेंट की। उन्होंने कहा :

गृह-सदस्यके वक्तव्यके बारेमें मेरे कोई विचार नहीं हैं, क्योंकि लगातार यात्रामें रहनेके कारण मैं उसे देख ही नहीं पाया। वक्तव्य मुझे अभी-अभी मिला है, पर मैं उसे पढ़ ही नहीं पाया हूँ। इसलिए मैं वक्तव्यके बारेमें ऐसी कोई भी राय नहीं दे सकता कि वह सतर्कतापूर्ण है, या संकोचशील है, या उदारतापूर्ण।

उन्होंने आगे कहा कि मुझे इसके बारेमें सन्देह है कि जबतक मैं दौरेपर हूँ, उस वक्तव्यके बारेमें अपनी कोई राय दे भी पाऊँगा, क्योंकि मेरा समूचा ध्यान हरिजन-कार्यपर केन्द्रित है।

१. सर हैरी हेग ने कांग्रेस तथा सविनय अवज्ञाके लिए दण्डित बन्दियोंकी रिहाईके प्रति सरकारी रुखके बारेमें विधान-सभामें वक्तव्य देते हुए कहा था कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक या कांग्रेस-अधिवेशन करनेमें कोई बाधा नहीं होगी।

यह पूछे जानेपर कि क्या उनका सुझाव है कि श्री वल्लभभाई पटेल और पण्डित जवाहरलाल नेहरूको राँची-सम्मेलनमें भाग लेनेकी अनुमति दी जानी चाहिए, श्री गांधीने कहा :

मैं इतना ही कह सकता हूँ कि कोई भी सम्मेलन किन्हीं निष्कर्षोंपर पहुँचे, पर वे निष्कर्ष सरदार वल्लभभाई पटेल और पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी अनुपस्थितिमें अन्तिम नहीं हो सकते।

[अंग्रेजीसे]
अमृत बाजार पत्रिका, २०-४-१९३४

४३६. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

डिब्रूगढ़
[१९ अप्रैल, १९३४ या उसके पश्चात्][1]

भाई घनश्यामदास,

तुमारे सब खत मिले हैं। 'अमृत बजार पत्रिका' को उत्तर क्या देवे? उसमें जो लेख आते हैं सो मसालेसे भरे हुए रहते हैं। जो मानते हैं ऐसा हमेशा लिखते है ऐसा भी नहिं है। मित्रोंको समझानेके लिये लिखना है तो उनको दूसरी तरह समझाया जाय।

एवार्डकी बात बहुत मुश्किल है। यदि मैंने जो रास्ता बताया है उसका स्वीकार मुसलमान करें तो कुछ हो सकता है, न भी करें तो वह रास्ता बिलकुल सीधा है। मुझे डर है कि वह मार्ग भी स्वराजवादीओंको अच्छा नहिं जचेगा। हिन्दु-मुस्लिम-सिख ऐक्य आज सिद्ध होनेके लिये मैं कोई वायुमंडल नहिं पाता हूँ।

धारासभा प्रवेशको मैंने स्वतंत्रतया देखा है। मुझे लगता है कि कांग्रेसमें हमेशा धारासभा प्रवेशका दल रहेगा ही। उसी दलके हाथमें कांग्रेसकी बागडोर होनी चाहिये और वही दलको काँग्रेसके नामकी आवश्यकता रहती है। मैंने यह बात हमेशाके लिये मान ली है। वही लोग कोई बहिष्कार भी करना होगा तो करें।

धारासभा प्रवेशमें मुसीबत काफी है। इसका फैसला तो होता रहेगा। गलतियां होती रहेंगी, दुरस्त होगी, नहीं होगी ऐसे चलता रहेगा।

कलकत्तासे रांची मुझको तो अच्छा लगता है। रांचीमें लोगोंके लिए सुभीता न रहे यह दूसरी बात है। रांचीमें शांति मिलेगी, कलकत्तेमें असंभवित है। मैंने राजेन्द्र बाबूपर छोड़ दिया है।

तुम्हारा फेडरेशनका व्याख्यान पढूंगा और पढ़नेके बाद अभिप्रायं भेजूंगा। रांचीमें मीटिंग होवे तो और आना शक्य है तो आ जाना अच्छा हो सकता है। निश्चयपूर्वक नहिं कह सकता हूं। गोपी गजाननका ठीक चलता होगा।

बापुके आशीर्वाद

१. गांधीजी १९ और २० अप्रैलको डिब्रूगढ़में थे।

[पुनश्च :]

बाबा राघवदासने यह दिया है। हिंदी शिक्षकोंको तैयार करनेकी आवश्यकता तो है। देखनेमें योजना मुझे अच्छी लगती है। और इतने खर्चमें हिंदी प्रचार सेवक तैयार हो सके तो अच्छा ही है।

बापु

सी० डब्ल्यू० ६१२० से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

४३७. एक हरिजनके प्रश्नोंके उत्तर

एक हरिजनने मुझे उत्तरके लिए निम्नलिखित प्रश्न भेजे हैं :

१. महात्माजी, आप हमारे उद्धारमें इतनी रुचि क्यों लेते हैं?

२. यदि आपके लिए सभी धर्म एक ही हैं, तो क्या ईसाइयोंको अस्पृश्यताके विरुद्ध संघर्ष करनेका अधिकार नहीं है?

३. अस्पृश्यता मिट जानेसे हमारे समाजके लोगोंको किस तरहसे लाभ होगा?

४. हम हिन्दू-मन्दिरोंमें क्यों जायें?

५. क्या हिन्दू-अवतारोंने हमारा दमन नहीं किया?

६. आर्य तथा अनार्य की दो श्रेणियाँ हमारे लिए ही बनाई गई हैं। यदि दोनों पृथक् ही रहें तो क्या नुकसान है?

७. अस्पृश्योंमें भी अनेक उपजातियाँ मौजूद हैं। इस समस्याका समाधान आप कैसे करेंगे?

८. एक बार आपने कहा था कि अस्पृश्यताके मिटते ही स्वराज्य हासिल किया जा सकता है। क्या आपका वर्तमान प्रचार उसी लक्ष्यको ध्यानमें रखकर किया जा रहा है?

९. यदि हाँ, तो क्या आप हमारे करोड़ों अस्पृश्य भाइयोंको अन्य हिन्दुओंके बराबर ही अधिकार देंगे?

१०. मन्दिरोंके द्वार खुलवाने और अस्पृश्यता मिटानेके बदले यदि आप हमारे लिए रोजीके साधन जुटा दें तो यही काफी होगा।

प्रश्न अच्छे हैं। मेरे उत्तर इस प्रकार हैं :

१. मैं अस्पृश्यताके कलंकसे अपनेको मुक्त करने और अपने पापका प्रायश्चित्त करनेके लिए ही हरिजनोद्धारके कार्यमें रुचि लेता हूँ, और चूँकि मैं जिस धर्मको मानता हूँ, उसकी प्रतिष्ठा निष्कलंक बनाये रखनेके लिए मैं व्यग्र हूँ इसीलिए मैं चाहता हूँ कि मेरे अन्य धर्म-भाई भी अपने-आपको इन चीजोंसे मुक्त कर लें।

२. अपने समाजमें अस्पृश्यतासे जूझना ईसाइयोंका अधिकार नहीं, बल्कि एक कर्त्तव्य है। लेकिन यदि प्रश्न यह हो कि हिन्दुओंके बीच मौजूद अस्पृश्यताके विरुद्ध ईसाइयोंको संघर्ष करना चाहिए या नहीं, तो मेरा उत्तर यही है कि वे ऐसा कर ही नहीं सकते, क्योंकि हिन्दू-समाजमें जो अस्पृश्य माने जाते हैं वे ईसाइयोंके लिए अस्पृश्य नहीं होने चाहिए। अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनका उद्देश्य यही है कि हिन्दुओंको उनके गलत आचरणसे विरत किया जाये। गैर-हिन्दू यह काम कारगर ढंगसे नहीं कर सकते, उसी तरह जैसे कि हिन्दू लोग ईसाइयों या मुसलमानोंमें धार्मिक सुधार नहीं ला सकते। यदि प्रश्नका आशय यह हो कि ईसाइयोंको अस्पृश्योंको ईसाई बना कर हिन्दुओंके बीच विद्यमान अस्पृश्यताका निवारण करना चाहिए या नहीं तो उत्तर यह है कि उससे किसी भी रूपमें उद्देश्यकी पूर्त्ति नहीं होगी, क्योंकि उद्देश्य तो सवर्ण हिन्दुओंमें सुधार लाना है। यदि सवर्ण हिन्दू अपने पापका प्रायश्चित्त करने लगें तो क्षण-भरमें हरिजन लोग अस्पृश्यताके जुएसे छुटकारा पा जायेंगे। धर्म-परिवर्तनसे ऐसा कभी नहीं किया जा सकता। उससे तो मौजूदा कटुता और बढ़ ही सकती है और स्थितिमें तनाव बढ़नेका एक कारण पैदा हो सकता है। स्थिति तो पहले ही काफी बुरी है, लेकिन हरिजन सेवक संघोंके कार्य और हिन्दू-धर्ममें आन्तरिक सुधारके अन्य आन्दोलनोंके फलस्वरूप वह धीरे-धीरे सुधरती जा रही है, अस्पृश्यताकी जकड़ दिन-दिन ढीली पड़ती जा रही है।

३. कई तरहसे। उनमें से कुछ मैं नीचे बता रहा हूँ:

(क) अपने प्रायश्चित्तके फलस्वरूप सवर्ण हिन्दुओंकी आत्मशुद्धि होगी।

(ख) हरिजनोंकी उन्नतिको अबतक अवरुद्ध रखनेवाले इस कृत्रिम अवरोधके हटनेसे उनकी आर्थिक, नैतिक, सामाजिक और राजनीतिक स्थितिमें तेजीसे सुधार होगा।

(ग) अस्पृश्योंपर थोपी गई अस्पृश्यता एक ऐसा जहर है जो अपने प्रभाव-क्षेत्रमें रहनेवाले सभी लोगोंपर चढ़ गया है। इसलिए हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और अन्य धर्मावलम्बी, सभी आपसमें एक-दूसरेके लिए अस्पृश्य बन गये हैं। अस्पृश्यताके वास्तविक निवारणसे निश्चय ही हम सभी एक-दूसरेके नजदीक आयेंगे और इस प्रकार भारतके विभिन्न समुदायोंके बीच हार्दिक एकता पैदा होगी।

(घ) अस्पृश्यताके सभी रूपोंके निवारणके फलस्वरूप सार्वभौमिक भ्रातृत्वकी भावनाको बहुत बल मिलना चाहिए।

४. हरिजन ही यदि न चाहें तो उनको हिन्दू-मन्दिरोंमें प्रवेश करनेकी जरूरत नहीं। लेकिन यदि उनमें आस्था हो तो उनको मन्दिरोंमें जाना चाहिए। मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनका उद्देश्य यह नहीं है कि हरिजनोंको हिन्दू-मन्दिरोंमें प्रवेश कराया जाये, बल्कि यह है कि इन मन्दिरोंके द्वार उन सभी हरिजनोंके लिए खुलवा दिये जायें जो उनमें पूजाके लिए प्रवेश पानेको इच्छुक हों। दूसरे शब्दोंमें कहा जाये तो यह सवर्ण हिन्दुओंके प्रायश्चित्त तथा हृदय-परिवर्तनका ही एक आन्दोलन है।

५. मुझे यह जानकर सचमुच दुःख होगा कि हिन्दू अवतारोंने हरिजनोंका दमन किया था और यदि उन्होंने सचमुच किया था तो निश्चय ही वे कल्याणके नहीं, बल्कि अनिष्टके देवता थे, जिनसे हमें दूर भागना चाहिए।

६. आज यदि कोई एक ठीक हदतक भी बतलानेका दावा करे कि कौन आर्य या कौन सचमुच अनार्य है, तो यह उसका दुःसाहस ही होगा। इतिहासकारोंका कहना है कि शताब्दियों पहले ही दोनों एक-दूसरेमें घुल-मिल गये थे। अब यदि विभाजनकी कोई एक सीधी रेखा खींचनेकी कोशिश की जायेगी तो उससे सवर्ण तथा अवर्ण हिन्दुओंको ही नहीं, बल्कि पूरे भारत देशको और उसके प्रभावसे समूची मानवताको ही हानि उठानी पड़ेगी।

७. सवर्ण हिन्दुओं द्वारा बरती जानेवाली अस्पृश्यताके जड़से मिटते ही अस्पृश्यों के समाजमें पाई जानेवाली उसकी उपशाखा भी अपने-आप सूखकर निःशेष हो जायेगी।

८. मैं अपनी बातको फिर दोहराता हूँ। पर वर्तमान प्रचार का उद्देश्य सवर्ण हिन्दुओं और इसलिए हिन्दुओंकी शुद्धि-भर है। और जब यह शुद्धि इतनी हो जायेगी कि ऊपर दिखने लगे, तो स्वराज्य ही नहीं, अन्य अनेक सुपरिणाम भी उसी तरह उसके साथ जुड़ आयेंगे जैसे रातके साथ दिन जुड़ा आता है। यहाँ 'स्वराज्य' शब्दका एक व्यापक अर्थमें प्रयोग किया गया है, जो मात्र एक वैधानिक दर्जेका नहीं, बल्कि उससे कहीं बेहतर और कहीं स्थायी स्थितिका द्योतक है। मैं उसको समाजके शरीरके आन्तरिक विकासका फल कहूँगा।

९. 'स्वराज्य' शब्दका आज कुछ भी अर्थ क्यों न लगायें, पर अस्पृश्यता-निवारण तबतक निरा धोखा ही रहेगा जबतक उसके फलस्वरूप मुक्त हुए हिन्दुओंको भी ठीक वे ही अधिकार नहीं दिये जाते जो अन्य हिन्दुओं और सभी अन्य समुदायोंके लोगोंको उसके अधीन प्राप्त होंगे।

१०. मुझ-जैसे बेचारे एक अकेले व्यक्तिके बसकी बात तो है नहीं कि करोड़ोंको रोजी जुटा सकूं। यह तो समूची जनताके सम्मिलित प्रयत्न और ईश्वरकी कृपासे ही हो सकता है। लेकिन यदि हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार खोल दिये जायें और अस्पृश्यता मिटा दी जाये तो एक ऐसा बोझ उनके सीनेसे हट जायेगा जिसके भारके नीचे वे दबे-पिसे जा रहे हैं और तब उनको भी समाजके शेष सदस्योंके साथ-साथ ईमानदारीसे अपनी रोजी कमानेके समान अवसर सुलभ हो जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-४-१९३४

४३८. उनको कैसे काम करना चाहिए

पाठक जानते हैं कि मैंने हरिजनोंसे कहा है कि वे हरिजन-बोर्डोंमें अपने प्रतिनिधि रखवानेका आग्रह न करें। कारण बहुत ही सीधा-सादा और अपने-आपमें पूर्ण है; यह कि हमारा मंशा इन बोर्डोंमें ऐसे सवर्ण हिन्दुओंको रखनेका है जो अस्पृश्यताको पाप मानते हैं और जो पिछले अन्यायोंके लिए हरिजनोंकी क्षतिपूर्त्ति करना चाहते हैं। इसलिए सवर्ण हिन्दू कर्जदार हैं और हरिजन साहूकार। कर्जदार लोग जब अपने दायित्वोंके निर्वाहके उपायों तथा तरीकोंपर विचार करते हैं तो अपने साहूकारोंके स्वीकारार्थ प्रस्तुत किये जानेवाले प्रस्ताव तैयार करना सिर्फ उन्हींका काम होता है जो साहूकारोंको स्वीकार्य हों। ऐसे प्रस्तावोंपर विचार करने और उनको स्वीकार या अस्वीकार करने या स्वीकार करनेसे पहले उनमें संशोधनोंका सुझाव देनेके लिए साहूकारोंके अपने मण्डल बने होते हैं। इसीलिए मैंने हरिजन सेवा संघके बोर्डोंकी सहायताके लिए हरिजनोंकी सलाहकार समितियाँ बनानेका सुझाव दिया है।

एक हरिजन पत्र-लेखकने मेरे सुझावके बारेमें लिखा है:

> **आप यदि एक आदर्श हरिजन सलाहकार समितिकी तसवीर खींचकर यह समझानेकी कृपा करें कि उसे क्या करना चाहिए, कैसे काम करना चाहिए और उसे कैसे अपनी बात मनवानी चाहिए तो मैं स्पष्ट रूपमें समझ सकूँगा कि वह कैसी होनी चाहिए। ऐसी समितियाँ स्थापित करनेकी आवश्यकता को देखते हुए मैं आपका सुझाव देना जरूरी भी मानता हूँ।**

ये अत्यन्त ही संगत प्रश्न हैं। मैं ऐसी सुगठित, छोटी-छोटी प्रतिनिधित्वपूर्ण समितियाँ बनानेकी सलाह दूँगा जो वास्तवमें स्थानीय हरिजनोंकी रायका प्रतिनिधित्व करती हों। वे अपनी कार्यवाहीके संचालनके लिए स्वयं ही नियम बनायेंगी और यह निश्चित करेंगी कि वे सवर्ण हिन्दुओंसे क्या आशाएँ रखती हैं और वे हरिजन-बोर्डोंकी कार्यवाहीपर आम तौरपर नजर रखेंगी। ये सलाहकार समितियाँ गठित होने पर अपने यहाँके हरिजन-बोर्डोंको अपने अस्तित्वकी सूचना देंगी और उनको सहायता करनेके लिए अपनी तत्परता दिखायेंगी। यदि हरिजन-बोर्ड अपना कर्ज चुकाने, अर्थात् हरिजनोंकी सेवा करनेको सचमुच उत्सुक होंगे तो वे इन सलाहकार समितियोंके साथ अधिकसे-अधिक मैत्रीपूर्ण सम्पर्क स्थापित करेंगे और तब दोनोंके बीच पूर्ण सहयोग और मेल-जोलका सम्बन्ध बन जायेगा। आरम्भमें पारस्परिक सन्देहोंके कारण कुछ झमेले भी हो सकते हैं। स्वाभाविक ही है कि हरिजन-बोर्ड इन समितियोंसे कहीं अधिक सुसंघटित और हर तरहसे बढ़-चढ़कर होंगे। इसलिए उनको जो माँगें बेसिर-

पैरकी मालूम हों उनके बारेमें भी व्यवहार-कुशलतासे काम लेना चाहिए। सलाहकार समितियोंको भी हरिजन-बोर्डोंका लिहाज करना चाहिए। वे जितना ज्यादा लिहाज रखेंगी, उतना ही अधिक लाभ उठा सकेंगी। वे शोभनीय ढंगसे काम करनेकी अपनी योग्यताका परिचय देती रहेंगी तो यह कला भी सीख लेंगी कि आवश्यकता पड़नेपर अपनी बात कैसे मनवाई जाये। कारण, उनको समझना चाहिए कि हरिजनोंके सहयोगके बिना सवर्ण हिन्दू कभी भी अपने दायित्वका निर्वाह नहीं कर पायेंगे। पर अभी तो इस तरह उनके अपनी बातपर आग्रह रखनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि विशाल हरिजन समुदायको इतनी असहाय अवस्थामें ला छोड़ा गया है कि चाहनेपर भी अन्यायका प्रतिरोध करनेकी सामर्थ्य उनमें नहीं रह गई है। मैं अपना आशय स्पष्ट करता हूँ। हरिजन बोर्डोंके तीन काम हैं — हरिजनोंका आर्थिक, सामाजिक तथा धार्मिक दर्जा ऊँचा करना, या दूसरी तरहसे कहें तो, उन कठिनाइयोंको दूर करना जो सवर्ण हिन्दू-जीवनके सभी क्षेत्रोंमें हरिजनोंकी उन्नतिके रास्तेमें शताब्दियोंसे पैदा करते रहे हैं और जिनके कारण वे किसी भी क्षेत्रमें अपना सिर उठा नहीं पाये हैं। इस प्रकार हरिजन-बोर्डोंको कुओं, छात्रवृत्तियों, छात्रावासों, पाठशालाओं और सामाजिक सुविधाओंकी व्यवस्था आवश्यकतानुसार हर-कहीं करनी पड़ेगी। आम हरिजन-समाज इन सब मामलोंमें जहाँ भी सहायता दी जाती है, बस ले लेता है। इसलिए इन मामलोंमें सलाहकार समितियाँ हरिजन-बोर्डोंको उपयोगी सुझाव देकर और जिनका वे प्रतिनिधित्व करती हैं उनको अपनी सामर्थ्यके अनुसार स्वयं भी सहायता देकर उद्देश्यको आगे बढ़ा सकती हैं और अपने-आपको भी लाभान्वित कर सकती हैं। अपनी बात मनवानेकी शक्ति वे इसी तरह हासिल कर पायेंगी। संक्षेपमें कहूँ तो सलाहकार समितियाँ उद्देश्यकी पूर्त्तिमें अधिकसे-अधिक सहायक इसी प्रकार बन सकेंगी कि वे हरिजन-समाजमें आन्तरिक सुधार करने और उनमें जागृति पैदा करनेका काम हाथमें लें, जिससे कि हरिजन लोग यह महसूस करने लगें कि वे इन्सान हैं और वे भी उन सभी अधिकारोंके उपभोगके हकदार हैं जिनका उपभोग उस समाजके अन्य सारे लोग कर रहे हैं जिसमें वे रहते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २०-४-१९३४

४३९. पत्र : प्रेमी जयरामदासको

२० अप्रैल, १९३४

प्रिय प्रेमी,

तुम्हारा पत्र मिला। हैदराबादके लिए ७ जुलाईकी तिथि अस्थायी तौरपर निश्चित की गई है। सिन्धके लिए केवल ३ दिन दिये गये हैं। तैयारी के लिए तुम्हारे पास काफी समय है। हम लोग १२ से १६ व्यक्ति होंगे। तबतक पिताजी को बाहर आ जाना चाहिए। पूरी आशा है कि डॉ० चोइथराम अब पहलेसे अच्छे होंगे। पिताजी और डॉ० चोइथरामसे मेरा स्नेह कहना।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२४६) से; सौजन्य: जयरामदास दौलतराम

४४०. पत्र : कोतवालको

२० अप्रैल, १९३४

भाई कोतवाल,

तुम्हारा पत्र मिला। समय बीतने के साथ-साथ तुम मेरे निर्णयके औचित्यको अधिकाधिक स्पष्टतापूर्वक समझ पाओगे। धीरज रखना। जिसमें जैसा करनेका उत्साह होगा उसे वैसा करनेका अवसर अवश्य मिलेगा। किसी तरह जेल चले जाने या फाँसी चढ़ जानेको सविनय अवज्ञा नहीं कहा जा सकता। सविनय अवज्ञाका सूक्ष्म अनर्थ बहुत ज्यादा हुआ है। सविनय अवज्ञा करनेकी योग्यता प्राप्त करनी चाहिए। सविनय अवज्ञा प्रचण्ड संहारक शक्ति है। वह शक्ति उत्पन्न करनेके लिए कायदे-कानूनोंका स्वेच्छापूर्वक अति सूक्ष्मतासे पालन किया जाना चाहिए। ऐसा करनेवाले कितने लोग मिलेंगे? क्या तुम हो? या थे? या भविष्यमें बनोगे? इन प्रश्नोंके उत्तर मुझे मत देना। तुम अपने-आपको स्वयं उत्तर दे लेना तो मेरा वक्तव्य अच्छी तरह तुम्हारी समझमें आ जायेगा और तुम्हें अपना मार्ग भी सूझ जायेगा। इसके अतिरिक्त यह याद रखो कि सभी मामलोंमें मैंने सविनय अवज्ञाको निषिद्ध नहीं ठहराया है। स्वराज्यके अतिरिक्त ऐसी अनेक परिस्थितियाँ होती हैं जहाँ व्यक्तिगत अथवा सामूहिक रूपसे सविनय अवज्ञा करनेका अवसर मिल सकता है। जरा धीरज रखो।

स्वराज्यके लिए मेरे आह्वानकी प्रतीक्षा करना। उसके लिए तैयारी करना। यदि तुम वैसा करना चाहो तो अपने सभी व्यक्तिगत सम्बन्ध तोड़ देना। "भाई छोडया वन्धु छोडया, छोडया सगा भाई"[१] वाला काम करना तथा खादी, हरिजनों, मुसलमानों और शराबियोंकी सेवामें लग जाना। आजीविका चलानेके लिए उससे जो मिले उसमें खुश रहना और तब यह निश्चित मानना कि सब-कुछ ठीक ही होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३६०८) से।

४४१. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

२० अप्रैल, १९३४

भाई घनश्यामदास,

पत्रिकापर[२] लिखा हुआ सारा खत पढ़ गया। मुझको बहुत पसंद आया। पत्रिकाके संपादकको खानगी भेजा जाय। उसी वस्तुको प्रगट करना चाहता है तो तुमारे नामको छोड़कर और उसमें नीजी बात है उसे छोड़कर छापे, नहिं छापना है तो भले छोड़ देवे।

तुमारा शरीर अच्छा रहता होगा। मर्यादित व्यायाम होता होगा।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ७९५२ से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

४४२. वक्तव्य : एसोसिएटेड प्रेसके संवाददाताको[३]

तिनसुकिया
२० अप्रैल, १९३४

आप जिन्हें लकीरके फकीर उच्चतर वर्ग कहते हैं उनकी ओरसे कोई सक्रिय विरोध मेरे देखनेमें नहीं आया और निश्चय ही मुझे धन तथा रचनात्मक कार्यके वादोंके रूपमें भी काफी सक्रिय समर्थन उनसे मिला है। विचित्र लग सकता है, पर है सच कि असमतक में हरिजनोंने स्वाभाविक रूपसे शैक्षणिक तथा आर्थिक उन्नतिकी आवश्यकतापर जोर देनेके साथ-साथ अपनी सामाजिक निर्योग्यताओं तथा मन्दिरों और नामघरों (पूजा-स्थलों)में अपने प्रवेशपर लगे प्रतिबन्धोंकी बड़ी सख्त शिकायत

१. मीराबाईके भजनकी एक पंक्ति।
२. *अमृत बाजार पत्रिका*को।
३. यह वक्तव्य एसोसिएटेड प्रेसके संवाददाताके प्रश्नोंके उत्तरमें दिया गया था।

की है। उनपर लगे सामाजिक तथा धार्मिक प्रतिबन्धोंके पीछे जो यह मान्यता निहित है कि वे हीन हैं, उसकी कचोट वे महसूस करते हैं। लेकिन मेरा विश्वास है कि अब ये प्रतिबन्ध तेजीसे बिखरते जा रहे हैं और लोकमत ऐसे प्रतिबन्धोंको हटानेके पक्षमें बनता जा रहा है।

मैंने कहा है कि असमकी समस्या पेचीदा-सी है, क्योंकि यहाँ असमिया हरिजनों और अन्य प्रान्तोंसे आये कुलियों, दोनोंको हरिजन माना जाता है, चाहे वे अपने प्रान्तोंमें हरिजन माने जाते रहे हों या नहीं। इसलिए उनकी स्थिति भी किसी तरह अच्छी नहीं है। उनकी समस्या के समाधानमें अजीब तरहकी कठिनाइयाँ सामने आयेंगी, क्योंकि वे असममें बाहरसे आकर बस गये हैं और भूमिके हकदार भी बन चुके हैं और अब यदि उनकी ओर ठीक ध्यान नहीं दिया जायेगा तो वे दिन-दिन और अधिक कठिनाइयाँ पैदा करते जायेंगे। परन्तु मुझे पूरी-पूरी आशा है कि इस अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनके परिणामस्वरूप असमी नेतागण इस समस्याके समाधानके लिए गम्भीरतासे प्रयत्न करेंगे और इन कुलियोंको सम्माननीय नागरिक बननेमें सहायता देंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-४-१९३४

४४३. भाषण : सार्वजनिक सभा, तिनसुकियामें[1]

२० अप्रैल, १९३४

गांधीजी ने घटनाका[2] उल्लेख करते हुए कहा कि यदि इन मित्रोंका किसीने अपमान किया हो तो बहुत गलत काम किया। लेकिन धर्मकी सेवाके इच्छुक व्यक्तियों को शिष्टता तथा अशिष्टताके छोटे-मोटे खयालोंसे ऊपर उठना सीखना चाहिए। जो लोग अपने गर्वको वशमें करके अपने ही पैरों तलेकी धूलके समान विनम्र नहीं बन पायेंगे वे हरिजन-सेवाका कार्य करनेमें समर्थ नहीं हो सकेंगे।

गांधीजी ने आगे बोलते हुए कहा कि मैं धनको अपने-आपमें कोई अधिक महत्त्व नहीं देता। शायद इसीलिए मैं एक कुशल भिखारीके रूपमें मशहूर हूँ। मैं केवल ऐसा ही धन चाहता हूँ जिसके साथ दानकर्ता अपने हृदय भी अर्पित कर सकें। यदि कोई एक ही दानकर्ता मुझे एक करोड़ रुपये दे दे तो मैं उसके बलपर अस्पृश्यताको नहीं मिटा सकूँगा, लेकिन यदि एक करोड़ सवर्ण हिन्दू हृदयसे मेरे साथ हो जायें तो मैं बिना एक पाईके भी अस्पृश्यता-निवारणका काम हाथमें लेनेको तैयार हो सकता हूँ। लोग भली-भाँति समझ लें कि अस्पृश्यता-निवारणसे मेरा क्या मतलब है। उसका मतलब है—सभी प्रकारका ऊँच-नीचका भेदभाव, और केवल हरिजनोंके ही सन्दर्भमें

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।
२. कुछ लोगोंने शिकायत की थी कि मंचकी ओर आते समय उनका अपमान किया गया था।

नहीं, बल्कि स्वयं सवर्ण हिन्दुओंके सन्दर्भमें भी ऐसे भेदभावका मिटाया जाना। उससे निश्चय ही हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों और अन्य समुदायोंके लोगोंके बीच हार्दिक एकता पैदा होगी, क्योंकि एकताको नष्ट करनेवाले राजनीतिक कारण बड़े ही सतही किस्मके हैं। मूल कारण तो ऊँच-नीचका भेद, अर्थात् अस्पृश्यता ही है। 'गीता' की भाषामें कहा जाये तो लोगोंको ब्राह्मण और भंगी दोनों ही को समान आदर-भावसे देखना सीखना चाहिए। कोई भी मनुष्य जन्मके कारण अशुद्ध नहीं हो सकता। यदि लोग समझनेकी कोशिश करें कि अशुद्ध चीजें क्या हैं, तो उनको अपना ही मन टटोलकर देखना चाहिए; वहीं उनको ऐसे अनेकानेक बुरे विचार मिलेंगे जिनको बहिष्कृत करना ही उचित होगा। नहाना-धोना वैसे तो एक बड़ी अच्छी चीज है, लेकिन भैंसें भी तो रोज बड़ी देरतक नहाती हैं। शुद्ध व्यक्ति तो केवल वही है जो ईश्वर-भीरु रहकर उसके रचे हुए प्राणियोंकी सेवा करता है।

फिर, असममें तो एक विशेष अस्पृश्य भी है। वह है अफीम। आपको इस अभिशापसे छुटकारा पाना चाहिए। इसके कारण आपकी उन्नति रुद्ध हो गई है। चिकित्साशास्त्रीय साक्ष्यसे यह स्पष्ट है कि यदि अफीम-सेवनकी आदतसे छुटकारा न पाया गया तो वह असमकी जनताको ही नष्ट कर देगी। इस आदतके शिकार हरिजन भी उतने ही हैं जितने कि अन्य समुदायोंके लोग। उन्होंने असमके सुसंस्कृत स्त्री-पुरुषोंसे आग्रह किया कि वे इस कामको अपने हाथमें लें।

असमियोंको अन्य प्रान्तोंसे आये मजदूरोंकी दशा की ओर विशेष ध्यान देनेकी जरूरत है। उनके उत्थान और असमिया समाजमें उनके संविलयके लिए विशेष उपाय किये जाने चाहिए।

सभामें बहुत बड़ी संख्यामें एकत्र मारवाड़ियोंसे अपील करते हुए उन्होंने कहा कि आप लोग भारतके साहूकार हैं और आपके मानवीयतापूर्ण क्रिया-कलापको मैं भली-भाँति जानता हूँ। आप लोग गोरक्षा, हिन्दी-प्रचार, पीड़ितोंको राहत-जैसे कामोंके लिए धन जुटानेको सदा तत्पर रहते हैं। मैं चाहता हूँ कि आप यहाँके हरिजनों और अन्य प्रान्तोंसे आये उन औद्योगिक मजदूरोंके सेवा-कार्यमें भी पूरा हाथ बँटायें जिनको बड़े ही बेजा तरीकेसे 'कुली' कहकर पुकारा जाता है और जिनके साथ हरिजनोंसे भी बुरा बरताव किया जाता है।

असम एक अत्यन्त ही मनोरम प्रदेश है, जिसके प्राकृतिक दृश्योंसे आँखें हटानेको मन नहीं करता। उदारमना ब्रह्मपुत्र और भरपूर तथा सामयिक वर्षाके कारण असम जैसे सोना उगल सकता है। परन्तु उसके लिए, सोना हासिल करनेके लिए, अनवरत मानव-प्रयत्न अपेक्षित है। यदि समाजके सभी अंग दक्षताके साथ काम करें तो असम देखनेमें जितना मनोरम है, उतना ही अधिक समृद्ध तथा सुखी भी बन जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ४-५-१९३४

४४४. पत्र : परीक्षितलाल ल० मजमूदारको

२२ अप्रैल, १९३४

भाई परीक्षितलाल,

साथका पत्र[२] पढ़ लेना। ऐसा लगता है कि उसने तुम्हें भी पत्र लिखा है। मुझे लगता है कि इसे जगह दी जानी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०२२) से।

४४५. पत्र : नानालाल इ० मशरूवालाको

२२ अप्रैल, १९३४

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। जेल जाना अपने-आपमें कोई धर्म नहीं है। धर्मके लिए जेल जाना पड़ता है, उसके लिए हम तैयारी किये बैठे हैं। यदि जेल जाना कोई स्वतन्त्र धर्म होता तब तो चोरी करके भी जेल जाया जा सकता है। किन्तु तुम्हारा यह लिखना उचित है कि आजका वातावरण ऐसा हो गया है मानों जेल जाना ही एकमात्र कर्त्तव्य हो।

मणिलालका पत्र इसके साथ है। उसे पढ़कर सुशीलाको दे देना। मैं उसे अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ क्योंकि समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२३) से। सी० डब्ल्यू० ४९९९ से भी; सौजन्य : कनुभाई मशरूवाला

२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

४४६. पत्र : करुणाबाईको

२२ अप्रैल, १९३४

हमारेको तुम्हारे विवाहका निमंत्रणपत्र श्री शुकदेवजी ने दिया है। तुम्हारा और नर्म्मदाप्रसादका विवाहित जीवन सुख-रूप और सेवामय हो ऐसी मेरी आशा है।

मो० क० गांधीके आशीर्वाद

श्री करुणाबाई
मार्फत-श्री शुकदेवप्रसाद तिवारी
सुहागपुर

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६८१) से।

४४७. भाषण : सार्वजनिक सभा, कटिहारमें

२२ अप्रैल, १९३४

बापूने अत्यन्त ही मर्मस्पर्शी शब्दोंमें गोकुलबाबूकी[1] आकस्मिक मृत्युकी चर्चा की। उन्होंने कहा कि मनुष्य अपनी ओरसे कुछ सोचता है, लेकिन उसका होना या न होना तो ईश्वरके ही हाथ रहता है। फारबिसगंज और उसके देहाती इलाकोंमें मेरे दौरेके समय जब गोकुलबाबू बिलकुल स्वस्थ और प्रसन्न अवस्थामें इतने उछाह और इतनी चुस्तीसे मेरी कार चला रहे थे, तब मैंने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि कटिहार पहुँचकर मुझे उनकी मृत्युके बारेमें भाषण करना पड़ेगा। उनके साथ पूर्णियामें मेरा घनिष्ठ सम्पर्क हुआ था। उनके घरमें ही मेरा सत्यवतीसे परिचय हुआ था। बेचारी अब विधवा हो चुकी हैं। उन्होंने एक स्वयंसेविकाकी हैसियतसे पैसे-पैसेका दान माँगने और सभा तितर-बितर होनेपर भीड़से मुझे बचाने और धकियाती हुई भीड़में से मेरे लिए रास्ता बनवानेमें अद्भुत साहस और क़र्त्तव्य-परायणताका परिचय दिया था। लेकिन शारीरिक बल क्या कर सकता है? आत्मिक बल ही सहायता तथा रक्षा करता है। बापूने उनके जीवनकी सराहना की :

वे एक सदगुणसम्पन्न महिला हैं और अपने स्वर्गीय पतिके पद-चिह्नोंका अनुसरण करनेका सफल प्रयास करती हैं।

१. गोकुलकृष्ण राय।

मुझे आशा है कि वे अपने पतिके कार्यको जारी रखेंगी। इस सम्बन्धमें राजेन्द्र बाबू और मृत्युंजयके तार मिलनेपर मैंने उत्तर दिया था कि अपने प्रिय पतिके प्रति सच्ची निष्ठा रखनेवाली पत्नीके नाते उनको अपने पतिके पद-चिह्नोंपर चलकर देशकी सेवा करनी चाहिए; उनको उसी मार्गपर चलना चाहिए जो वे दिखा गये हैं। राजेन्द्रबाबूने मुझे अभी-अभी बताया है कि अब वे अन्न ग्रहण करने लगी हैं।[1] यह बहुत अच्छी बात है। पतिव्रता नारीके लिए यह बिलकुल गलत है कि वह अपने दिवंगत पतिके साथ ही अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दे। ऐसी मृत्युसे कर्त्तव्यकी पूर्त्ति नहीं होती। वास्तविक कर्त्तव्य-पूर्त्ति तो इसीमें है कि वे अपने दिवंगत पतिके प्रिय कार्यको और आगे बढ़ायें और उसी मार्गमें अपने प्राणोंकी आहुति दे दें। मरते तो सभी हैं, बूढ़े होकर मरें, या जवानीमें या बचपनमें ही। सभी को एक ही राह जाना है। तब फिर ऐसे गोकुलबाबूके लिए शोक क्यों किया जाये, जिन्होंने आराम और सुख-सुविधामें पलनेपर भी एक मजदूरकी तरह जुटकर अपना कार्य किया। वे तीन दिनतक मेरे साथ रहे थे और उस दौरान उन्होंने बड़ी बहादुरीसे धूल-धक्कड़ और दौड़-धूप बरदाश्त की और कठिनाइयोंका कभी खयालतक नहीं किया।

ईश्वर जो चाहता है वही होता है। लोग गोकुलबाबूके नामपर एक आश्रम खोलनेकी सोच रहे हैं। उनकी भी ऐसी इच्छा थी।

सभामें जमा होनेवाले चन्देकी समस्त राशि प्रस्तावित आश्रमको दे दी जायेगी। कहा जाता है कि गोकुलबाबू पूर्णियाके प्राण थे। गांधीजी ने आशा व्यक्त की कि जनता दिखा देगी कि यह उसकी ही भावना है। गोकुलबाबूमें दो विशेषताएँ स्पष्ट लक्षित होती थीं — अस्पृश्यताकी भावनाका नितान्त अभाव और ऊँच-नीच तथा गरीब-अमीरके भेदभावसे अछूतापन।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, २९-४-१९३४

४४८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

मुजफ्फरपुर
२३ अप्रैल, १९३४

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारे दो पत्र मिले। अभी-अभी दातुन करके लिखने बैठा हूँ। ३.४० हुए हैं। तुम इसे तो उठनेके समयमें सुधार मानोगे न? हम लोग गोखलेपुरी, मुजफ्फरपुरमें हैं। कल रातको १०.३० बजे असमसे यहाँ आये। गोखलेके नामपर एक छोटा-सा उपनगर गोखले संस्थावाले बाजपेयीने बसाया है। आज मौन खुलनेके बाद उसका उद्घाटन करना है। राजेन्द्रबाबू मुझसे कल कटिहारमें मिले थे।

१. गांधीजी को भेजे तारोंमें उन्हें बताया गया था कि उन्होंने शोक-संतप्त होकर भोजन त्याग दिया है।

वालजी के कुछ बीमार हो जानेके कारण यहाँ पहुँचकर तुरन्त सो जानेके बजाय मैंने डॉक्टरको बुलवाया। इससे १२ बजेके बाद सोना हुआ।

मेरी चिंता मत करो। मैं अपने स्वास्थ्यका खूब ध्यान रख रहा हूँ। नींद किसी-न-किसी तरह पूरी कर लेता हूँ।

नारणदास (गांधी) छूटनेके बाद काफी बीमार हो गया है। नकसीर खूब फूटती है। मगर अब ठीक है। वह राँचीमें मुझसे मिलेगा।

यह आश्चर्यकी बात है कि तुम परेशान हो। मैंने तो सबसे कहा था कि मैंने जो कदम उठाया है उसे समझनेमें तुम्हें देर नहीं लगेगी। परन्तु तुम्हारे पत्रोंसे तुम्हारा दुःख झलक रहा है। जो लोग बाहर हैं उनमें से किसीकी भी तुम्हारी-जैसी हालत हुई नहीं लगती। जवाहरके बारेमें ऐसा खयाल जरूर था, परन्तु उसके बारेमें मैंने यह मान रखा था कि वह थोड़ी ही देरमें समझ जायेगा। मेरा यह खयाल कि जेलमें बैठे हुए बाहरकी बात नहीं समझ सकते, क्या तुम्हारे बारेमें भी सही साबित हो रहा है; या मैं ही सही रास्तेसे बिलकुल भटक गया हूँ? मुझे अभी तक ऐसा कुछ नहीं लगता। दीपकके प्रकाशकी तरह मुझे साफ दिखाई देता है कि मैंने जो निर्णय किया है वह ठीक है। पूनामें ही मुझे यह बात क्यों न सूझी, यह कहना भी व्यर्थ है। उस वक्त यह सूझने जैसी बात नहीं थी। वक्तपर जो बात सूझती है, वही शोभा देती है। पूनाके समय पूनाकी बात ठीक थी और इस वक्त यही मुनासिब है। बूआजीके[1] कहनेका हर्ष या शोक बिलकुल नहीं मानना चाहिए। अगर हमने यह निर्णय न किया होता तो अपार हानि होती।

मुश्किलें तो जरूर हैं। लेकिन एक भी मेरी नजरसे बाहर न थी। हम उन्हें पार कर लेंगे। इस कदमसे जनताका मनोबल बढ़ा है। वह और भी बढ़ेगा। किसानोंको जवाब दिया जा सकता है, और देंगे। अगर मैं ही हार गया होता तो नहीं दिया जा सकता था। इसमें अहंकार हो सकता है, ऐसा तुम्हें तो स्वप्नमें भी खयाल नहीं होगा। कैदीके नाते सब दलीलें तुम्हारे सामने नहीं रखी जा सकतीं, इसलिए इतना ही काफी समझता हूँ। धीरजका फल मीठा होता है। धीरज रखना, सब अच्छा ही होगा।

स्वराज दलके पुनरुज्जीवनके बारेमें तो सब-कुछ साफ-साफ समझमें आ जाता है। उसको पुनरुज्जीवित करनेकी अत्यन्त आवश्यकता थी। मुझे ऐसा लगा कि जो दल काफी ठोकरें खानेके बावजूद टिका हुआ है, उसके लिए कांग्रेसमें स्थान होना ही चाहिए। मैं मानता हूँ कि यह बात केवल वर्तमानके लिए नहीं, परन्तु हमेशाके लिए सही है। इसमें भी मुश्किलें हैं। स्वार्थ भी है। अनुभवकी कमी भी है। जो कहना चाहो सो है। फिर भी जो है, उसे मिटाया नहीं जा सकता। उसमें सुधार हो सकते हैं। उसपर अंकुश रखा जा सकता है। इससे अधिक या कम कुछ नहीं हो सकता। तुम चाहो तो यह भी कह सकते हो कि मैंने हिम्मत बँधाकर उन्हें खड़ा किया है। उनकी इच्छा थी, परन्तु हिम्मत नहीं हो रही थी। पूनामें मैंने जो सुझाया था, वह अब फलने लगा है। यदि हम कांग्रेसको विधान-सभाओंसे सर्वथा अलिप्त रख सके होते तो दूसरी बात

१. सम्भवतः सरोजिनी नायडू।

थी। परन्तु वह तो जबरदस्ती करने-जैसी बात होती। 'सन' के[1] दर्शन तो तुमने ही पहले-पहल कराये। इसमें तो ऐसी ही बातें आयेंगी न? इनमें थोड़ा-बहुत सत्य है जरूर। बेचारी लेस्टर! वह और अगाथा कल पटनामें मिलेंगी। उन दोनोंको तो यह निर्णय बहुत ही पसन्द आया। अपनी शक्तिके अनुसार वे खूब मेहनत कर रही हैं। परन्तु फिलहाल उनकी आवाज कौन सुनता है? इतनेपर भी वे इतना-सब समझ लेती हैं, यही बहुत है। दोनों निर्मल हैं, बहादुर हैं। स्विट्जरलैंडसे सेरेसोल आ रहे हैं। वे होशियार इंजीनियर हैं। बिहारकी मददके लिए आ रहे हैं। वे शान्ति-प्रेमी हैं। मैं उनसे विलेन्यूवमें मिला था। भले आदमी हैं। अगर उनके स्वास्थ्यने साथ दिया, तो बहुत-कुछ कर सकेंगे। देखें, क्या करते हैं।

फूलचन्द बापूजी के स्वर्गवासका तार तो मुझे कल ही मिला। एक भला सेवक चला गया। यह आदर्श मृत्यु मानी जायेगी। साथकी टिप्पणी नरसिंहभाईने[2] प्रकाशित की थी। पसन्द आयेगी। नरसिंहभाई लिखते हैं कि वे रातको बदस्तूर सोने गये। आखिरी दिनतक काममें जुटे रहे। कोई कष्ट नहीं था। फिर कोई उनके पास क्यों रहने लगा? रातको ही घड़ी बन्द हो गई। चन्द्रशंकर पंड्या तारसे पूछते हैं कि लिखिए, क्या किया जाये? तुम्हारी रायमें क्या किया जा सकता है? इस वक्त स्मारककी तो बात सोची नहीं जा सकती। तुम्हें कुछ सुझाना है?

संकट-निवारणके पैसेके मामलेमें ठक्कर बापा दादासे[3] मिलने गये थे। दादा प्रसन्न हैं। उनका शरीर खूब अच्छा होता जा रहा है। उन्हें खास जल्दी नहीं। भले ही न हो। यह भी ठीक ही है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ९६-८

४४९. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

२३ अप्रैल, १९३४

प्रिय मित्र,

आपके दो पत्र मिले। हाँ, मैं चाहता हूँ कि सविनय प्रतिरोधियों और हरिजन-सेवकोंके बारेमें अपनी जानकारीके मुताबिक सभी तथ्य आप मुझे बतलायें।[4]

१. उन दिनों बम्बईसे निकलनेवाला एक अंग्रेजी अखबार।

२. नरसिंहभाई ईश्वरभाई पटेल।

३. श्री गणेश वासुदेव मावलंकर।

४. अमृतलाल चटर्जीने सविनय प्रतिरोधियों द्वारा जेलमें किये गये असत्याग्रही आचरण और कुछ हरिजन-सेवकोंके अशोभनीय आचरणके बारेमें भी शिकायत की थी।

आपका दूसरा पत्र आपके पहले पत्रसे मेल खाता नहीं लगता। आपका पहला पत्र तो पूरी तरह सिद्ध करता है कि फिलहाल व्यक्तिगत सविनय अवज्ञातक को केवल मुझतक ही सीमित रखना क्यों जरूरी है।

अपने इस निर्णयपर पहुँचनेमें मैंने किसीकी भी निर्णय-बुद्धिको उससे अधिक अवरुद्ध नहीं किया है जितना कि एक शल्य-चिकित्सक आम लोगोंको कुछ करने तथा कुछ न करनेकी हिदायत देकर करता है। स्वाभाविक है कि शल्य-चिकित्सकपर विश्वास न रखनेवाले लोग उसकी हिदायतोंपर नहीं चलेंगे।

यदि काफी तादादमें लोग मेरी सलाहपर कान नहीं देते, तो उससे यही सिद्ध होगा कि मेरे पास काम करनेके साधन बहुत ही कम हैं।

अभीतक मैंने जितने और जो भी प्रयोग किये हैं वे सभी आजके इस निष्कर्ष तक पहुँचनेके लिए नितान्त आवश्यक थे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १४४६) से; सौजन्य: ए० के० सेन

४५०. पत्र: मार्गरेट स्पीगलको

२३ अप्रैल, १९३४

चि० अमला,

आशा है, मैंने जो पत्र लिखा है वह तुझे मिल गया होगा। तेरी गुजराती अच्छी ही मानी जायेगी। यदि तू मेरे पत्र पढ़ने लग जाये तो तेरी प्रगति बहुत अच्छी मानी जायेगी। तेरी खातिर ही मैं सुन्दर अक्षर लिखनेका प्रयत्न करता हूँ।

मेरा निर्णय तुझे रुचा, यह बहुत अच्छा हुआ। अब इससे आगे नहीं बढ़ना चाहिए। इतना पर्याप्त होना चाहिए। राजनीति और धर्मके दो अलग भेद तू क्यों करती है?

मैं स्वस्थ हूँ। वजन १०६ (पौण्ड) के लगभग है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

स्पीगल-पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४५१. पत्र : कल्याणजी वी० मेहताको

मुजफ्फरपुर
२३ अप्रैल, १९३४

भाई कल्याणजी,

तुम्हारा पत्र मिला।

मुझे इस बारेमें बिलकुल भी सन्देह नहीं है कि आश्रमका भूमिकर अदा कर ही देना चाहिए। मेरे सिवा और कोई सविनय अवज्ञा न करे, का यह अर्थ नहीं है कि सबलको निर्बल बनना है। इसका तात्पर्य यह है कि सबल और बलवान बनें, निर्बलोंकी निर्बलता ढकी रहे तथा वे उसे दूर करनेका प्रयत्न करें। अतः इससे किसीको खुशामद करके या नाक रगड़कर अपनी खोई हुई चीज वापस पा लेनेकी छूट मिल जाती है, ऐसा बिलकुल नहीं है। खोई हुई चीजको वापस लेनेका समय अवश्य आयेगा, किन्तु वह तो तभी आयेगा जब हममें बलका संचार हो जायेगा। इस दौरान हम वस्तुस्थितिको देखकर चलें। किसीको घबराना नहीं चाहिए। कुछ दिनोंमें सब ठीक-ठिकाने आ जायेगा और हमें अपने-आप रास्ता भी सूझने लगेगा। सबको अपनेमें अधिकसे-अधिक त्यागवृत्तिका विकास करना चाहिए और अपनी सामर्थ्यके अनुसार सेवा-कार्यमें जुट जाना चाहिए।

तुमने परिवारके समाचार आवश्यक विस्तारसे दिये हैं। रोग और मृत्यु तो देहके साथ लगे ही हुए हैं। किसीको कम रोग होता है तो किसीको ज्यादा, किसीकी आज मृत्यु होती है तो किसीकी कल। हमसे जहाँतक बन पड़े मर्यादाके भीतर रहकर सभी आवश्यक उपाय करें। जैसाकि सरदार लिखते हैं, यदि मीठूबहन कहीं जाकर आराम करे तो अच्छा हो। नेपोलियन[1] बहादुर होकर निर्बलता दिखाये, यह कैसे बरदाश्त किया जा सकता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७०९) से।

१. छोटूभाई; कल्याणजी मेहताके भाई कुँवरजीका पुत्र।

४५२. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

मुजफ्फरपुर
२३ अप्रैल, १९३४

चि० भगवानजी,

अपने पत्रके लिए मैं लज्जित हूँ। मुझे ही नहीं, बल्कि अन्य लोगोंको भी वह सुश्रृंखलित नहीं लगता। इतने खराब अक्षरोंमें पत्र लिखना, यह भी हिंसा ही है। फिर भी मैं ऐसे पत्र लिखता हूँ, क्योंकि तुम सब ऐसा चाहते हो। किन्तु उस पत्रमें इसके अतिरिक्त अन्य दोष भी हैं। मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि वह पत्र मैंने बहुत थकावटकी हालतमें और ऊँघते-ऊँघते लिखा होगा। अत. उसमें कुछ असम्बद्ध वाक्य आ गये हैं। जिस वाक्यको तुमने रेखांकित किया है वह उस पत्रमें नहीं है, यह मानकर तुम उसे पढ़ना। फिर तुम देखोगे कि दोनों विचार पूर्ण हैं। तुम्हें पत्र लिखते समय सम्भवतः मेरा चित्त एकाग्र नहीं होगा, इसलिए मेरे दिमागमें घूमनेवाले विचार उसमें मिल गये हैं। यदि इस पत्रसे मैं सतर्क हो जाऊँ तो उससे तुम्हारा उद्देश्य पूरा हो जायेगा। तुमने अपने स्वभावके अनुसार निरर्थक वाक्यका अर्थ बैठानेमें कितनी अधिक मेहनत की होगी!

तुम्हारा पत्र मुझे मिल गया है। मुझे अवश्य लिखते रहना। किन्तु सभी पत्रोंके उत्तरकी आशा मत रखना। बहुत सम्भव है कि कुछका उत्तर देनेकी आवश्यकता न हो और कुछका उत्तर देनेका मुझे समय ही न मिले।

तुमने अपनी कताईके बारेमें मुझे सूचित करके अच्छा किया। उसके पीछे अहं-कार नहीं है; सूचना सही और देने लायक है, अतः उक्त सूचना दी जानी चाहिए।

यदि हमारा काम चींटीकी चालसे भी धीमी गतिसे चले तो भी यह माना जायेगा कि वह तीव्र गतिसे चला, क्योंकि जो सच्चा होगा वही टिकेगा। बाकी सब तो व्यर्थ ही समझो। इस गतिसे चलते हुए भी हम प्रसन्न रहें, इसीमें हमारी परीक्षा है।

मैं बलरामको लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३६९) से; सौजन्य : भ० पु० पण्ड्या

४५३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२३ अप्रैल, १९३४

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा खत मिला। तुमारा मेरे साथ फिरना अथवा दो दिनके लिये यहां तक आना अच्छा नहिं है। मेरे साथ की मुसाफरी कठिन कार्य है। करीब-करीब सब बीमार पड़ जाते हैं। बद्री-केदारके प्रवास भी नहिं हो सकता है। हां, मसुरी अथवा डेलहाउझी जा सको तो जाओ। अब आश्रममें जानेकी इतनी जल्दी नहिं है, जैसी मेरे निर्णयके पहले थी। अब तो कृष्ण नायर रह सकेगा। मेरा निर्णय तो समजमें आया होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४११) से।

४५४. भाषण : गोखलेपुरीके उद्‌घाटनके अवसरपर, मुजफ्फरपुरमें[1]

२३ अप्रैल, १९३४

गांधीजी ने कहा कि श्री कुँजरू बतला चुके हैं कि मुझसे उद्‌घाटन करनेके लिए क्यों कहा गया। गोखले और मेरे सम्बन्धोंको देखते हुए, इसका उद्‌घाटन करना में अपना एक सुखद कर्त्तव्य मानता हूँ। गांधीजी ने कहा कि गोखले मेरे राजनीतिक गुरु थे और अब भी हैं। मैं अपने-आपको भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)का एक अघोषित सदस्य मानता हूँ। उन्होंने कहा कि ये कुटीर भूकम्प-पीड़ितोंको शरण देनेके लिए बनाये गय हैं, क्योंकि इनमें उनको जान-मालका खतरा नहीं है। मुझे १८७९ में असममें आये भूकम्पकी जानकारी अपने हालके दौरेमें हुई। उसका प्रभाव इतने बड़े क्षेत्रपर तो नहीं पड़ा था जितने बड़े क्षेत्रमें यहाँ पड़ा है, लेकिन नुकसान जबरदस्त हुआ था। असममें भूकम्पसे अप्रभावित रहनेवाले छोटे-छोटे मकान हैं, जो कम-खर्चीले हैं और जिनसे जान-मालको खतरा नहीं है। गांधीजी ने

१. यह समारोह राजेन्द्र व्यायामशालामें किया गया था। इसमें राजेन्द्रप्रसाद, डॉ० सैयद महमूद और हृदयनाथ कुँजरू भी उपस्थित थे।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद से असम जाकर उन मकानोंके नमूने देखनेको कहा। गांधीजी ने कहा कि मैं मुजफ्फरपुर नगरपालिकाके अध्यक्षको धन्यवाद नहीं दे सकता, क्योंकि मैं स्वयं बिहारी होते हुए एक दूसरे बिहारीको धन्यवाद देनेका अधिकारी नहीं हूँ।

कुटीरोंके लिए नगरपालिकाकी भूमि का पट्टा दो वर्षके लिए दिये जानेकी बातका उल्लेख करते हुए, गांधीजी ने कहा कि नगरपालिकाने केवल दो वर्षोंके लिए पट्टा देकर कंजूसीसे काम लिया है। उन्होंने नगरपालिकासे कहा कि पट्टेको स्थायी बना दिया जाये।

कुटीरोंके साथ जुड़े पुस्तकालय तथा औषधालयका उपयोग सभी लोग कर सकेंगे।

अन्तमें, उन्होंने सभीसे अनुरोध किया कि वे गोखलेपुरीको एक स्थायी आदर्श बस्ती बनानेका प्रयत्न करें।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, २५-४-१९३४

४५५. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

[२३ अप्रैल, १९३४के पश्चात्][१]

चि० ब्रजकिसन,

मैं सोच ही रहा था क्यों तुमारा खत अबतक नहिं आया। इतनेमें आज तुमारा खत पाया। जो खोराक लेते हो वह चार वखत लेनेके लायक नहिं देखता हूँ। बहोत-सी चीझें खानेसे भी कुछ लाभ नहिं है। रोटी सादी रखनेसे ठीक होगा। घूमनेके लीये जाना और हिप बाथ अत्यावश्यक समझता हुं। बड़े भाईके साथ बातें करनेके बाद जीवनक्रम नियत बना लेना चाहीये। बद्रि-केदारनाथ जानेके लीये यदि शारीरिक शक्ति है तो जानेमें मैं कोई हानि तो नहिं देखता हुं। किसी तरह शरीर अच्छा करो और शांत बनो यही मैं तो चाहता हुं।

माताजी से कहो मेरा झगड़ा उनसे हमेशाई का रह जायगा। आश्रममें खाना नहिं, उसमें धर्म हो नहिं सकता।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २३९०) से।

१. पत्रको पढ़नेसे ऐसा लगता है कि यह २३ अप्रैल, १९३४को लिखे गये पत्रके बाद लिखा गया था; देखिए पृ० ४६७।

४५६. पत्र : नरगिसबहन कैप्टेनको

२४ अप्रैल, १९३४

तुम्हारा खत मिला। मैं अपने रुपयोंके बदले इकन्नियाँ लेनेको तैयार नहीं। सत्याग्रहको सस्ता नहीं किया गया है। मेरी रायमें वह अधिक मूल्यकी अपेक्षा रखता है। इसीलिए खरे सिक्के सहेजकर रखे गये हैं। वे ठीक वक्तपर अपना जौहर दिखायेंगे। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे निर्णयपर खुशी मनाओ।

प्यार।

श्री नरगिसबहन कैप्टेन
कोमार हॉल
पंचगनी
बरास्ता – पूना

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९५३) से; सौजन्य : घ० दा० बिड़ला

४५७. पत्र : चतुर्भुजको

२४ अप्रैल, १९३४

भाई चतुर्भुज,

मैं तुम्हारे युवक-सम्मेलनकी सफलताकी कामना करता हूँ। युवक एक बात याद रखें कि सेवा संयमसे की जाती है। संयमी अपनेसे किसीको नीच न समझे, इसलिए उसे ऊँच-नीचकी भावना अपने मनसे निकाल देनी चाहिए। उसे भली-भाँति यह समझ लेना चाहिए कि अस्पृश्यता धर्मका अंग नहीं हो सकती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१३४) से।

४५८. पत्र : अमतुस्सलामको

२४ अप्रैल, १९३४

प्यारी बेटी,

तुम खुश होगी। वहां जो सेवा बन सके वह किया करो। डा० शर्मासे कहो मुझे खत लिखे। द्रौपदीदेवीसे भी कहो।

बापुकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०३) से।

४५९. भाषण : सार्वजनिक सभा, बक्सरमें

[२५ अप्रैल, १९३४][1]

महात्मा गांधीने उस दुर्भाग्यपूर्ण घटनाका[2] उल्लेख किया और हरिजन कार्य-कर्त्ताओं द्वारा बरते गये अविवेकके लिए सनातनियोंसे क्षमा-याचना की।

महात्माजी ने आगे कहा कि हिंसाके द्वारा धर्मको कहीं भी आगे नहीं बढ़ाया जा सका है और उन्होंने हरिजन कार्यकर्त्ताओंसे अनुरोध किया कि आगेसे उनको हिंसासे बचानेके लिए कोई कार्यवाही न की जाये।

यदि सनातनी लोग मेरी हत्या करना चाहें तो उसके लिए मैं इस स्थानसे जितनी भी दूर कहिए अकेला चलनेको तैयार हूँ, जिससे वे अपना काम कर सकें। हरिजनोद्धार-आन्दोलन चलानेके लिए मैं अकेला ही जिम्मेदार हूँ और यदि इसके लिए किसीका सिर फोड़नेकी जरूरत आ पड़ी हो, तो सबसे पहले मेरा ही फोड़ना चाहिए। मुझे ईश्वरमें काफी आस्था है और मेरी अपनी देहके लिए यही सुरक्षा काफी है। मुझे और किसी सुरक्षाकी जरूरत नहीं है। अबतक मेरी जान लेनेकी पाँच या छः बार कोशिश की जा चुकी है और मैं उनसे बचा रहा हूँ। मैं एक क्षणके लिए भी यह नहीं भूलता कि जाने या अनजाने हर आदमी अपनी मृत्यु अपनी बगलमें लिये फिरता है। और मैं किसीकी धमकीमें आकर हरिजनोद्धार-आन्दोलन-सम्बन्धी अपने विश्वासको छोड़नेके बदले ऐसे किसी भी व्यक्तिकी गोदमें अपना कटा

१. गांधीजी २५ तारीखको तीसरे पहर बक्सरमें थे।

२. कुछ सनातनी लोगोंने गांधीजी के विरुद्ध प्रदर्शन किया था। तीन सुधारक स्वयंसेवकोंको झगड़ेमें चोटें आई थीं।

हुआ सिर डालनेके लिए खुशीसे तैयार हो जाऊँगा जो मेरी हत्या करना चाहता हो। किसी भी सनातनीसे मेरा कोई झगड़ा नहीं। प्रत्येक सनातनी शास्त्रोंकी अपनी समझके अनुसार अपने विश्वासका प्रचार करनेके लिए स्वतन्त्र है। मैं तर्क सुनने-समझने और स्वीकार करनेके लिए हमेशा तैयार हूँ और मुझे खुशी होगी यदि कोई सनातनी मुझे पूरी तौरसे आश्वस्त कर दे कि हिन्दू-शास्त्रोंमें अस्पृश्यताके विरुद्ध कोई आदेश नहीं दिया गया है। ईश्वरने सभी मनुष्य समान बनाये हैं और इस प्रकार प्रत्येक हरिजनको मन्दिर-प्रवेशका सभीके समान अधिकार है। लेकिन उसे मन्दिर-प्रवेश बलपूर्वक नहीं करना चाहिए, क्योंकि मैं ऐसे कामोंमें बल या हिंसाके प्रयोगमें विश्वास नहीं करता।[1]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, २३-४-१९३४

४६०. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[2]

२५ अप्रैल, १९३४

मुझे बड़े दुःखके साथ कहना पड़ रहा है कि आज सुबह जब मैं सवा दो बजे जसीडीहपर उतरा तो सनातनी मित्रोंने अपनी भाषा और अपने काम दोनोंके मामलेमें आत्म-संयमकी भावनाको बिलकुल छोड़ दिया। हर तरहकी आवाजों और नारोंके साथ बड़े-बड़े काले झण्डे हिलाये जा रहे थे। मुझे बड़ी मुश्किलसे ले जाकर एक कारमें बैठाया जा सका। कारके हुडपर लाठियाँ बरसने लगीं। तभी एक लाठी या पत्थर — मैं नहीं कह सकता कि क्या था, मगर उसी कारमें बैठे शशि बाबूका कहना है कि वह पत्थर ही था — ताककर कारके पिछले हिस्सेके शीशेपर मारा गया था। सौभाग्यकी बात कि पीछेकी सीटपर मैं अकेला ही और वह भी एक कोनेमें बैठा था। शीशा टूटकर मेरी बगलमें गिरा। यदि मैं बीचों-बीच बैठा होता, या मेरे साथ और लोग भी पिछली सीटपर बैठे होते, तो अवश्य ही मैं गम्भीर रूपसे घायल हो जाता या हम लोगोंमें से कोई एक तो अवश्य ही घायल हो जाता। गाड़ीका हुड टुकड़े-टुकड़े नहीं हो पाया, इसका कारण यह नहीं था कि मोटी-मोटी लाठियाँ चलाने-वालोंने अपनी ओरसे कोई कसर रखी थी। ऐसे बर्बर प्रदर्शनके लिए मैं तैयार नहीं था। मैं सनातनी समाजके सबसे विवेकशील सदस्योंसे अपील करना और उन्हें सुझाव देना चाहता हूँ कि अश्लीलता और हिंसासे सनातनधर्म को हानि ही पहुँचेगी।

हालाँकि बक्सरमें भी शोर-गुल-भरा प्रदर्शन हुआ था, लेकिन उसमें कारोंपर कोई आँच नहीं आई थी; हाँ, वहाँ सनातनियों और सुधारकोंके बीच झगड़ा जरूर हुआ था। मैंने जब तीन सुधारक स्वयंसेवकोंके फूटे हुए सिर और एककी घायल बाँह

१. गांधीजी सभाके बाद अस्पताल गये, जहाँ तीनों घायल स्वयंसेवक भरती किये गये थे।

२. यह वक्तव्य एसोसिएटेड प्रेसके जरिये जारी किया गया था।

देखी और सुना कि सनातनियोंको भी चोटें आई हैं, तो मैंने तुरन्त ही ठक्कर बापाको उनका हाल-चाल लेने भेजा। मैं स्वयं भी अस्पताल गया, जहाँ घावोंकी जाँच हो रही थी। सनातनियोंके भी सिर फूटे थे। मैं बक्सर-कांडकी जाँच-पड़ताल कर रहा हूँ और यदि मैं पाऊँगा कि सुधारक स्वयंसेवक दोषी थे, तो बिलकुल निश्चित बात है कि मैं उसका यथाशक्य प्रायश्चित्त करूँगा, क्योंकि जो संघर्ष सारतः एक धार्मिक संघर्ष है, उसमें वे लोग तो किसी भी प्रकारकी कोई हिंसा कर ही नहीं सकते जो अपने धर्मकी पवित्रताकी रक्षा करना चाहते हैं। पर दुःख तो यह सोचकर होता है कि सनातनियोंने इस तरहका प्रदर्शन कुछ आवश्यक माना। उनको जानना चाहिए कि हिंसासे मेरा दूरका भी वास्ता नहीं है और मैं किसी भी रूप या तरीकेसे किसीपर कोई विवशता थोपनेका पक्षपाती नहीं हूँ। वे जानते हैं कि मैंने मन्दिर-प्रवेश विधेयकके सिलसिलेमें भी बहुत ही स्पष्ट शब्दोंमें ऐलान कर दिया है कि यदि हिन्दुओंका बहुमत उस विधेयकके विरुद्ध होगा तो मैं उसे स्वीकृत करानेकी पैरवी करनेका अपराध अपने सिर नहीं लेना चाहूँगा। यह आन्दोलन तो सीधे-सीधे और शुद्ध रूपसे सवर्ण हिन्दुओंके हृदय-परिवर्तनका ही आन्दोलन है। और मैं खूब समझता हूँ कि कानून द्वारा हृदय-परिवर्तन नहीं कराया जा सकता। जहाँतक मेरी जानकारी है, अबतक एक भी मन्दिरके द्वार बल-प्रयोग या उसके प्रदर्शन द्वारा नहीं खुलवाये गये हैं। यदि ऐसा एक भी उदाहरण पेश किया जाये कि कहीं बल-प्रयोग हुआ है तो मैं उस अन्यायके निराकरणके लिए जमीन-आसमान एक कर डालूँगा। सुधारकोंके विरुद्ध कुछ गरम दिमागके लोगों द्वारा खड़ा किया गया और, जैसीकि मुझे आशंका है, अपनेको पर्देके पीछे रखनेवाले कुछ तत्त्वों द्वारा समर्थित यह सारा आन्दोलन सर्वथा निरर्थक है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २७-४-१९३४

४६१. भाषण: सार्वजनिक सभा, देवघरमें[1]

२६ अप्रैल, १९३४

मेरे लिए यह अत्यन्त प्रसन्नताकी बात है कि मुझे इस पवित्र स्थानके दर्शनका पुनः अवसर मिला। मेरे पूर्वपुरुष यहाँ आये थे। किन्तु मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरे यहाँ आनेका वह उद्देश्य नहीं है, जिस उद्देश्यसे वे आये थे। आपको शायद मालूम न होगा कि जब मैं दक्षिण आफ्रिकासे १९१५में लौटकर भारत आया था, उस समय जिन स्थानोंपर मुझे बुलाया गया था उनमें से यह स्थान भी एक है। यहाँ मुझे आश्रम स्थापित करनेके लिए आमन्त्रित किया गया था। पिछली बार जब

१. गांधीजी ने हिन्दीमें भाषण किया। भाषणका यह सार-संक्षेप स्वयं गांधीजी ने तैयार किया था।

मैं यहाँ आया था, उस समय यहाँके लगभग सभी पण्डोंने स्वयंसेवक बनकर मेरे और मेरे दलके प्रति अपने प्रेमका परिचय दिया था। वे यह जानते थे कि उस समय भी अस्पृश्यताके सम्बन्धमें मेरे वही विचार थे जो आज हैं। वे यह भी जानते थे कि उस समय भी जिन सभाओंमें मैंने भाषण किये थे उन सबमें अस्पृश्यता-सम्बन्धी अपने विचार प्रकट किये थे। किन्तु आज वे ही लोग दो खेमोंमें विभक्त हैं। एक दल तो मेरा और मेरे दलका पक्षपाती है, तथा दूसरा, चाहे उसमें शरीक लोगोंकी संख्या कितनी ही कम क्यों न हो, मेरा विरोधी है। मैं जानता हूँ कि यह बात किसी आदमीके बसमें नहीं है कि वह सदा सभीका प्रेमभाजन बना रह सके। मैं अपने बारेमें जानता हूँ कि मैं एक अत्यन्त ही अपूर्ण मानव हूँ और मेरे लिए भी इसकी सम्भावना मेरी कल्पनामें ही रही है। इसलिए न तो यह दुःखकी बात है और न इसमें कोई आश्चर्यकी ही बात है कि मेरे पुराने मित्रों, पण्डोंमें से कुछ आज हमारे विरोधी हो गये हैं। किन्तु मुझे इस बातका हार्दिक दुःख अवश्य है कि प्रतिरोधका उनका तरीका अशोभनीय है। मैं समझता हूँ कि वही लोग उन पर्चोंके वितरणके लिए जिम्मेदार हैं, जिनमें मेरे सम्बन्धमें नितान्त असत्य तथा अर्द्धसत्य बातें लिखकर जनतामें मेरे प्रति भ्रम फैलानेकी चेष्टा की गई है, ताकि लोग मेरे विरोधी बन जायें। पर्चोंमें भाषागत शिष्टताको उठाकर ताकमें रख दिया गया है। यह भी कहा जाता है कि इन पर्चोंमें से एक पर्चा गिद्धौरके महाराजा साहबके आदेशसे निकाला गया है। किन्तु मुझे जबतक इस बातका अधिकृत प्रमाण नहीं मिलता, तबतक मैं यह विश्वास नहीं कर सकता कि वे ऐसे पर्चोंके साथ अपने नामको जुड़ने देंगे।

दक्षिण भारतके दौरेमें भी कुछ स्थानोंपर मेरे विरुद्ध काले झण्डोंका प्रदर्शन किया गया था, किन्तु उन प्रदर्शनोंका ढंग शोभनीय था। वह केवल इस बातका ही प्रदर्शन था कि जो लोग काली झंडियाँ लिये हुए थे, वे इस आन्दोलनके विरुद्ध थे। उनमें से बहुत-से तो सड़कोंपर मारे-मारे फिरनेवाले लड़के थे, जो निस्संकोच-भावसे मेरे अभिवादनोंका उत्तर देते थे, क्योंकि मैं तो सभीका — काली झंडियाँ लिये लोगोंका और अन्य लोगोंका भी — बराबर अभिवादन कर रहा था। वे जय-जयकारतक में सम्मिलित होनेमें संकोच नहीं करते थे। मुझे इसमें सन्देह नहीं कि वहाँके प्रदर्शनकारियोंमें से बहुत-से यह भी कहनेको तैयार हो जाते कि वे अपने तेजस्वी पूर्वजों भीष्म तथा द्रोणकी तरह ही इस आन्दोलनका विरोध केवल अपने पेटकी खातिर कर रहे थे। किन्तु खेद है कि यहाँके प्रदर्शनकारियोंने न केवल भाषागत शिष्टताको त्याग दिया है, बल्कि वे हिंसापर भी उतर आये हैं। आज रातको ढाई बजे जब मैं जसीडीह स्टेशनपर उतरा तो उन्होंने अपशब्दोंसे वातावरणको गुँजा दिया। इतना ही नहीं, वे हिंसापर उतर आये। उनका बस चलता, तो वे निश्चय ही मोटरका हुड टुकड़े-टुकड़े कर डालते। हुडपर जोरोंसे लाठियोंकी वर्षा की गई। पीछेका शीशा चूर-चूर हो गया और भगवान्ने ही गहरी चोटसे मेरी रक्षा की। मैं मानता हूँ कि ये लोग मुझे शारीरिक चोट पहुँचानेके इच्छुक नहीं थे और हुडपर डण्डे बरसाकर तथा शीशा तोड़कर उन्होंने मेरे प्रति अपने क्रोधका प्रदर्शन ही करना चाहा

था। उनका इरादा जो-कुछ भी रहा हो, कमसे-कम उनका कार्य तो निस्सन्देह हिंसापूर्ण था। उस आक्रमणका परिणाम ऐसा भी हो सकता था कि बादमें शायद उन्हें भी उसपर दुःख होता। आज सुबह उन लोगोंने जैसा व्यवहार किया उसके और कालिकटके जमोरिनने जो बहुत ठीक व्यवहार किया उसके बीचका अन्तर बताना चाहूँगा। मैं गुरुवायूर गया हुआ था। दक्षिणके उस प्रसिद्ध मन्दिरपर हुए सत्याग्रहसे जमोरिन मेरे प्रति असन्तुष्ट हो सकते थे, फिर भी जब मैं वहाँ गया, उन्होंने मेरे विरुद्ध होनेवाले सभी प्रदर्शनों, काले झंडोंके प्रदर्शनोंपर भी प्रतिबन्ध लगा दिया था। अपने महलमें उन्होंने मेरा सौजन्यपूर्ण तथा हार्दिक स्वागत किया। बातचीतमें उन्होंने स्पष्टवादितासे स्वीकार किया कि हम दोनोंकी लड़ाई सिद्धान्तोंकी ही लड़ाई थी। देवघरके पण्डों तथा स्थानीय वर्णाश्रम स्वराज्य संघवालोंके पास तो मेरे विरुद्ध प्रदर्शन करनेका कोई बहानातक नहीं था, जबकि जमोरिनको ऐसा बहाना मिल सकता था। फिर यह विरोध क्यों? और फिर अपनेको सनातनी बतलानेवाले लोगोंका यह अहंकार क्यों कि एक वे ही सनातन सत्यके ज्ञाता हैं? उनका जो दावा है वही मेरा भी है कि मैं सनातनधर्म के पालनका प्रयत्न कर रहा हूँ। उस धर्मकी अपनी समझके अनुसार व्याख्या करनेका जितना अधिक या जितना कम अधिकार उनको है, उतना ही मुझे भी है। मैं भी उन्हीं शास्त्रोंकी दुहाई देता हूँ जिनकी वे देते हैं। उनके और मेरे बीच फर्क जरूर है, लेकिन यह तो सिर्फ समझका फर्क है। ऐसे मतभेद तो सदा ही रहेंगे। सनातनियोंको यह विश्वास रखना चाहिए कि मैं जबरदस्ती किसीके ऊपर अपना मत लादना नहीं चाहता। जबरदस्ती बाध्य करनेके उपायपर मेरा तनिक भी विश्वास नहीं है। मैं लोगोंको हृदय और बुद्धिके धरातलोंपर समझा-बुझाकर उनसे सत्यकी अपनी अवधारणा स्वीकार करानेकी कोशिश करता हूँ।

उदाहरणार्थ, मन्दिर-प्रवेशके ही प्रश्नको लीजिए। अपने इस दौरेमें मुझे अनेक स्थानोंमें उत्साहित तथा जयजयकार करती हुई सहस्रोंकी संख्यामें एकत्रित जनताके सामने अनेक मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खोलनेका मौका मिला है। कहीं भी लगभग किसीने भी उसका विरोध नहीं किया। बस एक ही स्थानमें, जहाँ मुझे मन्दिर खोलने के लिए कहा गया था, मैंने उसे इसलिए अस्वीकार कर दिया कि वहाँ उसका विरोध करनेवाले लोग समर्थकोंसे कम होते हुए भी एक खासी तादादमें थे। मैंने कहा था कि यह कार्य तभी होना चाहिए जब या तो अल्पसंख्यक भी उसके पक्षमें हो जायें या कमसे-कम अल्पसंख्यकोंको इतना काफी समय मिल जाये कि वे बहुमतके लोगोंको अपनी बात पूरी तरह समझा सकें। अगर मुझे यह मालूम हो जाये कि कोई भी मन्दिर जबरदस्ती या लोगोंकी ऐसी सहमतिके बिना खोला गया है, तो मैं उस मन्दिर को पुनः हरिजनोंके लिए बन्द कर देनेको आकाश-पाताल एक कर दूँगा। अब मन्दिर-प्रवेश विधेयकको लीजिए। निश्चय ही मैं मानता हूँ कि प्रत्येक सवर्ण हिन्दूका यह अनिवार्य कर्त्तव्य है कि वह सन् १९३२ में मेरे उपवासके दौरान बम्बईमें हरिजनोंसे की गई अपनी पवित्र प्रतिज्ञाकी पूर्त्तिके लिए सभी उचित उपाय करे। उस प्रतिज्ञामें यह बात भी कही गई है कि आवश्यकता पड़नेपर कानून बनवानेका भी यत्न किया

जायेगा। मैं यह कहना चाहता हूँ कि यदि बहुमतकी बात चलानी है तो मन्दिर-प्रवेश विधेयक तथा ऐसे ही किसी दूसरे विधेयकका स्वीकार किया जाना नितान्त आवश्यक है। आजकी कानूनी रायके अनुसार एक आदमीके भी विरोध कर देनेपर हरिजनोंके लिए मन्दिर नहीं खुल सकता। किन्तु इसके साथ-ही-साथ, मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि यदि इस विधेयकके पक्षमें सवर्ण हिन्दुओंका स्पष्ट बहुमत न हो तो मैं इस समर्थनकारी कानूनतक की स्वीकृतिका समर्थन नहीं करूँगा। तब क्या मैं पूछ सकता हूँ कि सनातनियोंके इस विरोध-प्रदर्शनका क्या अर्थ है? क्या वे यह चाहते हैं कि मैंने अपने ऊपर स्वेच्छासे जो मर्यादाएँ लगा रखी हैं और जिन्हें मेरे अनेक मित्र और सहकर्मी हास्यास्पद मानते हैं, उनका पालन करते हुए भी मैं अस्पृश्यता-सम्बन्धी कानूनोंके पक्षमें लोकमत जाग्रत करनेका कार्य न करूँ? कारण, मैं तो सार्वजनिक सभाओंमें लोगोंसे उनके मत प्रकट करनेके लिए भी नहीं कहता, क्योंकि मेरा विश्वास है कि ऐसे टेढ़े किस्मके कानूनी मसलोंपर सार्वजनिक रूपसे मतदान कराना गलत होगा। मन्दिर-प्रवेश विधेयक-जैसे कानूनोंकी आवश्यकता अथवा वांछनीयताके प्रश्नका निर्णय कानूनके विशेषज्ञ करेंगे और इस प्रसंगमें ऐसे विशेषज्ञ वकील लोग हैं। मैंने बार-बार कहा है कि मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें केवल सवर्ण हिन्दुओंके मतोंको ही महत्त्व देना चाहिए। क्योंकि यदि वे अपने मन्दिरोंको अछूतोंके लिए खोलनेको तैयार नहीं हैं, तो इसका यह स्पष्ट अर्थ है कि वे अस्पृश्यताके कलंकको धो नहीं पाये हैं। यदि सवर्ण हिन्दू लोग मन्दिर-प्रवेशके विरोधी बने रहे तो फिर चाहे सभी मन्दिरों के द्वार खोल दिये जायें, मैं उसे किसी कामका नहीं मानूँगा। पवित्रता जबरदस्ती नहीं लादी जा सकती। अतः मैंने इस प्रकारके विरोधका कारण बहुत ढूँढ़ा, किन्तु मुझे अबतक कोई वजह दिखाई नहीं दी। हाँ, यह हो सकता है कि लोकमतको तेजीके साथ परिवर्तित होते और अस्पृश्यताको दम तोड़ते देखकर शायद ये लोग चाहते हों कि जैसे भी हो मेरे इस दौरेका अन्त कर दिया जाये, भले ही हिन्दू लोकमतमें परिवर्तन लानेके मेरे साधन कितने ही औचित्यपूर्ण क्यों न हों। इसलिए मुझे यह कहनेमें कोई संकोच नहीं कि आज प्रातःकालके व्यवहारमें सनातनियोंने सनातनधर्म के ध्वजको इस पवित्र स्थानमें उसी प्रकार झुका दिया है, जिस प्रकार कि महाराज युधिष्ठिरने एक अर्द्धसत्य कहकर उसे झुका दिया था। क्या महाभारतकारकी यह बात आपको स्मरण नहीं कि महाराज युधिष्ठिरके असत्य भाषण करते ही उनका रथ धरतीमें धँस गया था और उन्हें मृत्युके बाद भी उसका प्रायश्चित्त करना पड़ा था? इसलिए मैं सनातनी मित्रोंसे विनती करता हूँ कि उनको अपने इस दुर्व्यवहारके लिए हृदयमें पश्चात्ताप करना चाहिए और निश्चय करना चाहिए कि भविष्यमें वे ऐसे हिंसात्मक कार्य नहीं करेंगे। सुधारवादियोंसे मैं यह कहना चाहता हूँ कि आपका बहुत बड़ा बहुमत है। जो आज आपका विरोध कर रहे हैं, वे अँगुलियोंपर गिने जा सकते हैं। आप अपने विरोधियोंपर अपनी व्यक्तिगत पवित्रता, अपने सौजन्य तथा धैर्य द्वारा विजय प्राप्त करनेका यत्न करें। यह आन्दोलन आत्म-शुद्धिका है और इसमें उसीके लिए स्थान है जिसका हृदय शुद्ध है। प्रदर्शनकारियोंके कार्यमें कोई हस्तक्षेप

नहीं करना चाहिए। यदि वे चाहें तो उनको झंडियाँ लेकर अपना विरोध प्रकट करनेका पूरा अधिकार है, ताकि मैं यह समझ सकूँ कि इस आन्दोलनके विरोधियोंकी संख्या कितनी है। कठिनाई तो उस समय उपस्थित होती है, जब वे मेरा रास्ता रोकते हैं अथवा किसी अन्य प्रकारके हिंसात्मक उपद्रव करते हैं। पर चाहे जो हो, आप हमेशा धैर्य रखें तथा सज्जनताके साथ पेश आयें — विशेषकर इसलिए कि आप भारी बहुमतमें हैं। सनातनी मित्रोंको समझाने-बुझानेका यत्न कीजिए और यदि इसमें भी सफलता न मिले तो आप यह समझकर धैर्य धारण करें कि यदि आप सत्यको ईमानदारीके साथ पेश कर रहे हैं तो वह समय शीघ्र ही आ रहा है जब वे उसे स्वीकार करेंगे। कोई सुधारवादी बदले की कार्यवाही न करे। आप यह समझ लें कि यह आन्दोलन आत्म-शुद्धिका है और सुधारवादियोंकी ओरसे किया गया कोई भी हिंसात्मक कार्य मेरे लिए गम्भीर प्रायश्चित्तका कारण बन सकता है।

अब दो शब्द श्रोताओंसे। मैं जानता हूँ कि इधर लाखोंकी संख्यामें संथाल हैं, जो अपने-आपको हिन्दू कहते हैं, हिन्दू देवताओंकी पूजा करते हैं तथा हिन्दू रीति-रिवाजोंका पालन करते हैं, फिर भी हर तरहसे वे अछूत समझे जाते हैं। उनमें से जो अपनेको हिन्दू नहीं कहते उन्हें तो आप अछूत नहीं मानते, किन्तु जो बेचारे अपनेको हिन्दू कहते हैं उन्हें आप हिन्दू होनेका दण्ड देते हैं। उन्होंने कौन-सा अपराध किया है? उन्होंने मद्यपान छोड़ दिया है। वे गौकी उसी प्रकार पूजा करते हैं, जिस प्रकार आप करते हैं या मैं करता हूँ या हमें करनी चाहिए। वे मांस-भक्षणका भी परित्याग कर चुके हैं। वे रामनाम का उच्चारण शायद हमसे अधिक प्रेमसे और निश्चय ही अधिक श्रद्धाके साथ करते हैं। वे चरखा चलाकर तथा कपड़ा बुनकर अपने अवकाशके समयका सदुपयोग करते हैं और इस प्रकार देशकी सम्पदामें वृद्धि करते हैं। क्या वे समाजसे परित्यक्तोंकी तरह व्यवहृत होने योग्य हैं? क्या वे हमारे प्रेमपूर्ण व्यवहार पानेके अधिकारी नहीं हैं? शास्त्रोंमें उन्हें अस्पृश्य माननेके लिए कोई व्यवस्था नहीं है। और यदि ऐसी व्यवस्था है तो हम जितने शीघ्र संसारसे मिट जायें, उतना ही हमारे तथा संसारके लिए भी अच्छा रहेगा। संथालोंसे मैं कहता हूँ कि यदि रामनाम में आपकी आस्था है, तो आप भगवान्‌को अवश्य पायेंगे, भले ही आपके भाई आपको ठुकरा दें। वे नहीं, यह पवित्र नाम ही आपकी रक्षा करेगा और आपको वह शान्ति तथा आनन्द देगा, जिसे आपसे कोई भी छीन नहीं सकता।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-५-१९३४

४६२. राय किसकी लेखी जा सकती है ?

अभी कुछ दिन पहले एक सनातनी पण्डितने मुझसे शिकायत की थी कि बनारसमें मजिस्ट्रेट लोग मन्दिरों और मूर्ति-पूजामें विश्वास न रखनेवाले गैर-हिन्दुओं, आर्यसमाजियों, सिखों और अन्य लोगोंकी राय अस्पृश्यता विधेयकोंके मामलेमें ले रहे हैं। अगर ऐसा है, तो ताज्जुबकी बात है। मेरा तो सदासे ही यही दृष्टिकोण रहा है, और मैंने इन स्तम्भोंमें उसे व्यक्त भी किया है, कि यदि राय ली ही जानी हो तो उसमें गैर-हिन्दुओं और हिन्दू हरिजनोंकी राय कूती नहीं जा सकती। कारण, अस्पृश्यताके सिद्धान्तका सम्बन्ध तो केवल सवर्ण हिन्दुओंसे है और ये विधेयक उनकी ही रायका प्रतिनिधित्व करनेके लिए तैयार किये गये हैं। इसके विपरीत राय रखनेका अर्थ तो अवर्ण हिन्दुओं तथा अन्य लोगों द्वारा सवर्ण हिन्दुओंके साथ जोर-जबरदस्ती करना ही होगा। अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलन सवर्ण हिन्दुओंके अपने आन्तरिक सुधारका आन्दोलन है। वह पश्चात्ताप और आत्म-शुद्धिका आन्दोलन है, और ये चीजें बाहरसे नहीं थोपी जा सकतीं। इसलिए यदि सरकारपर मेरा कुछ भी असर है और यदि सनातनी पण्डित द्वारा जुटाई गई जानकारी सही है, तो सरकारको मेरी सलाह है कि वह मजिस्ट्रेटोंको जारी की गई अपनी हिदायतोंमें ऐसा फेर-बदल कर दे जिससे कि विधेयकोंके अनुमोदनके प्रश्नपर केवल सवर्ण हिन्दुओंकी राय ली जाये।

पर मुझे ऐसी आशंका नहीं है कि गैर-हिन्दुओं द्वारा विधेयकोंके पक्षमें राय देनेसे ये विधेयक स्वीकृत हो जायेंगे। मुझे तो लगता है कि तथाकथित सनातनी राय वास्तवमें उनकी रायका प्रतिनिधित्व नहीं करती। क्योंकि जहाँतक मुझे मालूम है, सवर्ण हिन्दुओंका भारी बहुमत मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खोल देनेके पक्षमें है। और जहाँतक इन विधेयकोंके पास किये जानेकी वांछनीयताका प्रश्न है, मैं समझता हूँ कि इस सम्बन्धमें आम जनता कोई भी निर्णय देनेमें समर्थ नहीं है। वह तो शुद्ध रूपसे एक कानूनी प्रश्न है, जिसका निर्णय वकील ही कर सकते हैं। यदि सवर्ण हिन्दुओंका भारी बहुमत मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए खोल देनेके पक्षमें है तो पण्डितोंके विरोधके बावजूद मन्दिरोंके द्वार खोलने ही पड़ेंगे, फिर चाहे कितने बड़े-बड़े पण्डित उसका विरोध क्यों न करें। यदि मौजूदा कानून उस रायको अमली जामा नहीं पहना सकता — वकीलोंकी यही राय है — तो विधान-मण्डलको मौजूदा स्थितिमें ऐसा परिवर्तन करना चाहिए कि सवर्ण हिन्दुओंकी राय बिना किसी बाधाके अमलमें लाई जा सके।

ऊपर जो कहा गया है, यदि उसकी रोशनीमें देखा जाये, तो सचमुच इन विधेयकोंको राय जाननेके लिए कभी प्रचारित किया ही नहीं जाना चाहिए था। ये विधेयक अपने किये तो हरिजनोंके लिए एक भी मन्दिरके द्वार नहीं खुलवा सकते।

ये तो समर्थकारी विधेयक हैं। विरोधकर्त्ताओंका तो कहना है कि एक भी मन्दिरके द्वार तबतक नहीं खोले जा सकते जबतक कि एक अकेला सवर्ण हिन्दू भी उसके विरुद्ध हो, और सचमुच कोई भी विरुद्ध न हो तो भी नहीं खोले जा सकते। बेशक, स्थिति बड़ी बेतुकी लगती है, पर सनातनधर्म के प्रवक्ता होनेका दावा करनेवालों की राय सिद्धान्त-रूपमें यही है और यह राय वे व्यक्त भी कर चुके हैं। मेरा मत यह है कि सरकारका कर्त्तव्य है कि वह निष्पक्षतासे काम ले और सुधारके आड़े आनेवाली प्रत्यक्ष वैधानिक बाधाओंको दूर करे। मन्दिरोंका खोला जाना पूर्णतया उन सवर्ण हिन्दुओंकी इच्छापर ही निर्भर करेगा, जिन्हें मौजूदा मन्दिरोंमें पूजा करनेका अधिकार प्राप्त है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-४-१९३४

४६३. टिप्पणी

शर्मनाक, यदि सच है

एक पण्डितने मुझसे शिकायत की थी कि बनारसमें अस्पृश्यता-विरोधी विधेयकोंके बारेमें जिलाधीशगण लोगोंकी राय ले रहे हैं। उन्हींकी शिकायत है कि सुधारकोंके कहनेपर कुछ मन्दिरोंके द्वार बलपूर्वक खोले गये। यदि यह सच है तो निश्चय ही शर्मनाक है और मुझ-जैसे उन लोगोंकी इच्छाके सर्वथा विपरीत है जो इस आन्दोलनको शुद्ध धार्मिक दृष्टिसे देखते हैं और इसे आत्म-शुद्धिका एक आन्दोलन मानते हैं। बल-प्रयोग के द्वारा यदि सभी मन्दिरोंके द्वार भी हरिजनोंके लिए खुलवाये जा सकें, तो मैं उसे हिन्दू-धर्मके लिए कोई स्पृहणीय घटना नहीं मानूँगा। आन्दोलनका लक्ष्य मानव-मात्रके बीच भाईचारेकी भावना पैदा करना है और इस घटनासे उस भावनाको कोई बल नहीं मिलेगा। सच तो यह है कि बल-प्रयोगके द्वारा यदि किसी एक मन्दिरके भी द्वार हरिजनोंके लिए खुलवाये जायें, तो उससे आन्दोलनकी प्रगतिमें कुछ अवरोध ही पैदा हो सकता है, क्योंकि इससे विरोध कमजोर होनेके बजाय निश्चय ही और भी उग्र हो उठेगा। केवल स्वतन्त्र वातावरणमें ही हृदय-परिवर्तन सम्भव है।

पण्डित महोदयने उत्तर भारतके किन्हीं दो मन्दिरोंके बल-प्रयोग द्वारा खुलवाये जानेके अपने आरोपके समर्थनमें कोई भी प्रमाण नहीं दिया है। मैंने प्रमाण माँगा है और इस आरोपकी सचाईकी जाँचके लिए मित्रोंको लिख दिया है। लेकिन मैंने सोचा कि इस मामलेका उल्लेख करनेके लिए मुझे उसकी जाँच-पड़तालके परिणाम प्राप्त होने तक नहीं रुकना चाहिए। यदि आरोप सच है तो गलती जितनी जल्दी ठीक कर दी जाये, लक्ष्यके लिए उतना ही अच्छा रहेगा। इस प्रकार खुलवाये हुए मन्दिरोंको हरिजनोंके लिए तबतक के लिए बन्द कर देना चाहिए जबतक कि अधिक

उपयुक्त वातावरण न बन जाये। यदि आरोप झूठा या अतिरंजित सिद्ध हुआ तो भी मेरी इस प्रकारकी चेतावनीसे, जो उस हालतमें अनावश्यक होगी, कोई नुकसान होनेवाला नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-४-१९३४

४६४. हरिजनोंके कष्ट

गौहाटीमें हरिजनों द्वारा भेंट किये गये एक मानपत्रमें उन्होंने अपनी ये शिकायतें गिनाई हैं :

> १. हमें पूजा करनेके लिए विशाल हाजो मन्दिर तथा अन्य अनेक देवालयोंमें प्रवेश नहीं करने दिया जाता और न हम लोगोंको महापुरुषिया अथवा दामोधोरिया सम्प्रदायोंके नामघरोंमें ही प्रवेशकी अनुमति दी जाती है;
>
> २. यदि हम अपनी शादियोंमें हाथियों तथा डोलोंका उपयोग करना चाहें, तो उच्च वर्णोंके लोग हमपर अत्याचार करते हैं;
>
> ३. हमको दीक्षा-संस्कारके समय अपने धर्म-गुरुओंके पद-चिह्नोंके स्पर्शपर ही सन्तोष करना पड़ता है, हमको उनके चरणोंका स्पर्श कभी नहीं करने दिया जाता;
>
> ४. उच्च वर्णोंके लोग कई स्थानोंपर हमको सार्वजनिक कुओंका इस्तेमाल करनेसे रोकते हैं, हालाँकि स्थानीय अधिकारी खुद इनके बारेमें भेद-भावपूर्ण नियम नहीं चलाते;
>
> ५. कोई भी ब्राह्मण पुजारी हमारे माथेपर पूजाका तिलक नहीं लगाता और हमारी बनाई हुई मूर्तियाँ अपवित्र समझी जाती हैं;
>
> ६. पुरोहित न मिलनेके कारण हम बहुधा श्राद्ध-कर्म नहीं कर पाते; और कुछ ब्राह्मण तो स्वयं अपने घरोंमें भी हमारी ओरसे कोई पूजा करनेको तैयार नहीं होते;
>
> ७. गाँवोंमें उच्चतर वर्णोंके हिन्दू यदि दैनिक स्नान-कर्मके बाद हमें स्पर्श भी कर लें तो अपवित्र हो गये माने जाते हैं;
>
> ८ गौहाटी कॉलेजके छात्रावासोंके अलावा कहीं भी हमको आम भोजन-कक्षोंमें भोजन नहीं करने दिया जाता।

घोर सामाजिक उत्पीड़नक चलते हुए भी हस्ताक्षरकर्त्ता अपने समाज-बन्धुओंकी ओरसे यह कह सका कि :

> हमने इतनी शिकायतें गिनाई हैं, इससे आप यह मत सोचिए कि हम उच्चतर वर्णोंके अपने भाग्यशाली भाइयोंके प्रति किसी दुर्भावनाके कारण या

उनको परेशानीमें डालनेके लिए यह सब कर रहे हैं। हम आपको आश्वस्त करते हैं कि हमने आपके अहिंसाके महान् सिद्धान्तका महत्त्व पूरी तरह समझनेका प्रयास किया है और हमारा विश्वास है कि एक समय आयेगा जब हिन्दू-समाजका अधिक प्रगतिशील तबका हमको अपने ही भाइयोंकी तरह गले लगायेगा।

मैंने असममें कट्टरपंथी माने जा सकनेवाले लोगोंमें भी अस्पृश्यताके बारेमें एक कोई निश्चित जमा-जमाया विश्वास नहीं पाया। सुसंस्कृत और शुद्धात्मा पुरुष और महिलाएँ थोड़ा जमकर प्रयत्न करें, तो अस्पृश्यताकी इस अपवित्र प्रथामें एक स्वस्थ तथा मौन क्रान्ति ला सकते हैं।

मैं अन्य प्रान्तोंसे यहाँ लाई गई, तथाकथित 'कुली' जनताकी शिकायतें भी इसमें जोड़कर, शिकायतोंकी इस सूचीको पूरी कर देना चाहता हूँ। असमके भंगी अधिकांशतः पास-पड़ोसके प्रान्तोंसे आये हैं। उनको बिलकुल ही पृथक् टोलोंमें रहनेपर मजबूर किया जाता है और जैसीकि उनकी शिकायत है, वहाँ रोशनीकी कोई व्यवस्था नहीं है और सफाई इत्यादिकी सुविधाएँ भी अत्यन्त ही अपर्याप्त हैं। मैंने जब उन टोलोंको देखा था तब मौसम अपेक्षाकृत शुष्क था। लेकिन बरसातके दिनोंमें उनकी दशा जरूर ही बहुत बदतर हो जाती होगी। थोड़ी-सी सहानुभूति और बहुत ही छोटी राशि खर्च करके, इन दुःखदायी दोषोंको तुरन्त दूर किया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २७-४-१९३४

४६५. हरिजन और कताई-बुनाई

मैंने अपने दौरोंमें देखा है कि कताई और बुनाईका उद्योग एक ऐसा उद्योग है जो हजारों हरिजनोंका पोषण कर रहा है और अगर इसका उचित रीतिसे संगठन किया जाये, तो यह और भी अधिक लोगोंको आजीविका दे सकता है। कुछ जगहोंमें तो ऐसे बुनकर भी मिलते हैं, जो अपने धन्धेकी वजहसे ही अस्पृश्य समझे जाते हैं। ये लोग ज्यादातर सादी और मोटीसे-मोटी खादी बुननेवाले होते हैं। बुनकरोंका यह वर्ग तेजीसे मिटता जा रहा था कि खादीने आकर उसे उबार लिया, और उनके बनाये मोटे कपड़ेकी माँग होने लगी। तब यह भी मालूम हुआ कि देशमें ऐसे अगणित हरिजन कुटुम्ब पड़े हुए हैं जो सूत कातकर ही अपनी रोजी चलाते हैं। इस तरह खादी दो प्रकारसे गरीबोंके जीवनका सहारा है। वह गरीबसे-गरीब और गरीबोंमें भी सबसे अधिक असहाय हरिजनोंको जीवन-दान दे रही है। हरिजनोंके असहाय होनेका कारण यह है कि जिन अनेक धन्धोंको दूसरे लोग कर सकते हैं, उन धन्धोंको ये बेचारे नहीं अपना सकते।

हरिजन-दृष्टिसे तो खादी बहुमूल्य है ही, इसके अलावा भी इस हरिजन-प्रवासमें खादीकी समूची समस्याका मैंने यथासम्भव आद्योपान्त अध्ययन किया है। और मैंने पाया है कि खादी-कार्यकर्त्ताओंके लिए खादीके अर्थशास्त्रके नियमोंका पालन अधिक एकाग्रतासे करनेकी जरूरतपर जोर देनेकी जितनी पहले आवश्यकता थी, उससे कहीं अधिक आज है। खादी-अर्थशास्त्रके कुछ नियम ऐसे हैं जो सामान्य अर्थशास्त्रके नियमोंसे तत्त्वतः भिन्न हैं। आम तौरपर नियम यह है कि एक जगहकी बनी हुई वस्तुएँ दुनिया के हर हिस्सेमें भेजी जाती हैं या उन्हें भिजवानेका प्रयत्न किया जाता है। यह जरूरी नहीं कि जो लोग उन वस्तुओंको बनाते हैं वे ही उनका उपयोग करें। पर यह बात खादीके विषयमें नहीं है। खादीकी विशेषता यह है कि वह जहाँ तैयार की गई हो वहीं काममें लाई जाये। और सबसे अच्छा तो यह है कि जो लोग उसे कात-बुनकर तैयार करें, वे खुद ही उसे काममें लायें। जहाँ खादीका इस प्रकार उपयोग होता हो, वहाँ उसकी माँग तलाशनेके लिए कहीं जाना ही नहीं पड़ेगा। इसमें सन्देह नहीं कि इस आदर्शतक तो हम कभी पहुँचेंगे नहीं। पर खादीका महत्त्व सदा इसी आधारपर आँका जायेगा कि वह इस आदर्शकी पूर्त्ति कहाँतक करती है। आज जिस विशेष अर्थमें खादी एक कुटीर-उद्योग है, उस अर्थमें कोई दूसरा उद्योग वैसा नहीं है, या हो ही नहीं सकता। हाँ, यदि खेतीको उद्योग माना जा सके तो वह मर्यादित अर्थमें वैसा उद्योग अवश्य है। इसलिए यह आवश्यक है कि कातने और बुननेवालों को खादीके इस सरल अर्थशास्त्रको समझनेकी शिक्षा दी जाये। जहाँ कातने व बुननेवाले अपने ही उपयोगके लिए कपड़ा तैयार करेंगे, वहाँ स्वभावतः वह उन्हें सस्तेसे-सस्ता पड़ेगा।

इससे यह परिणाम निकलता है कि खादी जहाँ तैयार होती हो, वहाँसे उसे बेचनेके लिए बहुत दूर भेजनेका प्रयत्न नहीं करना चाहिए। कातने-बुननेवालों के उपयोगसे अगर अधिक खादी बच जाये, तो उसे उसी गाँवमें बेच देना चाहिए; फिर भी बची रहे तो जिस जिलेमें वह तैयार हुई हो, उसमें भेज दी जाये। जो बुनकर-कुटुम्ब प्राचीन कालसे खास-खास किस्मोंकी सुन्दर कलात्मक खादी तैयार करते आ रहे हैं, वे वैसी खादी तैयार करना तो जारी रखेंगे ही। गाँववालों की तैयार की हुई खादीका, जो उन्हें बारहों महीने काम और आमदनी देते रहनेके लिए है, चाहे जो हो, लेकिन उस किस्मकी सुन्दर कलात्मक खादी तो जीवित रहेगी ही।

ऊपर मैंने जो लिखा है, उसका उद्देश्य अखिल भारतीय चरखा संघकी तात्कालिक व्यवस्थामें कोई क्रान्ति करनेका नहीं। चरखासंघके खादी-भंडार तो सदाकी भाँति चालू रहेंगे ही। किन्तु इससे विचार-जगत्में क्रान्ति लानेका मंशा अवश्य है। अच्छेसे-अच्छे खादी-सेवक गाँवकी खादी ऐसी किस्मकी और ऐसी टिकाऊ बनवानेकी ओर अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे जिससे गाँववालों की रुचि सन्तुष्ट हो सके। इस प्रकार एक ओर पींजनेवाले, कातनेवाले तथा बुननेवाले और दूसरी ओर खादी-सेवक ज्यादा अच्छे और सच्चे प्रेमकी डोरसे बँध जायेंगे। शहरोंमें खादीकी खपत बढ़ानेकी चिन्ता नहीं रहेगी। शहरी बिक्री शहरी लोगोंकी माँगों और उन खादी-प्रेमियोंके

प्रचार-कार्यपर निर्भर होगी जो सीधे ग्रामीण लोगोंतक नहीं पहुँच सकते, लेकिन साथ ही जिन्हें गरीब कतैयों और बुनकरों की ओरसे कुछ खादी बेचे बिना सन्तोष भी नहीं होगा।

हमें इतना ध्यानमें रखना चाहिए कि खादीको जब ग्रामवासी स्थायी रूपसे पहनने लगेंगे, तभी उसे स्थायित्व प्राप्त हो सकेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-४-१९३४

४६६. असमका एक महान् हरिजन

असमके कॉटन कॉलेजके कार्यवाहक प्रधानाचार्य ठक्कर बापाको लिखते हैं:

> **सह-पत्र अपनी कहानी आप कह लेगा। डॉ० एस० बी० माली अपने पीछे असहाय पत्नी और सात तथा पाँच वर्षके दो पुत्र छोड़ गये हैं। चूँकि ये दलित वर्गोंके (उच्च वर्णोंके कट्टरपंथी हिन्दुओंके लिए लगभग अस्पृश्य ही) हैं, इसलिए यदि आपकी संस्था छोटे-छोटे बच्चोंकी शिक्षाके लिए उनकी विधवा माताको कुछ भत्ता देना मंजूर कर दे, तो असमकी जनता आपकी कृतज्ञ रहेगी। मैं आपका अनुकूल उत्तर आनेपर विधवासे बाकायदा एक प्रार्थनापत्र आपको भेजनेके लिए कहूँगा।**

ठक्कर बापा विधवाके लिए कुछ प्रबन्ध कर रहे हैं और उन्होंने मुझे स्वर्गीय डॉ० बी० मालीका रेखाचित्र भेजा है, जो मैं 'हरिजन' के पाठकोंके समक्ष रख रहा हूँ।[1] कहना मुश्किल है कि यदि डॉ० माली अस्पृश्य न होते तो वे कितनी ऊँचाईतक न उठ जाते। हम इतने मूढ़ हैं कि स्वयं अपना हित भी नहीं समझते। हम करोड़ों इन्सानोंको अस्पृश्य बनाकर अपने वर्तमान कतिपय उत्तम मानवीय संसाधनोंको अपराधपूर्ण ढंगसे बर्बाद होनेको छोड़ देते हैं और मजेकी बात तो यह है कि हम यह सब धर्मके पवित्र नामपर करते हैं और इस प्रकार धर्मको ही उन लोगोंके लिए घृणास्पद बना देते हैं जिनकी मानवीय भावनाओंको इससे ठेस लगती है और जो आक्रोशमें स्वभावतः धर्म और उसके मिथ्या अनुयायियोंके बीच कोई भी भेद करनेमें असमर्थ हो जाते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २७-४-१९३४

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

४६७. पत्र : मणिलाल गांधीको

२७ अप्रैल, १९३४

चि० मणिलाल,

इसके साथ कुमारी श्लेसिनका पत्र है, उसे पढ़ लेना। मैंने उसे लिख दिया है कि यहाँसे मैं तेरा पथ-प्रदर्शन नहीं कर सकता किन्तु उसे और कैलेनबैकको यह काम करना चाहिए। मैं भी असलमें यह मानता हूँ कि यदि तू जातिगत हमला कर रहा हो तो वैसा न करना ही उचित होगा। लेकिन इतनी दूर बैठे हुए मैं क्या आलोचना करूँ?

बा के दो पत्र इसके साथ हैं।

मैं सुबहके पौने चार बजे थका-माँदा यह पत्र लिख रहा हूँ। इसलिए कुछ अधिक नहीं लिखता। रामदास और देवदासके यहाँ बेटियाँ हुई हैं। चारों आनन्द-पूर्वक हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१९) से।

४६८. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

२७ अप्रैल, १९३४

बा,

सुबहके चार बजनेवाले हैं। आँखें नींदसे बोझिल हैं। तेरा पत्र मिल गया है। नीमू और लक्ष्मीके लड़कियाँ हुई हैं। माँ-बेटियाँ अच्छी हैं। अब बारडोलीवाली लक्ष्मी बाकी रह गई है। आजकलमें उसकी खबर भी मिलनी चाहिए। ऐसा लगता है कि कान्ति ३० तारीखको मुझसे राँचीमें मिलेगा। नारणदास भी वहीं मिलेगा। रामी और कुँवरजीके समाचार मिलते रहते हैं; वे आनन्दपूर्वक हैं। माधवदास अब अच्छा है, इसलिए अब उसे पोरबन्दर जानेको क्या लिखूँ? वह कमाई करनेको उत्सुक है। भणसालीको मैं समय-समयपर लिखता रहता हूँ। वे अभी थानामें ही हैं। उनकी तबीयत तो जरा भी अच्छी नहीं है, पर आनन्दपूर्वक हैं। छगनलाल जोशी उनसे मिल आया। उनके पैर ठीक नहीं हैं, अतः यात्रा करना बन्द कर दिया है। सन्तोक और राधा अच्छी हैं। रुखी आकर मुझसे मिल गई। अपनी आँखोंका इलाज कराने आई थी। प्रभावती, किशन और ओम मेरे साथ हैं। कुमारी लेस्टर भी है। इसके

अतिरिक्त राजेन्द्रबाबूकी बहन भी है। शिकारपुरकी लक्ष्मीबहनके बारेमें मुझे कुछ भी याद नहीं है। कभी-कभी ऐसा अवश्य हुआ है कि तेरे पत्रोंमें कुछ वाक्य काट दिये जाते हैं। अब तो लक्ष्मीबाईके बारेमें और कुछ नहीं करना है न? जमनालालजी पटनामें हैं। प्यारेलाल भी वहीं है। वसुमती वर्धा गई है। वह अच्छी है। वल्लभभाई अच्छे हैं। हाँ, दुर्गा आदि फिर जम गये हैं। मुझे लगा कि यह तो मैं तुझे लिख चुका हूँ। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं है। यह जानकर अच्छा लगा कि पूनियाँ तुझे पसन्द आईं। वे केशूकी धुनकीपर बनाई गई थीं किन्तु भेजी मीराबहनने थीं। असम छोटा-सा प्रदेश है, जहाँ काफी अधिक चायके बागान हैं। अधिकतर बागान अंग्रेजोंके अधिकारमें हैं। उनमें बिहारी मजदूर काम करने जाते हैं। वर्षा खूब होती है; इससे हर जगह सदा हरियाली छाई रहती है। असममें ब्रह्मपुत्र नदी बहती है, इस कारण भी यह प्रदेश उपजाऊ और रमणीय है। वहाँके लोग अफीम बहुत खाते हैं, इस कारण वे सुस्त नजर आते हैं। सभी स्त्रियाँ बुनना जानती हैं और अपने कपड़े स्वयं ही बुनती हैं। बहुत-सी स्त्रियाँ कताई भी करती हैं।

सभी बहनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० २४

४६९. भाषण: सार्वजनिक सभा, गुमियामें[1]

[२८ अप्रैल, १९३४][2]

गांधीजी ने कहा कि आप लोगोंसे[3] मिलकर मुझे बड़ी खुशी हुई। उन्होंने कतैयोंकी टोलियोंकी तरफ इशारा करते हुए कहा कि यह एक बड़ी अच्छी चीज है कि आप काफी मात्रामें सूत तैयार करते हैं और उसीका बुना हुआ कपड़ा खुद पहनते हैं। लेकिन मुझे इससे पूरा सन्तोष नहीं होता। मैं चाहता हूँ कि सभी संथाल लोग कताई-बुनाईको अपना लें। अगर आप सभी लोग अपनी जरूरतके कपड़ेकी कताई-बुनाई करेंगे और अपना ही तैयार किया हुआ कपड़ा पहनेंगे, तो आप खादीके महान् आदर्शकी पूर्त्ति करेंगे और आपकी अपनी स्थिति भी कहीं बेहतर हो जायेगी।

१. मीराबहनके विवरण "गांधीजी विद नेचर्स चिल्ड्रन" (गांधीजी: प्रकृति-पुत्रोंके साथ) से उद्धृत।

२. **हरिजन**, ११-५-१९३४ में वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) में दिये गये यात्रा-विवरणसे।

३. संथाल लोगोंसे।

ऐसी कौन-सी माताएँ-बहनें हैं जो अपने घरोंमें रोटियाँ बनाना छोड़कर बाजारसे रोटियाँ लेनेकी बात सोचेंगी? जिस तरह हम अपने घरोंमें बनी चपातियाँ ही खाते हैं, उसी तरह हमको घरका कता-बुना कपड़ा ही पहनना चाहिए। और यह भी याद रखिए कि घरोंमें चपातियाँ बनानेवाली हमारी माताएँ-बहनें इस बातका पूरा खयाल रखती हैं कि हमें बुरी तरह गूँधे हुए आटेकी अधसिकी रोटियाँ न दी जायें। वे जानती हैं कि परिवारकी भलाई इसीमें है कि चपातियाँ अच्छी बनाई जायें। ठीक यही हमें खादीके बारेमें सोचना चाहिए। हमें तबतक चैनसे नहीं बैठना चाहिए जबतक हम पिंजाई, कताई और बुनाई अच्छी तरह न करने लगें, और इस प्रकार घरके इस्तेमालके लिए अच्छा तथा टिकाऊ कपड़ा तैयार न करने लगें।

मुझे कहना पड़ेगा कि पिंजाई तथा कताई जिस किस्मकी हो रही है, उससे दूनी अच्छी होने लगे तो भी मुझे सन्तोष नहीं दे पायेगी। आपके चरखे आदि भी अनगढ़ किस्मके हैं, लेकिन यदि आपको तकनीकी जानकारी हो तो उनमें आसानीसे सुधार किया जा सकता है। खादी मोटी होने और आपके उत्पादनकी गति धीमी होनेका कारण आपकी तकनीकी अनभिज्ञता ही है। जाहिर है कि आपकी सेवा तथा सहायताके लिए आपके बीच जो लोग काम करते रहे हैं वे आपको खादी-उत्पादनका पूरा कौशल नहीं सिखा पाये हैं, क्योंकि उनके पास भी शायद यह कौशल नहीं है। सिखानेवाले के लिए जरूरी है कि वह स्वयं इस कलामें निपुण हो।

इसके पश्चात् गांधीजी ने उनको बतलाया कि वे अपने औजारोंमें सुधार करके कैसे आजके बराबर उत्पादन नित्य-प्रति इससे आधे समयमें ही कर सकते हैं। उन्होंने कहा, इससे आपको अन्य कामोंके लिए समय मिल जायेगा, या यदि आपको ज्यादा कपड़ेकी जरूरत हो तो आप उतने ही समयमें कपड़ेका दूना उत्पादन कर सकेंगे।

फिर गांधीजी शराबखोरीके अभिशापके बारेमें बोले और बतलाया कि मनुष्यकी नैतिकतापर उसका कितना भयंकर प्रभाव पड़ता है। उन्होंने कहा कि जो लोग शराबखोरीकी लत लगा चुके हैं, उनको आगेसे इस जहरको बिलकुल त्याग देना चाहिए।

फिर उन्होंने मानपत्रमें अनेक कष्टोंके बारेमें की गई शिकायतका हवाला देते हुए कहा :

आपको धैर्य रखना चाहिए और ज्ञान अर्जित करना चाहिए — शुद्ध तथा निष्ठापूर्ण जीवनके अनुभवसे प्राप्त होनेवाला ज्ञान अर्जित करना चाहिए। आप कताईके अपने तरीकोंमें सुधार करके जो समय बचायेंगे, वह 'रामायण' तथा अन्य धर्म-ग्रन्थोंके अध्ययनमें, अपनी हिन्दी सुधारनेमें, बँगला सीखने तथा इसी तरहके अन्य अपने प्रिय कामोंमें लगा सकते हैं। यदि आप इस तरीकेसे पवित्रता और ज्ञान हासिल करेंगे तो आपके सारे कष्ट मिट जायेंगे।

इसके पश्चात् गांधीजी ने उनको रामनामकी शोभा और शक्तिके बारेमें बतलाया :

आपको पूरी आस्था और भक्ति-भावसे रामका नाम लेना सीखना चाहिए। 'रामायण' पढ़नेपर आप तुलसीदाससे सीखेंगे कि इस दिव्य नामकी आध्यात्मिक शक्ति क्या है।

आप पूछ सकते हैं कि मैंने ईश्वरके अनेक नामोंमें से एक रामनाम ही क्यों जपनेके लिए कहा है। यह सच है कि ईश्वरके नाम असंख्य हैं, किसी एक वृक्षकी पत्तियोंसे भी अधिक हैं, और मैं आपको 'गॉड' शब्दका प्रयोग करनेके लिए भी तो कह सकता था। लेकिन यहाँके परिवेशमें आपके लिए उसका क्या अर्थ होगा, उस शब्दके साथ यहाँ आपकी कौन-सी भावनाएँ जुड़ी हुई हैं? 'गॉड' शब्दका जाप करते समय आपको अपने हृदयमें कुछ महसूस भी हो, उसके लिए मुझे आपको थोड़ी अंग्रेजी पढ़ानी पड़ेगी। मुझे विदेशोंकी जनताके विचार तथा उनकी भावनाओंसे भी आपको परिचित कराना पड़ेगा।

परन्तु रामनाम जपनेके लिए कहते हुए, मैं आपको एक ऐसा नाम दे रहा हूँ जिसकी पूजा इस देशकी जनता न जाने कितनी पीढ़ियोंसे करती आ रही है — एक ऐसा नाम जो हमारे यहाँके पशुओं, पक्षियों, वृक्षों और पाषाणोंतक के लिए हजारों-हजार वर्षोंसे परिचित रहा है। आप अहल्याकी कथा जानते हैं? मैं देख रहा हूँ कि आप नहीं जानते। पर 'रामायण'का पाठ करनेपर आपको पता चल जायेगा कि रामके पाद-स्पर्शसे ही कैसे सड़कके किनारे पड़ा एक पत्थर प्राण-युक्त, सजीव हो गया था। रामका नाम आपको इतनी मधुरता और इतनी भक्तिके साथ लेना सीखना चाहिए कि उसे सुननेके लिए पक्षी अपना कलरव बन्द कर दें, उस नामके दिव्य संगीतपर मुग्ध होकर वृक्ष भी अपने पत्र आपकी ओर झुका दें।

जब आप ऐसा करनेमें समर्थ हो जायेंगे, तो मैं आपसे कहता हूँ कि मैं बम्बईसे पैदल चलकर, एक तीर्थ-यात्रीकी भाँति, आपको सुनने आऊँगा। उसके मधुरिमा-पगे नाममें एक ऐसी शक्ति निहित है जो हमारी सारी बुराइयोंके लिए राम-बाण है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-५-१९३४

४७०. पत्र : मा० श्री० अणेको

प्रिय बापूजी अणे,

नरीमानके नाम आपका पत्र मैं पढ़ गया हूँ।

मैं आपकी इस बातसे पूर्णतः सहमत हूँ कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका अधिवेशन एक ऐसे स्थानपर और एक ऐसी तिथिको रखना चाहिए जो स्थान और तिथि एक तो सदस्योंके लिए आम तौरपर सुविधाजनक हों और फिर यदि मेरी उपस्थिति आवश्यक हो तो मेरे लिए भी सुविधाजनक हो।

मैं इससे भी सहमत हूँ कि सर्वश्री केलकर, जमनादास और अन्य लोगोंको भी सहयोगके लिए आमन्त्रित किया जाना चाहिए।

जाहिर है कि कोई पूर्व-निश्चित कार्यक्रम हो ही नहीं सकता। समय-समय पर सामने आनेवाली परिस्थितियोंके अनुरूप उसमें परिवर्तन होता चलेगा।

इसके बारेमें मेरे मनमें थोड़ी भी शंका नहीं है कि कांग्रेसके लिए सविनय अवज्ञाको एकदम त्याग देना गलत होगा। मैंने सविनय अवज्ञाको जितना सीमित कर दिया है यदि उसके बाद भी उसपर सरकारको आपत्ति हो तो मैं उतने समय तक कांग्रेसको अवैध संस्थाके रूपमें रखना चाहूँगा।

पर यह मेरी निजी राय है। यदि मेरे द्वारा मर्यादित रूपमें उसे बहुमत न चाहे, तो निश्चय ही उसे त्याग देना चाहिए।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७९५५) से; सौजन्य: घ० दा० बिड़ला

४७१. पत्र : चुन्नीलालको

राँची
३० अप्रैल, १९३४

भाई चुन्नीलाल,

तुम्हारा पत्र आज मिला। तुमने जो कदम उठाया है उसे समझनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। फिर भी इतना कह सकता हूँ कि तुम्हारा अनशन निर्विघ्न पूरा हो।

मोहनदास गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५) से।

४७२. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

३० अप्रैल, १९३४

चि० भगवानजी,

तुम्हें हल्का बुखार बना रहता है, यह ठीक नहीं। अधिक काम मत करो। कटिस्नान लो। भोजनमें दूध और फल ही लो। यदि फल महँगे पड़ें तो लाल टमाटर कच्चे खाओ। फल तो आश्रममें ही मिल जाने चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्री भगवानजी
हरिजन आश्रम, साबरमती
बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३७०) से; सौजन्य : भगवानजी पु० पण्ड्या

४७३. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

३० अप्रैल, १९३४

भाई मूलचंद,

स्वामीजी को[1] उनके ग्रंथसे मैं भिन्न पाता हूँ। उनके कार्यकी किम्मत मेरे नजदिक बहूत है। 'सत्यार्थप्रकाश' के बारेमें मेरा अभिप्राय कायम है। मैंने उसे धार्मिक दृष्टिसे पढ़ा है। दूसरे धर्मोंका ज्ञान बहुत अपूर्ण है और उन्हें उन धर्मावलंबीओंकी दृष्टिसे नहीं देखे हैं। लेकिन इस बातकी चर्चामें मैं पड़ना नहीं चाहता हूं। आर्य-समाजकी भी मेरे नजदीक बहूत किम्मत है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४०) से।

४७४. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

१ मई, १९३४

बा,

रामदासके नाम लिखा तेरा पत्र मिला। मैं यह पत्र राँचीसे लिख रहा हूँ। हम कल शामको यहाँ पहुँचे हैं। फिलहाल तो यहाँ बहुत काफी लोग हैं। राजकोटवाली सुशीला भी यहाँ पहुँच गई है। जमनालालजी, प्यारेलाल, राजाजी, डॉ० अन्सारी, नारणदास, कान्ति, लीलावती मुंशी, सरोजिनीदेवी आदि यहाँ पहुँच गये हैं। डॉ० राय आज आ जायेंगे। हम लोग यहाँ गुरुवार तक रहेंगे। उसके बाद जमशेदपुर जायेंगे और फिर उत्कल। मारुति और लक्ष्मीको पुत्र-प्राप्ति हुई है। मेरी तबीयत अच्छी रहती है। तू तनिक भी चिन्ता मत करना। जब तू छूटेगी तो मैं पटनामें हूँगा और वहाँसे कलकत्ता जाऊँगा। रामदास तेरा नाम जपता रहता है, इसलिए उसके पास जाना। वहाँसे दिल्ली चली जाना। तुझे बारडोली भी तो जाना ही चाहिए और बारडोलीसे बहुत करके अहमदाबाद तो आ ही सकती है। इस बीच शायद मेरा गुजरातकी तरफ आना हो तो तू वहाँसे मेरे संग हो सकती है। मुझे तो यही सूझा है, किन्तु जैसा तुझे अच्छा लगे वही करना। हाँ, यदि वर्धा जाये तो देवलाली रास्तेमें पड़ता है, अतः राधा और किशोरलालसे भी मिलती आना। इतना तो किसी भी

१. स्वामी दयानन्द।

हालतमें करने लायक है। शान्ता, ललिता आदिके बारेमें मैंने रावजीभाईसे खूब बात की है। मैं 'रामगीता' भेजनेकी कोशिश करूँगा।

सभी बहनोंको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना बाने पत्रो, पृ० २५

४७५. स्वराज्यवादी नेताओंके साथ परामर्श[1]

राँची
१ मई, १९३४

गांधीजी : सरोजिनीदेवीने मुझे बताया कि आम तौरपर यह समझा जाता है कि मैंने सविनय अवज्ञाको कांग्रेसकी ओरसे बिलकुल ही स्थगित करनेकी सलाह दी है। तब तो मुझे कहना पड़ेगा कि बात ऐसी नहीं है। यदि मेरे वक्तव्यका ऐसा अर्थ लगाया जाता है तो वह मेरी भाषाकी अपूर्णता, ठीक-ठीक अर्थवहन करनेकी असमर्थताका ही परिणाम है, परन्तु मेरा आशय यह नहीं था। डॉ० अन्सारी, भूलाभाई और विधान जानते हैं कि मेरा क्या मंशा है।

भूलाभाई : उनका मतलब यह नहीं है कि वक्तव्यसे ऐसा अर्थ निकलता है, बल्कि यह कि ऐसा अर्थ उससे निकलना चाहिए।

गां० : सरोजिनीदेवीने कहा कि बम्बईमें मेरे वक्तव्यका यह अर्थ लगाया गया था कि कांग्रेसकी ओरसे सविनय अवज्ञाको स्थगित कर दिया जायेगा और मेरी ओरसे चलनेवाली सविनय अवज्ञा बिलकुल ही व्यक्तिगत होगी। बात ऐसी नहीं है।

भू : अभिलाषा विचारकी जननी है। अनेक लोगोंने उस वक्तव्यका ऐसा अर्थ लगाया। दोनों बिलकुल अलग-अलग दृष्टियाँ हैं। लोगोंने अपनी एक आशाके कारण वैसा अर्थ लगाया। कृपया सोचिए कि क्या एक दूसरा वक्तव्य जारी करके उस गलत धारणाको हटाया जा सकता है या नहीं।

गां० : यहाँ जो सज्जन उपस्थित हैं क्या उनके मनपर भी ऐसी ही छाप पड़ी है? और क्या आपकी इच्छा है कि कांग्रेस मुझतक सीमित सविनय अवज्ञासे अपना कोई सरोकार न रखे?

भू० : क्या आप कांग्रसके नामपर ऐसी अवज्ञा करेंगे?

गां० : जी हाँ।

१. उपस्थित नेताओंमें आसफअली, च० राजगोपालाचारी, डॉ० अन्सारी, राजेन्द्रप्रसाद, सरोजिनी नायडू, डॉ० विधानचन्द्र राय, भूलाभाई देसाई, जमनालाल बजाज, क० मा० मुंशी, दीपनारायणसिंह, मथुरादास त्रिकमजी और नरीमान शामिल थे।

राजगोपालाचारी : क्या कांग्रेस उनसे अपना पल्ला झाड़ने जा रही है?

भू० : एक तीसरा मार्ग, मध्यम मार्ग भी है। गांधीजी को इसपर रजामंद किया जा सकता है कि वे इसका यह अर्थ न लगायें कि कांग्रेस उनकी ओरसे अपना पल्ला झाड़ रही है, बल्कि यों समझें कि वही अपनी ओरसे कांग्रेसको स्वतन्त्र कर रहे हैं।

गां० : ऐसा तभी सम्भव होगा यदि मेरी सलाह यह हो कि सविनय अवज्ञा कांग्रेसकी ओरसे नहीं, केवल मेरी ओरसे, मुझे ही व्यक्तिगत तौरपर करनी चाहिए।

भू० : यह हो सकता है कि इसे कांग्रेसकी एक इच्छाके रूपमें गांधीजी के सामने पेश किया जाये — 'आप कृपया हमें इससे स्वतन्त्र कर दें। हम यह भार सँभालनेमें असमर्थ हैं।'

आसफअली : मैंने आपके वक्तव्यका अर्थ यह समझा है कि आपने कांग्रेसियोंको स्वतन्त्र कर दिया है; और चूँकि आपका कहना है कि सविनय अवज्ञा आपकी अपनी धारणाके अनुरूप ही होनी चाहिए, इसलिए आपने उसे केवल अपनेतक सीमित कर दिया है। कांग्रेसको सविनय अवज्ञामें आस्था है, लेकिन उसके इस संशोधित रूपके बारेमें हम ऐसा नहीं कह सकते।

गां० : ऐसी परिस्थितिमें कांग्रेसको इससे अपना नाता बिलकुल ही तोड़ लेना चाहिए।

आ० : हमारे अस्त्रागारमें सविनय अवज्ञाका अस्त्र तो मौजूद रहना ही चाहिए। लेकिन यह समय उसके उपयोगके लिए उपयुक्त नहीं है, और न निकट भविष्यमें ही इसकी सम्भावना दिखती है। इस अस्त्रका उपयोग आपको अभी नहीं करना चाहिए।

दीपनारायणसिंह : कांग्रेस चाहेगी कि उसे बिलकुल ही न त्यागे, पर उसे स्थगित कर दें।

गां० : मैं बादमें विस्तारसे बतलाऊँगा कि मैंने यह सलाह क्यों दी है। परन्तु अभी इस समय तो मैं इतना ही जानना चाहता हूँ कि मैं अब जो अर्थ आपके सामने रख रहा हूँ, मेरे वक्तव्यकी भाषा उसे स्पष्ट करनेमें समर्थ रही है या नहीं।

दी० : हमने तो उसका अर्थ सविनय अवज्ञाको बिलकुल ही स्थगित कर देना समझा है।

गां० : यदि लोगोंने उसका इस तरहका अर्थ लगाया है, तब तो बात ही बिलकुल दूसरी हो जायेगी। एक राहत-सी लोगोंने महसूस की है, क्योंकि वे जान गये हैं कि अब उनको सविनय अवज्ञा नहीं करनी पड़ेगी। 'वह जेल चला जायेगा। हमारी ओरसे यदि एक आदमी जेल चला जाता है, तो काफी है।' यदि इस भावनाके कारण लोगोंने राहत महसूस की हो, तो एक बात है। लेकिन यदि राहत महसूस करनेकी जड़में यह भावना हो कि 'वह खुद ही सविनय अवज्ञा करता रहेगा, लेकिन अब हम उससे स्वतन्त्र हो गये हैं' तो बात बिलकुल ही दूसरी हो जायेगी। सरोजिनीदेवीसे बात करनेके बाद मैंने अपने-आपसे पूछा कि क्या मेरे वक्तव्यमें ऐसी कोई चीज मौजूद है जिससे उसका ऐसा अर्थ लगाया जा सकता है। मैंने कल रात

३ बजे अपना वक्तव्य एक बार फिर पढ़ा। मैंने उसमें कहीं भी यह नहीं कहा है कि कांग्रेसको सविनय अवज्ञा स्थगित कर देनी चाहिए। सच तो यह है कि मैंने माना है कि कांग्रेस उसे पूरी तरहसे स्थगित करनेको तैयार नहीं है। पूनामें वह निश्चित तौरपर इसके विरुद्ध थी। यदि कांग्रेसी इससे बिलकुल ही अलग हो जाना चाहते हों, तो मुझे उनकी इच्छाका सम्मान करना ही चाहिए, और आप मेरी ओरसे अपना पल्ला झाड़ सकते हैं। मेरी रायमें तो इससे कांग्रेसकी प्रतिष्ठाको धक्का लगेगा। मैंने पूनामें भी यही बात कही थी। यदि हिंसा होती है और फैलती ही जाती है, तो हम सविनय अवज्ञाको स्थगित नहीं कर सकते; लेकिन इसे हम इस कारणसे तो स्थगित नहीं कर सकते कि हमारी संख्या कम है। हमें तो जबतक एक भी सत्याग्रही है, सविनय अवज्ञा जारी रखनी ही चाहिए। तब यदि सलाह देनेवाला कहे कि 'अब और कोई नहीं रह गया है और मैं खुद भी सविनय अवज्ञा करनेमें असमर्थ हूँ' तो हम कुछ और कर सकते हैं। लेकिन मैं स्वयं ऐसा महसूस नहीं करता कि मैं सविनय अवज्ञा नहीं कर सकता। मैं अपने अन्दर कोई निराशा महसूस नहीं करता। मुझे तो लगता है कि कुछ परिस्थितियोंमें सविनय अवज्ञा और अधिक शक्तिशाली सिद्ध हो सकती है। सविनय अवज्ञाको मुझतक सीमित करना ऐसी ही एक परिस्थिति है। कांग्रेसमें इस विषयके एक विशेषज्ञके रूपमें मैं इसे करना चाहता हूँ। कांग्रेस सविनय अवज्ञाके लिए जिम्मेदार है। लेकिन अन्तिम रूपमें जिम्मेदारी मेरी है। मैं अपने-आपको असहाय महसूस नहीं करता। मैं व्यक्तिगत तौरपर सविनय अवज्ञा करना स्थगित नहीं कर सकता, न कांग्रेस ही कर सकती है। कांग्रेस उसे स्थगित करनेकी धृष्टता नहीं कर सकती। कांग्रेसको स्थगित करना भी नहीं चाहिए, क्योंकि इस आन्दोलनमें हजारों लोग अपने-आपको बर्बाद कर चुके हैं। हम उनको क्या जवाब देंगे? और पुरस्कार क्या देंगे? क्या आपको डर है कि कांग्रेसके साथ अब भी एक अवैध संस्थाकी तरह बरताव किया जायेगा? लेकिन कुछ है जो इससे कहीं अधिक शक्तिशाली है।

दी० : वे आपसे अपना पल्ला झाड़ लेना पसन्द नहीं करेंगे। फिर भी वे यह जरूर चाहते हैं कि कुछ समयके लिए इस सविनय अवज्ञाको स्थगित कर दिया जाये।

गां० : आपको दोनों चीजें एक साथ तो नहीं मिल सकतीं। यदि कांग्रेसियोंकी वैसी इच्छा है पर वे मुझसे अपना पल्ला नहीं छुड़ाना चाहते, तो मैं कांग्रेससे बाहर आ सकता हूँ। एक ही प्रकारके दो उदाहरण मौजूद हैं। मैं भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)का सदस्य बन गया होता, लेकिन मतदानका सवाल उठनेपर अलग हो गया। मैंने कहा : 'मैं संस्थामें विभाजन नहीं चाहता।' दूसरा उदाहरण गुजराती साहित्य परिषद्से सम्बन्धित है। १९२६ में कुछ लोग मुझे उसका अध्यक्ष चुनना चाहते थे। बादमें उस प्रस्तावके बारेमें बहस खड़ी हो गई। मुंशीने मामला मेरे सामने रखा। मैंने कहा : 'मैं किसी प्रतिद्वन्द्वितामें नहीं पड़ना चाहता। मैं ऐसा सोच भी नहीं सकता।'

भू० : सरकारने तो दोनों बातोंको एक साथ नहीं रखा, यह तो समाचार-पत्रोंने ही दोनोंको जोड़ दिया है।

मुंशी : मेरे मनपर तो यह छाप है कि लोग यही चाहते हैं कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी गांधीजी के वक्तव्यकी ताईद-भर कर दे, इससे अधिक कुछ नहीं। यदि आप ऐसा नहीं करते तो, आप चाहें या न चाहें, पर उसका अर्थ वक्तव्यसे आपकी असहमति ही होगा।

गां० : कुछ कांग्रेसी हैं जो इससे भी आगे जाना चाहते हैं। मैंने अपने वक्तव्यमें कांग्रेसियोंको सविनय अवज्ञा मुझतक ही सीमित करनेकी सलाह दी है। अब जो सुझाव रखा जा रहा है वह यह है कि मैं कांग्रेसके नामपर नहीं, व्यक्तिगत रूपमें ही सविनय अवज्ञा करूँ। यदि अधिकांश कांग्रेसियोंकी ऐसी ही इच्छा हो, तो मैं इस प्रश्नपर अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीमें कोई विभाजन कराये बिना, वैसी सलाह दूँगा।

भू० : मैं ठीक यही कहना चाहता हूँ।

गां० : मैं दो बातें जान लेना चाहता हूँ। पहली तो यह कि क्या मेरा आशय गलत समझा गया है; दूसरी यह कि क्या अधिकांश कांग्रेसियोंकी इच्छा है कि मैं इससे आगे जाऊँ।

भू० : यदि 'कारगर ढंगसे' शब्दोंका अर्थ आपके वक्तव्यकी ताईद करना हो, तो कांग्रेसी बड़ी खुशीसे ऐसा कर देंगे।

राजगोपालाचारी : 'कारगर ढंगसे' का मतलब इससे कुछ अधिक करनेसे है।

गां० : बहुत सम्भव है कि सरकार कह दे कि इतना तो काफी नहीं है।

रा० : सरकारको इसमें सन्देह था कि कांग्रेसी इसे बहुमतसे स्वीकार कर लेंगे। हमें सिर्फ इसीपर विचार करना चाहिए कि क्या हम गांधीजी से अपना पल्ला झाड़कर अलग खड़े होना चाहते हैं।

गां० : कांग्रेसी मुझसे पल्ला नहीं झाड़ना चाहते। वे यही चाहते हैं कि मैं उनके लिए इतनी गुंजाइश कर दूँ। अगर ऐसा है, तो मुझे उनके लिए यह गुंजाइश करनी ही चाहिए। अगर कांग्रेसियोंके बहुमतकी ऐसी इच्छा है, तो मुझे यह करना ही चाहिए।

रा० : क्या इसका यह मतलब नहीं है कि वे सविनय अवज्ञा नहीं चाहते?

गां० : नहीं, मैं उतना सब कहनेको तैयार नहीं। कोई ईमानदार आदमी यही कहेगा कि 'एक आदमीके सविनय अवज्ञा करनेकी बात मेरी समझमें नहीं आती। यदि आप उसपर अदम्य विश्वास रखते हों, तो आप कर सकते हैं। यदि उसके कुछ सुपरिणाम सामने आयेंगे, तो हम उसे अपना लेंगे!' मैं देख सकता हूँ कि बहुत-से लोग इसे समझ नहीं पा रहे हैं। लेकिन मुझे आशा है कि बहुत-से लोगोंकी वैसी भावना नहीं है। शानदार नतीजे देखकर वे कहने लगेंगे, 'हम इसे त्याग तो नहीं सकते।' मेरे लिए सविनय अवज्ञाको त्याग देना, अपने अस्तित्वसे ही इनकार

करना होगा। कुछ कांग्रेसी हैं जो मुझसे कहना चाहते हैं, 'आपको देशसे अपने-आपको अलग, अकेला नहीं करना चाहिए, इसीलिए आपको भी सविनय अवज्ञाको त्याग देना चाहिए।' संयुक्त प्रान्तके कांग्रेसियोंने ऐसा कहा है।

डॉ० अन्सारी: अभी इस वक्त तो वे आपको रोक रहे हैं, लेकिन उनका कहना है, 'आप जब आगे कदम बढ़ायें, तो हमें भी अपने साथ ले लीजिए।'

जमनालाल बजाज: किसी भी हालतमें अभी इस समय तो वे जेल नहीं जा रहे हैं, कमसे-कम अगस्ततक तो नहीं ही।

गां० : व्यवहारत: प्रस्तावका आशय यह है, 'आपकी सलाह अच्छी है, लेकिन आपको एक कदम और आगे बढ़कर सविनय अवज्ञाको बिलकुल ही स्थगित कर देना चाहिए। भविष्यमें जब-कभी हम इस रास्तेपर चलेंगे, तब हम सब साथ-साथ चलेंगे। बूआजी,[1] उन दो महिलाओंके बारेमें आपकी बात ठीक थी, और मैं तो स्तब्ध रह गया था।

नरीमान: मैं चाहता हूँ कि कांग्रेसके अधिकृत कार्यक्रमके रूपमें सविनय अवज्ञाको त्याग दिया जाये।

विधान राय: नरीमानका कहना है कि आपके वक्तव्यके अनुसार सविनय अवज्ञा कांग्रेसका अधिकृत कार्यक्रम होगा।

गां० : सविनय अवज्ञा अब भी कांग्रेसका अधिकृत कार्यक्रम है।

न०: क्या आप हमें वह सूत्र बतायेंगे जो आप अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सामने पेश करने जा रहे हैं?

गां० : मेरा सूत्र यह होगा: 'अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी, गांधीजी का वक्तव्य सावधानीके साथ पढ़ने और उनका स्पष्टीकरण सुन लेनेके बाद, सविनय अवज्ञाको उनतक ही सीमित करनेकी उनकी सलाहकी ताईद करती है, लेकिन इस व्यवस्थाके साथ कि यदि वे सविनय अवज्ञाके कार्यक्रमको विस्तृत बनानेका कोई प्रस्ताव कभी रखेंगे तो अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीको उसे स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करनेका पूरा अधिकार रहेगा। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी अन्य सभी कांग्रेसियोंको निर्देश देती है कि वे उनकी सलाहपर चलें और सविनय अवज्ञाको स्थगित कर दें।' इस तरह मुझे चाहे जो करनेकी छूट नहीं दी जायेगी। मेरे पास जब भी कोई प्रस्ताव होगा, मैं उसे कांग्रेसके सामने रखूँगा। भावी कार्यक्रमके बारेमें आप अपनी ओरसे कोई वचन नहीं दे रहे हैं। मेरी सलाहको मानने या ठुकरा देनेका आपका अधिकार सुरक्षित रहता है। कांग्रेसको सविनय अवज्ञा करनेका पूर्ण अधिकार है। मेरा कहना है कि फिलहाल आपको ऐसा नहीं करना चाहिए। कांग्रेसको तब तक ऐसा नहीं करना चाहिए जबतक विशेषज्ञ इसकी सलाह नहीं देता। इस प्रकार सारी शक्ति इधर-उधर बर्बाद होनेके बजाय संचित-सुरक्षित रहेगी। देशके पास एक अपनी शक्ति है, जिसका आपको कोई आभास नहीं, लेकिन मुझे है। मैं उस शक्ति

१. गांधीजी सरोजिनी नायडूको सम्बोधित कर रहे थे।

पर अनावश्यक, अनुचित दबाव नहीं पड़ने देना चाहता। जेल जानेके इच्छुक लोग अपनी इच्छाको मनमें पोसे रहें और तैयारी करते रहें; और यदि मैं जीवित रहा और कभी तैयार हुआ तो मैं कांग्रेसके सामने अपनी बात रख दूंगा। यदि रचनात्मक कार्यक्रमपर अमल होता रहे, तो सविनय अवज्ञाकी कोई आवश्यकता नहीं पड़ेगी। संसदीय कार्यक्रम भी कांग्रेसके कार्यक्रमका एक अंग बन जायेगा, बशर्ते कि परिषदोंमें प्रवेश करनेवाले कांग्रेसी सदस्य वहाँ अपने निजी स्वार्थोंके लिए न जायें। यदि साम्प्रदायिक समझौता हो जाये, यदि अस्पृश्यता मिटा दी जाये, यदि भारतवासियोंमें शराबखोरीकी लत न रह जाये और यदि हम भारत-भरमें हर-कहीं ग्रामोद्योग खड़े कर दें, तो फिर सविनय अवज्ञा करनेका कोई अवसर ही नहीं आयेगा। मेरी सविनय अवज्ञामें सभी चीजें आ जायेंगी। स्वराज्य-प्राप्तिके बाद भी मेरी ही सविनय अवज्ञा पर्याप्त रहेगी; कठिनाई तो बस लोगोंमें यह पक्का विश्वास पैदा करनेकी है कि इसी मार्गपर चलकर स्वराज्य हासिल किया जा सकता है। और यदि हिन्दू-मुसलमान-एकता स्थापित न की जा सकी तो, आपका संसदीय कार्यक्रम कागजी ही रह जायेगा। आप मुसीबतमें पड़ जायेंगे।

न० : परन्तु यह निर्णय संसदीय कार्यक्रमको मदद कैसे पहुँचायेगा?

गां० : पहुँचायेगा आपकी शक्ति सहेजकर। मैं तो परिषदोंमें प्रवेश नहीं कर सकता। मुझे देखकर तो वे ऐसे भड़केंगे जैसे लाल कपड़ा देखकर बैल भड़कता है। मेरे शब्दोंसे कहीं अधिक मदद तो मेरे मौन रहनेसे पहुँची है। मेरे शब्दोंकी शक्ति चुक गई है। मैं जानता हूँ कि उपयुक्त अवसर आनेपर मैं अपनी योग्यताका ठीक परिचय दूंगा।

न० : क्या इस दोहरे कार्यक्रममें असंगति नहीं है — एक ओर तो सविनय अवज्ञा एक ही व्यक्तितक सीमित है और दूसरी ओर संसदीय कार्य भी है?

गां० : कार्यक्रम सर्वथा संगत है। कानून बनानेवाला किसी कामका नहीं, यदि वह कानून तोड़नेवाला भी न हो।

न० : एक ही व्यक्ति दो अलग-अलग अवसरोंपर ये दो काम करे, यह तो मेरी समझमें आता है; लेकिन एक संस्था ये दोनों काम एक ही समयमें कैसे कर सकती है?

गां० : हाँ, कठिन तो बहुत होगा, लेकिन असम्भव नहीं है। यदि कांग्रेस मेरे वक्तव्यकी ताईद नहीं करती, तो आप बिलकुल शक्तिहीन बन जायेंगे और आपसे एकके बाद दूसरा कदम पीछे हटाते जानेके लिए कहा जायेगा। लेकिन यदि आप संकल्पपूर्वक एक खास बिन्दुपर अपने पैर टिकाकर कहेंगे कि 'बस इतनातक तो हुआ, अब इससे पीछे नहीं हटूंगा' तो कोई भी सरकार आपकी अवहेलना नहीं कर सकती।

भू० : आप एक अच्छा कानून बना सकते हैं और एक बूरे कानूनको तोड़ भी सकते हैं। ऐसा विभेद करना तो अनावश्यक शब्दजालमें पड़ना है।

न० : क्या हम एक ऐसा दोहरा कार्यक्रम अपनायें जिसके दोनों भाग परस्पर विरोधी हों?

गां० : क्या वे सचमुच एक-दूसरेके विरोधी हैं?

न० : तब तो हमारे अन्दर दो विभाग होंगे -- एक कानून बनायेगा और दूसरा उनको तोड़ेगा। तब इस अवस्थापर परिषदोंमें प्रवेश करनेकी इतनी जल्दबाजी क्यों की जाये?

गां० : यदि आपकी जगह मैं होता तो एक देश-प्रेमीकी हैसियतसे कहता, 'हाँ, हम परिषद्-प्रवेशमें विश्वास करते हैं।'-मैंने यह जाननेकी कोशिश की थी कि क्या हम कांग्रेसमें एक ऐसी सुस्थिर मनोवृत्ति पैदा कर सकते हैं कि कोई भी कांग्रेसी कभी परिषदोंकी बाततक ध्यानमें न लाये। लेकिन मैंने पाया है कि एक बड़ा हिस्सा परिषदोंकी ओर टकटकी लगाये हुए है। मैं इसे कमजोरी नहीं कहूँगा। देशमें अब इसकी आवश्यकता सचमुच महसूस की जा रही है। मैंने इसे एक कमजोरी तब कहा था जब मुझे आशा थी कि मैं कांग्रेसको ऐसी मनोवृत्तिसे मुक्त रखनेमें सफल हो सकूँगा। परन्तु मैं उसमें सफल नहीं हो सका। वह बार-बार इधर-उधरसे सिर उठाती रहती है। मैंने स्थिति समझ ली। मैंने डॉ० विधान रायको कोंचा। मैंने कहा, 'मैं आपको एक दल बनानेकी सलाह देता हूँ।' मैंने यही सलाह आसफअली, सत्यमूर्त्ति और अभ्यंकरको दी। मैंने उनसे कहा, 'आप लोग परिषदोंमें जाकर सरकार को खरी-खोटी सुना सकेंगे।' इसपर उन्होंने कहा, 'लेकिन हमारे जेलोंमें रहनेका मतलब तो सरकारको खरी-खोटी सुनाना ही होता है।' मैंने उत्तर दिया, 'परन्तु आप जेल नहीं जा सकते, क्योंकि आप व्यक्तिगत सविनय अवज्ञामें विश्वास नहीं रखते। सामूहिक कार्यवाहीका समय आनेपर आप अवश्य ही जेलोंमें होंगे।' मैं तो रचनात्मक कार्यक्रम चलानेके पक्षमें हूँ। मैं परिषदोंमें विश्वास नहीं करता। यदि करता होता, तो स्वराज्य पार्टीका सबसे पहला सदस्य मैं ही होता।

[अंग्रेजीसे]

महात्मा, खण्ड ३, पृ० २६१-६

४७६. पत्र : रोमाँ रोलाँको

राँची
३ मई, १९३४

प्रिय मित्र,

आपके दो जिज्ञासापूर्ण पत्र मिले, जिनका अनुवाद मेरे लिए मीराने कर दिया था। आपके व्यक्तिगत कार्योंसे सम्बन्धित आपके पत्रने मेरे मनको छू लिया है। आपकी पूर्ण स्पष्टवादिता और आपके इस प्रयत्नके कारण कि मैं आपकी प्रवृत्तिको यथासम्भव अधिक-से-अधिक समझ सकूँ, आप मेरे और अधिक प्रिय बन गये हैं।

सोवियत पद्धतिकी आपने जो व्याख्या की है, वह मुझे जँचती है। मैं इसे सेरे-सोलसे और अच्छी तरह समझनेके लिए समय निकालनेका प्रयत्न करूँगा।

आपको और आपके साथियोंको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०५८५)से; सौजन्य: मैडेलिन रोलाँ

४७७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

राँची
३ मई, १९३४

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारे दो पत्र मिले। मैं तुम्हारा दुःख नहीं मिटा सकता। उसे समय ही मिटा सकेगा। इस तरह जेलमें सुख नहीं भोगे जाते। मुश्किलोंसे भागकर भी क्या करेंगे? कहाँ जायेंगे? मैंने लोगोंको दिया हुआ हथियार छीना नहीं है। उसकी उपयोगिता सिद्ध करनेके लिए मैंने उसका उपयोग मुल्तवी कर दिया है। इसे अनुभवसे ही चरितार्थ किया जा सकता है। जो जियेगा सो देखेगा।

चन्दूलाल, कानजीभाई, छोटूभाई[1] और रविशंकर[2] यहाँ आ गये हैं। मृदुला भी आई है। गोशीबहन[3] और पेरीनबहन भी आई हैं। परन्तु समाचार देनेका समय नहीं है। यह तो तुम्हें थोड़ी-बहुत सान्त्वना देनेके लिए ही है। तुम्हारे पास औरोंके

१. छोटूभाई पुराणी, गुजरातमें व्यायाम-आन्दोलनके मूल प्रवर्तक।
२. रविशंकर व्यास, रविशंकर महाराजके नामसे प्रसिद्ध।
३. स्व० दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

पत्र भी आते ही रहते हैं, इसलिए आज थोड़ा लिखूं तो हर्ज नहीं। वेलाबहन वहीं है। कान्ति और नारणदास यहाँ हैं। नारणदास काफी दुबला हो गया है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ९९

४७८. तीन अशोभनीय घटनाएँ

मैंने २५ अप्रैलको दक्षिण बिहारका हरिजन-दौरा आरम्भ किया। कार्यक्रममें पहला स्थान था आरा। रास्तेमें मुझे मोटर द्वारा जाकर एक जमींदारका मन्दिर देखना था। उन्होंने उसे हरिजनोंके लिए खोल दिया था, और वहाँ उनसे एक थैली भी लेनी थी। चूंकि स्वागत-समितिको काले झण्डे दिखानेवाले सनातनियों द्वारा विघ्न डाले जानेका भय था, इसलिए यह तजवीज हुई कि मैं बजाय मोटरके लारीसे जाऊँ। ऐसी आशा की गई थी कि इस तरहसे शायद मैं सनातनियोंकी छेड़खानीसे बच जाऊँगा, क्योंकि उन्हें ऐसा सन्देह नहीं होगा कि मुझे इस तरह छिपाकर ले जाया जायेगा। पर स्वागत-समितिके और मेरे दुर्भाग्यसे काले झण्डेवालों ने पहले ही हमारी इस चालका अन्दाज लगा लिया और ज्यों ही उस भारी भीड़में हमारी लारी पहुँची जिसमें वे शामिल थे, वे लोग उसपर टूट पड़े। वे समुद्रमें बूंदके समान थे। हुआ यह कि वे लोग लारीके पहियोंसे चिपट गये, पर फौरन ही पकड़-पकड़ कर हटा दिये गये। मैं तो वह दृश्य देख नहीं सका। यह भाग्यकी ही बात थी कि उनमें से किसीको कोई गहरी चोट नहीं पहुँची। जनसमूह तो निश्चय ही उन विघ्न-कारियोंको किसी भी तरह क्षमा करनेको तैयार नहीं था। 'पकड़ो, पकड़ो' की चीख-पुकारें आकाशमें गूंजने लगीं। पर उन्हें काबूमें लाना इतना आसान नहीं था। जैसा कि उस दलके नेताने मुझे अपनी विघ्नकारी योजना आरम्भ करनेसे पहले ही बतला दिया था, काले झण्डेवाले तो आहत होनेका निश्चय कर चुके थे। इसलिए जब उन्हें पकड़कर हटाया जाने लगा तो वे भी शरीरतः प्रतिरोध करने लगे।

इस दुःखदायी दृश्यको मैं लाचार होकर देख रहा था। सिवा इसके कि मैं लौट पड़ूँ, उस स्थितिको सँभालनेका उस समय मेरे पास कोई और उपाय नहीं था। इसलिए मुझे काले झण्डेवालों के पकड़-पकड़कर हटाये जानेकी इजाजत देनी पड़ी। पुलिस वहाँ थी ही और वह भी उन विघ्नकारियोंको, बिना किसी तरहकी चोट पहुँचाये, हटानेकी कोशिश कर रही थी। यद्यपि किसीको कोई गहरी चोट नहीं पहुँची, तो भी वह दुःखद दृश्य मेरे मनमें सिहरन पैदा कर देनेको काफी था। मेरे पूरे शरीरमें एक ऐसी सनसनी महसूस हुई जिसका मैं वर्णन नहीं कर सकता। मुझे लगा कि मैं संज्ञाशून्य हो रहा हूँ। मेरे मनमें तो रामनामका जाप अनायास चलता ही रहता है, यह दृश्य देखकर मैं सायास उसका जाप करने लगा। इससे मुझे शान्ति

मिली। उस दिनका जो कार्य था वह सब मैंने निपटाया — किसीको यह पता नहीं चला कि उस समय मुझपर कैसी बीती थी या मेरे हृदयमें कैसा मंथन चल रहा था।

हम लोगोंने वह मन्दिर देखा, थैली ली और मोटरसे फिर आरा वापस चले आये। आराकी सार्वजनिक सभामें इतना अधिक कोलाहल और शोरगुल था कि वहाँ भाषण करना असम्भव था। मानपत्र और थैलीके जवाबमें दो-चार शब्द कहकर ही सन्तोष करना पड़ा। आरासे हम लोग रेल द्वारा दोपहरको बक्सर पहुँचे। बक्सरमें भी झण्डेवालोंका प्रदर्शन था। मेरी गाड़ी तो सकुशल निकल गई, पर मीराबहनकी मोटरके हुडपर एक लाठी पड़ ही गई। मेरे वहाँ पहुँचनेके १५ मिनटके अन्दर ही मैंने सुना कि स्वागत-समितिके स्वयंसेवकों और काले झण्डेवालोंमें धक्का-मुक्की हो गई। उस भारी जनसमूहमें वे काले झण्डेवाले तीससे अधिक नहीं थे। यह खबर मैंने सुनी ही थी कि तीन स्वयंसेवक आ पहुँचे — दो के तो सिर फूट गये थे और तीसरेका हाथ सूजा हुआ था। उन्होंने मुझे बतलाया कि सनातनियोंके धक्के-मुक्कोंसे बचते-बचते तथा उनके उपद्रवी बरतावके प्रति क्रुद्ध जनताको शान्त करते समय उनकी यह दशा हुई थी। उन्होंने मुझे यह भी बतलाया कि कुछ सनातनियोंको भी निस्सन्देह चोट आई है।

सार्वजनिक सभामें जानेका समय नजदीक आ रहा था। मैं बेचैनी महसूस कर रहा था। आराकी उस दुर्घटनाको मैं भूला नहीं था, वह मेरे मनमें अब भी ताजा थी। मैंने ठक्कर बापा और विन्ध्याबाबूकी सलाहसे, सभामें पैदल ही जानेका निश्चय किया। मुझे लगा कि यह मोटर ही भड़कानेवाली चीज है और मेरा पैदल जाना शायद काले झण्डेवालोंका गुस्सा ठंडा कर देगा और इससे हरिजन-कार्यके प्रेमियोंकी भीड़ भी संयत और शान्त रहेगी। विन्ध्याबाबूको पहले ही रवाना कर दिया। उन्होंने जनताको बतला दिया कि मैंने पैदल ही सभामें आनेका निश्चय किया है और इसलिए न तो कोई नारे लगाये, न पैर छूनेका प्रयत्न करे और न कोई काले झण्डेवालोंको ही, अगर वे किसी तरहका विरोध-प्रदर्शन करना चाहें तो, छेड़े-छाड़े। मार्गके दोनों तरफ, जो मील-भरसे कम ही था, लोग घनी कतारें बनाये खड़े थे — बीचमें मेरे जानेके लिए काफी चौड़ी जगह छोड़ दी गई थी। मेरे लिए तो वह तीर्थयात्रा ही थी। ठक्कर बापा और विन्ध्याबाबू मेरे साथ थे। सभा बहुत ही सफल रही। विशाल जनसमूहने पूर्णतः शान्त रहकर मेरी बात सुनी। मैंने जो सुना और देखा था उस सबका वर्णन किया और कहा कि स्वागत-समितिके स्वयंसेवकों द्वारा अगर मेरे विरुद्ध प्रदर्शन करनेवालों को कोई चोट पहुँची हो, तो मैं उनसे क्षमा माँगता हूँ। मैंने उन्हें विश्वास दिलाया कि इन घटनाओंके बारेमें मैं और भी जाँच करूँगा।

सभा समाप्त हुई और मैं पैदल ही डेरेपर वापस आया। मैं पहुँचा ही था कि एक सनातनी स्वयंसेवक आया और उसने अपने सिरकी एक चोट मुझे दिखाई और कहा कि और भी लोग आहत हुए हैं, जिनमें से एक तो निश्चय ही मर जायेगा। वे सब अस्पतालमें हैं। ठक्कर बापा को मैंने अस्पताल भेज दिया, और इधर मैं स्टेशन जानेकी तैयारी करने लगा। तैयार होकर पीछे-पीछे मैं भी अस्पताल पहुँचा और

वहाँ मैंने घायलोंको देखा। वे कुल चार थे, और जिसके बारेमें कहा गया था कि वह मरनेवाला है, उसकी निश्चय ही वैसी हालत नहीं थी। उसके सिरमें चोट आई थी। वह डॉक्टरी मुआइनेके इन्तजारमें था। वह मुझसे ठीक-ठीक बात कर सका और बिलकुल होशहवासमें था। मेरे विचारमें उसकी चोटें गम्भीर नहीं थीं। डॉक्टर ने उसकी हालतको खतरनाक नहीं बतलाया। बाकी तीनोंको अधिक चोट नहीं आई थी। उन सभीने कहा कि वे अपनेपर आक्रमण करनेवाले उस एक स्वयंसेवकको पहचान सकते हैं, जो स्वागत-समितिका पट्टा लगाये हुए था। उस समय पूरी-पूरी जाँच तो मैं कर नहीं सकता था, इसलिए मैंने उनसे कहा कि आप लोग अपने आक्रमणकारियोंके नाम या उनका हुलिया और पूरा हाल लिखकर मेरे पास भेज दीजिएगा। घायल स्वयंसेवकोंने मुझे जो बताया था वह मैंने उन्हें बता दिया और विश्वास दिलाया कि अगर मैंने पाया कि स्वयंसेवकोंने उनपर आक्रमण किया था या दूसरोंको वैसा करनेके लिए उकसाया था, तो जैसा मुझसे बन पड़ेगा, मैं उसके लिए वैसा प्रायश्चित्त अवश्य करूँगा। मैंने उनसे यह भी कहा कि मुझे वे उतने ही प्रिय हैं जितने कि स्वयंसेवक। मैं बहुत जल्दीमें अस्पताल गया था। मुझे उसी वक्त देवघरके लिए जसीडीह जंकशनकी गाड़ी पकड़नी थी, जो अगले दिन, अर्थात् २६ तारीखको रातको २ बजकर १० मिनटपर वहाँ पहुँचती।

पण्डित लालनाथ और उनके साथियोंने सारी रात शोर मचाया। वे हमारे साथ ही सफर कर रहे थे। वे हर स्टेशनपर उतर पड़ते और जोर-जोरसे गाकर अस्पृश्यता-निवारणके खिलाफ निन्दात्मक नारे लगाते थे। जहाँतक मैं जानता हूँ, जब वे ऐसा कर रहे थे, लोगोंने उनके साथ कहीं कोई छेड़खानी नहीं की। प्राय: प्रत्येक स्टेशनपर मेरा स्वागत करनेके लिए जो जन-समूह आया, वह सचमुच शान्त रहा, जबकि वे सनातनी या तो मुझे यह हरिजन-दौरा बन्द कर देनेके लिए उत्तेजित करते रहे या जनताको उत्तेजित करनेकी कोशिश करते थे जिससे कि वह पण्डित लालनाथ और उनके साथियोंके साथ जमकर छेड़खानी करे। खैर, इस तरह हम लोग जसीडीह पहुँचे। वहाँ लोगोंकी भारी भीड़ थी। स्टेशनपर मामूली-सी रोशनी थी। इससे मैं लोगोंके चेहरे नहीं देख सका। पुलिस तो वहाँ थी ही। अत: स्वयंसेवकोंके साथ-साथ पुलिसने भी मेरी सुरक्षामें भाग लिया।

हम लोग स्टेशनके फाटकतक कठिनाईसे पहुँचे। वहाँ हमने अपने टिकट जमा किये। पर इसके आगे गजबकी रेल-पेल थी। बीच-बीचमें बहुत-से काले झण्डेवाले विरोध-प्रदर्शनकारी भी खड़े थे। बड़ी मुश्किलसे, किसी तरह पुलिस अफसरों और स्वयंसेवकोंने मुझे मोटरमें बिठाया। ठक्कर बापा मेरे साथ बैठनेवाले थे, लेकिन नहीं बैठ सके। ऐसेमें उनके लिए गाड़ीको रोक रखना खतरनाक समझा गया। इसलिए उस भीड़में से बहुत धीरे-धीरे मेरी गाड़ी आगे बढ़ चली। गाड़ीकी छतपर जोरोंके प्रहार होने लगे। उस क्षण तो मुझे लगा कि अब छत चूर-चूर हुई। इतनेमें पीछे के शीशेपर एक प्रहार हुआ। टूटे हुए काँचकी किरचें मेरी बगलमें आ गिरीं। शशि बाबू आगेकी सीटपर बैठे हुए थे। उनको पूरा यकीन था कि शीशेको लक्ष्य करके

ही पत्थर फेंका गया था। पर मैं ठीक-ठीक नहीं जान सका। किन्तु मैंने देखा कि मैं यदि घातक रूपसे नहीं तो बुरी तरह घायल होते-होते तो बचा ही था।[1]

तो लोग इस असभ्यता और हिंसा द्वारा सनातनधर्म का परिचय दे रहे थे! यह देखकर मेरा मन दुःख और ग्लानिसे भर गया। वर्णाश्रम स्वराज संघके नामपर जो चन्द आदमी जहाँ-तहाँ ऐसे विरोध-प्रदर्शन करते फिरते हैं, उनके इस बरतावका मैं किसी तरह कोई औचित्य नहीं देखता।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-५-१९३४

४७९. पत्र : चन्दूलाल देसाईको[2]

रांँची

४ मई, १९३४

इसमें सन्देह नहीं कि साथियों द्वारा की जानेवाली सविनय अवज्ञाको अस्थायी तौरपर स्थगित कर देनेसे उन बेघर-बार और बिना खेत-खलिहानवाले किसानोंका प्रश्न विकट रूपसे उठ खड़ा होता है जिन्होंने नुकसान उठाया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हर गुजरातीका यह कर्त्तव्य है कि उन्हें अपने पैरोंपर खड़ा होनेमें जो भी मदद दी जा सकती हो, दी जाये। यह याद रखना चाहिए कि मदद देकर हम किसी को अपंग नहीं बनाना चाहते। इस जगत्‌में बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ व्यक्तिगत नुकसान सहे बिना कभी नहीं लड़ी गईं और भविष्यमें लड़ी भी नहीं जायेंगी। यह भी याद रखना कि नुकसानकी भरपाई करनेका प्रश्न हमारे सामने नहीं है बल्कि बरबाद हो चुके लोगोंको अपने पैरोंपर खड़ा करनेका प्रश्न है। जिन्होंने अपनी जमीन गँवाई है, वे यह विश्वास रखें कि उनके अपने जीवन-कालमें नहीं तो उनके वारिसोंको वह जमीन अवश्य वापस मिल जायेगी। मेरे विचारसे यह एक चिह्न है और सो भी हलका-सा कि हमें स्वराज मिल जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७१२)से।

१. जसीडीह और देवघरकी घटनाओंके लिए देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", २५-४-१९३४ तथा "भाषण : सार्वजनिक सभा, देवघर में", २६-४-१९३४ भी।

२. बादमें चन्दूलाल देसाईने जनतासे किसानोंकी सहायता करनेकी अपील करते हुए इस पत्रको समाचार-पत्रोंमें प्रकाशनार्थ दे दिया था।

४८०. भाषण: सार्वजनिक सभा, जमशेदपुरमें[1]

४ मई, १९३४

गांधीजी ने कहा . . . अपने युगके एक महानतम और सर्वाधिक बुद्धिमान समाजसेवीके नामपर नामकृत, जमशेदपुर-जैसे एक नव-निर्मित नगरमें भी हरिजनोंके रहनेकी झोंपड़ियोंकी जगह साफ-सुथरे मकान नहीं बनाये गये हैं — यह देखकर दुःख होता है। उन्होंने यह भी कहा कि जिस नगरमें अनेकानेक जातियोंके लोग रहते हों, वहाँ हरिजन बस्तियोंको पृथक् रखना नगर-निवासियोंको कतई शोभा नहीं देता। जमशेदपुर मूलतः एक मजदूर-शहर है। कमसे-कम मजदूरोंको तो अस्पृश्यताके कलंक से मुक्त रहना चाहिए।

गांधीजी ने शराबखोरीकी लतके बारेमें भी कहा कि मुझ झरियामें बतलाया गया कि यह बुराई बढ़ती जा रही है। मैं खुद ही अपनेको मजदूर मानता हूँ और मैं अपने साथी मजदूरोंको आगाह करता हूँ कि आपका सबसे बड़ा शत्रु पूँजी नहीं, बल्कि शराबखोरी और अन्य बुरी आदतें ही हैं। अगर आप शराबखोरीकी लत नहीं छोड़ेंगे तो अन्तमें यह आपको मिटाकर ही रख देगी।

गांधीजी ने गुण्डागर्दीका भी जिक्र किया। कहा जाता है कि आपके बीच वह बढ़ती जा रही है। यह शर्मनाक बात है कि बर्बर तरीके इस्तेमाल किये जाते हैं, फिर चाहे कोई भी करता हो। मैंने सुना है कि इस घृणित कामके लिए भूतपूर्व मजदूर लोगोंको इस्तेमाल किया जाता है। अगर बात सच है तो सचमुच शर्मनाक है।

गांधीजी ने कहा कि यह बात भी बड़ी लज्जाजनक है कि मजदूर लोगोंको अपने ऊपर यह भरोसा नहीं है कि एक बार हाथमें रुपये-पैसे आ जानेपर वे पवित्र कार्योंके लिए उसमें से कुछ दे पायेंगे या नहीं।[2] इसलिए मजदूरों और उनके सलाहकारोंको चाहिए कि वे अगली बार मजूरी मिलनेके दिन ही अपने-अपने चन्दे दे दें। मुझे इसकी परवाह नहीं कि चन्देकी रकम कितनी छोटी या बड़ी हो। मैं तो यह महसूस करना चाहता हूँ कि अस्पृश्यता-निवारणके मामलेमें मजदूरोंका कितना ठोस समर्थन मुझे मिलेगा। उन्होंने अपने दौरेके अन्य सभी मजदूर-क्षेत्रोंका उदाहरण

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. गांधीजी को बताया गया था कि उनको भेंट की गई थैलीमें मजदूरोंकी ओरसे दी गई रकम बहुत थोड़ी ही थी।

देते हुए बतलाया कि मैं आज ही चक्रधरपुर गया था। वहाँ मजदूरोंने अपना हिस्सा अदा कर दिया है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ११-५-१९३४

४८१. भेंट: समाचार-पत्रोंको

जमशेदपुर
४ मई, १९३४

जब श्री गांधीसे उनके हरिजन-आन्दोलनके परिणामोंके बारेमें पूछा गया तो उन्होंने मुस्कराते हुए कहा:

लॉर्ड विलिंगडनसे पूछिए।

फिर उन्होंने जोड़ा कि उसने दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति की है और जनता में एक स्पष्ट मानसिक क्रान्ति हुई है। अब तो बस यही देखना शेष है कि प्रत्येक सवर्ण हिन्दू-घरमें उसपर कब अमल शुरू किया जाता है।

आदिवासी ईसाइयोंके पुनः अपने मूल धर्ममें दीक्षित किये जानेकी वांछनीयताके बारेमें पूछे जानेपर श्री गांधीने कहा कि मैं तो वैसा करनेकी सोच भी नहीं सकता। लेकिन मेरा खयाल है कि आदिवासियोंमें ऐसे बहुत-से लोग मौजूद हैं जो नामके ईसाई हैं और बिना किसीके प्रयत्नके ही वे धीरे-धीरे हिन्दू-धर्मकी ओर खिंचते आयेंगे। जो आदिवासी सच्चे हृदयसे ईसाई धर्मको अपना चुके हैं, उनको उसी धर्ममें रहकर अपना विकास करने देना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
सर्चलाइट, ९-५-१९३४

४८२. दर्शक-पंजिकामें प्रविष्टि[1]

५ मई, १९३४

इस अत्यन्त ही सुपात्र संस्थाको देखकर मुझे अतीव प्रसन्नता हुई।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १९९१) से।

१. सम्बलपुर सदर कुष्ठ चिकित्सालयकी दर्शक-पंजिकामें।

४८३. पत्र : अमतुस्सलामको

५ मई, १९३४

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारे खत मिले। बम्बई जा सकती हो। वहाँ आपरेशन[१] करा लेना। कोई डाक्टरपर खत चाहिये तो लिखो। आनन्दमें रहो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०२) से।

४८४. एक सुगन्धित फूल

फूलचन्द बापूजी शाह गुजरातकी वाटिकाके एक सुन्दर फूल थे। यह फूल तो झड़ गया किन्तु अपनी सुगन्ध छोड़ गया। भाई फूलचन्दसे मेरा गहरा परिचय खेड़ा सत्याग्रहके समय हुआ था। तभीसे मैंने उन्हें एक मूक सेवकके रूपमें जाना। किसी भी तरहकी सेवा करनेके लिए वे सदा तैयार रहते थे। हरिजनोंके सच्चे सेवक होनेके नाते वे स्वयं हरिजन बन गये थे। वे वीर पुरुष थे। मैंने उन्हें त्यागसे कभी मुँह मोड़ते नहीं देखा। वीर सेवकोंकी जैसी मृत्यु होनी चाहिए वैसी ही भगवान्ने उन्हें दी। किसीसे भी सेवा कराये बिना वे महायात्राको चल पड़े। उनकी मृत्युपर हम आँसू नहीं बहायेंगे। उनके कुटुम्बीजन भी आँसू न गिरायें। फूलचन्दका कुटुम्ब विशाल था। हम सबको वे अपना कुटुम्बी मानते थे। उनकी मूक सेवाका अनुकरण करना ही ऐसे सेवकका सच्चा स्मारक है। इस आत्म-शुद्धिके समय फूलचन्दका स्मरण कर हम सब अपने मनके मैलको धो डालें।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ६-५-१९३४

१. बवासीरका।

४८५. पत्र : श्रीप्रकाशको

पटनाके पतेपर
६ मई, १९३४

प्रिय श्रीप्रकाश,

आपका एक विस्तृत पत्र मिला, और उसके बाद एक संक्षिप्त-सा पत्र भी। मैंने देखा कि मार्कण्डेय मन्दिरके सम्बन्धमें बिलकुल सही जानकारी देनेके लिए आपने कितनी मेहनत की है। सनातनधर्म का जो अर्थ आप लगाते हैं, यदि उसे सब स्वीकार कर लें, तो जाहिर है कि कहीं कोई मुश्किल ही नहीं रह जायेगी।

यदि भारत सेवक समाज (सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)के सदस्योंसे मैं पूर्णतया सहमत होता तो मैं उसका एक ऐसा सदस्य-भर बनकर न रहता जिसे विधिवत् मान्यता न मिली हो। सदस्यताका दावा मैं इसलिए करता हूँ कि गोखलेको जिस भावनाने अनुप्राणित किया था वही भावना मेरी है। और कौन कह सकता है कि यदि १९१९ और उसके बादकी घटनाएँ उनके जीवन-कालमें ही घटी होतीं तो वह किस पलड़ेमें अपना वजन रखते, किस पक्षमें जाते?

आपको मात्र शाब्दिक अर्थके पीछे नहीं दौड़ना चाहिए। "मात्र शब्द मृत्युदायी है और भावना प्राणदायिनी है" यह केवल ईसाइयोंपर ही नहीं, समस्त संसारपर लागू होता है। देखिए न, अपने-आपको सनातनी कहनेवाले लोगोंको मात्र शाब्दिक अर्थ किस तरह मृत्युकी ओर ढकेल रहा है!

आपका,
बापू

श्री श्रीप्रकाश
सेवाश्रम
सिगरा, बनारस

[अंग्रेजीसे]

श्रीप्रकाश पेपर्स, फाइल संख्या जी०-२; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४८६. भाषण : सार्वजनिक सभा, अंगुलमें[1]

६ मई, १९३४

आप सबसे मिलकर मुझे बड़ी खुशी हुई। आप जानते हैं कि उड़ीसाके इस भागमें मैं पहले नहीं आया था। इस स्थानतक पहुँचनेके लिए रेलवेकी पर्याप्त सुविधा नहीं है। इस कारणसे और कुछ अन्य कारणोंसे भी मैं यहाँतक नहीं पहुँच पाया था। यह बड़ी अच्छी बात है कि यहाँ भी अन्य स्थानोंकी तरह मुझे अस्पृश्यता-निवारणके बारेमें बोलनेका अवसर मिला है।

मैं आपको बतलाना चाहता हूँ कि अस्पृश्यता आज जिस रूपमें प्रचलित है उसका हमारे धर्म-शास्त्रोंमें कोई उल्लेख नहीं है। धर्म-शास्त्रोंमें ऐसे लोगोंके नामोंका हवाला नहीं मिलता जिनको हम अस्पृश्य कहते हैं। हम यह भी नहीं सिद्ध कर सकते कि उनको हम अस्पृश्य कहते क्यों हैं।

धर्मका ताल्लुक करोड़ों लोगोंसे है। सो उसके क्षेत्रमें ऐसा अज्ञान अक्षम्य है। दुःखकी बात है कि हम दीर्घकाल तक अन्धकारको प्रकाश और अज्ञानको ज्ञान समझते रहे, इसीलिए मैं आप सबसे — यहाँ जमा हुए युवा-वृद्ध, स्त्री-पुरुष सबसे — कहता हूँ कि अज्ञानके अन्धकारसे अपने-आपको बचाइए। यदि हम अपनेको इस अज्ञानसे नहीं बचायेंगे तो निश्चय ही हमारा अस्तित्व मिट जायेगा और हमारे धर्मका नाम-निशान उठ जायेगा। हम सब एक ही पिताकी सन्तान हैं। परमेश्वर अपनी सन्तानके बीच कोई भेद-भाव नहीं करता। सामान्य माता-पिता अपने बच्चोंके बीच कोई भेदभाव नहीं करते, इसलिए परम पिता परमेश्वर तो नहीं ही कर सकता। हमें अस्पृश्यताके विचारको जड़से ही उखाड़ देना चाहिए। किसी भी व्यक्तिके साथ अस्पृश्यकी तरह बरताव करना वांछनीय नहीं है। हमें अपने दिमागसे छोटे-बड़े और ऊँच-नीचका भाव बिलकुल ही निकालकर आत्म-शुद्धि करनी चाहिए।

सवर्ण हिन्दुओंमें भी ऊँच-नीचका विभाजन रहा है। यह अस्पृश्यताका ही परिणाम है। अस्पृश्योंके बीच भी ऊँचे और नीचे तबकोंका भेद करना पाप है। माता-पिता हमें शिक्षा देते हैं कि ब्राह्मण और चण्डालमें कोई भेद नहीं है, और दोनों एक-दूसरेके काम आ सकते हैं। मैं उनमें कोई भेद नहीं देख पाता। शास्त्र हमें अशिक्षितोंको दुरदुरानेकी शिक्षा कभी नहीं देते। अज्ञानियोंको ज्ञान देना हमारा कर्त्तव्य है। रोगियोंको रोग-मुक्त करना बड़ी अच्छी सेवा है। अज्ञान भी एक रोग ही है। हम लोगोंका अज्ञान दूर करनेके लिए जगह-जगह पाठशालाएँ खोल रहे हैं। हम जब पाठशालाओंमें जाते हैं तो ऐसा नहीं सोचते कि हम नीचे और शिक्षक ऊँचे हैं।

१. गांधीजी ने हिन्दीमें भाषण किया, जिसे ओड़िया भाषामें अनूदित किया गया था।

अपने-आपको ऊँचा और शिष्योंको नीचा समझनेवाला आदमी शिक्षक बनने लायक नहीं है। इससे आपको यह सीख लेनी चाहिए कि किसीको भी नीचा समझना क्षुद्रता है और पाप भी। संसारमें एक प्रकारकी अस्पृश्यता मौजूद है — बुरे विचारकी अस्पृश्यता। वास्तविक अस्पृश्यताका पालन अपने-अपने दिमागसे सभी बुरे विचारोंको निकाल फेंकना ही है। हमें नित्य ही प्रातःकाल ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमें अपने दिमागमें उठनेवाले सभी बुरे विचारोंपर काबू पानेकी शक्ति दे। दूसरे प्रकारकी अस्पृश्यता शराबखोरी है। शराब एक भारी अस्पृश्यता है। शराबखारोंको यह मानते हुए उसे त्याग देना चाहिए कि शराबखोरी पाप है। एक और अस्पृश्य है — काहिली। वह हमारा एक बड़ा शत्रु है। मैं जानता हूँ कि काहिलीमें उड़ीसाका नम्बर काफी ऊपर है। इसके कई कारण हैं। पर मैं उनका विवेचन करने नहीं जा रहा हूँ। परन्तु मैं इतना जरूर कहूँगा कि कारण जो भी हो, सभीको इसका परित्याग अवश्य कर देना चाहिए। केवल खेतीके सहारे रहकर हम साल-भर मेहनती नहीं बने रह सकते। उड़ीसाकी जनताको मेरी सलाह है कि जब उसके पास कोई काम न हो तो उसको कपासके डोंडे चुनना और कताई-बुनाई करनी चाहिए और इस तरह अपने इस्तेमालके लिए खुद ही खद्दर तैयार करना चाहिए। इससे आप आत्म-निर्भर तो बनेंगे ही, साथ ही करोड़ों रुपयोंकी बचत भी कर लेंगे।

हमारे बालकोंको जो सबसे अच्छी शिक्षा दी जा सकती है वह है चरखा चलानेकी शिक्षा। इस तरह वे चरखेसे अपनी आजीविका कमाना सीखेंगे। मैं जानता हूँ कि उड़ीसाके हजारों हरिजनोंको साल-भर कोई काम नहीं मिल पाता। यदि हम हरिजनोंको अपना बनाना चाहते हैं तो हमें उनको कपासकी खेती करना, कपाससे डोंडे चुनना, सूत कातना और कपड़ेकी बुनाईका काम सिखाना चाहिए।

यदि आप दिलमें महसूस करते हैं कि अस्पृश्यताको मिटाना जरूरी है, तो आप एक-दो पैसे या जो भी आपसे बने, चन्देमें दें। चन्दा देनेवाले और न देनेवाले, सभी शान्त रहें।[1]

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, ८-५-१९३४

१. साधन-सूत्रमें छपी रिपोर्टके अनुसार: "लोग इतनेसे सन्तुष्ट नहीं हुए। उन्होंने गांधीजी के तम्बूको चारों ओरसे घेर लिया। इस समयतक २५ हजारसे अधिक लोग जमा हो गये थे। . . . पुलिसके लोग थककर वहाँसे चले गये। इस तरह डेढ़ घंटा बीता।" विवरणमें आगे कहा गया है कि भीड़ इतने करीब सिमट आई कि स्वयंसेवकोंको स्थितिको बिगड़ने न देनेके लिए स्वयं भूमिपर लेट जाना पड़ा। तब गांधीजी ने बाहर निकलकर भीड़के लोगोंसे बात की और बतलाया कि वे किस तरह उनके लिए असुविधा पैदा कर रहे थे। अन्तमें, उन्होंने दोपहरमें फिर उनके समक्ष भाषण करनेका वचन देकर भीड़को लौट जानेके लिए राजी कर लिया। वादेके मुताबिक उन्होंने फिर भाषण भी किया।

४८७. पत्र : द्रौपदी शर्माको

७ मई, १९३४

चि० द्रौपदी देवी,

तुमारा खत मिला। अच्छा है। मात-पिताको अपने बच्चोंका भार नहिं लगना चाहिये भले क्यों ब्रह्मचर्यका निश्चय भी किया हो। उनका पालन कर्त्तव्य समझ करना आवश्यक है। उसीके साथ दूसरी सेवा की जाय। इसका परीणाम यह आवेगा कि बालक भी सच्चे सेवक होंगे। यह तो हुई मेरी राय। इससे संतोष न रहे तो जैसा दिल कहे ऐसे किया जाय। मुझे लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ६६-७ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

४८८. पत्र : हीरालाल शर्माको

७ मई, १९३४

भाई शर्मा,

तुमारे खतका उत्तर देनेका नारणदासको कह दिया था। तुमारे अभिप्रायके मुताबिक रामदासके उपचार अवश्य करो। मुझे लिखा करो। शक्तिके वाहर त्याग न किया जाय। जब मैं कहीं थोड़े दिनोंके लिये स्थिर हो सकुं तब मेरे पास अवश्य आ जाओ।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ६६ के सामने प्रकाशित अनुकृतिसे।

४८९. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

पुरी
८ मई, १९३४

मेरे अन्दर दिन-दिन यह विचार जड़ पकड़ता जा रहा है कि अपने हरिजन-दौरेका शेष भाग जहाँतक हो सके, मुझे पैदल चलकर ही पूरा करना चाहिए। जब श्री ठक्कर तमिलनाडुके दौरेका कार्यक्रम निश्चित कर रहे थे और डॉ० राजन् उसमें उन स्थानोंको भी शामिल करनेका उनसे बहुत ज्यादा आग्रह कर रहे थे जिनका दौरा तमिलनाडुके लिए रखे गये समयमें पूरा करना सम्भव नहीं था, तब मैंने श्री ठक्करसे कहा था कि यदि वे भी मेरे विचारसे सहमत हों तो मैं उस समय तैयार किये जानेवाले उस लम्बे-चौड़े कार्यक्रमको बड़ी खुशीसे रद करके गाँव-गाँव पैदल चलकर ही दौरा पूरा करना चाहूँगा। इधर हालमें वह विचार फिर मेरे मनमें उठा है और मुझपर हावी होता जा रहा है — देवघरकी घटनाके बादसे तो और भी। मैं जानता हूँ कि हिंसात्मक साधनोंका सहारा लेनेवाले लोग मुट्ठी-भर ही हैं। लेकिन चन्द लोग भी सभाओंमें गड़बड़ी पैदा कर सकते हैं। मैं उनको अपने बस-भर हर तरीकेसे यह दिखा देना चाहूँगा कि यह आन्दोलन अपनी परिकल्पना और अमल दोनों बातोंमें तत्त्वतः एक धार्मिक आन्दोलन है। यदि मूल प्रेरणा धार्मिक है तो हमारा लक्ष्य भी धार्मिक ही है। मैं यह भी दिखा देना चाहता हूँ कि यह आन्दोलन अपने प्रसारके लिए शीघ्रगामी साधनोंसे की जानेवाली यात्राओंका मोहताज नहीं है। एक सुझाव ऐसा भी आया था कि मुझे हवाई जहाज इस्तेमाल करना चाहिए, लेकिन मैंने उसे तुरन्त ही अस्वीकार कर दिया था। और किसीको यह भी नहीं मान बैठना चाहिए कि दौरा केवल चन्दा उगाहनेकी खातिर किया जा रहा है। मुझे पूरा भरोसा है कि यदि मैं पद-यात्रा करूँ तो भी इस उद्देश्यके लिए अपेक्षित जन और धन सुलभ होते रहेंगे। यदि मेरा सन्देश सचमुच मेरे हृदयसे निकलता है तो वह मेरे रेल या मोटरसे यात्रा करनेकी बजाय शायद मेरे पद-यात्रा करनेसे कहीं ज्यादा जल्दी आपतक पहुँचे। और फिर मैं हो-हुल्लड़से ऊब भी गया हूँ। यह सही है कि यह हो-हुल्लड़ मुझे देखकर उमड़नेवाले जनताके स्नेह और हर्षकी ही अभिव्यक्ति है, लेकिन अब मैं उस सबको बरदाश्त नहीं कर पाता, मेरी तबीयत घबराने लगती है। और मैं उस धक्कम-धुक्कीसे भी इतना ही तंग आ चुका हूँ जो मुझे रोज ही झेलनी पड़ती है। लोगोंकी भारी भीड़का और-और घनी होकर मेरी ओर घिरते

१. यह वक्तव्य यूनाइटेड प्रेसके जरिये जारी किया गया था। यह ११-५-१९३४ के **हरिजन**में भी "शैल इट बी ऑन फुट?" (क्या पद-यात्रा की जायेगी?) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

आना और मुझे उससे बचानेके लिए स्वयंसेवकोंका जी-तोड़ कोशिश करना — अब मेरा दुर्बल शरीर इतना सब सहन नहीं कर पाता और मुझे इस हो-हुल्लड़ और इस धक्कम-धुक्कीमें कोई सार नहीं दिखता। मेरे चरण-स्पर्शका पागलपन मेरे शरीरके लिए खतरा बनने लगा है। शायद ही कोई दिन गुजरता हो जब किसी-न-किसी पुण्याभिलाषीके नाखूनोंसे मुझे हल्की खरोंचें न लग जाती हों। मैंने बार-बार इस जयजयकार, इस धक्कम-धुक्की और चरण-स्पर्श करनेकी होड़का जोरदार विरोध किया है, पर उसका कोई स्थायी असर नहीं दिखाई देता। हाँ, किसी स्थानपर यदि मेरी बात श्रोताओंके कानोंतक पहुँच जाती है, तो वहाँ उसका असर जरूर होता है। लेकिन जिस भागमभागमें मुझे दौरा करना पड़ता है उसमें ऐसा अवसर मुझे सदा नहीं मिल पाता। कभी-कभी मुझे एक ही दिनमें काफी दूर-दूर स्थित तीन-तीन स्थानोंतकमें जाना पड़ता है। सन्देशका सत्य लोगोंके हृदयमें उतर सके, इसके लिए अत्यावश्यक है कि जनता शान्त रहकर और ध्यान देकर सुने। धार्मिक सत्य या कोई भी सत्य हो, उसे हृदयमें उतारनेके लिए एक शान्त मननशील वातावरण अपेक्षित होता है। इसलिए शेष दौरेके लिए मैं अपने सहकर्मियोंके समक्ष तीन सुझाव रखता हूँ। मैं सुझावोंको उनकी उपयोगिता-क्रममें रख रहा हूँ :

(१) जिस दिन संकल्प किया जाये, उस दिन मैं जहाँ भी होऊँ मुझे अपना दौरा पैदल शुरू कर देना चाहिए; यह पद-यात्रा पटनामें या कहीं भी होनेवाली अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें शामिल होने और जिस स्थानसे उसमें शामिल होने जाऊँ उस स्थानतक लौटनेतक के लिए ही स्थगित की जायेगी, या फिर पद-यात्रा आरम्भ करनेके लिए कोई नया स्थान चुना जायेगा।

(२) उड़ीसाका दौरा पूरा करनेके बाद कोई नया प्रान्त चुनना और उस प्रान्त-भरका और जितने भी बन सकें, उतने प्रान्तोंका दौरा पद-यात्रा द्वारा पूरा करना।

(३) वर्तमान निश्चित कार्यक्रमके स्थानपर एक नया कार्यक्रम तैयार करना, जिसमें इस कार्यक्रमके सभी प्रान्तोंको नहीं, बल्कि यथासम्भव अधिकसे-अधिक प्रान्तों का शामिल किया जाना और एकसे दूसरे प्रान्तमें जानेके लिए रेलगाड़ीका इस्तेमाल किया जाना।

मुझे पूरा यकीन है कि यदि कार्यकर्त्ताओंको इस सन्देशके भावात्मक पक्षपर आस्था होगी, तो वे पहले सुझावको निस्संकोच अपना लेंगे। कार्यकर्त्ताओंको किसी भी हालतमें बिना सोचे-समझे निर्णय नहीं करना है। उनकी आस्था ओढ़ी हुई नहीं होनी चाहिए। यदि मेरा कोई भी सुझाव उनको ठीक न जँचे तो उनको सभी सुझाव एकदम ठुकरा देने चाहिए, और फिर मैं अपना शेष दौरा अपनी शक्ति-भर अच्छेसे-अच्छे ढंगसे पूरा करूँगा। पूछा जा सकता है कि यदि मुझे पूर्ण विश्वास है कि मेरा निर्णय सर्वथा उचित है तो मैं अपने सहकर्मियोंको साथ लिये बिना ही उसपर अमल क्यों नहीं करता, जैसाकि लोग जानते हैं कि मैं पहले करता रहा हूँ। प्रश्न उचित है। मैं इसलिए इसपर अमल नहीं कर रहा हूँ कि मेरा अपना विश्वास उतना दृढ़ नहीं है जितना मैं चाहता हूँ। मुझे इसमें निहित सत्यका कुछ आभास-भर हुआ

है। फिर, दौरा करनेका निर्णय मैंने खुद तो नहीं किया है। इसका सुझाव श्री ठक्कर और सेठ घनश्यामदास बिड़लाने दिया था। योजना भी उनकी ही तैयार की हुई है। मैंने बिड़लाजी को अपना कोई सुझाव नहीं दिया है। श्री ठक्कर सुझावके प्रति कोई उत्साह नहीं दिखाते। उनको भय है कि इस तरह — उन्हींके शब्दोंमें कहूँ तो — प्रान्तोंको दिया गया वचन कहीं झूठा न पड़ जाये, और वे किसी भी हालतमें सम्बन्धित प्रान्तोंकी सहमति लिये बिना काम नहीं करेंगे। जाहिर है, अपने ढंगसे उनका सोचना ठीक ही है।

क्या शेष दौरेमें शामिल प्रान्तोंके अध्यक्ष या मन्त्री लोग अपने-अपने सहकर्मियोंसे परामर्श करके संक्षेपमें अपनी-अपनी राय मुझे तार द्वारा भेजेंगे ?

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, ८-५-१९३४

४९०. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

८ मई, १९३४

चि० अमला,

इस समय रातके ठीक सवा दो बजे हैं। कलमकी स्याही चुक गई है। इसीलिए पेन्सिलसे लिख रहा हूँ। आशा है, अब तुम्हारा मन शान्त होगा। जाहिर है, तुम ऐसा नहीं मानतीं कि अन्ततः सब-कुछ ठीक ही होता है और आखिरमें सत्यकी विजय होती ही है। यदि सचमुच मानती हो तो तुमको मेरी हिफाजतके लिए इस प्रकार चिन्ता नहीं करनी चाहिए जैसी तुम कर रही हो। यदि मेरी आज्ञा मानो, तो तुम, मेरे या मेरे कामोंके बारेमें किसी तरहकी कोई चिन्ता किये बिना, अपने काममें लगी रहो। मैं बिलकुल स्वस्थ और प्रसन्न हूँ। और ऐसी ही तुमको होना चाहिए। आशा है कि वहाँकी गर्मी तुमको बहुत ज्यादा परेशान नहीं करती होगी।

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय,

४९१. पत्र : अमतुस्सलामको

८ मई, १९३४

चि० अमतुस्सलाम,

तू अब निश्चिन्त हो जाये तो अच्छा हो। तुझे बम्बई जानेकी छूट है। तुझे अर्शका ऑपरेशन करा लेना चाहिए। यदि तू कहे तो डॉक्टरके लिए पत्र लिख भेजूँ। शर्मा जैसा कहे वैसा करना। अपनी सामर्थ्यसे बाहर मत जाना। मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०४) से।

४९२. भाषण : सार्वजनिक सभा, पुरीमें[1]

८ मई, १९३४

गांधीजी ने नागरिकोंको नयी व्यवस्थाका कुछ आभास दिया। उन्होंने कहा कि मैं बहुत खुश हूँ कि मेरी पद-यात्रा[2] जगन्नाथपुरीसे, पूर्वी भारतके उस श्रेष्ठतम तीर्थ-राजसे आरम्भ होगी, जहाँ सभी हिन्दुओंको समान रूपसे जगन्नाथका प्रसाद मिलता है। पद-यात्रा हरिजन-आन्दोलनके आध्यात्मिक स्वरूपकी ओर ध्यान दिलाती है। इतिहासके अध्ययन द्वारा प्रमाणित, मेरे अपने अनुभवने मेरे अन्दर यह विश्वास पैदा कर दिया है कि सभी सवारी गाड़ियाँ, यहाँतक कि बैलगाड़ी भी, आध्यात्मिक शक्तियोंको अबाध रूपसे काम करनेमें सहायता पहुँचानेके बदले, उसमें बाधा ही डालती हैं। हमारे सामने एक बड़ा दुष्कर कार्य है और अस्पृश्यताका घुन हमारे समाजको इतना खोखला कर चुका है कि उसके निवारणके लिए हमें त्याग और तपकी अपनी पूरी शक्ति लगा देनी पड़ेगी। इसीलिए मेरे मनमें यह विचार दिन-दिन प्रबलतर होता गया है कि जनतातक अपना सन्देश पहुँचानेके लिए मुझे रेलगाड़ी और मोटरका इस्तेमाल त्यागकर जितनी बन सके, पद-यात्रा ही करनी चाहिए। परन्तु वैद्यनाथमें तो यह विचार बस मुझपर एकदम हावी ही हो गया। मैंने बहुत पहले महसूस कर लिया था कि इस देहको बिलकुल जनताकी दयाके भरोसे ही छोड़ देना चाहिए,

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। गांधीजी सभा-स्थलतक पैदल ही गये। भाषणसे पहले गोपबन्धु दासकी मूर्तिका अनावरण किया।

२. उन्होंने यहाँसे उड़ीसाका शेष दौरा पूरा करनेतकके लिए सभी गाड़ियोंका इस्तेमाल त्याग दिया।

उसे ही सौंप देना चाहिए और मैं यह भी समझता हूँ कि यदि भगवान् मेरी देहको सेवाका एक साधन बनाये रखना चाहता है तो उसके हाथ इतने लम्बे हैं कि वह हर प्रकारकी साजिशोंसे उसे बचा ही लेगा। अपनी चमड़ी बचानेकी खातिर मुझे सवारी गाड़ियोंका सहारा लेना पड़े, यह स्थिति मेरे लिए पीड़ाजनक होगी। पुलिस तो अपना कर्त्तव्य करती है, लेकिन मुझे इस बातसे बरबस शर्मिन्दगी महसूस होती है कि उनको सम्भावित शरारतोंसे मेरी रक्षा करनी पड़ती है। मैंने इन सभी बातोंका खयाल करके ही अपना यह निर्णय किया है। मैं जो सन्देश दे रहा हूँ, यदि उसमें जीवन्त सत्य है तो उसे स्व-प्रकाशित और स्व-प्रचारित सन्देश बनकर अपने विचार-बलसे ही करोड़ों लोगोंतक पहुँचना चाहिए। इसलिए यदि इसके परिणाम मेरी आशाके अनुसार नहीं निकलते तो मैं अपने महान् उद्देश्यपर शंका करनेकी बजाय इस सन्देशको वहन करनेकी अपनी ही योग्यतापर शंका करूँगा। कल मैं पुरी-कटक मार्गपर स्थित गाँवोंका अपना दौरा आरम्भ करूँगा। आप मेरे प्रयासको अपना आशीर्वाद दें।

उन्होंने अपने सनातनी विरोधकर्त्ताओंको आश्वस्त करते हुए कहा कि मैं इस महान् मन्दिरके सामने वचन देता हूँ कि जहाँतक मेरा बस चलेगा, हरिजनोंके लिए सभी मन्दिर, मन्दिर जानेवालोंकी सहमतिसे ही खोले जायेंगे, इसके बिना नहीं, और इसमें बल-प्रयोग कभी भी नहीं किया जायेगा।

आप लोग भी बड़ी खुशीसे मेरी इस तीर्थ-यात्रामें शामिल हो सकते हैं, लेकिन आपको मेरे चरण-स्पर्श करने या मुझे घेरकर चलनेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। आपको तीर्थ-यात्रियोंके पीछे चलना चाहिए, आगे या उनसे कन्धे सटाते हुए कभी नहीं चलना चाहिए और उनकी हिदायतें माननी चाहिए। लोगोंको शोर किये बिना शान्तिपूर्वक चलना चाहिए और अपने खाने तथा रहनेका प्रबन्ध स्वयं करना चाहिए। गाँववालों पर इसका कोई भार नहीं डालना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-५-१९३४

४९३. पत्र : उत्तमचन्द शाहको

पुरी
९ मई, १९३४

चि० उत्तमचन्द,

कलसे पैदल हरिजन-यात्रा आरम्भ हो जायेगी।[1] किन्तु वह तो शहरमें ही होगी। आज हमें गाँवमें जाना है। इस समय सुबहके तीन बजे हैं और मैं अधिकसे-अधिक पत्र निबटा देना चाहता हूँ। तुम्हारा पत्र अवश्य मिलना चाहिए था। जैसा तुम्हें लगा वैसा ही अन्य बहुत-से कार्यकर्त्ताओंको भी लगा है। मेरे निर्णयसे आघात तो पहुँचा है। किन्तु उन्हें भी यह लगा है कि उनका बोझ हलका हो गया। सहयोगी कार्यकर्त्ताओंकी अब और भी कड़ी परीक्षा होनेवाली है। उन्हें मूक भावसे शास्त्रीय पद्धतिके अनुसार रचनात्मक कार्य करते रहना है। उनकी सादगी, सत्यवादिता और सहनशक्ति बढ़नी चाहिए। उन्हें गाँवोंका निकटसे परिचय प्राप्त करना चाहिए। तुम दोनों अपना स्वास्थ्य सुधार लो।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

और कुछ लिखनेका मुझे समय नहीं है।

उत्तमचन्द
कस्तूरबा वणाटशाला
मरोली, बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे
वाया – नवसारी

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४४१) से।

४९४. पत्र : रामनन्दनको

९ मई, १९३४

भाई रामनन्दन,

तुमारे साहसमें तुमको सफलता मिले और तुमारी सेवा-साधना बढ़ती रहे।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९६) से।

१. वास्तवमें पद-यात्रा ९ मईको ही शुरू हुई थी।

४९५. पत्र : बलवन्तसिंहको

९ मई, १९३४

भाई बलवंतसिंह,

तुमारा खत मिला। तुमको आस्ते-आस्ते मेरे निर्णयकी योग्यता प्रतीत हो जायगी। तुमारे ऐसे सरल स० भंग [सविनय अवज्ञा] करनेवाले काफी थे। साथीओंकी तूटीसे [त्रुटिसे] भिन्न भी अध्यात्मिक कारण निर्णयके लिये थे। अनुभव नित्य बता रहा है कि निर्णय बहूत ही योग्य था। अब तुमारे सर पे ज्यादा जिम्मेवारी आई है। तुमारी रचनात्मक शक्तिकी, तुमारी श्रद्धाकी, तुमारी दृढ़ताकी अच्छी परीक्षा होगी। नारणदास जो कहे वही करो।

रचनात्मक कार्य करते हुए कोई कुछ बाधा डाले तो उसका उत्तर देना। फिर भी जेल जाना पड़े तो सहन करना।

अनिवार्य कारण पैदा होनेसे स० भं० योग्य और कर्त्तव्य भी हो सकता है।

मेरे जेल जानेके बाद तो बहारवाले मति अनुसार करेंगे। तुमारे इसमें भी नारणदास कहे ऐसा ही करना। इतना याद रखो कि जेल जानेका कोई स्वतन्त्र धर्म नहि है और उसके लिये योग्यता प्राप्त करनी पड़ती है।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। वजनका पता नहि है। मेरी पैदल-यात्राकी कथा तो पुरानी हुई।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८७०) से।

४९६. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

९ मई, १९३४

मुझे यह बतलाते हुए प्रसन्नता हो रही है कि आज सुबह जब मैंने इस प्रस्ताव[1] के बारेमें उत्कलके कार्यकर्त्ताओंके साथ चर्चा की तो उन्होंने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया और इस प्रस्तावित कदमके आध्यात्मिक महत्त्वको समझ लिया। बेशक, उन्हें इस बातको लेकर परेशानी थी कि कुछ स्थानोंको दौरेके कार्यक्रमसे हटा देनेपर स्थानीय कार्यकर्त्ताओं और आम जनताको घोर निराशा होगी, लेकिन मैंने उनसे कहा कि जब वे देखेंगे कि मेरे सन्देशकी वास्तविकताको जनता आजकी अपेक्षा अधिक शीघ्रतासे समझ रही है तो उनकी निराशा हर्षमें बदल जायेगी।

१. देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", पृ० ५०९-११।

मुझे आशा है कि मेरे सहकर्मी इस समाचारको गाँव-गाँवमें पहुँचा देंगे और ग्रामवासियोंको मेरे उद्देश्यका महत्त्व समझा देंगे। सभी प्रकारके नारे बन्द कर दिये जाने चाहिए। कहीं भी हड़बड़ी और हो-हल्ला नहीं होना चाहिए और जहाँ भी सभाएँ की जायें, वहाँ जनताको मेरा सन्देश शान्तिपूर्वक सुननेके लिए तैयार रहना चाहिए। मेरे पैर छूनेकी आदतको प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए। पद-यात्राके दौरान यदि लोग मेरे पैर छूनेका आग्रह करेंगे, तो उससे मेरी स्थिति बहुत अटपटी हो जायेगी। जहाँ मुझे अब नहीं जाना है, उन स्थानोंके कार्यकर्त्ताओंको मेरी सलाह है कि वे यदि चाहें तो अपनी-अपनी थैलियाँ उन गाँवोंमें लेकर आ जायें जहाँ मैं जानेवाला हूँ।

यदि जनता मेरी इस तीर्थ-यात्राका पूरा महत्त्व समझती है, तो सचमुच मुझे आशा करनी चाहिए कि समूचे भारतसे नहीं तो उड़ीसाके सभी भागोंसे तो अवश्य ही मुझे थैलियाँ मिलेंगी। यदि प्रान्तीय कार्यकर्त्ताओंने इस कदमका महत्त्व समझ लिया है तो वे मुझे अपने प्रान्तोंमें जाकर घूमनेसे छुटकारा दिला देंगे और मुझे, पटनामें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाग लेनेके बाद, उड़ीसाका शेष दौरा इसी तरह पूरा कर लेने देंगे। मुझे लगता है कि उड़ीसाका मेरा दौरा समूचे भारतका दौरा करनेके बराबर ही है। इस तीर्थ-यात्रामें बार-बार व्यवधान डाले जानेसे यह उतनी प्रभावकारी नहीं रह जायेगी। मेरे अपने तईं यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि शेष प्रान्तोंमें कुछ दिनकी पद-यात्रा करनेके लिए बार-बार यह दौरा बीचमें छोड़नेकी अपेक्षा यह कहीं अधिक प्रभावकारी रहेगा कि मैं लगातार यहीं पद-यात्रा करता रहूँ। कार्यकर्त्ताओंको उद्देश्यकी खातिर ही मुझे अपने बीच बुलानेका विचार त्याग देना चाहिए। मैं चाहूँगा कि प्रान्तोंके कार्यकर्त्ता मेरे इस प्रस्तावपर विचार करके मुझे अपनी राय यथाशीघ्र तार द्वारा सूचित कर दें।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-५-१९३४

४९७. भाषण : हरेकृष्णपुरमें

९ मई, १९३४

आजका दिन बड़ा शुभ है। अबतक हरिजन-आन्दोलन मोटरों और अन्य वाहनोंमें यहाँ-वहाँ जाकर चलाया जा रहा था। मैंने इनपर हजारों-हजार मीलोंकी यात्राएँ की हैं। फिर भी, मुझे आन्दोलनसे सन्तोष नहीं मिल पाया। बहुत सोच-विचार और चर्चाओंके बाद, मैंने अब पद-यात्रा करते हुए अपना सन्देश जनता तक पहुँचानेका निर्णय किया है, जैसा कभी हमारे ऋषि-मुनि किया करते थे। इधर की कुछ मध्ययुग-जैसी घटनाओंके कारण मुझे यह तरीका अपनाना पड़ा है। मैंने अपने अनुभवसे सीखा है कि मोटरों तथा अन्य वाहनोंपर यात्रा करनेसे जो वातावरण बनता है वह पद-यात्रासे बनने वाले वातावरणसे सर्वथा भिन्न होता है। मैं देखता हूँ कि ब्राह्मण और अन्य सवर्ण हिन्दू हरिजनोंसे बिलकुल ही अलग रहते हैं।

मैं यह भी देखता हूँ कि यहाँ ऊँच-नीचका भेदभाव मौजूद है। इससे मेरी भावनाओंको ठेस लगी है। ब्राह्मणोंमें घमंड है और वे समझते हैं कि वे हिन्दुओंमें सबसे श्रेष्ठ हैं। यह हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनके घरोंकी सफाई करायें। मैं यहाँ हरिजन-सेवाके सिलसिलेमें आया हूँ, जिसकी हम इतने दिनोंसे उपेक्षा करते रहे हैं। आपने यदि मेरी सीखोंको भली भाँति समझ लिया है, तो आप उनके पास जाइए, उनको अपने भाई कहिये और स्वयं हरिजन-सेवामें लग जाइए।

चूँकि हिन्दी ही हमारे पारस्परिक व्यवहारकी सर्वसामान्य भाषा है, इसलिए आपको जितनी बने उतनी हिन्दी सीखनेका प्रयत्न करना चाहिए। इसके कई फायदे हैं। चूँकि काम न रहनेसे आपका कुछ समय बर्बाद जाता है, इसलिए आपको कुछ और धन्धे भी अपनाने चाहिए, जो हाथ-कताई, धुनाई, पिंजाई या बुनाईमें से कुछ भी हो सकता है।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, ९-५-१९३४

४९८. पत्र : अमतुस्सलामको

[९ मई, १९३४ के पश्चात्][1]

प्यारी बेटी अम्तुलसलाम,

तुम्हारे सब खत ध्यानसे पढ़ गया हूँ। तुम खामखा रंज करती है। एक तरफ मेरें हुक्मके इन्तजारीमें रहती हो। दूसरी तरफसे हरएक किस्मके खयाल करती है। जो हुक्म-बरदार रहते हैं, वे कभी दुःखी नहीं रहते हैं। तुम्हारी तबीयत काम न कर सके, ऐसे काम करनेका तुम्हारे खयालतक नहीं रखना चाहिये। तुम्हारी अम्माके पास जरूर जाना। बवासीरके लिए आपरेशन करा लेना। मेरे पास आनेका मोह छोड़ देना। पैदल मुसाफिरी तुमसे हो नहीं सकती। देहातोंमें खाना भी चाहें ऐसा नहीं मिलता है। मेरा काम करना मेरे साथ ही रहने जैसा हुआ। तुम्हारे धीरज रखना जरूरी है। आश्रममें ही रहना है। ऐसा क्यों मान लेती हो कि अब जेलमें जाना ही नहीं है। तुम्हारे उसकी तैयारी करनी है। तैयारीमें स्थिर बनना, मोह छोड़ना, जिद नहीं करना वगैरा है। डाक्टरको सताती हो सो भी अच्छा नहीं है। अब क्या लिखूँ?

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०५) से।

१. **बापूके पत्र–८ : बीबी अमतुस्सलामके नाम**में इस पत्रके साथ दी गई सम्पादकीय टिप्पणीके अनुसार यह पत्र उड़ीसामें गांधीजी की पद-यात्राके दौरान लिखा गया था; यह पद-यात्रा इसी तारीखको आरम्भ हुई थी।

४९९. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

चन्दनपुर
१० मई, १९३४

बा,

इस बार तेरा पत्र अभीतक नहीं मिला। यह पत्र मैं पुरीसे दस मील दूर स्थित एक गाँवसे लिख रहा हूँ। इस समय रातका एक बजा है। दातुन करके मैंने एक कार्ड लिखा और अब तेरा पत्र हाथमें लिया है। परसों मैंने यह निश्चय किया कि मुझे अब पैदल दौरा करना चाहिए। रेलगाड़ी, मोटर या बैलगाड़ीसे यात्रा करते हुए भी धर्म-प्रचार नहीं किया जा सकता। यह तो पैदल ही किया जा सकता है। स्थानीय नेता और ठक्कर बापा भी आखिर सहमत हो गये। और मैंने उसी दिनसे पद-यात्रा शुरू कर दी। इससे मुझमें नयी शक्ति आ गई। कल आठ मीलसे अधिक की पद-यात्राकी, किन्तु मुझे कुछ पता नहीं चला। असमय भी मैं तरोताजा उठा हूँ। हालाँकि लोगोंकी भीड़की कोई सीमा नहीं थी किन्तु फिर भी शान्ति रही। धक्का-मुक्की बन्द हो गई। और ऐसा लगा कि अपेक्षाकृत काम अधिक हुआ है। दलमें तो वही लोग थे। बहनोंमें सुशीला, प्रभावती, ओम और मीरा तो हैं ही। इनके अतिरिक्त पुरवाई,[1] सोनामणि जो आश्रममें थी, और गोपबन्धु बाबूकी पत्नी रमाबाई भी हैं। जीवरामभाई[2] भी दलके साथ हैं। और इसी प्रकार पुरुषोत्तमके ससुर हरखचन्द भी हैं। ये सब लोग कटकसे अलग हो जायेंगे। मुझे कटकसे तीन दिनके लिए पटना जाना पड़ेगा। वहाँ अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक है। मेरी इच्छा तो वहाँसे फिर वापस उड़ीसा लौटकर यात्रा पूरी करनेकी है। अन्य सहयोगी कार्यकर्त्ताओंसे मिलकर ही इसका निश्चय हो सकेगा।

पुरीमें कुसुम देसाई मुझसे मिली थी। वह अपने सम्बन्धियोंके यहाँ कलकत्ता गई है। सम्भवतः वह पुनः पटना आकर मुझसे मिल जायेगी। वसुमती वर्धामें है। रामदास, नीमू और बालक आनन्दपूर्वक हैं। इसी प्रकार देवदास, लक्ष्मी और उसका बालक तथा हरिजी, लक्ष्मी और उसका बालक भी आनन्दपूर्वक हैं। प्यारेलाल अब भी राजेन्द्रबाबूके साथ है। वालजीभाई, बाल और पृथुराज मेरे साथ हैं। चन्द्रशंकर हमारे साथ नहीं है। वह अभीतक बीमार है। इसके साथ 'गीता-प्रवेशिका' या 'रामगीता' भेज रहा हूँ। इसे समझनेमें कठिनाई नहीं होगी। यदि दूसरी प्रतिकी आवश्यकता हो तो मँगा लेना और उसे वहीं छोड़ आना। छूटनेके बाद तुझे क्या करना चाहिए, यह तो

१. जीवराम कोठारीके साथ काम करनेवाली महिला।

२. कच्छके जीवराम कोठारी।

मैं लिख ही चुका हूँ। इसके बावजूद तुझे जैसा उचित लगे, वैसा करना। उत्तमचन्द का पत्र मिला था। वह मरोली गया है और उसकी पत्नी भी साथ है।

सभीको,

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना बाने पत्रो, पृ० २५-६

५००. पत्र : जितेन्द्रनाथ कुशारीको

पटनाके पतेपर
१० मई, १९३४

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। अन्तर्जातीय खान-पान और विवाह यदि कोई व्यक्तिगत रूपमें करे तो मुझे उसपर बिलकुल आपत्ति नहीं, लेकिन मेरी पक्की राय है कि इन दोनों चीजोंको, अपने उद्देश्यकी खातिर ही, आन्दोलनके कार्यक्रममें शामिल नहीं करना चाहिए। आज हरिजनोंको जिन बर्बरतापूर्ण निर्योग्यताओंको सहन करना पड़ता है, उनसे इन दोनोंका आधार भिन्न है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री जितेन्द्रनाथ कुशारी
डाकखाना नसानकर
जिला ढाका
बंगाल

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१९१) से।

५०१. पत्र : भाई परमानन्दको

१० मई, १९३४

प्रिय भाई परमानन्द,

आपका निजी पत्र मिला। सचमुच मैं साम्प्रदायिक समझौतेके प्रश्नपर काफी सोच-विचार करता रहा हूँ। मैंने सार्वजनिक रूपसे तो कुछ नहीं कहा है, लेकिन मैं यह अवश्य महसूस करता हूँ कि साम्प्रदायिक निर्णयको[1] समझौतेके बिना कदापि

१. इसके द्वारा विभिन्न प्रान्तीय विधान परिषदोंमें विभिन्न अल्पसंख्यक समुदायोंके स्थानोंकी संख्या निर्धारित की गई थी। इन स्थानोंके लिए पृथक् साम्प्रदायिक निर्वाचक-मण्डलोंमें मतदाताओं द्वारा मतदानके आधारपर निर्वाचन होने थे।

नहीं बदला जा सकता, और जबतक हम अपनी ओरसे उदारताका परिचय नहीं देते तबतक कोई भी समझौता असम्भव है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-८-१९३४

५०२. पत्र : एन० वेंकटकृष्णय्याको

वर्धाके पतेपर
१० मई, १९३४

प्रिय मित्र,

मैं श्री सीताराम शास्त्रीकी मार्फत आपके दिलचस्प प्रयोगके बारेमें जानकारी पाता रहता हूँ। कृपया लिखिए कि आपके यहाँ (१) स्त्री-पुरुष कार्यकर्त्ताओंकी संख्या कितनी है, (२) विभिन्न वस्तुओंका प्रति माह उत्पादन कितना होता है, (३) विनिमयका क्या तरीका है, आप एक जोड़ी जूतों या एक लोटेके बदले कितनी सब्जी या कितना अनाज देंगे, (४) किस-किस नंबरका सूत तैयार होता है, (५) क्या फार्ममें कपास पैदा की जाती है और, (६) प्रति घण्टा तैयार होनेवाले सूत, धुनाई, पिंजाई, बुनाईकी मात्रा कितनी रहती है?

आपका,
मो० क० गांधी

श्री एन० वेंकटकृष्णय्या
खद्दर संस्थानम्
बैजवाड़ा
आन्ध्र

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२४१) से।

५०३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१० मई, १९३४

भाई वल्लभभाई,

आज रातको एक बजे बिलकुल तरो-ताजा उठ बैठा हूँ। इससे चौंकना नहीं, नाराज मत होना और चिन्ता भी न करना। यह तो ईश्वरकी महिमा है। एक गाँवमें जमीनपर पड़े पुआलके बिस्तरपर बैठा हुआ हूँ। पासमें एक तरफ मीरा वगैरह सो रही हैं और दूसरी तरफ ठक्कर बापा आदि हैं। इस गाँवका नाम चन्दनपुर है। पद-यात्राका आज तीसरा दिन है। हम पुरीसे १० मील दूर हैं; या शायद ८ हो। कल सवेरे हमने पुरीसे कूच किया। जैसे तुमने दांडी-कूचकी योजना बनाई थी उसी तरह ठक्कर बापाने इसकी योजना बनाई है।

पुरीमें मैं बहुत बेचैन हो गया था। रेल और मोटरसे यात्रा करके थक गया था। मैंने अपना दुःख बापा और दूसरे साथियोंके सामने रखा। सबको मेरे सुझावकी जरूरत तो महसूस हुई, मगर डरते थे। बादमें शान्त हुए। पुरीमें ही हमने निश्चय किया और अमल भी वहीं से किया। पुरीकी सभामें मैं पैदल चलकर गया। सनातनियोंका जोश उतरा हुआ जान पड़ा और शोरगुल आदि भी कम हो गये। कल सवेरे जब हमने प्रयाण किया, तबतक किसीको इसकी खबर नहीं लगी थी, परन्तु जिस गाँवमें हमने पहला मुकाम किया, वहाँ जैसे-जैसे दिन चढ़ता गया वैसे-वैसे लोग बढ़ते गये। शामको चन्दनपुर आते-आते तो रास्ता लोगोंसे खचाखच भर गया और वहाँ पहुँचते ही जो सभा हुई उसमें चारों तरफसे आये मनुष्य उमड़ पड़े। हम गाँवके किनारे खुलेमें पड़े हैं। मेरे लिए पर्णकुटी-जैसा कुछ बनाया गया है, परन्तु वह दिखावा ही है। साथमें तो जो लोग थे, वही हैं। उनमें हरखचन्द, जीवराम और पुरबाई शामिल हो गये हैं। यहाँके नेता तो हैं ही। उनमें गोपबन्धु चौधरीकी पत्नी भी हैं और आश्रममें रही हुई सोनामणि है। उड़ीसाकी यात्रा इस तरह होगी। दूसरे प्रान्तोंसे भी मैंने प्रार्थना तो अवश्य की है कि मुझे इसी तरह बाकीका सफर पूरा करने दें। और यदि मैं पद-यात्रा करूँ, तब तो अलग-अलग प्रान्तोंमें ले जानेका आग्रह भी लोग छोड़ दें। ऐसा हुआ तो यह सारी यात्रा यहीं पूरी कर लूँगा। हाँ, यह जरूर सोचना होगा कि बरसात शुरू हो जानेपर क्या होगा। परन्तु उस वक्त अगर पैदल न चला जा सके, तो मैं एक जगह बैठ जाना पसन्द करूँगा। देखूँगा क्या होता है। मुझसे सब साथी पटनामें मिलेंगे। वहाँ ज्यादा पता लगेगा। मैं जितना उन्हें समझा सकूँगा, उतना समझाने की कोशिश करूँगा। मैं समझता हूँ कि यह कदम समझनेमें तो तुम्हें कठिनाई नहीं हुई होगी। तुम यह जानते हो कि जब मेरे किसी कदमका तुम समर्थन कर देते हो तो मुझे अच्छा लगता है। लेकिन मुझे यह भी अच्छा नहीं लगेगा कि मुझे खुश करनेके लिए तुम अपनी मंजूरी दो।

राँचीसे रवाना होते समय गम्भीर मोटर दुर्घटना हो गई, यह तो तुम्हें पता चल ही गया होगा। "जेने राम राखे तेने कुण चाखे?" यह धीरा भगतका पद है। कैसा अनुभव-वचन है!

आतंकवादियोंको कौन समझाये? सरकारको कौन समझाये? देखो न, दार्जिलिंगमें कैसा पागलपन किया!

क्या मैंने साथकी 'गीता-प्रवेशिका' तुम्हें नहीं भेजी थी?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो—२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १००-१

५०४. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१० मई, १९३४

भाई घनश्यामदास,

यह खत पुरीसे करीब दस मईल दूर चंदनपुर देहात है, वहांसे लिख रहा हूं। पदयात्राकी बात तुमको जच जायगी, ऐसा मुझे विश्वास है। मेरा दिल तो इस ओर कबसे था लेकिन ऐसी तीव्र भावना नहिं थी जैसी अब हो गई। उसमें बकसर, देवघरका काफी हिस्सा है ऐसा प्रतीत होता है। देवघरकी घटनामें पंचानन तर्करत्न-जैसा विद्वान भी था उसमें संदेह नहिं है। ऐसे अंधकारको रेलगाड़ीमें बैठकर कैसे मिटा सकें? रुपये इकट्ठे करनेकी तो बात भी मेरे मनसे हट गई। यह काम ही पैसेका कम है। भावपरिवर्तन तो इस यात्रासे अधिक होनेका संभव पाता हूं। अब यदि दूसरे प्रांतके साथीओंको समजा सकुं तो मैं यात्रा उत्कलमें ही करना पसंद करूंगा। पटना जाना भी नापसंद लगता है।

नेशनल कॉलके बारेमें मेरा अभिप्राय ठीक लगा होगा। सहानीने लंबा खत राजेन्द्रबाबु पर भेजा है। उसमें लिखता है जैसे वह अथवा मैं कहुँगा ऐसा वह अवश्य करेगा। राजेन्द्रबाबुका खत मिला होगा। अनसारी भी बिलकुल अनुकुल थे।

तुमारा प्रास्पेरिटी प्लान पढ़ चुका हूं। कल्पना अच्छी है। लेकिन तुमारी और चीजें मुझे आकर्षक जंची है ऐसे यह नहिं। इसमें प्लेनकी आवश्यकताके बारेमें काफी मसाला है। प्लान नहिं है। प्लान ऐसी बननी चाहिये जिसका सरकार और लोग आजसे अमल कर सके। कोई उसका अमल भले न करे। ऐसी रचना तुमारी बुद्धिसे अतीत नहिं है। सोचकर ऐसा कुछ बन सके तो किया जाय। मेरा विश्वास है कि इस रचनामें चरखा मध्यबिंदु है। यदि यह नहिं है तो उसका विवेकपूर्वक छेदन करना चाहिये। इसको अद्धर नहिं रखना चाहिये। सरकार अर्थात् स्टेटकी सहाय मिले तो करोड़ों रुपये एक क्षणमें बच जाते हैं। सब प्लान कुछ पश्चिमके ढांचेमें हि पड़नी चाहिये ऐसा तो नहिं है। मैं इस बारेमें काफी ख्याल रखता हूं यह तो तुमको मालुम है। ये खयाल मजबूत हुए है। देखो, चर्खेके अभावसे लोग आलसी बन रहे हैं। पशुशास्त्रके अज्ञानके कारण पशु हमको खा रहे हैं। चर्खा और पशुके शास्त्रका अभ्यास और अमलसे और छोटे खेतोंके प्रश्नको हल करनेसे हिंदुस्तान ऐसा आबाद हो सकता है जैसा दूसरा कोई मुलक आज तक नहिं हुआ है। कभी मिलेंगे तब बातें करेंगे।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

स्वास्थ्य अच्छा होगा। मेरे अक्षर पढ़नेमें तकलीफ पड़े तो मैं इंग्रेजीमें लिखूं अर्थात टाइप करवाउँ।

पत्र (सी० डब्ल्यू० ७९५९) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

५०५. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको

कदवा
१० मई, १९३४

सर जॉन एण्डरसनकी[1] हत्याका यह प्रयास निस्सन्देह अत्यन्त दुःखका विषय है।

जीवनके हर क्षणका अनुभव मेरे इस विश्वासकी और अधिक पुष्टि ही करता जाता है कि आजकल जीवनकी जिन सभी बुराइयोंसे निबटनेके लिए हिंसात्मक कार्य-वाहियाँ की जाती हैं, उनका एकमात्र उपचार अहिंसा है। बड़े दुःखकी बात है कि कुछ तरुण यह समझनेको तैयार ही नहीं कि बुराइयोंसे मुक्ति पानेका कोई छोटा और सरल मार्ग है ही नहीं। ये बातें मैं अहिंसाको मात्र एक निष्क्रिय स्थिति मानकर नहीं कह रहा हूँ। अहिंसाको जीवन्त रूपमें अपनानेसे जो शक्ति प्राप्त होती है, उससे अधिक क्रियाशील शक्तिकी जानकारी मुझे नहीं है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ११-५-१९३४

५०६. भाषण : शिवलीचकमें

[१० मई, १९३४][2]

मैं 'हरिजन' शब्दका प्रयोग क्यों करता हूँ? मनुष्य जिन लोगोंको त्याग देता है उन्हें ईश्वर अपना लेता है। सभी शास्त्र हमें इस बातकी शिक्षा देते हैं। गीतामाता हमें यही सिखाती है। अहल्या पत्थर बन गई थी। लोगोंने उसे त्याग दिया था। लोगों द्वारा परित्यक्त पाषाण-जैसी अहल्याको रामचन्द्रजी ने छुआ। उसे उनका अवलम्ब मिला। सवर्ण हिन्दुओंने अछूतोंको त्याग दिया है। इसलिए ईश्वरने उन्हें अपनी छत्रछायामें ले लिया है। इसीलिए वे हरिके जन या हरिजन हैं। जब हम स्वेच्छापूर्वक हृदयसे हरिजनोंको अपना लेंगे तो हम सब भी हरिजन हो जायेंगे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-६-१९३४

१. बंगालके गवर्नर। दो तरुणोंने ८ अप्रैलको उनपर पिस्तौलसे गोलियाँ चलाई थीं।

२. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजी रात बितानेके लिए शिवलीचकसे वीरपुरुषोत्तमपुर गये थे। गांधीजी १० मईको वीरपुरुषोत्तमपुरमें थे।

५०७. भाषण : वीरपुरुषोत्तमपुरमें[1]

१० मई, १९३४

गांधीजी ने कहा कि शास्त्रोंके अनुसार ब्राह्मणोंको[2] तप, समाज-सेवा और ब्रह्म या सत्यकी खोजमें रत रहकर धर्मकी सेवामें अपनेको खपा देना चाहिए। दुःखकी बात है कि आजकलके ब्राह्मण इतना ही नहीं कि अपने निर्धारित कर्त्तव्योंकी ओर कोई ध्यान नहीं देते और धर्मकी सेवा नहीं करते, बल्कि वे अपने-आपको धनी बनानेके लिए तरह-तरहके धन्धे भी करते हैं। सच्चे ब्राह्मणको विनम्रताकी मूर्ति होना चाहिए, उसे अपने ज्ञान या अपनी बुद्धिमत्ताका घमंड नहीं होना चाहिए। चूँकि उसका कर्त्तव्य है कि वह लोगोंको, ब्राह्मण तथा भंगी दोनों ही को, समान समझनेकी शिक्षा दे, इसलिए यदि वही अपने-आपको दूसरोंसे श्रेष्ठ समझने लगे तो वह ब्राह्मण ही नहीं रह जायेगा। और कोई भी ब्राह्मण, यदि उसमें अपने विश्वासोंके अनुरूप आचरण करनेका साहस न हो तो, ब्राह्मण कहलाने योग्य ही नहीं है। हमें एक ईश्वरके अतिरिक्त अन्य किसीका भय नहीं रखना चाहिए। दिव्य ज्ञानके साथ कायरताका मेल नहीं बैठता।

यह कहनेसे काम नहीं चलेगा कि पापियोंको मन्दिरोंमें प्रवेश नहीं दिया जा सकता। मन्दिर तो आध्यात्मिक अस्पतालोंकी तरह हैं, और पापियोंको, जो आध्यात्मिक रूपसे रुग्ण व्यक्ति हैं, उनमें जाकर इलाज करानेका अधिकार सबसे पहले मिलना चाहिए। मन्दिर तो पापियोंके लिए ही हैं, सन्तोंके लिए नहीं। और जब ऐसा कोई व्यक्ति है ही नहीं जो पूर्णतः निष्पाप हो, तो फिर इसके बारेमें किसी तरहका फतवा कौन दे सकता है? हम नित्य-प्रति अपनी प्रार्थनामें कहते हैं: "पापोऽहं पापकर्माहम्" (अर्थात् मैं पापी हूँ, मैं पापपूर्ण कर्म करता हूँ)। इसलिए यदि मन्दिर केवल निष्पापोंके लिए हों, तो फिर मन्दिरोंको समस्त मानव-समाजके लिए अपने द्वार बन्द कर देने पड़ेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-५-१९३४

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र)से उद्धृत।
२. यह गाँव पूरी तौरपर ब्राह्मणोंका ही था।

५०८. टिप्पणियाँ

प्रतिवाद

महाराजा बहादुर गिद्धौर इसी महीनेकी २ तारीखके अपने एक पत्रमें मुझे यह लिखते हैं:

> **देवघरमें दिये गये आपके भाषणकी समाचार-पत्रमें छपी एक प्रति अभी-अभी मुझे दी गई है। मैं अविलम्ब आपको सूचित कर रहा हूँ कि आपकी शंका बिलकुल सही थी कि जिन पर्चोंको मेरे आदेशसे जारी किया बतलाया गया है, उनके पीछे मेरा कोई आदेश सचमुच नहीं था और मुझे ऐसे पर्चोंकी कोई जानकारी नहीं।[1] निश्चय ही इस कथनमें कतई कोई सचाई नहीं है कि मैंने उनके साथ किसी भी रूपमें अपना नाम जोड़नेकी अनुमति दी थी।**
>
> **यह पत्र आपको अपनी स्थिति सर्वथा स्पष्ट करनेके लिए ही लिख रहा हूँ, और प्रस्तावित मन्दिर-प्रवेश विधेयकके बारेमें मेरे व्यक्तिगत विचार जाननेका कष्ट आपको दिये बिना, मैं कहता हूँ कि देवघरमें असत्यके प्रचार और साथ ही अशोभनीय प्रदर्शनोंपर आपने जो दुःख प्रकट किया है, उसमें मैं भी शरीक हूँ।**
>
> **यदि समाचार-पत्रोंमें प्रकाशनके योग्य समझें, तो आप इस पत्रको प्रकाशित कर सकते हैं।**

मुझे इस प्रतिवादसे खुशी है। ऐसे निरे असत्योंके साथ यदि महाराजा बहादुरने अपना नाम जुड़ने दिया होता, तो सचमुच बड़ी खेदजनक बात होती।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ११-५-१९३४

१. देखिए "भाषण: सार्वजनिक सभा, देवघरमें", पृ० ४७२-७६।

५०९. पत्र : आनन्द टी० हिंगोरानीको

११ मई, १९३४

प्रिय आनन्द,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं क्या कर रहा हूँ, यह तो तुम देखते ही हो। जब अच्छे हो जाओ, आसानीसे दस मील चल सको और गाँवके कठिन जीवन को बरदाश्त करने लायक बन जाओ, तब यहाँ आ जाना। इस बीच तुम्हें लगनके साथ हिन्दी पढ़नी और धुनना तथा कातना चाहिए।

विद्या यदि चाहे तो मुलतान जा सकती है।

सस्नेह,

बापू

[पुनश्च :]

यह तुम दोनोंके लिए है।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द टी० हिंगोरानी

५१०. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

११ मई, १९३४

चि० विद्या,

अलग लिखनेका समय नहिं है।

बापुके आशीर्वाद

माइक्रोफिल्मसे; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द टी० हिंगोरानी

५११. पत्र : दीवानचन्द रत्तीको

११ मई, १९३४

प्रिय मित्र,

मैं तो बस यही सलाह दे सकता हूँ कि उस व्यक्तिको अनदेखा कर दीजिए। जब आपकी पत्नी दृढ़ हैं, तो कुछ हो ही नहीं सकता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री दीवानचन्द रत्ती
कटरा बिहारीलाल
गली कासिमजान
लाल कुँआके पास
दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७७८) से।

५१२. पत्र : छगनलाल जोशीको

११ मई, १९३४

चि० छगनलाल,

यह पद-यात्रा आरम्भ कर देनेके बाद अब कुछ समय मिलने लगा है। तुम्हारा पोस्टकार्ड आज मिला। ऐसा लगता है कि मेरा इससे पहले लिखा पत्र तुम्हें नहीं मिला। यदि तुम चाहो तो अब भी सरकारको[1] यह पत्र लिख सकते हो: "मैंने गांधीजी का वक्तव्य पढ़ा है। आश्रमवासी होनेके नाते मैं उनके आदेशका पालन करनेको बाध्य हूँ। अतः जबतक उनकी ओरसे कोई दूसरा आदेश नहीं मिलता तबतक मेरी सविनय अवज्ञा स्थगित रहेगी। ऐसी स्थितिमें मैं प्रार्थना करता हूँ कि ब्रिटिश भारतमें प्रवेश न करनेका मुझे जो आदेश दिया गया है, वह वापस ले लिया जाये।" इसका उत्तर मिलनेपर ही ब्रिटिश भारतमें प्रवेश करना या फिर अभी कुछ दिन और इन्तजार कर सकते हो।

१. सरकारने छगनलाल जोशीको द्वारकामें रहने और ब्रिटिश भारतमें प्रवेश न करनेका आदेश दिया था।

यदि रमा वर्धा जाये तो अच्छा होगा। यदि वह ऐसा न करना चाहे तो जहाँ चाहे वहाँ रहकर अपनी इच्छानुसार सेवा-कार्य कर सकती है। इस सम्बन्धमें नारणदाससे विस्तारसे विचार-विमर्श कर लेना। पद-यात्रा करनेका मेरा निर्णय क्या तुम्हें पसन्द आया?

बापू

श्री छगनलाल जोशी
राष्ट्रीय शाला
राजकोट, काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५२१) से।

५१३. पत्र: छगनलाल जोशीको

[११ मई, १९३४ के पश्चात्][1]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

मैं यह समझता हूँ कि प्रतिबन्ध उठा लेनेके लिए प्रार्थना-पत्र देनेमें तुम्हें संकोच होता है। किन्तु निम्नानुसार लिख देखनेमें मुझे कोई नुकसान नजर नहीं आता:[2]

"सत्याग्रह आश्रमका सदस्य होने और इसलिए गांधीजी के अनुशासनमें रहनेके कारण मैंने सविनय अवज्ञा स्थगित करनेका निर्णय किया है। मुझे सविनय अवज्ञा करनेके आरोपमें कैदकी सजा दी गई थी और थाना जेलसे . . . निर्वासित कर दिया गया था। अब क्योंकि सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया है इसलिए मुझपर ब्रिटिश भारतकी सीमामें प्रवेश न करनेका जो प्रतिबन्ध लगाया गया है, क्या वह वापस लिया जा सकता है?"

अपना धर्म समझकर हमने जो कदम उठाया हो, उसकी जानकारी अधिकारियों को देने या उसके परिणामस्वरूप मिलनेवाली छूटकी माँग करनेमें संकोच नहीं होना चाहिए। इस प्रकारका पत्र लिखनेसे सरकारके रुखका पता चल जायेगा। किन्तु ऐसा करनेका मैं आग्रह नहीं करता। जबतक निषेधाज्ञा वापस नहीं ले ली जाती तबतक ब्रिटिश भारतमें प्रविष्ट होने और यदि वे निकाल बाहर करें तो चले जानेकी नीति उचित नहीं है। इससे कानून तो भंग होता ही है, और इसे सविनय भंग कदापि नहीं माना जा सकता। यदि यह सविनय भंग माना जाता हो तो भी तुम्हें वैसा

१. पत्रमें जिन बातोंका उल्लेख किया गया है, उनसे लगता है कि छगनलाल जोशीको ११-५-१९३४ को लिखे पत्रके बाद किसी समय यह पत्र लिखा गया होगा। **बापुना पत्रो – ७: श्री छगनलाल जोशीने**, पृ० २४३-४४ में यह पत्र उपर्युक्त तारीखके बाद ही दिया गया है।

२. अगला अनुच्छेद अंग्रेजीमें है।

नहीं करना चाहिए। स्वेच्छासे कानूनका पालन करनेसे सविनय अवज्ञाकी प्रचण्ड शक्ति उत्पन्न होती है। यदि सरकार अपनी सत्ताका बहुत अधिक प्रदर्शन करती है तो किसी दिन आत्म-सम्मानकी खातिर सविनय अवज्ञा करना हमारा कर्त्तव्य हो सकता है। फिर, इस बीच क्या काठियावाड़में कामकी कमी है? सेवा करते हुए हमें अपनी रुचि या अरुचिकी ओर बहुत ध्यान नहीं देना चाहिए। सेवा करनेका जब और जैसा मौका आ पड़े, हमें उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। हाल ही में मैंने जो-जो परिवर्तन किये हैं, आशा है, उन्हें तुम पूरी तरह समझ गये होगे। यदि तुम कुछ पूछना चाहो तो पूछ लेना।

फिलहाल तो यह कहा जा सकता है कि रमा ठीक जम गई है। तुम्हारे-जैसे लोगोंके कारण ही मैंने काठियावाड़ आना स्वीकार किया है। आशा है, परीक्षितलालको मेरा निर्णय पसन्द आया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३८) से।

५१४. तार: डॉ० विधानचन्द्र रायको

[१२ मई, १९३४के पूर्व]

यह तीर्थ-यात्रा पूरी फलदायक तभी हो सकती है जब इसे उत्कलमें जारी रखा जाये और समूचा भारत ऐसा माने जैसे यह प्रत्येक गाँवमें चल रही हो। यह एक आध्यात्मिक कसौटी है। इसलिए बंगालका दौरा त्यागनेका विचार है क्योंकि मध्य जूनके बाद उत्कलमें पद-यात्रा व्यावहारिक नहीं है। उसके बाद उगाही करने और नेताओंसे परामर्शके लिए कलकत्ता आ सकता हूँ। तार द्वारा सहमति भेजिए।[१]

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, १२-५-१९३४

१. डॉ० वि० च० रायने इसके उत्तरमें लिखा: "डॉ० अन्सारी और स्वयं मैं चिकित्सकोंकी हैसियतसे राँचीमें बंगालकी पद-यात्रा-सम्बन्धी आपके सुझावोंसे सहमत हुए थे। समाचार-पत्रोंमें और आपके तारमें समझाये गये आपके दृष्टिकोणकी हम कद्र करते हैं और पद-यात्राको उत्कलतक ही सीमित रखनेपर राजी हैं।"

५१५. सन्देश : गंजामकी जनताको[1]

[१२ मई, १९३४ के पूर्व][2]

मैं जानता हूँ कि शेष हरिजन-दौरा पद-यात्रा द्वारा पूरा करनेके मेरे निर्णयसे उन स्थानोंके कार्यकर्त्ताओं और ग्रामवासियोंको बहुत ही निराशा होगी जहाँ मेरे पहुँचनेकी आशा थी। जाहिर है कि इससे वे सभी स्थान कार्यक्रमसे कट गये हैं जहाँ केवल रेल या मोटरसे ही पहुँचा जा सकता है। मुझे लगा कि अपने उद्देश्यके धार्मिक पक्षको यथासम्भव अधिकसे-अधिक उभारकर पेश करनेके लिए पद-यात्राके प्राचीन सरल तरीकेको अपनाना परमावश्यक हो गया है। निर्णयको और नजदीक लानेके अन्य कई कारण भी हैं। मैं चाहता हूँ कि आप इस प्राचीन तरीकेके मर्मको समझें और महसूस करें कि चन्द गाँवोंकी पद-यात्रा करके मैं आध्यात्मिक रूपमें उड़ीसाके सभी गाँवोंकी यात्रा कर लूँगा। रेलगाड़ी या मोटरसे जब मैं लम्बी-लम्बी दूरियाँ तय करता था उस समय भी मनमें ऐसा माननेकी आवश्यकता तो थी ही। परन्तु आध्यात्मिक प्रगतिके लिए अधिक गतिशीलता शायद हानिकारक होती है। आध्यात्मिक सन्देश तो सहज यात्रा-पद्धतिके द्वारा ज्यादा अच्छी तरह प्रसारित होता है। इसलिए मैंने जो मानसिक रुख अपनानेका सुझाव दिया है, उसे पचास मील प्रति घण्टेकी चालसे भागनेकी अपेक्षा पद-यात्रा करते हुए कहीं अधिक सरलतासे अपनाया जा सकता है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि मुझे इस पूरे प्रान्तके कार्यकर्त्ताओं तथा ग्रामवासियोंका हार्दिक सहयोग मिला, तो इस पैदल तीर्थ-यात्राके ऐसे परिणाम हमारे सामने आयेंगे जो मूल कार्यक्रमपर अमल करनेसे हासिल नहीं हो सकते थे। आपसे मेरा अनुरोध है कि इस तीर्थ-यात्राको आप कार्यक्रमकी यथार्थ पूर्त्तिसे कहीं अधिक बड़ी पूर्त्ति मानें। विभिन्न स्थानोंसे आये कुछ सहकर्मियोंका बड़ा आग्रह था कि मैं अपना निर्णय बदल दूँ और मूल कार्यक्रमके मुताबिक चलना शुरू कर दूँ; परन्तु उनका तर्क मुझे तनिक भी कायल नहीं कर पाया, और फलतः पुरीमें उस समय मौजूद कार्यकर्त्ताओंसे परामर्श तथा लगातार प्रार्थनाओंके पश्चात् लिये गये निर्णयका त्याग नहीं किया जा सका। जब मेरे मनमें यह विश्वास स्पष्ट रूपसे जम गया है कि इस दौरेको पद-यात्रा करके ही पूरा करना चाहिए तब आप यह तो नहीं चाहेंगे कि मैं इसे अब यन्त्रवत् उसी प्रकार पूरा करूँ जिस प्रकार यह विश्वास मनमें उत्पन्न न होनेसे पहले करता। इन सात अत्यन्त ही मूल्यवान दिनोंके दौरान सब लोग मुझे इसी प्रकार अपना सहयोग दे सकते हैं कि वे हरिजन-बस्तियोंमें तालाबों,

१. यह सन्देश गंजाम गांधी स्वागत-समितिके मन्त्री, जयमंगल रथकी मार्फत भेजा गया था।

२. साधन-सूत्रमें इस विवरणपर १२ मई की तारीख पड़ी है।

कुओं, सड़कों इत्यादिकी सफाईका ठोस काम करें; विभिन्न नगरपालिकाओंको हरिजनोंके प्रति उनके कर्त्तव्योंका निर्वाह करनेके लिए प्रेरित करें; हरिजनोंके प्रति सवर्ण हिन्दुओंकी कर्त्तव्य-भावना जगायें; जहाँ भी सचमुच मन्दिर जानेवाले लोगोंकी लगभग पूर्ण सहमति हो, वहाँ हरिजनोंके लिए मन्दिरोंके द्वार खोलें और पैसे तथा रुपये जमा करके मेरे पास भेजें। मैं जानता हूँ कि ऐसे अनेक स्थान हैं जहाँ मेरे पहुँचनेकी आशामें धन एकत्र किया गया है। अब मैं उन स्थानोंमें नहीं पहुँचूँगा, इस कारण यदि दानकर्त्ता लोग अपने दान वापस लेना चाहें तो दान वापस कर दिये जायें; और यदि चन्देकी उस जमा राशिमें से कुछ धन मेरे प्रस्तावित दौरेके सिलसिलेमें उचित रूपसे खर्च कर दिया गया हो और यदि वे उसे वापस चाहते हों, तो व्ययका प्रमाणित लेखा मिलने और व्ययका औचित्य सिद्ध होनेपर उनको वापस कर दिया जायेगा। पर मुझे आशा है कि मैंने यह जो कदम उठाया है उसकी आवश्यकता सभी लोग समझेंगे और इसलिए दानको वापस लेनेकी बात तो नहीं ही उठाई जायेगी बल्कि इस तीर्थ-यात्राके दौरान उसमें और अधिक ठोस वृद्धि भी की जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १४-५-१९३४

५१६. पत्र : एफ० मेरी बारको

पटनाके पतेपर
१२ मई, १९३४

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा और डंकनका ध्यान मुझे बराबर बना रहा है, लेकिन तुम लोगोंको पत्र लिखनेका बिलकुल भी समय नहीं मिल पाया। कितना अच्छा होता कि पिछले कुछ दिनोंमें इतनी तेजीसे हुए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण परिवर्तनोंके बारेमें तुमको लिखनेका समय मुझे मिल जाता। प्रत्येक परिवर्तनसे मुझे गहरा सन्तोष मिला है और इन परिवर्तनोंके फलस्वरूप मुझे नित्य प्रति जो अनुभव हो रहा है, उससे सिद्ध होता है कि परिवर्तन सही है। मुझे आशा है कि मैं उनके बारेमें जो भी लिख पा रहा हूँ, उस सबको तुम ठीक-ठीक समझ रही हो। यदि तुम इस पद-यात्रामें मेरे साथ होतीं तो तुमको बड़ा ही आनन्द आता। यह पत्र आजकी आखिरी यात्राके बाद रातमें बोलकर लिखा रहा हूँ। हर बार गाँवमें पहुँचते ही सभा होती है। ये सभाएँ सचमुच देखने लायक होती हैं — कोई शोर-गुल नहीं, कोई खटपट नहीं, और भाषणका एक-एक शब्द सीधा श्रोताओंके कानमें पड़ता है। श्रोतागण उसे हृदयमें उतार पाते हैं या नहीं, इसका तो बादमें ही पता चलेगा।

तुमने एक हिन्दू विधवा द्वारा एक मुसलमान बहनकी परिचर्याका जो उदाहरण उद्धृत किया है, वह सचमुच मर्मस्पर्शी है। हमें इसमें सन्देह करनेकी जरूरत नहीं कि

ऐसे उदाहरण न केवल दुर्लभ नहीं हैं, बल्कि भारतमें अनेक स्थानोंपर ऐसे उदाहरण बहुधा मिलते रहते हैं। वैयक्तिक स्नेह-सम्बन्ध कोई भी बाधा नहीं मानता।

तुमको अपनी देखरेखमें काता हुआ सूत बुननेके लिए बुनकरोंकी तलाशमें बराबर लगे रहना चाहिए। इसकी मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि भाजी पैदा करनेका प्रयोग सफल सिद्ध हो रहा है। बीज लेनेके लिए यदि कुछ आने या कुछ और भी तुमको ज्यादा खर्च करना पड़े, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। अगली बारके लिए तुमको पता चल जायेगा कि बीज सभी बाजारोंमें मिल जाते हैं। बीज कहकर माँगोगी तो दुकानदार नहीं समझेगा। जहाँ हो, वहींसे थोड़ी सरसों लेकर बोनेसे सरसोंका साग मिल जायेगा।

आशा है, तुमको 'हरिजन' नियमित रूपसे मिल रहा होगा।

मार्गरेटसे मेरा पत्र-व्यवहार बना हुआ है। कल या परसों ही मैंने 'गीता' के सम्बन्धमें उसके एक प्रश्नका उत्तर दिया है।[1]

हम सबकी ओरसे सस्नेह,

बापू

कुमारी मेरी बार
खेड़ी-सिउलीगढ़, जिला बैतूल (म० प्रा०)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०२४) से। सी० डब्ल्यू० ३३५३ से भी; सौजन्य: एफ० मेरी बार

५१७. पत्र : रेहाना तैयबजीको

१२ मई, १९३४

प्यारी बेटी रेहाना,

देखो अब तो पैदल चलता हूं इसलिए उस्तानीको लिखनेका वख्त मिलता है। बहुत दिनोंके बाद तुम्हारा चिट्ठा मिला। बिचारी इसी काममें थी कि एक कार्ड लिखनेका भी वख्त नहीं निकाल सकती थी। अच्छा अब लिखो और बताओ मेरे दोनों खतोंका असर तुम्हारे पर और अब्बाजान पर कैसे पड़ा। मेरा काम अच्छी तरह चल रहा है। हमीदा क्यों नहीं लिखती है।

बुजूर्गोंको आदाब। तुम्हारे लिए थप्पड़।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (एस० एन० ९६५२) से।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

५१८. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१३ मई, १९३४

भाई घनश्यामदास,

मैंने कहा था कि यदि आपको मेरी लिखावट समझनेमें कठिनाई पड़ती हो तो मैं आपको अंग्रेजीमें लिखा करूँगा। आज तो यदि मुझे आपको पत्र लिखना है तो बोलकर ही लिखाना पड़ेगा। सो इसलिए नहीं कि मेरे पास खुद लिखनेका समय नहीं है, बल्कि इसलिए कि गर्मी बहुत ज्यादा है और कुछ कीड़े मुझे इतना परेशान कर रहे हैं कि खुद लिखनेकी अपेक्षा बोलकर लिखाना ही ज्यादा अच्छा है।

मैं यह जाननेको उत्सुक हूँ कि इस पद-यात्राके बारेमें आपकी क्या प्रतिक्रिया है, और यदि आपने इसे पसन्द किया है तो मैं चाहूँगा कि आप तन-मनसे इसमें जुट जायें। यदि आप आजकल कलकत्तामें हों तो मैं चाहूँगा कि आप चन्देकी उगाही उसी तरह करें जैसेकि मैं कलकत्तामें मौजूद हूँ और मुझे थैली भेंट की जानी है। वही थैली मुझे यहाँ भेजी जा सकती है। मैंने डॉ० विधानसे कह दिया है कि मैं मध्य जूनके आसपास दो प्रयोजन लेकर कलकत्ता आऊँगा — पहला तो यह कि जो भी इच्छुक हों उनके साथ पूना-समझौतेके बारेमें बातचीत करूँ, और दूसरा यह कि चन्दा उगाहूँ। लेकिन ऐसा करनेके लिए भी मेरे मनमें संकोच कुछ बढ़ता जा रहा है। इसके विपरीत यदि कोई भी इस सम्बन्धमें मुझसे चर्चा करनेको उत्सुक न हो तो मुझे कलकत्ता जानेकी जरूरत नहीं है। वह अगस्तमें किया जा सकता है — उन दिनों मैं जहाँ भी होऊँ, वहीं। उसकी कोई जल्दी नहीं। जहाँतक उगाहीकी बात है, मुझे इतना विश्वास तो होना चाहिए कि जितना भी चन्दा मिलना है वह पद-यात्रा करते हुए भी मुझे मिल जायेगा। इस पद-यात्रापर सर्वस्वकी बाजी लगा देनेकी मेरी प्रेरणा दिन-दिन प्रबलतर होती जा रही है। मैंने इस पूरी चीजके बारेमें सतीशबाबूके साथ चर्चा की है। वे आपको अपने कुछ अनुभव बतलायेंगे ही। सचमुच मुझे ऐसे अनुभव हो रहे हैं जो किसी और स्थितिमें न हो पाते।

चन्द्रशंकरके नाम आपका पत्र मैंने पढ़ लिया है। मैंने इस बदली हुई परिस्थितिमें थोड़ा भी विश्राम करनेका विचार त्याग दिया है। प्रतिदिन सहज गतिसे पैदल चलनेमें विश्रामकी जरूरत नहीं रह जाती। इसलिए अब हमारी मुलाकात दौरेके बीच ही कहीं हो सकती है। मैं आपको पटना आनेकी दावत दूँ — ऐसा सोचनेसे कोई फायदा नहीं। मैं पटनामें काम खत्म करके, अर्थात् २० की सुबह या १९ की रातमें कटक या उड़ीसाके किसी स्थानके लिए रवाना हो जाऊँगा और वहाँ पद-यात्रा पुनः आरम्भ कर दूँगा, जो मध्य जूनतक, अर्थात् यहाँ बरसात शुरू होनेतक जारी रहेगी। आप यहाँ आकर पद-यात्रामें एक-दो दिन आसानीसे रह सकते हैं या किसी

मंगलवारको मेरे साथ रह सकते हैं, क्योंकि सोमवारोंको पद-यात्रा नहीं होगी और मंगलवारोंको भी केवल शामको ही होगी। विचार यह है कि मंगलवारकी शाम साढ़े पाँच बजे पद-यात्रा आरम्भ कर दी जाये।

गोपीका एक पत्र साथमें है। उसने जो लिखा है उसके बारेमें शायद आप कुछ ज्यादा बतला सकें।

मैं आपको लिख ही चुका हूँ कि 'राष्ट्रकी पुकार' के सिलसिलेमें डॉ० अन्सारी और राजेन्द्रबाबूने क्या कार्यवाही की है। मैं चाहूँगा कि आपको जितनी भी कतरनें मिलें, मुझे भेज दें।

साहनीके पत्रको देखते हुए तो मुझे लगता है कि उसे जो भी हिदायतें दी जायेंगी उनका वह पालन करेगा। हमारे लिए इतना ही पर्याप्त होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७९५८) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला

५१९. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१४ मई, १९३४

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। मैं अखबारोंकी कतरनें पढ़ गया। एन्ड्रयूजके पत्रकी जो आलोचना की गई है वह अधकचरी मानी जायेगी। मणिलालका कहना है कि उसने ऐसा वचन नहीं दिया था; तो फिर जो वचन दिया था उसे उद्धृत करना चाहिए था। ऐसी बात मौखिक रूपसे तो की नहीं जाती। हालाँकि एन्ड्रयूजका पत्र उसी अंकमें प्रकाशित हुआ है तथापि मणिलालने उसमें से उद्धरण दिये हैं, जबकि उसने जो वचन दिया था और जिसपर उसका मामला खड़ा है, उसे उद्धृत नहीं किया और इस प्रकार पाठकको स्वयं निर्णय करनेका मौका ही नहीं दिया। जिस व्यक्तिको शंका होगी वह सिर्फ मणिलालके शब्दोंपर कैसे विश्वास करेगा? अतः उसने जो वचन दिया था यदि वह लिखित रूपमें हो तो उसे अब भी उन शब्दोंको उद्धृत करना चाहिए ताकि प्रतिज्ञा-भंगका प्रश्न न रह जाये। मणिलाल जैसा लिखता है यदि उसने वैसा ही वचन दिया हो तो यह स्पष्ट है कि एन्ड्रयूजका कथन उचित नहीं माना जायेगा। अब तो एन्ड्रयूज वहाँ पहुँच गये होंगे, अतः उनसे बातचीत करके यदि उन्हें सन्तुष्ट किया जा सके तो करना चाहिए। मुझे सन्तुष्ट करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। तुम दोनोंको जो सच जान पड़े वही सच होगा और मुझे उतनेसे ही सन्तुष्ट रहना चाहिए।

थम्बीके मामलेमें मैं कुमारी श्लेसिनसे सहमत हूँ। लेखमें जो विचार व्यक्त किये गये हैं वे निन्दात्मक ही जान पड़ते हैं। लैटिनमें एक कहावत है जिसका अर्थ

है कि मृत व्यक्तिके बारेमें अच्छा ही कहना चाहिए। तुलसीदास कहते हैं: 'जो सहि दु:ख परछिद्र दुरावा'। सन्तका यह भी एक लक्षण माना गया है। 'दुरावा' अर्थात् ढकते हैं। सन्त स्वयं दु:ख उठायेंगे किन्तु दूसरोंके दोषोंको नहीं खोलेंगे। हाँ, उन्हींकी सेवाके लिए वे कुछ कहें तो यह अलग बात होगी। थम्बीपर यह बात लागू नहीं होती क्योंकि वे तो चले गये। इस मामलेमें यदि तुम सन्तुष्ट कर सको तो कुमारी श्लेसिनको सन्तुष्ट करना।

तुम यह जानते हो कि मेरे जीवनमें महान् परिवर्तन हो रहे हैं। उनसे तुम जो सीख सको, सीख लेना। यह सब मात्र सत्यकी आराधनाका परिणाम है। तुम जानते हो कि अब तुमपर सविनय अवज्ञाका सौगुना अधिक बोझ आ गया है। जब भी उसका अवसर आये तब तुम्हें उसके लिए तैयार रहनेकी योग्यता प्राप्त करनी है और यही बात पद-यात्राके बारेमें भी लागू होती है। यदि बहुत-से लोगोंको ऐसी यात्रा करनी पड़े तो उसमें आश्चर्य क्या है? अतः ऐसे कार्योंके लिए तुम अपने जीवनको सरल, सादा, कठोर, सत्यमय और संयमी बनाओ।

बा अब दो-चार दिनोंमें छूट जायेगी। लक्ष्मी और उसकी बिटिया, नीमू और उसकी बिटिया, सब आनन्दपूर्वक हैं। अन्य समाचार देनेका समय नहीं है। किन्तु मैं समझता हूँ कि मैंने काफी समाचार दे दिये हैं। मेरे बाल-बाल बचनेकी खबर तो तुम जानते ही होगे।[1]

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

आज हम उत्कलके एक गाँवमें नदीके किनारे पड़े हुए हैं। गरमी बहुत है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८२०) से।

५२०. पत्र : बाला, जया आदिको

१४ मई, १९३४

चि० बाला, जया, बापू, उमिया, दमयन्ती, बलि तथा माणेक,

दूसरेसे पत्र लिखवाकर भेजनेसे उसमें रस नहीं आता। चाहे जैसा क्यों न होता किन्तु यदि तुमने स्वयं ही पत्र लिखा होता तो आनन्द आ जाता। भगवान्को जबतक मुझसे सेवा लेनी होगी तबतक वह मुझे जीवित रखेगा। जो बात मेरे बारेमें लागू होती है वही अन्य लोगोंके बारेमें भी समझनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

१. संकेत सम्भवतः जसीडीहकी घटनाकी ओर है; देखिए "तीन अशोभनीय घटनाएँ", पृ० ४९८-५०१।

[पुनश्चः]

आजकल मैं मरोली-जैसे छोटे गाँवोंका दौरा कर रहा हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७०८) से।

५२१. पत्र : मीठूबहन पेटिटको

वालिआन्ता
१४ मई, १९३४

चि० मीठूबहन,

तुम्हारा पत्र मिला।

भगवान्को जबतक मुझसे काम लेना होगा तबतक वह मुझे हर तरहकी दुर्घटनाओंसे बचाता रहेगा। जब वह मुझे वापस बुलाना चाहेगा तो उस समय जम्हाई ही काफी होगी।

अब तो मैंने पद-यात्रा आरम्भ कर दी है इसलिए मरोली कहाँ रही और अन्य सब स्थान कहाँ रहे! अब तो जो हो जाये सो सही। ऐसा जान पड़ता है कि अब तो मैं उत्कलका ही दौरा कर पाऊँगा।

तुम्हारी भेजी हुई वार्षिक रिपोर्ट मिल गई थी।

तुमने कर दे दिया, यह ठीक किया। क्या तुम सीतारामके विरुद्ध शिकायत करनेका कोई उपाय नहीं सोच सकतीं? उसके अत्याचार सहन करनेकी जरूरत नहीं। तत्काल कचहरीमें जानेकी आवश्यकता नहीं। फिलहाल अमलदारसे शिकायत करना काफी होगा।

बा अब जल्दी ही छूट जायेगी। वह वहाँ अच्छी रही है।

तुम्हारे द्वारा दिया गया खादीका बक्स अभी वर्धामें पड़ा है। कृष्णदास उसमें से कुछ बेचनेकी कोशिश कर रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७०३) से।

५२२. पत्र : माधवलाल पटेलको

बालिआन्ता
१४ मई, १९३४

भाई माधवलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। इसके साथ एक पत्र[1] लड़कियोंके लिए है और एक मीठूबहनके लिए।

मैं समझता हूँ कि जुर्माना देकर जमीनको बचा लेनेमें ही बुद्धिमानी है।

बकाया चार रुपये दस आने लेनेमें कोई सार नहीं है। किन्तु यदि वह लेना चाहे तो अवश्य ले ले।

यह सब कड़वी घूँटें हैं किन्तु वे उचित जान पड़ती हैं। इसलिए उचित काम करके ही हम सत्यका पालन करना सीख सकेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६१०९) से। सी० डब्ल्यू० ३४१९ से भी; सौजन्य : माधवलाल पटेल

५२३. सन्देश : ग्रामवासियोंको[2]

बालिआन्ता
१४ मई, १९३४

अन्तमें, मैं यह कह दूं कि यदि मैं अन्य प्रान्तोंके अपने सहकर्मियोंको इसपर राजी कर सका कि वे पद-यात्राकी आवश्यकता और इसका महत्त्व महसूस करते हुए मुझे अपने-अपने प्रान्तोंमें जानेसे छुट्टी दे दें, तो मैं पटनामें अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी बैठकमें भाग लेनेके बाद, अपनी पद-यात्रा फिर शुरू करनेके लिए बड़ी खुशीसे उत्कल लौट आऊँगा। कारण, मुझे लगता है कि यदि इसकी मूल परिकल्पनामें

१. देखिए पिछले दो शीर्षक।

२. यह सन्देश यूनाइटेड प्रेसकी मार्फत प्रकाशनके लिए दिया गया था। इसमें की गई अपीलमें अधिकांशतः "सन्देश: गंजामकी जनताको", पृ० ५३०-३१ के पूर्व को ही दोहराया गया है; बस अन्तके ये दो अनुच्छेद ही अतिरिक्त हैं, और केवल वही यहाँ दिये जा रहे हैं।

कोई सत्य है, जो है ही, तो इस पद-यात्राको जिस स्थानपर छोड़ा गया था वहींसे फिर शुरू करनेसे दौरेका आध्यात्मिक महत्त्व बढ़ेगा।

आखिर, समूचा भारत अपने-आपको उत्कलके साथ एकाकार करके उत्कलकी तीर्थ-यात्राको समूचे भारतकी ही तीर्थ-यात्रा क्यों न माने?

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-५-१९३४

५२४. सन्देश : उत्कलके कार्यकर्त्ताओंको

[१५ मई, १९३४ के पूर्व]

श्री गांधीने उत्कलके कार्यकर्त्ताओंको दिये गये एक वक्तव्यमें कहा कि मुझे आशा है कि बंगालने मेरे बंगालके दौरेका अपना आग्रह छोड़कर और पटनामें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकके बाद उड़ीसामें फिर मेरी पद-यात्रा आरम्भ किये जानेकी बातपर राजी होकर अपने हृदयकी जिस विशालताका परिचय दिया है, आप उसकी कद्र करेंगे। इससे आपकी जिम्मेदारी बढ़ गई है। आपको इस आन्दोलनकी धार्मिकता और इसके फलितार्थोंको समझना है। सात दिनोंके अनुभवने दिखा दिया है कि पास-पड़ोसके गाँवोंसे हजारों लोग आते रहते हैं। उनको एक सुविस्तृत सन्देश दिया जाना चाहिए। उनको हरिजनोंके सम्पर्कमें लाना चाहिए, जिनकी विशेष देख-भाल करना आवश्यक है। उनको आमन्त्रित किया जाना चाहिए कि वे आम अवसरों पर आकर सभी लोगोंके साथ मिलें-जुलें और अपनेको अलग-थलग न रखें, जैसाकि वे अकसर करते हैं। हरिजनोंकी ठीक-ठीक दशाका पता लगानेके लिए मार्गमें पड़नेवाले गाँवोंका सुविस्तृत सर्वेक्षण किया जाना चाहिए। यदि जनता मोटर तथा रेल द्वारा की जानेवाली यात्राओंकी तुलनामें पद-यात्राकी श्रेष्ठताको सचमुच समझती है तो चन्दोंकी उगाही अब उससे कहीं ज्यादा होनी चाहिए जितनेकी मूल कार्यक्रमके अनुसार चलनेपर आशा की जाती थी।

[अंग्रेजीसे]

अमृत बाजार पत्रिका, १५-५-१९३४

५२५. पत्र : वसुमती पण्डितको

१५ मई, १९३४

चि० वसुमती,

क्या तूने मुझे पत्र न लिखनेकी प्रतिज्ञा कर ली है? वालजीभाईसे मैंने एक पत्र लिखवाया था किन्तु उसका भी उत्तर नहीं मिला।

वहाँ सब ठीक तो हैं? तू अपने समयका किस तरह उपयोग करती है? फल आदिकी आवश्यकता होनेपर क्या करती है? आपसमें किसी तरहकी अनबन तो नहीं है?

पद-यात्रामें तुम सबकी बहुत याद आती है। तुम लोगोंको भी किसी दिन ऐसा ही करना पड़ेगा।

मैं यह पत्र एक गाँवमें सुबहके सवा तीन बजे लिख रहा हूँ। अबतक तो चलनेमें किसी तरहकी दिक्कत नहीं आई।

तुझे नियमित रूपसे लिखते रहना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९३८५) से। सी० डब्ल्यू० ६३० से भी; सौजन्य : वसुमती पण्डित

५२६. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१५ मई, १९३४

चि० अमला,

तुम्हारी हिन्दीकी लिखावट काफी अच्छी है। हिन्दीमें तुम निश्चय ही मीराके मुकाबले अधिक तेजीसे प्रगति कर रही हो। उसने गुजरातीकी तरफ तो कभी रुख ही नहीं किया। उसके लिए आवश्यक भी नहीं था। हममें से किसीपर भी उस काण्डका कोई असर नहीं पड़ा और उसके बारेमें कहनेको अधिक कुछ था ही नहीं। मोटरपर हुए हमलेके बारेमें, मैं सार्वजनिक रूपसे बहुत काफी कह चुका हूँ। मुझे देवता माननेकी बजाय यह क्यों नहीं मानती कि मैं पशु कम और मनुष्य अधिक हूँ। हमारा आकार-प्रकार-भर मनुष्यका है, पर अपने तौर-तरीकोंमें हम बहुधा

पशुओंसे भी नीचे उतर जाते हैं। इसलिए अपने आकार-प्रकारके अनुरूप सारतः एक मनुष्य होना सचमुच एक बड़ी बात है। तुम भली-चंगी तो हो?

सस्नेह,

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

५२७. पत्र: जीवणजी डा० देसाईको

बालिआन्ता
१५ मई, १९३४

भाई जीवणजी,

तुम्हारा पत्र मिला। आश्चर्य है, महादेवका पत्र नहीं आया। आये तब मुझे तुरन्त खबर देना। बाइबिलसे सम्बन्धित पुस्तकोंके विषयमें तुम्हारी जानकारी ठीक है। लेकिन बालुभाईसे पूछकर ही इसपर अमल करना। पुस्तकोंकी अदला-बदलीमें, रख-रखावमें जो खर्च हो वह नगरपालिकासे लेना चाहिए। मोहनलालको लिखना कि वह शीघ्र स्वस्थ हो जायें। उन्हें बहुत समयतक बुखार रहा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९४५) से।

५२८. पत्र: बहरामजी खम्भाताको

१५ मई, १९३४

भाई खम्भाता,

मैं रोज तुम दोनोंके पत्रकी राह देखता हूँ। हालाँकि मैं यह जानता हूँ कि तुम मेरा समय बचानेके खयालसे मुझे नहीं लिखते। फिर भी तुम्हारे कुशल-समाचार जाननेको उत्सुक रहता हूँ। अचानक मेरी यह उत्सुकता शान्त हो गई। यह जानकर मुझे दुःख हुआ कि तुम्हें फिर अलसर हो गया है। इलाज करानेसे वह ठीक हो जायेगा। मुझे लिखना कि तुमने अपनी खुराकमें क्या परिवर्तन किया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६०६) से। सी० डब्ल्यू० ४३९६ से भी; **सौजन्य: तहमीना खम्भाता**

५२९. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

बालिआन्ता, उत्कल
१५ मई, १९३४

आशा है, मेरे जीवनमें होनेवाले परिवर्तनोंसे तू घबराता नहीं होगा। ये परिवर्तन मेरी अधीरताके फलस्वरूप नहीं हो रहे हैं बल्कि सत्यकी आराधनाका फल हैं। पद-यात्रा मेरी बहुत पुरानी आकांक्षा है। मुझे तो रेल, मोटरका सर्वथा त्याग कर देना भी अच्छा लगेगा। वह समय अभी नहीं आया है, किन्तु मेरा मन उस ओर जाता है। इसीलिए मैंने बहुत बार कहा है कि रेल, मोटर आदि मुझे एक तरहकी मुसीबत जान पड़ती हैं। मेरे लिए ये भोगकी वस्तुएँ कभी नहीं रहीं। धर्म बैलगाड़ीमें भी नहीं बैठता। वह तो लड़खड़ाता हुआ चलता है, किन्तु मंजिल अवश्य काटता है। इन सात दिनोंमें भी अलौकिक अनुभव हुआ है। असलमें इस बार ही मैं गाँवोंको देख पाया हूँ। वहाँ अस्पृश्यता अपने सही रूपमें नजर आती है। इससे सनातनियोंका रोष भी ठण्डा पड़ेगा और न पड़े तो भी मेरी शान्तिकी रक्षा तो हो जाती है। मोटरमें यात्रा करते हुए तो उसके कुचले जानेका भय बना ही रहता है।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १४५

५३०. पत्र : गोविन्दलाल साहको

१५ मई, १९३४

भाई गोविंदलाल,

तुमारा पत्र बहुत दिनोंसे मिला। तुमारा स्वास्थ्य अच्छा होगा।

बापुके आशीर्वाद

गोविंदलाल साह
अलमोड़ा

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०६७६) से।

५३१. भाषण : मन्दिरके उद्घाटनके अवसरपर[1]

बालिआन्ता
१५ मई, १९३४

गांधीजी ने कहा कि मन्दिर जिस समाजके इस्तेमालके लिए बनाये जाते हैं, उसकी स्थितिके प्रतिबिम्ब होते हैं। कहा जाता है कि प्राचीन कालके मन्दिरोंके आसपास इस प्रकारका नैतिक वातावरण रहता था कि उपासक अपनेको नैतिक रूपसे कुछ ऊँचा उठा हुआ महसूस करते थे और उतने समयतक अपने मनसे सभी बुरे विचार हटा देते थे। तब मन्दिरके अहातेमें लड़के-लड़कियोंकी प्राथमिक पाठशालाएँ दिखाई पड़ती थीं। मन्दिरोंमें पण्डित रहते थे जो जिज्ञासुओंको संस्कृतका ज्ञान दिया करते थे। उन मन्दिरोंके साथ धर्मशालाएँ होती थीं, जहाँ गरीबोंको रातमें ठहरनेकी सुविधा रहती थी और पंचोंकी सभाओं इत्यादिके लिए उनमें बड़े-बड़े कमरों या खुले प्रांगणों की व्यवस्था रहती थी। प्राचीन कालके मन्दिरोंका यही आदर्श था। मैंने अपनी यात्राओंके दौरान ऐसे मन्दिर देखे हैं, जिनमें इस प्रकारकी एक या इससे अधिक संस्थाएँ मौजूद हैं। यदि न्यासी लोग सहज-सरल आदर्शकी पूर्तिके लिए भरसक प्रयत्न करें तो मेरे सुझाये हुए कार्यक्रमपर अमल करनेमें कोई कठिनाई नहीं पड़ेगी। उसके लिए कोई बहुत बड़ी राशिकी भी जरूरत नहीं है। पाठशाला वृक्षोंकी छायामें लग सकती है और खुले आकाशके नीचे कोई मैदान भी सभा-भवनका काम दे सकता है। इसलिए मूल प्रश्न तो संकल्प और पर्याप्त संख्यामें चरित्रवान व्यक्तियोंकी सुलभता का है। मुझे आशा है कि ऐसे लोग आगे आयेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-५-१९३४

५३२. पत्र : जी० वी० गुरजलेको

१६ मई, १९३४

प्रिय गोविन्दराव,

मुझे प्रसन्नता है कि अब आपके पास जमीन है। आशा है, अब विद्यालय उन्नति करेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३८२) से।

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत। मन्दिर अस्पृश्यों-सहित सभी हिन्दुओंके लिए था।

५३३. पत्र: मानशंकर जे० त्रिवेदीको

कटक
१६ मई, १९३४

चि० मनु,

मैंने तुझे सँदेसा भिजवाया था किन्तु तुझे लिख नहीं सका। मैं तेरा पत्र पढ़ गया। उसे मैंने पिताजी को भेज दिया है। मेरे पास इतना समय नहीं है कि मैं अपने पत्रका विश्लेषण करूँ। मेरा तर्क तो स्पष्ट ही है कि यदि तू अपनेको सच्चा और श्रद्धालु हिन्दू मानता हो तो इस प्रश्नको हर तरहसे परखनेपर यही निष्कर्ष निकलता है कि तेरी सन्तति हिन्दू ही होनी चाहिए। मैं यह समझ सकता हूँ कि विमलाकी वृत्ति उलटी हो सकती है। किन्तु वह बात तो विवाहके विरोधमें जायेगी। सन्तान विमलाके धर्मको स्वीकार करे यह उचित नहीं। बालकोंपर माँ का असर तो पड़ता ही है, इसीलिए माता-पिता भिन्न धर्मोंके नहीं होने चाहिए और सामान्यतः होते भी नहीं। और यदि होते भी हैं तो नामको ही। [उस स्थितिमें] कोई एक अपने धर्मके प्रति उदासीन होता है। तुम्हारे बारेमें मैं ऐसा नहीं चाहता। विमलाके इस आग्रहमें ही मुझे थोड़ा-सा दोष नजर आता है कि सन्तान कैथोलिक होनी चाहिए। यदि वह तुझसे विवाह करे तो उसे तेरे साथ एकाकार हो जाना चाहिए। किन्तु फिलहाल हमें इस बातका विचार नहीं करना है। इस समय तो तेरा कर्त्तव्य पिताजी की आज्ञाका शब्दशः पालन करके उनके सन्देहका निवारण करना है। और तू इतना विश्वास रखना कि होगा वही जिसमें तेरा कल्याण होगा। आशा है, इस पद-यात्राके दौरान तू इससे अधिककी आशा नहीं करेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०११) से।

५३४. भाषण : काजीपटनामें[1]

१६ मई, १९३४

गांधीजी ने मानपत्रका उत्तर देते हुए कहा कि अगर इसमें मेरे बारेमें कही गई सभी बातें सच हों,[2] तो वह प्रशंसाकी नहीं, बल्कि भर्त्सनाकी ही बात होगी। मैं अद्वैतको मानता हूँ। मेरे लिए पूर्व और पश्चिम, दक्षिण और उत्तर, सभी समान हैं। मैं स्वयं अस्पृश्यताके हर रूप और हर प्रकारका कट्टर विरोधी होते हुए पश्चिमको अस्पृश्य माननेकी धृष्टता कैसे कर सकता हूँ? मैंने वास्तवमें कहा यह था कि पाश्चात्य, या ज्यादा ठीक कहूँ तो आधुनिक सभ्यताका, जिसे पाश्चात्य सभ्यता इसलिए कहते हैं कि वह पश्चिमसे आई है, अन्धानुकरण करना आपके लिए आत्मघातक होगा। आधुनिक सभ्यता भोगको सर्वोपरि मानती है, जबकि प्राचीन या प्राच्य सभ्यता आत्म-त्याग तथा आत्म-संयमको अत्यधिक महत्त्व देती है। इसलिए जो टकराव देखनेमें आ रहा है वह पश्चिम और पूर्वके बीच नहीं, बल्कि जीवनके दो सर्वथा भिन्न दृष्टि-कोणों, दर्शनोंका ही है। अस्पृश्यता अलगावकी प्रवृत्तिका सबसे बुरा रूप है। मनुष्यको मनुष्यसे अलग करनेवाली सभी प्रकारकी बाधाओंको तोड़नेके मेरे कार्यक्रममें हरिजन-आन्दोलन तो एक पहला कदम-भर है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-५-१९३४

५३५. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको

कटक
१६ मई, १९३४

श्री गांधीने कहा कि मुझे नहीं मालूम कि हरिजनोंसे सम्बन्धित कोई ऐसी विशेष समस्या उड़ीसामें मौजूद है या नहीं जो अन्य प्रान्तोंके हरिजनोंकी समस्याओंसे भिन्न हो। परन्तु अस्पृश्यताके विभिन्न प्रकारोंसे मुझे सरोकार नहीं। मैं नहीं समझता कि जहाँ-तहाँ कुछ जोड़-तोड़-भर करके यह समस्या हल की जा सकती है। इसीलिए मैं इस समूची समस्याको अविभाज्य मानता हूँ, इसे समग्र रूपमें लेखता हूँ। समस्या तो समूचे समाजमें व्याप्त है और सबसे परले सिरेकी, सबसे कट्टर किस्मकी अस्पृश्यता इसका सबसे बीभत्स रूप है। एक जाति द्वारा धर्मके नामपर दूसरी जातिकी तुलनामें

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. चार गाँवोंकी ओरसे गांधीजीको भेंट किये गये इस मानपत्रमें एक वाक्य इस आशयका था कि उन्होंने [गांधीजीने] सिद्ध कर दिया है कि पूर्व और पश्चिमकी पटरी नहीं बैठ सकती।

अपनेको श्रेष्ठ माननेका दम्भ मिटाना पड़ेगा। और यह केवल हृदय-परिवर्तन द्वारा किया जा सकता है।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी कार्य-समितिसे हरिजन-कार्यको हाथमें लेनेके लिए कहनेवाले हैं, श्री गांधीने उत्तर दिया कि वह तो पहले ही, १९२० में ही कांग्रेसके कार्यक्रमका एक मुख्य अंग बन चुका है और तबसे उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया गया है।

[अंग्रेजीसे]
अमृत बाजार पत्रिका, १७-५-१९३४

५३६. भाषण : कटककी सार्वजनिक सभामें[1]

१६ मई, १९३४

गांधीजी ने श्रोताओं से कहा कि आप लोगोंने पण्डितजी की बात शान्तिपूर्वक सुनी, इसके लिए मैं आपको बधाई देता हूँ। ऐसी शिष्टता ही धर्म और संस्कृतिका सार है।[2] आपको अपने विरोधियोंके साथ सज्जनतासे पेश आना चाहिए, उनको अपने विचारसे सहमत करनेकी कोशिश करनी चाहिए और, सम्भव हो तो, उनको अपने विचारके समर्थक बनाना चाहिए। हिंसा या बल-प्रयोग के द्वारा धर्मके उद्देश्यको कभी भी आगे नहीं बढ़ाया जा सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-५-१९३४

५३७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१७ मई, १९३४

चि० प्रेमा,

इतने महीनेतक किशन मेरे पास रही, अब सुशीला है। इसलिए तेरे बारेमें कितनी, कैसी और कितनी बार चर्चा हुई होगी, इसकी कुछ-न-कुछ कल्पना तो तू कर ही सकती है। ऐसी हालतमें तुझे सँदेसा भी क्या भेजा जाता? आज लिख रहा हूँ, इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि सुशीला लिखनेके लिए मुझे प्रेरित कर रही है। दूसरे, उसकी दी हुई खबर। क्या मेरे निर्णयसे तू तीन दिन रोई? मैं मानता था कि यह निर्णय सुनकर तुझे आघात तो पहुँचेगा, परन्तु साथ ही तू नाचेगी और गायेगी; क्योंकि तू उसका रहस्य, महत्त्व और शुद्ध सत्य समझे बिना नहीं रहेगी। अनुभव प्रतिदिन उसका औचित्य सिद्ध कर रहा है। इसमें साथियोंकी अयोग्यताकी

१. वा० गो० देसाईके 'वीकली लेटर' (साप्ताहिक पत्र) से उद्धृत।

२. गांधीजी के विरुद्ध काले झण्डोंका प्रदर्शन करानेवाले सनातनी नेता पण्डित लालनाथको सभा-मंच पर बैठने और यहाँतक कि श्रोताओंके समक्ष भाषण करनेकी अनुमति दी गई थी।

बात नहीं है। कोई भी अयोग्य साबित नहीं हुआ। परन्तु जो-कुछ प्रकट हुआ, वह सूचक था और उसने मुझे यह निर्णय करनेको प्रेरित किया। समय आनेपर — और समय तो आयेगा ही — ये साथी फिर जूझेंगे। बात तो थी अधिक शक्ति प्राप्त करनेकी, अधिक संयमकी आवश्यकताकी। मेरे हथियार इस समय काम न दें तो इससे वे अनुपयुक्त नहीं ठहरते। उनपर अधिक पानी चढ़ानेकी जरूरत रही होगी, उनका उपयोग असमय हुआ होगा। इससे अधिक नहीं समझाया जा सकता। जब तू छूटे तो मुझे खोजकर सीधे मेरे पास चली आना और न समझी हो तो जी-भरकर मुझसे झगड़ना और मेरी बात समझना। इस निर्णयके पीछे सबकी कसौटी है। मेरी कसौटी भी उसमें आ जाती है। परन्तु ईश्वरकी कृपासे हम सब उसमें उत्तीर्ण होंगे। अब ज्यादा नहीं।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यह पटना जानेवाली रेलमें लिखा है। परन्तु ई० आई० रेल हमेशा ऐसी सरल गतिसे चलती है कि उसमें लिखनेमें दिक्कत नहीं होती।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी०एन० १०३५५) से। सी० डब्ल्यू० ६७९४ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

५३८. पत्र : विद्या रा० पटेलको

रेलगाड़ीमें
१७ मई, १९३४

चि० विद्या,

तेरा पत्र मिला। तुझे लम्बे-लम्बे पत्र क्यों लिखे जायें? यदि तू अन्य चीजोंमें रुचि लेती होती तो मैं अवश्य लम्बे पत्र लिख सकता था। यह पत्र मैं चलती हुई गाड़ीमें लिखवा रहा हूँ। इसलिए सुनना भी कठिन है और लिखना भी। रावजी-भाईके[1] पत्रमें कुछ विशेष नहीं था। तू जो कल्पना करती है वह सर्वथा निराधार है। थोड़े दिन बाद तुझे उस बातका पता चल जायेगा। तूने दाल-भात खाना छोड़कर बहुत अच्छा किया। यदि तू स्वेच्छासे लिये गये अपने इस व्रतका पालन करती रही तो भविष्यमें तुझे इसका लाभ नजर आयेगा। मेरी पद-यात्राका विवरण 'हरिजन' में पढ़ लेना। ओम अभी तो मेरे साथ है। अब शायद जानकीबहनके साथ अलमोड़ा जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९५८४) से; सौजन्य : रवीन्द्र रा० पटेल

१. विद्या पटेलके पिता, रावजीभाई मणिभाई पटेल।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

रवीन्द्रनाथ ठाकुरका वक्तव्य[1]

यह देखकर मुझे बहुत दुःख और आश्चर्य हुआ है कि महात्मा गांधीने अस्पृश्यता की सामाजिक प्रथाका आँख मूंदकर पालन करनेवालोंपर बिहारके कुछ हिस्सों को ईश्वरका कोप-भाजन बनानेका आरोप लगाया है। उनकी बातोंसे तो यही लगता है मानों ईश्वरने इन हिस्सोंको अपनी विनाशलीलाके लिए विशेष रूपसे चुना हो। यह सब इस कारणसे और भी दुर्भाग्यपूर्ण है कि इस तरहके अवैज्ञानिक विचार को हमारे बहुत-से देशभाई सहज ही स्वीकार कर लेते हैं। यह कहना कि भौतिक विपत्तियाँ अनिवार्यतः और एकान्त रूपसे कतिपय भौतिक तथ्योंके संयोगका परिणाम होती हैं, मात्र एक सीधे-सादे तथ्यको दोहराना है और इसे दोहराते हुए मुझे गहरे संकोचका अनुभव हो रहा है। यदि हम यह मानकर न चलें कि सार्वभौम नियम अपरिवर्तनीय है और उसकी कार्य-विधिमें ईश्वर भी हस्तक्षेप नहीं करता तो जिस प्रसंगने हमपर इतने जबर्दस्त ढंगसे और इतने बड़े पैमानेपर यह गहरी चोट की है उस-जैसे प्रसंगोंपर ईश्वरकी लीलाका औचित्य सिद्ध करना असम्भव होगा।

यदि हम ब्रह्माण्डीय व्यापारके साथ नैतिक सिद्धान्तोंको जोड़ने लगें तो हमें यह भी स्वीकार करना होगा कि मानव-स्वभाव उस विधातासे श्रेष्ठ है जो हमें सदाचरणका पाठ सिखानेके लिए स्वयं बुरे-से-बुरा आचरण करता है। कारण, हम इस बातकी कल्पना भी नहीं कर सकते कि कोई भी सभ्य शासक आँखें मूंदकर जिस-तिसको — और ऐसे लोगोंमें बच्चे और अस्पृश्य भी शामिल हैं — केवल इसलिए अपना कोप-भाजन बनायेगा कि एक निरापद दूरीपर बैठे और उन अभागे दण्डित लोगोंसे कहीं अधिक कड़े दण्डके पात्र दूसरे उससे सबक लें। . . . प्रतिदिन एकत्र होते क्रूर कृत्योंके बोझसे एक दिन समाजकी नैतिक नींवमें दरारें दिखने लगती हैं और सभ्यता की जड़ें हिलने लगती हैं, किन्तु इस बोझका गुरुत्वाकर्षणके नियमपर तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ता। इस सन्दर्भमें वास्तवमें सबसे दुःखद बात यह है कि महात्माजी ने एक ब्रह्माण्डीय संक्षोभका अपने उद्देश्यके लिए उपयोग करनेके निमित्त जिस प्रकारके तर्कका सहारा लिया है वह उनकी अपेक्षा उनके विरोधियोंकी मनोवृत्तिके बहुत अधिक उपयुक्त है और यदि उन्होंने इस अवसरका लाभ उठाकर इस ईश्वरीय कोपके लिए महात्माजी और उनके अनुगामियोंको दोषी ठहराया होता तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं

१. देखिए पृ० १०५ और १६७।

होता। जहाँतक हमारा सम्बन्ध है, हम तो इस श्रद्धाके सहारे ही पूर्णतः सन्तुष्ट और सुरक्षित हैं कि हमारे अपने पाप और दोष चाहे जितने बड़े हैं, किन्तु उनमें सृष्टिके ढाँचेको ध्वस्त करनेकी शक्ति नहीं है। हम सबको — पापियों और सन्तों, कट्टर परम्परा-पोषकों और परम्परा-भंजकोंको इस बातके लिए पूरी तरह आश्वस्त रहना चाहिए। महात्माजी ने अपनी चमत्कारी प्रेरणाशक्तिसे अपने देशभाइयोंके मस्तिष्कको भय और दुर्बलतासे मुक्त किया है। इसके लिए हम उनके परम कृतज्ञ हैं। और यही कारण है कि तब हमें गहरा दुःख भी होता है जब हम उनके मुँहसे कोई ऐसा शब्द निकलते सुनते हैं जो उन्हीं लोगोंके मस्तिष्कमें तर्कहीनताके तत्त्वका समावेश कर सकता है — तर्कहीनता, जो उन तमाम अन्धी ताकतोंका बुनियादी स्रोत है जो हमें स्वतन्त्रता और आत्म-सम्मानके खिलाफ ला खड़ा करती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-२-१९३४

परिशिष्ट २

सर सैम्युअल होरके नाम गांधीजी के पत्रकी पृष्ठभूमि और होरेस अलेक्जैंडर द्वारा इस प्रसंगके सम्बन्धमें लिखी परिचयात्मक टिप्पणीके अंश[1]

जब श्री गांधी १९३१के दिसम्बर मासमें आयोजित दूसरी गोलमेज-परिषद्से भारत लौट रहे थे उस समय वे रोम भी गये थे। स्मरण होगा कि जब वे इटलीसे भारतको प्रस्थान कर रहे थे तभी 'टाइम्स' के रोम-स्थित संवाददाताने खबर दी थी कि उन्होंने 'जर्नल डी' इटालिया' को एक सनसनीखेज मुलाकात दी है। उसके बाद इस समाचारके खण्डन-प्रतिखण्डन प्रकाशित हुए। लेकिन तभी श्री गांधीको कैद कर लिया गया और जनताके पास अपने निष्कर्ष निकालनेके सिवा सचाईको जानने का कोई उपाय नहीं रह गया।

तबसे अबतक जो-कुछ हुआ है, उसको ध्यानमें रखकर देखें तो यह सारा मामला आज बहुत मामूली लग सकता है। . . . लेकिन उस समय तो उससे भारी अनिष्ट हुआ और हो सकता है कि वैसे अनिष्टसे हमारे अनजाने ही वस्तुस्थितिकी हमारी समझ आगे भी प्रभावित होती रहे। इसलिए यह जरूरी लगता है कि अब अन्तमें . . . सत्यका यथातथ्य विवरण प्रस्तुत कर दिया जाये।

इस विषयपर हालमें सर सैम्युअल होरके नाम लिखे श्री गांधीके पत्रके साथ 'टाइम्स'में प्रकाशित उन वक्तव्योंको पुनर्प्रकाशित करते हुए उन परिस्थितियोंका कुछ हवाला दे देना वांछनीय प्रतीत हुआ है जिनमें श्री गांधीने इंग्लैंडसे प्रस्थान किया था। कारण, रोमके भेंट-विवरणको, जिसे लोगोंने इंग्लैंडमें सच मान लिया,

१. देखिए पृ० २७३।

उसका कारण बहुत हदतक यह था कि लन्दनमें परिषद्की समाप्तिके ठीक पूर्व श्री गांधीने जो बातें कही थीं उनमें से कुछसे वह विवरण मेल खाता जान पड़ता था। प्रधानमन्त्रीकी नीति-घोषणा सुननेके बाद श्री गांधीने पूछा था कि क्या फिर "वह स्थल आ गया है जहाँसे हमारे रास्ते अलग हो जाते हैं।" श्री गांधीने प्रधानमंत्रीके वक्तव्यमें कुछ 'गूढ़ार्थ' होनेकी भी बात कही थी। लोगोंने सोचा, इन शब्दोंसे क्या प्रकट होता है, क्या रोमकी मुलाकात उसका उत्तर नहीं है? (जो लोग श्री गांधीके लन्दन-प्रवासके अन्तिम दिनोंमें उनके निकट थे वे जानते हैं कि इन दोनों में कोई सम्बन्ध नहीं था, क्योंकि इस बीच निजी किस्मकी कुछ निर्णायक बातचीत हो चुकी थी।)

दरअसल दो ऐसी चीजें थीं, जो परिषद्के अन्तिम दिनोंमें श्री गांधीके मनपर खास तौरसे हावी थीं। एक तो थी भारतके सार्वजनिक ऋणकी समस्या, और दूसरी थी भारत सरकार द्वारा बंगालमें आतंकवादको दबानेके लिए उठाये गये कुछ नये कदम। . . .

लेकिन इंग्लैंडसे प्रस्थान करनेके पूर्व प्रधानमन्त्री और सर सैम्युअल होरसे उनकी बातचीत हुई थी। इन बातचीतोंसे वे आश्वस्त हो गये थे। उन्होंने यह नतीजा निकाला कि अगर वे भारतमें नियुक्त की जानेवाली छोटी-सी प्रातिनिधिक कार्य-समितिकी सदस्यता स्वीकार कर लेते हैं तो वहाँ वे भारतके सार्वजनिक ऋणका सवाल उठा सकते हैं। जहाँतक बंगालका सम्बन्ध था, भारत सरकारको यह तय करनेकी पूरी छूट थी कि वह अपने प्रशासनिक कदमोंके बारेमें किससे बातचीत करे। भारत कार्यालयने दोमें से कोई दरवाजा बन्द नहीं किया था।

अन्तमें इंग्लैंडसे रवाना होनेके पहले श्री गांधीने अपने मित्रोंको गम्भीरतापूर्वक आश्वासन दिया कि वार्त्ताका दरवाजा खुला रखनेके लिए अपनी शक्ति-भर सब-कुछ करेंगे। यद्यपि उन्होंने यह स्वीकार किया कि लन्दनकी परिषद् वास्तवमें उनके लिए एक "लम्बी और धीरे-धीरे चलनेवाली व्यथा" की तरह थी, फिर भी उन्होंने जो समस्याएँ अबतक हल नहीं हुई हैं, उनका शान्तिपूर्ण हल निकालनेकी आशा व्यक्त की।

(अ)

मुलाकात

"नया व्यापार बहिष्कार"

१५ दिसम्बर, १९३१ को 'टाइम्स' के रोम-स्थित संवाददाताने लिखा:

इतालवी और विदेशी बहुत-से पत्रकार श्री गांधीसे मिलनेको आमन्त्रित किये गये थे, लेकिन उन्होंने उन्हें कोई वक्तव्य देनेसे इन्कार कर दिया था। अब उन्होंने 'जर्नल डी' इटालिया' के श्री गेडाको एक लम्बा वक्तव्य दिया है।

श्री गांधीने कहा कि गोलमेज-परिषद् भारतीयोंके लिए एक लम्बी और धीरे-धीरे सालनेवाली व्यथा थी और उसके बादसे "भारतीय राष्ट्र और ब्रिटिश सरकारके आपसी सम्बन्धोंमें निश्चित तौरपर दरार पड़ गई है।" लेकिन इस परिषद्से यह

प्रयोजन जरूर सिद्ध हुआ है कि भारतीय राष्ट्रकी भावना ब्रिटिश सत्ताधारियों और नेताओंके सामने बिलकुल स्पष्ट हो गई है और भारतको यह पूछनेका मौका मिला है कि इंग्लैंडके असली इरादे क्या हैं। मैं इंग्लैंडके खिलाफ अपनी लड़ाई तत्काल छोड़ देनेका इरादा लेकर भारत लौट रहा हूँ। उस लड़ाईमें हम अनाक्रामक प्रतिरोध और ब्रिटिश मालका बहिष्कार करेंगे। उन्होंने आगे कहा कि मेरे विचारसे अब यह बहिष्कार ब्रिटेनके संकटको और अधिक गम्भीर बना देनेवाला ज्यादा सशक्त साधन सिद्ध होगा, क्योंकि ब्रिटेन अपनी मुद्राके अवमूल्यन और बेरोजगारीके कारण पहलेसे ही कठिनाईमें पड़ा हुआ है। सभी ब्रिटिश उत्पादनोंके लिए भारतका बाजार बन्द हो जाने से इंग्लैंडकी औद्योगिक प्रवृत्तियोंमें भारी कमी आ जायेगी, बेरोजगारी बढ़ जायेगी और पौंडका मूल्य और भी गिर जायेगा।

श्री गांधीने अपनी बात समाप्त करते हुए इस बातपर दुःख प्रकट किया कि अबतक बहुत कम यूरोपीय देशोंने भारतकी समस्यामें दिलचस्पी दिखाई है। यह बहुत दुःखद बात है, भारतके स्वतन्त्र और समृद्धिशाली बननेसे दूसरे राष्ट्रोंके उत्पादनोंके लिए वहाँ ज्यादा अच्छा बाजार मिलेगा और भारतकी स्वतन्त्रताके परिणाम सभी देशोंके साथ उसके व्यापारिक और बौद्धिक आदान-प्रदानके रूपमें प्रकट होंगे।

(ब)

गांधीजी का खण्डन

१८ दिसम्बर, १९३१ के 'टाइम्स' में निम्न विवरण प्रकाशित हुआ है:

गांधीजी जब थोड़े समयके लिए रोममें रुके थे तब उन्होंने, जैसाकि बताया गया था, 'जर्नल डी' इटालिया' को एक मुलाकात दी थी, जो साररूपमें १५ दिसम्बरके 'टाइम्स' में छपी थी। अब गांधीजी ने उस मुलाकातकी प्रामाणिकताका पूरा खण्डन भेजा है। उनपर जो वक्तव्य आरोपित किया गया था वह एक बातके बारेमें — अर्थात् भारतमें फिरसे सविनय अवज्ञा छेड़े जानेकी सम्भावनाके बारेमें — उनके पहलेके कथनोंसे इतना भिन्न था कि उन्होंने वास्तवमें क्या कहा, इसकी ठीक-ठीक जानकारी प्राप्त करना आवश्यक जान पड़ा। फलतः एक अधिकृत हलकेसे श्री गांधीको भूमध्य सागरमें इतालवी जहाज 'पिलसना' पर निम्नलिखित तार भेजा गया।

अखबारोंमें समाचार है कि जहाजपर चढ़नेपर आपने 'जर्नल डी' इटालिया' को एक वक्तव्य दिया, जिसमें निम्न बातें कहीं:

(१) गोलमेज-परिषद्से भारतीय राष्ट्र और ब्रिटिश सरकारके सम्बन्धोंमें निश्चित तौरपर बिगाड़ आ गया है।

(२) इंग्लैंडके विरुद्ध तुरन्त फिरसे संघर्ष आरम्भ करनेके लिए आप भारत लौट रहे हैं।

(३) अब बहिष्कार ब्रिटेनके संकटको और गम्भीर बनानेवाला पहलेसे कहीं अधिक सक्षम साधन सिद्ध होगा।

(४) हम कर नहीं देंगे, हम इंग्लैंडके लिए किसी तरहसे काम नहीं करेंगे, हम ब्रिटिश सत्ताधारियोंको सबसे अलग-थलग कर देंगे, हम उनकी राजनीति और

उनकी संस्थाओंका किसीसे कोई सम्बन्ध-सम्पर्क नहीं रहने देंगे और हम सारे ब्रिटिश मालका पूरा बहिष्कार करेंगे।

यहाँ आपके कुछ मित्रोंका खयाल है कि निश्चय ही आपकी बातोंको गलत रूपमें पेश किया गया है। अगर ऐसा हो तो खण्डन वांछनीय।

गांधीजी का उत्तर

कल श्री गांधीसे तार द्वारा निम्नलिखित उत्तर मिला है :

'जर्नल डी' इटालिया' की खबर बिलकुल झूठी है। मैंने रोममें किसी भी पत्रकारको कोई मुलाकात नहीं दी। मेरी आखिरी मुलाकात स्विटजरलैंडमें विलेन्यूवमें रायटरको दी गई मुलाकात थी। उसमें मैंने भारतके लोगोंसे जल्दबाजीमें कोई फैसला न करके मेरे वक्तव्यकी प्रतीक्षा करने को कहा था। मैं झगड़ा खड़ा करनेवाला कोई कदम नहीं उठाऊँगा, बल्कि पहले अधिकारियोंसे पर्याप्त अनुनय-विनय करूँगा और सीधी कार्यवाहीका सहारा, अगर दुर्भाग्यवश जरूरी ही हो गई, तो उसके बाद ही लूँगा। कृपया इस वक्तव्यको यथासम्भव अधिकसे-अधिक प्रसारित करें।

अपनी रिपोर्ट की सत्यतापर श्री गेंडाका आग्रह

२१ दिसम्बर, १९३१ के 'टाइम्स' में निम्न प्रकार छपा है :

'जर्नल डी' इटालिया' में श्री गांधी द्वारा जो वक्तव्य दिया बताया गया है, उससे उनकी ओरसे किये गये खण्डनको स्वीकार करने से श्री गेडाने बिलकुल इनकार कर दिया है। एक संक्षिप्त टिप्पणीमें श्री गेडाने स्पष्ट कहा है कि उनके अनुसार महात्माजी ने जो बातें कहीं वे उनकी और अन्य गवाहोंकी उपस्थितिमें उनके बोलते समय ही लिख ली गई थीं। इस मामलेके तथ्योंको जहाँतक मैं समझ पाया हूँ उससे लगता है कि श्री गांधीका यह 'खण्डन' इस हदतक ठीक है कि श्री गेडाने उनसे विधिवत् कोई 'मुलाकात' नहीं माँगी थी और न उन्होंने 'मुलाकात' दी ही थी।

मुझे जो सूचना मिली है उसके अनुसार महात्माजी से श्री गेडाका परिचय किसीके घर कराया गया था और श्री गांधीको यह साफ बता दिया गया था कि श्री गेडा कौन हैं। जब श्री गांधी श्री गेडा द्वारा कथित वे महत्त्वपूर्ण बातें कहने लगे तब श्री गेडाने पेंसिल और कागज माँगा, क्योंकि वे बातें उन्हें बहुत दिलचस्प लगीं और वे नहीं चाहते थे कि बादमें उन्हें स्मरण करने में कोई भूल रह जाये। पेंसिल और कागज श्री गेडाको दे दिया गया। तब श्री गेडा श्री गांधी और उनके अनुयायीकी उपस्थितिमें उसी समय उनकी बातोंको लिपिबद्ध करने लगे। उनमें से किसीने भी ऐसी कोई बात नहीं कही कि वे बातें प्रकाशनार्थ नहीं थीं।

इसलिए मामलेका जो विवरण मुझे प्राप्त हुआ है उससे लगता है कि जहाँ तक इन बातोंके सारका सम्बन्ध है श्री गेडाने, जो मेरी व्यक्तिगत जानकारीके अनुसार अंग्रेजी अच्छी तरह समझते हैं, महात्माजी की बातोंको खास सावधानीके साथ लिपिबद्ध कर लिया।

जैसा मीराबहनको याद है

यह बात दो वर्ष तीन महीने पहले की है और उसका मुझे जो स्मरण है वह निम्न प्रकार है :

गांधीजी को उनके साथियों समेत अनौपचारिक तौरपर मिलने-जुलनेके लिए निमन्त्रित किया गया। यह मिलना-जुलना रोमकी एक इतालवी काउंटेसके घर हो जाता था। काउंटेस इटलीके बम्बई-स्थित वाणिज्य दूतकी मित्र थीं और उन दिनों वाणिज्य-दूत भी रोममें ही थे। मिलने-जुलनेका सिलसिला काफी लम्बे समयतक चला। पहले तो गोल कमरेमें काफी देरतक बातचीत हुई, फिर तीसरे पहरका नाश्ता हुआ और उसके बाद फिर बातचीतका सिलसिला चला। गांधीजी के वहाँ पहुँचनेपर शुरूमें तो हम लोगोंमें से केवल मैं ही उनके साथ थी, बाकी लोग एक-एक करके बादमें आये। गांधीजी जबतक वहाँ रहे, मैं उनके साथ रही। सिर्फ अन्तिम समयसे कुछ देर पहले १५-२० मिनटके लिए उनसे अलग हुई थी, क्योंकि उनके लिए कुछ फल आदि तैयार करने और खुद भी कुछ नाश्ता करने मैं भोजन-कक्षमें चली गई थी।

जहाँतक अब मुझे याद है, आरम्भमें बातचीत सामाजिक और विविध विषयों पर होती रही। काउंटेस लोगोंसे गांधीजी का परिचय कराती और विभिन्न विषयों पर बातचीत आरम्भ करनेमें पहल करती रहीं। जब बातचीतमें जान आ गई तो हमने देखा कि दो-तीन सज्जन आग्रहपूर्वक गांधीजी से राजनीतिक और आर्थिक स्थितिके सम्बन्धमें प्रश्न पूछने लगे। मुझे याद है कि उनमें से एकने कागज-पेंसिल भी माँगे और वह बातचीतको लिपिबद्ध करने लगा। कुछ देर बाद उस मिलन-समारोहमें आमन्त्रित अन्य लोग भी आने लगे और तब जल्दी ही हम भोजन-कक्षके बगलके एक बड़े कमरेमें चले गये। यहाँ फिर बातचीत आम ढंगकी हो गई — सिवा इसके कि गांधीजी ने किसीके साथ गम्भीरतापूर्वक कुछ बातें कीं, लेकिन किसके साथ, यह मुझे याद नहीं है।

जब मैं कुछ देरके लिए बाहर चली गई थी, उस समयके अलावा और सारे समय मैं गांधीजी का बोला एक-एक शब्द सुनती रही। वे राजनीतिक और आर्थिक प्रश्नोंके वैसे ही जवाब दे रहे थे जैसे वे आम तौरपर देते हैं। हाँ, जवाब जरा जोर देकर और साफ सीधी भाषामें दे रहे थे, जिसका एक कारण तो यह था कि इतालवी सज्जनोंको अंग्रेजी समझनेमें कठिनाई होती थी और दूसरा यह कि प्रश्न बहुत आग्रहके साथ पूछे जा रहे थे। 'टाइम्स' के संवाददाताके अनुसार गांधीजी ने जैसी बातें कहीं अगर सचमुच उन्होंने वैसी कोई बात कही होती तो मैं भौंचक्की रह जाती। वैसी बात कहनेका मतलब तो यह होता है कि उन्होंने अपने आदर्शों और विश्वासोंको तिलांजलि दे दी है। इस हालतमें मैं आगे उनको अपना मार्गदर्शक और पिता मानकर नहीं चल सकती थी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, ३-११-१९३४

परिशिष्ट ३

गांधीजी के विचारोंपर[1] प्यारेलाल नैयरकी टिप्पणी

[४ अप्रैल, १९३४ या उसके पश्चात्][2]

यह कदम पूना-समझौतेका स्वाभाविक परिणाम है। जब पूना-प्रस्तावके अधीन पिछले अगस्त महीनेमें सामूहिक सविनय अवज्ञा स्थगित की गई उस समय यह अपेक्षा की गई थी कि जो लोग कर सकते हैं उन सबको व्यक्तिगत सत्याग्रह करना चाहिए। इसके पीछे विचार यह था कि लोगोंको सत्याग्रहकी चिनगारीको जीवित रखना चाहिए, ताकि अनुकूल अवसर आनेपर आन्दोलन फिरसे प्रज्वलित अग्निकी तरह धधक सके। ऐसा माना गया था कि जो लोग सत्याग्रहको अपनायेंगे उनमें अपने अन्दर उसके लिए स्वतन्त्र रूपसे प्रेरणा जगाने की पूरी क्षमता होगी और वे चाहे जितने लम्बे समयतक बिना किसी निर्देशन या मार्गदर्शनके इस राहपर चल सकते हैं और इतने प्रभावप्रद ढंगसे चल सकते हैं कि सत्याग्रहियोंकी संख्या में कमी होनेसे जो क्षति होगी उसकी पूर्ति इन लोगोंके सत्याग्रहकी गुणवत्ता कर देगी।

लेकिन अनुभवसे सिद्ध हो गया है कि जो धारणा कायम की गई थी वह निराधार थी। जिन लोगोंने इस सत्याग्रहको अपनाया उन्होंने सत्याग्रहकी भावनाको पूरी तरहसे हृदयंगम नहीं किया था। व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेवालोंमें से लगभग हरेक इसलिए लड़ रहा था कि उसे लगता था कि उसे लड़ना है, लेकिन कोई भी यह मानकर नहीं लड़ रहा था कि लड़ना उसका धर्म है। जो लोग जेलोंसे बाहर आये उन्होंने फिर जेल जानेकी जल्दी नहीं दिखाई। इसके बजाय वे हिचकते और लड़-खड़ाते रहे। उनमें से जो लोग सर्वश्रेष्ठ थे उन्हें भी जेलमें आध्यात्मिक उत्साहके बजाय मानसिक व्यथाकी ही अनुभूति हुई। जो बलिदान स्वत:स्फूर्त और स्वाभाविक नहीं, बल्कि लाचारीवश किया जाये उससे किसीका कोई भला नहीं हो सकता है।

इन परिस्थितियोंमें बापूको लगा कि व्यक्तिगत सत्याग्रहको जारी रखने से आंत-रिक ह्रास ही होगा। उसका किसीपर भौतिक दृष्टिसे किसी बातके लिए मजबूर करनेवाला प्रभाव पड़े, इस दृष्टिसे वह नगण्य था, और आध्यात्मिक प्रभाव डालनेकी दृष्टिसे बहुत अधिक उलझा हुआ और एकरूपता-विहीन था। चूँकि कोई तात्कालिक राजनीतिक परिणाम दिखानेकी दृष्टिसे वह अपर्याप्त साबित हुआ, इसलिए उससे

१. देखिए पृ० ३८३; गांधीजी ने ये विचार मु० अ० अन्सारी, डॉ० विधानचन्द्र राय और भूलाभाई देसाईके साथ हुई बातचीतमें व्यक्त किये थे। साधन-सूत्रमें गांधीजी की लिखावटमें सुधार भी किये हुए हैं। ऐसा ही विवरण रावजीभाई पटेल ने भी तैयार किया था।

२. बातचीत ४ अप्रैल को हुई थी।

विप्लववादियोंकी देशप्रेमकी भावनाको संतुष्टि नहीं मिली और चूँकि वह गुणवत्ताकी दृष्टिसे कमजोर पड़ता था, इसलिए वह उनकी आदर्शवादकी उस भावनाको छूनेमें असफल रही जो आत्माभिव्यक्ति और आत्मबलिदानके अधिकाधिक सशक्त रूपोंको अपनानेको लालायित थी।

यह कदम बापूके लिए सत्याग्रहके आदर्शको अन्तिम सीमातक शुद्ध और गहन बनाने का उपक्रम है। ऐसा खतरा था कि व्यक्तिगत सत्याग्रहको बेमनसे अपनानेवाले लोग, ऐसे समयमें जब उसे अधिकसे-अधिक प्रज्वलित होना चाहिए, कहीं उसकी शिखाको बुझा न दें और उसकी शक्तिको शेष न कर दें। संख्याबलके दूषित प्रभावसे मुक्त रहकर इसे और अधिक प्रभावकारी साबित होना चाहिए।

अब भी जो स्थिति है उसमें बापूको लगता है कि अगर आज नहीं तो निकट भविष्यमें हजारों सत्याग्रहियोंको मैदानमें उतारना सम्भव होगा। हरिजन-कार्यके निमित्त आज वे जो दौरा कर रहे हैं उसके अनुभवने उनके मनमें इसके बारेमें कोई शंका नहीं रहने दी है। लेकिन अब उन्हें इस बातकी प्रतीति हो गई है कि सफल लड़ाईके लिए सविनय अवज्ञाकी योजनामें . . . आमूल परिवर्तन करना होगा और उसका विस्तार करना होगा। यह किस प्रकार किया जायेगा, यह वे अभी नहीं बता सकते। हम खास-खास वर्गोंको अपने लक्ष्यकी पूर्तिमें सन्नद्ध नहीं कर पाये हैं। वे सब निरपवाद रूपसे अवसरकी माँग पूरी करनेमें विफल रहे हैं और विशिष्ट वर्गोंके समर्थनके अभावमें जनसाधारण बिलकुल लाचार-बेबस हो गया है। दूसरे शब्दोंमें, बापूको अचानक ऐसा बोध हुआ है कि हम एक अँधेरी गलीमें बढ़ते चले जा रहे थे। अपने कदम वापस लेना नितान्त आवश्यक था। अगर जनआन्दोलन हर तरहसे ठीक-ठाक चलता रहता तब भी देर-सवेर व्यूहमें यह परिवर्तन अनिवार्य ही होता। चूँकि स्थिति ऐसी है, इसलिए बापू अपनी असंगठित सेनाकी शेष शक्तिको अधिकतम सीमातक सुरक्षित रखनेको उत्सुक हैं और वे देशको पुनर्गठन, विश्राम और अपनी खोई हुई शक्तिकी पुन:प्राप्तिके लिए समय देना चाहते हैं।

वे स्वयं आदर्श सत्याग्रही बने रहे हैं। लेकिन बापू किसी सर्वरूपेण परिपूर्ण सत्याग्रहीको भी अभी सत्याग्रह जारी नहीं रखने देना चाहेंगे, क्योंकि उनका विचार है कि अगली लड़ाईकी योजना अलग ढंगपर बनाई जानी चाहिए। अभी किसीको सत्याग्रह करने देना शक्तिको व्यर्थ गँवाना होगा। उन्हींके शब्दोंमें, यह तो किसी सही चेकको गलत समयमें गलत बैंकमें भुनानेकी कोशिश करने-जैसा होगा।

आज नहीं, बल्कि १९३३ के अगस्त महीनेमें ही उन्हें ऐसा लगने लगा था कि इस आन्दोलनमें कहीं कोई आन्तरिक दोष है। लेकिन उस समय एक तो एकके-बाद-एक उपवास करते रहनेके कारण और फिर हरिजन-कार्यके निमित्त आरम्भ किये दौरेकी वजहसे वे अपनी इस भावनाका अधिक विश्लेषण न कर पाये। अभी पिछले दिनों उन्होंने कहा था कि "जो कदम मैंने आज उठाया है, वह मुझे पूना-समझौतेके बाद ही उठाना चाहिए था। तबसे हरेक कार्यकर्त्ताकी गिरफ्तारी मुझे बुरी लगी है। लेकिन मैंने अज्ञानवश किसी ऐसे मूढ़ सट्टेबाज की तरह चीजोंको अपने ढंगसे चलने दिया है जो तब भी नहीं सँभल पाता है जब हालत ऐसी होती है कि हर नये

सौदेके साथ उसके अन्ततः अपनी आर्थिक स्थिति ठीक कर पानेकी सम्भावना दूर खिसकती जाती है।" एक अन्य अवसरपर उन्होंने कहा: "अपने उत्तम साथियोंको अब जेल जाने देनेका मतलब तो सबमें अयोग्य लोगोंका अस्तित्व कायम रखनेके लिए ही सौदा करना होगा। योग्यतम लोग ठीक बुनियादी तैयारीके अभावमें बरबाद हो जायेंगे और फिर मेरे चले जानेके बाद सारा क्षेत्र वीरान-बंजर पड़ा रहा जायेगा।" इसलिए अपने पुराने साथियोंकी निरर्थक बलि देनेके बजाय उन्होंने वर्तमान गतिरोधके कारण रुद्ध पड़ी सविनय अवज्ञाकी शक्तियोंका द्वार खोल देनेका फैसला किया, ताकि वे शक्तियाँ, देशपर गुलामीके जो और भी शिकंजे डालनेकी कोशिश की जा रही है, उनका जैसे सम्भव हो वैसे विरोध कर सकें। इस बीच वे स्वयं सत्याग्रहके सम्बन्धमें नई शोध करते हुए अपनी प्रयोगशालामें सक्रिय रहेंगे। ईश्वरकी कृपा हुई तो समय आनेपर वे ऐसा शस्त्र ढूँढ़ निकालनेकी आशा रखते हैं जो हमें वह चीज देगा जो अबतक हमारे पास नहीं थी।

ध्यातव्य है कि गांधीजी ने व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाके सम्बन्धमें सत्याग्रहियोंकी अपूर्णताके बारेमें जो-कुछ कहा है वह पूना-प्रस्तावसे पहले घटित होनेवाली बातोंपर लागू नहीं होता। पूर्ण सत्याग्रह सामूहिक प्रतिरोधके लिए नहीं, केवल व्यक्तिगत प्रतिरोधके लिए आवश्यक था। गलती इस बातमें हुई कि ऐसे समयमें, जबकि पूर्ण सत्याग्रही सामने नहीं आ रहे थे, व्यक्तिगत सविनय प्रतिरोधकी अनुमति दी गई। अगर सामूहिक सविनय अवज्ञा कल आरम्भ करनी पड़ जाये तो हम पूर्ण सत्याग्रही तैयार होनेकी प्रतीक्षा नहीं करते रहेंगे। इसलिए सामूहिक सत्याग्रहके भविष्यके विषय में हताश होनेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि पूर्णता सामूहिक सविनय अवज्ञाकी अनिवार्य शर्त नहीं है।

विशिष्ट प्रयोजनोंके लिए सविनय अवज्ञा करने की छूट तो कायम ही है। लेकिन निकट भविष्यमें या व्यापक तौरपर उसके प्रयोगकी सम्भावना नहीं है। लेकिन बापूकी ऐसी श्रद्धा है कि राष्ट्रमें इस दृष्टिसे पर्याप्त जीवन-शक्ति है कि वह इस दलदलसे खींचकर अपनेको आगे ले जाये। देशको अपनी खोई हुई शक्ति फिर पानेमें जो समय लग सकता है उसे कम किया जा सकता है। इसके लिए आजके सत्याग्रहियों को आदर्श रचनात्मक कार्यकर्त्ताओंके रूपमें काम करना होगा और सविनय प्रतिरोधसे मुक्त हुई शक्तिको निराशा या आमोद-प्रमोदमें रत होकर बरबाद होने देनेके बजाय देशको उस जड़तासे छुटकारा दिलानेमें करना होगा जिसे आज उसने ग्रस लिया है। यहाँ मैं इतना और कह दूँ कि अभी बापूके दिमागमें बहुत-सी नई रचनात्मक योजनाएँ उभर आई हैं। वे [देशमें] ऐसे संगठनों और संस्थाओंका जाल बिछा देनेकी बात सोच रहे हैं जिनका आधार हमारी पुरानी संस्थाओंकी तरह समझौतावादी दृष्टिकोणोंसे दूषित आदर्श नहीं होंगे, बल्कि शुद्ध और निर्दोष सिद्धान्त होंगे। पुरानी संस्थाएँ अपने समयके लिए ठीक थीं, लेकिन अब हमें अपनी यात्राके शेष भागको तय करनेके लिए जैसी संस्थाओंकी जरूरत है उन्हें अलग साँचेमें ढालनेकी आवश्यकता है। इसलिए

एक तरहसे यह अच्छा ही है कि पुरानी संस्थाएँ मिट गई हैं और नईके उदयके लिए मैदान खाली छोड़ गई हैं।

अन्तमें, यह याद रखना चाहिए कि आजादीकी लड़ाई छोड़ी नहीं गई है। सविनय अवज्ञा स्थगित नहीं की गई है। यह आज भी कांग्रेसका अधिकृत कार्यक्रम है। अगर सरकारको यह भी बर्दाश्त नहीं है कि कांग्रेस सबके लिए सविनय अवज्ञा का रास्ता बन्द करके केवल बापूको उसकी अनुमति दे तो सबसे अच्छा यही रहेगा कि अभी कांग्रेस ही स्थगित रहे। डॉ० अन्सारी, भूलाभाई और डॉ० राय इस बात पर सहमत हैं कि चाहे जो भी हो, कांग्रेसको बापूकी सविनय अवज्ञाको अस्वीकार नहीं करना चाहिए। क्योंकि उसे अस्वीकार करनेका मतलब कांग्रेसकी मृत्यु होगा। लेकिन अगर बापूके सबसे ताजे वक्तव्यके बाद सरकार बिना शर्त कांग्रेसपर से फिरसे प्रतिबन्ध हटाकर सविनय अवज्ञाको एक न्यायोचित राजनीतिक अस्त्रके रूपमें मान्य करती है तो कांग्रेसको यह छूट होगी कि वह सविनय अवज्ञाको एक वैकल्पिक अस्त्रके रूपमें स्वीकार करते हुए कौन्सिल-कार्यक्रमको अपना ले।

गांधीजी के जीवनकालमें स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए फिर सविनय अवज्ञा आरम्भ करनेकी जो शर्तें हैं उनसे समझदार लोगोंको कोई परेशानी नहीं होनी चाहिए। यह समझ लेना चाहिए कि निर्धारित अवधिमें गांधीजी ने अपने ऊपर आप ही जो प्रतिबन्ध लगा रखे थे उनके कारण उन्हें अपने वक्तव्यमें बहुत-सी बातें अनकही ही छोड़ देनी पड़ीं। उस वक्तव्यमें ऐसी कोई बात नहीं है जो राष्ट्रको किन्हीं विशेष प्रयोजनोंसे — जैसेकि अगर सरकार गांधीजी को अनिश्चित कालतक जेलमें डाले रखना चाहे तो उन्हें रिहा करानेके लिए — सीधी और वहुत ही व्यापक ढंगकी व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा करनेसे रोके। १९३०में भी सामूहिक संघर्षकी चरम परिणति उसी रूपमें हुई थी।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९१४०) से।

सामग्रीके साधन-सूत्र

इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन।

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली: गांधी-साहित्य और सम्बन्धित कागजात-का केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद: पुस्तकालय तथा आलेख संग्रहालय, जहाँ गांधीजी से सम्बन्धित कागजात सुरक्षित हैं।

'अमृत बाजार पत्रिका': कलकत्तासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'इंडियन नेशन': पटनासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'गुजराती': बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'न्यू ओरिसा': बरहमपुरसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'सर्चलाइट': पटनासे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'स्टेट्समैन': कलकत्ता और नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हरिजन' (१९३३-५२): गांधीजी द्वारा संपादित अंग्रेजी साप्ताहिक जो पहले पूनासे प्रकाशित होता था और १९४२ से अहमदाबादसे प्रकाशित होने लगा।

'हरिजनबन्धु': चन्द्रशंकर शुक्ल द्वारा सम्पादित गुजराती साप्ताहिक जो पहले पूनासे प्रकाशित होता था और बादमें अहमदाबादसे प्रकाशित होने लगा।

'हरिजनसेवक': वियोगी हरि द्वारा सम्पादित हिन्दी साप्ताहिक जो पहले दिल्लीसे प्रकाशित हुआ था।

'हिन्दुस्तान टाइम्स': नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'इन द शैडो ऑफ महात्मा' (अंग्रेजी): जी० डी० बिड़ला, ओरिएन्ट लांग-मैंस लि०, कलकत्ता, १९५३।

'नरसिंगरावनी रोजनिशी' (गुजराती): नरसिंगराव भोलानाथ दिवेटिया; गुजरात विद्या सभा, अहमदाबाद, १९५३।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद': काका कालेलकर द्वारा सम्पादित; जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'बापुना पत्रो-२ : सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती): मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५२।

'बापुना पत्रो-४: मणिबहेन पटेलने' (गुजराती): मणिबहेन पटेल द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो-६: गं० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती): काकासाहब कालेलकर द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापुना पत्रो-७: श्री छगनलाल जोशीने' (गुजराती): छगनलाल जोशी द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६२।

'बापुना बाने पत्रो' (गुजराती): इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स, नेटाल, १९४८।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती): मथुरादास त्रिकमजी; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष': एच० एल० शर्मा; ईश्वरशरण आश्रम, इलाहाबाद, १९५७।

'बापूके पत्र-८: बीबी अमतुस्सलामके नाम': काकासाहब कालेलकर द्वारा सम्पादित; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६३।

'महात्मा: लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी', खण्ड ३ (अंग्रेजी): डी० जी० तेन्दुलकर; पब्लिकेशन्स डिवीजन, मिनिस्ट्री ऑफ इन्फार्मेशन एण्ड ब्रॉडकास्टिंग, नई दिल्ली।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी): एलाइस एम० बार्न्ज़ द्वारा सम्पादित; नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, १९५६।

गांधी-नेहरू पेपर्स: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्लीमें सुरक्षित कागजात।

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स, १९३४ (अंग्रेजी): बम्बई सरकारके दफ्तरी प्रलेख।

श्रीप्रकाश पेपर्स: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्लीमें सुरक्षित कागजात।

स्पीगल पेपर्स: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्लीमें सुरक्षित कागजात।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१६ जनवरी से १७ मई, १९३४)

१६ जनवरी : कालिकटमें जमोरिनसे मिले और मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नपर बातचीत की। शामको कोचीनके दौरेके लिए कालिकटसे प्रस्थान किया।

१७ जनवरी : त्रिचूरमें। हरिजन वस्ती देखी। त्रिचूर, कुरुक्कनचेरी और अलवायेकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले। पेरुवनम्, इरिंजलकुडा और चलकुडा गये। सायं-काल एर्नाकुलम् गये।

१८ जनवरी : पल्लुरुथी, थुरवूर, एर्नाकुलम् और एलप्पीकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले। त्रिपुनित्तूर, चलवेन्नूर और नेडमुडि गये।

१९ जनवरी : कोट्टायम्की सार्वजनिक सभामें बोले। चंगनचेरीमें आनन्दाश्रमका उद्-घाटन किया। ओड्र और पोनमाना गये।

२० जनवरी : पोनमाना, क्विलोन और त्रिवेन्द्रमकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले। त्रावणकोर सरकारकी उस विज्ञप्तिके सम्बन्धमें मुलाकात दी जिसमें तालाबों और कुओंको सभी जातियोंके लिए खुला घोषित किया गया था। शिवगिरि और वरकल गये।

२१ जनवरी : त्रिवेन्द्रममें। हरिजन-छात्रावास देखा। नैय्यट्टिनकारा, पप्पनम् अमराविलई कुझुथोरई, तक्कलई गये।

२२ जनवरी : कन्याकुमारी पहुँचे।

२३ जनवरी : कन्याकुमारीमें सेल्फ-रेस्पेक्ट पार्टीके सदस्योंको मुलाकात दी। नंगनेरी और वेल्लियूर गये। तिन्नवल्ली पहुँचे।

२४ जनवरी : तिन्नवल्ली और तूतीकोरिनकी सार्वजनिक सभाओंमें लोगोंसे बिहार भूकम्प-पीड़ित सहायता कोषके निमित्त और अस्पृश्यताको मिटानेके लिए उदारता-पूर्वक चन्दा देनेका अनुरोध किया। पालमकोट्टा और तेनकाशी गये।

२५ जनवरी : राजापालयम्की सार्वजनिक सभामें बोले। तूतीकोरिन, एत्तैयापुरम्, कोइल-पट्टी, शंकरनकोइल, शिवकाशी, विरुधुनगर और कालिगुडि गये।

२६ जनवरी : मदुरामें व्यापारियोंसे बिहार भूकम्प-पीड़ित सहायता कोषके लिए चन्दा देनेका अनुरोध किया। नगरपालिकाकी सभा, महिलाओंकी सभा, हिन्दी प्रचारक-सभा तथा मजदूरोंकी सभामें बोले।

२७ जनवरी : कराईकुडी नगर-परिषद्की सभामें भाषण देते हुए हरिजनोंके साथ अधिक अच्छा व्यवहार करने का अनुरोध किया।
करा‌ईकुडी और देवकोट्टाकी सार्वजनिक सभाओंमें बोलते हुए बिहार भूकम्प-पीड़ित सहायता कोषके लिए उदारतापूर्वक चन्दा देनेका अनुरोध किया।
थेरु-कुथेरु, किलाऊर, चित्तनूर, तिरुपत्तूर, पगनेरि, शिवगंगा और मनमदुरई गये।

२८ जनवरी : देवकोट्टामें हरिजन-स्कूलका शिलान्यास किया।
चित्तनूरकी हरिजन-चेरीमें बोले।
नाटार-हरिजन समस्यापर 'हिन्दू' को मुलाकात दी।
पोलाचि और पोदनूर गये।

२९ जनवरी : मेत्तुपालयम् और कुनूरमें।

३० जनवरी : कुनूरमें।

३१ जनवरी : रामनगरमें हरिजन-पाठशालाका शिलान्यास किया।

१ फरवरी : कुनूरकी आदि-द्रविड़ जन-सभाके शिष्टमण्डलको मुलाकात दी।

२ फरवरी : कोटगिरिकी सार्वजनिक सभामें बोले।
बिहारके भूकम्प-पीड़ितोंकी सहायताके लिए विदेशोंके नाम अपील जारी की।

३ फरवरी : ओत्तुपतराई और थण्डकरनचेरी, ये दो हरिजन-बस्तियाँ देखीं।
कुनूरकी सार्वजनिक सभामें अस्पृश्यतापर बोले।

४ फरवरी : ऊटकमण्डमें रामकृष्ण आश्रम, दक्षिणमूर्ति आश्रम और ओमप्रकाश मठ देखा। आदि-हिन्दुओंके शिष्टमण्डलको मुलाकात दी।

५ फरवरी : कुनूरमें।

६ फरवरी : इरोड, चोक्कमपालयम्, तिरुपुर, कोयम्बटूर और पोदनूरमें सार्वजनिक सभाओंमें भाषण दिये।

७ फरवरी : पोलाचि, पलनी और डिंडीगलकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले।
पोनदर, उदमलपेट और बन्निवलासि गये।

८ फरवरी : बतलागुंडु और बाडुगपत्ति गये।

९ फरवरी : थेवरम्में सार्वजनिक सभा और महिलाओंकी सभामें बोले।
कुम्बम् बोदिनायकनूर और थेनी गये। त्रिचिनापल्लीके लिए रेलगाड़ीसे प्रस्थान किया।

१० फरवरी : श्रीरंगम्की सार्वजनिक सभामें बोले। श्रीरंगमके हरिजनोंको मुलाकात दी।
त्रिचिनापल्लीमें नेशनल कॉलेज और एक सार्वजनिक सभामें बोले। मनचनल्लूर, समयापुरम् और चिन्तामणि गये।

११ फरवरी : करूर, इरोड और तिरुचेनगोडुकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले। कुलित्त-लई, मायनूर, कोडुमुडि, भवानी और पुदुपालयम् गये।

१२ फरवरी : पुदुपालयम्की सार्वजनिक सभामें बोले।

जवाहरलाल नेहरू इलाहाबादमें गिरफ्तार।

१४ फरवरी : नामक्कल और सलेमकी सार्वजनिक सभाओंमें गांधीजी ने भाषण दिये। सेंदमंगलम् गये।

१५ फरवरी : तंजौर, कुम्भकोणम् और नेगापटम्की सार्वजनिक सभाओंमें बोले।

१६ फरवरी : अन्नामलाई विश्वविद्यालय (चिदम्बरम्)के विद्यार्थियोंकी सभा और कराइकल, सियाली तथा कडलूरकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले।

जवाहरलाल नेहरूको दो वर्षके कारावासका दण्ड मिला।

गांधीजी नागोर, तिल्लइयाडि और मायावरम् गये।

१७ फरवरी : पाण्डिचेरीकी सार्वजनिक सभामें बोले।

गांधीकुप्पम, तिरुवन्नमलाई और वेल्लूर गये।

काका कालेलकरको दो वर्षका कारावास मिला।

१८ फरवरी : गांधीजी वेल्लूरकी सार्वजनिक सभामें बोले।

कटपादि और अम्बूर गये।

तिरुपत्तूरमें क्राइस्टकुल आश्रममें बोले।

१९ फरवरी : मद्रासमें।

२० फरवरी : मद्रासमें। 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको मुलाकात दी।

२१ फरवरी : कांजीवरम्, आर्नी और आरकोणम्की सार्वजनिक सभाओंमें बोले।

चिंगलपुट, वालजापेट, रानीपेट और आर्काट गये।

२२ फरवरी : मोटरगाड़ीसे मैसूरसे कुर्गके लिए रवाना हुए। हुडेकेरी और पन्नमपेटकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले।

२३ फरवरी : विराजपेट और मरकाराकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले। बेल्लूर, सोम-वारपेट और गुंडुकुट्टी गये।

२४ फरवरी : पुत्तूरकी सार्वजनिक सभा और मंगलोरमें ज्ञानोदय समाज, महिलाओंकी सभा तथा सार्वजनिक सभामें बोले।

मरकारा, सम्पाजे, सुलया उप्पिंगडि, विट्ठल-गावका, कन्नडका, पानेमंगलोर और बंटवाल गये।

२५ फरवरी : मंगलोरमें विद्यार्थियोंकी सभामें और मुल्की, उडीपी तथा कुन्दपुरकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले।

२६ फरवरी : कुन्दपुरमें।

२७ फरवरी : भक्तल, होनवर, तादरी और करवर गये।

२८ फरवरी : सिरसीकी सार्वजनिक सभामें बोले। करवर, बिनागा, चाँदिया, अंकोला, हीरेगुट्टि, मदनगिरि, कुमाटा, अमीनपल्ली और हेगडे गये।

१ मार्च : सिद्दापुरकी सार्वजनिक सभामें बोले। कनसूर, दसनकोप, इसलूट, एकम्बी, समासजी, अलूर, देवीहोसुर, हांवेरी, ब्याडगी, मोतीबनूर और मुरगीमठ गये।

२ मार्च : हावेरी, रानीबेन्नूर, हरिहर, दावनगिरि, दुग्गथि, बेमीपल्ली, हरपनहल्ली, कोत्तूर, कुडिलगी, कनीविहल्ली और सन्दूर गये।

३ मार्च : बेल्लारीकी सार्वजनिक सभामें बोले। होसपेट, भानपुर, गाडग, जक्कलि और हुबली गये।

४ मार्च : हुबलीमें रेल-कर्मचारियोंकी सभामें बोले। धारवाड़, मारेवाडी, अमीनभावी, मोरा, हारोबिधोंगल उप्पिनबेटगिरि, हीरेउल्लेगिरि, सौंदत्ति, गुरुहोसूर, होसूर, बेलहोंगल, सम्पगाँव, बागेवडी और बेलगाँव गये।

५ मार्च : बेलगाँवमें हरिजन-सेवकोंके प्रश्नोंके उत्तर दिये।

६ मार्च : टोंडिकट्टि गये।

७ मार्च : निपानीमें व्यापारी संघके समक्ष भाषण दिया। यमकनमरदी, वन्तीमूरी, हुकेरी, गोकक, शंकेश्वर, गढ़-हिंगलाज, कनंगल, भोज, नवलिहाल, कोठाली, धोलगरवाडी, चिकोडि, अंकाली और शेडबल गये।

८ मार्च : मंगसूली, बनहट्टी, अठनी, होनवाड, तिकोटा, तोरवी, बीजापुर, इलकाल और जोरापुर गये।

९ मार्च : हैदराबादमें महिलाओंकी सभा और सार्वजनिक सभामें तथा सिकन्दराबादकी सार्वजनिक सभामें बोले।

११ मार्च : इलाहाबादमें कमला नेहरू और स्वरूपरानी नेहरूसे मिले। रातमें पटना पहुँचे।

१२ मार्च : पटनामें। भूकम्प बुलेटिनमें भूकम्प-पीड़ित बिहारके नाम अपना सन्देश लिखा।

१४ मार्च : भूकम्प-प्रभावित क्षेत्रोंका दौरा किया; हाजीपुर, घटारो, लालगंज और मोतीहारी गये।

१५ मार्च : मोतीहारीकी सार्वजनिक सभामें बोले।

मोतीहारीके मध्यवित्त लोगोंके शिष्टमण्डलको मुलाकात दी और चम्पारनके राहत-कार्यकर्त्ताओंसे बातचीत की।

१६ मार्च : मुजफ्फरपुरकी सार्वजनिक सभामें बोले।

पटनामें 'सर्चलाइट' के प्रतिनिधिको मुलाकात दी और छपरा गये।

१८ मार्च : पटनामें बिहार केन्द्रीय राहत समितिकी बैठकमें भाषण दिया।

२० मार्च : पटनाकी सार्वजनिक सभामें बोले।

२१ मार्च : पटनामें राहत समितियोंके प्रतिनिधियोंकी बैठकमें बोले।

२२ मार्च : दानापुरमें बोले।

आश्रमवासियोंको कष्ट-सहनके प्रयोजनसे गिरफ्तार होनेका सिलसिला बन्द करने की सलाह दी।

२३ मार्च : समाचार-पत्रोंको दिये एक सन्देशमें राहत-कार्यकर्त्ताओंके मार्गदर्शनके लिए नियम तय किये।

२४ मार्च : पटनामें। दानापुर गये।

२७ मार्च : छपराकी सार्वजनिक सभामें और उसी शहरमें राहत-कार्यकर्त्ताओंकी एक बैठकमें बोले।

सोनपुर, सरवा, परशुरामपुर और पानापुर गये।

२८ मार्च : हाजीपुर और सोनपुरकी सभाओंमें बोले।

छपरा, मुजफ्फरपुर और बाउलघाट गये।

२९ मार्च : भरथुआ चौर और सीतामढ़ीकी सार्वजनिक सभाओंमें बोले।

३० मार्च : सीतामढ़ीमें कार्यकर्त्ताओंकी सभा और प्रार्थना-सभामें बोले। कमतौल, कोरियापीरा, सुरसण्ड और पुपरी गये।

३१ मार्च : दरभंगा और मधुबनीमें सार्वजनिक सभाओंमें बोले।

दरभंगाके राहत-कार्यकर्त्ताओंसे बातचीत की।

राजनगर पहुँचे।

१ अप्रैल : निर्मली और सहरसा गये।

२ अप्रैल : सहरसासे समाचार-पत्रोंके लिए वक्तव्य जारी किया, जिसमें अन्य लोगोंको सत्याग्रह स्थगित करने की सलाह दी, लेकिन स्वयं व्यक्तिगत सत्याग्रह करने का अधिकार कायम रखा।

३ अप्रैल : मुंगेरमें। सार्वजनिक सभामें बोले।

४ अप्रैल : पटनामें। डॉ० अन्सारी, डॉ० विधानचन्द्र राय, भूलाभाई देसाई आदि कांग्रेसी नेताओंसे स्वराज पार्टीके फिरसे कायम किये जाने और केन्द्रीय विधान-सभाके चुनावोंमें उसके भाग लेनेके बारेमें बातचीत की।

जमालपुर, मोकामा, पण्डारक, बाढ़ और बख्तियारपुर गये।

५ अप्रैल : डॉ० अन्सारीको पत्र लिखकर स्वराज पार्टीके फिरसे कायम किये जाने पर अपनी सहमति दी।

६ अप्रैल : पटनामें बिहारके भूकम्पके सम्बन्धमें 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको मुलाकात दी।

७ अप्रैल : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको दी गई मुलाकातमें कहा कि कौंसिल-प्रवेशके सम्बन्धमें मेरे जो विचार हैं उनकी रक्षा करते हुए स्वराज पार्टीको यथासम्भव सहायता दूँगा।

८ अप्रैल : कटिहार, फारबिसगंज, फुलकाना और अटरिया गये।

९ अप्रैल : पूर्णियामें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। इसके साथ ही बिहारका दौरा समाप्त। असमके हरिजन-दौरेके लिए प्रस्थान।

१० अप्रैल : मध्य रात्रिमें असम पहुँचे।

११ अप्रैल : रूपसीकी सार्वजनिक सभामें लोगोंसे अस्पृश्यता मिटानेका अनुरोध किया।
ढुबरी और बारपेटाकी सभाओंमें भाषण दिये।
गौरीपुर, बंसबारी, चपराकाटा, सोरभोग, हावली और सोरूपेटा गये।

१२ अप्रैल : गोरेश्वर, टंगला, उदलगुरी, बिन्दुकुरी और रंगपाद गये।
तेजपुरकी सार्वजनिक सभामें बोले।
जहाजसे गौहाटीके लिए रवाना हुए।

१३ अप्रैल : गौहाटी पहुँचे। सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
सेवा-आश्रमका उद्घाटन किया।
कुष्ठरोगी आश्रम और हरिजनोंकी बस्तियाँ देखीं।

१४ अप्रैल : गौहाटीमें महिलाओं और मारवाड़ियोंकी सभाओंमें बोले।
चपरमुख, खेतरी, नवगाँव और फुरकातिंग गये।

१५ अप्रैल : गोलाघाटकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
गणकपुखरी, दरगाँव और जोरहाट गये।

१६ और १७ अप्रैल : जोरहाटमें।

१८ अप्रैल : जोरहाटमें। हरिजन नेताओंको मुलाकात दी।
अमेरिकी मिशनरीको मुलाकात दी।
स्वराज पार्टीकी भूमिकाके सम्बन्धमें पत्र-प्रतिनिधियोंको मुलाकात दी।
चरिंग और शिवसागर गये।

१९ अप्रैल : डिब्रूगढ़में एसोसिएटेड प्रेसको मुलाकात दी।
दीमू, सवन, क्वांग और दिहिंग गये।

२० अप्रैल : चबुआ गये।
तिनसुकियामें अस्पृश्यताके सम्बन्धमें एसोसिएटेड प्रेसको वक्तव्य दिया।
सार्वजनिक सभामें भाषण दिया। रेलगाड़ीसे तिनसुकियासे बिहारके लिए प्रस्थान।

२१ अप्रैल : गौहाटीमें।

२२ अप्रैल : कटिहारमें सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
मुजफ्फरपुर पहुँचे।

२३ अप्रैल : मुजफ्फरपुर भूकम्पके कारण विस्थापित लोगोंके लिए बसाई गोखलेपुरी नामकी बस्तीका उद्‌घाटन।

२४ अप्रैल : मुजफ्फरपुरसे प्रस्थान।
पटना पहुँचे।

२५ अप्रैल : कुल्हरिया, जमीरा और आरा गये।
बक्सरकी सार्वजनिक सभामें बोले।
जसीडीहमें गांधीजी की मोटरगाड़ी पर सनातनियों द्वारा लाठियों और पत्थरोंसे प्रहार।

२६ अप्रैल : गांधीजी देवघरकी सार्वजनिक सभामें बोले। गया पहुँचे।

२७ अप्रैल : चतरा और हजारीबाग गये।

२८ अप्रैल : गुमियाकी सार्वजनिक सभामें बोले। बरमो और झरिया गये।

२९ अप्रैल : पुरुलिया और राँची गये।

३० अप्रैल : राँचीमें।

१ मई : राँचीमें स्वराज पार्टीके नेताओंसे बातचीत की।

४ मई : जमशेदपुरमें पत्र-प्रतिनिधियोंको दी गई मुलाकातमें हरिजन-आन्दोलनके परिणामोंकी चर्चा की।
सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

५ मई : सम्बलपुरका कुष्ठरोगी आश्रम देखा।

६ मई : अंगुलकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।
बामूर, मेरमंदेली, बनूरपल, हिण्डोल, सदाशिवपुर और कटक गये।

८ मई : पुरीसे समाचार-पत्रोंके लिए वक्तव्य जारी करके घोषणा की कि अपना दौरा वे पदयात्रासे पूरा करेंगे।
पुरीकी सार्वजनिक सभामें बोले।

९ मई : पद यात्रा आरम्भ की।
हरेकृष्णपुर और चन्दनपुरकी सभाओंमें बोले।
गोपीनाथपुर गये।

१० मई : शिवलीचक और वीर-पुरुषोत्तमपुरमें भाषण दिये।
वीरगोविन्दपुर और साखीगोपाल कदवा गये।

११ मई : दण्डमुकुन्द, पिपली और बालासोर गये।

१२ मई : सिउली और बलकटी गये।

१३ मई : सत्यभामापुर, बालिआन्ता और पिपली गये।

१४ मई : बालिआन्तामें।

१५ मई : बालिआन्तामें कुंजबिहारी मन्दिरके उद्घाटन समारोहमें बोले।

तेलंगपेठकी सभामें बोले।

१६ मई : काजीपटनामें बोले।

कटकमें समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको मुलाकात दी। कटककी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

कस्तूरबा गांधी रिहा।

गांधीजी रेलगाड़ी द्वारा कटकसे पटनाके लिए रवाना।

१७ मई : रातमें पटना पहुँचे।

शीर्षक-सांकेतिका

सांकेतिका

आ

ओ

क

च

ठ

ड

त

थ

द

ध

न

प

भ

म

य

र

ल

व

श

स